GIC प्रवक्ता

संस्कृत

जय जय GIC

सम्पादक
सर्वज्ञभूषण

लेखिका
सुमन सिंह

सह-सम्पादक
शुभम ममगाई

www.Sanskritganga.in

- **प्रकाशक**

संस्कृतगङ्गा (पञ्जीकृत)

59, मोरी, दारागञ्ज, प्रयागराज 211006

(कोतवाली दारागञ्ज के आगे, गङ्गाकिनारे संकटमोचन छोटे हनुमान् मन्दिर के पास), Mb. : 9839852033

email-Sanskritganga@gmail.com

- **प्रकाशन-सहयोग**

युनिवर्सल बुक

1519 अल्लापुर, प्रयागराज

☎ : 0532-2460638, 9453460552

- पुस्तकें डाक द्वारा भी आर्डर कर सकते हैं–

Mob. : 8004545095
8004545096

- **अक्षर संयोजक- नितिन कुमार, सन्दीप कुमार**

- **प्रथम संस्करण – 21 जून - 2021**

अन्ताराष्ट्रिय योग दिवस

- **मूल्य – 275/-** (दो सौ पचहत्तर रुपये मात्र)

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

1. राजू पुस्तक भण्डार, अल्लापुर, प्रयागराज
   सम्पर्क सूत्र : 0532-2503638, 9453460552
2. संस्कृतगङ्गा, दारागञ्ज, प्रयागराज - 8004545096
3. गौरव बुक एजेन्सी, कैण्ट, वाराणसी
4. विजय मैग्जीन सेन्टर, बलरामपुर
5. जायसवाल बुक सेन्टर, हरदोई
6. शिवशंकर बुक स्टाल, जौनपुर
7. न्यू पूर्वांचल बुक स्टाल, जौनपुर
8. कृष्णा बुक डिपो बस्ती
9. मौर्या बुक डिपो, पाण्डेयपुर, वाराणसी
10. मनीष बुक स्टोर, गोरखपुर
11. द्विवेदी ब्रदर्स, गोरखपुर
12. विद्यार्थी पुस्तक मन्दिर, गोरखपुर
13. रंजन मिश्रा, गोरखपुर (बस स्टैण्ड)
14. आशीर्वाद बुक डिपो, अमीनाबाद, लखनऊ
15. मालवीय पुस्तक केन्द्र, अमीनाबाद, लखनऊ
16. मॉडर्न मैग्जीन बुक शॉप, कपूरथला, लखनऊ
17. साहू बुक स्टॉल, अलीगंज, लखनऊ
18. भूमि मार्केटिंग, लखनऊ
19. दुर्गा स्टोर, राजा की मण्डी, आगरा
20. महामाया पुस्तक केन्द्र, बिलासपुर
21. डायमण्ड बुक स्टाल, ज्वालापुर, हरिद्वार
22. कम्पटीशन बुक हाउस, सब्जी मण्डी रोड, बरेली
23. अजय गुप्ता बुक स्टोर, लखीमपुर
24. शिवशंकर बुक स्टाल, रीवा
25. कृष्णा बुक एजेन्सी, वाराणसी
26. गर्ग बुक डिपो, जयपुर
27. अग्रवाल बुक सेन्टर, मुखर्जी नगर, नयी दिल्ली
28. चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी (सभी बुक स्टालों पर)
29. विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक वाराणसी
30. मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी
31. केशवी बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स, नयी दिल्ली
32. महावीर बुक स्टाल, खजूरी बाजार, इन्दौर
33. हिन्दी बुक डिपो, मुरादाबाद
34. माँ बुक स्टेशनर्स, शहडोल छत्तीसगढ़
35. ज्ञानगंगा, राँची, झारखण्ड

संस्कृतगङ्गा उवाच

प्रिय-संस्कृतमित्राणि

नमः संस्कृताय।

* 'GIC प्रवक्ता' (संस्कृत) परीक्षा के लिए ''**जय जय GIC**'' नामक यह पुस्तक संस्कृत जगत् के लिए सादर समर्पित है।
* GIC प्रवक्ता (संस्कृत) के पाठ्यक्रम के अनुसार जो जो आवश्यक सामग्री अपेक्षित थी, वह इस पुस्तक में संकलित करने का पूरा प्रयास किया गया है।
* वैदिकवाङ्मय, भारतीय दार्शनिक चिन्तन, व्याकरण, भाषाविज्ञान, लौकिक संस्कृतसाहित्य, काव्यशास्त्र आदि सभी विषयों को यथास्थान समाहित किया गया है।
* पुस्तक मुद्रणदोष से रहित हो इसके लिए पूर्ण प्रयास किया गया है फिर भी कुत्रचित् दोष दिखायी पड़े तो अवश्य सूचित करें, ताकि आगामी संस्करण में उसे दूर किया जा सके ।
* ''**जय जय GIC**'' यह नामकरण अपने सुधी छात्रों को ध्यान में रखकर किया गया है ताकि परीक्षारूपी युद्ध में वे अवश्य विजयी हों इस धिया से यह नाम रखा गया है।

''विजयतां संस्कृतच्छात्राः, सिद्ध्यन्तु भवतां मनोरथाः''

* पुस्तक के लेखन एवं प्रूफरीडिंग में '**सुमन जी**' एवं '**शुभम ममगाई**' का अतुलनीय योगदान रहा, इसके लिए माँ सरस्वती की कृपा सदैव इन पर बनी रहे यही कामना करता हूँ।
* इस पुस्तक को शुद्ध एवं प्रामाणिक बनाने में हमारे कई भगीरथों ने अथक प्रयास किए जिसमें **शङ्करदत्त त्रिपाठी, शिवम चतुर्वेदी, गौरव पाण्डेय, नीलोत्पल नाथ त्रिपाठी, रूबी अग्रहरि, संगीता राय,** आदि विशेषरूपेण स्मरणीय हैं।
* '**जय जय GIC**' के कवर पेज की डिजाइनिंग **अम्बिकेश प्रताप सिंह** की कल्पना से प्रसूत तथा **ब्रह्मानन्द मिश्र** की कम्प्यूटर कला का कमाल समझा जाए।
* इस पुस्तक के अक्षर संयोजन के लिए **संदीपकुमार** एवं **नितिनकुमार** को साधुवाद तथा मुद्रणकार्य के लिए **राजकुमार गुप्ता** (राजू पुस्तक केन्द्र) के महत् परिश्रम को सादर नमन।

दिनाङ्क- 21 जून 2021
अन्ताराष्ट्रिय योगदिवस

भवदीय
सर्वज्ञभूषण
संस्कृतगङ्गा, दारागंज प्रयागराज

❑❑

GIC प्रवक्ता (संस्कृत) का पाठ्यक्रम

♦ **वैदिक साहित्य**

ऋग्वेद- अग्नि सूक्त (1.1.1), विश्वेदेवा सूक्त (1.89), विष्णु सूक्त (1.154), प्रजापति सूक्त (10.121)
यजुर्वेद - शिवसंकल्प सूक्त (34.1-6)।
कठोपनिषद् - प्रथम अध्याय (1-3 वल्ली)।
ईशावास्योपनिषद् - (सम्पूर्ण),
वैदिक वाङ्मय का संक्षिप्त इतिहास (काल निर्धारण, प्रतिपाद्य विषय), वेदांग का संक्षिप्त परिचय (शिक्षा, निरुक्त, छन्द)

♦ **दार्शनिक चिन्तन** **सांख्यदर्शन**- सृष्टि प्रक्रिया, प्रमाण, सत्कार्यवाद, त्रिगुण का स्वरूप, पुरुष का स्वरूप **(ग्रन्थ-सांख्यकारिका) वेदान्त दर्शन -** अनुबन्ध चतुष्टय, साधन चतुष्टय, माया का स्वरूप, ब्रह्म का स्वरूप **(ग्रन्थ वेदान्तसार)**

न्याय/वैशेषिक दर्शन– प्रमाण (प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द) **(ग्रन्थ- तर्कभाषा, तर्कसंग्रह)**
गीता दर्शन – निष्काम कर्मयोग, स्थितप्रज्ञ का स्वरूप **(ग्रन्थ गीता : द्वितीय अध्याय)**
♦ जैन दर्शन एवं बौद्ध दर्शन का सामान्य परिचय **(ग्रन्थ- भारतीय दर्शन -बलदेव उपाध्याय)**

♦ **व्याकरण**

1. **लघुसिद्धान्तकौमुदी** – संज्ञा प्रकरण, सन्धि प्रकरण, कृदन्त प्रकरण, तद्धित प्रकरण, स्त्रीप्रत्यय, समास।
2. **सिद्धान्तकौमुदी-** कारक प्रकरण।
3. **वाच्य परिवर्तन** (कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य, भाववाच्य) ।
4. **शब्दरूप-** अजन्त, हलन्त, (पुं. स्त्री. नपुं.)।
5. **धातुरूप-** (परस्मैपदी, आत्मनेपदी) भू, एध, अद्, हु, दा, दिव्, सूङ्, तुद्, रुध्, तन्, क्री, चुर् ।

♦ **भाषाविज्ञान**

1. भाषा की उत्पत्ति और परिभाषा 2. भाषाओं का वर्गीकरण 3. ध्वनि परिवर्तन 4. अर्थ परिवर्तन

♦ **साहित्य शास्त्र**

काव्यप्रकाश/साहित्यदर्पण- काव्यप्रयोजन, काव्य–लक्षण, काव्यहेतु, काव्यभेद। शब्द-शक्ति (अभिधा, लक्षणा, व्यंजना)।रस का स्वरूप, रस भेद, विभाव-अनुभाव-संचारी भाव, स्थायी भाव, भाव का स्वरूप। गुण का स्वरूप एवं भेद। रीति का स्वरूप एवं भेद।
अधोलिखित अलंकार का सामान्य परिचय
शब्दालंकार- अनुप्रास, यमक, श्लेष। **अर्थालंकार**-उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, अर्थान्तरन्यास।
दशरूपक- नाट्यलक्षण, नाट्यभेद, अर्थप्रकृति, कार्यावस्था, पञ्चसन्धि, नायक का स्वरूप एवं भेद।
पारिभाषिक शब्द- नान्दी, प्रस्तावना, सूत्रधार, कंचुकी, प्रवेशक, विष्कम्भक, प्रकाश, आकाशभाषित, जनान्तिक, अपवारित, स्वगत, भरतवाक्य। **ध्वन्यालोक** (प्रथम उद्योत)-ध्वनि का स्वरूप

♦ **लौकिक साहित्य**

रामायण एवं महाभारत काल निर्धारण, उपजीव्यता, महत्त्व ।
प्रमुख महाकाव्य- किरातार्जुनीयम् (प्रथम सर्ग), शिशुपालवधम् (प्रथम सर्ग), नैषधीयचरितम् (प्रथम सर्ग), रघुवंशम् (द्वितीय सर्ग), कुमारसम्भवम् (प्रथम सर्ग)
प्रमुख खण्डकाव्य- मेघदूतम्, नीतिशतकम्।
प्रमुख गद्यकाव्य- कादम्बरी (कथामुख), शिवराजविजयः (प्रथम निःश्वास)।
कथा साहित्य- पञ्चतन्त्र, हितोपदेशः।
नाटक- अभिज्ञानशाकुन्तलम् (1-4 अंक), उत्तररामचरितम् (1-3 अंक), मृच्छकटिकम् (प्रथम अंक), रत्नावली, प्रतिमानाटकम्।
चम्पूकाव्य- नलचम्पू (आर्यावर्त वर्णन)।

♦ **महाकाव्य, खण्डकाव्य, गद्यकाव्य, चम्पूकाव्य एवं नाट्यकाव्य की उत्पत्ति एवं विकास ।**

विषय सूची

वैदिक साहित्य

दार्शनिक चिन्तन

व्याकरण

साहित्यशास्त्र

लौकिकसाहित्य

खण्डकाव्य

गद्यकाव्य

कथासाहित्य

नाटक

चम्पूकाव्य

1. वैदिक साहित्य

1. अग्निसूक्त (1.1)

मण्डल-1, **सूक्त-**1 **कुल मन्त्र-**9, **ऋषि-** मधुच्छन्दा, **देवता -** अग्नि, **छन्द-**गायत्री, **स्वर -** षड्ज

1. अग्निमीळे पुरोहितं, यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

अर्थ- यज्ञ के पुरोहित, दीप्तिमान्, देवों को बुलाने वाले ऋत्विक् और रत्नधारी अग्नि की मैं स्तुति करता हूँ।

2. अग्निः पूर्वेभिर्ऋषिभिरीड्यो नूतनैरुत।
स देवाँ एह वक्षति॥

अर्थ- प्राचीन ऋषियों ने जिसकी स्तुति की थी, आधुनिक ऋषि जिसकी स्तुति करते हैं, वह अग्नि, देवों को इस यज्ञ में बुलावें।

3. अग्निना रयिमश्नवत्, पोषमेव दिवे दिवे।
यशसं वीरवत्तमम्॥

अर्थ- अग्नि के अनुग्रह से यजमान को धन मिलता है और वह धन अनुदिन बढ़ता और कीर्तिकर होता है तथा उनसे अनेक वीर पुरुषों की नियुक्ति की जाती है।

4. अग्ने यं यज्ञमध्वरं, विश्वतः परिभूरसि।
स इद् देवेषु गच्छति॥

अर्थ- हे अग्निदेवता! जिस यज्ञ को तुम चारों ओर से घेरे रहते हो, उसमें राक्षसादि-द्वारा हिंसा कर्म सम्भव नहीं है और वही यज्ञ देवों को तृप्ति देने स्वर्ग जाता है या देवताओं का सामीप्य प्राप्त करता है।

5. अग्निर्होता कविक्रतुः, सत्यश्चित्रश्रवस्तमः।
देवो देवेभिरा गमत्॥

अर्थ- हे अग्नि! तुम होता, अशेषबुद्धिसम्पन्न या सिद्ध-कर्मा, सत्यपरायण, अतिशय कीर्ति से युक्त और दीप्तिमान् हो। देवों के साथ इस यज्ञ में आओ।

6. यदङ्ग दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि।
तवेत्तत्सत्यमङ्गिरः॥

अर्थ- हे अग्नि! तुम जो हविष् देने वाले यजमान का कल्याण साधन करते हो, वह कल्याण, हे अङ्गिर! तुम्हारा ही प्रीति साधक है।

7. उप त्वाग्ने दिवेदिवे, दोषावस्तर्धिया वयम्।
नमो भरन्त एमसि॥

अर्थ- हे अग्नि! हम अनुदिन, दिन-रात, अन्तस्तल के साथ तुम्हें नमस्कार करते-करते तुम्हारे पास आते हैं।

8. राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम्।
वर्धमानं स्वे दमे॥

अर्थ- हे अग्नि! तुम प्रकाशमान, यज्ञ रक्षक, कर्मफल के द्योतक और यज्ञशाला में वर्धनशाली हो।

9. स नः पितेव सूनवे, अग्ने सूपायनो भव।
सचस्वा नः स्वस्तये॥

अर्थ- जिस तरह पुत्र-पिता को आसानी से पा जाता है, उसी तरह हम भी तुम्हें पा सकें या तुम हमारे अनायास-लभ्य बनो और हमारा मंगल करने के लिए हमारे पास निवास करो।

विश्वेदेवाः सूक्त

मण्डल	8	सूक्त 30
ऋषि-वैवस्वत मनु	**देवता**-विश्वेदेव	**छन्दः**-पहले मन्त्र में गायत्री, दूसरे मन्त्र में उष्णिक् , तीसरे मन्त्र में बृहती और चौथे मन्त्र में अनुष्टुप् ।

1. नहि वो अस्त्यर्भको देवासो न कुमारकः।
विश्वे सतोमहान्त इत् ॥1॥

अन्वय- देवासः ! वः अर्भकः नहि अस्ति, नः कुमारकः । विश्वे सतोमहान्तः इत् ।

शब्दार्थ– वः = तुममें से कोई। **अर्भकः**=शिशु ।

देवासः देवताओं। **कुमारकः** = किशोर। **महान्तः इत्** = निश्चय ही महान् हो।

हिन्दी अनुवाद- हे देवताओं तुम सब में कोई भी शिशु नहीं है और न कोई कुमार (किशोर) अवस्था का है। एक समान आयु वाले तरुण होते हुए तुम सब देवता निश्चय ही महान् हो।

सतोमहान्तः- अस् + शतृ = सत् । सतः महान्तः= सतोमहान्तः। कर्मधारय तत्पुरुष समास, विभक्ति का अलुक् ।

2. इति स्तुतासो असथा रिशादसो ये स्थ त्रयश्च त्रिंशच्च। मनोर्देवा यज्ञियासः॥

अन्वय- रिशादसः मनोः यज्ञियासः देवाः ये त्रयः च त्रिंशत् च स्थ इति। स्तुतासः असथ।

शब्दार्थ-स्तुतासः = स्तुति किये जाते हुए। **असथ** = रहे हो, कामना करते हो। **रिशासदः** =हिंसक शत्रुओं को खा जाने वाले। **मनोः** = मनु के। **यज्ञियासः**= यज्ञ के योग्य, पूजनीय।

हिन्दी अनुवाद– हिंसक शत्रुओं को खा जाने (नष्ट करने) वाले और मनु के यज्ञ के योग्य अर्थात् पूजनीय हे विश्वेदेवो! जो तुम तीन और तीस अर्थात् तैंतीस हो वे तुम स्तुति किये जाते रहते हो। अथवा स्तुति किये जाते हुए हवियों की कामना करते हो।

व्याकरण– स्तुतासः - ष्टुञ् (स्तु) + क्त = स्तुत। प्रथमा का बहुवचन। वैदिक रूप।

असथ – अस् धातु, लेट् लकार, मध्यम पुरुष बहुवचन। 'अस्' के 'अ' के लोप का छान्दस अभाव।

यज्ञियासः- यज्ञम् अर्हति अर्थ में 'घञ्' प्रत्यय। यज्ञ + घ + (इय) = यज्ञिय। प्रथमा का बहुवचन।

विशेष- देवों की संख्या 33 मानी गई है। ये तीन वर्गों में विभक्त हैं – पृथिवी स्थानीय, द्यु स्थानीय और अन्तरिक्ष स्थानीय। मनु को मानवों का पूर्वज माना जाता है। यह बात अगले मन्त्र में भी कही गई है।

3. ते नस्त्राध्वं तेऽवत त उ नो अधि वोचत। मा नः पथः पित्र्यान्मानवादधि दूरं नैष्ट परावतः॥

अन्वय– ते नः त्राध्वम् , ते अवत, ते उ नः अधिवोचत। मानवात् पित्र्यात् परावतः पथः नः दूरम् मा अधिनैष्ट

शब्दार्थ–त्राध्वम् = रक्षा करो। **अवत** = बचाओ। **अधिवोचत** = हमारे समर्थन में बोलो। **पथः** मार्ग से। **पित्र्यात्** = पितरों के। **मानवात्** = मनु द्वारा प्रदर्शित । **मा अधिनैष्ट** = मत ले जाना। **परावतः** = सुदूर स्थित।

हिन्दी अनुवाद– हे विश्वेदेवो वे तुम सब पीड़ा पहुँचाने वालो राक्षसों से हमारी रक्षा करो। वे तुम सब धन आदि प्रदान करके हमें बचाओ। वे तुम सब हमारे समर्थन में बोलो या आशीर्वाद प्रदान करो। मनु द्वारा प्रदर्शित पितरों के सूदूर स्थित मार्ग से हमको दूर मत ले जाना।

व्याकरण– त्राध्वम् – त्रैङ्' धातु लोट् लकार, मध्यम पुरुष, बहुवचन। वैदिक रूप है। लोक में 'त्रायध्वम्' रूप होगा।

पित्र्यात् – 'पितुः आगतम्' अर्थ में पितृ + यत् = पित्र्य।

मानवात् – मनु + अण् = मानव।

नैष्ट –नी धातु, लुङ् लकार, मध्यम पुरुष का बहुवचन। वैदिक रूप है।

परावतः– परा + मतुप् = परावत् । पञ्चमी विभक्ति का एकवचन।

विशेष– अधि पूर्वक 'वच' धातु का अर्थ सिफारिश करना (To speak for) और सहायता के लिए आना (To come to the help) है।

4. ये देवास इह स्थन विश्वे वैश्वानरा उत। अस्मभ्यं शर्म सप्रथो गवेऽश्वाय यच्छत॥

अन्वय – ये विश्वे देवासः इह स्थन उत वैश्वानराः, अस्मभ्यम् गवे अश्वाय सप्रथः शर्म यच्छत।

शब्दार्थ- हि स्थन = यहाँ हो। **वैश्वानराः** = सर्वजनकल्याणकारी यज्ञ क़ी अग्नियाँ। **शर्म** = सुख। **सप्रथः**= सर्वत्र प्रसिद्ध विशाल।

हिन्दी अनुवाद– जो तुम सब विश्वेदेव यहाँ हो अर्थात् इस यज्ञ में उपस्थित हो और सब सर्वजनकल्याणकारी यज्ञ की अग्नियाँ यहां उपस्थित हैं, वे तुम सब हमारे लिये, हमारी गौओं के लिए हमारे घोड़ों के लिये सर्वत्र प्रसिद्ध या विशाल सुख को प्रदान करो।

व्याकरण–

देवासः– देवाः का छान्दस रूप।

यच्छत– दाण् (यच्छ) धातु, लोट् लकार, मध्यम पुरुष, बहुवचन।

स्थन– 'अस्' धातु, लट् लकार, मध्यम पुरुष बहुवचन। यहाँ 'थ' को 'थन' वैदिक निपातनात् हुआ है।

वैश्वानराः– विश्वे नरः यस्मिन् अयं विश्वानरः यज्ञ। विश्वानरे उपस्थितः अर्थ में विश्वानर + अण् + वैश्वानर।

शर्म –शृणाति हिनस्ति दुःखम् अर्थ में शृ + मनिन् (मन्) = शर्म।

विशेष – राथ ने 'इह' का अर्थ (Atour Sacrifice) और 'स्थन' का अर्थ (Assembled here) किया है। छन्द के आग्रह से 'गवेऽश्वाय' को गवे अश्वाय पढ़ना चाहिये।

विष्णु- सूक्त

मण्डल-1 देवता-विष्णु, **छन्द**-त्रिष्टुप्, **ऋषि**-दीर्घतमा

1. विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजांसि।
यो अस्कभायदुत्तरं सधरथं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायः।

अन्वय– विष्णोः वीर्याणि नु कम् प्रवोचम् , यः पार्थिवानि रजांसि विममे, यः त्रेधा विचक्रमाणः उरुगायः उत्तरम् सधस्थम् अस्कभायत्

शब्दार्थ– विष्णुः–व्यापनशीन विष्णु देवता। **नु**=शीघ्र। **वीर्याणि**=वीर कार्यो को। **प्रवोचम्** = कहता हूँ। **पार्थिवानि**– पृथ्वी सम्बन्धी। **रजांसि** = रजः कणों को, लोकों को। **विममे** = विशेष रूप से बनाया। **अस्कभायत्** – स्तम्भित किया, आधार रूप से बनाया। **उत्तरम्** = अति उत्कृष्ट। **सस्धस्थम्** = साथ रहने का स्थान। **विचक्रमाणः** = लांघते हुये। **त्रेधा** =तीन प्रकार से, या तीन डगों में। **उरुगायः** = महान् पुरुषों से स्तुति किया जाता हुआ।

हिन्दी अनुवाद– हे मनुष्यो मैं व्यापनशील विष्णु देवता के वीर कार्यों को बहुत शीघ्र कहता हूँ, जिस विष्णु ने पृथिवी सम्बन्धी रजः कणों अर्थात् अग्नि, वायु, आदित्य आदि विशेष लोकों की विशेष, रूप से रचना की। और जिस विष्णु ने तीन प्रकार से या तीन डगों में अपने बनाये हुए लोकों को लांघते हुए एवं महान् पुरुषों से स्तुति किये जाते हुए होकर ऊँचे या अति उत्कृष्ट तीनों लोकों के आश्रयभूत साथ रहने के स्थान को स्तम्भित किया, आधार रूप से बनाया।

व्याकरण– विष्णोः– 'विष्लृ व्याप्तौ' धातु से विष् + नु = विष्णु। षष्ठी विभक्ति का एकवचन।

वीर्याणि – वीर् + यत् = वीर्य । नपुंसकलिंग, द्वितीया विभक्ति बहुवचन।

प्रवोचम् – 'प्र+वच् ' धातु, लङ् लकार, उत्तम पुरुष, एकवचन। छान्दस अट् का अभाव। वर्तमानकाल में 'लङ् ' का प्रयोग।

पार्थिवानि – पृथिवी + अण् = पार्थिव।

अस्कभायत् – 'स्कम्भ' धातु लङ्लकार, प्रथम पुरुष एकवचन। यहाँ 'श्ना' को वैदिक 'शायच् ' आदेश हुआ। लोक में 'अस्कभ्नात्' रूप होगा।

विचक्रमाणः वि+क्रम् धातु से लिट् के अर्थ में 'कानच् ' प्रत्यय

त्रेधा – त्रि + धा = त्रेधा।

विममे – वि + मा धातु लिट् लकर, प्रथम पुरुष एकवचन।

उरुगायः – ' उरुभिः गीयते' अर्थ में उरु + गै + अच् (अ) = उरुगाय।

उत्तरम् – उत् + तरप् = उत्तर

सधस्थम् – सह + स्था + क = सधस्थ।

विशेष– 'त्रेधा विचक्रमाणः' का अर्थ पीटर्सन ने 'तीन डगों में परिक्रमा करते हुये किया है। छन्द की पूर्ति के लिए 'वीर्याणि' का 'वीरियाणि' एवं 'त्रेधा' का 'त्रयेधा' उच्चारण करना चाहिये।

2. प्र तद्विष्णुः स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः।
यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा।

अन्वय– यस्य उरुषु त्रिषु विक्रमणेषु विश्वा भुवनानि अधिक्षियन्ति तत् विष्णुः वीर्येण प्रस्तवते, भीमः कुचरः गिरिष्ठाः मृगः न।

शब्दार्थ – **प्रस्तवते** = स्तुति किया जाता है। **भीमः** = भयानक । **कुचरः** =कुत्सित हिंसा आदि कार्य करने वाला, स्वतन्त्रता पूर्वक भूमि पर विचरण करने वाला। **गिरिष्ठाः** = पर्वतों में रहने वाला। **उरुषु** = विस्तीर्ण। **विक्रमणेषु** = डगों में। **अधिक्षियन्ति** = निवास करते हैं।

हिन्दी अनुवाद – जिस विष्णु के विस्तीर्ण लम्बे तीन डगों में सम्पूर्ण लोक आ जाते हैं या आश्रय लेकर निवास करते हैं,उस विष्णु की वीर कार्यों से स्तुति उसी प्रकार की जाती है, जिस प्रकार भयानक, कुत्सित हिंसा आदि कार्य करने वाले या स्वतन्त्रता पूर्वक भूमि पर विचरण करने वाले, पर्वत आदि उन्नत प्रदेशों में रहने वाले एवं विरोधियों को ढूंढ कर मारने वाले सिंह आदि की स्तुति की जाती है।

व्याकरण–

स्तवते– 'स्तु' धातु से कर्म कारक में लट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन। व्यत्यय से 'यक् ' के स्थान पर 'शप्' हुआ। वैदिक रूप। लोक में स्तूयते रूप होगा।

कुचरः कु + चर् + ट।

मृगः – मार्ष्टि गच्छति अन्विषति अर्थ में मृज् + क = मृग। अथवा मृ + गम् + अ = मृग।

गिरिष्ठाः – गिरिषु तिष्ठति अर्थ में – गिरि + स्था + क्विप्

विश्वा – विश्व पद प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। लोक में 'विश्वानि' बनेगा।

वीर्येण – वीर् –यत् =वीर्य। तृतीया विभक्ति, एकवचन=वीर्येण

विक्रमणेषु – वि + क्रम् + ल्युट् (अन) = विक्रमण। सप्तमी विभक्ति, बहुवचन= विक्रमणेषु।

अधिक्षियन्ति – अधि + क्षि, लट् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन।

3. प्र विष्णवे शूषमेतु मन्म गिरिक्षित उरुगायाय वृष्णे।
य इदं दीर्घं प्रयतं सधस्थमेको विममे त्रिभिरित्पदेभिः॥

अन्वय – यः इदम् दीर्घम् प्रयतम् सधस्थम् एकः इत् त्रिभिः पदेभिः विममे, गिरिक्षिते उरुगायाय वृष्णे विष्णवे मन्म शूषम् प्र एतु।

शब्दार्थ – **शूषम्** = बल । **प्र एतु** = प्राप्त होवे। **मन्म** = मननीय, स्तुति के योग्य। **गिरिक्षिते** = वाणियों में निवास करने वाले, उन्नत प्रदेश में रहने वाले। **वृष्णे** = कामनाओं को पूर्ण करने वाले। **दीर्घम्** =विस्तृत। **प्रयतम्** = नियमों में बंधा हुआ। **सधस्थम्** = सबका सम्मिलित रहने का स्थान। **विममे** = नाप लिया था।

हिन्दी अनुवाद- जिस विष्णु ने इस दृश्यमान अति विस्तृत नियमों में बंधे हुए सबसे सम्मिलित स्थान लोकत्रय को अकेले ही तीन डगों में नाप लिया था, उस वाणियों में निवास करने वाले या उन्नत प्रदेश में रहने वाले, बहुतों के द्वारा स्तुति किये जाने वाले, कामनाओं को पूर्ण करने वाले और सर्वव्यापक विष्णु के लिये हमारा यह मननीय या स्तुति के योग्य बल, जो हमारे कृत्यों से उत्पन्न हुआ है, प्राप्त होवे।

व्याकरण– शूषम् – शूष् + घञ्, मन्म – मन् + मनिन्

गिरिक्षिते – गिरि + क्षि + क्विप् = गिरिक्षित् । गिरौ क्षयति अर्थ में।

उरुगायाय– उरुभिः गीयते तस्मै। उरु + गा + यक् = उरुगाय। चतुर्थी विभक्ति, एकवचन = उरुगायाय।

प्रयतम् – प्र + यम् + क्त = प्रयत।
सधस्थम् – सह + स्था + क = सधस्थ। 'सह' के 'ह' को 'ध' आदेश।
विममे – वि + मा, धातु, लिट् लकार, प्रथम पुरुष एकवचन।
वृष्णे – वृष् + कनिन् (अन्) = वृषन् वेद में चतुर्थी का एकवचन।

4. यस्य त्री पूर्णा मधुना पदान्यक्षीयमाणा स्वधया मदन्ति। य उ त्रिधातु पृथिवीमुत द्याम् एको दाधार भुवनानि विश्वा॥

अन्वय – यस्य मधुना पूर्णा त्री पदानि अक्षीयमाणा स्वधया मदन्ति,य उ एकः पृथिम् द्याम् उत त्रिधातु विश्वा भुवनानि दाधार।
शब्दार्थ– पूर्णा = भरे हुये। **मधुना** = दिव्य अमृत से **अक्षीयमाणा**-क्षीण न होते हुए। **स्वधया**= अन्न के द्वारा, **मदन्ति**= आनन्दित करते हैं। **त्रिधातु** = पृथिवी-जल-तेज इन तीनों धातुओं से युक्त। **उत**= और, **दाधार**-धारण करता है।
हिन्दी अनुवाद– जिस विष्णु के मधुर दिव्य अमृत से भरे हुए तीन पद कभी क्षीण न होते हुए अन्न के द्वारा आनन्दित करते हैं, और जो अकेला ही विस्तृत पृथिवी लोक को द्यु लोक और अन्तरिक्ष लोक को, तीन धातुओं पृथिवी, जल, तेज से युक्त बनाता हुआ सभी लोकों को धारण करता है।

व्याकरण–
त्री– 'जस्' का लोप और 'त्रि' को दीर्घ। वैदिक रूप। लोक में 'त्रीणि' होगा।
अक्षीयमाणा– क्षि + यक् + (मुक् का आगम) + **शानच्** = क्षीयमाण। **न+ क्षीयमाण** = अक्षीयमाण।
पूर्णा – लोक में पूर्णानि होगा।
मदन्ति – 'मदी हर्षे' धातु लट् लकार' प्रथम पुरुष, बहुवचन। लोक में 'मदयन्ति' या 'माद्यन्ति' रूप होगा।
त्रिधातु – त्रयाणां धातूनां समाहारः।
विश्वा – वैदिक रूप। लोक में 'विश्वानि' होगा।
द्याम् – द्यो शब्द, द्वितीया का एकवचन।
दाधार – धृ धातु, लिट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन। वर्तमान काल में लिट्।

5. तदस्य प्रियमभि पाथो अश्यां नरो यत्र देवयवो मदन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धुरित्था विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः॥

अन्वय– अस्य प्रियम् तत् पाथः अभि अश्याम्, यत्र देवयवः नरः मदन्ति। उरुक्रमस्य विष्णोः परमे पदे मध्वः उत्सः। इत्था सः हि बन्धुः।
शब्दार्थ– पाथः लोक को। **अभि अश्याम्** = प्राप्त करूँ। **देवयवः** = विष्णु देवता के भक्त। **मदन्ति** = आनन्दित होते हैं। **उरुक्रमस्य** = परम पराक्रम वाले, महान् डगों वाले। **इत्था** = इस प्रकार से। **मध्वः** = मधुर अमृत का। **उत्स** = स्रोत।
हिन्दी अनुवाद– इस विष्णु के प्रिय उस लोक को प्राप्त करूँ, जहाँ उस विष्णु देव के भक्त जन आनन्द का अनुभव करते हैं। परम पराक्रम वाले अथवा महान् डगों वाले सर्वव्यापक विष्णु के परम स्थान में मधुर अमृत का स्रोत है। इस प्रकार से वह विष्णु निश्चय से सबका बन्धु है।

व्याकरण–
अश्याम् – अश् धातु, आशीर्लिङ् , उत्तम पुरुष, एकवचन।
पाथः– पा + असुन् (थुट् का आगम)
देवयवः- देव+यु+क्विप् = देवयु । प्रथमा विभक्ति का बहुवचन।
मदन्ति - मद् धातु, लट् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन।
इत्था - 'इत्थम् ' का वैदिक रूप।
मध्वः - 'मधु' शब्द षष्ठी विभक्ति का एकवचन। लोक में 'मधुनः' बनेगा।

6. ता वां वास्तून्युश्मसि गमध्यै, यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः। अत्राह तदुरुगायस्य वृष्णः परमं पदमव भाति भूरि॥

अन्वय– यत्र भूरिशृङ्गाः गावः अयासः, वाम् ता वास्तूनि गमध्यै उश्मसि। अत्र अह उरुगायस्य वृष्णः तत् परमम् पदम् भूरि अव भाति।
शब्दार्थ– वास्तूनि = निवास योग्य स्थान या लोक। **उश्मसि** = कामना करते हैं। **गमध्यै** = जाने के लिये। **गावः** = गौयें, किरणें। **भूरिशृङ्गाः** = बड़े ऊँचे सींगों वाली, अनेक प्रकार से फैलने वाली। **अयासः** = निवास करती है, प्रकाश से युक्त हैं। **अह** = निश्चय से। **अवभाति** = प्रकाशित हो रहा है। **भूरि**= अत्यधिक।
हिन्दी अनुवाद- हे यजमान और हे उसकी पत्नी ! जहाँ बड़े-बड़े ऊंचे सींगों वाली गौयें अथवा अनेक प्रकार से फैलने वाली किरणें निवास क़रती हैं या अत्यधिक प्रकाश से युक्त हैं, तुम दोनों के उन निवास योग्य स्थानों या लोकों पर जाने के लिये हम कामना करते हैं। यहाँ निश्चय ही महान् जनों से या बहुतों से स्तुति किये जाने वाले और कामनाओं को पूरा करने वाले विष्णु देव का परम पद या सर्वोत्कृष्ट अन्तरिक्ष लोक अत्यधिक रूप से प्रकाशित हो रहा है।

व्याकरण–
ता - वैदिक रूप है। लोक में 'तानि' होगा।
गमध्यै - ' गम् ' धातु से 'तुमुन् ' प्रत्यय के अर्थ में वैदिक 'अध्यैन् ' प्रत्यय।
वाम् - युवयोः का रूप है।
उश्मसि - 'वश् कान्तौ' धातु, लट् लकार, उत्तम पुरुष, बहुवचन। छान्दस रूप।

अयासः- 'इण् गतौ' + अच् = अय।
प्रथमा विभक्ति का बहुवचन वैदिक रूप।

अवभाति - अव+भा धातु लट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।

हिरण्यगर्भ सूक्त (10.121)

मण्डल-10, **सूक्त-**121 **कुल मन्त्र-**10, **ऋषि-** हिरण्यगर्भ, **देवता -**क संज्ञक प्रजापति, **छन्द-** त्रिष्टुप्

1. हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अर्थ- हिरण्यगर्भ (प्रजापति) सर्वप्रथम उत्पन्न हुआ। उत्पन्न होते ही वह सम्पूर्ण प्राणियों का अद्वितीय स्वामी हो गया (तथा) उसने इस पृथिवी और द्युलोक को धारण किया (उसे छोड़कर) हम किस देवता के लिए हवि से विधान (पूजन) करें।

2.य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः। यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अर्थ- जो (हिरण्यगर्भ) प्राण (आत्मा) दाता (और) बलदाता है। जिसके आदेश की समस्त (प्राणी तथा) देवता उपासना करते हैं, जिसकी छाया अमृत है, जिसकी (छाया) मृत्यु है, (उसके अतिरिक्त) किस देवता के लिए हवि से विधान करें।

3. यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव। य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अर्थ- जो (हिरण्यगर्भ) अपनी महिमा से- श्वास-प्रश्वास लेने वाले, पलकों का संचालन करने वाले और गतिशील प्राणिजगत् का अकेला ही राजा हो गया और जो दो पैरों वाले (मनुष्यों) तथा चार पैरों वाले (पशुओं) का स्वामित्व करता है, (उसके अतिरिक्त) किसके लिए हवि से विधान करें।

4. यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसया सहाहुः। यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अर्थ- जिस (हिरण्यगर्भ) की महिमा से ये बर्फीले पर्वत (स्थित) हैं, नदियों के साथ समुद्र को जिसका बताया जाता है, जिसकी ये प्रधान दिशाएँ हैं (तथा) जिसकी भुजाएँ (रक्षिका) हैं, (उसके अतिरिक्त) किस देवता के लिए हवि से विधान करें।

5.येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृळहा येन स्वः स्तभितं येन नाकः। यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अर्थ- जिसके द्वारा उन्नत द्युलोक और पृथिवी को दृढ़ (स्थिर) किया गया, जिसके द्वारा स्वर्गलोक और नागलोक स्तब्ध कर दिया गया; जो अन्तरिक्ष में लोकों को नापने वाला है, (उसके अतिरिक्त) किस देवता के लिए हवि से विधान करें।

6. यं क्रन्दसी अवसा तस्तभाने अभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने। यत्राधि सूर उदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अर्थ- (प्राणियों की) रक्षा के लिए स्थिर बनाए गए तथा मन से काँपते हुए द्युलोक और पृथिवीलोक जिस (प्रजापति) की ओर देखते हैं, जिसे आधार बना कर सूर्य उदित होकर चमकता है, (उसके अतिरिक्त) किस देवता के लिए हवि से विधान करें।

7. आपो ह यद्बृहतीर्विश्वमायन्गर्भं दधाना जनयन्तीरग्निम्। ततो देवानां समवर्ततासुरेकः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अर्थ- जब गर्भ धारण करती हुई और अग्नि को उत्पन्न करती हुई, विशाल जल राशि ने विश्व को व्याप्त कर लिया, तब देवताओं का एकमात्र प्राणभूत (प्रजापति) उत्पन्न हुआ, (उसके अतिरिक्त किस देवता के लिए हवि से विधान करें।

8. यश्चिदापो महिना पर्यपश्यद्दक्षं दधाना जनयन्तीर्यज्ञम्। यो देवेष्वधि देव एक आसीत्कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अर्थ- जिसने अपनी महिमा से दक्ष (प्रजापति) को धारण करती हुई तथा यज्ञ को उत्पन्न करती हुई जलराशि को चारों ओर देखा, जो देवताओं में एक अद्वितीय देव हो गया, (उसके अतिरिक्त) किस देवता के लिए हवि से विधान करें।

9. मा नो हिंसीज्जनिता यः पृथिव्या यो वा दिवं सत्यधर्मा जजान। यश्चापश्चन्द्रा बृहतीर्जजान कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अर्थ- वह (प्रजापति) हमें कष्ट न दे, जो पृथिवी को उत्पन्न करने वाला है, तथा सत्यनियमवाला जिसने द्युलोक को उत्पन्न किया है, (तथा) जिसने आनन्ददायक विशाल जलराशि को उत्पन्न किया है, (उसके अतिरिक्त) हम किस देवता के लिए हवि से विधान करें।

10.प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥

अर्थ- हे प्रजापति! तुम्हारे अतिरिक्त अन्य कोई इन (वर्तमान तथा) उन (भूत) सम्पूर्ण उत्पन्न पदार्थों को व्याप्त नहीं कर पाया; जिस (फल) की कामना करते हुए हम तुम्हें हवि प्रदान करते हैं, वह (फल) हमारा हो जाय। हम लोक समृद्धियों (धनों) के स्वामी हो जायें।

शिवसंकल्प सूक्त (अध्याय-34)

शुक्लयजुर्वेद माध्यन्दिनवाजसनेयिसंहिता

अध्याय-34 **कण्डिका** 1-6 **कुल मन्त्र**-06, **ऋषि**- याज्ञवल्क्य, **देवता** -मनस्, **छन्द**-त्रिष्टुप्

1. यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- जो मन पुरुष की जाग्रतावस्था में अधिक दूर चला जाता है, जो एकमात्र आत्मा का दर्शन करने वाला है; जो पुरुष की सुषुप्तावस्था में उसी प्रकार लौट आता है (तथा) जो समस्त बाह्य इन्द्रियों का एकमात्र प्रकाशक है; वह मेरा मन शुभ सङ्कल्प वाला होवे।

2. येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- जिस मन में कर्मनिष्ठ बुद्धिमान् पुरुष यज्ञ में तथा उपासनाओं में कर्म करते हैं, जो सब (इन्द्रियों) से पहले उत्पन्न होता है, और यज्ञ करने में समर्थ है, तथा जो प्राणिमात्र के शरीर के भीतर रहता है, वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला होवे।

3. यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- जो मन विशेषज्ञान तथा सामान्यज्ञान (का साधन) है, जो धैर्य रूप है, जो प्राणियों के भीतर (इन्द्रियों की प्रेरक) अमर ज्योति है तथा जिसके बिना कोई भी काम नहीं किया जा सकता, वह मेरा मन शुभ सङ्कल्प वाला होवे।

4. येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- जिस अमर मन के द्वारा इस संसार में भूत, भविष्यत् और वर्तमानकाल के सब पदार्थ जाने जाते हैं, और जिसके द्वारा सात होता वाला (अग्निष्टोम) यज्ञ किया जाता है, वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला होवे।

5. यस्मिन्नृचः साम यजूँषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिँश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- रथ चक्र की नाभि में तीलियों की भाँति जिस मन में ऋचाएँ, साम और यजुः प्रतिष्ठित होते हैं, जिसमें प्राणियों का सर्वपदार्थविषयक ज्ञान निहित है, वह मेरा मन शुभसङ्कल्प वाला होवे।

6. सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- जैसे अच्छा सारथी घोड़ों को इधर-उधर प्रेरित करता है और अपने वश में रखता है, उसी प्रकार जो मन प्राणियों को बार-बार इधर-उधर प्रेरित करता है और अपने वश में रखता है, जो हृदय में स्थित है, जो जरा से रहित तथा अत्यन्त वेगवान् है, वह मेरा मन शुभ सङ्कल्प वाला होवे।

कठोपनिषद्

- कठोपनिषद् उपनिषदों में बहुत प्रसिद्ध है। यह **यजुर्वेद** की **कठ शाखा** से सम्बन्धित है।
- कठोपनिषद् में कुल **2 अध्याय** हैं और प्रत्येक अध्याय में **तीन-तीन वल्लियाँ** हैं।

प्रथम अध्याय	द्वितीय अध्याय
प्रथम वल्ली -29	प्रथम वल्ली - 15
द्वितीय वल्ली-25	द्वितीय वल्ली- 15
तृतीय वल्ली- 17	तृतीय वल्ली- 18
कुल मन्त्र-71	**कुल मन्त्र-48**

- इसप्रकार कठोपनिषद् में लगभग 119 मन्त्र हैं।

कठोपनिषद् का तथ्यात्मक अध्ययन

- सर्वप्रथम यम नचिकेता की कथा का वर्णन तैत्तिरीय ब्राह्मण में मिलता है। पुनः कठोपनिषद् में यम नचिकेता की कथा है।
- इसके अतिरिक्त **नचिकेता का उपाख्यान** महाभारत के अनुशासन पर्व में भी आया है।
- **आत्मतत्त्व विवेचन** की दृष्टि से कठोपनिषद् अत्यन्त प्रसिद्ध है।
- कठोपनिषद् में **यज्ञ विद्या (अग्निविद्या)** का संक्षेप में वर्णन प्राप्त होता है।
- **प्रथम अध्याय-** प्रथम अध्याय में नचिकेता और यम के उपाख्यान द्वारा **आत्मा और ब्रह्म की व्याख्या** की गयी है।

प्रथम अध्याय, प्रथम वल्ली

कठोपनिषद् का शान्तिपाठ

ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै।
तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै।

ॐ = पूर्णब्रह्म-परमात्मन्   सह = साथ-साथ
नौ = हम दोनों की   अवतु = रक्षा करें
भुनक्तु = पालन करें   वीर्यम् = शक्ति
करवावहै = प्राप्त करें   अधीतम् = पढ़ी हुयी विद्या
तेजस्वि = तेजोमयी   अस्तु = हो
मा विद्विषावहै = हम दोनों परस्पर द्वेष न करें।

- गौतम वंशीय महर्षि अरुण के पुत्र उद्दालक ऋषि ने फल की कामना से **विश्वजित् नामक यज्ञ** किया।
- उद्दालक यज्ञ की दक्षिणा में दुग्ध तथा प्रजनन शक्ति से हीन गायें दे रहे थे तो नचिकेता के मन में श्रद्धा बुद्धि उत्पन्न हुयी और उसने पिता से पूछा- ''आप मुझे किसको दान कर रहे हैं?'' दो तीन बार पूछने पर पिता ने क्रुद्ध होकर कहा ''तुझे मृत्यु को देता हूँ।'' पिता की आज्ञा से नचिकेता ने मृत्यु के समीप जाना सहर्ष स्वीकार कर लिया।
- नचिकेता यमलोक पहुँचा तो उस समय यमराज कहीं बाहर गये थे अतएव नचिकेता तीन दिन अन्न जल ग्रहण किये बिना ही यमराज की प्रतीक्षा करता रहा। जब यम लौटकर आये तो उन्होंने नचिकेता का सत्कार किया और तीन रात्रियों के बदले तीन वरदान मांगने को कहा।

प्रथम वर- (पितृ परितोष)

- नचिकेता ने प्रथम वर के रूप में पिता की प्रसन्नता माँगी-

शान्तसङ्कल्पःसुमना यथा स्याद् वीतमन्युर्गौतमो माभि मृत्यो।
त्वत्प्रसृष्टं माभिवदेत्प्रतीत एतत्त्रयाणां प्रथमं वरं वृणे॥

(1/1/10)

अनुवाद – मृत्युदेव ! तीन वरों में मैं प्रथम वर यही मांगता हूँ कि मेरे गौतमवंशीय पिता उद्दालक, जो क्रोध के आवेश में मुझे आपके पास भेजकर अब अशान्त और दुःखी हो रहे हैं, मेरे प्रति क्रोधरहित, शान्तचित्त और सर्वथा सन्तुष्ट हो जाएँ तथा आपके द्वारा अनुमति पाकर जब मैं घर जाऊँ, तब वे मुझे अपने पुत्र नचिकेता के रूप में पहचानकर मेरे साथ पूर्ववत् बड़े स्नेह से बातचीत करें।

द्वितीय वर (अग्निविद्या का ज्ञान)

- दूसरे वर के रूप में नचिकेता ने उस अग्निविद्या का ज्ञान माँगा जिसके द्वारा अत्यन्त सुख के लोक, स्वर्ग की प्राप्ति होती है और किसी प्रकार का भय नहीं रह जाता।

स त्वमग्निँ स्वर्ग्यमध्येषि मृत्यो प्रब्रूहि त्वं श्रद्दधानाय मह्यम्।
स्वर्गलोका अमृतत्वं भजन्त एतद् द्वितीयेन वृणे वरेण॥

(1/1/13)

- नचिकेता की विलक्षण प्रतिभा देखकर यम ने प्रसन्न होकर इस अग्निविद्या को नचिकेता के नाम से ही प्रसिद्ध होने का वरदान दिया और अनेक रूपों वाली माला सृङ्का प्रदान की।

तृतीय वर (आत्मतत्त्व का ज्ञान)

- तीसरे वर के रूप में नचिकेता ने मनुष्य की मृत्यु के बाद के आत्मास्तित्व के विषय में जिज्ञासा की।

येयं प्रेते विचिकित्सा मनुष्येऽस्तीत्येके नायमस्तीति चैके।
एतद्विद्यामनुशिष्टस्त्वयाहं वराणामेष वरस्तृतीयः॥

(1/1/20)

- नचिकेता के दृढ़ संकल्प और आत्मज्ञान प्राप्ति के लिए योग्यता देखकर यम ने आत्मतत्त्व का उपदेश दिया।

प्रथम अध्याय : द्वितीय वल्ली

- द्वितीय वल्ली में जीवात्मा और परमात्मा के स्वरूप का पृथक्-पृथक् वर्णन किया गया है।

श्रेय तथा प्रेय मार्ग-

- प्रेय मार्ग भौतिक सुख-समृद्धि का मार्ग है।
- श्रेय अर्थात् दुःखों से छूटकर नित्य आनन्दस्वरूप परब्रह्म पुरुषोत्तम को प्राप्त करने का मार्ग है।

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीरः।
श्रेयो हि धीरोऽभि प्रेयसो वृणीते प्रेयो मन्दो योगक्षेमात् वृणीते॥

कठ. (1/2/2)

आत्मा का स्वरूप

- यमराज आत्मा के शुद्ध स्वरूप और उसकी नित्यता का निरूपण नचिकेता से करते हैं।
- यह आत्मा, अजन्मा, नित्य, सदा एकरस रहने वाला, पुरातन है और कभी भी इसका नाश नहीं किया जा सकता।

''अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।''

प्रथम अध्याय : तृतीय वल्ली

- तृतीय वल्ली में परमात्मा को प्राप्त करने का साधन यम ने नचिकेता को बताया है।
- जीवात्मा शरीर, मन, बुद्धि तथा इन्द्रियों का पारस्परिक सम्बन्ध प्रदर्शित करने के लिए कठोपनिषद् में रथ रूपक को प्रस्तुत किया गया है।
- **आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।**
  बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च॥ (1/3/3)
  इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयाँस्तेषु गोचरान्।
  आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः॥ (1/3/4)
- यम नचिकेता को बताते हुये कहते हैं कि तुम जीवात्मा को रथ का स्वामी समझो और शरीर को रथ तथा बुद्धि को सारथि समझो और मन को लगाम समझो।
- **जीवात्मा** - रथी, **शरीर** - रथ,**बुद्धि** -सारथी,**मन** - लगाम **इन्द्रियाँ** - घोड़े, **विषय** - मार्ग
- यम नचिकेता से इन्द्रियों के विषय में बताते हुए कहते हैं कि -

इन्द्रियेभ्यः पर ह्यर्था अर्थेभ्यश्च परं मनः।
मनसस्तु परा बुद्धिर्बुद्धेरात्मा महान् परः॥ (1/3/10)

(इन्द्रियाँ-विषय-मन-बुद्धि-आत्मा अव्यक्त (माया) परम पुरुष)

- इन्द्रियों से शब्दादि विषय बलवान् हैं शब्दादि विषयों से मन प्रबल है और मन से भी बुद्धि प्रबल है और बुद्धि से भी महान् आत्मा अत्यन्त श्रेष्ठ और बलवान् है।

- **आत्मा का साक्षात्कार-** आत्मा के साक्षात्कार की प्रक्रिया यह है कि स्थूल तत्त्व को उससे अधिक सूक्ष्म तत्त्व में उत्तरोत्तर विलीन करना पड़ता है।

यच्छेद्वाङ्मनसी प्राज्ञस्तद्यच्छेज्ज्ञान आत्मनि।
ज्ञानमात्मनि महति नियच्छेत्तद्यच्छेच्छान्त आत्मनि॥
(1/3/13)

बुद्धिमान् साधक को चाहिये कि वाक् आदि समस्त इन्द्रियों को मन में निरुद्ध करें फिर उस मन को ज्ञानस्वरूप बुद्धि में विलीन करें।ज्ञानस्वरूप बुद्धि को महान आत्मा में विलीन करें और उस आत्मा को शान्त स्वरूप परमपुरुष परमात्मा में विलीन करें।

- वाणी → मन → बुद्धि → आत्मा → परमपुरुष परमात्मा
- यम मनुष्यों को उद्बोधित करते हुए कहते हैं कि आत्मज्ञान की ओर उन्मुख होने और श्रेष्ठ आचार्यों के उपदेश से ज्ञान प्राप्त करके ही इस परब्रह्म परमेश्वर को जाना जा सकता है।

उतिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति॥

- हे मनुष्यों! उठो जागो और श्रेष्ठ महापुरुषों के पास जाकर उस परब्रह्म परमेश्वर को जान लो। कठ. (1/3/14)

ईशावास्य या ईश उपनिषद्

* यह उपनिषद् शुक्लयजुर्वेद (वाजसनेयी संहिता) का अन्तिम चालीसवाँ अध्याय है।
* ज्ञातव्य है कि एकमात्र यही ऐसा उपनिषद् है जो वैदिक संहिता का भाग है। अन्यथा शेष सभी ब्राह्मण-ग्रन्थों के भाग हैं।
* इसके रचयिता ऋषि दध्यङ् आथर्वण थे।
* प्रथम मन्त्र 'ईशावास्य' शब्द समूह से प्रारम्भ है, और
* कुल 18 मन्त्र हैं।
* इस उपनिषद् को 'ईशोपनिषद्' या 'ईशावास्योपनिषद्' कहते हैं।

ईशावास्योपनिषद्

शान्तिपाठ

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

अन्वयः– ॐ अदः पूर्णम्, इदं पूर्णं, पूर्णात् पूर्णम् उदच्यते। पूर्णस्य पूर्णम् आदाय, पूर्णम् एव अवशिष्यते।

शब्दार्थ– ॐ– ब्रह्म का प्रतीक, माङ्गलिक पद। **अदः–** वह (कारणब्रह्म)। **पूर्णम्-** पूरा है। **इदम्-** यह (कार्यब्रह्म)। **उदच्यते-** उत्पन्न हुआ है। **आदाय-** लेकर। **अवशिष्यते-** बचा रहता है।

अनुवाद– ओम् वह परब्रह्म सब प्रकार से पूर्ण है, उसका अंशभूत यह जगत् भी पूर्ण है। उस पूर्ण परब्रह्म से यह पूर्ण उत्पन्न हुआ है। पूर्णब्रह्म की पूर्णता को ग्रहण कर लेने पर भी वह परब्रह्म एवं जगत् पूर्णरूप में ही बचा रहता है।

ॐ ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ॥1॥

अन्वयः– जगत्यां यत् किञ्च जगत्, इदं सर्वम् ईशावास्यम्, तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः, मा गृधः, धनं कस्यस्विद्?

शब्दार्थ– जगत्याम्- सम्पूर्ण संसार में। **यत्-** जो। **किञ्च-** कुछ भी। **जगत्-** जड़ प्रकृति से युक्त होते हुए भी, गतिमान्। **इदं-** यह, स्थूल जगत्। **सर्वम्-** सब ईशा-ईश्वर से। **वास्यं-** व्याप्त। **तेन-** उस ईश्वर रूपी कारण से युक्त हुए से। **त्यक्तेन-** उसके द्वारा प्रदत्त। **भुञ्जीथाः-** भोग करो। **मा-** मत। **गृधः** लोभ करो। **धनम्-** भोग्य वस्तुएँ। **कस्य स्वित्-** किसका है?

अनुवाद– अखिल विश्व में जो कुछ भी गतिशील अर्थात् चर-अचर पदार्थ हैं, उन सब में ईश्वर अपनी गतिशीलता के साथ व्याप्त है। उस (कारणरूप) ईश्वर से सम्पन्न हुए से तुम त्याग की भावनापूर्वक भोग करो। आसक्त मत हो क्योंकि धन अथवा भोग्य पदार्थ किसके हैं अर्थात् किसी के भी नहीं हैं? अथवा केवल ईश्वर के हैं अतः किसी अन्य के धन का लोभ मत करो।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥2॥

अन्वयः– इह कर्माणि कुर्वन् एवं शतं समाः जिजीविषेत्। एवं त्वयि नरे कर्म न लिप्यते। इतः अन्यथा न अस्ति।

शब्दार्थ– इह- इस भौतिक जगत् में। **कर्माणि-** कर्मों को। **शतं समाः–** सौ वर्षों तक। **जिजीविषेत्-** जीने की इच्छा करें। **त्वयि–** तुझमें। **नरे–** अनासक्त मनुष्य में। **लिप्यते-** आसक्त होता है। **इतः-** कर्मसम्पादन से। **अन्यथा-** दूसरा कोई उपाय।

अनुवाद– इस लोक में शास्त्र निर्दिष्ट कर्मों को करते हुए ही सौ वर्ष जीने की इच्छा करे। इस प्रकार मनुष्यत्वाभिमानी तुझमें कर्म लिप्त नहीं होंगे। इससे अतिरिक्त दूसरा मार्ग भी नहीं है।

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसाऽऽवृताः।
तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चाऽऽत्महनो जनाः॥3॥

अन्वयः— असुर्या नाम ते लोकाः, अन्धेन तमसा आवृताः। ये के च आत्महनः जनाः, ते प्रेत्य तान् अभिगच्छन्ति।

शब्दार्थ— असुर्याः— सूर्यविहीन, अन्धकारित, असुर सम्बन्धी। **लोकाः-** वासस्थान, शरीर। **अन्धेन-** अज्ञान से। **तमसा-** अन्धकार से। **आवृताः-** आच्छादित हैं। **आत्महनः-** आत्मा का ह्रास करने वाले। **प्रेत्य-** मर कर। **अभिगच्छन्ति-** जाते हैं।

अनुवाद— असुरों अर्थात् अज्ञानियों के प्रसिद्ध वे लोक अज्ञानरूप गहन अन्धकार से आच्छादित हैं। जो आत्मा का हनन अर्थात् ह्रास करने वाले अर्थात् अविद्यादोष से ग्रस्त जीव हैं वे मर कर उन्हीं दुःख क्लेशरूप भयंकर लोकों को जाते हैं।

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन् पूर्वमर्षत्।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत् तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ।।4।।

अन्वयः— अनेजत् एकं मनसः जवीयः पूर्वम् अर्षत्, एनत् देवाः न आप्नुवन्। तत् तिष्ठत् अन्यान् धावतः अत्येति, तस्मिन् मातरिश्वा अपः दधाति।

शब्दार्थ— अनेजत्- निश्चल। **एकम्-** अद्वितीय। **मनसः-** अन्तःकरण की गति से। **जवीयः-** अत्यधिक वेगवान्। **पूर्वम्-** पहले। **अर्षत्-** व्याप्त। **एनत्-** इसको। **देवाः-** दिव्य स्वभाव वाली इन्द्रियाँ, देवता। **आप्नुवन्-** प्राप्त किया। **तिष्ठत्-** स्थित होता हुआ। **अन्यान्-** काल अथवा पञ्चतत्त्वों को। **धावतः-** दौड़ते हुए का। **अत्येति-** उल्लङ्घन करता है। **तस्मिन्-** उसमें। **मातरिश्वा-** वायु। **अपः-** जल वर्षण आदि कर्मों को। **दधाति-** धारण करता है।

अनुवाद— वह ब्रह्म अपने स्वरूप में कम्पनरहित अथवा अविचलित, अकेला अथवा अद्वितीय, मन से भी वेगवान्, पहले से वर्तमान तथा सर्वज्ञ है। इसको दिव्यगुण स्वभाव वाले इन्द्र देवता अथवा इन्द्रियाँ भी नहीं प्राप्त कर सकती हैं। वह स्थिर रहते हुए ही दूसरे दौड़ने वालों का अतिक्रमण कर देता है। उसके होने पर ही वायु आदि देवता जलवर्षण आदि क्रियाओं को धारण करते हैं।

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥5॥

अन्वयः— तत् एजति, तत् न एजति, तद् दूरे, तत् उ अन्तिके, तत् अस्य सर्वस्य अन्तः, तत् अस्य सर्वस्य उ बाह्यतः।

शब्दार्थ— तत्- वह आत्मतत्त्व। **एजति-** गतिशील। **दूरे-** इन्द्रियसीमा के बाहर। **अन्तिके-** भौतिक शरीर के पास। **अन्तः-** हृदय में। **बाह्यतः-** सांसारिक पदार्थों में।

अनुवाद— वह आत्मतत्त्व चलता है, वह नहीं चलता है। वह दूर है, वह समीप भी है। वह इन सबके अन्तर्गत है, वह ही इन सबके बाहर भी है।

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चाऽऽत्मानं ततो न विजुगुप्सते ॥6॥

अन्वयः— तु यः सर्वाणि भूतानि आत्मनि एव अनुपश्यति च सर्वभूतेषु आत्मानं (पश्यति), ततः न विजुगुप्सते।।

शब्दार्थ— यः- जो मुमुक्षु। **सर्वाणि-** समग्र। **भूतानि-** चेतन-अचेतन पदार्थों को। **आत्मनि-** आत्मा में। **एव-** ही। **अनुपश्यति-** निरन्तर देखता है। **सर्वभूतेषु-** सम्पूर्ण **चर-** अचर जगत् में। **आत्मानं-** स्वयं को। **ततः-** उस (अभेददर्शन) के पश्चात्। **विजुगुप्सते-** घृणा करता है।

अनुवाद— परन्तु जो व्यक्ति समस्त प्राणियों को आत्मा में देखता है और समग्र प्राणियों में आत्मा (स्वयं) को देखता है, उस (अभेददर्शन की अनुभूति के अनन्तर) वह (किसी से) घृणा करता है।

यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः॥7॥

अन्वय— यस्मिन् विजानतः सर्वाणि भूतानि आत्मा एव अभूत् तत्र एकत्वम् अनुपश्यतः कः मोहः कः शोकः?

शब्दार्थ— यस्मिन्- जिस दशा में। **विजानतः-** विशेष अर्थात् ब्रह्मज्ञ के। **सर्वाणि-** समस्त। **भूतानि-** प्राणी। **आत्मा-** ब्रह्मांश। **अभूत्-** हो गए। **तत्र-** उस क्षण में। **एकत्वम्-** अद्वैतरूप परमात्मतत्त्व को। **अनुपश्यतः-** सूक्ष्मता से अनुभव कर लेने वाले के। **मोहः-** आसक्ति। **शोकः-** सांसारिक कष्ट।

अनुवाद— जिसमें विशेष ज्ञान सम्पन्न योगी के लिए सभी प्राणी आत्मा ही हो गए, उस अवस्था में एकत्व का अनुभव कर लेने वाली पुरुष के लिए कौन सा मोह और कौन-सा शोक?

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्
व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः॥8॥

अन्वयः- सः पर्यगात् शुक्रम् अकायम् अव्रणम् अस्नाविरं शुद्धम् अपापविद्धम् कविः मनीषी परिभू : स्वयम्भूः शाश्वतीभ्यः समाभ्यः याथातथ्यतः अर्थान् व्यदधात् ।।8।।

शब्दार्थ- सः- आत्मा। **पर्यगात्-** संसार में सर्वत्र गया हुआ, सर्वव्याप्त। **शुक्रम्-**शुद्ध अथवा दीप्त। **अकायम्-** शरीर से रहित **अव्रणम्—** अक्षत। **अस्नाविरम्—** नाड़ी संस्थान से रहित।

शुद्धम्- निर्मल अथवा पवित्र। **अपापविद्धम्-** शुभ अशुभ कर्मों के सम्पर्क से शून्य। **कविः-** क्रान्तदर्शी अथवा मेधावी। **मनीषी-** मनोभावों का ज्ञाता। **परिभूः-** श्रेष्ठ स्वयंभू-स्वेच्छा से आविर्भूति होने वाला। **शाश्वतीभ्यः-** व्यवधानशून्य, निरन्तर। **समाभ्यः-** संवत्सर रूप प्रजापतियों को वर्षो से। **याथातथ्यतः-** योग्यतानुसार। **अर्थान्-** चराचरवस्तूनि। **व्यदधात्-** विभक्त किया है।

अनुवाद- वह आत्मा सर्वगत, शुद्ध अथवा दीप्त, अशरीरी, अक्षत शिराओं से रहित, निर्मल अथवा पवित्र, पापों से रहित, सर्वद्रष्टा, सर्वज्ञ, सर्वोत्कृष्ट तथा स्वयंसिद्ध है । उसी ने नित्यसिद्ध संवत्सर नामक प्रजापतियों के लिए अथवा अनेक वर्षो से यथायोग्य रीति से पदार्थों अथवा कर्त्तव्यों का विभाजन किया है।

अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायां रताः ॥9॥

अन्वयः- ये अविद्याम् उपासते (ते) अन्धं तम : प्रविशन्ति। ये विद्यायां रताः ते ततः उ भूयः इव तमः (प्रविशन्ति)।

शब्दार्थ- ये- जो मनुष्य। **अविद्याम्-** भौतिकज्ञानम्। **उपासते-** अनुष्ठान करते हैं। **अन्धम्-** घोर। **तमः-** अन्धकार। **प्रविशन्ति-** प्रवेश करते हैं। **विद्यायाम्-** आत्मज्ञान में। **रताः-** आसक्त हैं। **ततः-** उससे भी। **भूयः-** अधिक।

अनुवाद- जो मनुष्य अविद्या अर्थात् कर्म की उपासना करतें हैं वे घोर अन्धकार में प्रवेश करते हैं और जो विद्या में ही रत हैं वे उससे भी अधिक अन्धकार में प्रवेश करते हैं।

अन्यदेवाहुर्विद्ययान्यदाहुरविद्यया।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ॥10॥

अन्वयः- विद्यया अन्यत् एव आहुः, अविद्यया अन्यत् आहुः। इति धीराणां शुश्रुम, ये नः तत् विचचक्षिरे ।।10।।

शब्दार्थ- विद्यया- देवताज्ञान अथवा देवोपासना से। **अन्यत्-** दूसरा अर्थात् स्वर्गादि लोकों की प्राप्ति। **आहुः-** बताते हैं। **अविद्यया-** कर्म से। **अन्यत्-** पृथक् अर्थात् पितृलोकों की प्राप्ति। **धीराणाम्-** बुद्धिमानों का। **शुश्रुम-** सुने हैं। **तत्-** ज्ञान तथा कर्म। **विचचक्षिरे-** व्याख्या की थी ।

अनुवाद-विद्या (देवताज्ञान) से अन्य ही फल बताते हैं । अविद्या (कर्म) से दूसरा ही फल बताते हैं । इस प्रकार धीर पुरुषों को हमने सुना है जिन्होंने हमें उस विषय की व्याख्या करके समझाया था।

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ॥11॥

अन्वयः- यः तत् उभयं विद्यां च अविद्यां च सह वेद, (सः) अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्यया अमृतम् अश्नुते ।।11।।

शब्दार्थ- यः- जो साधक। **तत् उभयम-** उन दोनों को। **विद्याम्-** देवताज्ञान को। **अविद्याम्-** कर्मयोग को। **सह-**एक साथ। **वेद-** जानता है। **सः-** वह। **अविद्यया-** कर्मानुष्ठान से। **मृत्युम्-** मरणस्थिति को। **विद्यया-** देवताज्ञान से। **अमृतम्-** अमृतत्त्व को। **अश्नाति-** भोग करता है ।

अनुवाद- जो मनुष्य उन दोनों विद्या अर्थात् देवताज्ञान के तत्त्व को तथा अविद्या अर्थात् कर्म के तत्त्व को एक साथ जान लेता है, वह कर्मों के अनुष्ठान से मृत्यु को पार करके अमृतत्त्व का भोग करता है।

अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्यां रताः ॥12॥

अन्वयः- ये असम्भूतिम् उपासते (ते) अन्धं तमः प्रविशन्ति, ये सम्भूत्यां रताः, ते तत उ भूयः इव तमः।।12।।

शब्दार्थः- ये- जो पुरुष। **असम्भूतिम्-** कारणरूप अव्यक्त प्रकृति। **उपासते-** आराधना करते हैं। **ते-** वे सांसारिक जन। **अन्धं तमः-** अदर्शनात्मक लोकों को। **प्रविशन्ति-** प्रवेश करते हैं। **ये-** जो साधक। **सम्भूत्याम्-** कार्यब्रह्म। **रताः-** अनुरागी हैं। **ते-** वे विद्वान्। **ततः भूय-** उसकी अपेक्षा अधिक। **प्रविशन्ति-** प्रवेश करते हैं।

अनुवाद- जो पुरुष कारण रूप अव्यक्त प्रकृति उपासना करते हैं वे घोर अन्धकार में प्रवेश करतें हैं, जो कार्यब्रह्म में ही आसक्त रहते हैं, वे मानो उससे भी अधिक अन्धकार में प्रवेश करते हैं।

अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात् ।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे॥13॥

अन्वयः- सम्भवात् अन्यत् एव आहुः असम्भवात् अन्यत् आहुः इति धीराणां शुश्रुम, ये नः तत् विचचक्षिरे।।13।।

शब्दार्थ- सम्भवात्- अव्यक्तप्रकृति की उपासना से। **अन्यत्-** अणिमादि ऐश्वर्यसिद्धि। **असम्भवात्-** अव्याकृत की उपासना से। **अन्यत्-** प्रकृतिलय। **तत्-**उस विषय विशेष को ।

अनुवाद-कार्यप्रकृति से दूसरा ही फल बताते हैं तथा कारण प्रकृति से दूसरा फल बताते हैं। इस प्रकार धीर पुरुषों के वचन हमने सुनें हैं जिन्होंने हमारे लिए उस विषय की व्याख्या की थी ।

सम्भूतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयं सह।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्यामृतमश्नुते॥14॥

अन्वयः- यः तत् उभयं सम्भूतिं च विनाशं च सह वेद (सः) विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्या अमृतम् अश्नुते।

शब्दार्थः- सम्भूतिम्- उत्पत्ति अथवा कार्यब्रह्म। वेद जानता है। **अश्नुते-** पाता है। **विनाशम्-** मृत्यु अथवा कारण ब्रह्म।

अनुवाद- जो मनुष्य सम्भूति अर्थात् कार्य ब्रह्म तथा विनाश अर्थात् कारण ब्रह्म को साथ - साथ जानता है, वह कार्यब्रह्म की उपासना से मृत्यु को प्राप्त करके कारण ब्रह्म के द्वारा अमृत को प्राप्त कर लेता है।

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये ॥15॥

अन्वयः- पूषन्। सत्यस्य मुखं हिरण्मयेन पात्रेण अपिहितम्, सत्यधर्माय दृष्टये तत् त्वम् अपावृणु ।।15।।

शब्दार्थः- पूषन्- पोषक। **सत्यस्य-** सत् युक्त ईश्वर। **मुखम्-** प्रवेशद्वार। **हिरण्मयेन-** सुवर्ण सदृश चमकदार। **पात्रेण-** ढक्कन से। **अपिहितम्-** ढका हुआ है। **सत्यधर्माय-** सत् रूप के दर्शन के लिए। **तत्-** उस आवरणविशेष को। **त्वम्-** हे देव! । **अपावृणु-** हटा दीजिए।

अनुवाद- हे पोषण करने वाले! सत्य का मुख सुवर्णयुक्त पात्र से ढका हुआ है, सत्यधर्म को देखने के लिए अथवा सत्यधर्म का अनुष्ठान करने वाले मेरे लिए उस आवरण को हटा दीजिए।

पूषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य व्यूह रश्मीन्समूह ।
तेजो यत्ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि
योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमस्मि ॥16॥

अन्वयः- पूषन्! एकर्षे! यम! सूर्य! प्राजापत्य! रश्मीन् व्यूह, तेजः समूह, यत् ते कल्याणतमं रूपं तत् ते पश्यामि, यः असौ असौ पुरुषः, अहं सः अस्मि ।।16।।

शब्दार्थ- पूषन्- पूषा अथवा सूर्य। **एकर्षे-** अद्वितीय ऋषि। **यम्-** नियामक। **सूर्य-** प्रेरणादायक। **प्राजापत्य-** प्रजाओं के स्वामी। **रश्मीन्-** किरणों को। **व्यूह-** बटोर लें। **समूह-** समेट लें। **कल्याणतमम्-** मङ्गलमय। **तत्-** श्रेष्ठ रूप। **ते-** आपके अनुग्रह से। **पश्यामि-** साक्षात् अनुभव कर रहा हू। **असौ असौ-** यह प्रत्यक्ष तथा परोक्ष। **पुरुषः-** परमचेतना, आत्मा। **अहम्-** अज्ञ जीव। **सः-** ईश्वर, ब्रह्म।

अनुवाद- हे जगत्पोषक सूर्य ! हे अद्वितीय ऋषि ! हे सर्वनियन्ता ! हे प्रेरणादायक ! हे प्रजाओं के अधिष्ठाता! किरणों को समेट लीजिए , तेज को आत्मसात् कर लीजिए । जो आपका अतिशय कल्याणमय रूप है, उसे आपकी कृपा से देखता हूँ। जो यह आदित्यमण्डलस्थ पुरुष है, मैं वही हूँ।

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम् ।
ॐ क्रतो स्मर कृतं स्मर क्रतो स्मर कृतं स्मर ॥17॥

अन्वयः- अथ वायु : अमृतम् अनिलम् इदं शरीरं भस्मान्तम् ।।ॐ क्रतो स्मर कृतं स्मर क्रतो स्मर कृतं स्मर ।।17 ।।

शब्दार्थ- अथ- मृत्यु के अनन्तर। **वायुः-** सूक्ष्मशरीर। **अमृतम्-** सूक्ष्मरूप। **अनिलम्-** प्राणवायु । **इदम्-** प्रस्तुत। **शरीरम्-** स्थूल शरीर। **भस्मान्तम्-** भस्मावशेष। **ॐ-** प्रणवरूप , ब्रह्म का प्रतीक। **क्रतो-** सङ्कल्पात्मक मन, करणीय कर्म। **क्रतु-** अनुष्ठित कर्म, यज्ञादि। **क्रतो-** सङ्कल्पात्मक जीव। **स्मर-** अनुरूप फल प्राप्त करो ।

अनुवाद- प्राण वायु अमृत रूप प्राणवायु में विलीन हो जाए, यह शरीर भस्मावशेष हो जाये । हे सङ्कल्पात्मक (ॐ रूप) मन! तू स्मरण कर, मेरे द्वारा सम्पादित कर्मों का स्मरण कर। हे सङ्कल्पात्मक जीव! तू स्मरण कर, अपनों द्वारा सम्पादित कर्मों का स्मरण कर। अथवा अकृत अर्थात् भविष्यत् काल में करणीय कर्मों का स्मरण कर, कृत अर्थात् भूतकाल में सम्पादित कर्मों का स्मरण कर ।

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमउक्तिं विधेम॥ 18॥

अन्वयः- अग्ने! अस्मान् राये सुपथा नय, देव! विश्वानि वयुनानि विद्वान्। अस्मत् जुहुराणम्, एनः, युयोधि, ते भूयिष्ठां नम उक्तिं विधेम ।।18।।

शब्दार्थ- अग्ने- ज्वलनशील पदार्थ अथवा अग्नि के अधिष्ठापक देव। **राये-** धन अथवा कर्मफल के लिए। **सुपथा-** शोभन अथवा समुचित मार्ग से। **नय-** ले चलिए। **देव-** गुणविशिष्ट पुरुष। **विश्वानि-** समग्र। **वयुनानि-** कर्मों अथवा ज्ञानों को। **विद्वान्-** जानता है। **अस्मत्-** हमसे। **जुहुराणम्-** कुटिलताओं को। **एनः-** पापों को। **युयोधि-** अलग कर दीजिए। **ते-** देवादिगुणविशिष्ट आपके लिए। **भूयिष्ठाम्-** अत्यधिक। **नम-** प्रणाम। **उक्तिम्-** वचनों को। **विधेम-** सम्पादित करते हैं।

अनुवाद- हे अग्नि के अधिष्ठातृ देव ! हमें ऐश्वर्य अथवा कर्म की पराकाष्ठा को पाने के लिए सन्मार्ग से ले चलिए । हे देव!

आप सम्पूर्ण कर्म अथवा ज्ञान को जानने वाले हैं अतः हमसे हमारे मार्ग के प्रतिबन्धक पापों को दूर कर दीजिए । आपके लिए अत्यधिक नमस्कार के वचन कहते हैं , बारम्बार नमन करते हैं।

वेदों का रचनाकाल

➢ वेदों का रचनाकाल निर्धारण वैदिक वाङ्मय की एक जटिल समस्या है। विभिन्न विद्वानों ने भाषा, रचनाशैली, धर्म एवं दर्शन, भूगर्भशास्त्र, ज्योतिष, उत्खनन में प्राप्त सामग्री, अभिलेख आदि के आधार पर वेदों का रचनाकाल निर्धारित करने का प्रयास किया है, किन्तु इनसे अभी तक कोई सर्वमान्य रचनाकाल निर्धारित नहीं हो सका है।

➢ भारतीय षड्दर्शन- पूर्वमीमांसा, उत्तरमीमांसा (वेदान्त), सांख्य-योग, न्याय-वैशेषिक एवं वेदभाष्यकारों ने वेद के अपौरुषेयत्व का कथन किया है। पूर्वमीमांसा वेद को नित्य एवं अनुत्पन्न मानती है।

➢ पाश्चात्त्य विद्वान् भारतीय परम्परागत 'वेद के अपौरुषेयत्व सिद्धान्त' को स्वीकार नहीं करते। उनका मानना है कि वेद आर्यों की रचना है, मानवकृत (पौरुषेय) हैं; अतएव अपौरुषेय नहीं है।

प्रो. मैक्समूलर का मत

➢ प्रो. मैक्समूलर ने सन् 1859 ई. में स्वरचित ग्रन्थ **"A History of Ancient Sanskrit literature"** में वेदों के काल निर्णय का सर्वप्रथम प्रयास किया।

➢ मैक्समूलर के अनुसार सर्वप्राचीन ऋग्वेद की रचना 1200 ई. पू. (विक्रमपूर्व) में हुई होगी, क्योंकि विक्रम से लगभग 500 वर्ष पूर्व उदित हुआ बौद्ध धर्म वैदिक वाङ्मय की सत्ता को स्वीकार करता है।

➢प्रो. मैक्समूलर ने समग्र वैदिककाल को चार विभागों में बाँटा है –

1. छन्दकाल 2. मन्त्रकाल 3. ब्राह्मणकाल 4. सूत्रकाल इसमें प्रत्येक युग की विचार धारा के उदय तथा ग्रन्थ रचना के लिए उन्होंने 200 वर्षों का काल माना है।

1. सूत्रकाल - 600 ई. पू. से 200 ई. पू. तक
2. ब्राह्मणकाल- 800 ई. पू. से 600 विक्रमपूर्व (ई. पू.)
3. मन्त्रकाल - 1000 से 800 विक्रमपूर्व (ई. पू.)
4. छन्दकाल - 1200 से 1000 विक्रमपूर्व (ई. पू.)

➢ सन् 1890 ई. में प्रकाशित **"Physical Religion"** (भौतिक धर्म) नामक अपनी पुस्तक में प्रो. मैक्समूलर ने अपनी भूल स्वीकार करते हुए लिखा है कि- "इस भूतल पर कोई भी ऐसी शक्ति नहीं है, जो कभी निश्चय कर सके कि वैदिक मन्त्रों की रचना 1000 या 1500 या 2000 या 3000 विक्रमपूर्व में की गयी हो।"

➢ परन्तु हम भारतीयों का दुर्भाग्य कि वेदों के काल निर्णय के विषय में मैक्समूलर के 1200 विक्रमपूर्व को ही हम सनातन सत्य मानते आ रहे हैं, परीक्षाओं में भी यह प्रश्न प्रमुखता से पूछा जा रहा है, जबकि इस मत के प्रणेता मैक्समूलर ने स्वयं इसे अपनी भूल मानते हुए, इस मत का खण्डन कर चुके हैं।

ए. वेबर का मत

➢ जर्मन विद्वान् प्रो. ए. वेबर ने कहा है – "वेदों का समय निश्चित नहीं किया जा सकता। वे उस तिथि के बने हुए हैं, जहाँ तक पहुँचने के लिए हमारे पास उपयुक्त साधन नहीं है। वर्तमान प्रमाण, हम लोगों को उस समय के उन्नत शिखर तक पहुँचाने में असमर्थ हैं।"

➢ प्रो. वेबर यह भी कहते हैं कि – "वेदों के समय को कम से कम 1200 ई. पू. या 1500 ई. पू. के बाद का कथमपि स्वीकार नहीं किया जा सकता।"

➢ प्रो. वेबर ने अपनी पुस्तक "History of Indian literature" यहाँ तक लिख दिया कि – "Any such of attempt of defining the relic antiquity is absolutely fruitless" अर्थात् वेदों का काल निर्धारण के लिए प्रयत्न करना सर्वथा बेकार है।

डॉ. जैकोबी का मत

➢ जर्मन विद्वान् डॉ. जैकोबी का वैदिक काल विषयक सिद्धान्त ज्योतिष की आधार शिला पर अवलम्बित है; जो बालगंगाधर तिलक के मत से मिलता-जुलता है।

➢ डॉ. जैकोबी ने कृत्तिका और बसन्तपात के आधार पर वेदमन्त्रों का रचनाकाल 4590 ई. पू. तथा ब्राह्मण ग्रन्थों का रचनाकाल 2500 ई. पू. के पश्चात् स्वीकार किया है।

➢ इसप्रकार संक्षेप में याकोबी के अनुसार 4500 ई. पू. से 3000 ई. पू. ऋग्वेद का रचनाकाल है तथा 3000 ई. पू. से. 2000 ई. पू. ब्राह्मणों का रचनाकाल है।

बालगंगाधर तिलक का मत

➢ लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने ऋग्वेद में उपलब्ध ज्योतिष विषयक साक्ष्यों के आधार पर वेदों का काल 4000 से 6000 विक्रमपूर्व स्वीकार किया है।

➢ **तिलक जी ने वैदिक काल को चार विभागों में रखा है-**

1. **अदितिकाल**	-	6000 ई. पू. से 4000 विक्रम पूर्व तक
2. **मृगशिरा काल**	-	4000 ई. पू. से. 2500 विक्रमपूर्व तक (ऋग्वेदसंहिता का मन्त्रकाल)
3. **कृत्तिका काल**	-	2500 से 1400 ई. पू. विक्रमपूर्व तक (तैत्तिरीय संहिता व ब्राह्मणकाल)
4. **अन्तिम काल**	-	1400 से 500 विक्रमपूर्व तक (सूत्रग्रन्थों का रचनाकाल)

➢ लोकमान्य तिलक जी ने **"Orion" (ओरायन)** के पश्चात् लिखे गये अपने ग्रन्थ "Arctic Home in the Vedas" में वेदकाल को 10000 (दस हजार) ई. पू. बतलाया। उन्होंने विज्ञान तथा ज्योतिष के आधार पर यह सिद्ध किया कि भारत में आने से पूर्व आर्य लोग उत्तरी ध्रुव में रहते थे, और वहाँ पर भी वे वैदिक धर्म को ही मानते थे।

एम. विण्टरनित्स का मत

➢ विण्टरनित्स ने ब्राह्मणग्रन्थों, पाणिनि व्याकरण की संस्कृत भाषा तथा अशोक के शिलालेखों की भाषा – इन सबका वैदिक भाषा से साम्य को ध्यान में रखते हुए, ऋग्वेद का काल जैकोबी तथा तिलक द्वारा निर्धारित तिथि (4500 से 6000 ई. पू.) के बीच में स्वीकार किया है।

भारतीय परम्परागत विचार

➢ भारतीय परम्परावादी विद्वानों के मतानुसार वेदों का काल निर्धारण करना मूर्खता ही नहीं बल्कि असम्भव है।

➢ भारतीय परम्परागत विद्वानों का विचार है कि – 'वेद नित्य हैं, और सृष्टि के प्रारम्भ से ही वेदों का आविर्भाव हुआ है, ऋग्वेद का पुरुष सूक्त वेदों की उत्पत्ति के लिए स्वयं प्रमाण हैं-

तस्मात् यज्ञात् सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्मात् यजुस्मादजायत॥

➢ भारतीय मत में जिस परमात्मा ने सृष्टि की उत्पत्ति की उसी ने सृष्टि के पूर्व वेदों की रचना की होगी, इसीलिए वेद अपौरुषेय हैं।

➢ भारतीय परम्परावादी विद्वानों का कहना है कि सृष्टिकर्ता विधाता ने सृष्ट्युत्पत्ति के पूर्व जिस विचारधारा की सर्वप्रथम कल्पना अपनी बुद्धि में की, वही आम्नाय या वेद हैं।

➢ ऋग्वेद का ही कथन है-

''तस्मादृचो पातक्षन् यजुस्तस्मादपाकयन्।
सामानि यस्य लोमानि अथर्वाङ्गिरसो मुखम्॥''

➢ आदि शङ्कराचार्य ने वेदों का सर्वज्ञानमयत्व मानते हुए कहते हैं- **महतः ऋग्वेदादेः शास्त्रस्य अनेकविद्यास्थानोपबृंहितस्य प्रदीपवत् सर्वार्थावद्योतिनः सर्वज्ञकल्पस्य योनिः...** अर्थात् ऋग्वेदादि महान् शास्त्र अनेक विद्यास्थानों से विकसित हुआ है, और यह प्रदीपवत् समस्त विषयों को प्रकाशित करता है। इसप्रकार के सर्वज्ञान सम्पन्न शास्त्र का उत्पत्ति स्थान ब्रह्म ही हो सकता है, क्योंकि सर्वज्ञ परब्रह्म परमात्मा के अतिरिक्त अन्य किसी से ऋग्वेदादि सर्वज्ञानसम्पन्न शास्त्र की उत्पत्ति नहीं हो सकती।

➢ **''ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।''** के अनुसार सर्वज्ञानमय पूर्णवेद की उत्पत्ति पूर्णब्रह्म से ही सम्भव है।

➢ भगवान् बादरायण व्यास ने भी ब्रह्मसूत्रस्थ **''विप्रतिषेधाच्च''** के द्वारा इसी मत को सूचित किया है।

➢ भगवान् जैमिनि ने पूर्वमीमांसादर्शन में **''नित्यस्तु स्याद् दर्शनस्य परार्थत्वात्''** इत्यादि छः सूत्रों द्वारा अनित्यवादी पक्षों के तर्कों का खण्डन करते हुए, वेदों का नित्यत्व प्रतिपादित करते हैं।

➢ उत्तरमीमांसा में महर्षि बादरायण व्यास जी ने **''शास्त्रयोनित्वात्''** इस सूत्र के द्वारा वेदों का उद्गम परब्रह्म से ही हुआ है। इस सिद्धान्त को स्थापित किया है।

➢ नैयायिकों का मानना है कि- ''सृष्टि के आदि में ईश्वर की निःश्वासवायु से वेदों की उत्पत्ति हुई-

''अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा।
आदौ वेदमयी दिव्या यतः सर्वा प्रवृत्तयः॥''

➢ इसप्रकार भारतीय परम्परावादी विद्वान् वेदों को नित्य स्वीकार करते हुए अपौरुषेय मानते हैं।

ऋग्वेद संहिता का परिचय

➢ वैदिक साहित्य का सबसे प्राचीन व प्रथम ग्रन्थ का नाम ऋग्वेद है। इसका कारण यह है कि यह सभी वेदों में अभ्यर्हित (पूजित) है। ऋग्वेद शब्द में ऋच् या ऋक् का अर्थ है- स्तुतिपरक मन्त्र, **'ऋच्यते स्तूयतेऽनया इति ऋक्।'** जिन मन्त्रों के द्वारा देवों की स्तुति की जाती है,उन्हें **ऋक् या ऋचा** कहते हैं। ऋग्वेद में विभिन्न देवों की स्तुति वाले मन्त्र हैं, अतः इसे ऋग्वेद कहते हैं। भाषा, शैली, व्याकरण एवं मन्त्रों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि यह किसी एक समय की रचना नहीं, किन्तु विभिन्न काल में विभिन्न ऋषियों द्वारा हुई रचनाओं का संग्रह-ग्रन्थ है। ऐसी ऋचाओं के संग्रह के कारण इसे **ऋग्वेद-संहिता** भी कहते हैं। यहाँ पर

'संहिता' शब्द का प्रयोग संकलन या संग्रह अर्थ में होता है।

➢ **ऋग्वेद का महत्त्व-** ऋग्वेद को चारों वेदों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण, अक्षुण्ण तथा आदरणीय माना जाता है। परिमाण की दृष्टि से भी यह चारों वेदों में विशालकाय ग्रन्थ है। इसमें अधिकांश देव इन्द्र, अग्नि, सोम, विष्णु, मरुत् आदि प्राकृतिक तत्त्वों के प्रतिनिधि हैं।

➢ ऋग्वेद के **आचार्य पैल** हैं जो व्यास के शिष्य थे।

➢ **ऋत्विक् -** चारों वेदों के अनुसार यज्ञ में चार ऋत्विक् (ऋत्विज्) होते हैं- होता, अध्वर्यु, उद्गाता और ब्रह्मा। ऋग्वेद का ऋत्विक् **'होता'** माना जाता है।

➢ ऋग्वेद में **होता, ऋत्विक्** या ऋचाओं का पाठ करता है। अतएव ऋग्वेद को **होतृवेद** भी कहा जाता है।

➢ आयुर्वेद को ऋग्वेद का उपवेद भी कहा जाता है।

➢ ऋग्वेद की उत्पत्ति **अग्नि** से बतायी गयी है।

➢ ऋग्वेद वाक्तत्त्व का संकलन है।

ऋग्वेद का विभाजन

➢ ऋग्वेद में ऋचाओं का दो प्रकार से विभाजन है – 1. अष्टकक्रम 2. मण्डलक्रम

➢ प्रत्येक अष्टक में 8 अध्याय होते हैं, इसप्रकार ऋग्वेद में कुल 64 अध्याय हैं।

➢ प्रत्येक अध्याय के अवान्तर विभागों का नाम 'वर्ग' है।

➢ वर्गों में ऋचाओं की संख्या निश्चित नहीं है, किन्तु लगभग पाँच ऋचाओं का एक वर्ग होता है। किन्तु एक मन्त्र से लेकर नव मन्त्रों तक के भी वर्ग मिलते हैं।

➢ ऋग्वेद में समस्त वर्गों की संख्या 2024 है।

➢ मण्डलक्रम के अनुसार सम्पूर्ण ऋग्वेद दस मण्डलों में विभक्त है। अतः इसे **'दशतयी'** नाम से भी जाना जाता है।

➢ प्रत्येक मण्डल में अनुवाक, सूक्त और मन्त्र हैं।

➢ ऋग्वेद के दश मण्डलों में 85 अनुवाक हैं ।

➢ ऋग्वेद में कुल सूक्तों की संख्या 1028 है, जिसमें 11 बालखिल्य सूक्त माने जाते हैं।

➢ मन्त्रों की संख्या 10580-1/4 है। कहीं कहीं मन्त्रों की संख्या 10552 भी मानी गयी है।
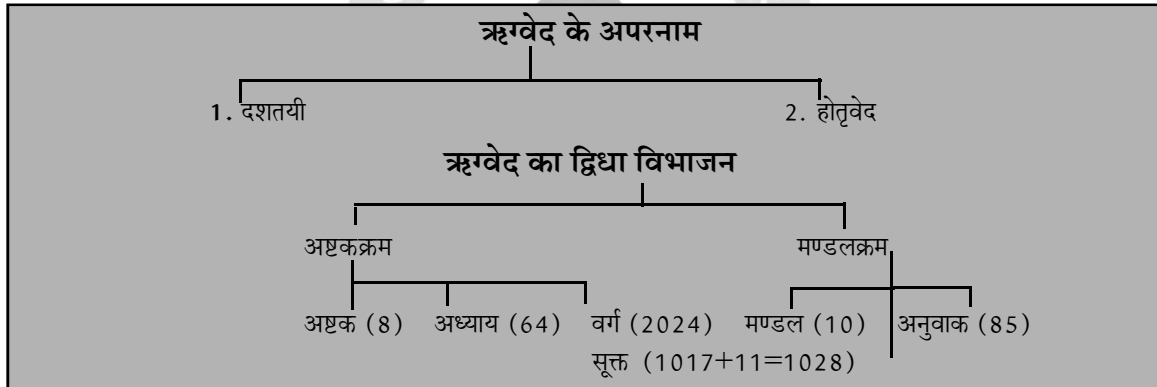
मण्डलक्रमानुसार ऋग्वेद का विभाजन

मण्डल	अनुवाक	सूक्तसंख्या	मन्त्रसंख्या	ऋषि नाम
प्रथम	24	191	2006	मधुच्छन्दा, मेधातिथि, दीर्घतमा
द्वितीय	4	43	429	गृत्समद
तृतीय	5	62	617	विश्वामित्र
चतुर्थ	5	58	589	वामदेव
पञ्चम	6	87	727	अत्रि
षष्ठ	6	75	765	भरद्वाज
सप्तम	6	104	841	वशिष्ठ
अष्टम	10	92+11	1716	कण्व, भृगु,अंगिरस बालखिल्य सूक्त
नवम	7	114	1108	सोम, पवमान
दशम	12	191	1754	त्रित, विमद, श्रद्धा,कामायनी
योग	85	1028	10552	

➢ **ऋग्वेद में छन्दोवर्णन- 'यदक्षरपरिमाणं तच्छन्दः'** अर्थात् जिसमें वर्णों या अक्षरों की संख्या निर्धारित हो, उसे छन्द कहते हैं। आचार्य पिङ्गल को छन्दशास्त्र का प्रणेता कहा जाता है, ऋग्वेद में मुख्यरूपेण सात छन्दों का प्रयोग हुआ है -

छन्द	अक्षर
गायत्री	24
उष्णिक्	28
अनुष्टुप्	32
बृहती	36
पंक्ति	40
त्रिष्टुप्	44
जगती	48

''गा उ अ बृ पं त्रि ज'' यह प्रत्येक छन्द का प्रथम अक्षर है। प्रत्येक छन्द में अक्षरों की संख्या 4-4 बढ़ती जाएगी। जैसे - गायत्री में 24 तो उष्णिक् में 28, अनुष्टुप् में 32 आदि।

ऋग्वेद की शाखायें-

➢ पतञ्जलि के अनुसार, **'एकविंशतिधा बाह्वृच्यम्'** अर्थात् महाभाष्य में ऋग्वेद की 21 शाखाओं का उल्लेख है।

➢ 'चरणव्यूह' के अनुसार वर्तमान में ऋग्वेद की 5 शाखायें प्राप्त हैं-

➢ वर्तमान समय में ऋग्वेद की केवल शाकल शाखा प्राप्त होती है।
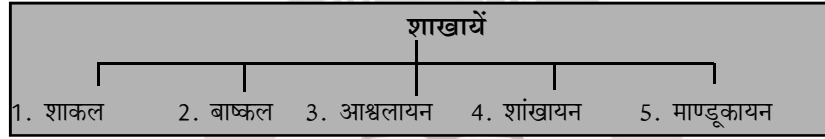
ऋग्वेदीय ब्राह्मण

➢ ऋग्वेद से सम्बद्ध दो ब्राह्मण ग्रन्थ हैं-

1. ऐतरेय ब्राह्मण 2. कौषीतकि (शांखायन) ब्राह्मण

➢ ऐतरेय ब्राह्मण में 40 अध्याय हैं।

➢ प्रत्येक पाँच अध्यायों की एक पञ्चिका और प्रत्येक अध्यायों में कण्डिकाएं हैं, जिसे खण्ड भी कहते हैं। 8 पञ्चिकाएँ और 285 खण्ड हैं।

➢ कौषीतकि ब्राह्मण शांखायन शाखा का ब्राह्मण है, इसलिए इसे 'शांखायन ब्राह्मण' भी कहते हैं।

➢ कौषीतकि ब्राह्मण में 30 अध्याय एवं 226 खण्ड हैं।

➢ प्रत्येक अध्याय में पाँच से लेकर सत्रह तक खण्ड हैं, कुल खण्डों की संख्या 226 है।

ऋग्वेदीय आरण्यक

➢ ऋग्वेद से सम्बद्ध दो आरण्यक ग्रन्थ हैं-

1. ऐतरेय आरण्यक 2. शांखायन आरण्यक

➢ ऐतरेय आरण्यक में 5 भाग हैं। इन भागों को आरण्यक या प्रपाठक कहते हैं।

➢ शांखायन आरण्यक में 15 अध्याय हैं।

उपनिषद्

➢ ऋग्वेद के दो उपनिषद् प्राप्त होते हैं-

1. ऐतरेय उपनिषद् 2. कौषीतकि उपनिषद्

➢ ऐतरेय आरण्यक के द्वितीय अध्याय के चतुर्थ खण्ड से लेकर षष्ठ खण्ड तक का नाम 'ऐतरेय उपनिषद्' है।

➢ ऐतरेय उपनिषद् में तीन अध्याय हैं।

➢ कौषीतकि उपनिषद् में चार अध्याय हैं।

कल्पसूत्र

➢ जिन ग्रन्थों में यज्ञ-सम्बन्धी विधियों का समर्थन या प्रतिपादन किया जाता है, उन्हें **'कल्प'** कहते हैं। इसके चार भेद हैं-

1. श्रौतसूत्र 2. गृह्यसूत्र 3. धर्मसूत्र 4. शुल्बसूत्र

ऋग्वेद के दो श्रौतसूत्र हैं-

ऋग्वेदीय तीन गृह्यसूत्र प्राप्त होते हैं-

आश्वलायन गृह्यसूत्र (4 अध्याय) | शांखायन गृह्यसूत्र (6 अध्याय) | कौषीतकि गृह्यसूत्र (5 अध्याय)

➢ एकमात्र ऋग्वेदीय धर्मसूत्र है- वासिष्ठ (वसिष्ठ) धर्मसूत्र, इसमें 4 अध्याय हैं।

➢ ऋग्वेद का कोई शुल्बसूत्र नहीं प्राप्त होता है।

प्रातिशाख्य

➢ 'ऋक्-प्रातिशाख्य' ऋग्वेद का एकमात्र उपलब्ध प्रातिशाख्य है।

➢ इसके रचयिता शौनक हैं।

➢ ऋग्वेद प्रातिशाख्य तीन अध्यायों में विभक्त है, प्रत्येक अध्याय में 6पटल हैं, कुल 18 पटल हैं।

ऋग्वेदीय शिक्षा

ऋग्वेद के दो शिक्षा ग्रन्थ

पाणिनीय शिक्षा | वसिष्ठ शिक्षा

ऋग्वेद का वर्ण्य-विषय

➢ 'यास्क' के अनुसार-ऋग्वेद की विषय वस्तु

1. धर्म निरपेक्ष 2. धार्मिक 3. दार्शनिक सूक्त

➢ डॉ. विण्टरनित्स के अनुसार-

1. काव्यात्मक गीत 2. यज्ञीय स्तुति
3. दार्शनिक सूक्त 4. संवाद सूक्त
5. धर्मनिरपेक्ष सूक्त 6. ऐन्द्रजालिक यन्त्र

इसप्रकार ऋग्वेद प्राचीन भारतीय साहित्य का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है।

➢ विभिन्न देवों के स्तुतिपरक मन्त्रों का संकलन ऋग्वेद में किया गया है। इस दृष्टि से ऋग्वेद का प्रतिपाद्य देवस्तुति है।

➢ ऋग्वेद के सम्पूर्ण विषयवस्तु को अनेक विद्वानों ने कई रूपों में विभाजित किया है, कुछ विद्वानों ने प्रतिपाद्य की दृष्टि से ऋग्वेद के सूक्तों को चार श्रेणियों में विभाजित किया है-

1. धार्मिक सूक्त 2. दार्शनिक सूक्त 3. लौकिक सूक्त
4. संवाद सूक्त

धार्मिक सूक्त

➢ ऋग्वेद का अधिकांश भाग धार्मिक सूक्तों की श्रेणी में आता है।

➢ धार्मिक सूक्तों में विभिन्न देवों को सम्बोधित करते हुए उनकी स्तुति की गई है-

इन्द्र सूक्त (1/32) विष्णु सूक्त (1/154)
अग्नि सूक्त (1/1) सवितृ सूक्त (1/35)
वरुण सूक्त (1/25) पर्जन्य सूक्त (5/83)
उषा सूक्त (1/48) उषस् सूक्त (4/51)
मरुत् सूक्त (1/85) अश्विनौ सूक्त (7/71)

➢ इसके अतिरिक्त अन्य सूक्त भी ऋग्वेद के धार्मिक सूक्तों के अन्तर्गत प्राप्त होते हैं।

दार्शनिक सूक्त

➢ ऋग्वेद के लगभग 12 सूक्त ऐसे हैं, जिनमें उच्चकोटि के दार्शनिक विचारों के बीज मिलते हैं।

➢ दार्शनिक सूक्त अपेक्षाकृत अर्वाचीन दशम मण्डल में उपलब्ध होते हैं।

➢ दशम मण्डल मे आये हुये नासदीय सूक्त, हिरण्यगर्भ सूक्त, पुरुष सूक्त तथा वाक् सूक्त का दार्शनिक दृष्टिकोण से विशेष महत्त्व है।

(i) पुरुष सूक्त	—	10/90
(ii) हिरण्यगर्भ सूक्त	—	10/121
(iii) वाक् सूक्त	—	10/125
(iv) नासदीय सूक्त	—	10/129

➢ इनमें 'नासदीय', 'पुरुष' तथा 'हिरण्यगर्भ सूक्त' **सृष्टि उत्पत्ति सूक्त** माने जाते हैं।

लौकिक सूक्त

➢ जो सूक्त लौकिक जीवन तथा दैनन्दिन व्यवहार से सम्बद्ध विषयों का रोचक वर्णन करते हैं उन सूक्तों को 'लौकिक सूक्त' की संज्ञा प्रदान की गई है।

➢ लौकिक सूक्त भी अधिकांशतया दशम मण्डल में ही हैं।

1. विवाह सूक्त (10/85) 2. अक्षसूक्त (10/34)
3. सपत्नघ्न सूक्त (10/166) 4. ओषधिसूक्त (10/97)
5. आवर्तन सूक्त (10/97)

संवाद सूक्त

➢ ऋग्वेद में कुछ ऐसे सूक्त हैं जिनमें प्राचीनतम कथा-साहित्य की प्रधानता है, उन्हें संवाद सूक्त का नाम दिया गया है।

➢ डॉ. ओल्डेनवर्ग ने संवाद सूक्तों को 'आख्यान सूक्त' कहा है।

➢ डॉ. सिल्वाँ लेवी, वॉन श्रोदर तथा हर्टल का मत है कि ये संवाद सूक्त नाटक के अवशिष्ट अंश हैं।

➢ ये सूक्त संख्या में लगभग 20 माने गये हैं, जिनमें अधिकांशतः दशम मण्डल में उपलब्ध होते हैं-

➢ **मुख्य संवाद सूक्त**

1. पुरुरवा उर्वशी संवाद (10.95)
2. यम-यमी संवाद (10.10)
3. सरमा-पणि संवाद (10.108)
4. इन्द्र मरुत् संवाद (1/165)
5. अगस्त्य लोपामुद्रा संवाद (1/179)
6. विश्वामित्र नदी संवाद (3/33)

ऋग्वेद के देवता

➢ 'तिस्र एव देवताः' अर्थात् यास्क ने निरुक्त में तीन प्रकार के देवताओं का वर्णन किया है, जो हैं-

1. पृथिवीस्थानीय (अग्नि, बृहस्पति, सोम आदि)
2. अन्तरिक्ष स्थानीय (इन्द्र, रुद्र आदि)
3. द्युस्थानीय (सूर्य, विष्णु आदि)

मन्त्र-द्रष्टा ऋषिकाएँ

➢ ऋग्वेद में लगभग 24 मन्त्र द्रष्टा ऋषिकाओं का उल्लेख है।

➢ ऋग्वेद में इन 24 ऋषिकाओं द्वारा दृष्ट मन्त्र 224 हैं।

ऋग्वेद में 24 ऋषिकायें

1. सूर्य सावित्री	2. घोषा काक्षीवती	3. सिकता निवावरी
4. इन्द्राणी	5. यमी वैवस्वती	6. दक्षिणा प्राजापत्या
7. अदिति	8. वाक् आम्भृणी	9. अपाला आत्रेयी
10. विश्ववारा आत्रेयी	11. अगस्त्यस्वसा	12. जुहू ब्रह्मजाया
13. उर्वशी	14. सरमा देवशुनी	
15. शिखण्डिन्यौ अप्सरसौ	16.पैलोमी शची	17. देवजामयः
18. श्रद्धा कामायनी	19. नदी	20. सार्पराज्ञी
21. गोधा	22.शश्वती आंगिरसी	23. वसुक्रपत्नी
24. रोमशा ब्रह्मवादिनी		

ऋग्वेद का रचना विन्यासक्रम

➢ ऋग्वेद को पौरुषेय मानने वाले, भारतीय एवं पाश्चात्त्य विद्वानों के अनुसार ऋग्वेद के विभिन्न मण्डलों की रचना में शताब्दियों का अन्तर रहा है।

➢ ऋग्वेद का सबसे प्राचीन अंश द्वितीय से सप्तम मण्डल तक माना जाता है।

➢ 2 से 7 तक के मण्डल को 'वंश मण्डल ' अथवा 'परिवार मण्डल' कहते हैं।

➢ 8 वें मण्डल में अधिकांश सूक्त कण्व-परिवार के हैं।

➢ 9 वें मण्डल में समस्त मन्त्र सोम विषयक हैं। इसे 'पवमान सोम-मण्डल' भी कहा जाता है।

➢ ऋग्वेद का दशम मण्डल अर्वाचीन है।

➢ दशम मण्डल में देवताओं की स्तुति से सम्बद्ध सूक्त अपेक्षाकृत बहुत कम हैं।

ऋग्वेद के भाष्यकर्ता

➢ ऋग्वेद संहिता के भाष्यकर्ताओं में स्कन्दस्वामी, आनन्दतीर्थ, वेङ्कटमाधव, सायण आदि प्रमुख हैं।

1. स्कन्दस्वामी- ऋग्वेद का सबसे प्राचीन भाष्य स्कन्दस्वामी का ही उपलब्ध है।

➢ स्कन्दस्वामी ने 600-625 के मध्य ऋग्वेद पर भाष्य लिखा।

➢ स्कन्दस्वामी का भाष्य ऋग्वेद के प्रथम पाँच अष्टक तक प्राप्त होता है।

2. नारायण तथा उद्‌गीथ- ऋग्वेद के मध्यभाग पर नारायण एवं अन्तिम भाग पर उद्‌गीथ ने भाष्य लिखा है।

➢ उद्‌गीथ ने अपने भाष्य में प्रत्येक अध्याय के अन्त में अपना परिचय दिया है।

'वनवासीविनिर्गताचार्यस्य उद्‌गीथस्य कृता ऋग्वेदभाष्ये.....'

3. वेङ्कटमाधव- इनका समय 1050 से 1150 ई. के मध्य माना जाता है। इन्होंने प्रथम अध्याय के अन्त में अपना परिचय दिया है।

4. धानुष्क यज्वा-

➢ इन्हें 'त्रिवेदी भाष्यकार' कहा गया है।

➢ ये वैष्णव आचार्य थे। इनका समय लगभग 1300 विक्रम पूर्व माना जाता है।

5. आनन्दतीर्थ - इनका समय 1255 से 1335 विक्रम संवत् तक माना जाता है।

➢ इनका अपरनाम 'मध्व' है।

➢ इन्होंने ऋग्वेद के कुछ प्रमुख 40 सूक्तों पर पद्यात्मक भाष्य लिखा।

6. आत्मानन्द- आत्मानन्द ऋग्वेद के 'अस्यवामीय सूक्त' पर भाष्य लिखा है।

➢ इनका भाष्य 'अध्यात्म-परक' है।

7. सायण-

- सायण का समय 1315-1387 ई. तक (72 वर्ष तक जीवित रहे)
- वेदों के भाष्यकर्त्ताओं में आचार्य सायण का नाम विशेष उल्लेखनीय है।
- उन्होंने अपने बड़े भाई माधव के आदेशानुसार वेदभाष्य किया।
- सायण ने अपने भाई के नाम पर भाष्य का नाम **'माधवीय वेदार्थप्रकाश'** रखा।
- सायण ने **'ऋग्वेद-भाष्य-भूमिका'** नामक ग्रन्थ भी लिखा।

ऋग्वेद के पाश्चात्त्य विद्वान् एवं अनुवादक

1. **फ्रीड्रिश रोजेन** (Friedrich Rosen)- इन्होंने ऋग्वेद के केवल प्रथम अष्टक मूलपाठ लैटिन अनुवाद के साथ 1838 ई. में प्रकाशित किया।
2. **मैक्समूलर** इन्होंने सायण-भाष्य-सहित ऋग्वेद का सम्पादन किया। इनका समय 1849 से लेकर 1875 ई. तक है।
3. **थियोडोर आउफ्रेख्त-** इन्होंने रोमनलिपि में ऋग्वेद संहिता 1861-63 ई. में प्रकाशित की।
4. **विल्सन-**विल्सन ने सर्वप्रथम पूरे ऋग्वेद का अंग्रेजी में अनुवाद 1850 ई. में प्रकाशित किया।
5. **लुडविग -** इन्होंने सम्पूर्ण ऋग्वेद का छः भागों में जर्मन भाषा में अनुवाद किया।
6. **प्रो. ग्रिफिथ-** इन्होंने सम्पूर्ण ऋग्वेद का अंग्रेजी में पद्यानुवाद किया।
7. **प्रो. ओल्डेनबर्ग -** इन्होंने सम्पूर्ण ऋग्वेद का भाष्य जर्मन भाषा में दो भागों में प्रकाशित किया।
8. **लांग्ल्वा-** इन्होंने सम्पूर्ण ऋग्वेद का चार भागों में फ्रेंच भाषा में अनुवाद प्रकाशित किया।

ऋग्वेद के महत्त्वपूर्ण मन्त्र

1. **ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्, बाहू राजन्यः कृतः।**
   अर्थ- इनका मुख ब्राह्मण हुआ, दोनों बाहुओं से क्षत्रिय बनाया गया, दोनों उरुओं **(जघनों)** से वैश्य हुआ और पैरों से शूद्र उत्पन्न हुआ।
2. **सहस्राक्षेण शतशारदेन शतायुषा हविषा हार्षमेनम् ।**
   शतं यथेनं शरदो नयातीन्द्रो विश्वस्य दुरितस्य पारम् ॥
   अर्थ- मैंने जो आहुति दी है, उसके एक सहस्र नेत्र सौ वर्ष की परमायु और आयु देते हैं। (ऋग्वेद 10.161.3)
3. **अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ।**
   होतारं रत्नधातमम् ॥ (ऋ. 1.1.1)
   अर्थ- यज्ञ के पुरोहित, दीप्तिमान्, देवों को बुलाने वाले ऋत्विक् और रत्नधारी अग्नि की मैं स्तुति करता हूँ।
4. **तस्मात् यज्ञात् सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे।**
   छन्दांसि जज्ञिरे तस्मात् यजुस्तस्मादजायत॥ (ऋ. 10.9.9)
   अर्थ- सर्वात्मक पुरुष के होम से युक्त उस यज्ञ से ऋक् और साम उत्पन्न हुए। उससे गायत्री आदि छन्द उत्पन्न हुए और उसी से यजुः की भी उत्पत्ति हुई।
5. **य आत्मदा बलदा...यस्यच्छायाऽमृतं मृत्युः।**
   अर्थ- जिन प्रजापति ने जीवात्मा को प्राण दिया है, बल दिया है, जिनकी आज्ञा सारे देवतामानते हैं, जिनकी छाया अमृत-रूपिणी है और जिनके वश में मृत्यु है, उन 'क' नामवाले प्रजापति की स्तुति करता हूँ। (ऋ. 10.121.2)
6. **अहं राष्ट्री संगमनी वसूनाम्-** (ऋ. 10.125.3)
   अर्थ- मैं राज्य की अधीश्वरी हूँ और धन देने वाली हूँ।
7. **हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।** (ऋ. 10.121.1)
   अर्थ- सबसे पहले केवल परमात्मा या हिरण्यगर्भ थे। उत्पन्न होने पर वे सारे प्राणियों के अद्वितीय अधीश्वर थे।
8. **न वै स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति।**
   अर्थ- स्त्रियों का प्रेम व मैत्री स्थायी नहीं होती ।
9. **पुरुष एवेदं सर्वं यद् भूतं, यच्च भव्यम् ।** (ऋ. 10.90.2)
   अर्थ- जो कुछ हुआ है और जो कुछ होने वाला है, सो सब ईश्वर (पुरुष) ही है।
10. **सहस्रशीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।** (ऋ. 10.90.1)
    अर्थ- विराट् पुरुष (ईश्वर) सहस्र (अनन्त) शिरों, अनन्त चक्षुओं और अनन्त चरणों वाले हैं।
11. **ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वान्।** (ऋ. 10.71.11)
    अर्थ- एक जन अनेक ऋचाओं का स्तव करते हुए, यज्ञानुष्ठान में सहायता करते हैं।
12. **सं गच्छध्वं सं वदध्वं,सं वो मनांसि जानताम्।**
    अर्थ- स्तोताओं, तुम मिलित होओ, एक साथ होकर स्तोत्र पढ़ो और तुम लोगों का मन एक सा हो। (10.191.2)
13. **समानी व आकूतिः, समाना हृदयानि वः।**
    अर्थ- पुरोहितों की स्तुति एक सी हो,इनका आगमन एक साथ हो, और इनके मन तथा चित्त एक समान हों।

14. **द्यावा चिदस्मै पृथिवी नमेते।** (ऋ. 2.12.13)
अर्थ- इन्द्र के लिये द्युलोक और पृथिवी लोक भी प्रणाम करने के लिये स्वयं झुक जाते हैं।

15. **पापमाहुर्यः स्वसारं निगच्छात्।** (ऋग् -10.10.12)
अर्थ- जो भ्राता भगिनी का सम्भोग करता है, उसे लोग पापी कहते हैं।

16. **बृहस्पतिर्या अविन्दन् निगूढाः सोमो ग्रावाण ऋषयश्च विप्राः।** (ऋग् -10.108.11)
अर्थ- बृहस्पति, सोम, सोमाभिषव कर्त्ता पत्थर, ऋषि और मेधावी लोग इस गुप्त स्थान में स्थित गायों की बात जान गये हैं।

ऋग्वेद संहिता-एक दृष्टि में

आचार्य - पैल
ऋत्विक् - होता
उपवेद - आयुर्वेद
अपरनाम - दशतयी, होतृवेद
विभाजन - 1. अष्टकक्रम
2. मण्डलक्रम
अष्टक - 8
मण्डल - 10
अध्याय - 64
वर्ग - 2024
मन्त्र - 10580-1/4 (10552)
अनुवाक - 85
सूक्त - 1028 (11 बालखिल्य सूक्त)
उत्पत्ति देवता - अग्नि
शाखा - 1. शाकल 2. बाष्कल
3. आश्वलायन 4. शांखायन
5. माण्डूकायन
ब्राह्मण - * ऐतरेय ब्राह्मण
* कौषीतकि (शांखायन) ब्राह्मण
आरण्यक - * ऐतरेय आरण्यक
* शांखायन आरण्यक
उपनिषद् - * ऐतरेय * कौषीतकि
श्रौतसूत्र - 1. आश्वलायन श्रौतसूत्र
2. शांखायन श्रौतसूत्र
गृह्यसूत्र - 1.आश्वलायन 2. शांखायन
3. कौषीतकि (शाम्बव्य)
धर्मसूत्र - 1.वसिष्ठ (वासिष्ठ)
2. विष्णु धर्मसूत्र
शुल्बसूत्र - उपलब्ध नहीं
शिक्षा - 1. पाणिनीय शिक्षा
2. वसिष्ठ शिक्षा
प्रातिशाख्य - ऋक्-प्रातिशाख्य
भाष्यकार - स्कन्दस्वामी, नारायण, उद्गीथ माधवभट्ट, वेङ्कटमाधव,धानुष्क यज्वा, आनन्दतीर्थ, आत्मानन्द, सायण।

वेद ऋग्वेद	भाष्यकार	भाष्य	सन् (वर्ष)
	स्कन्दस्वामी	प्रथम पाँच अष्टक पर	625 ई.
	नारायण	षष्ठ तथा सप्तम अष्टक पर	
	उद्गीथ	अष्टम अष्टक पर	
	वेङ्कटमाधव	सम्पूर्ण ऋग्वेद पर	1030-1150
	आनन्दतीर्थ	ऋग्वेद प्रथम 40 सूक्तों पर	**1198-1278 ई.**
	आत्मानन्द	अस्यवामीय सूक्त पर भाष्य	1100 ई.
	सायणाचार्य	'वेदार्थप्रकाश' नामक भाष्य	1315-1387 ई. (11वीं शती)
यजुर्वेद (शुक्लयजुर्वेद)			
	उव्वट (उवट)	शुक्लयजुर्वेदीय उव्वट भाष्य	11वीं शती
	महीधर	वेददीप (वाजसनेयि संहिता)	16वीं शती
	हलायुध	काण्व संहिता पर ब्राह्मणसर्वस्व	12वीं शती ई.
	सायण	काण्वसंहिता पर	

	अनन्ताचार्य	काण्वसंहिता के उत्तरार्ध पर	16वीं शती ई.
	आनन्दबोध		
	भट्टोपाध्याय	काण्वसंहिता पर	
	शौनक	माध्यन्दिनसंहिता 31वें अध्याय पर	
कृष्ण यजुर्वेद	कुण्डिन	तैत्तिरीय संहिता की वृत्ति	
	भवस्वामी	तैत्तिरीय संहिता भवस्वाम्यादिभाष्य	विक्रम से 800ई.पू
वेद	**भाष्यकार**	**भाष्य**	**सन् (वर्ष)**
	गुहदेव	तैत्तिरीय संहिता	8-9वीं वि.शती
	क्षुर	तैत्तिरीय संहिता	
	भट्टभास्कर मिश्र	ज्ञानयज्ञ तैत्तिरीय संहिता	11वीं शती ई.
	सायण	तैत्तिरीय संहिता	
सामवेद	माधव	विवरण (सामवेद संहिता)	600 ई. लगभग
	गुणविष्णु	छान्दोग्य-मन्त्रभाष्य	12वीं शती ई. उत्तरार्ध
	भरत स्वामी	सम्पूर्ण सामवेद पर	13-14वीं शती ई.
	भास्कर मिश्र, सायण	आर्षेय ब्राह्मण पर,सामवेदीय ब्राह्मणों पर	
अथर्ववेद	सायण	सम्पूर्ण अथर्ववेद पर	

चारों वेदों की शाखायें

शाकल, बाष्कल, माध्यन्दिन (वाजसनेयि), काण्व, तैत्तिरीय, मैत्रायणीय, कठ, कपिष्ठल, कौथुम, राणायनीय, जैमिनीय, शौनक, पैप्पलाद आदि

चारों वेदों की शाखायें

शाकल, बाष्कल, माध्यन्दिन (वाजसनेयि), काण्व, तैत्तिरीय, मैत्रायणीय, कठ, कपिष्ठल, कौथुम, राणायनीय, जैमिनीय, शौनक, पैप्पलाद आदि

वैदिक वाङ्मय-एक दृष्टि में

वेद

ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद

वेद	-	**आचार्य**	**वेद**	-	**देवता**
ऋग्वेद	-	पैल	ऋग्वेद	-	अग्नि
यजुर्वेद	-	वैशम्पायन	यजुर्वेद	-	वायु
सामवेद	-	जैमिनि	सामवेद	-	आदित्य (सूर्य)
अथर्ववेद	-	सुमन्तु	अथर्ववेद	-	सोम

वेद	-	**ऋत्विक्**	**वेद**	-	**उपवेद**
ऋग्वेद	-	होता	ऋग्वेद	-	आयुर्वेद
यजुर्वेद	-	अध्वर्यु	यजुर्वेद	-	धनुर्वेद
सामवेद	-	उद्गाता	सामवेद	-	गान्धर्ववेद
अथर्ववेद	-	ब्रह्मा	अथर्ववेद	-	सर्पवेद आदि

वेद	**–**	**शाखा**
ऋग्वेद	-	शाकल, बाष्कल
यजुर्वेद	-	माध्यन्दिन (वाजसनेयि),
	-	काण्व, तैत्तिरीय, मैत्रायणीय, कठ, कपिष्ठल
सामवेद	-	कौथुम, राणायनीय, जैमिनीय
अथर्ववेद	-	शौनक, पैप्पलाद

वेद	**-**	**ब्राह्मण**
ऋग्वेद	-	ऐतरेय, कौषीतकि (शांखायन)
* शुक्लयजुर्वेद	-	शतपथ ब्राह्मण
* कृष्णयजुर्वेद	-	तैत्तिरीय ब्राह्मण
सामवेद	-	तांड्य (पंचविंश), षड्विंश, सामविधान, आर्षेय देवताध्याय, उपनिषद्, (मन्त्रब्राह्मण), संहितोपनिषद् वंश ब्राह्मण
अथर्ववेद	-	गोपथ ब्राह्मण

वेद - आरण्यक

ऋग्वेद - ऐतरेय, शांखायन (कौषीतकि)
* शुक्लयजुर्वेद - बृहदारण्यक
* कृष्णयजुर्वेद - तैत्तिरीय
सामवेद - कोई आरण्यक प्राप्त नहीं होता
अथर्ववेद - कोई आरण्यक उपलब्ध नहीं

वेद - उपनिषद्

ऋग्वेद - ऐतरेय, शांखायन (कौषीतकि)
यजुर्वेद
* शुक्लयजुर्वेद - ईशोपनिषद् , बृहदारण्यकोपनिषद् ,
* कृष्णयजुर्वेद - तैत्तिरीय, कठ, श्वेताश्वतर, मैत्रायणी, महानारायण
सामवेद - छान्दोग्य, केनोपनिषद्
अथर्ववेद - प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य

वेद - शिक्षाग्रन्थ

ऋग्वेद - पाणिनीय शिक्षा, स्वराङ्कुशा, षोडशश्लोकी, शैशिरीय, आपिशलि शिक्षा

यजुर्वेद

* शुक्लयजुर्वेद - याज्ञवल्क्यशिक्षा, वासिष्ठी शिक्षा, कात्यायनी पाराशरी, माध्यन्दिनी शिक्षा आदि।
* कृष्णयजुर्वेद - भारद्वाज शिक्षा, व्यास शिक्षा, शम्भु शिक्षा, कौहलीय,सर्वसम्मत, आरण्य, सिद्धान्त शिक्षा आदि।
सामवेद - गौतमी शिक्षा, लोमशी शिक्षा, नारदीय शिक्षा।
अथर्ववेद - माण्डूकी शिक्षा।

वेद - श्रौतसूत्र

ऋग्वेद - शांखायन, आश्वलायन श्रौतसूत्र
यजुर्वेद * शुक्लयजुर्वेद का कात्यायन श्रौतसूत्र
* कृष्णयजुर्वेद का बौधायन, वाधूल, मानव,
भारद्वाज, - आपस्तम्ब, काठक, सत्याषाढ (हिरण्यकेशी), वैखानस, वाराहश्रौतसूत्र
सामवेद - आर्षेय, कल्प या मशक,लाट्यायन, द्राह्यायण, जैमिनीय
अथर्ववेद - वैतान श्रौतसूत्र

वेद - गृह्यसूत्र

ऋग्वेद - आश्वलायन, शांखायन, कौषीतकि
यजुर्वेद
* शुक्लयजुर्वेद पारस्कर गृह्यसूत्र, बौधायन, मानव,- भारद्वाज, आपस्तम्ब, काठक, अग्निवेश्य, हिरण्यकेशि,वाराह, वैखानस
सामवेद - गोभिल, खादिर, द्राह्यायण, जैमिनीय, कौथुम
अथर्ववेद कौशिक गृह्यसूत्र

वेद - धर्मसूत्र

ऋग्वेद - वासिष्ठ धर्मसूत्र
यजुर्वेद - बौधायन, वैखानस, आपस्तम्ब, विष्णु, हारीत, हिरण्यकेशी, शंख
सामवेद - गौतम धर्मसूत्र
अथर्ववेद - कोई धर्मसूत्र प्राप्त नहीं है

वेद - शुल्बसूत्र

ऋग्वेद - कोई शुल्बसूत्र प्राप्त नहीं होता।
* शुक्लयजुर्वेद - कात्यायन शुल्बसूत्र
* कृष्णयजुर्वेद - बौधायन, आपस्तम्ब, मानव शुल्बसूत्र
सामवेद - कोई शुल्बसूत्र प्राप्त नहीं है।
अथर्ववेद - कोई शुल्बसूत्र प्राप्त नहीं है।

पाश्चात्त्य अनुवादक / सम्पादक

वैदिकवाङ्मय	अनुवादक	भाषा	सन् (वर्ष)
ऋग्वेद	विल्सन	अंग्रेजी	1850
	हेरमान ग्रासमान	जर्मन	1876-77
	अल्फ्रेड लुडविग	जर्मन	1876-88
	प्रो. ग्रिफिथ	अंग्रेजी (पद्यमय)	1889-92
	प्रो. ओल्डेनबर्ग	जर्मन	1909-12
	लांग्ल्वा	फ्रेंच	1848-51

वैदिकवाङ्मय	अनुवादक	भाषा	सन् (वर्ष)
ऐतरेयब्राह्मण	प्रो. हाग	अंग्रेजी	1993
	आउफ्रेक्ट	रोमन अक्षर	1879
कौषीतकि ब्राह्मण	प्रो. लिन्डनर	-	1887
	डॉ. कीथ	अंग्रेजी	1930
शुक्लयजुर्वेद	वेबर	देवनागरी	1849-52
वाजसनेयि/माध्यन्दिनसंहिता	प्रो. ग्रिफिथ	अंग्रेजी (पद्य)	1899
शतपथ ब्राह्मण	वेबर	-	1855
	कैलेंड	अंग्रेजी	1926
	ईग्लिंग	अंग्रेजी	-
तैत्तिरीय संहिता	वेबर	रोमन अक्षर	1871-72
मैत्रायणी संहिता	श्रेडर	-	1881-86
काठक संहिता	श्रेडर	-	1910
राणायनीय शाखा	स्टेवेन्सन	अंग्रेजी	1843
कौथुम शाखा	बेन्फे	जर्मन	1848
जैमिनीय शाखा	कैलेन्ड	रोमन अक्षर	1907
सामवेद	ग्रिफिथ	अंग्रेजी (पद्य)	1891-99
अद्‌भुत ब्राह्मण	वेबर	जर्मन	1858
अथर्ववेद	ग्रिफिथ	अंग्रेजी (पद्य)	1895-98
	ह्विटनी और लानमान	अंग्रेजी	1905
पैप्पलाद संहिता	ब्लूमफील्ड	अंग्रेजी	1901

यजुर्वेद

- विश्ववाङ्मय का सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेद है,वेदों की संख्या चार है- ऋग्वेद,यजुर्वेद, सामवेद,अथर्ववेद। वेद शब्द ज्ञानार्थक **विद् धातु** से **घञ् प्रत्यय** के योग से निष्पन्न होता है जिसका अर्थ है – 'ज्ञान'। अतः वेद शब्द का अर्थ है- **'ज्ञान की राशि'** या **'ज्ञान का संग्रह ग्रन्थ'**। संस्कृत व्याकरण के अनुसार वेद शब्द चार धातुओं से विभिन्न अर्थों में बनता है-

सत्तायां विद्यते ज्ञाने, वेत्ति विन्ते विचारणे ।
विन्दति विन्दते प्राप्तौ, श्यन्लुक्श्नम्शेष्विदं क्रमात्॥

- अर्थात् विद् सत्तायाम्, विद् ज्ञाने,विद् विचारणे, विद्लृँ लाभे इन चार अर्थों में विद् धातु का प्रयोग होता है यहाँ पर विद् ज्ञाने धातु का ग्रहण किया गया है।
- आचार्य विष्णुमित्र ऋक्प्रातिशाख्य में इन्हीं (उपर्युक्त) अर्थों को समन्वित करते हुए कहते हैं- **'विद्यन्ते ज्ञायन्ते लभ्यन्ते एभिर्धर्मादि-पुरुषार्था इति वेदाः।'** अर्थात् वेद शब्द का भावार्थ है 'जिन ग्रन्थों के द्वारा धर्म,अर्थ,काम,और मोक्ष रूपी पुरुषार्थ चतुष्टय का बोध हो।
- आचार्य सायण तैत्तिरीय संहिता की भाष्य भूमिका में वेद की व्याख्या करते हुए कहते हैं-

''इष्टप्राप्त्यनिष्ट-परिहारयोरलौकिकम् उपायं यो ग्रन्थो वेदयति, स वेदः।''

- यजुर्वेद कर्मकाण्ड प्रधान ग्रन्थ है जिसका संकलन अध्वर्यु नामक ऋत्विक् के उपयोग के लिए होता था। यजुष् शब्द **यज् धातु से उसि प्रत्यय** के योग से सम्पन्न होता है जिसका अर्थ है– यज्ञ के साधक मन्त्र। यजुष् गद्य पद्यात्मक हैं इसीलिए इसे **'अनियताक्षरावसानम्'** कहा गया है,अर्थात् जिसमें पद्यों के समान अक्षरों की संख्या निश्चित नहीं होती है।
- विद्वानों के द्वारा यजुर्वेद के यजुष् शब्द की अनेक व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई जो विभिन्न दृष्टिकोण के सूचक हैं यजुष् के कुछ

मुख्य अर्थ इसप्रकार हैं-

- आचार्य यास्क निरुक्त के सातवें अध्याय में यजुष् की व्याख्या करते हुए कहते हैं-'**यजुर्यजतेः**' अर्थात् यज्ञ से सम्बद्ध मन्त्रों को यजुष् कहते हैं।
  '**शेषे यजुः शब्दः**' अर्थात् पद्यबन्ध और गीति से रहित मन्त्रात्मक रचना को यजुष् कहते हैं।
- तैत्तिरीय संहिता की **भाष्यभूमिका** में सायण यजुर्वेद के महत्त्व का प्रतिपादन इस प्रकार करते हैं-
  '**भित्तिस्थानीयो यजुर्वेदः, चित्रस्थानावितरौ। तस्मात् कर्मसु यजुर्वेदस्यैव प्राधान्यम्।**' अर्थात् यजुर्वेद भित्ति है अन्य ऋग्वेद एवं सामवेद चित्र हैं इसलिए यजुर्वेद सबसे मुख्य है यज्ञ को आधार बनाकर ही ऋचाओं का पाठ और सामगान होता है।
- यजुर्वेद के दो सम्प्रदाय हैं– ब्रह्म सम्प्रदाय तथा आदित्य सम्प्रदाय । ब्रह्म सम्प्रदाय के अन्तर्गत कृष्ण यजुर्वेद तथा आदित्य सम्प्रदाय के अन्तर्गत शुक्ल यजुर्वेद आता है, इस प्रकार यजुर्वेद के दो भाग हैं। यद्यपि प्राचीनकाल में, यजुर्वेद की सौ या एक सौ एक शाखा '**एकशतमध्वर्युशाखाः**' '**यजुरेकशताध्वकम्**', '**शाखानां तु शतेनाथ यजुर्वेदमथाकरोत्**', प्राप्त होने का विवरण प्राप्त होता है।
- शुक्लयजुर्वेद की दो संहितायें प्राप्त होती हैं वाजसनेयि संहिता या माध्यन्दिन संहिता तथा काण्व संहिता दोनों ही संहिताओं में चालीस अध्याय प्राप्त होते हैं।
- सम्प्रति कृष्ण यजुर्वेद की केवल चार शाखाएँ ही उपलब्ध होती हैं- **तैत्तिरीय, मैत्रायणी, काठक, कपिष्ठल।**
- यज्ञादि कर्मों के प्रतिपादक गद्यात्मक मन्त्रों को यजुष् कहा जाता है।
- यजुर्वेद कर्मकाण्ड का वेद है जिसका संकलन अध्वर्यु नामक ऋत्विक् के उपयोग के लिए किया गया।

यजुर्वेद के सम्प्रदाय

ब्रह्म सम्प्रदाय	आदित्य सम्प्रदाय
(कृष्ण यजुर्वेद)	(शुक्ल यजुर्वेद)

- ब्रह्मसम्प्रदाय के अन्तर्गत कृष्ण यजुर्वेद तथा आदित्य सम्प्रदाय के अन्तर्गत शुक्ल यजुर्वेद है।
- पतञ्जलि ने महाभाष्य में यजुर्वेद की सौ या एक सौ एक शाखा का उल्लेख किया है-'**एकशतमध्वर्युशाखाः**'
- चरणव्यूह में यजुर्वेद की 86 शाखाओं का उल्लेख प्राप्त होता है।
- वर्तमान समय में शुक्ल यजुर्वेद की दो तथा कृष्ण यजुर्वेद की चार शाखाओं का उल्लेख प्राप्त होता है।

यजुर्वेद की शाखाएँ

1. शुक्ल यजुर्वेद - क - माध्यन्दिन शाखा (वाजसनेयिशाखा)
   ख - काण्व शाखा
2. कृष्ण यजुर्वेद - क - तैत्तिरीय शाखा ख - मैत्रायणी शाखा
   ग - कठ शाखा घ - कपिष्ठल शाखा

- शुक्ल यजुर्वेद को 'वाजसनेयि संहिता' भी कहते हैं।
- शुक्ल यजुर्वेद के **ऋषि याज्ञवल्क्य हैं** जो मिथिला के निवासी थे।
- शुक्ल यजुर्वेद में यज्ञों से सम्बद्ध विशुद्ध मन्त्रात्मक भाग है।
- शुक्ल यजुर्वेद की दो शाखाएँ हैं, माध्यन्दिन या वाजसनेयि संहिता तथा काण्व संहिता।
- माध्यन्दिन शाखा में चालीस अध्याय, 303 अनुवाक तथा 1975 मन्त्र हैं।
- काण्व शाखा का विभाजन अध्याय और अनुवाक के रूप में हुआ है।
- काण्व शाखा में 40 अध्याय 328 अनुवाक और 2086 मन्त्र प्राप्त होते हैं।

शुक्ल यजुर्वेद

माध्यन्दिन या वाजसनेयि संहिता	काण्व संहिता
(40 अध्याय 303 अनुवाक और 1975 मन्त्र)	(40 अध्याय 328 अनुवाक और 2086 मन्त्र)

- वर्तमान समय में काण्वसंहिता का प्रचार महाराष्ट्र तथा माध्यन्दिन संहिता का प्रचार उत्तर भारत में है।
- प्राचीनकाल में काण्व शाखा का प्रचार उत्तर भारत में था।
- काण्वसंहिता में कुरु और पञ्चालों का उल्लेख प्राप्त होता है।

शुक्ल यजुर्वेद की विषय वस्तु

- प्रथम दो अध्यायों में दर्श एवं पौर्णमास यज्ञों से सम्बन्धित मन्त्र प्राप्त होते हैं।
- अध्याय तीन में अग्निहोत्र एवं चातुर्मास्य यज्ञों से सम्बन्धित मन्त्र प्राप्त होते हैं।
- अग्निष्टोम और सोमयाग का वर्णन अध्याय चार से आठ में वर्णित है।

- वाजपेय और राजसूय याग का वर्णन अध्याय नौ और दस में वर्णित है।
- अध्याय ग्यारह से अठारह तक अग्निचयन और विविध प्रकार की वेदियों के निर्माण से सम्बद्ध मन्त्र हैं।
- अध्याय सोलह को 'रुद्राध्याय' कहा जाता है।
- 'सौत्रामणी याग' का निरूपण अध्याय 19 से 21 में है।
- अध्याय 22-25 तक 'अश्वमेध यज्ञ' का विधान वर्णित है।
- 26 से 29 अध्याय को 'खिल अध्याय' कहते हैं।
- 'पुरुषमेध' का वर्णन अध्याय तीस में प्राप्त होता है।
- अध्याय 31 को 'पुरुषसूक्त' और 'विष्णुसूक्त' भी कहते हैं।
- विराट् पुरुष के दार्शनिक और आध्यात्मिक स्वरूप का वर्णन अध्याय 32 में है।
- अध्याय 33 में 'सर्वमेध सूक्त' है।
- शिवसंकल्प उपनिषद् या 'शिवसंकल्पसूक्त' अध्याय 34 में है।
- अध्याय 35 में 'पितृमेध' का वर्णन है।
- अध्याय 36-38 में 'प्रवर्ग्यनामक यज्ञ' से सम्बद्ध मन्त्र हैं।
- अध्याय 39 में 'अन्त्येष्टि' से सम्बन्धित मन्त्र हैं।
- अध्याय 39 को 'प्रायश्चित्त अध्याय' भी कहा जाता है।
- अध्याय 40 को 'ईशोपनिषद्' कहा जाता है।

शुक्ल यजुर्वेद के ब्राह्मण

- शुक्ल यजुर्वेद का केवल एक ब्राह्मण ग्रन्थ है - शतपथ ब्राह्मण
- शतपथ ब्राह्मण के रचयिता 'याज्ञवल्क्य' माने गए हैं।
- शतपथ ब्राह्मण का सम्बन्ध शुक्ल यजुर्वेद की माध्यन्दिन तथा काण्व दोनों शाखाओं से है।
- शतपथ ब्राह्मण में अध्यायों की संख्या 100 है।
- 'गणरत्न महोदधि' शतपथ ब्राह्मण को परिभाषित करते हुए कहते हैं, 'शतं पन्थानो मार्गा नामाध्याया यस्य तत् शतपथम्' अर्थात् जिसमें सौ अध्याय रूपी मार्ग हैं उसे शतपथ कहते हैं।
- काण्व शाखीय शतपथ ब्राह्मण का सम्पादन आचार्य **जे. एगलिंग** ने किया।
- काण्व शाखीय शतपथ ब्राह्मण में 104 अध्याय हैं।
- माध्यन्दिन शतपथ ब्राह्मण में 14 काण्ड ,100 अध्याय , 438ब्राह्मण तथा 7624 कंडिकाएँ हैं।
- **शतपथ ब्राह्मण के महत्त्वपूर्ण आख्यान -** मनु एवं श्रद्धा, जलप्लावन की कथा तथा मत्स्य, इन्द्र- वृत्र युद्ध, स्त्री - कामुक गन्धर्व, कद्रू - सुपर्णी, च्यवन - सुकन्या, स्वर्भानु और सूर्यग्रहण, नमुचि और वृत्र, पृथु वैन्य, पुरूरवा - उर्वशी, राजा केशिन्, वाणी का आख्यान, सृष्टि सम्बन्धी उपाख्यान।
- **शुक्लयजुर्वेदीय आरण्यक -** बृहदारण्यक
- शुक्ल यजुर्वेद के शतपथ ब्राह्मण की माध्यन्दिन और काण्व दोनों शाखाओं के अन्तिम छः अध्यायों को 'बृहदारण्यक' कहते हैं ।
- बृहदारण्यक का प्रथम प्रकाशन 1889 ई. **'आटो वोह्टलिङ्क'** ने किया।
- **शुक्लयजुर्वेद के उपनिषद् -** ईशावास्योपनिषद् , बृहदारण्यकोपनिषद्।

ईशावास्योपनिषद् का सामान्य परिचय

- ईशावास्योपनिषद् शुक्ल यजुर्वेद का 40 वाँ अध्याय है।
- ईशावास्योपनिषद् में कुल 18 मन्त्र हैं।
- ईशावास्योपनिषद् का प्रारम्भ 'ईशावास्यम्' से होता है।
- सबसे छोटा उपनिषद् किन्तु महत्त्व की दृष्टि से सर्वोपरि ।
- ईशावास्योपनिषद् में विद्या- अविद्या तथा सम्भूति- असम्भूति का निरूपण है।

बृहदारण्यकोपनिषद् का सामान्य परिचय

- बृहदारण्यकोपनिषद् शतपथ ब्राह्मण के 14 वें काण्ड का अन्तिम भाग है।
- बृहदारण्यकोपनिषद् सबसे बड़ा एवं प्राचीनतम उपनिषद् है।
- बृहदारण्यकोपनिषद् में तीन भाग हैं, प्रत्येक भाग में दो - दो अध्याय हैं।
- प्रथम भाग को मधुकाण्ड,द्वितीय भाग को याज्ञवल्क्यकाण्ड,तृतीय भाग को खिलकाण्ड कहते हैं।
- बृहदारण्यकोपनिषद् में कुल अध्यायों की संख्या छः है।
- प्रत्येक अध्याय ब्राह्मणों में विभाजित हैं, जो निम्नवत् है -

अध्याय	ब्राह्मण	मन्त्र
प्रथम अध्याय	छः ब्राह्मण	80
द्वितीय अध्याय	छः ब्राह्मण	66
तृतीय अध्याय	नौ ब्राह्मण	92
चतुर्थ अध्याय	छः ब्राह्मण	82
पञ्चम अध्याय	पन्द्रह ब्राह्मण	15
षष्ठ अध्याय	पाँच ब्राह्मण	75

- याज्ञवल्क्य - मैत्रेयी का संवाद बृहदारण्यकोपनिषद् में प्राप्त होता है।
- जनक और याज्ञवल्क्य संवाद, याज्ञवल्क्य और वचक्नु की कन्या गार्गी का संवाद भी इस उपनिषद् में प्राप्त होता है।

शुक्ल यजुर्वेद - एक अध्ययन

- **ऋत्विक् –** अध्वर्यु
- **शाखा–** माध्यन्दिन या वाजसनेयि शाखा -440 अध्याय, 303 अनुवाक, 1975 मन्त्र काण्वशाखा - 40 अध्याय, 328 अनुवाक, 2086 मन्त्र,
- शतपथ ब्राह्मण में यजुर्वेद के अक्षरों की संख्या 2,88000 (दो लाख अट्ठासी हजार) दी गयी है।
- **उपनिषद्-** ईशावास्योपनिषद्- 18 मन्त्र
- बृहदारण्यकोपनिषद्- 6 अध्याय, 47 ब्राह्मण

कल्पसूत्र-

1. **श्रौतसूत्र-** कात्यायन श्रौतसूत्र- 26 अध्याय
2. **गृह्यसूत्र-** पारस्कर गृह्यसूत्र- 3 काण्ड
3. **धर्मसूत्र-** हारीत धर्मसूत्र, शंख धर्मसूत्र
4. **शुल्बसूत्र-** (क) बौधायन शुल्बसूत्र- 3 परिच्छेद, 419सूत्र
   (ख) मानव शुल्बसूत्र
   (ग) आपस्तम्ब शुल्बसूत्र (6पटल, 21अध्याय, 498 सूत्र)
   (घ) कात्यायन शुल्बसूत्र, दो भाग
   (ङ) मैत्रायणीय शुल्बसूत्र
   (च) हिरण्यकेशी या सत्याषाढशुल्बसूत्र
   (छ) वराह शुल्बसूत्र

- **शिक्षाग्रन्थ-** याज्ञवल्क्य शिक्षा - (116 श्लोक)
- **प्रातिशाख्यग्रन्थ-** वाजसनेयि प्रातिशाख्य - रचयिता - कात्यायन अध्याय-8

कृष्णयजुर्वेद का सामान्य परिचय

- कृष्ण यजुर्वेद का सम्बन्ध 'ब्रह्म सम्प्रदाय' से है।
- इसमें मन्त्रों के साथ व्याख्या और विनियोग वाला अंश मिश्रित है।
- कृष्ण यजुर्वेद के पारायणकर्त्ता को 'मिश्र' नाम दिया गया है।
- चरणव्यूह में कृष्ण यजुर्वेद की 69 शाखा का उल्लेख मिलता है।
- कृष्ण यजुर्वेद में तैत्तिरीय शाखा के दो भेद हैं- औख्य,खांडिकेय।
- खांडिकेय के पाँच भेद - आपस्तम्ब, बौधायन, सत्याषाढ, हैरण्यकेश,काट्यायन।

कृष्ण यजुर्वेद की शाखा

- वर्तमान समय में कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीयसंहिता प्रतिनिधि संहिता है।
- इसके ऋषि तित्तिर हैं जो वैशम्पायन के शिष्य थे।
- तैत्तिरीय शाखा में 7 काण्ड, 44 प्रपाठक, 631अनुवाक हैं।
- तैत्तिरीय शाखा में मन्त्र और ब्राह्मण मिश्रित है।
- तैत्तिरीय संहिता का विशेष प्रचार महाराष्ट्र, आन्ध्र, दक्षिण भारत में है।
- आचार्य सायण ने सर्वप्रथम तैत्तिरीय संहिता का विस्तृत भाष्य किया था।
- भट्टभास्कर मिश्र ने 11वीं शती में ज्ञानयज्ञ नामक भाष्य तैत्तिरीय संहिता के ऊपर लिखा।
- तैत्तिरीय संहिता का अंग्रेजी में अनुवाद डा. कीथ ने किया।

मैत्रायणी संहिता की विषय वस्तु

काण्ड	विषयवस्तु
प्रथम काण्ड	संहिता, दर्शपूर्णमास, अध्वर, अग्निहोत्र, चातुर्मास्य, वाजपेय याग
द्वितीय काण्ड	काम्य इष्टियाँ, राजसूय और अग्निचिति
तृतीय काण्ड	अग्निचिति, अध्वर आदि की विधि, सौत्रामणी

	और अश्वमेध याग
चतुर्थ काण्ड	खिल नाम से प्रसिद्ध, राजसूय, अध्वर, प्रवर्ग्य आदि से सम्बन्धित सामग्री।

- मैत्रायणी संहिता में ऋग्वेद से 1701 ऋचाएँ उद्धृत की गई हैं।

काठक या कठ शाखा का सामान्य परिचय

- कठ शाखा चरकों की शाखा मानी जाती है।
- काठक शाखा पाँच खण्डों में विभक्त है।
- पाँच खण्डों के नाम हैं- इठिमिका, मध्यमिका, ओरिमिका, याज्यानुवाक्या, अश्वमेधादि अनुवचन।
- उपखण्डों को 'स्थानक' और अनुवचन नाम से सम्बोधित किया गया है।
- कठ शाखा में चालीस स्थानक, तेरह अनुवचन, 843 अनुवाक, 3091 मन्त्र।
  मन्त्र एवं ब्राह्मण की मिश्रित संख्या 18 हजार है।

खण्ड के नाम	स्थानक	विषय विवेचन
इठिमिका खण्ड	18	पुरोडाश, अध्वर, राजसूय वाजपेय आदि का वर्णन
मध्यमिका खण्ड	12	सावित्री, स्वर्ग,दीक्षित, आयुष्य पञ्चचूड़ आदि का वर्णन
ओरिमिका खण्ड	10	चातुर्मास्य, सौत्रामणी सत्र, प्रायश्चित्त, पुरोडाश ब्राह्मण, यजमान ब्राह्मण आदि का विवेचन याज्यानुवाक्या इसका समावेश ओरिमिका खण्ड
अश्वमेधादि अनुवचन	13	मन्त्र एवं ब्राह्मण भाग का मिश्रण।

- कठशाखा के विषय में पतञ्जलि का कथन- 'ग्रामे-ग्रामे काठकं कालापकं च प्रोच्यते'।

कठ-कपिष्ठल शाखा का सामान्य परिचय

- यह शाखा चरणव्यूह के अनुसार चरकों की 12 शाखाओं में से एक है।
- इस शाखा के प्रवर्तक कपिष्ठल ऋषि थे।
- कृष्ण यजुर्वेद की कठ कपिष्ठल शाखा अपूर्ण प्राप्त है।
- कठ-कपिष्ठल की केवल एक प्रति उपलब्ध है जो सरस्वती भवन पुस्तकालय काशी में सुरक्षित है।
- इस शाखा का विभाजन ऋग्वेद के समान अष्टक एवं अध्यायों में हैं।
- कठ-कपिष्ठल शाखा में कुल छः अष्टक, 48 अध्याय हैं।
- **कृष्णयजुर्वेदीय ब्राह्मण-** दो ब्राह्मण- तैत्तिरीय ब्राह्मण तथा मैत्रायणी ब्राह्मण
- तैत्तिरीय ब्राह्मण के रचयिता वैशम्पायन के शिष्य आचार्य तित्तिर हैं।
- तैत्तिरीय ब्राह्मण का प्रथम संस्करण 1890 में कलकत्ता सें प्रकाशित।
- तैत्तिरीय ब्राह्मण का द्वितीय संस्करण 1899 ई. में पूना से प्रकाशित।

तैत्तिरीय ब्राह्मण की विषय वस्तु

काण्ड	विषय वस्तु
प्रथम काण्ड	अग्न्याधान, गवामयन, वाजपेय, राजसूय सोमयाग नक्षत्रेष्टि का वर्णन
द्वितीय काण्ड	अग्निहोत्र, सौत्रामणी, बृहस्पतिसव, अनेक सूत्रों का वर्णन
तृतीय काण्ड	नक्षत्रेष्टि का वर्णन विस्तार के साथ, पुरुषमेध

मैत्रायणी ब्राह्मण का परिचय

- मैत्रायणी ब्राह्मण में तीन अध्याय हैं।
- मैत्रायणी ब्राह्मण मैत्रायणी संहिता का चतुर्थ अध्याय ही माना जाता है।
- 'रात्रि की उत्पत्ति' का आख्यान इस ब्राह्मण में प्राप्त होता है।
- 'पर्वतोपाख्यान' भी मैत्रायणी ब्राह्मण में वर्णित है।

कृष्ण यजुर्वेदीय ब्राह्मण

तैत्तिरीय ब्राह्मण	मैत्रायणी ब्राह्मण
(3 काण्ड)	(तीन अध्याय)

कृष्णयजुर्वेदीय आरण्यक का सामान्य परिचय

- कृष्ण यजुर्वेद के दो आरण्यक उपलब्ध हैं- तैत्तिरीय आरण्यक, मैत्रायणीय आरण्यक।

- **तैत्तिरीय आरण्यक-** राजेन्द्र लाल मिश्र ने 1782ई. में सायण भाष्य के साथ प्रकाशित किया।
- इसमें दस प्रपाठक या परिच्छेद हैं।
- प्रपाठकों का नामकरण उनके प्रथम पद के आधार पर किया गया है।
- तैत्तिरीय आरण्यक के दस प्रपाठक के नाम- भद्र, सह वै, चिति, युञ्जते, देव वै, परे, शिक्षा, ब्रह्मविद्या, भृगु, नारायणीय।
- तैत्तिरीय आरण्यक में कुल 170 अनुवाक हैं।
- सप्तम से नवम प्रपाठक को 'तैत्तिरीयोपनिषद्' कहते हैं।
- दशम प्रपाठक को 'महानारायणीयोपनिषद्' कहते हैं, जिसे 'खिल' भी कहते हैं।
- तैत्तिरीय आरण्यक में कुरुक्षेत्र, खाण्डव, पाञ्चाल, मत्स्य, काशी आदि के भौगोलिक नामों का उल्लेख है।
- 'श्रमण' शब्द का प्रयोग तपस्वी के अर्थ में किया गया है।
- तैत्तिरीय आरण्यक में जल के चार रूप बताए गये हैं- मेघ, विद्युत्, गर्जन, वृष्टि।
- जल के छः प्रकार बताये गए हैं- वृष्टि का जल, कूपजल, तडागजल, नद्यादि जल, पात्रजल, झरने का जल।

तैत्तिरीय आरण्यक में प्रतिपादित विषय

आरण्यक	प्रतिपादित विषय
प्रथम प्रपाठक	आरुण-केतुक नामक अग्नि की उपासना और इष्टका-चयन का वर्णन।
द्वितीय प्रपाठक	स्वाध्याय और पञ्च महायज्ञों का वर्णन
तृतीय प्रपाठक	चातुर्होत्र चिति से सम्बद्ध मन्त्र
चतुर्थ प्रपाठक	प्रवर्ग्य होम से सम्बद्ध मन्त्र
पञ्चम प्रपाठक	यज्ञ सम्बन्धी कतिपय संकेत
षष्ठ प्रपाठक	पितृमेध सम्बन्धी मन्त्रों का संकलन
सप्तम-नवम प्रपाठक	तैत्तिरीय उपनिषद्
दशम प्रपाठक	महानारायणीय उपनिषद् (खिलकाण्ड)

मैत्रायणीय आरण्यक का सामान्य परिचय

- मैत्रायणीय आरण्यक को मैत्रायणीय उपनिषद् भी कहते हैं।
- मैत्रायणीय आरण्यक में सात प्रपाठक हैं।
- इसमें आरण्यक और उपनिषद् दोनों के अंश मिश्रित हैं।
- मैत्रायणीय आरण्यक में परमात्मा को अग्नि और प्राण कहा गया है।
- अश्वपति, हरिश्चन्द्र, अम्बरीष, शर्याति, ययाति, युवनाश्व आदि राजाओं का उल्लेख मैत्रायणीय आरण्यक में प्राप्त होता है।

मैत्रायणीय आरण्यक में प्रतिपादित विषय

आरण्यक	प्रतिपादित विषय
प्रथम प्रपाठक	ब्रह्मयज्ञ। राजा बृहद्रथ को वैराग्य और मुनि शाकायन्य द्वारा उसे उपदेश
द्वितीय प्रपाठक	शाकायन्य द्वारा ब्रह्मविद्या का उपदेश
तृतीय प्रपाठक	जीवात्मा के स्वरूप का वर्णन, कर्मफल और पुनर्जन्म
चतुर्थ प्रपाठक	ब्रह्म-सायुज्य-प्राप्ति के उपाय
पञ्चम प्रपाठक	कौत्सायनी स्तुति, ब्रह्म की अनेक रूपों में स्थिति
षष्ठ प्रपाठक	ओम, प्रणव, उद्गीथ और गायत्री की उपासना, आत्मयज्ञ का वर्णन, षडंग योग, शब्द ब्रह्म, निर्विषय मन से मोक्षप्राप्ति।
सप्तम प्रपाठक	आत्म-स्वरूप वर्णन

कृष्ण यजुर्वेद के उपनिषद्

- तैत्तिरीयोपनिषद्, कठोपनिषद्, श्वेताश्वतरोपनिषद्, मैत्रायणीयोपनिषद्, महानारायणोपनिषद्।

तैत्तिरीयोपनिषद् का सामान्य परिचय

- तैत्तिरीय आरण्यक के तीन प्रपाठकों (7,8,9) को तैत्तिरीय उपनिषद् कहते हैं।
- तैत्तिरीय उपनिषद् का प्रारम्भ 'अथ शीक्षां व्याख्यास्यामः' से होता है।
- तैत्तिरीय उपनिषद् में तीन वल्ली हैं- शीक्षा वल्ली, ब्रह्मानन्द वल्ली, भृगुवल्ली।
- शीक्षा वल्ली में 12 अनुवाक, ब्रह्मानन्द वल्ली में नौ अनुवाक, भृगुवल्ली में 10 अनुवाक हैं।
- भृगु-वरुण संवाद, पञ्चकोश निरूपण का उल्लेख तैत्तिरीयोपनिषद् में प्राप्त होता है।

तैत्तिरीयोपनिषद् का विभाजन

वल्ली	अनुवाक
शीक्षा वल्ली	12
ब्रह्मानन्द वल्ली	9
भृगु वल्ली	10

कठोपनिषद् का सामान्य परिचय

- कठोपनिषद् कृष्णयजुर्वेद की कठ शाखा से सम्बन्धित है।
- कठोपनिषद् में दो अध्याय हैं, प्रत्येक अध्याय में तीन खण्ड हैं।
- यम-नचिकेता की कथा का वर्णन कठोपनिषद् में प्राप्त होता है।
- श्रेय-प्रेय का निरूपण कठोपनिषद् में प्राप्त होता है।

श्वेताश्वतरोपनिषद् का सामान्य परिचय

- श्वेताश्वतरोपनिषद् में कुल छः अध्याय हैं।
- इस उपनिषद् में सांख्य- योग, वेदान्त दर्शन के सिद्धान्त प्रतिपादित हैं।
- श्वेताश्वतरोपनिषद् में जगत् के मिथ्यात्व की कल्पना नहीं है।
- शिव को परमेश्वर कहा गया है।
- कपिल ऋषि का उल्लेख इस उपनिषद् में प्राप्त होता है।

मैत्रायणीयोपनिषद् का सामान्य परिचय

- इसे मैत्री उपनिषद् भी कहते हैं।
- इसमें सात अध्याय हैं।

श्वेताश्वतरोपनिषद् में प्रतिपादित विषय

अध्याय	प्रतिपादित विषय
प्रथम	हंस, त्रैतवाद, माया, क्षर-अक्षर, सत्य-तप से आत्मदर्शन
द्वितीय	योग, योगविधि, ब्रह्म तत्त्व का वर्णन
तृतीय	रुद्र, विश्वरूप, जीव का स्वरूप, आत्मा का स्वरूप
चतुर्थ	एकेश्वरवाद, त्रैतवाद, प्रकृति, माया-मायी, शिव ब्रह्मरूप
पञ्चम	क्षर-अक्षर, कपिल ऋषि, जीवात्मा का स्वरूप
षष्ठ	ब्रह्म के अनेक नाम, हंस, ईश्वर प्रकृति एवं जीव का नियन्ता, गुरुभक्ति

- मैत्रायणीय आरण्यक को ही मैत्रायणी उपनिषद् कहते हैं।
- इसमें वेद विरोधी सम्प्रदायों का उल्लेख है।
- आत्मा का बाह्य प्रतीक सूर्य है और आभ्यन्तर प्रतीक प्राण है।
- प्रकृति के सत्त्व, रजस् , तमस् इन तीन गुणों का ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र से सम्बन्ध बताया गया है।

महानारायणोपनिषद् का सामान्य परिचय

- तैत्तिरीय आरण्यक का दशम प्रपाठक महानारायणोपनिषद् कहा जाता है।
- इसके तीन पाठ मिलते हैं- द्रविण, आन्ध्र, कर्णाटक।
- इसे याज्ञिक्युपनिषद् भी कहते हैं।
- नारायण का परमात्म तत्त्व के रूप में उल्लेख है।

कृष्णयजुर्वेद–एक अध्ययन

ऋत्विक्-अध्वर्यु

शाखा-तैत्तिरीयशाखा- 7 काण्ड,44 प्रपाठक, 631 अनुवाक
मैत्रायणीयशाखा- 4 काण्ड, 54 प्रपाठक, 3144 मन्त्र
कठ(काठक)शाखा- 5खण्ड, 40स्थानक, 13अनुवचन, 843अनुवाक, 3091मन्त्र
कपिष्ठल(कठ)शाखा-6अष्टक, 48अध्याय

ब्राह्मण-
* तैत्तिरीय ब्राह्मण-3 काण्ड
* मैत्रायणीय ब्राह्मण-3 अध्याय

आरण्यक-
* तैत्तिरीय आरण्यक-10प्रपाठक
* मैत्रायणीय आरण्यक-सात प्रपाठक

उपनिषद्-
* तैत्तिरीयोपनिषद्-3वल्ली,
* कठोपनिषद्-2अध्याय
* श्वेताश्वतरोपनिषद्-6अध्याय
* मैत्रायणीयोपनिषद्-7अध्याय
* महानारायणोपनिषद्

श्रौतसूत्र-
* बौधायन श्रौतसूत्र-रचयिता बोधायन, 30प्रश्नों में विभाजित
* वाधूल श्रौतसूत्र
* मानव श्रौतसूत्र
* भारद्वाज श्रौतसूत्र
* आपस्तम्ब श्रौतसूत्र रचयिता-आपस्तम्ब
* काठक श्रौतसूत्र
* सत्याषाढ श्रौतसूत्र-24प्रश्न
* वाराह श्रौतसूत्र
* वैखानस श्रौतसूत्र-32 अध्याय

गृह्यसूत्र-
* बौधायन गृह्यसूत्र
* मानव गृह्यसूत्र
* भारद्वाज गृह्यसूत्र
* आपस्तम्ब गृह्यसूत्र
* काठक गृह्यसूत्र
* आग्निवेश्य गृह्यसूत्र
* हिरण्यकेशि गृह्यसूत्र
* वाराह गृह्यसूत्र
* वैखानस गृह्यसूत्र
* चारायणीय गृह्यसूत्र
* वैजवाप गृह्यसूत्र

शुल्ब सूत्र-
* बौधायन शुल्बसूत्र
* मानव शुल्बसूत्र
* आपस्तम्ब शुल्बसूत्र
* कात्यायन शुल्बसूत्र
* मैत्रायणीय शुल्बसूत्र
* हिरण्यकेशि (सत्याषाढ) शुल्बसूत्र
* वाराह शुल्बसूत्र

धर्मसूत्र-
* बौधायन धर्मसूत्र
* आपस्तम्ब धर्मसूत्र
* मानव धर्मसूत्र
* विष्णु धर्मसूत्र

नोट- इसके अलावा भरद्वाज, बृहस्पति आदि धर्मसूत्र भी प्राप्त होते हैं।

शिक्षा ग्रन्थ-
* व्यास शिक्षा
* वशिष्ठ शिक्षा
* भारद्वाज शिक्षा
* माण्डव्य शिक्षा

सामवेद

➢ **सामवेद का परिचय** - वैदिक वाङ्मय में सामवेद का विशिष्ट स्थान है। सामवेद वेदों का सार है। भारतीय परम्परा के अनुसार कृष्णद्वैपायन व्यास ने साममन्त्रों का भी संकलन किया जो सामवेदसंहिता के नाम से प्रसिद्ध है। बृहद्देवता ने स्पष्ट प्रतिपादित किया है कि 'जो साम को जानता है वह वेद के रहस्य को जानता है' (सामानि यो वेत्ति स वेद तत्त्वम्।

➢ गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने सामवेद को ही अपना स्वरूप मानकर इसकी महत्ता घोषित की है (वेदानां सामवेदोऽस्मि) ऋग्वेद कहता है कि जो व्यक्ति जागरणशील है उसी को साम की प्राप्ति होती है (यो जागार तमु सामानि यान्ति)। अथर्ववेद में साम को परब्रह्म का लोमभूत माना गया है (सामानि यस्य लोमानि) वस्तुतः साम के वैशिष्ट्य का अर्थ यही है कि वैदिक साहित्य में सामवेद का स्थान किसी भी अन्य वेद की अपेक्षा न्यून नहीं है। सामवेद उपासना का वेद है।

➢ **सामतात्पर्य-** साम अर्थात् स्वरों के आरोहावरोह से युक्त मन्त्रों का गान करना। साम का अर्थ है– गायन अर्थात् 'गीतियुक्त मन्त्र'। ऋचाएँ जब विशिष्ट गान पद्धति से गायी जाती हैं तो उसे 'साम' कहते हैं। **'साम'** शब्द से (ऋचाओं के) अक्षर एवं उनसे व्यक्त स्वरमालिका का ग्रहण होता है। **'स्वरलापन'** यह साम का प्रधान अंग है। जैमिनीय सूत्र में गीति को ही साम की संज्ञा प्रदान की गई है **(गीतिषु समाख्या)** बृहदारण्यकोपनिषद् में साम शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार बताई है कि सा का अर्थ है 'ऋक्' और अम् का अर्थ है 'स्वर' अर्थात् ऋक् से सम्बद्ध स्वर प्रधान गायन को साम कहते हैं (सा च अमश्चेति तत्साम्नः सामत्वम्। तया सह सम्बद्धः अयो नाम स्वरः यत्र वर्तते तत्साम)

➢ **सामवेद संहिता का स्वरूप-**
- सामवेद का ऋत्विक् उद्गाता है।
- उद्गाता ऋग्वेद की ऋचाओं का शास्त्रीय तथा परम्परागत रूप में गायन करता है।
- 'ऋक् और साम' में परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है।
- सामवेद में ऋग्वेद के लगभग सभी मण्डलों से मन्त्र संगृहीत हैं किन्तु अधिकांश मन्त्र आठवें तथा नवें मण्डल से ग्रहण किये गये हैं।

• बृहत् साम, रथन्तर साम आदि का ऋग्वेद में उल्लेख है।

सामवेद का विभाजन- प्राचीन दृष्टि से सामवेद को दो संहिताओं में विभाजित किया गया है।

1. आर्चिक संहिता 2. गान संहिता

- आर्चिक शब्द का अर्थ 'ऋक् समूह' है। आर्चिक संहिता के भी दो भेद किये गये हैं।

1. पूर्वार्चिक 2. उत्तरार्चिक

- गान संहिता को भी दो भागों में विभाजित किया गया है –

1. ग्रामगेय 2. आरण्यगेय

- सामवेद के दो मुख्य भाग हैं 1. पूर्वार्चिक 2. उत्तरार्चिक
- पूर्वार्चिक में चार काण्ड हैं - 1. आग्नेय 2. ऐन्द्र 3. पावमान 4. आरण्य
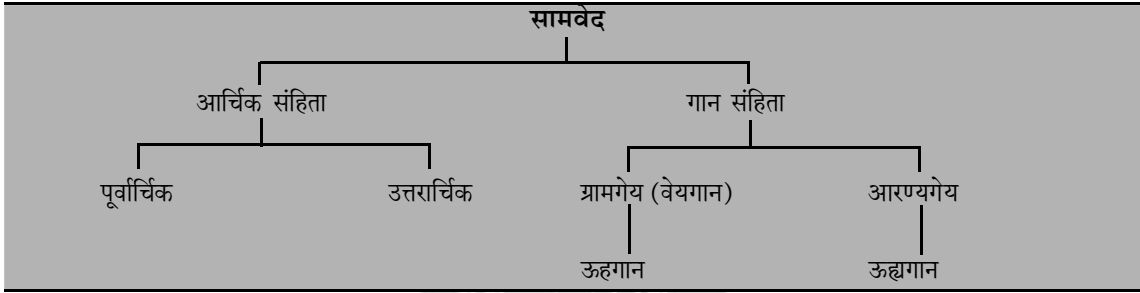
- परिशिष्ट के रूप में महानाम्नी आर्चिक भी है।
- इसमें 6 अध्याय या प्रपाठक हैं। अध्यायों के अनुसार कांडों को बाँटा गया है।
- अध्यायों के खण्ड किये गये हैं।
- अध्याय 1 को 'आग्नेय काण्ड' माना जाता है।
- अध्याय 2 से 4 को 'ऐन्द्र काण्ड' माना जाता है।
- अध्याय 5 को 'पावमान काण्ड' माना जाता है।
- अध्याय 6 को 'आरण्य काण्ड' और परिशिष्ट को 'महानाम्नी आर्चिक' माना जाता है।

पूर्वार्चिक मन्त्र संख्या-650

- प्रथम से पञ्चम प्रपाठक **'ग्रामगान'** कहलाता है।
- छठा प्रपाठक **'अरण्यगान'** कहलाता है।

उत्तरार्चिक

- इसमें 9 प्रपाठक (21 अध्याय) हैं, कुल मन्त्र 1225 और कुल सूक्त 400 हैं।

पूर्वार्चिक विवरण

काण्ड	विषय	अध्याय (प्रपाठक)	खण्ड	मन्त्र
1. आग्नेय	अग्नि देवता	1	12	114
2. ऐन्द्र	इन्द्र देवता	2 से 4	12	352
3. पावमान	सोम देवता	5	11	119
4. आरण्यक	इन्द्र, अग्नि,सोम	6	5	55
5. महानाम्नी आर्चिक	इन्द्र	परिशिष्ट	-	10

- 400 सूक्तों में 287 सूक्तों में प्रत्येक में 3-3 मन्त्रों का समूह है।
- 66 सूक्तों में 2-2 मन्त्रों का समूह और शेष 47 सूक्तों में 1 से 12 तक मन्त्र समूह हैं।

उत्तरार्चिक

प्रपाठक	मन्त्र	सूक्त
9	1225	400

सामवेद मन्त्र संख्या वर्णन-
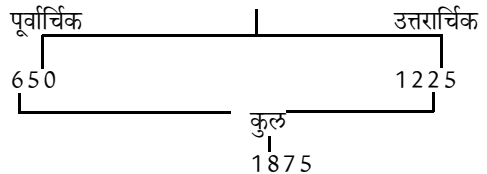
- सामवेद के कुल मन्त्र 1875 हैं।

सामवेदीय शाखाएँ- महाभाष्य में पतंजलि ने सामवेद की एक सहस्र शाखाओं का उल्लेख किया है, (**सहस्त्रवर्त्मा सामवेदाः**)। जैमिनिगृह्यसूत्र में 13 शाखाओं का उल्लेख मिलता है।

- जैमिनि, तलवकार, सात्युग्र, राणायनीय, दुर्वासस, भागुरि, गौरुण्डि, गौर्गुलजि,
  औपममन्यव, कारडि, सावर्णि, गार्ग्य, वार्षगण्य और दैवन्त्य।
- उपर्युक्त 13 शाखाओं में से आजकल केवल तीन शाखाएं ही उपलब्ध हैं-

सामवेदीय ब्राह्मण
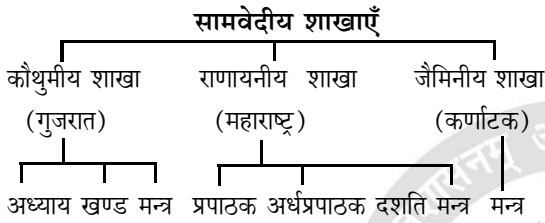
- सामवेद के उपलब्ध ब्राह्मण 8 हैं।
- सायण ने इनका उल्लेख इस प्रकार किया है-

अष्टौ हि ब्राह्मणग्रन्थाः प्रौढं ब्राह्मणमादिमम्।
षड्विंशाख्यं द्वितीयं स्यात् ततः सामविधिर्भवेत्॥
आर्षेयं देवताध्यायो भवेदुपनिषत् ततः।
संहितोपनिषद् वंशो ग्रन्था अष्टावितीरिताः॥

1. तांड्य ब्राह्मण-

- इसे पंचविंश, महाब्राह्मण और ब्राह्मण भी कहते हैं।
- इसमें 25 अध्याय है तथा पाँच-पाँच अध्यायों की एक पंचिका है।
- इसका मुख्य प्रतिपाद्य विषय सोमयाग है।

2. षड्विंश ब्राह्मण-

- इसमें 26 अध्याय हैं।
- इसको पंचविंश (तांड्य का परिशिष्ट माना जाता है।)
- इसके अन्तिम अध्याय को 'अद्भुत ब्राह्मण' कहते हैं।

3. सामविधान ब्राह्मण-

- इसमें तीन प्रपाठक और 25 अनुवाक हैं।
- इसमें प्रतिपादित विषय अधिकांशतः धर्मशास्त्र के क्षेत्र में आते हैं।

4. आर्षेय ब्राह्मण-

- इस ब्राह्मण में 3 प्रपाठक हैं, जो 82 खण्डों में विभक्त हैं।
- इसमें सामगानों के नाम तथा उनके अन्य नामों का उल्लेख है।

5. दैवत ब्राह्मण-

- इसमें चार खण्ड हैं।
- यह सूत्र शैली में लिखा गया है।
- इसमें सामगानों के देवताओं का विशेषरूप से वर्णन है।

6. उपनिषद् ब्राह्मण-

- इसे मन्त्र ब्राह्मण और छान्दोग्य ब्राह्मण भी कहा जाता है।
- इसमें 10 प्रपाठक हैं, प्रत्येक प्रपाठक में 8-8 खण्ड हैं।
- इस पर दो व्याख्याएं हैं - 1. गुणविष्णु कृत छान्दोग्य मन्त्र-भाष्य
  2. सायण कृत-वेदार्थप्रकाश।

7. संहितोपनिषद् ब्राह्मण-

- संहितोपनिषद् रहस्य को बताने वाला यह ग्रन्थ ब्राह्मण ग्रन्थ माना जाता है।
- इसमें 5 खण्ड हैं जो सूत्रों में विभक्त हैं।

8. वंश ब्राह्मण-

- यह ब्राह्मण बहुत छोटा है। इसमें तीन खण्ड हैं।
- इसमें स्वयंभू ब्रह्मा से सामवेद की परम्परा का प्रारम्भ माना जाता है।
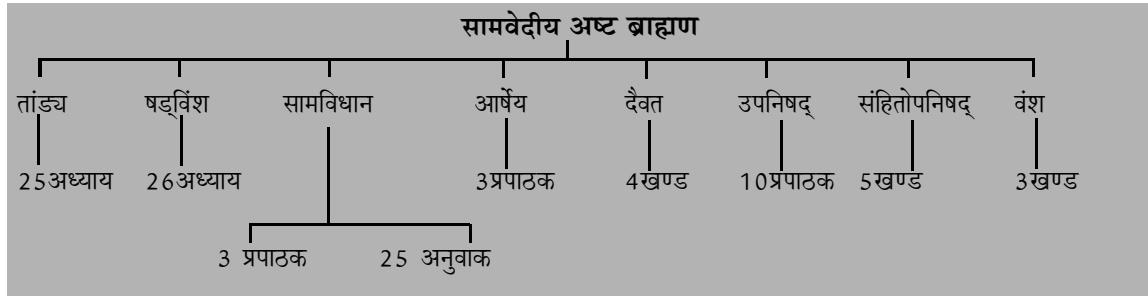
अन्य ब्राह्मण-

- आठ ब्राह्मणों के अतिरिक्त इसी वेद से सम्बद्ध जैमिनीय या तलवकार ब्राह्मण भी है जो 9 वाँ ब्राह्मण माना जाता है।
- जैमिनीय ब्राह्मण में 3 काण्ड हैं जो खण्डों में विभक्त हैं।

सामवेदीय आरण्यक-

- इसके दो आरण्यक प्राप्त होते हैं-

तलवकार (4 अध्याय)　　**छान्दोग्य** (छान्दोग्योपनिषद् का प्रथम भाग)

सामवेदीय उपनिषद्-

- सामवेद के दो उपनिषद् प्राप्त होते हैं।

1. केन उपनिषद् 2. छान्दोग्य उपनिषद्

➢ **केन उपनिषद्-** केनोपनिषद् में 4 खण्ड हैं। प्रथम खण्ड-8 मन्त्र, द्वितीय खण्ड-5 मन्त्र, तृतीय खण्ड-12 मन्त्र, चतुर्थ खण्ड-9 मन्त्र

- इसको 'तलवकार उपनिषद्' भी कहते हैं।
- इसमें 4 खण्ड हैं।
- प्रथम दो खण्ड पद्यात्मक हैं और शेष दो गद्यात्मक हैं।

छान्दोग्य उपनिषद्-

- इसमें 8 अध्याय या प्रपाठक हैं।
- इसके प्रथम एवं द्वितीय अध्याय में ॐ, उद्गीथ एवं साम के गूढ़ रहस्यों का मार्मिक विवेचन है।

छान्दोग्योपनिषद्		
अध्याय	खण्ड	मन्त्र
प्रथम	13	104
द्वितीय	24	82
तृतीय	19	94
चतुर्थ	17	78
पञ्चम	24	88
षष्ठ	16	69
सप्तम	26	51
अष्टम	15	62

सामवेदीय प्रातिशाख्य ग्रन्थ-

➢ सामवेदीय प्रातिशाख्य ग्रन्थ मुख्य तीन हैं-

1- ऋक्तन्त्र 2- पुष्पसूत्र 3- सामतन्त्र

➢ ऋक्तन्त्र के प्रणेता आचार्य शाकटायन हैं।

➢ ऋक्तन्त्र में पाँच प्रपाठक हैं।

➢ पुष्पसूत्र के रचयिता गोभिल ऋषि हैं ।

➢ पुष्पसूत्र में 10 प्रपाठक हैं।

➢ सामतन्त्र के लेखक महर्षि औदव्रजि को माना जाता है।

➢ इसमें 13 प्रपाठक हैं।

सामवेदीय प्रातिशाख्य

प्रातिशाख्य	रचनाकार	प्रपाठक
ऋक्तन्त्र	शाकटायन	5
पुष्पसूत्र	गोभिल	10
सामतन्त्र	औदव्रजि	13

सामवेदीय शिक्षाग्रन्थ

सामवेद में 3 शिक्षा ग्रन्थ प्राप्त होते हैं-

शिक्षा	लेखक
1.गौतमी शिक्षा	गौतम
2.लोमशी शिक्षा	लोमश
3. नारदीय शिक्षा	नारद

सामवेदीय श्रौतसूत्र

➢ सामवेद के श्रौतसूत्र निम्नलिखित हैं -

आर्षेय (मशक), क्षुद्र कल्पसूत्र, जैमिनीय, लाट्यायन, द्राह्यायण, निदान, तथा उपनिदान।

➢ इनमें सामवेदीय प्रकाशित श्रौतसूत्रों की संख्या 4 है।

श्रौतसूत्र
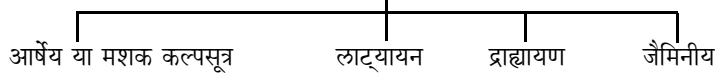
सामवेदीय गृह्यसूत्र

1- गोभिल गृह्यसूत्र　2- खादिर गृह्यसूत्र

3- द्राह्यायण गृह्यसूत्र　4- जैमिनीय गृह्यसूत्र

5- कौथुम गृह्यसूत्र

सामवेदीय धर्मसूत्र

➢ सामवेद का 'गौतम धर्मसूत्र' एकमात्र धर्मसूत्र है।

➢ इसके प्रणेता 'आचार्य गौतम' हैं।

➢ इसमें 28 अध्याय 1000 सूत्र हैं।

सामवेदीय कल्पसूत्रों का वर्गीकरण

श्रौतसूत्र	गृह्यसूत्र	धर्मसूत्र	शुल्बसूत्र
आर्षेय (मशक)	गोभिल	गौतम	कोई शुल्ब
लाट्यायन	खादिर		सूत्र नहीं
द्राह्यायण	द्राह्यायण		प्राप्त होता
जैमिनीय	जैमिनीय कौथुम		

सामवेद में सामगान के भेद -

- सामयोनि मन्त्रों का आश्रय लेकर ऋषियों ने विभिन्न गानों की रचना की है, सामगान के चार प्रकार हैं-

1- ग्रामगेयगान- इसे 'प्रकृतिगान' और 'गेयगान' भी कहते हैं।

2- आरण्यगान- इसे आरण्यक या **'रहस्यगान'** भी कहते हैं। यह वनों या पवित्र स्थानों पर ही गाया जाता है।

3- ऊहगान- ऊह का अर्थ है- विचारपूर्वक विन्यास।

- यह सोमयाग एवं विशेष धार्मिक अवसरों पर गाया जाता है।

4- ऊह्यगान- ऊह्यगान रहस्य गान है।

सामगान

1. ग्रामगेयगान 2. आरण्यगान 3. ऊहगान 4. ऊह्यगान

सामगान के विभाग

- सामगान के पाँच भाग निम्न हैं-

'प्रस्तावोद्गीथप्रतिहारोपद्रवनिधनानि भक्तयः'

अर्थात् सामगान के प्रस्ताव, उद्गीथ, प्रतिहार, उपद्रव और निधन ये पाँच भाग ह

भक्ति	गायक	मन्त्र का अंश
प्रस्ताव	प्रस्तोता	हुँ औग्नाइ
उद्गीथ	उद्गाता	ओम् आयाहि वीतये गृणानो हव्यदायते
प्रतिहार	प्रतिहर्ता	नि होता सत्सि बर्हिषि ओम्
उपद्रव	उद्गाता	नि होता सत्सि ब।
निधन	तीनों मिलकर	र्हिषि ओम्

सामविकार-

- सामगान में संगीत के अनुकूल जो शाब्दिक परिवर्तन किया जाता हैं, उसे सामविकार कहा जाता हैं। सामविकार के छः प्रकार होते हैं।

सामवेद के कुछ स्मरणीय तथ्य-

- सामवेद में गायन पद्धति है। इसमें स्वरों का सम्मिश्रण है।
- सामवेदीय मन्त्रों के ऊपर 1,2,3 संख्यायें दी गई हैं।

  1- उदात्त 2- अनुदात्त 3-स्वरित
- नारदीय शिक्षा के अनुसार सामवेद में स्वर आदि के सूचक हैं-

  ''सप्त स्वराः, त्रयो ग्रामाः, मूर्छनास्त्वेकविंशतिः।

  ताना एकोनपञ्चाशत्, इत्येतत् स्वरमण्डलम्।।''

सामविकार

विकार | विश्लेषण | विकर्षण | अभ्यास | विराम | स्तोभ

- अर्थात् स्वर सात हैं।
- ग्राम तीन हैं।
- मूर्च्छनाएँ 21 हैं।
- तान 49 हैं।

सप्त स्वर

षड्ज	-	(स)
ऋषभ	-	(रे)
गान्धार	-	(ग)
मध्यम	-	(म)
पंचम	-	(प)
धैवत	-	(ध)
निषाद	-	(नि)

सामवेदीय भाष्यकार

- सामवेद के भाष्यकार के रूप में इन आचार्यों का वर्णन प्राप्त होता है।

1. **माधव-** ये सामवेद के प्रथम भाष्यकार हैं। इनके भाष्य का नाम विवरण है।
2. **गुणविष्णु-** इन्होंने सामवेद की कौथुम शाखा पर 'छान्दोग्य-मन्त्रभाष्य' लिखा है।
3. **भरतस्वामी-** इन्होंने सम्पूर्ण सामवेद पर भाष्य लिखा था यह अभी प्रकाशित नहीं है।

भाष्यकार	भाष्य	वर्ष
माधव	विवरण	600 लगभग
गुणविष्णु	छान्दोग्य मन्त्रभाष्य	12 वीं शती ई. उत्तरार्ध
भरतस्वामी	सामवेदीय भाष्य	14 वीं शती ई. पूर्वार्ध

सामवेद के भारतीय अनुवादक-

	अनुवादक	भाषा		अनुवादक	भाषा
1.	सत्यव्रत	बंगला	4.	श्रीराम शर्मा	हिन्दी- भाष्य
2.	तुलसीराम स्वामी	हिन्दी- भाष्य	5.	वीरेन्द्र शास्त्री	हिन्दी- अनुवाद
3.	जयदेव विद्यालंकार	हिन्दी- भाष्य	6.	रामनाथ वेदालंकार	संस्कृत हिन्दी- भाष्य

सामवेद के पाश्चात्त्य अनुवादक

अनुवादक	विषय	भाषा	वर्ष
स्टेवेन्सन	राणायनीय शाखा	अंग्रेजी	1843 ई.
बेन्फे	कौथुम शाखा	जर्मन	1848 ई.
कैलेन्ड	जैमिनीय शाखा	रोमन	1907 ई.
ग्रिफिथ	सम्पूर्ण सामवेद	अंग्रेजी	1899 ई.
वेबर	अद्‌भुत ब्राह्मण	जर्मन	1858 ई.
बर्नेल	सामविधान ब्राह्मण दैवत ब्राह्मण,वंश-ब्राह्मण संहितोपनिषद् ब्राह्मण आर्षेय ब्राह्मण		1873 से 1877 तक
एर्टल	जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मण	अंग्रेजी	
कैलेण्ड	जैमिनीय ब्राह्मण	जर्मन	
स्टेनो कोनो	सामविधान ब्राह्मण		1893
ग्रास्ट्रा	जैमिनीय गृह्यसूत्र	डच	1906

➢ सामवेद संहिता - एक दृष्टि में

आचार्य - जैमिनि

ऋत्विक् - उद्गाता

उपवेद - गान्धर्ववेद

देवता - आदित्य (सूर्य)

विभाजन - दो भागों में (पूर्वार्चिक, उत्तरार्चिक)

पूर्वार्चिक - 4 काण्ड, 6 अध्याय (प्रपाठक)

उत्तरार्चिक - 9 प्रपाठक, 1225 मन्त्र, 400 सूक्त

शाखा - 1. कौथुमीय 2. राणायनीय 3. जैमिनीय

ब्राह्मण - 8 या 9

आरण्यक - 2 (तलवकार, छान्दोग्य)

उपनिषद् - 2 (केनोपनिषद्, छान्दोग्योपनिषद्)

प्रातिशाख्य - 3 (ऋक्तन्त्र, पुष्पसूत्र, सामतन्त्र)

शिक्षा - 3 (गौतमी, लोमशी, नारदीय)

श्रौतसूत्र - 4 (आर्षेय, लाट्यायन, द्राह्यायण, जैमिनीय)

गृह्यसूत्र - 5 (गोभिल, खादिर, द्राह्यायण, जैमिनीय, कौथुम)

धर्मसूत्र - 1 (गौतम धर्मसूत्र)

शुल्बसूत्र - नहीं प्राप्त होता है।

सामगान - 4 (ग्रामगेयगान, आरण्यगान, ऊहगान, ऊह्यगान)

सामविकार - 6 (विकार, विश्लेषण, विकर्षण, अभ्यास, विराम, स्तोभ)

सामभक्तियाँ - 5 (प्रस्ताव, उद्गीथ, प्रतिहार, उपद्रव, निधन)

भाष्यकार - माधव, गुणविष्णु, भरतस्वामी।

अथर्ववेद

- **अथर्ववेद का अर्थ-** 'अथर्वों का वेद।' अर्थात् अभिचार मन्त्रों से सम्बन्धित ज्ञान। वेदों की चारों संहिताओं में अथर्ववेद की एक निजी और अन्यतम विशिष्टता रही है। इस वेद के 'अथर्व' शब्द की सुन्दर व्याख्या यास्काचार्य के निरुक्त तथा गोपथ ब्राह्मण में उपलब्ध है। निरुक्त के अनुसार **'थर्व'** धातु गत्यर्थक है और अथर्व का अर्थ है- गतिहीन अथवा स्थिरता युक्त। अर्थात् जिसमें चित्त में स्थिरता एवं दृढ़ता लाई जा सके। तदनुसार गोपथ ब्राह्मण में प्रस्तुत है कि- समीपस्थ आत्मा को अपने अन्दर देखना।
- पाणिनीय धातु पाठ में **'थर्वी'** धातु हिंसा के अर्थ में पठित है। 'थर्व' धातु कुटिलता एवं हिंसावाची है। अतः अकुटिलता तथा अहिंसा योग से ब्रह्म प्राप्ति कराने के कारण इस संहिता को अथर्ववेद कहा गया।
- अथर्ववेद में विभिन्न ऋषियों के दृष्टमन्त्र हैं तथा अनेक विषयों का प्रतिपादन है, अतः इसके अनेक नाम पड़े हैं। अथर्ववेद तथा अन्य ग्रन्थों में अथर्ववेद के ये नाम प्राप्त होते हैं।

अथर्ववेद की शाखाएँ-

- पतञ्जलि ने महाभाष्य में 'नवधाऽथर्वणो वेदः' कहकर इस वेद की 9 शाखाओं का उल्लेख किया है जो इस प्रकार हैं- 1. पैप्पलाद 2. तौद (स्तौद) 3. मौद 4. शौनकीय 5. जाजल 6. जलद 7. ब्रह्मवद 8. देवदर्श 9. चारणवैद्य
- प्रपंचहृदय, चरणव्यूह और सायण की अथर्ववेद-भाष्य भूमिका में भी नौ शाखाओं का उल्लेख मिलता है।
- इसमें केवल पैप्पलाद एवं शौनकीय शाखा उपलब्ध होती है।

अथर्ववेद के उपवेद

- गोपथ ब्राह्मण में अथर्ववेद के 5 उपवेद का उल्लेख है- 1. सर्पवेद 2. पिशाचवेद 3. असुरवेद 4. इतिहासवेद 5.पुराणवेद

अथर्ववेद के अपर नाम

- ब्रह्मवेद, अथर्वाङ्गिरोवेद, भिषग्वेद, क्षत्रवेद, महीवेद, छन्दोवेद, अंगिरसवेद, भैषज्यवेद, भृग्वंगिरोवेद

अथर्ववेद की उपलब्ध शाखा

पैप्पलाद
1. पिप्पलाद ऋषि के नाम पर नामकरण
2. एकमात्र प्रति काश्मीर में शारदा लिपि
3. प्रपञ्चहृदय माट ने 20 काण्ड बताया

शौनकीय
1. वर्तमान में प्रचलित अथर्ववेद संहिता यही है।
2. 20 काण्ड,730 सूक्त, 5987 मन्त्र
3. सबसे बड़ा-काण्ड-20वाँ (958 मन्त्र)
4. सबसे छोटा काण्ड-17 वाँ (30 मन्त्र)
5. गोपथ ब्राह्मण इसी शाखा से है।

अथर्ववेद की उपलब्ध शाखा

1. **शौनकीय शाखा (शौनक)**

➢ आजकल प्रचलित अथर्ववेद संहिता शौनकीय शाखा ही है ।
➢ इसमें 20 काण्ड,730 सूक्त, 5987 मन्त्र हैं।
➢ इसमें सबसे बड़े तीन काण्ड हैं -काण्ड-20 (958 मन्त्र)
काण्ड- 6 (454 मन्त्र)
काण्ड-19 (453 मन्त्र)
➢ सबसे छोटा काण्ड-17 वाँ काण्ड है (30 मन्त्र)

2. **पैप्पलाद शाखा**

➢ पिप्पलाद ऋषि के नाम पर इस शाखा का नामकरण हुआ पैप्पलाद।
➢ इस शाखा की संहिता 'पैप्पलाद संहिता' है।
➢ इस शाखा की एकमात्र प्रति काश्मीर में शारदा लिपि में प्राप्त हुई थी।
➢ तत्कालीन काश्मीर नरेश ने 1875 ई0 में वह प्रति प्रसिद्ध जर्मन विद्वान् डा0 राय को उपहार रूप में दी।
➢ प्रपञ्चहृदयकार ने पैप्पलाद शाखा का संकेत किया है। उन्होंने पैप्पलाद शाखा को 20 काण्डों का बताया।
➢ 1901 ई0 में अमेरिका में इसकी फोटो स्टेट प्रति छपी, बाद में डॉ0 रघुवीर ने भी इसका सुन्दर संस्करण प्रकाशित किया ।
➢ पतञ्जलि के प्रमाण से यह स्पष्ट है कि महाभाष्य काल में अथर्ववेद की यही शाखा सर्वाधिक प्रचलित थी।
➢ अथर्ववेद के देवता-सोम
➢ अथर्ववेद के ऋषि- अथर्वा ऋषि
➢ अथर्ववेद के ऋत्विक् - ब्रह्मा

अथर्ववेद के महत्त्वपूर्ण सूक्त

1. पृथिवीसूक्त (12वाँ काण्ड)
2. ब्रह्मचर्य सूक्त (11वाँ काण्ड)
3. काल सूक्त (19वाँ काण्ड)
4. विवाह सूक्त (14वाँ काण्ड)
5. व्रात्य सूक्त (15वाँ काण्ड)
6. मधुविद्या सूक्त (9वाँ काण्ड)
7. ब्रह्मविद्या सूक्त
8. रोहित सूक्त (13वाँ काण्ड)
9. कौशिक सूक्त
10. आयुष्यकर्म सूक्त
11. भैषज्यकर्म सूक्त
12. आरोग्य मन्त्र सूक्त
13. पौष्टिक मन्त्र
14. शान्ति सूक्त
15. प्रकीर्ण सूक्त

अथर्ववेद

देवता	ऋषि	ऋत्विक्
सोम	अथर्वाऋषि	ब्रह्मा

अथर्ववेद के कुछ महत्त्वपूर्ण सूक्त

* पृथिवीसूक्त * ब्रह्मचर्यसूक्त * कालसूक्त
* विवाहसूक्त * व्रात्यसूक्त * मधुविद्यासूक्त
* ब्रह्मविद्यासूक्त * रोहितसूक्त * कौशिकसूक्त
* आयुष्यकर्मसूक्त * भैषज्यकर्मसूक्त * आरोग्यमन्त्रसूक्त
* पौष्टिकमन्त्र * शान्तिसूक्त * प्रकीर्णसूक्त

अथर्ववेद ब्राह्मण

गोपथ ब्राह्मण
- पूर्वभाग (5 प्रपाठक) — 135 कण्डिकाएँ
- उत्तरभाग (6 प्रपाठक) — 123 कण्डिकाए

अथर्ववेदीय-ब्राह्मण

➢ अथर्ववेद का एकमात्र ब्राह्मण गोपथ ब्राह्मण है।
➢ गोपथ ब्राह्मण पैप्पलाद शाखा से संबद्ध है।
➢ पैप्पलाद शाखा के अथर्ववेद का प्रथम मन्त्र- 'शं नो देवीरभिष्टये' है।
➢ गोपथ ब्राह्मण दो भागों में विभक्त है- पूर्वभाग (5 प्रपाठक) उत्तरभाग (6 प्रपाठक) = 11 प्रपाठक हैं।
➢ पूर्व गोपथ ब्राह्मण में 135 कण्डिकाएँ हैं। उत्तर गोपथ ब्राह्मण में 123 कण्डिकाएँ।
कुल मिलाकर गोपथ ब्राह्मण में 11 प्रपाठक 258 कण्डिकाएँ हैं। अथर्ववेद का आरण्यक नहीं उपलब्ध है।

अथर्ववेदीय उपनिषद्

- अथर्ववेद के उपलब्ध उपनिषद् तीन हैं –
  (1) प्रश्नोपनिषद् (2) मुण्डकोपनिषद् (3) माण्डूक्योपनिषद्

प्रश्न उपनिषद्

- यह अथर्ववेद की पैप्पलाद शाखा से सम्बन्धित है जो सम्पूर्ण गद्यमय है।
- पिप्पलाद ऋषि अपने छह शिष्य ऋषियों द्वारा पूछे गए अध्यात्म विषयक प्रश्नों कासमुचित उत्तर देते हैं इन प्रश्नों के कारण ही इस उपनिषद् का नाम प्रश्नोपनिषद् पड़ा।
- छह शिष्यों के नाम इस प्रकार हैं-
  1. कबन्धी कात्यायन 2. भार्गव वैदर्भि
  3. कौसल्य आश्वलायन 4. सौर्य्यायणी
  5. शैव्यसत्यकाम 6. सुकेशा भारद्वाज

अथर्ववेदीय उपनिषद्		
प्रश्न उपनिषद्	**मुण्डक उपनिषद्**	**माण्डूक्य उपनिषद्**
(सम्पूर्ण गद्यमय) * पिप्पलाद ऋषि द्वारा छः शिष्यों को आध्यात्मिक प्रश्नों का उत्तर देना * इसी कारण प्रश्न उपनिषद् नाम पड़ा	(3 मुण्डक) * हर मुण्डक 2-2 *खण्डों में 'सत्यमेव जयते' महावाक्य * 'द्वा सुपर्णा सयुजा' मन्त्र * 'वेदान्त' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग * चतुष्पाद आत्मा का वर्णन	(लघुकाय) * कुल 12 वाक्य। खण्ड ऋचा कण्डिका * ॐकार का विशेष वर्णन * ब्रह्म की चार अवस्थाएं वर्णित

2. मुण्डकोपनिषद्

- अथर्ववेदीय मुण्डकोपनिषद् कुल तीन मुण्डकों तथा प्रत्येक मुण्डक दो-दो खण्डों में विभक्त है।
- यह मुण्डक अर्थात् संन्यासियों के लिए विरचित है।
- इस उपनिषद् में ब्रह्मा ने अपने ज्येष्ठ पुत्र अथर्वा (अर्थवन्) को ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया है।
- प्रसिद्ध वाक्य **'सत्यमेव जयते'** इसी उपनिषद् में है।
- द्वैतवाद का प्रतिपादक **''द्वा सुपर्णा सयुजा''** मन्त्र इसी उपनिषद् का है।
- वेदान्त शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम इसी उपनिषद् में उपलब्ध है।

3. माण्डूक्योपनिषद्

- यह उपनिषद् लघुकाय है। लघुता के कारण भी और भाव गाम्भीर्य के कारण बहुत महत्त्वपूर्ण है।
- इसमें कुल 12 वाक्य/खण्ड / कण्डिकाएँ हैं।
- इसमें विशेष रूप से ओम्कार का रहस्य वर्णित है।
- इसमें बताया गया है कि यह सारा संसार, वर्तमान, भूत और भविष्य सब कुछ 'ओम्' की ही व्याख्या है।
- इसी में ही ब्रह्म की चार अवस्थाएं बताई गई हैं जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीय।
- इसी सन्दर्भ में चतुष्पाद आत्मा का सूक्ष्मविवेचन भी प्राप्त होता है।

अथर्ववेदीय कल्पसूत्र

श्रौतसूत्र	**गृह्यसूत्र**	**धर्मसूत्र**	**शुल्बसूत्र**
वैतानसूत्र	कौशिक सूत्र	उपलब्ध	उपलब्ध
8 अध्याय	14 अध्याय	नहीं हैं।	नहीं हैं।
43 कण्डिकायें	141 कण्डिकायें		

अथर्ववेदीय श्रौतसूत्र

- अथर्ववेद का वैतान श्रौतसूत्र ही उपलब्ध है।
  वैतान श्रौतसूत्र - ब्रह्मा के सभी कर्तव्य, इस श्रौतसूत्र के पहले ही अध्याय में दर्शपूर्ण मास के विवरण में प्रतिपादित हैं।
- यह श्रौतसूत्र गोपथ ब्राह्मण पर आश्रित है।
- इसमें 8 अध्याय और 43 कण्डिकाएँ हैं।
- ये श्रौत कर्म बतलाए गए हैं- दर्शपूर्णमास, अग्न्याधेय, उक्थ्य, षोडशी
  अतिरात्र, वाजपेय, अग्निचयन, राजसूय आदि।

अथर्ववेदीय-गृह्यसूत्र

- अथर्ववेद का एक मात्र गृह्यसूत्र कौशिक (कौशिकसूत्र) उपलब्ध है।
- कौशिक गृह्यसूत्र का अथर्ववेद की शौनकीय शाखा से विशेष सम्बन्ध है।
- इसका विभाजन 14 तथा 141 कण्डिकाओं में हुआ है।
- शान्तिकर्म और अभिचार कर्मों का विशद विवेचन है।
- इसमें प्रायः प्रायश्चित्त कर्म और भविष्यवाणी का विशद विवेचन है।
- कौशिक सूत्र को 'संहिता विधि' या **'संहिता कल्प'** संज्ञा प्राप्त है।

- अथर्ववेद का धर्मसूत्र नहीं उपलब्ध है।
- अथर्ववेद का शुल्बसूत्र नहीं उपलब्ध है।

अथर्ववेदीय शिक्षा ग्रन्थ

- अथर्ववेद का केवल एक शिक्षाग्रन्थ है – **माण्डूकी शिक्षा**
- यह श्लोकात्मक है।
- साम स्वरों का इसमें विशद विवेचन है। इसमें कुल 179 श्लोक हैं।
- अथर्ववेद के स्वरों तथा वर्णों को भली-भाँति जानने के लिए यह शिक्षा उपयोगी है।

अथर्ववेदीय प्रातिशाख्य

- अथर्ववेद के दो प्रातिशाख्य ग्रन्थ उपलब्ध हैं।
  * शौनकीय चतुरध्यायिका
  * अथर्ववेद प्रातिशाख्य

अथर्ववेदीय शिक्षाग्रन्थ

माण्डूकी शिक्षा

179 श्लोक

साम स्वरों और वर्णों का वर्णन

अथर्ववेदीय प्रातिशाख्य

* शौनकीय चतुरध्यायिका	* अथर्ववेद प्रातिशाख्य
* 4 अध्याय	* 3 प्रपाठक
* सूत्र संख्या – 434	* प्रथम प्रपाठक में 3 पाद
* सबसे प्राचीन प्रातिशाख्य	* द्वितीय और तृतीय प्रपाठक में 4पाद
	* कुल सूत्र संख्या 221 है।

1. शौनकीय चतुरध्यायिका

- इसके लेखक शौनक हैं।
- इसमें चार अध्याय हैं और सूत्रसंख्या 434 है।
- 1. ध्वनि विचार 2. सन्धि विवेचन 3. संहिता पाठ में दीर्घत्व, द्वित्व, णत्व, स्वरसन्धि। 4. अवग्रह, प्रगृह्य आदि का विवेचन।
- यही सबसे प्राचीन अथर्ववेदीय प्रातिशाख्य है।
- इसका इंग्लिश अनुवाद के सहित संस्करण डॉ0 व्हिटनी ने प्रकाशित किया है।
  * प्रथम अध्याय में 105 सूत्र
  * द्वितीय अध्याय में 107 सूत्र
  * तृतीय अध्याय में 96 सूत्र
  * चतुर्थ अध्याय में 126 सूत्र

2. अथर्ववेदीय प्रातिशाख्य

- यह प्रपाठकों में विभक्त है।
- प्रपाठक पुनः पादों तथा सूत्रों में विभक्त हैं।
- प्रथम प्रपाठक में 3 पाद हैं।
- द्वितीय और तृतीय प्रपाठक में चार चार पाद हैं।
- कुल सूत्र संख्या 221 है।
- इस प्रातिशाख्य में सन्धि,स्वर तथा पदपाठ के नियम बताये गए हैं।
- जिनमें स्वरों का वर्णन अधिक विस्तार से किया गया है।
- डॉ. सूर्यकान्त ने इसका एक सुन्दर संस्करण 1940 में लाहौर से प्रकाशित किया था।
- इस ग्रन्थ की भाषा शैली सूत्रात्मक है।
- इस प्रातिशाख्य ग्रन्थ में अथर्ववेद के उच्चारण सम्बन्धी नियमों का भी उल्लेख है।

अथर्ववेद के भारतीय भाष्यकार

दुर्गादास लाहिड़ी

- सायण-भाष्य सहित अथर्ववेद (शौनक शाखा) को 5 भागों में प्रकाशित किया।

शंकर पाण्डुरंग -

- अथर्ववेद का सायण भाष्य-सहित संस्करण 4 भागों में निकाला था (बम्बई 1898 ई.)
- यह बहुत शुद्ध संस्करण है।

सातवलेकर

- अथर्ववेद संहिता (शौनकीय) 1943 ई0 में प्रकाशित की।
- इन्होंने 'अथर्ववेद' का सुबोध-भाष्य 5 भागों में प्रकाशित किया।
- इन्हें आधुनिक युग का 'सायण' कहा जाता है।
- यह अथर्ववेद का सर्वोत्तम व्याख्या ग्रन्थ है।
- यह ग्रन्थ श्री सातवलेकर के अगाध वेदज्ञान और अथक परिश्रम का परिचायक है।

क्षेमकरण त्रिवेदी

- सम्पूर्ण ऋग्वेद का हिन्दी भाष्य किया है।

जयदेव विद्यालंकार

- सम्पूर्ण अथर्ववेद का हिन्दी भाष्य किया ।

श्रीरामशर्मा

- इन्होंने इसे हिन्दी अनुवाद के साथ प्रकाशित किया है।

विश्वबन्धु-

➢ सायण भाष्य सहित अथर्ववेद 5 भागों में निकाला है।

भगवद्दत्त

➢ अथर्ववेदीय पंचपटलिका और माण्डूकी शिक्षा पर भाष्य टीका लिखी

विश्वबन्धु-

➢ अथर्ववेदीय प्रातिशाख्य और अथर्ववेदीय बृहत् सर्वानुक्रमणी पर भाष्यटीका लिखी –

➢ गोपथ ब्राह्मण पर भाष्य लिखा - **राजेन्द्र लाल मिश्र**

क्षेमकरण त्रिवेदी -

➢ गोपथ ब्राह्मण हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित किया।

डॉ0 विजयपाल शास्त्री-

➢ गोपथ ब्राह्मण पर भाष्य मिलता है।

अथर्ववेदीय पाश्चात्त्य विद्वान्

रोठ और ह्विटनी

➢ अथर्ववेद संहिता (शौनकीय शाखा) का सर्वप्रथम संपादन किया और 1856 ई0 में उसे प्रकाशित किया।

ब्लूम फील्ड और गार्बे

➢ अथर्ववेद (पैप्पलाद शाखा) की एक अति जीर्ण काश्मीर से शारदा लिपि में प्राप्त प्रति से फोटो-प्रति तीन बड़ी जिल्दों में 1901 ई0 में छपवाई।

कैलेण्ड-

➢ अथर्ववेद- संहिता का एक आलोचनात्मक संस्करण उट्रिच (हालैंड) से प्रकाशित किया।

ग्रिफिथ-

➢ अथर्ववेद का अंग्रेजी में पद्यानुवाद वाराणसी से 1895-1898 में छपवाया था।

ह्विटनी और लानामान-

➢ अथर्ववेद का अंग्रेजी में अनुवाद 150 पृष्ठ की भूमिका तथा विविध टिप्पणियों से युक्त है।

➢ जो 1905 ई0 में दो भागों में प्रकाशित किया।

ब्लूमफील्ड

➢ पैप्पलाद संहिता का अंग्रेजी में अनुवाद 1901 ई0 में प्रकाशित किया था ।

अथर्ववेदीय ब्राह्मण के पाश्चात्त्य अनुवादक गास्ट्रा-

➢ गोपथ ब्राह्मण का एक सुन्दर संस्करण 1919 ई0 में प्रकाशित किया।

अथर्ववेदीय कल्पसूत्र के पाश्चात्त्य अनुवादक

ब्लूमफील्ड-

➢ अथर्ववेदीय कौशिक सूत्र 1890 ई0 में प्रकाशित किया था ।

अथर्ववेद संहिता -एक दृष्टि में

➢ **आचार्य -** सुमन्तु, **ऋषि-**अथर्वा, **ऋत्विक्-** ब्रह्मा

➢ **उपवेद-** पिशाचवेद, सर्पवेद,पुराणवेद,इतिहासवेद,असुरवेद

➢ **अपरनाम -** ब्रह्मवेद, क्षत्रवेद, महीवेद, भैषज्यवेद, छन्दोवेद, भिषग्वेद, अथर्वाङ्गिरोवेद, आंगिरसवेद, भृग्वंगिरो वेद

➢ **विभाजन-** 20 काण्ड

➢ **उत्पत्ति देवता-** सोम

➢ **शाखायें-**

➢ **उपलब्ध शाखा**	-	पैप्पलाद, शौनकीय (शौनक)
➢ **ब्राह्मण**	-	गोपथ ब्राह्मण
➢ **आरण्यक**	-	नहीं है (उपलब्ध नहीं)
➢ **उपनिषद्**	-	प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य
➢ **श्रौतसूत्र**	-	वैतान श्रौतसूत्र
➢ **गृह्यसूत्र**	-	कौशिक गृह्यसूत्र
➢ **धर्मसूत्र**	-	उपलब्ध नहीं
➢ **शुल्बसूत्र**	-	उपलब्ध नहीं
➢ **शिक्षा**	-	माण्डूकी शिक्षा
➢ **प्रातिशाख्य-**		1. शौनकीय चतुरध्यायिका 2. अथर्ववेद प्रातिशाख्य

भारतीय भाष्यकार-

1. दुर्गादास लाहिड़ी	2. शंकर पांडुरंग पण्डित
3. सातवलेकर	4. क्षेमकरण त्रिवेदी
5. जयदेव विद्यालंकार	6. श्रीराम शर्मा
7. विश्वबन्धु	8. डॉ0 रघुवीर
9. भगवद् दत्त	10. डॉ0 विजयपाल शास्त्री
11. राजेन्द्र लाल मिश्र	

पाश्चात्त्य अनुवादक

1. रोठ और ह्विटनी	2. ब्लूमफील्ड और गार्वे
3. कैलेन्ड	4. ग्रिफिथ
5. ह्विट्नी और लानमान	6. गास्ट्रा

वेदाङ्ग का संक्षिप्त परिचय

शिक्षा

शिक्षाग्रन्थ-

➢ उपलब्ध शिक्षाग्रन्थ 35 हैं। 32 शिक्षा ग्रन्थों का एक संकलन 'शिक्षा-संग्रह' नाम से प्रकाशित हुआ।

➢ इसमें ध्वनिविज्ञान से सम्बन्ध उनेक महत्त्वपूर्ण तथ्य दिए गए हैं।

पाणिनीय शिक्षा-

➢ पाणिनीय शिक्षा वैदिक और लौकिक दोनों के लिए उपयुक्त है।

➢ पाणिनीय शिक्षा में साठ श्लोक हैं।

➢ पाणिनीय शिक्षा में वर्णों की संख्या,उच्चारण-प्रक्रिया का ध्वनि-शास्त्रीय वर्णन,स्थान और प्रयत्न का विवरण,संवृत-विवृत,घोष-अघोष,पाठक के गुण-दोषों का वर्णन आदि प्राप्त होता है।

➢ **भारद्वाज शिक्षा-** पदों की शुद्धता तथा ध्वनि भेद से उदात्त आदि स्वरों में भेद का वर्णन किया है।

➢ **याज्ञवल्क्य शिक्षा-** याज्ञवल्क्य शिक्षा में 232 श्लोक हैं।

* इसमें वैदिक स्वरों का विवेचन है।

* वर्णों के भेद,स्वरूप,परस्पर साम्य,वैषम्य,लोप आगम-विकार,प्रकृतिभाव आदि का वर्णन है।

➢ **प्रातिशाख्य प्रदीप शिक्षा-**

इसमें स्वर-वर्ण आदि की शिक्षा का विवेचन तथा प्राचीन वैयाकरण के मतों का उल्लेख प्राप्त होता है।

➢ **नारदीय शिक्षा-**

नारदीय शिक्षा में सामवेद के स्वरों का विस्तार से वर्णन है।

➢ **अन्य महत्त्वपूर्ण शिक्षा ग्रन्थ-** व्यासशिक्षा, वशिष्ठशिक्षा ,कात्यायनी शिक्षा, पाराशरी शिक्षा,माण्डव्य शिक्षा,माध्यन्दिनी शिक्षा,वर्णरत्नप्रदीपिका,केशवी शिक्षा,स्वरांकन शिक्षा,स्वरभक्ति लक्षण शिक्षा।

व्याकरण वेदाङ्ग –

वेद को व्याकरण का मुख माना जाता है–**'मुखं व्याकरणं स्मृतम्'।**

➢जिस शास्त्र के द्वारा शब्दों के प्रकृति प्रत्यय का विवेचन किया जाता है उसे व्याकरण कहते हैं **'व्याक्रियन्ते विविच्यन्ते शब्दाः अनेन इति व्याकरणम्'**

➢ व्याकरण शास्त्र को दो भागों में बाँटा जा सकता है- वैदिक व्याकरण तथा लौकिक व्याकरण।

➢ व्याकरण शास्त्र में पद-पदार्थ, वाक्य-वाक्यार्थ आदि का विवेचन प्राप्त होता है।

ऋग्वेद के एक मन्त्र में व्याकरण शास्त्र को एक वृषभ के रूपक में बाँधा गया है-

**चत्वारि शृंगा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यां आविवेश॥**

* चत्वारि शृंगा - नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात।

निरुक्त वेदाङ्ग

➢ निरुक्त आचार्य यास्क की कृति है जिसमें बारह अध्याय है तथा दो अध्याय परिशिष्ट के रूप में है। परिशिष्ट सहित 14 अध्याय है।

➢ निरुक्त वेदपुरुष का श्रोत्र (कान) है – **'निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते'**

➢ निरुक्त निघण्टु का व्याख्यान ग्रन्थ है जिसमें ऋग्वेद के शब्दों का संग्रह है।

➢ निरुक्त के प्रारम्भिक तीन अध्याय **'नैघण्टुक काण्ड'** कहे जाते हैं।

➢ चार, पाँच, छः अध्याय को **'नैगम काण्ड'** कहा जाता है।

➢ अन्तिम छः अध्याय (7-12) को **'दैवत काण्ड'** के नाम से जाना जाता है।

➢ निरुक्त में शब्दों का निर्वचन तीन प्रकार से किया गया है - प्रत्यक्ष, परोक्ष, अतिपरोक्ष।

➢ निरुक्त को **'शब्द व्युत्पत्ति शास्त्र'** भी कहा जाता है।

➢ निरुक्त में तीन काण्ड हैं- नैघण्टुक काण्ड, नैगम काण्ड,दैवत काण्ड।

➢ नैगम काण्ड को 'ऐकपदिक' भी कहा जाता है।

➢ वैदिक शब्दों का संग्रह निघण्टु में तथा उनकी व्याख्या निरुक्त में है।

➢ दुर्गाचार्य, यास्क कृत निरुक्त के प्रसिद्ध टीकाकार हैं।

➢ वेदों के अर्थों को स्पष्ट करने में निरुक्त आवश्यक है और व्याकरण शास्त्र का पूरक है।

➢ वेदमन्त्रों के कठिन शब्दों की व्युत्पत्ति निरुक्त करता है-

'अर्थावबोधे निरपेक्षतया पदजातं यत्रोक्तं तन्निरुक्तम्' - सायण

➢ निरुक्त में चार प्रकार के पद हैं- नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात **'चत्वारि पदजातानि नामाख्याते च, उपसर्गनिपाताश्च'**

यास्क के पूर्ववर्ती निरुक्तकार-

➢ आग्रायण, औपमन्यव, और्णवाभ, गार्ग्य, गालव, वार्ष्यायणि, शाकपूणि आदि।

निरुक्त के टीकाकार- निरुक्त की तीन टीकाएँ प्राप्त होती है जो हैं-

1 दुर्गाचार्य कृत ऋज्वर्थ वृत्ति टीका

2 स्कन्द महेश्वर कृत टीका जो लाहौर से प्रकाशित हुई।

3 वररुचि कृत निरुक्त निचय टीका

➢ निरुक्त के पाँच प्रतिपाद्य विषय हैं-

वर्णागम, वर्णविपर्यय, वर्णविकार, वर्णनाश, धातु का अनेक अर्थों में प्रयोग।

''वर्णागमो वर्णविपर्ययश्च द्वौ चापरौ वर्णविकारनाशौ। धातोस्तदर्थातिशयेन योगस्तदुच्यते पञ्चविधं निरुक्तम्।।''

निरुक्त में प्रतिपादित विषय-

प्रतिपादितविषय	अध्याय
निघण्टु, नाम आख्यात आदि पद विभाग, शब्दनित्यता का विवेचन मन्त्रों की सार्थकता का प्रतिपादन, अर्थ ज्ञान का महत्त्व	अध्याय-एक
निर्वचन, वर्णपरिवर्तन आदि से सम्बन्ध भाषाशास्त्रीय विवेचन।	अध्याय 2-3
वेदों के निघण्टु में पढ़े गए कठिन शब्दों की उदाहरण सहित व्याख्या।	अध्याय 4-6
देवतावाची शब्दों की विस्तृत व्याख्या, द्युलोक, अन्तरिक्ष, पृथिवी स्थानीय देवों का निरूपण।	7-12
निर्वचन प्रक्रिया, सृष्टि उत्पत्ति, आदि अनेक विषयों का विवेचन।	अध्याय 13-14

नोट- निरुक्त का अध्याय 13,14 परिशिष्ट के रूप में हैं।

छन्द-वेदाङ्ग

- छन्द शब्द छद् धातु (ढँकना) से बना है।
- 'छन्दांसि छादनात्' अर्थात् छन्द भावों को आच्छादित करके उसे समष्टि रूप प्रदान करता है- आचार्य यास्क।
- **'यदक्षरपरिमाणं तच्छन्दः'** जिसमें वर्णों या अक्षरों की संख्या निर्धारित होती है, उसे छन्द कहते हैं- आचार्य कात्यायन।
- वैदिक छन्दों का आधार अक्षर या वर्णों की संख्या है।
- छन्द को वेद का पाद (पैर) कहा जाता है **'छन्दः पादौ तु वेदस्य'**।
- आठ अध्यायों में विभक्त छन्दःसूत्र के रचयिता आचार्य पिङ्गल हैं।
- वैदिक छन्द वृत्तात्मक हैं तथा इनमें मात्रिक छन्दों का अभाव है।
- निदानसूत्र में छन्दों के नाम और लक्षण दिये गए हैं।
- **पिंगल के छन्दःसूत्र** के पूर्वभाग में वैदिक छन्दों का तथा उत्तरभाग में लौकिक छन्दों का विवेचन प्राप्त होता है।
- वैदिक छन्दों को 'अक्षर छन्द' भी कहा जाता है।
- वैदिक छन्द दो प्रकार के होते हैं- अक्षरगणनानुसारी तथा पादाक्षरगणनानुसारी।
- जिसमें अक्षरों की गणना हो उसे अक्षरगणनानुसारी तथा जिसमें पदों की गणना हो उसे 'पादाक्षरगणनानुसारी' छन्द कहते हैं।
- वैदिक छन्दों की कुल संख्या 26 है।
- ऋग्वेद में प्रयुक्त छन्दों की संख्या बीस है।
- वेदों में मुख्य रूप से सात छन्दों का प्रयोग है जो हैं- गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, पंक्ति, त्रिष्टुप्, जगती।
- हलायुध ने छन्दसूत्र पर 'मृतसंजीवनी' टीका लिखी।
- ऋग्वेद में अधिकांश 20 अक्षरों वाले छन्दों से लेकर 48 अक्षरों वाले छन्द प्रयुक्त हैं।

छन्द विषयक नियम

- पद के अन्त के साथ शब्द का अन्त होता है।
- ह्रस्व स्वर के बाद संयुक्त वर्ण होंगे तो पूर्ववर्ती लघु स्वर को गुरु माना जाता है।

बाद में कोई स्वर हो तो पूर्ववर्ती दीर्घस्वर को ह्रस्व कर दिया जाता है।

- शब्द के अन्तर्गत और सन्धि स्थानों में प्राप्त य् व् को आवश्यक्तानुसार क्रमशः इ,उ पढ़ा जाता है।
- एकादेश हुए स्वरों को उच्चारण के समय आवश्यकतानुसार एकादेश से पूर्व की स्थिति में पढ़ा जाता है।
- ए और ओ के बाद पूर्वरूप हुए अ को आवश्यक्तानुसार फिर अ पढ़ा जाता है।

छन्द नाम	अक्षर/वर्ण	पाद
1. गायत्री	24	3
2. उष्णिक्	28	3
3. अनुष्टुप्	32	4
4. बृहती	36	4
5. पंक्ति	40	5
6. त्रिष्टुप्	44	4
7. जगती	48	4
8. अतिजगती	52	5
9. अतिशक्वरी	60	5
10. अष्टि	64	5

- छन्द में एक अक्षर कम होने पर निचृत् कहलाता है जैसे- निचृत् गायत्री, निचृत् उष्णिक् आदि। निचृत् गायत्री में 23 अक्षर होते हैं।
- छन्द में एक अक्षर अधिक होने पर भुरिक् कहलाता है जैसे- भुरिक् गायत्री, भुरिक् उष्णिक् भुरिक अनुष्टुप् आदि। भुरिक् गायत्री में 25 अक्षर होते हैं।
- छन्द में दो अक्षर कम होने पर विराट् कहा जाता है जैसे- विराट् गायत्री, विराट् उष्णिक् आदि। इस प्रकार विराट् गायत्री में 22 अक्षर होंगे।
- छन्द में दो अक्षर अधिक होने पर स्वराट् कहा जाता है जैसे- स्वराट् गायत्री, स्वराट् उष्णिक् स्वराट् अनुष्टुप् आदि। इस प्रकार स्वराट् गायत्री में 26 अक्षर होंगे।

2. भारतीय दार्शनिक चिन्तन

(सांख्यकारिका)

- पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं- श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, रसना, घ्राण।
- पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं- वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ।
- पाँच तन्मात्राएँ हैं- शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध।
- पाँच महाभूत हैं- आकाश, वायु,तेज, जल, पृथिवी।

पाँच महाभूतों की उत्पत्ति क्रम

1. पाँच तन्मात्रा	2. महाभूत
शब्द	आकाश
शब्द+स्पर्श	वायु
शब्द+स्पर्श+रूप	अग्नि
शब्द +स्पर्श+रूप+रस	जल
शब्द+स्पर्श+रूप+रस+गन्ध	पृथिवी

- बुद्धि का लक्षण है- '**अध्यवसायो बुद्धिः**' अर्थात् निश्चयात्मक अथवा निश्चय करने वाला तत्त्व बुद्धि है। (का0-23)
- बुद्धि के आठ गुण- धर्म, अधर्म, ज्ञान, अज्ञान, वैराग्य, राग, ऐश्वर्य, अनैश्वर्य।
- बुद्धि के चार सात्त्विक गुण- धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य।
- बुद्धि के चार तामसिक गुण- अधर्म,अज्ञान, राग, अनैश्वर्य।
- व्यक्ति को '**अभ्युदय**' एवं '**निःश्रेयस्**' की प्राप्ति कराने वाला कारण धर्म है।
- त्रिगुणात्मिका '**प्रकृति**' एवं निर्गुण, तेजोरूप '**पुरुष**' का विवेक भेदपूर्वक साक्षात्कार ही सांख्यदर्शन की भाषा में ज्ञान कहलाता है।
- आसक्ति का अभाव वैराग्य है।
- अणिमा, लघिमा, गरिमा, महिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, वशित्व एवं ईशित्व इन आठ सिद्धियों की प्राप्ति ही ऐश्वर्य है।

बुद्धि के धर्म (गुण)

- अहङ्कार- "**अभिमानोऽहंकारः**"अर्थात् 'मैं' इस प्रकार के अभिमान को अहंकार कहते हैं।
- अहंकार से दो प्रकार के कार्य उत्पन्न होते हैं-
  1. ग्यारह इन्द्रियों का समूह 2. पञ्चतन्मात्राओं का समूह।
- ग्यारह इन्द्रियों के समूह वैकृत नामक सात्त्विक अहंकार से तथा पञ्चतन्मात्राओं के समूह भूतादि नामक तामसिक अहङ्कार से उत्पन्न होते हैं। (का0-24)

अहंकार

- इन्द्रियाँ दो प्रकार की होती हैं- अन्तः इन्द्रिय, बाह्य इन्द्रिय
- ज्ञान कराने वाली इन्द्रिय को '**ज्ञानेन्द्रिय**' कहा जाता है इसे '**बुद्धीन्द्रिय**'भी कहते हैं।
- रूप, रस और गन्धादि विषयों को बुद्धिपूर्वक आलोचन, पर्यालोचन आदि करके जो ज्ञान में साधक अथवा करण होती हैं वे बुद्धीन्द्रिय अथवा ज्ञानेन्द्रिय कहलाती हैं।
- ज्ञान के साधक इन्द्रिय को ज्ञानेन्द्रिय तथा कर्म के साधक इन्द्रिय को कर्मेन्द्रिय कहा जाता है।
- मन को **उभयेन्द्रिय** कहा गया है क्योंकि यह ज्ञानेन्द्रिय तथा

कर्मेन्द्रिय दोनों के साथ समान रूप से कार्य करता है।

➢ एकादश इन्द्रियों के बीज मन, संकल्प करने वाला तथा समान धर्मभाव के कारण दोनों प्रकार का होता है। **'उभयात्मकमत्र मनः संकल्पकमिन्द्रियं च'** (का0-27)

➢ पाँच ज्ञानेन्द्रियों का व्यापार शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध आदि विषयों का प्रकाशन मात्र माना जाता है **'रूपादिषु पञ्चानामालोचनमात्रमिष्यते वृत्तिः'** (का0-28)

➢ पाँच कर्मेन्द्रियों का व्यापार बोलना, ग्रहण करना, चलना, त्यागकरना, और आनन्द का अनुभव कराना माना जाता है **'वचनादानविहरणोत्सर्गानन्दाश्च'** (का0-28)

➢ नाम, जाति, गुण, क्रिया आदि विशेषताओं का संकल्प-विकल्प करना मन का कार्य है।

➢ यह वस्तु त्यागने योग्य है अथवा ग्रहण करने योग्य इसका निश्चय बुद्धि करती है।

पाँच ज्ञानेन्द्रियों के कार्य

ज्ञानेन्द्रिय	कार्य
श्रोत्र (कान)	शब्द
त्वक् (त्वचा)	स्पर्श
चक्षु (आँख)	रूप
रसना (जीभ)	रस
घ्राण (नाक)	गन्ध

पाँच कर्मेन्द्रियो के कार्य

कर्मेन्द्रिय	कार्य
वाक् (वाणी)	बोलना (भाषण)
पाणि (हाथ)	लेना (ग्रहण)
पाद (पैर)	चलना (गमनागमन)
पायु (गुदा)	त्याग करना (मलत्याग)
उपस्थ (जननेन्द्रिय)	आनन्द प्रदान करना

पाँच वायु की स्थिति

वायु	स्थिति (का0-29)
प्राण –	नासिका, हृदय, नाभि, पैर का अँगूठा
अपान –	गले की घुंडी, पीठ, पैर, गुदा, जननेन्द्रिय
समान –	हृदय, नाभि, शरीर के जोड़
उदान –	हृदय, कण्ठ, तालु, सिर- भौहों के बीच
व्यान –	सम्पूर्ण शरीर में त्वचा

➢ करण तेरह प्रकार के हैं **'करणं त्रयोदशविधम्'**।

➢ तेरह प्रकार के करण हैं- एकादश इन्द्रिय, बुद्धि, अहंकार (का0-32)

➢ करण के कार्य हैं- आहरण, धारण तथा प्रकाश

➢ वाक् इत्यादि कर्मेन्द्रियाँ अपने-अपने विषय का आहरण या ग्रहण करती हैं।

➢ बुद्धि, अहंकार और मन अपने प्राण इत्यादि व्यापार के द्वारा देह को धारण करती है।

➢ ज्ञानेन्द्रियाँ शब्द, स्पर्श इत्यादि को प्रकाशित करती हैं।

तेरह करण

तीन अन्तःकरण

(मन, बुद्धि, अहंकार)

➢ त्रयोदशकरण को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है-

1. आभ्यन्तरकरण- बुद्धि, अहंकार,मन

2. बाह्यकरण- पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ।

करण के दो भेद

➢ अन्तःकरण तीन हैं - **'अन्तःकरणं त्रिविधम्'** (का0-33) बुद्धि, अहंकार, मन।

➢ अन्तःकरण को प्रस्तुत करने वाले बाह्यकरण दस हैं पञ्चज्ञानेन्द्रियाँ+पञ्चकर्मेन्द्रियाँ

➢ वर्तमान विषयक होते हैं- बाह्य करण

➢ अन्तःकरण को **आभ्यन्तर करण** भी कहते हैं।

➢ ज्ञानेन्द्रियाँ बाहर स्थित अपने-अपने विषयों के सम्पर्क में आकर उन्हें प्रकाशित करके उनकी सूचना अन्तः करण को प्रदान करती हैं।

➢ बाह्यकरण केवल वर्तमानकाल के विषयों में प्रभावी होते हैं इसलिए इसे **'साम्प्रत्कालम्'** कहा गया है।

➢ आभ्यन्तर अर्थात् अन्तःकरण भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों कालों में प्रभावी होते हैं।

➢ **'स्वालक्षण्यं वृत्तिस्त्रयस्य'** में त्रयस्य पद से अभिप्राय मन, बुद्धि, अहंकार से है।

➢ अन्तः करण में दो प्रकार की शक्तियों को माना जाता है- ज्ञानशक्ति तथा क्रियाशक्ति।

➢ बुद्धि, मन, अहंकार ज्ञानशक्ति का तथा प्राणादि क्रियाशक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं।

➢ मन, बुद्धि, अहंकार और इन्द्रिय भेद से करण के चार भेद भी माने गये हैं।

➢ प्रत्यक्ष दिखाई देने वाले पदार्थ के सम्बन्ध में चार प्रकार के करणों की प्रवृत्ति कभी एक साथ और कभी क्रमशः कही गयी है।

➢ परोक्ष पदार्थों के ज्ञान के सम्बन्ध में केवल मन, बुद्धि, अहंकार ये तीन अन्तः करण का व्यापार प्रत्यक्षपूर्वक एक साथ और क्रमपूर्वक होता है।

तीन अन्तः करण के कार्य		
अन्तः करण		**कार्य**
बुद्धि	–	निश्चय
अहंकार	–	अभिमान
मन	–	संकल्प

➢ दस बाह्यकरणों में पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ स्थूल और सूक्ष्म दो विषयों में प्रवृत्त होती हैं।

➢ कर्मेन्द्रियों में वाक् इन्द्रिय शब्द के विषय में प्रवृत्त होती हैं शेष चारों ही शब्द स्पर्श इत्यादि पाँचों विषयों में प्रवृत्त होती हैं।

➢ तीनों अन्तः करण प्रधान हैं क्योंकि मन एवं अहंकार के साथ बुद्धि सभी विषयों में व्याप्त होती है।

➢ बाह्य इन्द्रियाँ द्वार या साधनमात्र हैं, मन तथा अहंकार से युक्त बुद्धि साधनवती या प्रधान है।

➢ करण पुरुष के सम्पूर्ण प्रयोजन को प्रकाशित करके बुद्धि को समर्पित कर देते हैं।

➢ सभी ज्ञानेन्द्रियों, मन और अहंकार का लक्ष्य बुद्धि होता है।

➢ समस्त विषयों के सम्बन्ध में होने वाले पुरुष के भोग को बुद्धि ही सम्पादित करती है।

➢ प्रकृति एवं पुरुष के सूक्ष्म भेद को प्रकट करती है- बुद्धि। **'प्रधानपुरुषान्तरं सूक्ष्मम्'- बुद्धिः।** (का0-37)

➢ सांख्य के अनुसार दुःख की हमेशा के लिए निवृत्ति ही मोक्ष अथवा कैवल्य है।

➢ पञ्चतन्मात्रा अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध ये सूक्ष्म विषय हैं।

➢ पञ्चतन्मात्राओं से पञ्चमहाभूत की उत्पत्ति होती है।

➢ आकाश आदि पञ्चमहाभूत विशेष अर्थात् स्थूल कहे जाते हैं, ये सुखात्मक, दुःखात्मक और मोहात्मक होते हैं।

➢ शान्त घोर और मूढ होते हैं-**पञ्चमहाभूत**

➢ सूक्ष्म अर्थात् इन्द्रियों द्वारा जिनका प्रत्यक्ष नहीं किया जाता वे अविशेष हैं।

➢ नित्य होता है- **सूक्ष्मशरीर।**

➢ अनित्य होता है- माता-पिता से उत्पन्न स्थूलशरीर।

➢ सूक्ष्मशरीर की गति सर्वत्र होती है।

➢ प्रलयकाल में सूक्ष्मशरीर भी अपने कारण में समाहित हो जाता है।

➢ सूक्ष्मशरीर को **लिङ्गशरीर** भी कहते हैं।

➢ सांख्य का **सूक्ष्मशरीर 18 तत्त्वों** से निर्मित होता है। (का0-40) पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच तन्मात्राएँ, महत्, अहंकार, मन ये सूक्ष्मशरीर के 18 अवयव हैं।

➢ सूक्ष्मशरीर होता है- सृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न, सभी जगह गति करने में सक्षम, प्रलयकाल तक स्थायीरूप से रहने वाला, भोगरहित, भावों से युक्त, महत् से लेकर सूक्ष्मतन्मात्रापर्यन्त, 18 तत्त्वों से निर्मित।

➢ सूक्ष्मशरीर ही संसरण या गमनागमन करता है।

➢ सूक्ष्मशरीर का आधार **छः कोषों** से निर्मित स्थूलशरीर होता है।

➢ 18 तत्त्वों से निर्मित सूक्ष्मशरीर केवल तन्मात्रारूप में स्थित रहता है।

➢ सूक्ष्मशरीर निरूपभोग अर्थात् भोगरहित होता है।

➢ पुरुष की सत्ता का द्योतक होने के कारण सूक्ष्मशरीर को लिङ्गशरीर भी कहते हैं।

➢ लिङ्ग का लक्षण है- **'लिंग्यते अनेन इति लिङ्गम्'** अथवा **'लीनं गमयति इति लिङ्गम्'**
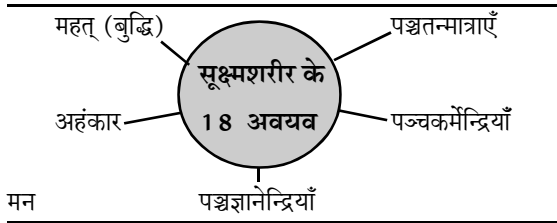
सूक्ष्मशरीर के 18 अवयव	
1. महत्	- 01
2. अहंकार	- 01
3. मन	- 01
4. पञ्चज्ञानेन्द्रियाँ	- 05
5. पञ्चकर्मेन्द्रियाँ	- 05
6. पञ्चतन्मात्राएँ	- 05
कुल योग	**- 18**

➢ सूक्ष्मशरीर के द्वारा स्थूलशरीर के माध्यम से जो भी कार्य सम्पन्न किए जाते हैं उन सबका मुख्य प्रयोजन पुरुष के भोग एवं अपवर्ग को सम्पादित करना है।

➢ प्रकृति अर्थात् स्वभाव से ही सिद्ध सांसिद्धिक तथा वैकृतिक धर्म, अधर्म इत्यादि भाव करण अर्थात् निमित्तरूप बुद्धि के आश्रित रहते हैं। (का0-43)

➢ कलल अर्थात् जरायु से परिवेष्टित रजोमिश्रितवीर्य इत्यादि भाव कार्य अर्थात् नैमित्तिक शरीर के आश्रित रहते हैं।

➢ रजस् और वीर्य के मिश्रण को **'कलल'** कहा जाता है।

➢ धर्म से ऊर्ध्व लोक में गति होती है **'धर्मेण गमनमूर्ध्वम्'** (का0-44)

➢ अधर्म से अधोलोक में गति होती है- **'गमनमधस्ताद् भवत्यधर्मेण'** (का0-44)

➢ सांख्य में ज्ञान से मोक्ष होता है **'ज्ञानेन चापवर्गः'** (का0-44)

➢ अज्ञान से बन्धन की प्राप्ति होती है **'विपर्ययादिष्यते बन्धः'** (का0-44)

➢ धर्म से अभिप्राय यम, नियम आदि अष्टाङ्गयोग, अभ्युदय एवं निःश्रेयस् के साधक यज्ञ, दान आदि अनुष्ठान सभी श्रेष्ठकर्मों से है।

➢ लोक हैं- ऊर्ध्वलोक, अधोलोक।

➢ ऊर्ध्वलोकों की संख्या सात है- भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यलोक।

➢ अधोलोक की संख्या भी सात है- अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल, पाताल।

➢ विवेकख्याति सम्भव है- **सांख्यशास्त्र द्वारा**।

➢ वैराग्य से प्रकृतिलय होता है **'वैराग्यात् प्रकृतिलयः'** (का0-45)

➢ रजोमय राग से संसरण होता है **'संसारो भवति राजसाद्रागात्'** (का0-45)

➢ ऐश्वर्य से इच्छा की सफलता होती है **'ऐश्वर्यादविघातः'** (का0-45)

➢ ऐश्वर्य के अभाव से इच्छा की सफलता का हनन होता है **'विपर्ययात् तद्विपर्यासः'** (का0-45)
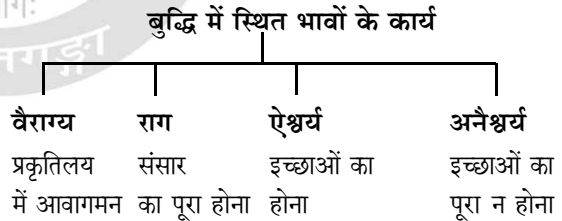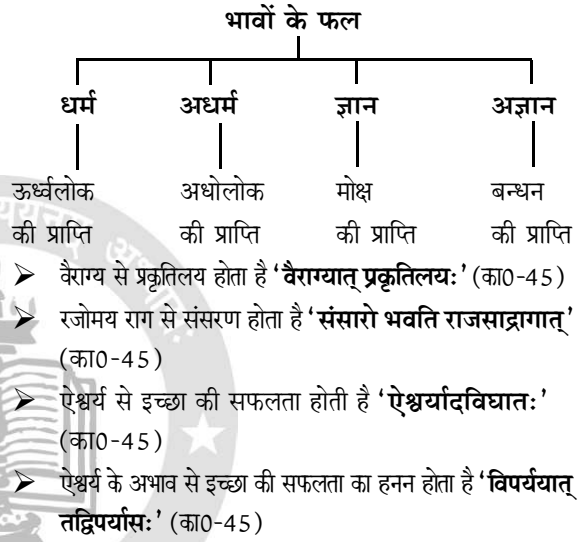
सृष्टि के भेद

➢ सांख्य के अनुसार सृष्टि दो प्रकार की होती है- भौतिक एवं बौद्धिक।

➢ बुद्धि (बौद्धिक) के चार प्रमुख परिणाम हैं- विपर्यय, अशक्ति, तुष्टि, सिद्धि। इन्हें **प्रत्ययसर्ग** या **बुद्धिसर्ग** कहते हैं।

➢ प्रत्ययसर्ग (बुद्धिसर्ग) के कुल **पचास भेद** हैं। 5 विपर्यय + 28 अशक्ति + 9 तुष्टि + 8सिद्धि = 50 प्रत्ययसर्ग

➢ विपर्यय के **पाँच भेद**- तम, मोह, महामोह, तामिस्र, अन्धतामिस्र।

➢ अशक्ति की संख्या **अट्ठाइस** है; जिसमें सत्रह प्रकार के बुद्धि के दोष तथा एकादश इन्द्रियों के वध हैं। (का0-28)

➢ बाधिर्य, कुण्ठिता, अन्धत्वी, जडता, अजिघ्रता, मूकता, कैवल्य, पंगुत्व, कौण्ड्य, उदावर्त, मन्दता, असुवर्णा, अनिला, मनोज्ञा, अदृष्टि, अपरा, सुपरा, असुनेत्रा, वसुनाडिका, अनुत्तमाम्भसिका, अप्रतार, असुतार, अतारतार, असदामुदित, अरम्यक्, अप्रमोद, अमुदित, आमोदमान- ये **28 अशक्तियाँ** हैं।

➢ **तुष्टि के नौ भेद-** 1. प्रकृति, 2. उपादान, 3. काल, 4. भाग, 5. पार, 6. सुपार, 7. पारापार, 8. अनुत्तमाम्भस्, 9. उत्तमाम्भस्। (का0-47)

➢ **आठ प्रकार की सिद्धियाँ-**1-3त्रिदुःख विनाश, 4.अध्ययन, 5.ऊह, 6.शब्द, 7.सुहृत्प्राप्ति, 8.दान।

➢ बुद्धि के उपघातों के साथ ग्यारह इन्द्रियों की विकलता अशक्ति कहलाती है।

➢ नौ तुष्टि और सिद्धियों के विपर्ययभाव से बुद्धि के सत्रह उपघात होते हैं।

➢ विपर्यय, अशक्ति, तुष्टि अंकुशरूप में सिद्धि की बाधक होती हैं।

➢ पुरुष का भोग-अपवर्ग रूप प्रयोजन ही पुरुषार्थ है।

➢ बौद्धिक परिणाम के बिना तन्मात्र परिणाम सम्भव नहीं है।

➢ तन्मात्रपरिणाम के बिना बौद्धिक परिणाम भी सम्भव नहीं है।

भौतिक सर्ग या सृष्टि

➢ देवसृष्टि के आठ प्रकार होते हैं -1. ब्राह्म 2. प्राजापत्य 3. ऐन्द्र 4. पैत्र 5. गान्धर्व 6. यक्ष 7. राक्षस 8. पैशाच

➢ तिर्यक् सृष्टि के पाँच भेद होते हैं-

1. पशु 2. पक्षी 3. मृग 4. सरीसृप 5. स्थावर।

➢ मनुष्यसृष्टि एक प्रकार की होती है।

भौतिक सृष्टि

देवसृष्टि	तिर्यक् सृष्टि	मनुष्यसृष्टि
(8प्रकार)	(5 प्रकार)	(1 प्रकार)

इसप्रकार **भौतिक सृष्टि चौदह प्रकार** की होती है।

➢ ब्रह्म से लेकर तृणपर्यन्त भौतिक सृष्टि में ऊपर के लोक में सत्त्वगुण की प्रधानता, अधोलोक अर्थात् नीचे के लोक में तमोगुण की प्रधानता मध्यलोक में रजोगुण की प्रधानता है।

लोक	गुण	सृष्टि
ऊर्ध्व	सत्त्वगुण	देवसृष्टि
अधः	तमोगुण	तिर्यक् सृष्टि
मध्य	रजोगुण	मानुषी सृष्टि

सांख्य के अनुसार प्रमाण

➢ **'दृष्टमनुमानमाप्तवचनम्'** (का0-4) इस कथन से सांख्य तीन प्रमाण मानता है - (i) दृष्ट (प्रत्यक्ष) (ii) अनुमान तथा (iii) आप्तवचन।

➢ सांख्य को तीन ही प्रमाण अभीष्ट है (का0-4) **'त्रिविधं प्रमाणमिष्टम्'**। इन्हीं तीन प्रमाणों के ज्ञान से ही प्रमेयों का ज्ञान होता है- **'प्रमेयसिद्धिः प्रमाणाद्धि'**

अन्य आचार्यों द्वारा स्वीकृत प्रमाण

➢ **चार्वाक -** केवल प्रत्यक्ष को प्रमाण के रूप में मानता है।

➢ **बौद्ध-दर्शन -** दो प्रमाण मानता है- (प्रत्यक्ष, अनुमान)

➢ **सांख्य-योग**-तीन प्रमाण मानता है-(प्रत्यक्ष,अनुमान,शब्द)

➢ **न्याय- वैशेषिक -** चार प्रमाण मानता है- (प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द)

➢ **प्रभाकर मीमांसक -** पाँच प्रमाण मानते हैं- (प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द ,अर्थापत्ति)

➢ **भाट्ट मीमांसक -** छः प्रमाण मानते हैं- (प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द,अर्थापत्ति, अभाव)

➢ **पौराणिक -** आठ प्रमाण (प्रत्यक्ष, अनुमान,उपमान, शब्द,अर्थापत्ति,अभाव, सम्भव,ऐतिह्य)

➢ **'प्रतिविषयाध्यवसायो दृष्टम्'** (का0-5) प्रत्यक्ष प्रमाण का लक्षण है। विषय से सम्बद्ध इन्द्रिय पर आश्रित बुद्धि-व्यापार या ज्ञान को प्रत्यक्ष प्रमाण कहते है।

➢ **'तल्लिङ्गलिङ्गिपूर्वकम् अनुमानम्'** (का0-05) यह अनुमान प्रमाण का लक्षण है। लिङ्ग और लिङ्गी के ज्ञान से जो उत्पन्न होता है उसे अनुमान प्रमाण कहते हैं।

➢ सर्वप्रथम अनुमान के दो भेद होते हैं - **वीतानुमान, अवीतानुमान**

➢ वीतानुमान के दो भेद- **पूर्ववत्, सामान्यतोदृष्ट।**

➢ अवीतानुमान का एक भेद - **शेषवत्।**

➢ इस प्रकार **पूर्ववत्, शेषवत् ,सामान्यतोदृष्ट** के भेद से अनुमान प्रमाण के तीन भेद हैं।

➢ **'आप्तश्रुतिराप्तवचनम्'** (का0-05) अर्थात् आप्त पुरुष की उक्ति ही शब्द प्रमाण है।

➢ शब्दप्रमाण को **आगमप्रमाण** या **आप्तप्रमाण** भी कहा जाता है।

➢ जो जिस रूप में है उसको उसी रूप में कहना आप्तवचन तथा उपदेश करने वाले को आप्तपुरुष कहते हैं।

➢ सामान्यविषयों का ज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण से होता है।

➢ इन्द्रियों से दिखाई न देने वाले अर्थात् परोक्ष पदार्थों का ज्ञान अनुमान प्रमाण से होता है।

➢ मूलप्रकृति आदि का ज्ञान सामान्यतोदृष्ट नामक अनुमान प्रमाण से होता है।

➢ सांख्य के अनुसार वस्तुओं का प्रत्यक्ष आठ रूपों से नहीं होता है -

(i) अत्यधिक दूर होने से (ii) अत्यधिक समीप होने से
(iii) इन्द्रियों के नाश होने से (iv) मन की अस्थिरता से
(v) सूक्ष्म होने से (vi) बीच में किसी रुकावट के आ जाने से
(vii) समान वस्तु में मिल जाने से (viii) अपने कारण से उत्पन्न होने से।

अतिदूरात् सामीप्यादिन्द्रियघातान्मनोऽनवस्थानात्।
सौक्ष्म्याद् व्यवधानादभिभवात् समानाभिहाराच्च॥
(का0-07)

➢ प्रकृति की उपलब्धि नहीं होती है - सूक्ष्म होने के कारण।
➢ अभाव के कारण नहीं अपितु सूक्ष्मता के कारण प्रकृति की उपलब्धि नहीं होती है।
'सौक्ष्म्यात्तदनुपलब्धिर्नाभावात्' (का0-08)
➢ सत्कार्यवाद सांख्यदर्शन का प्रमुख सिद्धान्त है **'सतः सत् जायते'**
➢ **सांख्य की दृष्टि में सत्कार्यवाद है- असदकरणादुपादानग्रहणात् सर्वसम्भवाभावात्। शक्तस्य शक्यकरणात् कारणभावाच्च सत्कार्यम्॥ (का-09)**
➢ सत्कार्यवाद सिद्धान्त में पाँच हेतु हैं-
(i) असदकरणाद् (ii) उपादानग्रहणात् (iii) सर्वसम्भवाभावात् (iv) शक्तस्य शक्यकरणात् (v) कारणभावात्
➢ सत्कार्यवाद सिद्धान्त के अनुसार - कार्य हमेशा अपने कारण रूप में विद्यमान रहता है।
➢ सांख्यशास्त्र के अनुसार न तो किसी वस्तु की उत्पत्ति होती है और न ही विनाश होता है।
➢ कार्य की उत्पत्ति का अर्थ है अव्यक्त से व्यक्त होना तथा विनाश का अर्थ है व्यक्त से अव्यक्त होना।
➢ मूलप्रकृति से उत्पन्न होते हैं- महद् आदि कार्य, महद् आदि कार्यों को 'व्यक्त' कहते हैं।
➢ प्रकृति है- त्रिगुणात्मिका, प्रधान, प्रसवधर्मिणी, अव्यक्त, जड तथा अचेतन।

अव्यक्त तथा व्यक्त पदार्थों का सादृश्य एवं वैषम्य का निरूपण

व्यक्त (महत् आदि कार्य)	अव्यक्त (प्रकृति)
हेतुमान्	अहेतुमान्
अनित्य	नित्य
अव्यापी	व्यापी
सक्रिय	निष्क्रिय
अनेक	एक
मूलकारण पर आश्रित	अनाश्रित
लिङ्गसहित	लिङ्गरहित
अवयवयुक्त	निरवयव
परतन्त्र	स्वतन्त्र

हेतुमदनित्यमव्यापि सक्रियमनेकमाश्रितं लिङ्गम्।
सावयवं परतन्त्रं व्यक्तं विपरीतमव्यक्तम्।
(का0-10)
➢ महत् तत्त्व से लेकर आकाश आदि स्थूलपर्यन्त सभी पदार्थों को व्यक्त कहा जाता है।
ये प्रत्यक्ष प्रमाण के विषय होते हैं।
➢ हेतुमत्- हेतु अर्थात् कारण जिसका होता है उसे हेतुमत् कहते हैं।
➢ अव्यक्त अर्थात् प्रकृति नित्य है क्योंकि वह किसी का कार्य नहीं होती है।
➢ सांख्यमत में अनित्य का अर्थ है- सूक्ष्म रूप से अपने कारण में रहने वाला।
➢ सांख्य में पुरुषबहुत्व के सिद्धान्त को मान्यता प्रदान की गई है।
➢ सारे व्यक्त पदार्थ अपने-अपने कारण पर आश्रित होते हैं।

व्यक्त तथा अव्यक्त का साम्य एवं पुरुष से उसके वैषम्य का निरूपण

त्रिगुणमविवेकि विषयः सामान्यमचेतनं प्रसवधर्मि।
व्यक्तं तथा प्रधानं, तद्विपरीतस्तथा च पुमान्॥ (का.-11)

व्यक्त तथा अव्यक्त	पुरुष
त्रिगुणात्मक	गुण से रहित (त्रिगुणातीत)
अविवेकी	विवेकी
विषयी	अविषयी
सामान्य	असामान्य
अचेतन	चेतन
प्रसवधर्मी	अप्रसवधर्मी

➢ **'व्यक्तं तथा प्रधानं, तद्विपरीतस्तथा च पुमान्'** (का0-11) इस कारिका में व्यक्त तथा अव्यक्त के साधर्म्य एवं पुरुष का उससे वैधर्म्य का निरूपण किया गया है।

सांख्य के त्रिविध गुण

➢ सांख्यानुसार तीन गुण हैं- सत्त्व, रजस् तथा तमस्। (का0-13)
➢ सत्त्व, रजस्, तमस् का स्वरूप है- सुख, दुःख, मोह।
प्रीत्यप्रीति-विषादात्मकाः। (का0-12) प्रीति का अर्थ - **सुख**, अप्रीति का अर्थ है- **दुःख** तथा विषाद का अर्थ है- **मोह**।
➢ तीनों गुणों के क्रमशः कार्य हैं- प्रकाश, प्रवर्तन, नियमन।
प्रकाश- प्रवृत्तिनियमार्थाः। (का0-12) जिसका अर्थ है- प्रकाश करना, प्रवृत्त करना, नियमन करना।
➢ तीनों गुणों के स्वभाव हैं- एक दूसरे को दबाना, आश्रय बनना, उद्भव या आविर्भाव।
''अन्योन्याभिभवाश्रयजननमिथुनवृत्तयश्च'' (का0-12)

➢ सत्त्व, रजस् तथा तमस् क्रमशः शान्त, घोर और मोह वृत्ति वाले हैं।

गुण	स्वरूप	कार्य/प्रयोजन	स्वभाव
1.सत्त्वगुण	प्रीति (सुखात्मक)	प्रकाश करना	एक दूसरे को दबाना
2.रजोगुण	अप्रीति (दुःखात्मक)	प्रवर्तन करना	आश्रय बनना
3.तमोगुण	विषाद (मोहात्मक)	नियमन करना	उद्भव या आविर्भाव करना

सत्त्व, रज, तम तीनों गुणों की विशेषताएँ

➢ **'सत्त्वं लघु प्रकाशकम्'** (का0-13) सत्त्व गुण हल्का होता है अतः प्रकाशक होता है।

➢ **'उपष्टम्भकं चलं च रजः'** (का0-13) रजोगुण चञ्चल होता है अतः उत्तेजक होता है।

➢ **'गुरु वरणकमेव तमः'** तमो गुण भारी होता है अतएव अवरोधक होता है।

सत्त्व गुण	–हल्का –	प्रकाशक
रजो गुण	–चञ्चल (प्रवृत्तिशील)–	उत्तेजक
तमो गुण	–भारी –	अवरोधक

➢ तीनों गुण अर्थात् सत्त्व, रजस् तथा तमस् विरोधी स्वभाव वाले होते हुए भी **'प्रदीपवच्चार्थतो वृत्तिः'** (का0-13) अर्थात् दीपक के समान व्यवहार करने वाले हैं।

➢ सत्त्वगुण के प्रभावी होने पर व्यक्ति स्वयं को हल्का, सुखी एवं आनन्दित अनुभव करता है।

➢ रजोगुण के प्रभावी होने पर व्यक्ति में चंचलता एवं गतिशीलता की अनुभूति होती है।

➢ तमोगुण के प्रभावी होने पर किसी भी काम को करने की इच्छा न होना, शरीर में आलस्य होना, सोने आदि में प्रवृत्त होना, होता है।

➢ सत्त्वगुण एवं तमोगुण दोनों गुण निष्क्रिय होते हैं रजोगुण ही उन्हें क्रियाशील बनाता है।

➢ सत्त्व आदि तीनों गुणों के कारण अविवेकित्व इत्यादि धर्मों की सत्ता सिद्ध होती है।

➢ कार्य का कारण गुणों के स्वभाव से युक्त होने से मूलप्रकृति (अव्यक्त) की सत्ता सिद्ध होती है।

पुरुष की सत्ता सिद्धि

संघातपरार्थत्वात् त्रिगुणादिविपर्ययादधिष्ठानात्
पुरुषोऽस्ति भोक्तृभावात् कैवल्यार्थं प्रवृत्तेश्च॥ ॥17॥

1. संघातपरार्थत्वात् (संघातों का दूसरों के लिए होना)
2. त्रिगुणादिविपर्ययात् (त्रिगुणादि से विपरीत स्वभाव वाला होने से)
3. अधिष्ठानात् (त्रिगुण समूह का अधिष्ठाता होने से)
4. भोक्तृभावात् (भोग्य एवं भोक्ताभाव से)
5. कैवल्यार्थं प्रवृत्तेः (मोक्ष के लिए प्रवृत्ति देखे जाने से)

➢ सांख्य का पुरुष सभी शरीरों का अधिष्ठाता है।

➢ सांख्य का पुरुष त्रिगुणरहित होने से सबसे भिन्न है।

➢ पुरुषबहुत्व का सिद्धान्त सांख्य का सिद्धान्त है।

➢ पुरुषबहुत्व की सत्ता सिद्ध करने वाले तीन हेतु हैं-
(i) जननमरणकरणानाम् (ii) अयुगपत्प्रवृत्तेः (iii) त्रैगुण्यविपर्ययात्

➢ जन्म, मरण तथा इन्द्रियों की व्यवस्था होने से और एक साथ प्रवृत्ति का अभाव होने से तथा तीनों गुणों के भेद के कारण पुरुष बहुत्व की सत्ता सिद्ध होती है।

➢ जननमरणकरणानाम् में करण से अभिप्राय तीन अन्तःकरण (मन, बुद्धि, अहंकार) तथा पाँच ज्ञानेन्द्रियों एवं पाँच कर्मेन्द्रियों से है।

➢ पुरुष के चेतन, निर्गुण, विशेष, अविषय, विवेकी एवं अप्रसवधर्मी होने के कारण साक्षित्व, कैवल्य, माध्यस्थ्य, द्रष्टृत्व एवं अकर्तृत्व आदि धर्मों की सिद्धि भी होती हैं। (का0-19)

पुरुष के धर्म
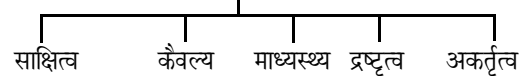
➢ पुरुष के संयोग से जड़ प्रकृति चेतन के समान प्रतीत होती है।

➢ पुरुष गुणरहित एवं अपरिणामी होने के कारण वस्तुतः कर्ता नहीं होता बल्कि उसमें कर्तापन की प्रतीति भ्रान्तिमात्र है।

➢ सांख्य की सृष्टि 'पङ्ग्वन्धवत्' अर्थात् लगड़ा (पुरुष) और अन्धा (प्रकृति) के समान है। (का0-21)

➢ पुरुष के द्वारा प्रधान (प्रकृति) का दर्शन तथा प्रकृति (प्रधान) के द्वारा कैवल्य की प्राप्ति के लिए पुरुष और प्रकृति का संयोग अन्धे और लगड़े के समान होता है जिससे सृष्टिप्रक्रिया सम्पन्न होती है।

➢ पुरुष और प्रकृति के संयोग का प्रमुख रूप से दो प्रयोजन है-
1. प्रकृति का दर्शन 2. पुरुष को कैवल्य की प्राप्ति।

प्रकृति एवं पुरुष के संयोग का प्रयोजन

प्रदर्शन (प्रकृति के लिए) — **कैवल्यार्थ** (पुरुष के लिए)
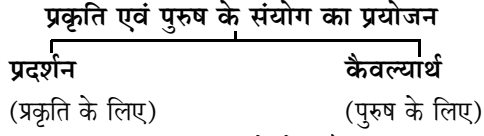
- महत् की उत्पत्ति मूलप्रकृति से होती है।
- अहंकार की उत्पत्ति महत् से होती है।
- सोलह पदार्थों का समूह अर्थात् पञ्चज्ञानेन्द्रियाँ, पञ्चकर्मेन्द्रियाँ, पञ्चतन्मात्राएँ तथा मन की उत्पत्ति अहंकार से होती है।
- पञ्चमहाभूतों की उत्पत्ति पाँच तन्मात्राओं से होती है।
- महत् को बुद्धि, प्रत्यय, महान् एवं उपलब्धि आदि नामों से भी जाना जाता है।
- सत्त्वगुण प्रधान अहंकार से पञ्चज्ञानेन्द्रियाँ, पञ्चकर्मेन्द्रियाँ, तथा मन की उत्पत्ति होती है।
- तमोगुण प्रधान अहंकार में पञ्च तन्मात्राओं की उत्पत्ति होती है।

प्रकृतेर्महान् ततोऽहङ्कारः तस्मात् गणश्च षोडशकः।
तस्मादपि षोडशकात् पञ्चभ्यः पञ्चभूतानि॥ (का0- 22)

वेदान्तसार
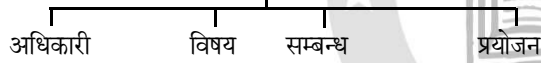
- वेदान्तशास्त्र में चार अनुबन्ध हैं - अधिकारी, विषय, सम्बन्ध और प्रयोजन।

'तत्रानुबन्धो नामाधिकारिविषयसम्बन्धप्रयोजनानि '

- **वेदान्त का प्रथम अनुबन्ध अधिकारी**- अधिकारी तो वह जिज्ञासु प्रमाता है, जिसने वेद- वेदाङ्गों का विधिपूर्वक अध्ययन करके समस्त वेदान्त के अर्थ को सामान्यरूप से जान लिया है तथा इस जन्म में अथवा अन्य जन्मों में कामनाओं को पूर्ण करने वाले काम्यकर्म तथा शास्त्रों द्वारा निषेध किये गये कर्मो को छोड़ने के साथ-साथ नित्य, नैमित्तिक, प्रायश्चित्त और उपासना कर्मो के अनुष्ठान से सम्पूर्णपापों से मुक्त, अत्यधिक निर्मल अन्तःकरण वाला जो साधन चतुष्टयसम्पन्न है, ऐसा प्रमाता पुरुष (इस ब्रह्मविद्या) वेदान्त का अधिकारी है।
- **अधिकारी तु विधिवदधीतवेदवेदाङ्गत्वेनापाततोऽ–धिगताखिलवेदार्थोऽस्मिन् जन्मनि जन्मान्तरे वा काम्यनिषिद्धवर्जनपुरस्सरं नित्यनैमित्तिकप्रायश्चित्तो-पासनानुष्ठानेन निर्गतनिखिलकल्मषतया नितान्तनिर्मलस्वान्तः साधनचतुष्टयसम्पन्नः प्रमाता।**

अधिकारी के निरूपणान्तर्गत ही काम्यादि कर्मो का वर्णन किया गया है-

- **1.** स्वर्ग आदि कामनाओं के साधनस्वरूप ज्योतिष्टोमयाग आदि काम्यकर्म हैं –
  'काम्यानि स्वर्गादीष्टसाधनानि ज्योतिष्टोमादीनि।'
- **2.** नरकादि अनिष्टस्थानों की प्राप्ति के साधनभूत ब्राह्मणहत्या, गोहत्या आदि निषिद्धकर्म हैं– **'निषिद्धानि नरकाद्यनिष्टसाधनानि ब्राह्मणहननादीनि।'**

3. जिसके न करने से भविष्य में दुःख की सम्भावना हो, ऐसे सन्ध्यावन्दन आदि नित्यकर्म हैं– **'नित्यान्यकरणे प्रत्यवायसाधनानि सन्ध्यावन्दनादीनि'**

4. पुत्र जन्मादि के अवसर पर किये जाने वाले जातेष्टि यज्ञ आदि नैमित्तिक कर्म हैं **'नैमित्तिकानि पुत्रजन्माद्यनुबन्धीनि जातेष्ट्यादीनि'–**

5. पाप के क्षय करने के लिये साधन बनने वाले चान्द्रायण आदि व्रत प्रायश्चित्त कर्म हैं **–'प्रायश्चित्तानि पापक्षयसाधनानि चान्द्रायणादीनि।'**

6. सगुणब्रह्म को विषय बनाने वाला मानसिक व्यापार ध्यान ही जिनका स्वरूप है उन शाण्डिल्यविद्या आदि को उपासनाकर्म कहते हैं।

'उपासनानि सगुणब्रह्मविषयमानसव्यापाररूपाणि शाण्डिल्यविद्यादीनि।'

- नित्य नैमित्तिक और प्रायश्चित्त कर्मो का परम प्रयोजन- बुद्धि की शुद्धि एवं उपासना रूप कर्मो का मुख्य प्रयोजन -चित्त की एकाग्रता है–
- नित्य नैमित्तिक प्रायश्चित्त कर्मों का गौण प्रयोजन- पितृलोक प्राप्ति तथा उपासना का गौण प्रयोजन - सत्यलोक (देवलोक) की प्राप्ति।
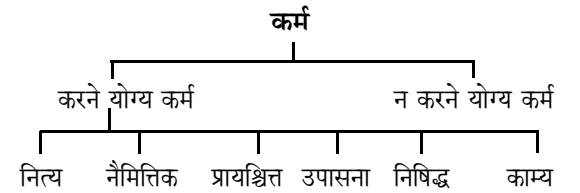
(सन्ध्यावन्दनादि) (जातेष्टि आदि) (चान्द्रायणव्रतादि) (सगुणोपासना)

गोहत्यादि ज्योतिष्टोमादि

➢ **साधनचतुष्टय -** (i) नित्य एवं अनित्य वस्तुविवेक (ii) इहलौकिक एवं पारलौकिक फल को भोगने के प्रति वैराग्य (iii) शम, दम, उपरति, तितिक्षा, समाधान और श्रद्धा आदि छः प्रकार की सम्पत्ति **तथा** (iv) मोक्षप्राप्ति के प्रति इच्छा- ये चार साधन हैं।

साधनानिनित्यानित्यवस्तुविवेकेहामुत्रार्थफलभोग-विरागशमादिषट्कसम्पत्तिमुमुक्षुत्वानि

➢ इनमें एकमात्र ब्रह्म ही नित्य वस्तु है उसके अतिरिक्त अन्य सभी कुछ अनित्य है इसप्रकार समझना ही **नित्य-अनित्य-वस्तुविवेक** है।

➢ इस लोक की माला, चन्दन, सुन्दरी आदि भोग विलास विषयक सामग्री कर्म द्वारा उत्पन्न होने के कारण अनित्य के समान है। इसीप्रकार पारलौकिक स्वर्ग आदि विषयभोगों के कर्मजन्य होने से अनित्य होने के कारण उनके प्रति भी नितान्त वैराग्यभाव ही **'इहामुत्रार्थफलभोग विराग'** है।

➢ **ऐहिकानां स्रक्चन्दनवनितादिविषयभोगानां कर्मजन्यतयाऽनित्यत्ववदामुष्मिकाणामप्यमृतादि-विषयभोगानामनित्यतया तेभ्यो नितरां विरतिरिहा मुत्रार्थफलभोगविरागः साधनचतुष्टय**

1. **नित्यानित्यवस्तुविवेक-** नित्य अनित्य वस्तु का विवेक।
2. **इहामुत्रार्थफलभोगविराग-** इस लोक एवं परलोक विषयक भोगने के प्रति वैराग्यभाव।
3. **शमादिषट्कसम्पत्ति-** शम, दम, उपरति, तितिक्षा, समाधान और श्रद्धा इन छः प्रकार की सम्पत्ति से सम्पन्न होना
4. **मुमुक्षुत्व-** मोक्ष की प्रबल इच्छा का होना।

शमादिषट्कसम्पत्ति

'शमादयस्तु शमदमोपरतितितिक्षासमाधानश्रद्धाख्याः'।

➢ **1. शम-** श्रवण, मनन और निदिध्यासन को छोड़कर उनसे भिन्न विषयों से मन को हटा लेने को शम कहते हैं।

'शमस्तावच्छ्रवणादिव्यतिरिक्तविषयेभ्यो मनसो निग्रहः'।

➢ **2. दम-** श्रोत्रादि बाह्य इन्द्रियों को श्रवणादि के अतिरिक्त विषयों से हटाने को दम कहते हैं। **'दमो बाह्येन्द्रियाणां तद्व्यतिरिक्तविषयेभ्यो निवर्तनम्'।**

➢ **3. उपरति-** अन्तरिन्द्रिय मन और श्रोत्रादि बाह्य इन्द्रियों को अपने-अपने विषय से निवृत्त कर लेने पर श्रवण आदि के अतिरिक्त विषयों से इनका उपरत हो जाना अर्थात् फिर से विषयों की ओर प्रवृत्त होने का उत्साह न रह जाने से स्थिर हो जाना उपरति है।

'निवर्तितानामेतेषां तद्व्यातिरिक्तविषयेभ्य उपरमणमुपरतिः अथवा विहितानां कर्मणां विधिना परित्यागः'।

➢ अथवा सन्ध्यावन्दन अग्निहोत्र आदि अवश्य करणीय वेदविहित कर्मों का श्रुति और स्मृति में बताई गई विधि से परित्याग कर देना अर्थात् संन्यास ग्रहण कर लेना ही उपरति है।

4. तितिक्षा- शीत-उष्ण, मान -अपमान, लाभ -हानि, जय- पराजय, निन्दा- स्तुति, हर्ष-शोक आदि द्वन्द्वों को सहन करना तितिक्षा है।

'तितिक्षा शीतोष्णादिद्वन्द्वसहिष्णुता'।

➢ **5. समाधान-** निगृहीत चित्त का श्रवणादि में तथा श्रवणादि के अनुकूल गुरुशुश्रूषा, वेदान्तग्रन्थों का सम्पादन और उनकी रक्षा करना आदि विषयों में स्थिर हो जाना समाधान है। **'निगृहीतस्य मनसः श्रवणादौ तदनुगुणविषये च समाधिः समाधानम्' ।**

➢ **6. श्रद्धा -** गुरू द्वारा उपदिष्ट वेदान्त के वाक्यों में विश्वास श्रद्धा है।

गुरूपदिष्टवेदान्तवाक्येषु विश्वासः श्रद्धा।

➢ **मुमुक्षुत्व -** मोक्ष की इच्छा ही मुमुक्षुत्व है। **'मुमुक्षुत्वं मोक्षेच्छा'**।

' एवम्भूतः प्रमाताधिकारी'। इसप्रकार की विशेषताओं से युक्त हुआ प्रमाता अधिकारी है।

➢ **वेदान्त का द्वितीय अनुबन्ध- विषय** वेदान्त का प्रतिपाद्य विषय -जीव और ब्रह्म की एकता है। **विषयो जीवब्रह्मैक्यं शुद्धचैतन्यं प्रमेयं तत्रैव वेदान्तानां तात्पर्यात्।**

➢ शुद्धचैतन्य प्रमा का विषय है क्योंकि समस्त वेदान्तवाक्यों का अभिप्राय उसी शुद्धचैतन्य के प्रतिपादन में निहित है।

➢ **वेदान्त का तृतीय अनुबन्ध-सम्बन्ध**

ज्ञान के विषय उन जीव और ब्रह्म का ऐक्य एवं उनका प्रतिपादन करने वाले उपनिषद्रूप प्रमाणवाक्यों का परस्पर बोध्य-बोधकभाव सम्बन्ध है।

'सम्बन्धस्तु तदैक्यप्रमेयस्य तत्प्रतिपादकोप–निषत्प्रमाणस्य च बोध्यबोधकभावः।'

➢ **वेदान्त का चतुर्थ अनुबन्ध-प्रयोजन** चतुर्थ अनुबन्ध उस जीव एवं ब्रह्म के ऐक्यविषयक ज्ञान के साथ अज्ञान की निवृत्तिपूर्वक अपने स्वरूप का परिचय होने से चरम आनन्द की प्राप्ति ही मुख्य प्रयोजन है।

*** प्रयोजनं तु तदैक्यप्रमेयगताज्ञाननिवृत्तिः स्वस्वरूपानन्दावाप्तिश्च।**

* ''तरति शोकमात्मवित्'' इत्यादि श्रुतेः ''ब्रह्मविद् बह्मैव भवति '' इत्यादि श्रुतेश्च। ''आत्मज्ञानी शोक से तर जाता है'' इत्यादि तथा ''ब्रह्मज्ञानी ब्रह्म ही हो जाता है'' इत्यादि श्रुति का कथन प्रमाण है।

अज्ञान की शक्ति

➢ अज्ञान की दो शक्तियाँ हैं - आवरण और विक्षेप।
'अस्याज्ञानस्यावरणविक्षेपनामकमस्ति शक्तिद्वयम्'।

* प्रमाता के सच्चिदानन्द स्वरूप को जो शक्ति ढक देती है, वह आवरण शक्ति है।

* सम्पूर्ण नामरूपात्मक जगत् को उत्पन्न करने वाली शक्ति है - विक्षेप शक्ति।

* तमोगुण प्रधान होती है- विक्षेप शक्ति।

➢ वेदान्त की दृष्टि में आत्मा का बन्धन अथवा मोक्ष सम्भव नहीं है यह तो केवल आभासमात्र है। रस्सी में सर्प के समान अथवा सीप में चाँदी के समान।

हस्तामलक नामक ग्रन्थ में आयी हुई कारिका -

''घनच्छन्नदृष्टिर्घनच्छन्नमर्कं यथा मन्यते निष्प्रभं चातिमूढः।
तथा बद्धवद्भाति यो मूढदृष्टेः स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा॥''

जिस प्रकार मेघ से ढका हुआ दृष्टि वाला मूर्ख व्यक्ति, बादल से ढके हुए सूर्य को प्रकाशरहित मानता है उसीप्रकार मूढ सामान्य दृष्टि वालों को आत्मा (जन्म - मरणादि बन्धनों से) बँधा हुआ सा प्रतीत होता है।

अज्ञान माया की शक्ति

आवरण	विक्षेप
(सत्य को आवृत करना)	(सत् में असत् की उद्भावना)

आवरण एवं विक्षेप नामक दो महत्त्वपूर्ण शक्तियों से युक्त अज्ञान से उपहित चैतन्य सूक्ष्मशरीर से लेकर ब्रह्माण्डपर्यन्त दृश्यमान सम्पूर्ण जगत् प्रपञ्च का उपादान और निमित्त दोनों है।

➢ **शक्तिद्वयवदज्ञानोपहितं चैतन्यं स्वप्रधानतया निमित्तं स्वोपाधिप्रधानतयोपादानं च भवति।यथा- लूता तन्तुकार्यं प्रति स्वप्राधानतया निमित्तं स्वशरीरप्रधानतयोपादानं च भवति।**

➢ जिसप्रकार मकड़ी अपने जाला निर्माणरूप कार्य के प्रति अपने शरीर के चैतन्य की प्रधानता के कारण निमित्तकारण है तथा अपने शरीर से निकलने वाले लारवे की प्रधानता की दृष्टि से उपादानकारण भी है।

➢ उसीप्रकार अज्ञान से उपहित आत्मा अपने चैतन्य की प्रधानता होने से दृश्यमान सांसारिक प्रपञ्च का निमित्तकारण तथा अज्ञान की प्रधानता के समय उपादान कारण होता है।

➢ अज्ञानोपहित चैतन्य के लिए वेदान्त में ईश्वर, चैतन्य एवं आत्मा आदि अनेक शब्दों का प्रयोग मिलता है।

➢ लूता मकड़ी का नाम है। मकड़ी की विशेषता यह है कि अपने द्वारा निर्मित जाले में अन्य किसी बाह्य उपादान का सहयोग नहीं लेती है।

तत्त्वमसि महावाक्यार्थ

➢ अज्ञान आदि व्यष्टि इसकी उपाधि अल्पज्ञत्व आदि विशेषताओं से युक्त चैतन्य (अर्थात् जीव) इसकी उपाधि से रहित शुद्धचैतन्य ये तीनों (एक साथ) तप्तलोहपिण्ड के समान अभिन्न प्रतीत होने के कारण 'त्वम्' पद के वाच्यार्थ होते हैं।

➢ इस उपाधि से युक्त आधारभूत अनुपहित आनन्दरूप तुरीयचैतन्य 'त्वम्'पद का लक्ष्यार्थ होता है।

➢ अनुपहित शुद्धचैतन्य 'तत्' एवं 'त्वम्' इन दोनों पदों का लक्ष्यार्थ है इसीलिए 'तत्' एवं 'त्वम्' ये दोनों पद यहाँ लक्षण है तथा शुद्धचैतन्य लक्ष्य है।

➢ 'तत्त्वमसि' (वह तू है) इत्यादि वाक्य तीन सम्बन्धों से अखण्ड अर्थ का बोध कराने वाला होता है।

➢ समानाधिकरण्य, विशेषणविशेष्यभाव एवं लक्ष्यलक्षणभाव ये तीन सम्बन्ध होते हैं।

➢ **चार महावाक्यों** की विशेषचर्चा वेदान्तदर्शन में की गई है-

महावाक्य	**उपनिषद्**	**वेद**
1. प्रज्ञानं ब्रह्म	ऐतरेयोपनिषद् -5	ऋग्वेद
2. तत्त्वमसि	छान्दोग्योपनिषद् -6.8.	सामवेद
3. अहं ब्रह्मास्मि	बृहदारण्यकोपनिषद् 1.4.10	यजुर्वेद
4. अयमात्मा ब्रह्म	माण्डूक्योपनिषद् -2	अथर्ववेद

➢ महावाक्यों का वर्ण्यविषय ब्रह्म के स्वरूप एवं अद्वैत का प्रतिपादन करना है।

➢ 'तत्त्वमसि' महावाक्य वस्तुतः उपदेशवाक्य है। जो एक गुरु द्वारा अधिकारी प्रमाता को उपदेश रूप में दिया जाता है 'तत्त्वमसि' - यह ब्रह्म और जीव की एकता बताता है।

➢ यहाँ लक्ष्यलक्षणसम्बन्ध को **'भागलक्षणा'** भी कहा गया है।

सम्बन्धत्रयम्

पदों में	पदों के अर्थों में	आन्तरिक गुणों के कारण
समानाधिकरण्य	विशेषण विशेष्यभाव	लक्ष्यलक्षणभाव

'अहं ब्रह्मास्मि'- महावाक्य

- 'अहं ब्रह्मास्मि' **अनुभववाक्य** है। 'तत्त्वमसि' **उपदेशवाक्य** है।
- 'अहं ब्रह्मास्मि' में ब्रह्माकाराकारिचित्तवृत्ति तथा तद्गत चिदाभास दोनों की आवश्यकता होती है 'ब्रह्मास्मीत्यखण्डाकाराकारिता चित्तवृत्तिरुदेति'।
- वेदान्त की दृष्टि में अधिकारी को गुरु अध्यारोप एवं अपवादन्याय से 'तत्त्वमसि' महावाक्य के तत् एवं त्वम् पदों के अर्थों को भली प्रकार समझाकर उसके बाद अखण्ड अर्थ का बोध कराता है। जिसके परिणामस्वरूप उसके हृदय में अखण्ड आकार से आकारित इसप्रकार की चित्तवृत्ति का उदय होता है कि मैं ही नित्य, शुद्ध,बुद्ध, मुक्त, सत्यस्वभाव, परमानन्द स्वरूप, अनन्त एवम् अद्वैतब्रह्म हूँ।
- जीव और ब्रह्म का यह अखण्डार्थवाक्य का बोध कराता है।

लक्षणा

जहत्	अजहत्	जहदजहल्लक्षणा
(गंगायां घोषः)	(शोणो धावति)	(तत्त्वमसि)

1. जहद्लक्षणा 2. अजहल्लक्षणा 3.जहदजहल्लक्षणा

1. **जहद्लक्षणा-** इसे लक्षणलक्षणा भी कहते हैं। जो अपने मूल अर्थ को त्याग दे और दूसरा अर्थ ग्रहण करे।

2. **अजहल्लक्षणा-** जो अपने अर्थ को न छोड़े वह उपादान लक्षणा या अजहल्लक्षणा होती है।

3. **जहदजहल्लक्षणा-** जो अपने मूल अर्थ को त्याग दें और एक अंश का बोध कराये वह जहदजहल्लक्षणा है। इसे **भागलक्षणा** भी कहते हैं।

- तत्त्वमसि वाक्य का बोध जहदजहल्लक्षणा या भागलक्षणा से होता है।

(तर्कभाषा) न्याय/वैशेषिक दर्शन

प्रमाण – न्यायदर्शन में तर्कभाषा प्रमाण चार प्रकार के होते हैं- **'प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दाः प्रमाणानि'**।

प्रत्यक्ष प्रमाण- ''साक्षात्कारिप्रमाकरणं प्रत्यक्षम्''
साक्षात्कारिणी प्रमा के करण को प्रत्यक्ष प्रमाण कहते हैं।

- साक्षात्कारिणी प्रमा दो प्रकार की होती है-
  (i) सविकल्पक (ii) निर्विकल्पक
- साक्षात्कारिणी प्रमा का करण तीन प्रकार का होता है-

(i) कभी इन्द्रिय (ii) कभी इन्द्रिय और अर्थ का सन्निकर्ष
(iii) कभी ज्ञान

षोढा सन्निकर्ष

सन्निकर्ष	इन्द्रिय	विषय
संयोग सन्निकर्ष	चक्षु	घट
संयुक्त समवाय सन्निकर्ष	चक्षु	घटरूप
संयुक्तसमवेत समवाय सन्निकर्ष	चक्षु	घटरूपत्व जाति
समवाय सन्निकर्ष	श्रोत्र	शब्द
समवेत समवाय सन्निकर्ष	श्रोत्र	शब्दत्व
विशेषण- विशेष्यभाव सन्निकर्ष	श्रोत्र	भूतले घटाभाव

अनुमान प्रमाण-'लिङ्गपरामर्शोऽनुमानम्'
लिङ्ग परामर्श को ही अनुमान कहते हैं।

- जिससे अनुमिति की जाती है उसे अनुमान कहते हैं। लिङ्ग परामर्श से अनुमिति की जाती है अतः लिङ्गपरामर्श अनुमान है।

लिङ्ग परामर्श- धूमादि का ज्ञान। अग्नि का ज्ञान अनुमिति है और धूमादि का ज्ञान उस अनुमिति का कारण है।

लिङ्ग- 'व्याप्तिबलेनार्थगमकं लिङ्गम्'
व्याप्ति के आधार पर (बल पर) अर्थ का जो बोधक होता है, उसे लिङ्ग कहते हैं। जैसे - 'धूम' अग्नि का लिङ्ग है।

- **व्याप्तिः- साहचर्यनियमो व्याप्तिः'** साहचर्य (साथ-साथ रहना) नियम को व्याप्ति कहते हैं। जैसे ''यत्र यत्र धूमः,तत्र तत्र वह्निः'' जहाँ-जहाँ धुआँ है, वहाँ-वहाँ अग्नि है।

परामर्श- 'तस्य तृतीयं ज्ञानं परामर्शः'
उसके (लिङ्ग) के तृतीय ज्ञान को परामर्श कहते हैं।

- **अनुमान प्रमाण के प्रकार- 'तच्चानुमानं द्विविधम् स्वार्थं परार्थं चेति'** वह अनुमान दो प्रकार का है- (i) स्वार्थानुमान (ii) परार्थानुमान

(i) स्वार्थानुमान- '' स्वार्थं स्वप्रतिपत्तिहेतुः '' अपने ज्ञान (प्रतिपत्ति) का निमित्त स्वार्थानुमान है।
जैसे- कोई व्यक्ति स्वयं ही पाकशाला में धूम और अग्नि को साथ देखकर उनके साहचर्य का निश्चय करके पर्वत के समीप जाकर धूम रेखा को देखता है तो उसका संस्कार उद्बुद्ध हो जाता है और वह 'जहाँ धूम होता है वहाँ अग्नि होती है' इस व्याप्ति का स्मरण करता है तदन्तर यहाँ भी धूम है यह परामर्श करता है उस (लिङ्गपरामर्श) से 'यहाँ पर्वत में भी अग्नि है' इसप्रकार स्वयं ही समझ लेता है। यही स्वार्थानुमान है।

(ii) परार्थानुमान -
''यत्तु कश्चित् स्वयं धूमादग्निमनुमाय परं बोधयितुं पञ्चावयवमनुमानवाक्यं प्रयुङ्क्ते तत् परार्थानुमानम्''

जब कोई व्यक्ति स्वयं धूम से अग्नि का अनुमान करके दूसरे को उसका बोध कराने के लिए पाँच अवयव वाले अनुमान वाक्य का प्रयोग करता है, वह परार्थानुमान है।

परार्थानुमान के पाँच अवयव हैं-

1. प्रतिज्ञा- पर्वतोऽग्निमान्

2. हेतु- धूम वत्त्वात्

'' तृतीयान्तं पञ्चम्यन्तं वा लिङ्गप्रतिपादकं वचनं हेतुः'' लिङ्ग को बताने वाला तृतीयान्त अथवा पञ्चम्यन्त वाक्य हेतु है।

- हेतु तीन प्रकार का है-1. अन्वयव्यतिरेकी, 2. केवलान्वयी, 3.केवल व्यतिरेकी
- अन्वय और व्यतिरेक व्याप्ति से युक्त हेतु अन्वयव्यतिरेकी है। **''स चान्वयव्यातिरेकी, अन्वयेन व्यतिरेकेण च व्याप्तिमत्वात्''**
- जहाँ-जहाँ धूमवत्व होता है, वहाँ-वहाँ अग्निमत्व होता है- जैसे महानस में यह अन्वयव्याप्ति है।**यत्र-यत्र धूमवत्वं तत्राग्निमत्वं यथा महानसे इत्यन्वयव्याप्तिः'**
- जहाँ अग्नि नहीं होती वहाँ धुँआ भी नहीं होता जैसे- जलाशय में। यह व्यतिरेक व्याप्ति है। **'यत्राग्निर्नास्ति तत्र धूमोऽपि नास्ति यथा - महाह्रदे'**
- केवल व्यतिरेक व्याप्ति से युक्त हेतु केवल व्यतिरेकी कहलाता है। यथा- **'जीवच्छरीरं सात्मकं प्राणादिमत्वात्'** जीवित शरीर सात्मक है क्योंकि वह प्राण से युक्त है।
- केवल अन्वयव्याप्ति से युक्त हेतु केवलान्वयी कहलाता है। यथा- **शब्दोऽभिधेयः प्रमेयत्वात्।** शब्द अभिधेय है प्रमेय होने से
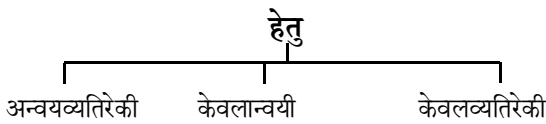
3. उदाहरण- यो यो धूमवान् स सोऽग्निमान्, यथा- महानसः।

4. उपनय- तथा चायम्।

5. निगमन- तस्मात् तथा।

उपमान प्रमाण- ''अतिदेशवाक्यार्थस्मरणसहकृतं गोसादृश्य विशिष्टपिण्डज्ञानमुपमानम्''।

अतिदेश वाक्य (जैसी गाय वैसी नीलगाय) के अर्थ का स्मरण करने के साथ 'गौ की समानता से युक्त पिण्ड (आकृति)का ज्ञान ही 'उपमान प्रमाण' है।

जैसे- **'यथा गौस्तथा गवयः'** जैसी गाय वैसे ही नीलगाय

उपमिति- संज्ञासंज्ञिसम्बन्धप्रतीतिरुपमितिः' अर्थात् सञ्ज्ञा और सञ्ज्ञी के सम्बन्ध की प्रतीति उपमिति है।

शब्दप्रमाण- 'आप्तवाक्यं शब्दः' आप्त का वाक्य शब्द प्रमाण है।

आप्त- यथाभूत का अर्थ ही उपदेश करने वाला पुरुष 'आप्त' कहलाता है।

वाक्य- 'वाक्यं त्वाकांक्षायोग्यतासन्निधिमतां पदानां समूहः'

आकांक्षा, योग्यता और सन्निधि से युक्त पदसमूह वाक्य है।

आकांक्षा का अर्थ है- एक पद का दूसरे के बिना अन्वय बोध न करा सकना।

योग्यता का अर्थ है- पदार्थों के पारस्परिक सम्बन्ध में बाधा न होना

सन्निधि का अर्थ है- पदों का अविलम्ब से उच्चारण किया जाना

पद- पदं च वर्णसमूहः - वर्णों का समूह पद है। समूह का अभिप्राय है एक ज्ञान का विषय होना।

नन्वर्थापत्तिः पृथक् प्रमाणमस्ति- अर्थापत्ति को मीमांसक पृथक् प्रमाण मानते हैं किन्तु नैयायिक इसका अन्तर्भाव अनुमान प्रमाण में करते हैं।

अर्थापत्ति- 'अनुपपद्यमानार्थदर्शनात् तदुपपादकीभूतार्थान्तराकल्पना अर्थापत्तिः' अनुपपद्यमान अर्थ को जानकर उसके उपपादक अर्थ की कल्पना अर्थापत्ति है।

अभाव- 'अभाव' को भी पृथक् प्रमाण मानते हैं अभाव का ज्ञान जिस प्रमाण से होता है उसे अभाव प्रमाण कहते हैं। जैसे- 'भूतले घटो नास्ति'।

प्रामाण्यवाद

प्रामाण्य का अर्थ 'ज्ञान का सत्य होना' है और अप्रमाण्य का अर्थ 'ज्ञान का असत्य होना' है।

1. बौद्धमत	प्रामाण्यस्वतः अप्रामाण्यपरतः
2. जैनमत	प्रामाण्य और अप्रामाण्यपरतः (उत्पत्ति) प्रामाण्य और अप्रामाण्यस्वतः (ज्ञाप्ति)
3. सांख्यमत	प्रामाण्य और अप्रामाण्य स्वतः
4. मीमांसामत	प्रामाण्यस्वतः अप्रामाण्यपरतः
5. न्यायवैशेषिक मत	प्रामाण्य और अप्रामाण्य परतः

(तर्कसंग्रह)

1. प्रत्यक्षप्रमाणम् –

- **'प्रत्यक्षज्ञानकरणं प्रत्यक्षम्'** - प्रत्यक्षज्ञान का करण प्रत्यक्ष है।
- **'इन्द्रियार्थसन्निकर्षजन्यं ज्ञानं प्रत्यक्षम्'** – इन्द्रिय तथा पदार्थ के सन्निकर्ष अर्थात् संयोग से उत्पन्न होने वाला ज्ञान प्रत्यक्ष है।

➢ **'प्रतिगतम् अक्षं प्रत्यक्षम्'** – यह प्रत्यक्ष की व्युत्पत्ति है। प्रत्यक्ष प्रमाण के दो भेद हैं – (1) निर्विकल्पक (2) सविकल्पक

प्रत्यक्ष प्रमाण

निर्विकल्पक सविकल्पक

(1) **निर्विकल्पक –** 'निष्प्रकारकं ज्ञानं निर्विकल्पकम्' निष्प्रकारक ज्ञान निर्विकल्पक है। यथा – किञ्चिद् इदम् इति (यह कुछ है)

(2) **सविकल्पकम् –** 'सप्रकारकं ज्ञानं सविकल्पकम्।' सप्रकारकज्ञान सविकल्पक है।

यथा- डित्थोऽयम्, ब्राह्मणोऽयम्, श्यामोऽयम्।
(यह डित्थ है) (यह ब्राह्मण है) (यह श्याम है)

इन्द्रियार्थ सन्निकर्ष – 'प्रत्यक्षज्ञानहेतुरिन्द्रियार्थसन्निकर्षः षड्विधः' प्रत्यक्षज्ञान का हेतु इन्द्रिय एवं पदार्थ का सन्निकर्ष छः प्रकार का होता है

(i) संयोग (ii) संयुक्तसमवाय (iii) संयुक्तसमवेत समवाय
(iv) समवाय (v) समवेतसमवाय (vi) विशेषण विशेष्यभाव

(1) **संयोगसन्निकर्ष –** 'चक्षुषा घटप्रत्यक्षजनने संयोगः सन्निकर्षः' - चक्षु के द्वारा घट के प्रत्यक्ष ज्ञान में संयोग सन्निकर्ष होता है।

(2) **संयुक्तसमवायसन्निकर्ष –** 'घटरूपप्रत्यक्षजनने संयुक्तसमवायः सन्निकर्षः' घट के रूप के प्रत्यक्षज्ञान में संयुक्तसमवाय सन्निकर्ष होता है, क्योंकि चक्षु से संयुक्त घट में रूप समवाय सम्बन्ध से रहता है।

(3) **संयुक्तसमवेतसमवाय सन्निकर्ष –** 'रूपत्वसामान्यप्रत्यक्षे संयुक्तसमवेतसमवायः सन्निकर्षः' - रूपत्वजाति के प्रत्यक्ष में संयुक्तसमवेतसमवाय सन्निकर्ष होता है, क्योंकि चक्षु से संयुक्त घट में रूप समवाय सम्बन्ध से तथा रूप में रूपत्व समवाय सम्बन्ध से रहता है।

(4) **समवायसन्निकर्ष –** 'श्रोत्रेण शब्दसाक्षात्कारे समवायः सन्निकर्षः' - श्रोत्र (कर्ण) के द्वारा शब्द साक्षात्कार में समवायसन्निकर्ष होता है।

➢ कर्णविवर में विद्यमान आकाश ही श्रोत्र है।

➢ शब्द आकाश का गुण है तथा गुण एवं गुणी में समवाय सम्बन्ध होता है।

(5) **समवेतसमवायसन्निकर्ष –** 'शब्दत्वसाक्षात्कारे समवेतसमवायः सन्निकर्षः' शब्द जाति के प्रत्यक्ष में समवेतसमवायसन्निकर्ष होता है, क्योंकि शब्द में शब्दत्व समवायसम्बन्ध से रहता है।

(6) **विशेषणविशेष्यभाव सन्निकर्ष –** 'अभावप्रत्यक्षे विशेषणविशेष्यभावः सन्निकर्षः' - अभाव के प्रत्यक्ष में विशेषणविशेष्यभाव सन्निकर्ष होता है। क्योंकि 'भूतल घटाभाव वाला है' इस प्रकार के ज्ञान में चक्षु से संयुक्त भूतल में घटाभाव विशेषण है।

➢ इसप्रकार छः सन्निकर्षों से उत्पन्न ज्ञान प्रत्यक्ष है, उसका करण इन्द्रिय है, अतः इन्द्रिय ही प्रत्यक्ष प्रमाण है, यह सिद्ध होता है। **'तस्मात् इन्द्रियं प्रत्यक्षप्रमाणमिति सिद्धम्'**

षोढा सन्निकर्ष

	इन्द्रिय	पदार्थ	सन्निकर्ष
1.	चक्षु	घट	संयोग
2.	चक्षु	घटरूप	संयुक्तसमवाय
3.	चक्षु	घटरूपत्व	संयुक्तसमवेतसमवाय
4.	श्रोत्र	शब्द	समवाय
5.	श्रोत्र	शब्दत्व	समवेतसमवाय
6.	चक्षु	घटाभाव (विशेषण) भूतल (विशेष्य)	विशेषण विशेष्यभाव

अनुमानप्रमाण

➢ **अनुमान –**'अनुमितिकरणम् अनुमानम्' - अनुमिति का करण अनुमान है।

➢ **अनुमिति –** 'परामर्शजन्यं ज्ञानम् अनुमितिः' – परामर्श से उत्पन्न होने वाला ज्ञान अनुमिति है।

➢ **परामर्श –** 'व्याप्तिविशिष्टपक्षधर्मताज्ञानं परामर्शः' – व्याप्ति से विशिष्ट पक्षधर्मताज्ञान को परामर्श कहते हैं।यथा – 'वह्निव्याप्यधूमवान् अयं पर्वतः' – यह ज्ञान परामर्श है वह्निव्याप्य यह पर्वत धूमवान् है। इसी परामर्श से उत्पन्न 'पर्वतो वह्निमान्' यह ज्ञान अनुमिति है।

व्याप्ति– 'यत्र यत्र धूमः तत्र तत्र अग्निः' इति साहचर्यनियमो व्याप्तिः - 'जहाँ जहाँ धूम है वहाँ वहाँ अग्नि है' – यह साहचर्यनियम व्याप्ति है।

पक्षधर्मता– 'व्याप्यस्य पर्वतादिवृत्तित्वं पक्षधर्मता'- व्याप्य का पर्वतादि में रहना पक्षधर्मता है।

अनुमान के भेद- (1) स्वार्थानुमान (2) परार्थानुमान

1. **स्वार्थानुमान -** 'स्वार्थं स्वानुमितिहेतुः' – स्वार्थानुमान अपने अनुमिति ज्ञान का हेतु है।

➤ जैसे – कोई स्वयं ही बार-बार देखकर 'जहाँ जहाँ धुआँ है वहाँ वहाँ अग्नि है' इसप्रकार रसोईघर आदि में व्याप्ति को ग्रहण करके पर्वत के समीप जाकर उसमें अग्नि का सन्देह होने पर पर्वत में धूम को देखता हुआ 'जहाँ जहाँ धुआँ वहाँ वहाँ अग्नि' इस व्याप्ति का स्मरण करता है। तत्पश्चात् 'यह पर्वत अग्नि से व्याप्त धुएँ वाला है' यह ज्ञान उत्पन्न होता है। यही लिङ्गपरामर्श कहलाता है। इससे पर्वत वह्निमान् है, यह अनुमितिज्ञान उत्पन्न होता है। यही स्वार्थानुमान है।

➤ इसप्रकार द्विविध अनुमान में जो अनुमान अपने ज्ञान के लिए किया जाय, वह स्वार्थानुमान है – स्वस्य अर्थः प्रयोजनं यस्मात् तत् स्वार्थम्। 'स्वार्थं स्वप्रतिपत्तिहेतुः स्वानुमितिहेतुर्वा'

2. **परार्थानुमान -** 'यत्तु स्वयं धूमादग्निमनुमाय परं प्रति बोधयितुं पञ्चावयववाक्यं प्रयुज्यते तत्परार्थानुमानम्'

जो स्वयं धूम से अग्नि का अनुमान करके दूसरे को समझाने के लिए पञ्चावयव वाक्य का प्रयोग किया जाता है, वह परार्थानुमान है।

पञ्चावयव वाक्यों की प्रक्रिया

➤ प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय तथा निगमन – ये पाँच अवयव हैं।

1. **प्रतिज्ञा –** पर्वतो वह्निमान् (पर्वत वह्निमान् है)
2. **हेतु -** धूमवत्त्वात् (क्योंकि वह धूमवान् है)
3. **उदाहरण –** यो यो धूमवान् स स वह्निमान् यथा- महानसः (जो जो धूमवान् होता है, वह वह वह्निमान् होता है, जैसे – रसोईघर)
4. **उपनय –** तथा चायम् – (उसीप्रकार यह है)
5. **निगमन –** तस्मात् तथा इति (अतः इसमें भी वैसी ही अग्नि है)

➤ इसप्रकार पञ्चावयव वाक्य के द्वारा प्रतिपादित लिङ्ग से दूसरा व्यक्ति भी पर्वत पर अग्नि का अनुमान कर लेता है।

➤ स्वार्थानुमिति तथा परार्थानुमिति में लिङ्गपरामर्श ही करण है, इसलिए लिङ्गपरामर्श अनुमान है। **'तस्मात् लिङ्गपरामर्शोऽनुमानम्'**

लिङ्ग के प्रकार

लिङ्ग तीन प्रकार के हैं – (i) अन्वयव्यतिरेकी (ii) केवलान्वयी (iii) केवलव्यतिरेकी

(i) **अन्वयव्यतिरेकी –** 'अन्वयेन व्यतिरेकेण च व्याप्तिमद् अन्वयव्यतिरेकि' अन्वय एवं व्यतिरेक से व्याप्तिमान् अन्वयव्यतिरेकी होता है।

➤ यथा – वह्नौ साध्ये धूमवत्त्वम् =वह्नि के साध्य होने पर धूमवत्त्व लिङ्ग।

➤ 'यत्र धूमः तत्र अग्निः' यथा-महानसः = जहाँ धुआँ होता है, वहाँ आग होती है। जैसे – रसोईघर। यह अन्वयव्याप्ति है।

➤ यत्र वह्निर्नास्ति तत्र धूमोऽपि नास्ति, यथा-ह्रदः = जहाँ आग नहीं होती वहाँ धुआँ नहीं होता, जैसे – सरोवर। यह व्यतिरेक व्याप्ति है।

(ii) **केवलान्वयी –** 'अन्वयमात्रव्याप्तिकं केवलान्वयि' – अन्वयमात्र व्याप्ति वाला लिङ्ग केवलान्वयी है। यथा - घटोऽभिधेयः प्रमेयत्वात् पटवत् जैसे – घट अभिधेय है क्योंकि वह प्रमेय है। यथा – पट।

यहाँ प्रमेयत्व तथा अभिधेयत्व की व्यतिरेक व्याप्ति नहीं है, क्योंकि सभी कुछ प्रमेय और अभिधेय है।

(iii) **केवलव्यतिरेकी** – 'व्यतिरेकमात्रव्याप्तिकं केवलव्यतिरेकि' – व्यतिरेक मात्र व्याप्ति वाला लिङ्ग केवलव्यतिरेकी है।

➤ यथा – पृथिवीतरेभ्यो भिद्यते गन्धवत्त्वात् यदितरेभ्यो न भिद्यते न तद् गन्धवत् यथा – जलम्।

जैसे- पृथिवी इतर से भिन्न है, क्योंकि गन्धवती है, जो इतर से भिन्न नहीं है वह गन्धवती नहीं है, जैसे – जल।

➤ यह पृथिवी वैसी (गन्धरहित) नहीं है इसलिए उसके समान नहीं है यहाँ जो गन्धवान् है, वह इतर पदार्थों से भिन्न है। इसका अन्वय दृष्टान्त नहीं है क्योंकि पृथिवी मात्र ही पक्ष है।

➤ **पक्ष –** 'सन्दिग्धसाध्यवान् पक्षः'

जहाँ साध्य सन्दिग्ध रूप से पाया जाये, उसे पक्ष कहा जाता है। यथा- धूमवत्त्वे हेतौ पर्वतः। जैसे- धूमवत्त्व हेतु में पर्वत।

➤ **सपक्ष-** 'निश्चितसाध्यवान् सपक्षः।'

निश्चित साध्य वाला सपक्ष होता है। यथा- रसोईघर।

➤ **विपक्ष-** 'निश्चितसाध्याऽभाववान् विपक्षः।'

निश्चित साध्य का अभाव वाला विपक्ष होता जैसे- महासरोवर

पक्ष -	सन्दिग्धसाध्यवान्	(पर्वतः)
सपक्ष -	निश्चितसाध्यवान्	(महानसः)
विपक्ष -	निश्चितसाध्य- अभाववान्	(महाह्रदः)

हेत्वाभास

➤ **हेतोः आभासाः =** हेतु के दोष

➤ **हेतुवद् आभासन्ते इति हेत्वाभासः =** हेतु की तरह प्रतीत होना। दुष्ट हेतु या दोषयुक्त हेतु।

इसप्रकार जो हेतु के समान भासित होता है किन्तु हेतु नहीं हो, वह हेत्वाभास कहलाता है।

हेत्वाभास के पाँच प्रकार-

1.सव्यभिचार 2. विरुद्ध 3. सत्प्रतिपक्ष 4. असिद्ध 5. बाधित

'सव्यभिचारि-विरुद्ध-सत्प्रतिपक्ष-असिद्ध- बाधिताः पञ्च हेत्वाभासाः'
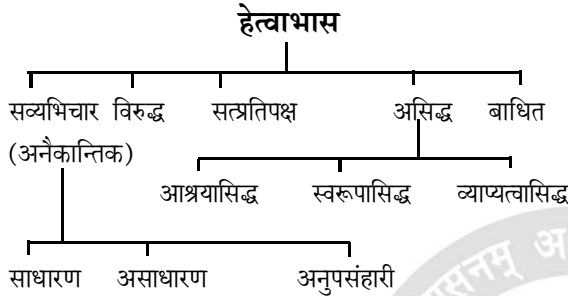
- ➢ सव्यभिचारी अनैकान्तिक है। यह तीन प्रकार का है-

(i) साधारण (ii) असाधारण (iii) अनुपसंहारी

(i) **साधारण अनैकान्तिक हेत्वाभास-** साध्य-अभाववद्वृत्तिः साधारणोऽनैकान्तिकः

- ➢ साध्य के अभाव में रहने वाला साधारण अनैकान्तिक है।

जैसे- पर्वतो वह्निमान् प्रमेयत्वात् इति।
पर्वत वह्निमान् है, क्योंकि वह प्रमेय है।
प्रमेयत्व वह्नि के अभाव वाले सरोवर में रहता है।

(ii) **असाधारण अनैकान्तिक हेत्वाभास-** 'सर्वसपक्षविपक्षव्यावृत्तः पक्षमात्रवृत्तिरसाधारणः'

* जो सपक्ष एवं विपक्ष में न रहकर केवल पक्ष में रहे, वह असाधारण है।

यथा- शब्दो नित्यः शब्दत्वात् इति।
जैसे- शब्द नित्य है, क्योंकि वह शब्द है। शब्द सारे नित्य एवं अनित्य में न रहकर केवल शब्द में रहता है

(iii) **अनुपसंहारी अनैकान्तिक हेत्वाभास-** 'अन्वयव्यतिरेकदृष्टान्तरहितोऽनुपसंहारी'

* अन्वय एवं व्यतिरेक दृष्टान्त से रहित हेत्वाभास अनुपसंहारी होता है।

यथा- सर्वम् अनित्यं प्रमेयत्वात् इति। सब अनित्य है प्रमेयत्व के कारण। यहाँ 'सर्वं' पक्ष है इसलिए दृष्टान्त नहीं है।

* तर्कभाषा में अनैकान्तिक (सव्यभिचारी) हेत्वाभास के दो ही भेद कहे गये हैं साधारण एवं असाधारण।

2. विरुद्ध हेत्वाभास-

'साध्याभावव्याप्तो हेतुर्विरुद्धः' साध्य के अभाव से व्याप्त हेतु विरुद्ध है।
यथा- शब्दो नित्यः कृतकत्वात् इति।
जैसे- शब्द नित्य है कार्य होने के कारण यहाँ कृतकत्व नित्यत्व का अभाव अनित्यत्व से व्याप्त है।

3. सत्प्रतिपक्ष हेत्वाभास-'यस्य साध्य-अभावसाधकं हेत्वन्तरं विद्यते स सत्प्रतिपक्षः'

जिस हेतु के साध्य के अभाव को सिद्ध करने वाला अन्य हेतु है, वह सत्प्रतिपक्ष है।

* यथा- शब्दो नित्यः श्रावणत्वाच्छब्दवत्।
  - ☆ शब्द नित्य है। श्रावणत्व के कारण शब्द के समान।
  - ☆ शब्दो अनित्यः कार्यत्वाद् घटवत् इति।
  - ☆ शब्द अनित्य है, कार्य होने के कारण, घट के समान।

4. असिद्ध हेत्वाभास

- ➢ असिद्ध हेत्वाभास तीन प्रकार का होता है-

(i) आश्रयासिद्ध (ii) स्वरूपासिद्ध (iii) व्याप्यत्वासिद्ध

- ➢ 'स्वयम् असिद्धः कथं परान् साधयति' अर्थात् जहाँ हेतु की पक्ष में विद्यमानता निश्चित नहीं होती वहाँ असिद्ध हेत्वाभास होता है।

(i) **आश्रयासिद्ध हेत्वाभास-** जिस हेतु का आश्रय(पक्ष) प्रमाणसिद्ध न हो, वह आश्रयासिद्ध है- **'यस्य हेतोः आश्रयो नावगम्यते स आश्रयासिद्धः'** यथा- गगनारविन्दं सुरभि अरविन्दत्वात्।
आकाशकमल सुगन्धित होता है, क्योंकि वह कमल है, सरोवर में उत्पन्न कमल की तरह। यहाँ साध्य सुरभित्व का आश्रय गगनारविन्द की सत्ता ही नहीं है।

(ii) **स्वरूपासिद्ध हेत्वाभास-** स्वरूपासिद्ध वह हेत्वाभास है जिसके पक्ष में हेतु का अभाव होता है। जैसे- **'शब्दो गुणः चाक्षुषत्वात् रूपवत्।'** शब्द गुण है, दिखाई पड़ने के कारण, रूप के समान।

- ➢ यहाँ 'चाक्षुषत्व' शब्द में नहीं है क्योंकि शब्द श्रवण से ग्राह्य है।

(iii) व्याप्यत्वासिद्ध हेत्वाभास- 'सोपाधिको हेतुर्व्याप्यत्वासिद्धः' उपाधियुक्त हेतु व्याप्यत्वासिद्ध होता है।

* यथा- 'पर्वतो धूमवान् वह्निमत्त्वात्'
पर्वत धूमवान् है, वह्नियुक्त होने के कारण।
सोपाधिक होने से वह्निमत्त्व व्याप्यत्वासिद्ध है।

➢ **उपाधि-** 'साध्यव्यापकत्वे सति साधन-अव्यापकत्वम् उपाधिः'
साध्य के व्यापक होने पर साधन की अव्यापकता उपाधि है।

5. बाधित हेत्वाभास

➢ **'यस्य साध्याभावः प्रमाणान्तरेण निश्चितः सः बाधितः'।**
जिस हेतु के साध्य का अभाव किसी अन्य प्रमाण से निश्चित होता है वह बाधित हेत्वाभास है।

* यथा- वह्निरनुष्णो द्रव्यत्वात् इति।
अग्नि शीतल है, द्रव्य होने के कारण।
यहाँ 'अनुष्णत्व' (शीतलता) साध्य है उसका अभाव उष्णत्व स्पार्शनप्रत्यक्ष से ज्ञात होता है। इसलिए इसमें बाधित हेत्वाभास है।

उपमानप्रमाण

➢ **उपमान-** 'उपमितिकरणम् उपमानम्'
उपमिति का करण उपमान है।

➢ **उपमिति-** 'संज्ञासंज्ञिसम्बन्धज्ञानम् उपमितिः'
संज्ञा तथा संज्ञी के सम्बन्धज्ञान को उपमिति कहते हैं। उसका करण सादृश्यज्ञान है।

➢ **अवान्तरव्यापार-** 'अतिदेशवाक्यार्थस्मरणम् अवान्तरव्यापारः'
प्रामाणिक व्यक्ति के कहे हुए वाक्यार्थ का स्मरण अवान्तर व्यापार है।

➢ **उपमिति की प्रक्रिया-** जैसे कोई गवय शब्द के अर्थ को बिना जानता हुआ किसी जंगली पुरुष से गाय के सदृश गवय होता है (गो सदृशो गवयः) यह सुनकर वन में जाता हुआ वाक्य के अर्थ को स्मरण करते हुए गो सदृश पिण्ड को देखता है। तदनन्तर यह गवय शब्द से वाच्य है। यह उपमिति उत्पन्न होती है।

शब्दप्रमाण

➢ **शब्द-** 'आप्तवाक्यं शब्दः' आप्तपुरुषों का वाक्य शब्द प्रमाण है।

➢ **आप्त-** 'आप्तस्तु यथार्थवक्ता' आप्त तो यथार्थवक्ता है।
वाक्य- 'वाक्यं पदसमूहः' वाक्य पदों का समूह है।
जैसे- गाम् आनय (गाय लाओ)

➢ वाक्य से प्राप्त होने वाला अर्थ ही शाब्दबोध अथवा वाक्यार्थज्ञान कहलाता है।

पद- 'शक्तं पदम्' शक्त अर्थात् शक्तियुक्त (सामर्थ्यवान्) पद है।

➢ **शक्ति-** 'अस्मात् पदात् अयमर्थो बोद्धव्यः इति ईश्वरसङ्केतः शक्तिः'
इस पद से यह अर्थ जानना चाहिए- इस प्रकार का ईश्वरसङ्केत ही शक्ति है।

* 'अर्थस्मृत्यनुकूलः पदपदार्थसम्बन्धः शक्तिः'(दीपिका टीका)

वाक्यार्थज्ञान के हेतु- आकांक्षा, योग्यता और सन्निधि- वाक्यार्थ ज्ञान के प्रति हेतु है।

आकांक्षा- 'पदस्य पदान्तरव्यतिरेकप्रयुक्तान्वयाननुभावकत्वम् आकाङ्क्षा'
एक पद का दूसरे अर्थ के बिना प्रयुक्त होने पर शाब्दबोध करवाने की असमर्थता आकाङ्क्षा है।

➢ **योग्यता-** 'अर्थाबाधो योग्यता' अर्थ का बाधारहित होना योग्यता है।

➢ **सन्निधि-** 'पदानाम् अविलम्बेन उच्चारणं सन्निधिः'
पदों का बिना विलम्ब के उच्चारण सन्निधि है।

➢ इसप्रकार आकांक्षा, योग्यता, सन्निधि से रहित वाक्य प्रमाण नहीं है। यथा- गौः, अश्वः, पुरुषः, हस्ती- यह प्रमाण नहीं हैं, क्योंकि इसमें आकांक्षा का अभाव है।

➢ 'अग्निना सिञ्चेत्' इति न प्रमाणम्। क्योंकि इसमें योग्यता का अभाव है।

➢ एक-एक प्रहर में कहे गये 'गाम् ..... आनय' इत्यादि पद प्रमाण नहीं हैं, क्योंकि इनमें सन्निधि नहीं है।

वाक्य के दो प्रकार- तर्कसंग्रह के अनुसार वाक्य के दो प्रकार हैं- वैदिक और लौकिक

(i) वैदिक वाक्य- 'वैदिकमीश्वरोक्तत्वात् सर्वमेव प्रमाणम्'
ईश्वर वचन होने के कारण सारे वैदिक वाक्य प्रमाण हैं।

(ii) लौकिक वाक्य- लौकिक वाक्य तो आप्तकथित प्रमाण हैं, अन्य प्रमाण नहीं हैं।
'लौकिकं तु आप्तोक्तं प्रमाणम् अन्यद् अप्रमाणम्'
शाब्दज्ञान- 'वाक्यार्थज्ञानं शाब्दज्ञानम्।'
वाक्य के अर्थों का ज्ञान ही शाब्दज्ञान है, उसका करण शब्द है।

गीता

निष्काम कर्मयोग

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥47॥

तेरा कर्म करने में ही अधिकार है उसके फलों में कभी नहीं। इसलिये तू कर्मों के फल का हेतु मत हो तथा तेरी कर्म न करनें में भी आसक्ति न हो।

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ॥48॥

हे धनञ्जय तू आसक्ति को त्यागकर तथा सिद्धि और असिद्धि में समान बुद्धिवाला होकर योग में स्थित हुआ कर्तव्यकर्मों को कर समत्व ही योग कहलाता है।

दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनंजय।
बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः ॥49॥

बुद्धियोग से सकाम कर्म अत्यन्त ही निम्न श्रेणी का है। इसलिये हे धनञ्जय तू समबुद्धि में ही रक्षा का उपाय ढूँढ़, अर्थात् बुद्धियोग का ही आश्रय ग्रहण कर क्योंकि फल के हेतु बनने वाले अत्यन्त दीन हैं।

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ॥50॥

समबुद्धियुक्त पुरुष पुण्य और पाप दोनों को इसी लोक में त्याग देता है अर्थात् उनसे मुक्त हो जाता है। इसलिये तू समत्वरूप योग में लग जा, यह समत्वरूप योग ही कर्मों में कुशलता है, अर्थात् कर्मबन्धन से छूटने का उपाय है।

कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः।
जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम् ॥51॥

क्योंकि समबुद्धि से युक्त ज्ञानीजन कर्मों से उत्पन्न होने वाले फल को त्यागकर जन्मरूप बन्धन से मुक्त हो निर्विकार परमपद को प्राप्त हो जाते हैं।

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति।
तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च ॥52॥

जिस काल में तेरी बुद्धि मोहरूप दलदल को भलीभाँति पार कर जायेगी, उस समय तू सुने हुए और सुनने में आनेवाले इस लोक और पर लोकसम्बन्धी सभी भोगों से वैराग्य को प्राप्त हो जायगा।

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला ।
समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि ॥53॥

भाँति-भाँति के वचनों को सुनने से विचलित हुई तेरी बुद्धि जब परमात्मा में अचल और स्थिर ठहर जाएगी, तब तू योग को प्राप्त हो जायेगा, अर्थात् तेरा परमात्मा से नित्य संयोग हो जायेगा।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥ (2/47)

- योग मार्ग में स्थित होकर कर्मों को करना चाहिए- **योगस्थः कुरु कर्माणि....।**
- गीता में समत्व को योग कहा गया है। **'समत्वं योग उच्यते'** (2/48)
- समत्वरूप योग ही कर्मों में कुशलता है अर्थात् कर्मबन्धन से छूटने का उपाय है-

योगः कर्मसु कौशलम् (2/50)

स्थितप्रज्ञ का स्वरूप

अर्जुन उवाच

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव ।
स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम् ॥54॥

हे केशव! समाधि में स्थित परमात्मा को प्राप्त हुए स्थिरबुद्धि पुरुष का क्या लक्षण है? वह स्थिरबुद्धि पुरुष कैसे बोलता है, कैसे बैठता है और कैसे चलता है?

श्रीभगवानुवाच

प्रजहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान् ।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥55॥

हे अर्जुन! जिस काल में यह पुरुष मन में स्थित सम्पूर्ण कामनाओं को भलीभाँति त्याग देता है और आत्मा से आत्मा में ही संतुष्ट रहता है उस काल में वह स्थितप्रज्ञ कहा जाता है।

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥56॥

दुःखों की प्राप्ति होने पर जिसके मन में उद्वेग नहीं होता, सुखों की प्राप्ति में जो सर्वथा निःस्पृह है तथा जिसके राग, भय और क्रोध नष्ट हो गये हैं, ऐसा मुनि स्थिरबुद्धि कहा जाता है।

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥57॥

जो पुरुष सर्वत्र स्नेहरहित हुआ उस-उस शुभ या अशुभ वस्तु को प्राप्त होकर न प्रसन्न होता है और न द्वेष करता है, उसकी बुद्धि स्थिर है।

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥58॥

और कछुआ सब ओर से अपने अंगों को जैसे समेट लेता है, वैसे ही जब यह पुरुष इन्द्रियों के विषयों से इन्द्रियों को सब प्रकार से हटा लेता है, तब उसकी बुद्धि स्थिर है ऐसा समझना चाहिये।

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते ॥59॥

इन्द्रियों के द्वारा विषयों को ग्रहण न करने वाले पुरुष के भी केवल विषय तो निवृत्त हो जाते हैं, परंतु उनमें रहनेवाली आसक्ति निवृत्त नहीं होती। इस स्थितप्रज्ञ पुरुष की तो आसक्ति भी परमात्मा का साक्षात्कार करके निवृत्त हो जाती है।

यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः ।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः ॥60॥

हे अर्जुन! आसक्ति का नाश न होने के कारण ये प्रमथन स्वभाववाली इन्द्रियाँ यत्न करते हुए बुद्धिमान् पुरुष के मन को भी बलात् हर लेती हैं।

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः ।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥61॥

उन सम्पूर्ण इन्द्रियों को वश में करके समाहित चित्त हुआ मेरे परायण होकर ध्यान में बैठे, क्योंकि जिस पुरुष की इन्द्रियाँ वश में होती हैं, उसी की बुद्धि स्थिर हो जाती है।

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते ।
सङ्गात्सञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥62॥

विषयों का चिन्तन करने वाले पुरुष की उन विषयों में आसक्ति हो जाती है, आसक्ति से उन विषयों की कामना उत्पन्न होती है और कामना में विघ्न पड़ने से क्रोध उत्पन्न होता है।

क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥63॥

क्रोध से अत्यन्त मूढ़भाव उत्पन्न हो जाता है, मूढ़भाव से स्मृति में भ्रम हो जाता है, स्मृति में भ्रम हो जाने से बुद्धि अर्थात् ज्ञान शक्ति का नाश हो जाता है और बुद्धि का नाश हो जाने से यह पुरुष अपनी स्थिति से गिर जाता है।

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन् ।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ॥64॥

परंतु अपने-अधीन किये हुए अन्तःकरणवाला साधक अपने वश में की हुई राग-द्वेष से रहित इन्द्रियों द्वारा विषयों में विचरण करता हुआ अन्तःकरण की प्रसन्नता को प्राप्त होता है।

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥65॥

अन्तःकरण की प्रसन्नता होने पर इसके सम्पूर्ण दुःखों का अभाव हो जाता है, और उस प्रसन्न-चित्त वाले कर्मयोगी की बुद्धि शीघ्र ही सब ओर से हटकर एक परमात्मा में ही भलीभाँति स्थिर हो जाती है।

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना।
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् ॥66॥

न जीते हुए मन और इन्द्रियों वाले पुरुष में निश्चयात्मिका बुद्धि नहीं होती, और उस अयुक्त मनुष्य के अन्तःकरण में भावना भी नहीं होती, तथा भावनाहीन मनुष्य को शान्ति नहीं मिलती और शान्तिरहित मनुष्य को सुख कैसे मिल सकता है?

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनु विधीयते ।
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि ॥67॥

क्योंकि जैसे जल में चलने वाली नाव को वायु हर लेती है, वैसे ही विषयों में विचरती हुई इन्द्रियों में से मन जिस इन्द्रिय के साथ रहता है, वह एक ही इन्द्रिय इस अयुक्त पुरुष की बुद्धि को हर लेती है।

तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥68॥

इसलिये हे महाबाहो जिस पुरुष की इन्द्रियाँ इन्द्रियों के विषयों से सब प्रकार निग्रह की हुई हैं, उसी की बुद्धि स्थिर है।

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी ।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥69॥

सम्पूर्ण प्राणियों के लिये जो रात्रि के समान है, उस नित्य ज्ञानस्वरूप परमानन्द की प्राप्ति में स्थितप्रज्ञ योगी जागता है, और जिस नाशवान् सांसारिक सुखकी प्राप्ति में सब प्राणी जागते हैं, वह परमात्मा के तत्त्व को जानने वाले मुनि के लिये रात्रि के समान है।

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं–
समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत ।
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति
सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ॥70॥

जैसे नाना नदियों के जल जब सब ओर से परिपूर्ण, अचल

प्रतिष्ठावाले समुद्र में उस को विचलित न करते हुए ही समा जाते हैं, वैसे ही सब भोग जिस स्थितप्रज्ञ पुरुष में किसी प्रकार का विकार उत्पन्न किये बिना ही समा जाते हैं, वही पुरुष परम शान्ति को प्राप्त होता है, भोगों को चाहने वाला नहीं।

विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः।
निर्ममो निरहङ्कारः स शान्तिमधिगच्छति ॥71॥

जो पुरुष सम्पूर्ण कामनाओं को त्यागकर ममतारहित, अहंकाररहित और स्पृहारहित हुआ विचरता है, वही शान्ति को प्राप्त होता है, अर्थात् वह शान्ति को प्राप्त है।

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति।
स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ॥72॥

हे अर्जुन ! यह ब्रह्म को प्राप्त पुरुष की स्थिति है, इसको प्राप्त होकर योगी कभी मोहित नहीं होता और अन्तकाल में भी इस ब्राह्मी स्थिति में स्थित होकर ब्रह्मानन्द को प्राप्त हो जाता है।

➢ स्थिरबुद्धि पुरुष के लक्षण

- दुःख में उद्विग्न न होना।
- सुख में अत्यधिक हर्षित न होना।
- राग, भय, क्रोध से मुक्त।

➢ श्रीमद्भगवद्गीता में स्थितप्रज्ञ का वर्णन -

गीता में श्रीकृष्ण यह बताते हैं कि जिस समय मनुष्य अपने मन में सभी कामनाओं को मिटाकर आत्मा में सन्तुष्ट रहता है, उस काल में वह स्थितप्रज्ञ कहा जाता है-

प्रजहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान्।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते॥ (2/55)

➢ दुःख होने पर जो उद्वेग नहीं करता और अत्यधिक सुख में सर्वथा निःस्पृह है तथा जिसके मन से राग, भय, और क्रोध नष्ट हो गये हैं, ऐसा मुनि स्थिरबुद्धि कहा जाता है।

वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते (2/56)

जैन दर्शनम्

1. जैनधर्म की उत्पत्ति बौद्धधर्म के पहले की मानी जाती है।
2. जैनधर्म के अन्तिम तीर्थङ्कर-'**भगवान् महावीर**' थे।
3. इस धर्म का प्राचीन नाम '**निगण्ठ**' था, जो '**निर्ग्रन्थ**' शब्द का पाली रूपान्तरण है इसे अन्य नामों से भी जाना जाता है **जैसे-** दिगम्बर, आर्हत्, श्रमण, निवृत्तिमार्ग।
4. जैन दर्शन में- सर्वज्ञ, रागद्वेषी के विजयी, त्रैलोक्य-पूजित, यथार्थवादी, सामर्थ्यवान्, सिद्ध पुरुषों को '**अर्हत्**' कहा जाता हैं।

सर्वज्ञो जितरागादिदोषवस्त्रैलोक्यपूजितः।
यथास्थितार्थवादी च देवोऽर्हत् परमेश्वरः॥

(सर्व-दर्शन-संग्रह, पु0-6)

➢ अर्हत् शब्द प्रातिपदिक है। इसे प्राकृत भाषा में **अरिहन्त** भी कहते हैं।

➢ अर्हत्-पुरुषों के द्वारा प्रचारित यह दर्शन '**आर्हत् दर्शन**' कहलाता है।

➢ रागद्वेष पर विजय प्राप्त करने के कारण वर्धमान को '**जिन**' (जेता) की उपाधि प्राप्त हुई है। अतः ऐसे जिन के द्वारा प्रचारित धर्म '**जैन**' कहलाया।

➢ जैन धर्म के प्रचारक सिद्धों को '**तीर्थङ्कर**' कहा जाता है।

➢ जैन दर्शन के आद्य तीर्थङ्कर- '**ऋषभदेव**' थे।

➢ ऋषभदेव मनुवंशी महीपति- **नाभि** तथा महाराज्ञी- **मरुदेवी** के पुत्र थे।

➢ ऋषभदेव के सौ पुत्रों में ज्येष्ठ थे महाराज- भरत चक्रवर्ती, कनिष्ठ थे बाहुबलि आदि।

➢ जैन दर्शन में ऐसी मान्यता है कि ऋषभदेव के ज्येष्ठ पुत्र '**भरत**' के नाम पर ही इस देश का नाम '**भारतवर्ष**' रखा गया।

➢ भगवान् विष्णु के चौबीस अवतारों में ऋषभदेव की भी गणना की गई है।

पार्श्वनाथ

➢ जैन दर्शन के अन्तिम दो तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ, महावीर ने इस दर्शन का प्रसार किया, जिससे यह विख्यात हुए।

➢ कुछ विद्वान् पार्श्वनाथ को ही जैनधर्म का प्रवर्तक मानते हैं।

➢ तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ का समय महावीर से ढाई सौ वर्ष पूर्व माना जाता है।

➢ पार्श्वनाथ के पिता काशी के राजा-**अश्वसेन** तथा माता महारानी-**वामा देवी**।

➢ पार्श्वनाथ का जन्म काशी में **874 वि.पू. = 817 ई.पू.** हुआ था।

➢ बालक पार्श्वनाथ के पैर के अँगूठे पर सर्प का चिह्न देखकर उन्हें पार्श्वनाथ के नाम से प्रसिद्धि मिली। इसी कारण पार्श्वनाथ का चिह्न सर्प प्रसिद्ध है।

➢ पार्श्वनाथ ने तीस (30) वर्षों तक गार्हस्थ्य जीवन बिताया।

➢ पार्श्वनाथ ने सत्तर वर्षों तक जैनधर्म का प्रचार-प्रसार किया, अनन्तर निर्वाण (मोक्ष) को प्राप्त हुए।

- पार्श्वनाथ ने चार महाव्रतों-**अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य** का वर्णन किया है।
- पार्श्वनाथ वस्त्र धारण करने के पक्षपाती नहीं थे।

भगवान् महावीर

- जैनधर्म के अन्तिम तीर्थङ्कर- **'भगवान् महावीर'** थे।
- महावीर का जन्म वैशाली (बिहार के मुजफ़्फ़रपुर जिला के बसाढ़ ग्राम) में **656 वि.पू.** माना जाता है।
- महावीर का जन्म **'ज्ञातृक'** नामक क्षत्रियवंश में हुआ।
- महावीर के पिता- **सिद्धार्थ** तथा माता- **त्रिशला**।
- महावीर की माता-त्रिशला एक राजकन्या थी।
- ऐसी मान्यता है कि महावीर का विवाह **'यशोदा देवी'** से हुआ था।
- महावीर ने अपने माता-पिता एवं ज्येष्ठ भ्राता-**नन्दिवर्धन** से आज्ञा लेकर गृहत्याग किया।
- महावीर ने तीस वर्ष की अवस्था में लगभग **(72 वि.पू.)** यतिधर्म को ग्रहण किया तथा अन्त में तेरह वर्षों के अभ्यास से **'कैवल्य'** को प्राप्त हुए।
- महावीर के प्रथम शिष्य का नाम- **इन्द्रभूति गौतम** है।
- महावीर ने अपने शिष्य इन्द्रभूति को पंचमहाव्रतों की शिक्षा प्रदान की।
- महावीर ने अङ्ग, मगध, कौशाम्बी आदि राज्यों के अधिपतियों को शिक्षा-दीक्षा प्रदान की।
- महावीर ने अर्धमागधी भाषा का अत्यधिक प्रयोग किया है। **72 वर्ष** की आयु में महावीर निर्वाण को प्राप्त हुए।
- जैन सम्प्रदाय के अनुसार इनका जन्म **656 वि.पू. (599 ई.पू.)** तथा मृत्यु **584 वि.पू. (527 ई.पू.)** बताया जाता है।
- महावीर ने वस्त्र परिधान का बहिष्कार कर नग्नत्व को ही स्वीकार किया।
- मौर्य वंश के संस्थापक आर्यावर्त के सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य भी जैनधर्मानुयायी थे।

श्वेताम्बर-दिगम्बर

- मगध संघ ने श्वेताम्बर (सफेद कपड़ा) को धारण करना न्यायानुमोदित बतलाया।
- ई.पू. द्वितीय शतक से श्वेताम्बर तथा दिगम्बर इन दो सम्प्रदायों का उदय जैनधर्म में हुआ।
- श्वेताम्बर सम्प्रदाय के अनुसार दिगम्बरों की उत्पत्ति महावीर के निर्वाण के **609 वर्ष** बाद **(अर्थात्- वि.स. 139 = 82 ई.)** हुई है।
- तत्त्वज्ञान के विषय में श्वेताम्बर-दिगम्बर में कोई मतभेद नहीं है, पर अनेक विषयों में आचारगत पार्थक्य दृष्टिगोचर होता है।
- दिगम्बर सम्प्रदाय में धार्मिक नियमों की उग्रता स्पष्ट दिखाई देती है, परन्तु श्वेताम्बरों ने मानव कमजोरियों को ध्यान में रख कर कठोर नियमों को सरल किया है।
- दिगम्बरों का कथन है कि–
  ''केवली'' (केवलज्ञानसम्पन्नपुरुष) भोजन नहीं करता।
- स्त्रियों को मोक्ष नहीं प्राप्त हो सकता है।
- स्त्रियों को पुरुष-जन्म ग्रहण के अनन्तर ही मोक्ष प्राप्ति का विधान है।

यथा–

भुंक्ते न केवली न स्त्री मोक्षमेति, दिगम्बरः।
प्राहुरेषामयं भेदो महान् श्वेताम्बरैः सह॥

(सर्वदर्शन संग्रह-जिनदत्तसूरि का श्लोक)

जैन प्रमाण साहित्य

- जैन दर्शन में आचार सम्बन्धी ग्रन्थों की संख्या अधिक है, अपितु प्रमाण सम्बन्धी ग्रन्थों की संख्या कम।
- जैन दर्शन के ग्रन्थों को चार कालों में विभक्त किया गया है–

(क) आगम ग्रन्थ **(ख) आरम्भ काल**
(ग) मध्ययुग **(घ)अवान्तर युग**

आगम ग्रन्थ–

- जैनधर्म के मूल आगम ग्रन्थों की रचना के विषय में दोनों सम्प्रदायों में पर्याप्त मतभेद है।
- दिगम्बरों का मानना है कि जैनदर्शन के कई ग्रन्थ विलुप्त हो चुके हैं, वर्तमान में समुपलब्ध आगम ग्रन्थ श्वेताम्बर सम्प्रदाय में संरक्षित हुए हैं।
- जैन सिद्धान्तों की संख्या **45** है। जिनमें **11- अंग, 12- उपांग, 10-प्रकीर्ण, 6-छेदसूत्र, 4-मूलग्रन्थ तथा 2-स्वतन्त्र ग्रन्थ (नन्दी सूत्र तथा अनुयोगद्वार)** माने जाते हैं।
- **दिट्ठवाय** (दृष्टिवाद– जो अधुना उपलब्ध नहीं होता) में अङ्गों के अन्तर्गत आने वाले सभी अवशिष्ट अंशों का संकलन किया गया है, जिसे दिगम्बर नहीं स्वीकार करते हैं।
- अनेकान्तवाद, जीव तथा पुद्गलादि दार्शनिक सिद्धान्तों का विवेचन आगम ग्रन्थों में मिलता है।
- जैनधर्म के आगम ग्रन्थों में 'अर्धमागधी' भाषा प्राप्त होती है।

आरम्भ काल

- जैन दर्शन की सुव्यवस्था विक्रम की प्रथम शताब्दी में आरम्भ हुई।

- आरम्भकाल में मुख्य रूप से तीन विद्वान हुए–
  1. उमास्वाति 2. कुन्दकुन्दाचार्य 3. समन्तभद्र
  इन विद्वानों ने जैनदर्शन की नींव को मजबूत बनाने का पूर्ण प्रयास किया।

1. उमास्वाति–

- श्वेताम्बर, दिगम्बर उमास्वाति का बहुत सम्मान करते हैं तथा इन्हें अपने धर्म का अनुयायी भी मानते हैं।
- उमास्वाति मगध के निवासी थे।
- विक्रम के आरम्भ काल में इन्होंने अपना प्रख्याततम ग्रन्थ **'तत्त्वार्थसूत्र'** (तत्त्वार्थाधिगमसूत्र) की रचना की।
- तत्त्वार्थसूत्र पर उमास्वाति ने भाष्य लिखा तथा अन्य आचार्यों ने भी इस पर वृत्ति, टीका, भाष्य लिखा है।
- **देवनन्दि** (पूज्यपाद) ने उमास्वाति के तत्त्वार्थसूत्र पर **'सर्वार्थसिद्धि'** नामक टीका लिखी है।

2. कुन्दकुन्दाचार्य–

- इनका द्राविड नाम **'कोण्डकुण्डा'** था, जिसका संस्कृत रूपान्तर **'कुन्दकुन्द'** के रूप में प्रसिद्ध हुआ।
- यह द्रविड देश के विख्यात दिगम्बर जैनाचार्य थे।
- ऐतिहासिककार इन्हें विक्रम की प्रथम शताब्दी का मानते हैं।
- इस प्रकार यह उमास्वाति के समसामयिक प्रतीत होते हैं।
- कुन्दकुन्दाचार्य के ग्रन्थ इस सम्प्रदाय के सिद्धान्तों के विश्वकोष का काम करते हैं।
- कुन्दकुन्दाचार्य के चार ग्रन्थ जैनागम के माने जाते हैं–
  1. नियमसार 2. पञ्चास्तिकायसार
  3. समयसार 4. प्रवचनसार
- इनमें अन्तिम तीन ग्रन्थ जैन सम्प्रदाय में **'नाटकत्रयी'** के नाम से विख्यात हैं।

3. समन्तभद्र–

- समन्तभद्र के ग्रथों के काल से प्राप्त होता है कि इनका समय तृतीय या चतुर्थ शतक विक्रमी है।
- **देवनन्दि** (पूज्यपाद) के ग्रन्थ **'जैनेन्द्र व्याकरण'** में समन्तभद्र का उल्लेख मिलता है।
- पूज्यपाद ने उमास्वाति के तत्त्वार्थसूत्र पर **'सर्वार्थसिद्धि'** नामक जो टीका लिखी है, उस पर समन्तभद्र के सिद्धान्तों का प्रचुर प्रभाव पड़ा है।
- समन्तभद्र धर्मशास्त्री, तार्किक, योगी तीनों थे।
- समन्तभद्र का प्रख्याततम ग्रन्थ **'आत्ममीमांसा'** (देवागमस्त्रोत) है।
- स्वयंभूस्त्रोत (समन्तभद्रस्तोत्र) जैनधर्म के चौबीसों तीर्थङ्करों के धर्म का प्रतिपादन **143 पद्यों** में करता है।
- **स्तुतिविद्या**- (जिनस्तुतिशतक/जिनशतक/जिनशतकालङ्कार) इस ग्रन्थ में चित्रकाव्य में वर्णित, पद्यों की संख्या-**116** है तथा भक्तिरस का वर्णन किया गया है।
- धर्मशास्त्रीय आचार के विषय में समन्तभद्र की प्रमुख रचना **'रत्नकरण्ड श्रावकाचार'** है, रत्नकरण्ड श्रावकाचार इस ग्रन्थ में अखिल सागर मार्ग का प्रकाशन किया गया है, इसकी प्रसिद्धि जैन समुदाय में नितान्त व्यापक है तथा कन्नड़, तमिल भाषा में टीका भी प्राप्त है।

मध्ययुग–

- यह युग जैन दर्शन के इतिहास में स्वर्ण-युग समझा जाता है।
- इस काल का आरम्भ गुप्तकाल में हुआ।
- इस युग के कतिपय श्रेष्ठ आचार्यों का संक्षिप्त वर्णन किया जाता है–

1. सिद्धसेन दिवाकर 2. हरिभद्र 3. भट्ट अकलंक
4. विद्यानन्द 5. वादिराजसूरि

1. सिद्धसेन दिवाकर–

- इनका काल लगभग पंचम शताब्दी का माना जाता है।
- सिद्धसेन उज्जैन के किसी विक्रमादित्य के घनिष्ठ मित्र थे।
- इनके गुरु का नाम **'वृद्धवादी'** था।

इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ–

(क) न्यायावतार– (सिद्धर्षि ने 10वें शतक में टीका लिखा) इस ग्रन्थ की रचना कर इन्होंने जैन-न्याय को जन्म दिया।

(ख) सन्मतितर्क– (विशदव्याख्याकार अभयदेवसूरी) यह नितान्त प्रमेय बहुल ग्रन्थ है।

2. हरिभद्र–

- जैनधर्म तथा दर्शन के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ के रचयिता होने के अतिरिक्त इन्होंने लोकप्रिय **'षड्दर्शन-समुच्चय'**, **'अनेकान्त-जयपताका'** की रचना की है।

3. भट्ट अकलंक–

- यह दिगम्बर मतानुयायी थे।
- इनका समय अष्टमशताब्दी का उत्तरार्ध माना जाता है।
- इन्होंने तत्त्वार्थसूत्र पर महत्त्वपूर्ण **'राजवार्तिक'** तथा आप्तमीमांसा के व्याख्यारूप में **'अष्टशती'** की रचना की।
- इनके तीन अन्य जैनन्याय ग्रन्थ–
  (क) लघीयस्त्रय (ख) न्यायविनिश्चय
  (ग) प्रमाण संग्रह
- अकलंक ने जैनदर्शन को सर्वमान्य बनाया समाज के लिए।

4. विद्यानन्द–

- इन्होंने **'अष्टशती'** पर **'अष्टसाहस्त्री'** तथा **'तत्त्वार्थसूत्र'** पर **'श्लोकवार्तिक'** लिखकर मीमांसकमूर्धन्य कुमारिलभट्ट की शैली का अनुकरण किया है।
- विद्यानन्द ने जैनदर्शन की परिभाषाएँ, लक्षण, प्रमाणशास्त्रों को सर्वमान्य बनाने का पूर्ण प्रयास किया।
- विद्यानन्द ने **'तत्त्वार्थ-श्लोकवार्त्तिक'** में पूर्वमीमांसा का सबल खण्डन किया है।
- इनके दो अन्य ग्रन्थ- **राजवार्त्तिक, श्लोकवार्तिक**।

- यह जैनेतर दर्शनों के भी प्रकाण्ड विद्वान थे।

5. वादिराजसूरि–

- यह दिगम्बर सम्प्रदाय के महान् तार्किक तथा द्राविड़ संघ के अनुयायी माने जाते हैं।
- इन्हें षट्तर्कषण्मुख, स्याद्वाद, विद्यापति आदि उपाधियाँ प्राप्त थीं।
- इनके '**एकीभावस्तोत्र**' के अनुसार इनके समान अन्य कोई तार्किक, शाब्दिक तथा कवि न था।
- दक्षिण के सोलंकी वंश के विख्यात राजा जयसिंह प्रथम (**838 श. सं.- 864 श.सं.**) के ये समकालीन थे।

इनके अन्य ग्रन्थ–

1. पार्श्वनाथचरित

2.'न्यायविनिश्चय-विवरण'– यह न्यायविषयक सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ है तथा यह अकलंकदेव के '**न्यायविनिश्चय**' का भाष्य है।

- यशोधर के प्रख्यात जैन आख्यान पर वादिराज का '**यशोधरचरित**' नामक चार सर्ग का लघुकाव्य प्रसिद्ध है।

अवान्तर युग– इस युग के जैन दार्शनिक ग्रन्थों की संख्या अत्यधिक है।

1. देवसूरी– इनका समय **12वीं शताब्दी** है।

- इन्होंने '**प्रमाणनयतत्त्वालोकालंकार**' तथा इसकी टीका '**स्याद्वादरत्नाकर**' कि रचना की है, जो जैनन्याय के प्रमाणभूत ग्रन्थ माने जाते हैं।

2. हेमचन्द्र– यह देवसूरी के समकालीन थे।

- ब्राह्मणों के द्वारा निर्मित काव्य, व्याकरण, अलंकार ग्रन्थों के स्थान पर इन्होंने स्वयं जैनियों के उपकारार्थ काव्यादिकों की रचना की।
- इन्होंने जैनन्याय के विषय में '**प्रमाणमीमांसा**' नामक ग्रन्थ लिखा
- इन्हें सर्वशास्त्र-निपुणता के लिए '**कलिकालसर्वज्ञ**' की उपाधि प्राप्त थी।

3. मल्लिषेणसूरि– इनका समय (**1348 वि.=1282 ई.**) है।

- इन्होंने हेमचन्द्र के ग्रन्थ '**अन्ययोगव्यवच्छेद द्वात्रिंशिता**' की विस्तृत टीका '**स्याद्वादमञ्जरि**' लिखि।
- स्याद्वादमञ्जरि में ब्राह्मण, बौद्ध, चार्वाक दर्शनों की जैन-दृष्ट्या समालोचना है एवं जैन-सिद्धान्तों का प्रमाणपुरःसर विवेचन है।

4. **गुणरत्न–** इनका काल **1446 वि0 = 1409 ई.** है।

- गुणरत्न ने हरिभद्र के '**षड्दर्शनसमुच्चय**' की विस्तृत व्याख्या लिखि, जिसमें सभी दर्शनों के सिद्धान्तों की मार्मिक विवेचना प्राप्त होती है।

5. यशोविजय– इनका समय **17वीं शताब्दी का पूर्वार्ध** माना गया है।

- इनका ग्रन्थ '**जैन-तर्कभाषा**' अत्यन्त सरल, संक्षिप्त तथा उपादेय है।
- इन्होंने संस्कृत, प्राकृत, गुजराती, हिन्दी भाषाओं में खण्डनात्मक, प्रतिपादनात्मक, समन्वयात्मक ग्रन्थों की रचना की है।

जैनज्ञानमीमांसा

- जैनमतानुसार जीव चैतन्य है, ज्ञान उसका साक्षात् लक्षण है।
- ज्ञान दो प्रकार का है–

1. प्रत्यक्ष **2. परोक्ष**

प्रत्यक्ष– आत्मसापेक्ष (स्पष्ट/निर्मल) ज्ञान को प्रत्यक्ष कहते हैं।

प्रत्यक्ष के दो भेद- **सांव्यवहारिक** और **पारमार्थिक।**

- इन्द्रिय और मन निमित्त से होने वाले एक देश स्पष्टज्ञान को सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष कहते हैं।
- सांव्यवहारिक के चार भेद- **अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा।**
- **पारमार्थिक प्रत्यक्ष-** यह तीन प्रकार का होता है –

प्रत्यक्ष ज्ञान के भेद–

1. अवधि **2. मनःपर्याय** **3. केवल**

परोक्ष– इन्द्रिय-मन/अस्पष्ट ज्ञान को परोक्ष कहते हैं, परोक्ष का दूसरा नाम अप्रत्यक्ष भी है।

2. परोक्ष– परोक्ष ज्ञान पाँच प्रकार का होता है।

1. स्मृति 2. प्रत्यभिज्ञान 3. तर्क 4. अनुमान 5. आगम

1. स्मृति– पहले अनुभव किये हुए पदार्थ को विषय करने वाले ज्ञान को **स्मृति** कहते हैं।

2. प्रत्यभिज्ञान– अनुभव और स्मरण पूर्वक होने वाले जोड़ रूप ज्ञान को **प्रत्यभिज्ञान** कहते हैं।

3. तर्क– व्याप्ति के ज्ञान को **तर्क** कहते हैं।

4. अनुमान– साधन से साध्य का ज्ञान होने को **अनुमान** कहते हैं।

5. आगम– आप्त के वचनों से होने वाले अर्थज्ञान को **आगम** कहते हैं।

उमास्वामी के अनुसार ज्ञान दो प्रकार का होता है-

1. मतिज्ञान 2. श्रुतज्ञान

यह तीनों केवल आत्मा की योग्यता के बल से उत्पन्न होते हैं।

1. अवधि– दूरस्थित व्यवधान-युक्त पदार्थों का ज्ञान '**अवधि ज्ञान**' कहलाता है।

2. मनः पर्याय– जीव जब द्रोह ईर्ष्या आदि का क्षय कर लेता है, तब उसमें दूसरों के विचारों को जानने के योग्यता ही मनःपर्याय है।

3. केवल– आवरणीय कर्मों के नितान्त क्षय होने पर जब आत्मा अपने शुद्ध, सर्वज्ञ स्वरूप को प्राप्त होता है, वही केवल ज्ञान कहलाता है, इसके अधिकारी सम्यक्चरित्र के अनुष्ठान करने वाले सिद्ध पुरुष होते हैं।

1. मति– इन्द्रिय तथा मन के सम्पर्क से जो ज्ञान होता है **'मतिज्ञान'** कहलाता है।

- मतिज्ञान दो प्रकार का होता है– **इन्द्रियजन्य, अनिन्द्रियजन्य**।
- **इन्द्रियजन्य-**बाह्येन्द्रियों के द्वारा जन्य ज्ञान को इनिद्रयजन्य कहते है।
- **अनिन्द्रियजन्य-** मन ज्ञान ही अनिन्द्रिय है। मतिज्ञान विद्यमान वस्तु में प्रवृत्त होता है।

2. श्रुत– शब्द से उत्पन्न ज्ञान को श्रुतज्ञान कहते हैं। श्रुतज्ञान अतीत, विद्यमान, भविष्य इन त्रैकालिक विषयों में प्रवृत्त होता है।

- जैनदर्शन प्रत्यक्ष, अनुमान तथा आगम तीन प्रमाण स्वीकार करता है।
- जैन दर्शन में प्रत्यक्ष की सत्ता सर्वमान्य है।
- जैनाचार्यों ने युक्तियों के कारण लोकव्यवहार के लिए अनुमान प्रमाण स्वीकार किया है।
- जैन आगम में प्रतिपादित सत्य जैन दर्शन की मूलभित्ति है।
- जैन दर्शन श्रुति, स्मृति को अनेक दोषों से युक्त होने के कारण नहीं स्वीकार करता, अतः इसकी गणना नास्तिक दर्शनों में होती है।

स्याद्वाद

- जैन दर्शन का प्रधान सिद्धान्त है कि प्रत्यक्ष वस्तु अनन्त धर्मात्मक है।
- वस्तुओं का यथार्थ ज्ञान उसी को है, जिसने कैवल्य ज्ञान प्राप्त किया हो।
- जैन दर्शन में वस्तु के अनन्त धर्मों में से एक धर्म का ज्ञान **'नय'** कहलाता है।

'एक देशविशिष्टो यो नयस्य विषयो मतः'।

- साधारणतया ज्ञान तीन प्रकार का होता है–

1. दुर्णय 2. नय 3. प्रमाण

- नय शब्द की निरुक्ति है- **'नीयते परिच्छिद्यते एक देशविशिष्टोऽर्थः अनेन इति नयः'।** (स्याद् वादमञ्जरी)
- जैन दर्शन में वस्तु के परामर्श से पहले उसके सीमित तथा सापेक्ष बनाने के लिए **'स्यात्'** विशेषण जोड़ा जाता है।
- स्यात् (कथंचित्) शब्द अस् धातु के विधिलिङ् का रूप है।
- भगवती सूत्र में महावीर ने **'स्यादस्ति, स्यान्नास्ति तथा स्याद् अवक्तव्यम्'** इन तीन भंगो का स्पष्ट उल्लेख किया है।
- भंगो को ही **'मूलभंग'** कहते हैं।
- जैन न्याय में सत्ता के सापेक्ष रूप को स्वीकार करने के लिए परामर्श का सात रूप माना गया है, जिसे **'सप्तभंगी नय'** कहते हैं–

1. स्यादस्ति (किसी रूप में हैं–)
2. स्यान्नास्ति (किसी रूप में नहीं है)।
3. स्यादस्ति च नास्ति च (कथञ्चित् है और नहीं है)।
4. स्याद् अवक्तव्यम् (कथञ्चित् अथवा किसी प्रकार में है और अवक्तव्य है)।
6. स्यान्नास्ति च अवक्तव्यं च (कथञ्चित् नहीं है और अवक्तव्य है)।
7. स्यादस्ति च नास्ति च अवक्तव्यं च (कथञ्चित् है, नहीं है तथा अवक्तव्य है)।

(जैन तत्त्वसमीक्षा)

- जैन दर्शन में विस्तसर धारण करने वाले द्रव्य **'अस्तिकाय'** कहे जाते हैं।
- सत्ता धारण करने के कारण– **अस्ति।** शरीर की भाँति विस्तार से समन्वित होने के कारण–कार्य
- ऐसे पाँच द्रव्यों की स्वीकृत की गई है–

1. जीवास्तिकाय **2. पुद्गलास्तिकाय**
3. आकाशास्तिकाय **4. धर्मास्तिकाय**
5. अधर्मास्तिकाय

जीव

- चेतन द्रव्य की जीव कहते हैं- 'चैतन्यलक्षणो जीवः'।
- प्रत्येक जीव नैसर्गिक रूप से उन्नत ज्ञान, गुण, सामर्थ्य सम्पन्न होता है।
- जीव में आवरणीय कर्म के कारण धर्म का उदय नहीं होता है।
- जैन दर्शन जीव को मध्यम परिणामविशिष्ट मानता है।
- तात्त्विक दृष्टि से अरूपी होने के कारण उसका ज्ञान इन्द्रिय द्वारा नहीं अपितु स्वसंवेदन, प्रत्यक्ष तथा अनुमान के द्वारा उसका ज्ञान सम्भव है।

अजीव

- जैन दर्शन में **'पुद्गल'** शब्द का प्रयोग भूत सामान्य के लिए किया जाता है।

- सर्वदर्शन-संग्रह में 'पुद्गल' की निष्पत्ति है-
  'पूरयन्ति गलन्ति च' (जो पूर्ण हो जाय तथा गल जाय)।
- पुद्गल के दो रूप हैं– **अणु, संघात**
  अणु = पुद्गल के सूक्ष्मतम निरवयव अंश जिनका सूक्ष्म रूप में विभाजन नहीं किया जा सकता **'अणु'** कहलाता है।
  संघात = दो या दो से अधिक सूक्ष्म अंशो के परस्पर एकत्र होने से **'संघात'** बनता है, इन्हीं संघातों के द्वारा शरीर के भिन्न-भिन्न अंग मन-प्राण आदि की सृष्टि होती है।
- पौद्गलिक पदार्थों में चार गुण पाये जाते हैं–
  1. स्पर्श 2. रस 3. गन्ध 4. वर्ण

आकाश

- आकाश की सत्ता अनुमान के आधार पर स्वीकृत की गई है।
- आकाश दो प्रकार का माना गया है–
  1. लोकाकाश 2. अलोकाकाश
  लोकाकाश– जीव, पुद्गल आदि द्रव्यों की स्थिति इसी भाग में होती हे।
  अलोकाकाश– यह लोक से उपरितन आकाश होता है।

काल

- जैन दर्शन में अनुमान के आधार पर काल की कल्पना की गई है।
- वर्तना, परिणा, क्रिया, पुरत्व, अपरत्व ये पाँच काल के **'उपकार'** माने जाते हैं।
- किसी वस्तु का परिणाम काल की सत्ता पर अवलम्बित है। यथा- **कच्चे आम का पक जाना कालजन्य ही है।**
- काल के दो भेद माने जाते हैं।
  1. व्यावहारिक काल 2. पारमार्थिक काल

धर्म

- गतिशील जीव तथा पुद्गल के सहकारी कारण द्रव्य विशेष को **'धर्म'** की संज्ञा दी गई है।

अधर्म

- स्थितिशील जीव तथा पुद्गल की स्थिति के सहकारी कारण द्रव्यविशेष को **'अधर्म'** कहा जाता है।

रत्नत्रय

- जैन दर्शन में मोक्ष के तीन साधन हैं–
  1. सम्यक् दर्शन
  2. सम्यक् ज्ञान
  3. सम्यक् चरित्र
- दर्शन शब्द का अर्थ है- **श्रद्धा।**
- मोक्षोपयोगी तीनों साधनों को जैन दर्शन में **'रत्नत्रय'** की संज्ञा दी गई है।
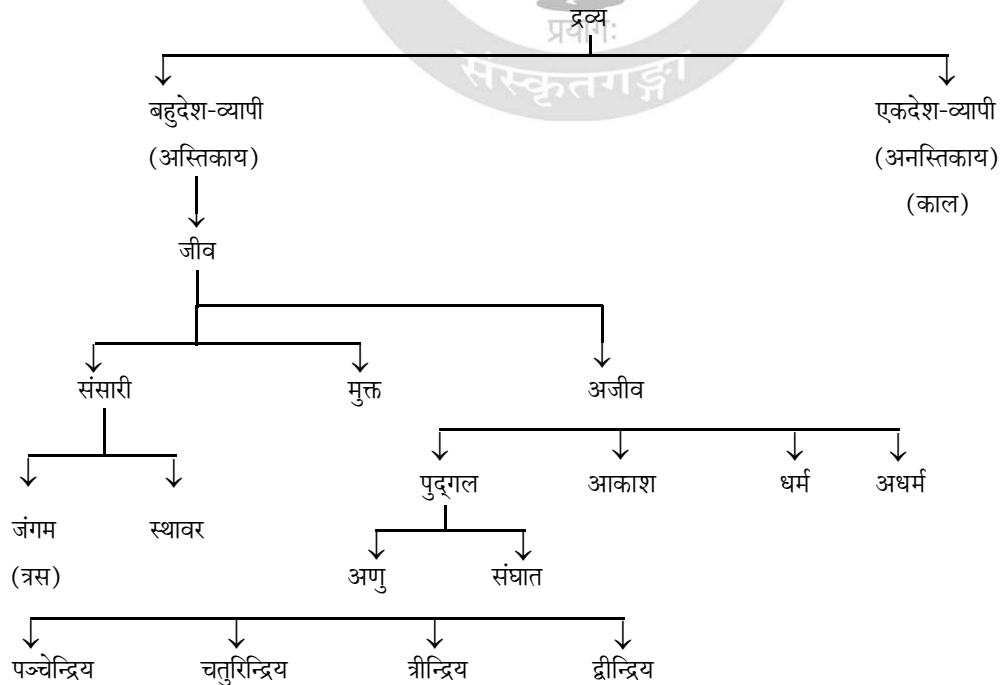
बौद्ध दर्शन

- बौद्धदर्शन के संस्थापक 'गौतम बुद्ध' हैं।
- बुद्ध का जन्म 563 ई0पू0 वैशाखी पूर्णिमा को हुआ था।
- गौतम का जन्म स्थान - लुम्बिनी का कपिलवस्तु (नेपाल) है।
- बुद्ध के बचपन का नाम 'सिद्धार्थ' था।
- **बुद्ध के पिता का नाम-** शुद्धोदन तथा **माता का नाम**- महामाया था।
- गौतम का जन्म 'शाक्य'वंश में हुआ था।
- गौतम का पालन-पोषण 'प्रजापति गौतमी' ने किया।
- सिद्धार्थ का विवाह 16वर्ष की आयु में हुआ।
- **सिद्धार्थ की पत्नी का नाम-** यशोधरा देवी तथा **पुत्र का नाम-** राहुल था।
- सिद्धार्थ जब प्रथम बार राजमहल से निकले तो उन्होंने देखा–
  (1) एक बीमार व्यक्ति (2) एक वृद्ध
  (3) एक संन्यासी (4) एक शव
  अतःइसके कारण उन्हें सांसारिक ज्ञान प्राप्त हुआ,जिससे वह अध्यात्म की ओर आकृष्ट हुए।
- सिद्धार्थ ने ज्ञान प्राप्ति तथा आध्यात्मिक चेतना,सत्य की खोज के लिए गृहस्थाश्रम का त्याग किया ।
- सिद्धार्थ को बिहार में निरंजना फाल्गुन नदी के किनारे एक पीपल के वृक्ष के नीचे वैशाख पूर्णिमा को ज्ञान की प्राप्ति हुई।
- गौतम को ज्ञान प्राप्ति होने पर 'बुद्ध' की उपाधि प्राप्ति हुई।
- बुद्ध ने जहाँ ज्ञान प्राप्त किया, वह स्थान 'बोध गया' के नाम से प्रसिद्ध है।
- बुद्ध ने सांख्यदर्शन की शिक्षा आलारकलाम से ली थी ।
- बुद्ध ने सर्वप्रथम सारनाथ (वाराणसी) में कौण्डिन्य आदि पञ्च शिष्यों को उपदेश दिया जिसे 'धर्मचक्र प्रवर्तन' कहा गया।
- बुद्ध ने अपने जीवन काल में सबसे अधिक उपदेश 'श्रावस्ती' में दिया।
- बुद्ध ने 483 ई0पू0 वैशाख पूर्णिमा को कुशीनगर (कसया, गोरखपुर) में 'निर्वाण' प्राप्त किया।
- बुद्ध को जन्म, बोधिप्राप्ति और निर्वाण की घटना एक ही तिथि 'वैशाखी पूर्णिमा' को प्राप्त हुई, अतः बौद्ध धर्म के लिए यह तिथि अत्यन्त पवित्र मानी जाती है।
- बौद्ध धर्म ग्रहण करने वाली पहली महिला 'गौतमी' थीं।
- शून्यवाद/माध्यमिक सम्प्रदाय के संस्थापक 'नागार्जुन' हैं।
- योगाचार मत का प्रसिद्ध ग्रन्थ 'लंकावतारसूत्र' है।
- सौत्रान्तिक मत का विशेष ग्रन्थ '6 सुत्तपिटक' है।
- वैभाषिक मत का प्रसिद्ध ग्रन्थ 'अभिधर्म विभाषा' है।
- **विज्ञानवाद के दो सिद्धान्त हैं-**
  (1) आलय विज्ञान (2) प्रवृत्तिविज्ञान।
- सम्राट् अशोक ने भी बौद्ध धर्म की दीक्षा ग्रहण की।
- बौद्धदर्शन **प्रत्यक्ष प्रमाण** स्वीकार करता है।

बौद्ध महासभाएँ

क्रम	स्थान	अध्यक्ष	शासनकाल
(1) प्रथम (483ई0पू0)	राजगृह	महाकश्यप (उपाली)	अजातशत्रु
(2) द्वितीय (383ई0पू0)	वैशाली	साबाकामी	कालाशोक
(3) तृतीय (251ई0पू0)	पाटलिपुत्र	मोगली पुत्ततिस्स	अशोक
(4) चतुर्थ (1ई०)	कुण्डलवन	वसुमित्र	कनिष्क

- चतुर्थ बौद्ध सम्मेलन के बाद बौद्धदर्शन दो भागों में विभक्त हो गया- (1) हीनयान (2) महायान
- बुद्ध के 'मध्यम मार्ग' क़ो सबसे उत्तम कहा गया है।
- बौद्धों के पूजा स्थल को 'चैत्य' कहा जाता है।
- बौद्ध धर्म का सबसे बड़ा स्तूप 'साँची स्तूप' है।
- बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित बौद्ध धर्म के चिह्न-

(1) **जन्म** - कमल एवं बलीवर्द
(2) **गृहत्याग** - अश्व
(3) **ज्ञान** - पीपल (बोधि वृक्ष)
(4) **निर्वाण** - पद-चिह्न
(5) **मृत्यु** - स्तूप

- बुद्ध ने भिक्षुओं के 'संघ' की स्थापना की और मानव क्लेशों से उद्धार पाने के लिए 'विनय' तथा 'धर्म' की शिक्षा जनसाधारण को 'मागधी' भाषा में दी।

त्रिपिटक

(1) सुत्त पिटक (बुद्ध के उपदेश)
(2) विनय पिटक (आचार सम्बन्धी ग्रन्थ)
(3) अभिधम्म पिटक (दार्शनिक विषयों का विवेचन)

- तीनों पिटकों की रचना पाली भाषा में की गई है।
- बुद्ध ने चार आर्यसत्यों का रहस्योद्घाटन किया है-

(1) **दुःखम्** (इस संसार में जीवन दुःखों से परिपूर्ण है।)
(2) **दुःख समुदाय** (इन दुःखों का कारण विद्यमान है।)
(3) **दुःखनिरोध** (इन दुःखों से मुक्ति मिल सकती है।)

(4) **दुःखनिरोधगामिनि प्रतिपत्** (दुःख निरोध-प्राप्ति के लिए उचित उपाय/मार्ग।)

बौद्ध दर्शन की विशेषताएँ

(1) अनीश्वरवादी (2) अनात्मवादी (3) नास्तिक (4) वेद-विरोधी (5) पुनर्जन्म में विश्वास (6) जन्म का कारण ईश्वर को नहीं मानते

➢ **चित्त और उसके विकारों के पाँच स्कन्ध -**

(1) रूपस्कन्ध (2) विज्ञानस्कन्ध (3) वेदनास्कन्ध (4) संज्ञास्कन्ध (5) संस्कारस्कन्ध।

➢ **बौद्धों के द्वादश आयतन-**

(1) पञ्चज्ञानेन्द्रियाँ (2) पञ्चकर्मेन्द्रियाँ (3) मन (4) बुद्धि।

प्रमाण

प्रत्यक्षमनुमानं च प्रमाण द्वितयं तथा।

(1) प्रत्यक्ष (2) अनुमान। बौद्धमत में दो प्रमाण स्वीकृत हैं।

त्रिरत्न

(1) प्रज्ञा - तटस्थ निरीक्षण से विचार शून्यता ।

(2) शील - मनुष्य के मन में सबके प्रति प्रेम।

(3) समाधि - तत्त्व चिन्तन से समाधि की प्राप्ति।

अष्टांगिक मार्ग

प्रज्ञा –
- सम्यक् दृष्टि - मिथ्या दृष्टि का अन्त
- सम्यक् संकल्प - दृढ इच्छाशक्ति निश्चय आधार

शील –
- सम्यक् वाक् - अनुचित वाक् परिहार
- सम्यक् कर्मान्त - बुरे कर्मों का परित्याग
- सम्यक् आजीविका - छल, प्रपञ्च कर्मों से रहित आजीविका

समाधि –
- सम्यक् व्यायाम - सत्कर्म के लिए उद्योग
- सम्यक् स्मृति - चार आर्यसत्यों का स्मरण
- सम्यक् समाधि - चित्त की शून्यता, पूर्ण जाग्रत अवस्था

बौद्धदर्शन के चार सम्प्रदाय

(1) वैभाषिक - बाह्यार्थप्रत्यक्षवादम्
वाद - बाह्यार्थप्रत्यक्षवाद/सर्वास्तिवाद

(2) सौत्रान्तिक - बाह्यार्थनुमेयवादम्
वाद - बाह्यार्थनुमेयवाद

(3) योगाचार - बाह्यार्थशून्यत्वम्
वाद - विज्ञानवाद/आलयवाद

(4) माध्यमिक - सर्वशून्यत्वम्
वाद - शून्यवाद

हीनयान- सौत्रान्तिक + वैभाषिक

महायान- माध्यमिक + योगाचार

द्वादश निकाय

निकायों को भावचक्र या प्रतीत्यसमुत्पाद कहा जाता है–

(1) अविद्या (2) संस्कार (3) विज्ञान
(4) नामरूप (5) षणयतन (6) स्पर्श
(7) वेदना (8) तृष्णा (9) उपादान
(10) भव (11) जाति (12) जरामरण

निर्वाण

➢ निर्वाण के विषय में हीनयान और महायान की कल्पनाएँ भिन्न है।

➢ हीनयान के अनुसार निर्वाण सत्य, नित्य, पवित्र माना गया है।

➢ हीनयान में जब भिक्षु 'अर्हत्' की दशा को प्राप्त कर लेता है तो उसे निर्वाण प्राप्त हो जाता है।

➢ महायान का आदर्श मानव है बोधिसत्त्व, जगत्, के उपकार में लगा हुआ व्यक्ति।

➢ महायान का निर्वाण वेदान्त- मुक्ति का समकक्ष है।

3. संस्कृत व्याकरण

1. वृद्धि संज्ञा

सूत्र- वृद्धिरादैच् (1.1.1)

पदच्छेद- वृद्धिः आत् ऐच्

आ ऐ, औ

सूत्रार्थ- आ, ऐ, औ- इन तीन वर्णों की **वृद्धिसंज्ञा** होती है। जैसे- त्यागः में **आ**, सदैव में **ऐ**, महौषधि में **औ** वृद्धिसंज्ञक वर्ण हैं।

2. गुण संज्ञा

सूत्र- अदेङ् गुणः (1.1.2)

पदच्छेद- अत् एङ् गुणः

अ ए ओ

सूत्रार्थ- अ, ए, ओ- इन तीन वर्णों की **गुणसंज्ञा** होती है।

उदाहरण- रमेशः में 'ए', सूर्योदयः में 'ओ', महर्षि में 'अ' (र्) गुणसंज्ञक वर्ण हैं।

3. संयोग संज्ञा

सूत्र- हलोऽनन्तराः संयोगः (1.1.7)

पदच्छेद- हलः अनन्तराः संयोगः

सूत्रार्थ- ऐसे दो या दो से अधिक व्यञ्जन जिनके बीच में कोई स्वर न आया हो, उसे **संयोग** कहते हैं।

उदाहरण- (i) पुष्प में ष् + प् का संयोग है।

(ii) अग्नि में ग् + न् का संयोग है।

(iii) राष्ट्र में ष् + ट् + र् का संयोग है।

(iv) बुद्धि में द् + ध् का संयोग है।

4. अनुनासिक संज्ञा

सूत्र- मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः (1.1.8)

पदच्छेद- मुख-नासिका-वचनः अनुनासिकः

सूत्रार्थ- जो वर्ण मुख तथा नासिका दोनों की सहायता से बोले जाते हों, उसकी **अनुनासिक संज्ञा** होती है।

उदाहरण- अँ, ङ्, ञ्, ण्, न्, म् आदि वर्ण अनुनासिक हैं।

नोट- जो वर्ण नासिका के साथ नहीं बोले जाते वे अननुनासिक या निरनुनासिक कहे जाते हैं। जैसे- क, ख, ग, घ, च, छ, ज आदि।

5. सवर्णसंज्ञा

सूत्र- ''तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्'' (1.1.9)

पदच्छेद- तुल्य-आस्य-प्रयत्नं सवर्णम्

सूत्रार्थ- जिन दो या दो से अधिक वर्णों के कण्ठ तालु आदि उच्चारणस्थान तथा आभ्यन्तरप्रयत्न दोनों समान हों, वे परस्पर सवर्णी (सवर्णसंज्ञक) होते हैं।

उदाहरण- अ-आ, इ-ई, उ-ऊ आदि परस्पर सवर्णी हैं।

रमा + अपि = रमापि। मुनि + ईशः = मुनीशः

भानु + उदयः = भानूदयः पितृ + ऋणम् = पितृणम्

- उच्चारणस्थान और प्रयत्न का साम्य होने पर भी स्वर और व्यञ्जन की परस्पर सवर्णसंज्ञा नहीं होती है- ''नाज्झलौ''

यथा- दण्ड हस्तः, दधि शीतम्।

- **''ऋलृवर्णयोः मिथः सावर्ण्यं वाच्यम्''** इस वार्तिक से ऋ और लृ वर्ण आपस में सवर्णी हैं।

6. प्रगृह्य संज्ञा

सूत्र- ईदूदेद्द्विवचनं प्रगृह्यम् (1.1.11)

पदच्छेद- ईत् ऊत् एत् द्विवचनं प्रगृह्यम्

सूत्रार्थ- द्विवचनान्त ई ऊ ए की **प्रगृह्यसंज्ञा** होती है।

उदाहरण- (i) हरी एतौ (ii) विष्णू इमौ (iii) गङ्गे अमू (iv) अग्नी इति (v) वायू इति (vi) माले इति (vii) पचेते इति

7. 'घ' संज्ञा

सूत्र- तरप्तमपौ घः (1.1.21)

पदच्छेद- तरप् - तमपौ घः

सूत्रार्थ- तरप् और तमप् - ये दो प्रत्यय **'घ' संज्ञक** होते हैं।

उदाहरण- कुमारितरा, कुमारितमा

8. निष्ठा संज्ञा

सूत्र- क्तक्तवतू निष्ठा (1.1.25)

पदच्छेद- क्त - क्तवतू निष्ठा

सूत्रार्थ- क्त तथा क्तवतु दोनों प्रत्ययों की **निष्ठा संज्ञा** होती है।

उदाहरण- भुक्तः, भुक्तवान्, पठितः, पठितवान् आदि।

9. सर्वनामसंज्ञा

सूत्र- सर्वादीनि सर्वनामानि (1.1.26)

पदच्छेद- सर्व-आदीनि सर्वनामानि

सूत्रार्थ- सर्व, विश्व, यत् , तद्, एतत्, इदम्, अदस्, अस्मद्, युष्मद् आदि शब्दों की **सर्वनामसंज्ञा** होती है।

10. अव्यय संज्ञा

सूत्र- स्वरादिनिपातमव्ययम् (1.1.36)

पदच्छेद- स्वरादि-निपातम् अव्ययम्

सूत्रार्थ- स्वरादिगण में पठित शब्दों की तथा निपात शब्दों की अव्यय संज्ञा होती है।

उदाहरण- स्वरादि- स्वर्, प्रातर् इत्यादि

निपात- च, वा, ह इत्यादि

- क्त्वा, ल्यप्, तुमुन् प्रत्ययान्त पद भी अव्ययसंज्ञक होते हैं- **यथा-** पठित्वा, प्रपठ्य, पठितुम् आदि।
- कुछ तद्धित प्रत्ययान्त शब्दों की भी अव्ययसंज्ञा होती है। जैसे- ततः, तत्र, तदा, विना आदि।
- अव्ययीभाव समास की अव्ययसंज्ञा होती है। जैसे- अधिहरि, अध्यात्मम्, उपगङ्गम्, यथाशक्ति आदि।

11. विभाषा संज्ञा

सूत्र- न वेति विभाषा (1.1.43)

पदच्छेद- न वा इति विभाषा

सूत्रार्थ- न का अर्थ है- निषेध। 'वा' का अर्थ है- विकल्प। निषेध तथा विकल्प इन दो अर्थों की **विभाषा संज्ञा** होती है।

12. सम्प्रसारण संज्ञा

सूत्र- इग्यणः सम्प्रसारणम् (1.1.44)

पदच्छेद- इक् यणः सम्प्रसारणम्

सूत्रार्थ- यण् के स्थान पर होने वाले इक् की **सम्प्रसारण संज्ञा** होती है।

यण् - य् व् र् ल् इक् - इ उ ऋ ऌ

उदाहरण- (i) यज् + क्त = इष्टः (ii) वप् + क्त = उप्तः

13. टि संज्ञा

सूत्र- अचोऽन्त्यादि टि (1.1.63)

पदच्छेद- अचः अन्त्य आदि टि

सूत्रार्थ- अचों के मध्य में जो अन्तिम अच् होता है, वह आदि में हो जिसके उस वर्णसमुदाय की **टि संज्ञा** होती है।

व्याख्या- किसी शब्द में जो अन्तिम स्वर होगा वही टिसंज्ञक वर्ण होगा, उस अन्तिम स्वर के बाद जो व्यञ्जन वर्ण होंगे वे भी टिसंज्ञक होंगे।

जैसे- (i) मनस् = म् अ न् अ स्

यहाँ अन्तिम स्वर है 'नकार' में विद्यमान अ । 'अ' के बाद 'स्' व्यञ्जन वर्ण भी टिसंज्ञा में गिना जाएगा अतः 'मनस्' में **'अस्'** की टिसंज्ञा होगी।

(ii) राजन् में **'अन्'** इस वर्णसमुदाय की टिसंज्ञा होगी।

(iii) 'राम' में **'अ'** टिसंज्ञक वर्ण है। क्योंकि यहाँ अन्तिम स्वर अकार के बाद कोई व्यञ्जन वर्ण नहीं है।

(iv) 'दधि' में **'इ'** टिसंज्ञक वर्ण है।

नोट-

(i) अन्तिम स्वर तथा उसके बाद आने वाले स्वर रहित व्यञ्जन वर्ण टिसंज्ञक होंगे। जैसे- 'आत्मन्' में अन्।

(ii) यदि अन्तिम स्वर के बाद व्यञ्जन वर्ण नहीं होगा तो केवल शब्द का अन्तिम स्वर ही टिसंज्ञक होगा। जैसे- दधि में टिसंज्ञक वर्ण हैं- **'इ'**।

14. उपधा संज्ञा

सूत्र- अलोऽन्त्यात् पूर्व उपधा (1.1.64)

पदच्छेद- अलः अन्त्यात् पूर्वः उपधा

सूत्रार्थ- अन्तिम वर्ण से पूर्व में रहने वाले वर्ण की **उपधा संज्ञा** होती है।

व्याख्या- किसी शब्द या धातु में जो अन्त्य वर्ण होगा, उसके ठीक पहले वाले वर्ण की उपधा संज्ञा होती है।

जैसे-

(i) राम- र् आ म् अ - यहाँ अन्तिम वर्ण है 'अ' तो अकार के ठीक पहले वाले वर्ण 'म्' की उपधा संज्ञा होगी।

(ii) 'गम्' में अन्तिम वर्ण मकार के पूर्व 'अकार' की उपधा संज्ञा होगी।

(iii) इसीप्रकार भिद् में 'इ' की, मुच् में 'उ' की, वृध् में 'ऋ' की उपधा संज्ञा होगी।

नोट- Second Last वर्ण उपधासंज्ञक होगा। वह वर्ण स्वर भी हो सकता है और व्यञ्जन भी।

15. नदी संज्ञा

सूत्र- यू स्त्र्याख्यौ नदी (1.4.3)

पदच्छेद- यू स्त्री आख्यौ नदी

सूत्रार्थ- 'यू' = (ई + ऊ) का अर्थ है ईकारान्त और ऊकारान्त

- **'स्त्र्याख्यौ'** का अर्थ है- नित्य स्त्रीलिङ्ग शब्द

इसप्रकार ईकारान्त तथा ऊकारान्त नित्यस्त्रीलिङ्ग शब्दों की नदी संज्ञा होती है।

उदाहरण- नदी, गौरी, वधू आदि नदीसंज्ञक पद हैं।

16. घि संज्ञा

सूत्र- शेषो घ्यसखि (1.4.7)

पदच्छेद- शेषः घि असखि

सूत्रार्थ- जिनकी नदी संज्ञा नहीं है, ऐसे ह्रस्व इकारान्त और ह्रस्व उकारान्त शब्दों की **घि संज्ञा** होती है। 'सखि' शब्द को छोड़कर।

उदाहरण- हरिः, भानुः, वारि, मधु आदि घिसंज्ञक हैं।

नोट- (i) 'पति' शब्द समास होने पर ही घिसंज्ञक होता है- जैसे- भूपतिः, सीतापतिः आदि। **'पतिः समास एव'**

17. पद संज्ञा

सूत्र- सुप्तिङन्तं पदम् (1.4.14)

पदच्छेद- सुप् तिङ् अन्तम् पदम्

सूत्रार्थ- सुबन्त (सुप् अन्त वाला) तथा तिङन्त (तिङ् अन्त वाला) शब्द की **पद संज्ञा** होती है।

व्याख्या-

(i) प्रातिपदिकों में प्रथमा से सप्तमी तक सु औ जस् आदि सुप् विभक्तियाँ लगाकर जो रामः, रामौ, रामाः आदि शब्दरूप बनते हैं, वे **सुबन्त पद** कहलाते हैं।

(ii) धातुओं से विभिन्न लकारों में तिप् तस् झि तथा त आताम् झ आदि 18 तिङ् प्रत्यय लगाकर जो पठति पठतः पठन्ति आदि धातुरूप बनते हैं, वे **तिङन्त पद** कहलाते हैं।

नोट- पद दो प्रकार के होते हैं-

(i) सुबन्त पद (शब्दरूप) रामः, हरिः, गुरुः आदि।

(ii) तिङन्त पद (धातुरूप) पठति, लभते, जानाति आदि।

18. संहिता संज्ञा

सूत्र- परः सन्निकर्षः संहिता (1.4.108)

पदच्छेद- परः सन्निकर्षः संहिता

सूत्रार्थ- वर्णों के अत्यधिक सामीप्य की **संहिता संज्ञा** होती है।

उदाहरण- मधु + अरिः = मध्वरिः (उ + अ)

रमा + ईशः = रमेशः (आ + ई)

19. सत् संज्ञा

सूत्र- तौ सत् (3.2.127)

सूत्रार्थ- शतृ एवं शानच् - इनकी **सत् संज्ञा** होती है।

20. प्रातिपदिक संज्ञा

सूत्र- अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् (1.2.45)

पदच्छेद- अर्थवत् अधातुः अप्रत्ययः प्रातिपदिकम्

सूत्रार्थ- धातुरहित, प्रत्ययान्तरहित सार्थक शब्दस्वरूप की प्रातिपदिक संज्ञा होती है।

उदाहरण- राम, कृष्ण, लता आदि।

नोट- कृत्तद्धितसमासाश्च (1.2.46) कृत् प्रत्ययान्त, तद्धितप्रत्ययान्त तथा समास भी प्रातिपदिक संज्ञक होते हैं।

जैसे- कारकः (कृत्), शालीयः (तद्धित), राजपुरुषः (समास) आदि।

21. प्रत्ययसंज्ञा

प्रत्यय- धातु और प्रातिपदिक (शब्द) के बाद जो जुड़ते हैं, उनकी प्रत्यय संज्ञा होती है।

यथा-

(i) भवति में 'भू' धातु है 'तिप्' प्रत्यय है।

(ii) पाठकः में पठ् धातु है 'ण्वुल्' प्रत्यय है।

(iii) रामस्य में राम प्रातिपदिक है 'ङस्' प्रत्यय है।

➢ धातु के अन्त में लगने वाले प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं-

1. **कृत् प्रत्यय -** क्त, क्तवतु, तुमुन् आदि।
2. **तिङ् प्रत्यय -** तिप्, तस्, झि आदि 18 प्रत्यय।

➢ प्रातिपदिक (शब्दों) से लगने वाले प्रत्यय हैं-

1. **सुप् प्रत्यय -** सु औ जस् आदि 21 प्रत्यय।
2. **स्त्रीप्रत्यय -** टाप्, ङीप्, ङीष् आदि।
3. **तद्धितप्रत्यय -** मतुप्, अण्, इनि आदि।

कृत् प्रत्यय- कृत् प्रत्यय धातु के अन्त में लगते हैं, और वे दो प्रकार के शब्द बनाते हैं।

1. अव्यय- क्त्वा, ल्यप्, तुमुन् आदि।

2. विशेषण- तव्यत्, अनीयर्, यत्, ण्यत्, क्यप्, शतृ, शानच्, क्त, क्तवतु आदि।

उदाहरण- पठ् + क्त = पठितः, पठ् + अनीयर् = पठनीयम्

तिङ् प्रत्यय- दसों लकारों के प्रत्ययों को तिङ्प्रत्यय कहा जाता है। ये दो प्रकार के हैं- परस्मैपदी और आत्मनेपदी।

परस्मैपदी तिङ् प्रत्यय- (9)			
प्रथम पुरुष	तिप्	तस्	झि
मध्यम पुरुष	सिप्	थस्	थ
उत्तम पुरुष	मिप्	वस्	मस्
आत्मनेपदी तिङ् प्रत्यय- (9)			
प्रथम पुरुष	त	आताम्	झ
मध्यम पुरुष	थास्	आथाम्	ध्वम्
उत्तम पुरुष	इट्	वहि	महिङ्

➢ इस प्रकार ये 18 प्रत्यय तिङ् कहलाते हैं। तिप् के 'ति' से लेकर महिङ् के 'ङ्' तक 'तिङ्' कहा गया।

सुप् प्रत्यय- सुप् प्रत्यय प्रातिपदिक से जुड़कर पद बनाते हैं। जैसे- 'राम' प्रातिपदिक से 'सु' लगेगा तो 'रामः' यह पद बनेगा।

➢ सुप् प्रत्यय 21 होते हैं।

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सु	औ	जस्
द्वितीया	अम्	औट्	शस्
तृतीया	टा	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ङे	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमी	ङसि	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	ङस्	ओस्	आम्
सप्तमी	ङि	ओस्	सुप्

स्त्रीप्रत्यय- पुंलिङ्ग शब्द को स्त्रीलिङ्ग बनाने के लिए जिन प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है, उन्हें स्त्रीप्रत्यय कहा जाता है।

जैसे- टाप्, डाप्, चाप्, ङीप्, ङीष्, ङीन्, ऊङ्, ति आदि।

उदाहरण-

अज + टाप् = अजा छात्र + टाप् = छात्रा

राजन् + ङीप् = राज्ञी कुमार + ङीप् = कुमारी

नर्तक + ङीष् = नर्तकी गौर + ङीष् = गौरी

नृ + ङीन् = नारी युवन् + ति = युवतिः आदि।

तद्धित प्रत्यय- शब्द के अन्त में लगने वाले प्रत्यय तद्धित प्रत्यय कहलाते हैं।

यथा- मतुप्, इनि, त्व, तल्, ष्यञ्, तसिल् आदि।

उदाहरण- बुद्धि + मतुप् = बुद्धिमत् (बुद्धिमान्)

महत् + त्व = महत्त्वम्

22. स्थानी और आदेश

किसी वर्ण को या शब्द को हटाकर जब उसकी जगह, कोई दूसरा वर्ण या शब्द आकर बैठ जाता है, तब जिसे हटाया जाता है, उसे **'स्थानी'** कहते हैं।

➢ जो स्थानी की जगह आकर बैठ जाता है, उसे आदेश कहते हैं। व्याकरणशास्त्र में आदेश को शत्रु के समान कहा गया है- **''शत्रुवदादेशः''**

जैसे- प्रति + एकः = प्रत्येकः

यहाँ 'इ' को हटाकर उसके स्थान पर 'य्' बैठ गया है, अतः 'इ' स्थानी है तथा 'य्' आदेश है।

23. निमित्त

एक वर्ण को हटाकर उसकी जगह दूसरे वर्ण का आदेश जिसके कारण होता है, उसे **निमित्त** कहा जाता है।

जैसे- प्रति + एकः = प्रत्येकः में 'इ' स्थानी के स्थान पर 'य्' आदेश 'ए' स्वर (अच्) के कारण हुआ है अतः 'ए' निमित्त है।

24. आगम

जो वर्ण किसी वर्ण को हटाये बिना आकर बैठ जाता है, तो उसे हम **'आगम'** कहते हैं। **''मित्रवदागमः''** अर्थात् मित्र की तरह आगमन आगम कहा जाता है। ''सम् + सुट् + कृ + क्त'' = **संस्कृत** यहाँ सुट् का आगम हुआ है।

25. उपसर्ग संज्ञा

सूत्र- ''उपसर्गाः क्रियायोगे'' (1.4.59)

सूत्रार्थ- प्रादि जब किसी क्रिया के साथ लगते हैं तब इनकी उपसर्ग संज्ञा होती है।

➢ उपसर्गों की संख्या 22 है-

प्र परा अप सम् अनु अव निस् निर् दुस् दुर् वि आङ् नि अधि अपि अति सु उत् अभि प्रति परि उप।

26. कारक

कारक- कृ + ण्वुल् = कारकम् अर्थात् क्रियां करोति इति कारकम्।

➢ जिनका क्रिया के साथ सीधा सम्बन्ध होता है, या जो क्रिया की सिद्धि में सहायक होते हैं, उन्हें **'कारक'** कहा जाता है। **''क्रियाजनकत्वं कारकत्वम्''**, **''क्रियान्वयित्वं कारकत्वम्''**

➢ कारक छः होते हैं- 1. कर्ता 2. कर्म 3. करण 4. सम्प्रदान 5. अपादान 6. अधिकरण।

कर्ता कर्म च करणं सम्प्रदानं तथैव च।

अपादानाधिकरणे इत्याहुः कारकाणि षट्॥

➢ संस्कृत व्याकरण में सम्बन्ध और सम्बोधन को कारक नहीं माना जाता।

27. विभक्तियाँ

विभक्ति- जिसके द्वारा कारकों और संख्याओं को विभक्त किया जाता है, उसे विभक्ति कहते हैं। इसीलिए सुप् और तिङ् को भी विभक्ति कहते हैं।

- संस्कृत व्याकरण में **विभक्तियाँ सात** होती हैं-

1. प्रथमा 2. द्वितीया 3. तृतीया 4. चतुर्थी 5. पञ्चमी 6. षष्ठी 7. सप्तमी

- सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति होती है।

28. पुरुष

संस्कृत में तीन पुरुष होते हैं-

1. प्रथमपुरुष या अन्य पुरुष- उत्तम पुरुष के अहं, आवां, वयम् और मध्यम पुरुष के त्वम्, युवां, यूयम् इन छह शब्दों को छोड़कर संस्कृत वाङ्मय के सभी कर्तृपद प्रथम पुरुष के अन्तर्गत गिने जाते हैं।

यथा- भवान् , भवती, बालकः, बालिका, सः, सा, नरः, वानरः, पिता, पुत्रः, इत्यादि।

और इन सभी कर्तृ पदों के साथ प्रथम पुरुष की क्रिया 'पठति, पठतः, पठन्ति' आदि क्रियाओं का ही प्रयोग होता है।

2. मध्यम पुरुष- जिससे बात कही जाय, वह मध्यम पुरुष है। इसमें 'त्वम्, युवाम्, यूयम्' कर्तृपद आते हैं। इनके साथ मध्यमपुरुष की क्रिया क्रमशः **त्वम्** के साथ पठसि **युवां** के साथ पठथः तथा **यूयं** के साथ पठथ का प्रयोग होगा।

3. उत्तम पुरुष- जो बात को कहता है; वह उत्तम पुरुष है। इसके अन्तर्गत 'अहं, आवाम्, वयम्' कर्तृपद आते हैं। इनके साथ उत्तम पुरुष की क्रिया क्रमशः **अहं** के साथ 'पठामि' **आवां** के साथ पठावः **वयं** के साथ 'पठामः' का प्रयोग होता है।

29. वचन

'वचन' का अर्थ होता है- संख्या।

संस्कृत में तीन वचन होते हैं-

1. **एकवचन-** एक वस्तु या एक व्यक्ति का बोध कराने के लिए एकवचन का प्रयोग होता है, जैसे- बालकः, हरिः, गुरुः, विद्यालयः आदि।
2. **द्विवचन-** दो व्यक्तियों या दो वस्तुओं के लिए द्विवचन का प्रयोग होता है। जैसे- बालकौ, हरी, गुरू, विद्यालयौ, पुस्तके आदि।
3. **बहुवचन-** तीन या तीन से अधिक व्यक्तियों या वस्तुओं का बोध कराने के लिए बहुवचन का प्रयोग किया जाता है। **''बहुषु बहुवचनम्''**

जैसे- बालकाः, हरयः, गुरवः, विद्यालयाः, पुस्तकानि आदि।

30. लिङ्ग

- 'लिङ्ग' शब्द का अर्थ है- चिह्न, लक्षण या पहचान।

संस्कृत में तीन लिङ्ग होते हैं-

1. पुंलिङ्ग- जिससे पुरुष जाति का बोध होता है।

जैसे- छात्रः, बालकः, मुनिः, विद्यालयः, काकः, व्याघ्रः आदि।

2. स्त्रीलिङ्ग- जिससे स्त्रीजाति का बोध होता है।

जैसे- छात्रा, बालिका, गौरी, नदी आदि।

3. नपुंसकलिङ्ग- जिससे न पुरुष जाति का बोध हो और न स्त्री जाति का बोध हो, उसे नपुंसकलिङ्ग कहते हैं।

जैसे- फलम्, जलम्, गृहम्, पुष्पम्, नेत्रम्, वारि, दधि, मधु आदि।

31. लकार

संस्कृत में दस लकार होते हैं-

1. **लट्लकार -** (वर्तमान काल) वर्तमान काल को सूचित करने के लिए लट्लकार का प्रयोग होता है।
2. **लिट्लकार-** (अनद्यतन परोक्षभूतकाल) परोक्षभूतकाल अर्थात् बहुत प्राचीनकाल को सूचित करने के लिए लिट्लकार की क्रिया का प्रयोग होता है।
3. **लुट्लकार-** (अनद्यतन भविष्यत् काल) आज के पश्चात् भविष्यकाल को सूचित करने के लिए लुट्लकार का प्रयोग होता है।
4. **लृट् -** (सामान्य भविष्यत् काल)
5. **लेट्लकार -** (संशय अर्थ में) लेट्लकार का प्रयोग वेदों में होता है, लौकिक संस्कृत में नहीं।
6. **लोट्लकार -** (प्रेरणा तथा आज्ञा अर्थ में)
7. **लङ्लकार -** (अनद्यतन भूतकाल) अब से पहले के भूतकाल को सूचित करने के लिए लङ् लकार का प्रयोग किया जाता है।
8. **लिङ् लकार-** इसके दो भेद हैं-

(i) विधिलिङ् - (विधि, निमन्त्रण, आमन्त्रण, सम्प्रश्न, प्रार्थना, चाहिए अर्थ में)

(ii) आशीर्लिङ् - (आशीर्वाद अर्थ में)

9. लुङ्लकार - (सामान्यभूत) सामान्यभूतकाल को सूचित करने के लिए।

10. लृङ्लकार- (हेतु हेतुमद्भाव भूत) जहाँ एक क्रिया का कारण दूसरी क्रिया हो।

32. धातुसंज्ञा

सूत्र- भूवादयो धातवः (1.3.1)

क्रियावाचक भू आदि की धातुसंज्ञा होती है। ये सभी धातुयें पाणिनीय धातुपाठ में दी गयी हैं। इनकी संख्या 1970 अर्थात् लगभग 2000 है।

➢ धातुओं के तीन प्रकार से रूप चलते हैं-

(i) परस्मैपदी √पठ्- पठति, पठतः, पठन्ति आदि।

(ii) आत्मनेपदी √लभ- लभते, लभेते, लभन्ते आदि।

(iii) उभयपदी √ज्ञा- जानाति, जानीतः, जानन्ति
जानीते, जानाते, जानते।

33. गण (धातुओं के विभाग)

संस्कृत में दस गण होते हैं। संस्कृत व्याकरणशास्त्र में लगभग 2000 धातुयें हैं; प्रत्येक धातु किसी न किसी गण में ही परिगणित है।

गण		धातुयें
1.	भ्वादिगण	1035 धातुयें
2.	अदादिगण	72 धातुयें
3.	जुहोत्यादिगण	24 धातुयें
4.	दिवादिगण	140 धातुयें
5.	स्वादिगण	35 धातुयें
6.	तुदादिगण	157 धातुयें
7.	रुधादिगण	25 धातुयें
8.	तनादिगण	10 धातुयें
9.	क्र्यादिगण	61 धातुयें
10.	चुरादिगण	411 धातुयें
	कुल धातुयें –	**1970**

भ्वाद्यदादि जुहोत्यादिर्दिवादिः स्वादिरेव च।
तुदादिश्च रुधादिश्च तनादिक्रीचुरादयः॥

➢ **भ्वादिगण की प्रमुख धातुएँ-** भू (होना), हस् (हँसना), पठ् (पढ़ना), रक्ष् (रक्षा करना), वद् (बोलना), पच् (पकाना), नम् (झुकना), गम् (जाना), दृश् (देखना), सद् (बैठना), स्था (रुकना), पा (पीना), घ्रा (सूँघना), स्मृ (स्मरण करना), जि (जीतना), श्रु (सुनना), वस् (रहना), सेव् (सेवा करना), लभ (पाना), वृध् (बढ़ना), मुद् (प्रसन्न होना), सह् (सहन करना), याच् (माँगना), नी (ले जाना) आदि।

➢ **अदादिगण की प्रमुख धातुएँ-** अद् (खाना), अस् (होना), ब्रू (कहना), दुह् (दुहना), रुद् (रोना), स्वप् (सोना), हन् (मारना), इ (जाना), आस् (बैठना), शी (सोना) आदि।

➢ **जुहोत्यादिगण की प्रमुख धातुएँ-** हु (हवन करना), भी (डरना), दा (देना), धा (धारण), करना आदि।

➢ **दिवादिगण की प्रमुख धातुएँ-** दिव् (चमकना), नृत् (नाचना), नश् (नष्ट होना), भ्रम् (घूमना), युध् (लड़ना), जन् (उत्पन्न होना) आदि।

➢ **स्वादिगण की प्रमुख धातुएँ-** सु (स्नान करना या रस निकालना), आप् (पाना), शक् (सकना) आदि।

➢ **तुदादिगण की प्रमुख धातुएँ-** तुद् (दुःख देना), इष् (चाहना), स्पृश् (छूना), प्रच्छ् (पूँछना), लिख् (लिखना), मृ (मरना), मुच् (छोड़ना) आदि।

➢ **रुधादिगण की प्रमुख धातुएँ-** रुध् (ढकना, रोकना), भुज् (पालन करना, भोजन करना), आदि।

➢ **तनादिगण की प्रमुख धातुएँ-** तन् (फैलाना), कृ (करना) आदि।

➢ **क्र्यादिगण की प्रमुख धातुएँ-** क्री (मोल लेना), ग्रह (पकड़ना), ज्ञा (जानना) आदि।

➢ **चुरादिगण की प्रमुख धातुएँ-** चुर् (चुराना), चिन्त् (सोचना), कथ् (कहना), भक्ष् (खाना) आदि।

स्वरसन्धि तालिका

सन्धि का नाम	सन्धिसूत्र	सूत्रार्थ	उदाहरण
1. यण् सन्धि	इको यणचि	**इक् + अच् = यण्**	
		इ/ई + अच् (असमान) =य्	यदि + अपि = यद्यपि
		उ/ऊ + अच् (असमान) = व्	मधु + अरिः = मध्वरिः
		ऋ ॠ + अच् (असमान) = र्	पितृ + आदेशः = पित्रादेशः
		ऌ + अच् (असमान) = ल्	ऌ + आकृतिः = लाकृतिः
2. अयादि सन्धि	एचोऽयवायावः	**एच् + अच् = अयवायाव**	
		ए + अच् = अय्	ने + अनम् = नयनम्
		ओ + अच् = अव्	पो + अनः = पवनः
		ऐ + अच् = आय्	नै + अकः = नायकः
		औ + अच् = आव्	पौ + अकः = पावकः
3. गुण सन्धि	आद्गुणः	**आत् + अच् = गुण**	
		अ/आ + इ/ई = ए	रमा + ईशः = रमेशः
		अ/आ + उ/ऊ = ओ	हित + उपदेशः = हितोपदेशः
		अ/आ + ऋ/ॠ = अर्	देव + ऋषिः = देवर्षिः
		अ/आ + ऌ = अल्	तव + ऌकारः = तवल्कारः
4. वृद्धि सन्धि	वृद्धिरेचि	**आत् + एच् = वृद्धि**	
		अ/आ + ए/ऐ = ऐ	सदा + एव = सदैव
			महा + ऐश्वर्यम् = महैश्वर्यम्
		अ/आ + ओ/औ = औ	जल + ओघः = जलौघः
			महा + औषधिः = महौषधिः
5. दीर्घ सन्धि	अकः सवर्णे दीर्घः	**अक् + अक् = दीर्घः**	
		अ/आ + अ/आ = आ	हिम + आलयः = हिमालयः
		इ/ई + इ/ई = ई	रवि + इन्द्रः = रवीन्द्रः
		उ/ऊ + उ/ऊ = ऊ	भानु + उदयः = भानूदयः
		ऋ ॠ + ऋ/ॠ = ॠ	मातृ + ऋणम् = मातॄणम्
6. पूर्वरूप सन्धि	एङः पदान्तादति	**एङ् + अ = पूर्वरूप**	
		ए + अ = (ऽ) पूर्वरूप	हरे + अव = हरेऽव
		ओ + अ = (ऽ) पूर्वरूप	विष्णो + अव = विष्णोऽव
7. पररूप सन्धि	एङि पररूपम्	**अवर्णान्त उपसर्ग + एङादिधातु = पररूप**	प्र + एजते = प्रेजते
		प्र, उप + ए, ओ धातु = पररूप	उप + ओषति = उपोषति
8. प्रकृतिभाव	प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यम्	प्लुत/प्रगृह्य + अच् = प्रकृतिभाव	हरी + एतौ = हरी एतौ
			विष्णू + इमौ = विष्णू इमौ
			गङ्गे + अमू = गङ्गे अमू

स्वरसन्धि के कुछ अपवाद सूत्र/वार्तिक

(1) अक्षादूहिन्यामुपसंख्यानम् (वा.) 'अक्ष' शब्द के बाद 'ऊहिनी' शब्द के आने पर पूर्व और पर दोनों के (अ+ऊ) स्थान पर वृद्धिसंज्ञक 'औ' वर्ण आदेश होता है।

अक्ष + ऊहिनी
अक्ष् अ + ऊहिनी
अक्ष् औ हिनी

अक्षौहिणी (सेना)

नोट- पूर्वपदात्संज्ञायामगः (8.4.3) सूत्र से 'नकार' के स्थान पर 'णकार' आदेश होकर 'अक्षौहिणी' प्रयोग सिद्ध हो जाता है।

- अक्षौहिणी सेना होती है, जिसमें 21870 रथ, 21870 हाथी, 65610 घोड़े और 109350 पैदल सैनिक होते हैं।

(2) प्रादूहोढोढ्येषैष्येषु (वा.) - 'प्र' उपसर्ग के बाद ऊहः, ऊढः, ऊढिः, एषः, और एष्यः पद आयें तो पूर्व और पर दोनों के स्थान पर वृद्धिसंज्ञक वर्ण आदेश होते हैं।

(i) प्र + ऊहः
प्र् अ + ऊहः
प्र् औ हः

प्रौहः (उत्तम अर्थ करने वाला)

(ii) प्र + ऊढः
प्र् अ + ऊढः
प्र औ ढः

प्रौढः (परिपक्व)

(iii) प्र + ऊढिः
प्र् अ + ऊढिः
प्र् औ ढिः

प्रौढिः (परिपक्वता, प्रौढता)

उपर्युक्त उदाहरणों में गुण सन्धि हो रही थी, किन्तु यहाँ गुण को बाधकर वृद्धिसन्धि हो रही है।

(iv) प्र + एषः
प्र् अ + एषः
प्र् ऐ षः

प्रैषः (प्रेरणा)

(v) प्र + एष्यः
प्र् अ + एष्यः
प्र् ऐ ष्यः

प्रैष्यः (प्रेरणीय/सेवक आदि)

नोट- इन दोनों उदाहरणों में वृद्धि सन्धि तो हो रही थी किन्तु "एङि पररूपम्" सूत्र से पररूप भी प्राप्त हो रहा था। यदि पररूप हो जाता तो प्रेषः, प्रेष्यः ऐसे अशुद्ध रूप बन जाते।

(3) ऋते च तृतीयासमासे (वा.) - यदि पूर्व में अवर्ण हो और बाद में 'ऋत' शब्द हो और दोनों शब्दों में तृतीया तत्पुरुष समास हुआ हो तो पूर्व और पर दोनों वर्णों के स्थान पर वृद्धिसंज्ञक वर्ण हो जाता है।

सुखेन ऋतः = **सुखार्तः** (तृतीया तत्पुरुष समास)
सुख + ऋतः = **सुखार्तः** (सुख से युक्त) - वृद्धिसन्धि
दुःख + ऋतः = **दुःखार्तः** (दुःख से युक्त) - वृद्धिसन्धि
कष्ट + ऋतः = **कष्टार्तः** (कष्ट से युक्त) - वृद्धिसन्धि

किन्तु परमश्चासौ ऋतः = परमर्तः यहाँ वृद्धि नहीं हुई क्योंकि यहाँ तृतीया तत्पुरुष समास नहीं, बल्कि कर्मधारय समास है।

परम + ऋतः = परमर्तः (गुण सन्धि)

4. प्रवत्सतरकम्बलवसनार्णदशानामृणे (वार्तिक)- प्र, वत्सतर, कम्बल, वसन, ऋण तथा दश- इन छह शब्दों के बाद यदि 'ऋण' शब्द आये तो पूर्व और पर दोनों के स्थान पर वृद्धिसंज्ञक वर्ण हो जाता है।

(i) प्र + ऋणम्
प्र् अ + ऋणम्
प्र आर् णम्

प्रार्णम् (अधिक ऋण)

(ii) वत्सतर + ऋणम् = **वत्सतरार्णम्** (बछड़े के लिए ऋण)
(iii) कम्बल + ऋणम् = **कम्बलार्णम्** (कम्बल के लिए ऋण)
(iv) वसन + ऋणम् = **वसनार्णम्** (वस्त्र के लिए ऋण)
(v) ऋण + ऋणम् = **ऋणार्णम्** (ऋण चुकाने के लिए ऋण)
(vi) दश + ऋणम् = **दशार्णम्** (दस प्रकार के जल वाला देश)

5. उपसर्गादृति धातौ- अवर्णान्त उपसर्ग के बाद 'ऋ' से प्रारम्भ होने वाली धातु हो तो पूर्व और पर के स्थान पर वृद्धिसंज्ञक एक आदेश होता है।

जैसे- प्र + ऋच्छति = **प्रार्च्छति**

उप + ऋच्छति = **उपार्च्छति**

प्र + ऋणोति = **प्रार्णोति**

प्र + ऋञ्जते = **प्रार्ञ्जते**

(6) शकन्ध्वादिषु पररूपं वाच्यम् (वार्तिक)- शकन्धु आदि गण में टिसंज्ञक पूर्व और पर वर्णों के स्थान पर पररूप सन्धि होती है।

जैसे- (i) शक + अन्धुः = **शकन्धुः** (शक नामक देश का कूप)

(ii) कर्क + अन्धुः = **कर्कन्धुः** (कर्क नामक राजा का कूप)

(iii) मनस् + ईषा = **मनीषा** (बुद्धि)

(iv) मार्त + अण्डः = **मार्तण्डः** (सूर्य)

(v) पतत् + अञ्जलिः = **पतञ्जलिः** (पतञ्जलि)

(7) स्वादीरेरिणोः (वार्तिक)- जब 'स्व' शब्द के बाद 'ईर' और 'ईरिन्' आदि शब्द आयें तो 'स्व' के अकार तथा 'ईर्' और 'ईरिन्' के ईकार के स्थान में ''ऐ'' वृद्धि हो जाती है।

जैसे- स्व + ईरः = **स्वैरः** (स्वेच्छाचारी)

स्व + ईरिणी = **स्वैरिणी** (स्वेच्छाचारिणी)

स्व + ईरम् = **स्वैरम्** (स्वेच्छाचारिता)

स्व + ईरी = **स्वैरी** (स्वेच्छाचारी)

व्यञ्जन (सन्धि) सन्धि

व्यञ्जन सन्धि- व्यञ्जन के बाद स्वर या व्यञ्जन आने पर जो विकार होता है, उसे व्यञ्जन सन्धि कहते हैं।

जैसे-

(i) वाक् + ईशः = वागीशः (व्यञ्जन + स्वर)

(ii) सत् + चित् = सच्चित् (व्यञ्जन + व्यञ्जन)

स्पष्टीकरण- यहाँ प्रथम उदाहरण में 'क्' व्यञ्जन के बाद 'ई' स्वर है तथा दूसरे उदाहरण में 'त्' व्यञ्जन के बाद 'च्' व्यञ्जन है। इससे स्पष्ट होता है कि व्यञ्जन वर्णों के बाद स्वर आये चाहे व्यञ्जन दोनों ही स्थितियों में व्यञ्जन सन्धि होगी।

1. श्चुत्व सन्धि

सूत्र- स्तोः श्चुना श्चुः

सूत्र विश्लेषण-

स्तु - सकार तवर्ग = स् त् थ् द् ध् न्

श्चु - शकार चवर्ग = श् च् छ् ज् झ् ञ्

सूत्रार्थ- सकार या तवर्ग (त् थ् द् ध् न्) के पहले या बाद में शकार या चवर्ग (च् छ् ज् झ् ञ्) का योग होने पर स् के स्थान पर श् तथा तवर्ग के स्थान पर चवर्ग हो जाता है।

स्थानी	आदेश	योग
स्	श्	श् या
त्	च्	चवर्ग का
थ्	छ्	योग पहले हो
द्	ज्	या बाद में।
ध्	झ्	
न्	ञ्	

उदाहरण-

रामस् + शेते = **रामश्शेते**

स्पष्टीकरण- इस उदाहरण में 'रामस्' में विद्यमान सकार के स्थान पर शकार हो गया; क्योंकि 'शेते' में शकार आ रहा था इसलिए।

ध्यान दें- इस सूत्र में सकार के बाद शकार आये ऐसा नहीं कहा गया है; अपितु योग होने पर कहा गया है। 'योग' का अर्थ है- 'मिलना'। तात्पर्य यह हुआ कि- 'स्तु' (सकार तवर्ग) पहले हो श्चु बाद में हो या श्चु (शकार चवर्ग) पहले हो 'स्तु' बाद में हो, बदलेगा 'स्तु' ही। जैसे-

(i) सत् + चित् = **सच्चित्**

(ii) याच् + ना = **याच्ञा**

- उपर्युक्त उदाहरण में 'सत्' के त् का 'चित्' के 'च्' से योग होने पर 'सत्' के 'त्' के स्थान पर 'च्' होकर 'सच्चित्' बन गया।
- दूसरे उदाहरण में 'याच्' के 'च्' का 'ना' के 'न्' से योग होने पर 'न्' के स्थान पर चवर्ग का 'ञ्' हो गया। जबकि 'ना' परवर्ण है तब भी।
- इससे सिद्ध हुआ कि सकार और तवर्ग चाहे पूर्व में हो चाहे पर में उनके स्थान पर ही शकार या चवर्ग आदेश के रूप में होंगे।

अवश्य देखें- श्चुत्व सन्धि में हमेशा-

स् के स्थान पर **श्**   **त्** के स्थान पर **च्**

थ् के स्थान पर **छ्**   **द्** के स्थान पर **ज्**

ध् के स्थान पर **झ्**   **न्** के स्थान पर **ञ्** होगा।

स्तु (सकार तवर्ग) स्थानी हैं, श्चु (शकार चवर्ग) आदेश हैं।

अन्य उदाहरण-

सद् + जनः = **सज्जनः**
शार्ङ्गिन् + जयः = **शार्ङ्गिञ्जयः**
दुस् + चरित्रः = **दुश्चरित्रः**
उत् + चारणम् = **उच्चारणम्**
कस् + चित् = **कश्चित्**
बृहद् + झरः = **बृहज्झरः**
उद् + ज्वलः = **उज्ज्वलः**

2. ष्टुत्व सन्धि

सूत्र- 'ष्टुना ष्टुः' (8.4.41)

सूत्रार्थ- स्तु (सकार तवर्ग) के स्थान पर 'ष्टु' (षकार टवर्ग) होता है, 'ष्टु' के योग में।

स्तु = सकार तवर्ग- स् त् थ् द् ध् न्

ष्टु = षकार टवर्ग- ष् ट् ठ् ड् ढ् ण्

अर्थात् सकार या तवर्ग के पहले या बाद में षकार या टवर्ग (ट् ठ् ड् ढ् ण्) का योग होने पर स् को ष् तथा तवर्ग को टवर्ग हो जाता है।

स्थानी	आदेश	योग
स्	ष्	षकार या
त्	ट्	टवर्ग का योग
थ्	ठ्	होने पर
द्	ड्	
ध्	ढ्	
न्	ण्	

ध्यान रहे- सकार तवर्ग के पहले या सकार तवर्ग के बाद में षकार टवर्ग होने पर **स्** के स्थान पर '**ष्**'।

'**त्**' के स्थान पर '**ट्**'। '**थ्**' के स्थान पर '**ठ्**'।

'**द्**' के स्थान पर '**ड्**'। '**ध्**' के स्थान पर '**ढ्**'।

'**न्**' के स्थान पर '**ण्**' होता है।

उदाहरण-

1. तत् + टीका
   तट् + टीका (त् के स्थान पर ट्)
   तट्टीका
2. रामस् + षष्ठः
   रामष् + षष्ठः (स् के स्थान पर ष्)
   रामष्षष्ठः
3. उद् + डयनम्
   उड् + डयनम् (द् के स्थान पर ड्)
   उड्डयनम्
4. कृष् + नः
   कृष् + णः (न् के स्थान पर ण्)
   कृष्णः
5. दुष् + तः
   दुष् + टः (त् के स्थान पर ट्)
   दुष्टः
6. चक्रिन् + ढौकसे
   चक्रिण् + ढौकसे (न् के स्थान पर ण्)
   चक्रिण्ढौकसे
7. विष् + नुः
   विष् + णुः (न् के स्थान पर ण्)
   विष्णुः
8. पेष् + ता
   पेष् + टा (त् के स्थान पर ट्)
   पेष्टा

3.1 जश्त्व सन्धि

सूत्र- झलां जशोऽन्ते (8.2.39)

सूत्रविवरण- पदान्त झल् के स्थान पर 'जश्' आदेश होता है।

➢ 'झल्' एक प्रत्याहार है जिसमें - वर्णों के पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे और ऊष्म वर्ण आते हैं-

झल् = झ भ घ ढ ध
ज ब ग ड द
ख फ छ ठ थ
च ट त क प
श ष स ह

जश् = ज ब ग ड द (वर्गों के तीसरे अक्षर)

स्थानी (झल्)	आदेश (जश्)
(i) च् छ् ज् झ् श्	ज्
(ii) प् फ् ब् भ्	ब्
(iii) क् ख् ग् घ् ह्	ग्
(iv) ट् ठ् ड् ढ् ष्	ड्
(v) त् थ् द् ध् स्	द्

ध्यान रहे- झल् प्रत्याहार के बाद अच् हो, या हल् हो, या कोई वर्ण हो या न हो तो भी जश् होगा।

नोट- जश्त्व सन्धि दो प्रकार की होती है-

(i) पदान्त जश्त्व सन्धि

(ii) अपदान्त जश्त्व सन्धि

उदाहरण-

1. अच् + अन्तः
   अज् + अन्तः
   अजन्तः

2. वाक् + ईशः
   वाग् + ईशः
   वागीशः

3. षट् + आननः
   षड् + आननः
   षडाननः

4. दिक् + अम्बरः
   दिग् + अम्बरः
   दिगम्बरः

5. एतत् + मुरारिः
   एतद् + मुरारिः
   एतद् मुरारिः

6. सुप् + ईशः
   सुब् + ईशः
   सुबीशः

7. जगत् + ईशः
   जगद् + ईशः
   जगदीशः

8. वाक् + अत्र
   वाग् + अत्र
   वागत्र

9. दिक् + गजः
   दिग् + गजः
   दिग्गजः

10. चित् + आनन्दः
    चिद् + आनन्दः
    चिदानन्दः

11. सुप् + अन्तः
    सुब् + अन्तः
    सुबन्तः

12. कृत् + अन्तः
    कृद् + अन्तः
    कृदन्तः

13. तिप् + अन्तः
    तिब् + अन्तः
    तिबन्तः

14. अप् + जम्
    अब् + जम्
    अब्जम्

15. महत् + दानम्
    महद् + दानम्
    महद्दानम्

3.2 अपदान्त जश्त्व सन्धि

सूत्र- झलां जश् झशि (8.4.53)

सूत्रविश्लेषण- झलाम् - झल् वर्णों के स्थान पर

जश् - जश् वर्ण होते हैं

झशि - झश् वर्णों के (बाद) में आने पर

सूत्रार्थ- झल् वर्णों के बाद झश् वर्णों के आने पर झल् के स्थान पर जश् होगा।

(i) 'झल्' एक प्रत्याहार है, जिसमें वर्गों के 1,2,3,4 और श् ष् स् ह् आते हैं।

झल् = झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द
ख फ छ ठ थ च ट त क प
श ष स ह

(ii) 'जश्' एक प्रत्याहार है, जिसमें वर्गों के तीसरे वर्ण आते हैं

जश् = ज ब ग ड द।

(iii) 'झश्' भी एक प्रत्याहार है जिसमें वर्गों के तीसरे और चौथे वर्ण आते हैं।

झश् = झ भ घ ढ ध
ज ब ग ड द

स्थानी (झल्)	आदेश (जश्)
क् ख् ग् घ् ह्	ग्
च् छ् ज् झ् श्	ज्
ट् ठ् ड् ढ् ष्	ड्
त् थ् द् ध् स्	द्
प् फ् ब् भ्	ब्

ध्यान दें- 'स्थानेऽन्तरतमः' की सहायता से उच्चारणस्थान की साम्यता को लेकर ज् ब् ग् ड् द् (जश्) आदेश होता है।

उदाहरण-

(1) क्रुध् + धः
    क्रुद् + धः
    क्रुद्धः

(2) शुध् + धः
    शुद् + धः
    शुद्धः

(3) युध् + धः
    युद् + धः
    युद्धः

(4) लभ् + धः
    लब् + धः
    लब्धः

(5) दुह् + धम्
    दुग् + धम्

(6) वृध् + धिः
    वृद् + धिः

दुग्धम् **वृद्धिः**

(7) रुणध् + धिः (8) बोध् + धा

रुणद् + धिः बोद् + धा

रुणद्धिः **बोद्धा**

4. चर्त्व सन्धि

सूत्र- खरि च (8.4.55)

सूत्रार्थ- यदि झल् के बाद खर् आये तो झल् के स्थान पर 'चर्' होगा।

- 'झल्' एक प्रत्याहार है जिसमें वर्गों के प्रथम, द्वितीय, तृतीय चतुर्थ, एवं श ष स ह वर्ण आते हैं।
- **झल्** = झ् भ् घ् ढ् ध्
  ज् ब् ग् ड् द्
  ख् फ् छ् ठ् थ्
  च् ट् त् क् प्
  श् ष् स् ह्
- 'खर्' एक प्रत्याहार है जिसमें वर्गों के प्रथम, द्वितीय वर्ण और श् ष् स् आते हैं।
  खर् = ख् फ् छ् ठ् थ्
  च् ट् त् क् प्
  श् ष् स्
- 'खरि च' सूत्र का सम्पूर्ण अर्थ करने के लिए 'झलाम्' और 'चर्' की अनुवृत्ति आती है।

स्थानी (झल्)	आदेश (चर्)	साम्य (उच्चारण स्थान)	परवर्ण (खर्)
क् ख् ग् घ्	क्	कण्ठ	ख् फ् छ्
च् छ् ज् झ्	च्	तालु	ठ् थ् च्
ट् ठ् ड् ढ्	ट्	मूर्धा	ट् त् क्
त् थ् द् ध्	त्	दन्त	प् श् ष्
प् फ् ब् भ्	प्	ओष्ठ	स्

- श् ष् स् के स्थान पर श् ष् स् आदेश होगा

उदाहरण-

(1) सद् + कारः (2) सद् + पात्रम्

सत् + कारः सत् + पात्रम्

सत्कारः **सत्पात्रम्**

(3) दिग् + पालः (4) भेद् + तुम्

दिक् + पालः भेत् तुम्

दिक्पालः **भेत्तुम्**

(5) छेद् + तव्यम् (6) लिभ् + सा

छेत् + तव्यम् लिप् + सा

छेत्तव्यम् **लिप्सा**

5. अनुस्वार सन्धि

सूत्र- मोऽनुस्वारः (8.3.23)

सूत्रार्थ- पदान्त 'म्' के बाद कोई भी व्यञ्जन (हल्) आये तो 'म्' के स्थान पर अनुस्वार (ं) हो जाता है।

पूर्ववर्ण	**परवर्ण**	**सन्धिवर्ण**
पदान्त मकार	हल्	ं अनुस्वार

उदाहरण-

(i) हरिम् + वन्दे = **हरिं वन्दे**

(ii) त्वम् + करोषि = **त्वं करोषि**

(iii) रामम् + भजामि = **रामं भजामि**

(iv) जलम् + वहति = **जलं वहति**

(v) धनम् + यच्छ = **धनं यच्छ**

(vi) दुःखम् + सहते = **दुःखं सहते**

6. तोर्लि सन्धि

सूत्र- तोर्लि (8.4.60)

सूत्रविश्लेषण- तोः - तवर्ग के बाद

लि - ल् वर्ण हो तो

परसवर्ण - परसवर्ण 'ल्' हो जाता है।

- 'अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः' से 'परसवर्ण' की अनुवृत्ति।

सूत्रार्थ- यदि तवर्ग (त् थ् द् ध् न्) के बाद 'ल्' वर्ण आये तो तवर्ग के स्थान पर 'ल्' हो जाता है।

पूर्ववर्ण	**परवर्ण**	**सन्धिवर्ण**
त् थ् द् ध् न्	ल्	ल्

उदाहरण-

(i) उद् + लिखितम् (ii) तद् + लीनः

उल् + लिखितम् तल् + लीनः

उल्लिखितम् **तल्लीनः**

(iii) उद् + लेखः (iv) विद्वान् + लिखति

उल् + लेखः विद्वाल्ँ + लिखति

उल्लेखः

(v) तद् + लयः
तल् + लयः
तल्लयः

(vi) महान् + लाभः
महाँल् + लाभः
महाँल्लाभः

(vii) विपद् + लीनः
विपल् + लीनः
विपल्लीनः

(viii) जगद् + लीयते
जगल् + लीयते
जगल्लीयते

(ix) यद् + लक्षणम्
यल् + लक्षणम्
यल्लक्षणम्

(x) विद्युद् + लेखा
विद्युल् + लेखा
विद्युल्लेखा

(xi) धनवान् + लुनीते
धनवालँ लुनीते
धनवाँल्लुनीते

विद्वाँल्लिखति

7. परसवर्ण सन्धि

सूत्र- अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः (8.4.58)

सूत्रविश्लेषण-

अनुस्वारस्य- अनुस्वार (ं) के स्थान पर

परसवर्णः - परसवर्ण होता है।

ययि - 'यय्' प्रत्याहार का वर्ण बाद में आये तो।

सूत्रार्थ- अपदान्त अनुस्वार के बाद यदि यय् प्रत्याहार का कोई भी व्यञ्जन आये तो अनुस्वार को परसवर्ण हो जाता है।

- **परसवर्ण-** परस्य सवर्णः परसवर्णः। परसवर्ण का अर्थ है- पर = (बाद) में जो वर्ण हैं उसके सवर्णियों में से आदेश होना।
- अर्थात् अनुस्वार के बाद किसी भी वर्ग का कोई भी व्यञ्जन आने पर अनुस्वार के स्थान पर उस वर्ग का पञ्चम वर्ण हो जाता है।

यय् - 'यय्' एक प्रत्याहार है जिसमें श् ष् स् ह् को छोड़कर सभी व्यञ्जन वर्ण आते हैं।

यय् = य् व् र् ल्
ञ् म् ङ् ण् न्
झ् भ् घ् ढ् ध्
ज् ब् ग् ड् द्
ख् फ् छ् ठ् थ्
च् ट् त् क् प्।

पूर्ववर्ण (अनुस्वार)	परवर्ण (यय्)	सन्धिवर्ण (परसवर्ण)
अनुस्वार (ं)	क् ख् ग् घ् ङ्	ङ्
अनुस्वार (ं)	च् छ् ज् झ् ञ्	ञ्
अनुस्वार (ं)	ट् ठ् ड् ढ् ण्	ण्
अनुस्वार (ं)	त् थ् द् ध् न्	न्
अनुस्वार (ं)	प् फ् ब् भ् म्	म्

उदाहरण-

(1) गं + गा = **गङ्गा/गङ्गा**
(2) शं + खः = **शङ्खः/शङ्खः**
(3) अं + कः = **अङ्कः/अङ्कः**
(4) अं + कितः = **अङ्कितः**
(5) लं + घनम् = **लङ्घनम् / लङ्घनम्**
(6) अं + चितः = **अञ्चितः**
(7) मं + चः = **मञ्चः**
(8) झं + झा = **झञ्झा**
(9) खं + जः = **खञ्जः**
(10) लां + छनम् = **लाञ्छनम्**
(11) कुं + ठितः = **कुण्ठितः**
(12) घं + टा = **घण्टा**
(13) मुं + डा = **मुण्डा**
(14) दं + डः = **दण्डः**
(15) खं + ड = **खण्डः**
(16) शां + त = **शान्तः**
(17) मं + दः = **मन्दः**
(18) बं + धनम् = **बन्धनम्**
(19) मं + थनम् = **मन्थनम्**
(20) नं + दति = **नन्दति**
(21) कं + पनम् = **कम्पनम्**
(22) गुं + फितः = **गुम्फितः**
(23) लं + बः = **लम्बः**
(24) स्तं + भः = **स्तम्भः**
(25) पं + पा = **पम्पा**

➢ **विशेष-** अनुस्वार तभी अनुस्वार रह सकता है, जब उसके बाद य् व् र् ल् या श् ष् स् ह् हों। जैसे-

संयमः, संवारः, संरम्भः, संलापः, संयोगः, संशयः, संसारः, संहारः आदि।

➢ **वा पदान्तस्य-** पदान्त अनुस्वार के स्थान पर परसवर्ण विकल्प से होता है, यय् प्रत्याहार के वर्ण बाद में आयें तो।

अर्थात् पदान्त अनुस्वार में यह नियम वैकल्पिक है। जैसे-

(i) कार्यं करोति = **कार्यं करोति / कार्यङ्करोति।**

(ii) किं करोषि = **किं करोषि / किङ्करोषि**

(iii) किं चित् = **किंचित् / किञ्चित्**

(iv) कथं चलसि = **कथं चलसि / कथञ्चलसि।**

(v) त्वं करोषि = **त्वं करोषि / त्वङ्करोषि**

8. अनुनासिक सन्धि

सूत्र- यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा (8.4.45)

सूत्र विश्लेषण- यरः = पदान्त यर् के स्थान पर

अनुनासिके = अनुनासिक वर्ण बाद में आये तो

अनुनासिकः = अनुनासिक वर्ण होगा।

वा = विकल्प से।

सूत्रार्थ- अनुनासिक वर्ण यदि बाद में आयें तो पदान्त यर् वर्णों के स्थान पर विकल्प से अनुनासिक आदेश होता है।

➢ **अनुनासिक होने का अर्थ है-** उसी वर्ग का पञ्चमाक्षर हो जाना

यर् - यर् एक प्रत्याहार है जिसमें ह को छोड़कर सभी व्यञ्जन (हल्) वर्ण आते हैं।

पूर्ववर्ण पदान्त यर्	परवर्ण अनुनासिक वर्ण	सन्धिवर्ण अनुनासिक
क् ख् ग् घ् ङ्	ङ् ञ् ण् न् म्	ङ्
च् छ् ज् झ् ञ्	में से कोई भी	ञ्
ट् ठ् ड् ढ् ण्	अनुनासिक वर्ण	ण्
त् थ् द् ध् न्	बाद में आये	न्
प् फ् ब् भ् म्		म्

जैसे- (i) प्राक् + मुखः
प्राङ् + मुखः
प्राङ्मुखः

(ii) षट् + मासाः
षण् + मासाः
षण्मासाः

(iii) षट् + मुखः
षण् + मुखः
षण्मुखः

(iv) सद् + मतिः
सन् + मतिः
सन्मतिः

(v) दिक् + नागः
दिङ् + नागः
दिङ्नागः

(vi) जगत् + नाथः
जगन् + नाथः
जगन्नाथः

(vii) तत् + मित्रम्
तन् + मित्रम्
तन्मित्रम्

(viii) एतद् + मुरारिः
एतन् + मुरारिः
एतन्मुरारिः

ध्यान रहे- यह सन्धि वैकल्पिक है, सन्धि न होने पर जो सन्धि विच्छेद है, वही रूप रहेगा।

प्रत्यये भाषायां नित्यम् - (वार्तिक)

अनुनासिक वर्णों से प्रारम्भ होने वाले प्रत्ययों के बाद में आने पर पदान्त यर् के स्थान पर नित्य से अनुनासिक होता है।

(i) तत् + मात्रम्
तन् मात्रम्
= तन्मात्रम्

(ii) चित् + मयम्
चिन् + मयम्
= चिन्मयम्

(iii) वाक् + मयम्
वाङ् मयम्
= वाङ्मयम्

व्यञ्जन सन्धि तालिका

सन्धि का नाम	सन्धिसूत्र	सूत्रार्थ	उदाहरण
1. श्चुत्वसन्धि	स्तोः श्चुना श्चुः	स् तवर्ग + श् चवर्ग = श् चवर्ग	रामस् + चिनोति = रामश्चिनोति सत् + चित् = सच्चित्
2. ष्टुत्व सन्धि	ष्टुना ष्टुः	स् तवर्ग + ष् टवर्ग = ष् टवर्ग	रामस् + षष्ठः = रामष्षष्ठः रामस् + टीकते = रामष्टीकते तत् + टीका = तट्टीका
3. जश्त्व सन्धि	झलां जशोऽन्ते	झल् को जश् आदेश	जगत् + ईशः = जगदीशः षट् + आननः = षडाननः
4. चर्त्व सन्धि	खरि च	झल् + खर् = चर्	छेद् + ता = छेत्ता लिभ् + सा = लिप्सा
5. अनुस्वार सन्धि	मोऽनुस्वारः	पदान्त म् + हल् = अनुस्वार (ं)	हरिम् + वन्दे = हरिं वन्दे त्वम् करोषि = त्वं करोषि
6. तोर्लि सन्धि	तोर्लि	तवर्ग + ल् = ल्	उद् + लेख = उल्लेखः तद् + लीनः = तल्लीनः
7. परसवर्ण सन्धि	अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः	अनुस्वार + यय् = परसवर्ण (पञ्चमाक्षर)	गं + गा = गङ्गा मं + चः = मञ्चः
8. अनुनासिकसन्धि	यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा	यर् + अनुनासिक = अनुनासिक	जगत् + नाथः = जगन्नाथः दिक् + नागः = दिङ्नागः

विसर्ग सन्धि

विसर्ग सन्धि- विसर्ग के बाद स्वर या व्यञ्जन वर्णों के आने पर विसर्ग (ः) में जो विकार या परिवर्तन होता है, उसे **विसर्ग सन्धि** कहते हैं। जैसे- मनः + रथः = मनोरथः

- विसर्ग हमेशा किसी न किसी स्वर के बाद ही आता है। जैसे- 'रामः' में 'अ' के बाद, हरिः में 'इ' के बाद, गुरुः में 'उ' के बाद विसर्ग आया है।
- विसर्ग सन्धि में विसर्ग से पहले आने वाले स्वर तथा विसर्ग के बाद आने वाले स्वर और व्यञ्जन दोनों का ही ध्यान रखा जाता है।

1. सत्व सन्धि

विसर्जनीयस्य सः (8.3.34) - यदि विसर्ग के आगे कोई खर् प्रत्याहार का वर्ण आये तो विसर्ग के स्थान पर 'स्' हो जाता है।

विसर्ग (ः) + खर् = स्

खर् - खर् एक प्रत्याहार है जिसमें वर्गों के प्रथम, द्वितीय अक्षर और श ष स आते हैं। खर् में कुल 13 वर्ण आते हैं।

खर् = क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ, श ष स।

ध्यान रखें-

इस नियम को समझने के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है-

(i) यदि विसर्ग के बाद च् या छ् आये तो ''विसर्जनीयस्य सः'' सूत्र से विसर्ग के स्थान पर 'स्' होता है और इस 'स्' को ''स्तोः श्चुना श्चुः'' सूत्र से 'श्' हो जाता है।

जैसे-

☆ रामः + चलति	☆ निः + छलम्
रामस् + चलति	निस् + छलम्
रामश्चलति	**निश्छलम्**
☆ निः + चलम्	☆ गौः + चरति
निस् + चलम्	गौस् + चरति
निश्चलम्	**गौश्चरति**
☆ कः + चित्	☆ बालः + चलति
कस् + चित्	बालस् + चलति
कश्चित्	**बालश्चलति**
☆ निः + चयः	☆ पूर्णः + चन्द्रः
निस् + चयः	पूर्णस् + चन्द्रः
निश्चयः	**पूर्णश्चन्द्रः**
☆ हरिः + छलति	☆ हरिः + चलति
हरिस् + छलति	हरिस् + चलति
हरिश्छलति	**हरिश्चलति**

(ii) यदि विसर्ग के बाद ट् या ठ् हो तो **''विसर्जनीयस्य सः''** सूत्र से विसर्ग के स्थान पर 'स्' होता है, और उस 'स्' को ''ष्टुना ष्टुः'' सूत्र से 'ष्' हो जाता है—

जैसे-

☆ रामः + टीकते	☆ धनुः + टङ्कारः	☆ रामः + ठकारः
रामस् + टीकते	धनुस् + टङ्कारः	रामस् + ठकारः
रामष्टीकते।	**धनुष्टङ्कारः**	**रामष्ठकारः**

(iii) यदि विसर्ग के बाद त् और थ् आये तो **''विसर्जनीयस्य सः''** सूत्र से विसर्ग के स्थान पर 'स्' हो जाता है और वह 'स्' जैसा का तैसा रहता है अर्थात् 'स्' ही रहता है। जैसे-

☆ हरिः + त्राता	☆ विष्णुः + तत्र	☆ बालः + तिष्ठति
हरिस्त्राता	**विष्णुस्तत्र**	**बालस्तिष्ठति**
☆ विष्णुः + त्रायते	☆इतः + ततः	☆ कृतः + तथा
विष्णुस्त्रायते	**इतस्ततः**	**कृतस्तथा**
☆ गजाः + तिष्ठन्ति	☆ विष्णुः + त्राता	☆ बालकः + थुडति
गजास्तिष्ठन्ति	**विष्णुस्त्राता**	**बालकस्थुडति**
☆ मनः + तापः	☆ नमः + ते	
मनस्तापः	**नमस्ते**	

(iv) यदि विसर्ग के बाद क् या ख् आये तो विसर्ग के स्थान पर विसर्ग ही रहता है अथवा **''कुप्वोः ᳵक ᳵपौ च''** (8.3.37) सूत्र से विकल्प से जिह्वामूलीय हो जाता है।

विसर्ग को 'स्' नहीं होता है जैसे-

☆ बालकः क्रीडति अथवा बालकᳵ क्रीडति।

☆ बालकः खेलति अथवा बालकᳵ खेलति।

नोट-

☆ जिह्वामूलीय वर्णों को कण्ठ के भी नीचे जिह्वामूल से बोला जाता है।

☆ जिह्वामूलीय को आधे विसर्गᳵ के समान लिखा जाता है।

(v) यदि विसर्ग के बाद प या फ आये तो विसर्ग के स्थान पर विसर्ग ही रहता है अथवा **''कुप्वोः ᳵक ᳵपौ च''** (8.3.37) सूत्र से विसर्ग के स्थान पर उपध्मानीय होता है। विसर्ग को 'स्' नहीं होता। जैसे-

वृक्षः पतति = वृक्षᳵ पतति।

वृक्षः फलति = वृक्षᳵ फलति।

नोट-

☆ उपध्मानीय वर्ण का उच्चारण 'ओष्ठ' से होता है।

☆ उपध्मानीय को भी आधे विसर्ग ᳵ के समान लिखा जाता है।

(vi) यदि विसर्ग के बाद शर् (श् ष् स्) आये तो **''वा शरि''** (8.3.36) सूत्र से विसर्ग को विसर्ग ही रहता है अथवा विसर्ग के स्थान पर 'स्' होकर परवर्ण श् ष् स् की तरह हो जाता है।

जैसे-

☆ हरिः + शेते	☆ रामः + षष्ठः
हरिस् + शेते	रामस् + षष्ठः
हरिश्शेते	**रामष्षष्ठः/रामःषष्ठः (विकल्प से)**
हरिःशेते (विकल्प से)	
☆ निः + सन्देहम्	☆ वायुः + सरति
निस् + सन्देहम्	वायुस् + सरति
निस्सन्देहम्	**वायुस्सरति**

निःसन्देहम् (विकल्प से) **वायुःसरति** (विकल्प से)

☆ बालकः + शयानः

बालकस् शयानः

बालकश्शयानः

बालकः शयानः (विकल्प से)

☆ मुनिः + शेते - मुनिस् + शेते = मुनिश्शेते

☆ कृष्णः + सर्पः - कृष्णस् + सर्पः = कृष्णस्सर्पः

2. रुत्व सन्धि

सूत्र - ससजुषो रुः (8.2.66)

☆ पदान्त सकार और 'सजुष्' के षकार के स्थान पर 'रु' आदेश होता है।

☆ 'रु' में 'उ' की इत्संज्ञा होकर लोप हो जाता है 'र्' शेष बचता है।

☆ जब 'रु' (र्) के ठीक पहले ह्रस्व 'अ' न हो और रु (र्) के ठीक बाद में खर् न हो, तो यह 'र्', 'र्' ही रहता है। इसे ही 'रुत्वसन्धि' कहते हैं।

☆ कविस् + अयम्
कवि रु + अयम्
कवि र् अयम्
कविरयम्

☆ हरेस् + इदम्
हरे रु + इदम्
हरे र् + इदम्
हरेरिदम्

☆ गौस् + अयम्
गौ रु + अयम्
गौ र् + अयम्
गौरयम्

☆ प्रातस् + अहम्
प्रात रु + अहम्
प्रात र् + अहम्
प्रातरहम्

☆ पाशैस् + बद्धः
पाशै रु + बद्धः
पाशै र् + बद्धः
पाशैर्बद्धः

☆ पितुस् + आज्ञा
पितु रु + आज्ञा
पितु र् + आज्ञा
पितुराज्ञा

☆ निस् + धनम्
नि रु + धनम्
नि र् + धनम्
निर्धनम्

☆ ऋषिस् + वदति
ऋषि रु + वदति
ऋषि र्+ वदति
ऋषिर्वदति

☆ मातुस् + आज्ञा
मातु रु + आज्ञा
मातु र् आज्ञा
मातुराज्ञा

☆ भानोस् + अयम्
भानो रु + अयम्
भानो र् अयम्
भानोरयम्

☆ मुनिस् आगच्छति
मुनि रु आगच्छति
मुनि र् आगच्छति
मुनिरागच्छति

☆ हरिस् + जयति
हरि रु + जयति
हरि र्+ जयति
हरिर्जयति

☆ कैस् + उक्तम्
कै रु + उक्तम्
कै र्+ उक्तम्
कैरुक्तम्

☆ साधुस् + गच्छति
साधु रु + गच्छति
साधु र् + गच्छति
साधुर्गच्छति

☆ भानुस् + उदेति
भानु रु + उदेति
भानु र् + उदेति
भानुरुदेति

☆ हरिस् + अवदत्
हरि रु + अवदत्
हरि र् + अवदत्
हरिरवदत्

☆ लक्ष्मीस् + इयम्
लक्ष्मी रु + इयम्
लक्ष्मी र् + इयम्
लक्ष्मीरियम्

☆ पितुस् + इच्छा
पितु रु + इच्छा
पितु र् + इच्छा
पितुरिच्छा

☆ गुरोस् + भाषणम्
गुरो रु + भाषणम्
गुरो र् + भाषणम्
गुरोर्भाषणम्

अन्य उदाहरण-

☆ कविस् + आगच्छति = **कविरागच्छति**
☆ मुनिस् + इव = **मुनिरिव**
☆ निस् + दयः = **निर्दयः**
☆ पतिस् + उवाच = **पतिरुवाच**
☆ हरेस् + जन्म = **हरेर्जन्म**
☆ गुरोस् + आगमनम् = **गुरोरागमनम्**
☆ मुनिस् + गच्छति = **मुनिर्गच्छति**
☆ भानुस् + उदेति = **भानुरुदेति**
☆ प्रातस् + एव = **प्रातरेव**
☆ मातृस् + आदेशः = **मातृरादेशः**

3. उत्व सन्धि

अतो रोरप्लुतादप्लुते (6.1.13)

यदि 'रु' के ठीक पहले 'ह्रस्व अ' हो और 'रु' के ठीक बाद में पुनः 'ह्रस्व अ' हो, तो ऐसे दो ह्रस्व अ के बीच बैठे 'रु' (र्) को 'उ' हो जाता है। इसे ही **उत्व सन्धि** कहते हैं।

➢ ध्यान रहे कि 'रु' के स्थान पर 'उ' नही होता, किन्तु उकार की इत्संज्ञा होकर लोप होने पर शेष बचे 'र्' के स्थान पर ही 'उ' होता है। सूत्र में 'रु' के कथन का यह तात्पर्य है कि 'रुँ' के 'र्' को ही उत्व हो, अन्य 'र्' को नहीं।

जैसे-

☆ शिवस् + अर्च्यः
शिव रु + अर्च्यः ('ससजुषो रुः' से 'रु')

शिव र् + अर्च्यः ('रु' के 'उ' का लोप)

शिव उ + अर्च्यः (अतो रोरप्लुतादप्लुते से 'उ')

शिवो + अर्च्यः (आद् गुणः से अ+उ = ओ गुण)

शिवोऽर्च्यः (''एङः पदान्तादति'' से पूर्वरूप)

☆ देवस् + अपि (पदान्त सकार)

देव रु + अपि ('ससजुषो रुः' से स् को 'रु' आदेश)

देव र्+ अपि ('रु' के 'उ' का लोप, 'र्' शेष)

देव उ + अपि (अतो रोरप्लुतादप्लुते से 'र्' को 'उ')

देवो + अपि (आद्गुणः से 'ओ' गुण)

देवोऽपि (''एङः पदान्तादति'' सूत्र से पूर्वरूप)

☆ शिवस् + अत्र = **शिवोऽत्र**

☆ सस् + अहम् = **सोऽहम्**

☆ सस् + अपि = **सोऽपि**

☆ रामस् + अयम् = **रामोऽयम्**

☆ रामस् + अवदत् = **रामोऽवदत्**

☆ देवस् + अधुना = **देवोऽधुना**

☆ कस् + अयम् = **कोऽयम्**

☆ सस् + अयम् = **सोऽयम्**

☆ रामस् + अस्ति = **रामोऽस्ति**

☆ सस् + अवदत् = **सोऽवदत्**

''हशि च'' (6.1.114) - यदि 'रु' (र्) के पूर्व ह्रस्व 'अ' हो और बाद में हश् प्रत्याहार के वर्ण आयें तो रु (र्) के स्थान पर 'उ' हो जाता है फिर अ+उ में गुण सन्धि हो जाती है। यह भी उत्व सन्धि है।

➢ हश् प्रत्याहार में वर्णों के तीसरे, चौथे और पाँचवे वर्ण तथा य व र ल ह वर्ण आते हैं।

जैसे-

☆ शिवस् + वन्द्यः (पदान्त सकार)

शिव रु + वन्द्यः (''ससजुषो रुः'' से 'रु' आदेश)

शिव र् + वन्द्यः ('रु' के 'उ' का लोप 'र्' शेष)

शिव उ + वन्द्यः (''हशि च'' से 'र्' के स्थान पर 'उ' आदेश)

शिवो + वन्द्यः (अ + उ = ओ गुण हुआ)

शिवो वन्द्यः (उत्व सन्धि)

☆ मनस् + रथः मन रु + रथः मन र् + रथः

मन उ + रथः मनो + रथः

मनोरथः

☆ रामस् + नमति = **रामो नमति**

☆ रामस् + हसति = **रामो हसति**

☆ मृगस् + धावति = **मृगो धावति**

☆ मेघस् + गर्जति = **मेघो गर्जति**

☆ सरस् + वरः = **सरोवरः**

☆ पयस् + धरः = **पयोधरः**

☆ रामस् + जयति = **रामो जयति**

☆ बालकस् + हसति = **बालको हसति**

☆ वीरस् + गच्छति = **वीरो गच्छति**

☆ पुरुषस् + वदति = **पुरुषो वदति**

☆ अधस् + गतिः = **अधोगतिः**

☆ यशस् + दा = **यशोदा**

☆ मनस् + भावः = **मनोभावः**

4. रलोप सन्धि

सूत्र- रो रि (8.3.14)

सूत्रार्थ- 'र्' के बाद 'र्' आये तो पूर्व 'र्' का लोप होता है।

जैसे-

☆ बालकास् + रमन्ते (पदान्त सकार)

बालका रु + रमन्ते ('ससजुषो रुः' से 'स्' के स्थान पर रु')

बालका र् + रमन्ते (''रो रि'' से पूर्व रेफ का लोप)

बालका रमन्ते (र लोप सन्धि)

☆ गौस् + रम्भते (पदान्त सकार)

गौरु + रम्भते (ससजुषो रुः)

गौर् + रम्भते (रो रि)

गौ रम्भते (र लोप सन्धि)

सूत्र- ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः (6.3.111)

'ढ् ' या 'र्' का लोप हुआ हो तो उससे पूर्ववर्ती अण् (अ इ उ) को दीर्घ हो जाता है। जैसे-

☆ लिढ् + ढः = लीढः

☆ पुनर् + रमते = पुनारमते

☆ हरिर् + रम्यः = हरी रम्यः

☆ शम्भुर् + राजते = शम्भू राजते

☆ गुरुर् + रुष्टः = गुरू रुष्टः

☆ निर् + रोगः = नीरोगः

☆ निर् + रसः = नीरसः

☆ अन्तर् + राष्ट्रियः = अन्ताराष्ट्रियः

5. रेफ को विसर्ग

सूत्र- खरवसानयोर्विसर्जनीयः (8.3.15) -

सूत्रार्थ- पदान्त रेफ (र्) के स्थान पर विसर्ग आदेश होता है यदि खर् प्रत्याहार के वर्ण बाद में आयें तो अथवा अवसान (विराम) हो तो- र् + खर् = विसर्ग (:) र् + ----- = विसर्ग (:)

➢ 'खर्' एक प्रत्याहार है जिसमें - क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ, तथा श ष स आते हैं।

➢ अवसान में पदान्त 'र्' को विसर्ग-

☆ पुनर् = पुनः ☆ शनैर् = शनैः

☆ उच्चैर् = उच्चैः ☆ नीचैर् = नीचैः

➢ 'खर्' बाद में आये तो पदान्त 'र्' को विसर्ग-

☆ रामर् + खादति = रामः खादति

पुनर् + पृच्छति = पुनः पृच्छति

☆ रामस् + करोति (पदान्त स्)

राम रु + करोति (ससजुषो रुः)

राम र् + करोति (रु को 'र्')

रामः + करोति ('र्' को विसर्ग)

☆ वृक्षर् + फलति = वृक्षः फलति

☆ गुरु र् + पाठयति = गुरुः पाठयति

कृदन्त प्रकरण

तव्यत् - तव्य - अनीयर्

1. सामान्य परिचय-

* तव्यत्, तव्य और अनीयर् (प्रत्यय) धातु के बाद लगते हैं। (धातोः 3.1.91)

* तव्यत् तव्य और अनीयर् प्रत्यय 'कृत्' प्रत्यय के साथ-साथ 'कृत्य' प्रत्यय भी कहलाते हैं। (**कृदतिङ्** 3.1.93, **कृत्याः** 3.1.95)

* कृत्य प्रत्यय भाव और कर्म अर्थ में ही होते हैं।

तयोरेवकृत्यक्तखलर्थाः

* सातों कृत्य प्रत्यय (तव्यत् तव्य अनीयर् यत् ण्यत् क्यप् केलिमर्) अर्ह अर्थात् 'योग्य' या 'चाहिए' अर्थ में होते हैं। जैसे- भवता पठितव्यम् (आपको पढना चाहिए), दर्शनीयं स्थानम् (देखने योग्य स्थान)

सूत्र- 'तव्यत्तव्यानीयरः' (3.1.96)

सूत्रार्थ- सभी धातुओं से भाव और कर्म अर्थ में तव्यत्, तव्य और अनीयर् प्रत्यय होते हैं।

उदाहरण- एधितव्यम् करणीयः

वार्तिक- 'केलिमर उपसंख्यानम्'

वार्तिकार्थ- 'तव्यत्तव्यानीयरः सूत्र में 'केलिमर्' प्रत्यय को भी गिनना चाहिए अर्थात् सभी धातुओं से 'केलिमर्' प्रत्यय होगा।

उदाहरण- पच् + केलिमर् = पचेलिमः (पकाने योग्य)

'यत्' प्रत्यय

सूत्र - अचो यत् (3.1.97)

सूत्रार्थ - अजन्त (जिनके अन्त में स्वर हो) धातुओं से यत् प्रत्यय होता है।

जैसे - पा + यत्= पेयम् (पीने योग्य) चेयम् (चुनने योग्य)

सूत्र- पोरदुपधात् (3.1.98)

सूत्रार्थ - जिसके अन्त में पवर्ग और उपधा में अत् हो उस धातु से यत् प्रत्यय होता है। यह सूत्र ण्यत् का अपवाद है।

जैसे -शप्यम् (शाप के योग्य)

लभ्यम् (प्राप्त करने योग्य)

'क्यप्'

सूत्र - 'एति-स्तु-शास्-वृ-दृ-जुषः क्यप्' (3.1.109)

सूत्रार्थ-इण्, स्तु, शास्, वृ, दृ, जुष्-धातुओं से क्यप् प्रत्यय होता है।

उदाहरण तालिका-

इण् + क्यप् = इत्यः (जाने योग्य)

स्तु + क्यप् = स्तुत्यः (स्तुति योग्य)

शास् + क्यप् = शिष्यः (अनुशासन करने योग्य)

वृ + क्यप् = वृत्यः (वरण करने योग्य, वरणीय)

आङ् + दृ + क्यप् = आदृत्यः (आदर करने योग्य आदरणीय)

जुष् + क्यप् = जुष्यः (प्रीति या सेवन करने योग्य)

'ण्यत्'

सूत्र- 'ऋहलोर्ण्यत्' (3.1.124)

सूत्रार्थ- ऋवर्णान्त धातु और हलन्त धातु से 'ण्यत्' प्रत्यय होता है।

सिद्धि प्रक्रिया-कृ + ण्यत् = कार्यम् (करने योग्य) हृ + ण्यत् = हार्यम् (हरण करने योग्य) धृ + ण्यत् = धार्यम् (धारण करने योग्य)

यत् ण्यत् क्यप् प्रत्ययान्त शब्दों की पहचान-

क्यप्-

* गुण का अभाव। जैसे - स्तु - स्तुत्यः नृत् - नृत्यम् ,दृश्-दृश्यम् आदि।

* 'तुक्' का आगम अर्थात् मध्य में 'त्' दिखना जैसे- इत्यः, स्तुत्यः आदि।

यत् -

* धातु के अन्तिम वर्ण को गुण। जैसे- चेयम्, जेयम् , पेयम् आदि।

* उपधा में कोई परिवर्तन न होना । जैसे- रम् - रम्यम्, लभ् - लभ्यम्

ण्यत्-

* अन्तिम वर्ण के स्थान पर वृद्धि जैसे- कृ - कार्यम् , लू - लाव्यम्

* उपधा में 'अ' को वृद्धि। जैसे पठ्- पाठ्यम्, ग्रह्- ग्राह्यम्

* उपधा में इक् को गुण। जैसे लिख् - लेख्यम्, दुह् - दोह्यम् आदि।

ण्वुल् और तृच् प्रत्यय

1. सामान्य परिचय-

* 'ण्वुल्' और 'तृच्' दोनों 'कृत्' प्रत्यय हैं। अतः 'कर्तरि कृत्' सूत्र से दोनों प्रत्ययों का कर्ता अर्थ (कर्तृवाच्य) में ही प्रयोग होगा।

सूत्र - ण्वुल् तृचौ (3.1.133)

सूत्रार्थ- धातुओं से ण्वुल् और तृच् प्रत्यय होते हैं। 'कर्तरि कृत्' सूत्र के अनुसार ये प्रत्यय कर्ता अर्थ में होते हैं।

जैसे- कारकः - (करोति इति, करने वाला)

कर्ता - (करोति इति, करने वाला)

सूत्र- 'नन्दि-ग्रहि-पचादिभ्यो ल्युणिन्यचः' (3.1.134)

सूत्रार्थ- नन्द्यादि ग्रह्यादि तथा पचादि धातुओं के बाद ल्यु, णिनि और अच् प्रत्यय होते हैं। क्रमशः अर्थात् नन्द्यादिगण से ल्यु, ग्रह्यादिगण से णिनि, तथा पचादिगण से 'अच्' प्रत्यय होंगे।

जैसे- नन्दि+ल्यु -नन्दनः (प्रसन्न करने वाला, पुत्र)

ग्रह्+णिनि- ग्राही (ग्रहण करने वाला)

पच्+अच्- पचः (पचति इति, जो पकाता है, अर्थात् पकानेवाला)

क्त - क्तवतु

सामान्य परिचय -

* क्त और क्तवतु दोनों प्रत्यय 'कृदतिङ्' के अधिकार में पढ़े गये हैं, अतः कृत्संज्ञक हैं। ये दोनों प्रत्यय सामान्यतः भूतकाल में प्रयुक्त होते हैं। अतः इनसे बने शब्दों को 'भूतकृदन्त' भी कहा जाता है।

* कृत्संज्ञक प्रत्यय 'कर्तरि कृत्' द्वारा कर्ता अर्थ में हुआ करते हैं, परन्तु क्त, क्तवतु - इनमें केवल 'क्तवतुँ' प्रत्यय ही कर्ता अर्थ में होता है। क्त प्रत्यय 'तयोरेव कृत्यक्तखलर्थाः' सूत्र से भाव और कर्म में ही होता है। यदि धातु अकर्मक हो तो क्त प्रत्यय भाव अर्थ में और यदि धातु सकर्मक हो तो क्त प्रत्यय कर्म अर्थ में होगा, परन्तु क्तवतुँ प्रत्यय धातु के सकर्मक या अकर्मक होने पर केवल कर्ता अर्थ में ही होता है।

* क्तक्तवतूँ निष्ठा (1.1.25) सूत्र से क्त, क्तवतुँ प्रत्यय की 'निष्ठा' संज्ञा होती है।

सूत्र- 'निष्ठा' (3.2.102)

. **सूत्रार्थ -** भूतकालिक अर्थ में धातु के बाद निष्ठासंज्ञक क्त, क्तवतु प्रत्यय हों।

जैसे- **स्नातं मया (मुझसे नहाया गया)**

सिद्धि प्रक्रिया -

स्ना + क्त - 'स्ना' इस अकर्मक धातु से भूतकाल अर्थ में 'निष्ठा' सूत्र से भाव अर्थ में ' क्त' प्रत्यय हुआ।

स्ना + त - 'लशक्वतद्धिते' से ' क्त' के ककार की इत् संज्ञा होकर 'तस्य लोपः' से लोप हुआ।

स्नात - 'आर्धधातुकस्येड् वलादेः' सूत्र से प्राप्त 'इट्' का 'एकाच उपदेशेऽनुदात्तात्' से निषेध करने पर 'स्नात' बना।

स्नातसु - कृदन्त होने के कारण प्रातिपदिक संज्ञा होकर प्रथमैकवचन में सुँ प्रत्यय।

स्नात अम् - 'सामान्ये नपुंसकम्' द्वारा नपुंसकलिङ्ग की विवक्षा में 'अतोऽम्' सूत्र से 'सुँ' को 'अम्' आदेश

स्नातम् - 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश करके 'स्नातम्' प्रयोग सिद्ध हुआ।

'स्नातम्' - इति सिद्धम्

- अनुक्त होने से 'स्नातम्' के कर्ता में 'कर्तृकरणयोस्तृतीया' सूत्र से तृतीया विभक्ति हो जाती है। अतः 'मया स्नातम्' ऐसा वाक्य सिद्ध हुआ।

कृ + तवत्- कृतवान्

विश्वं कृतवान् विष्णुः (विष्णु ने विश्व को बनाया)

क्त - क्तवतु से सम्बद्ध कुछ विशेष नियम

*** रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः** (8.2.42) र् और द् के बाद आने वाला निष्ठा प्रत्यय (क्त, क्तवतु) का त् 'न्' के रूप में परिवर्तित हो जाता है, तथा पूर्व में स्थित दकार भी नकार के साथ में परिवर्तित हो जाता है।

जैसे - शीर् (शॄ) + क्त = शीर्णः

भिद् + क्त = भिन्नः

छिद् + क्त = छिन्नः

*** संयोगादेरातो धातोर्यण्वतः (8.2.43) -** ऐसी धातु जिनका अन्तिम वर्ण दीर्घ 'आ' हो तथा जिनके आदि में संयोग हो तथा जो धातु यण् वाली हो। जैसे - 'ग्ला' इस धातु के आरम्भ में संयोग है अतः संयोगादि है, आकारान्त भी है तथा 'यण्' वाली भी है। इन तीन विशेषताओं से युक्त धातु के बाद आने वाले क्त क्तवतु के 'त्' को 'न्' हो जाता है। जैसे-

ग्ला + क्त = ग्लानः ग्ला + क्तवतु = ग्लानवान्

द्रा + क्त = द्राणः द्रा + क्तवतु = द्राणवान्

म्ला + क्त = म्लानः म्ला + क्तवतु = म्लानवान्

*** ल्वादिभ्यः -** (8.2.44) लू आदि 21 धातुओं के बाद आने वाला निष्ठा (क्त, क्तवतु) का तकार नकार के रूप में बदल जाता है। जैसे-

लू + क्त = लूनः, लू + क्तवतु = लूनवान्

धू + क्त = धूनः, धू + क्तवतु = धूनवान्

दू = दूनः, दूनवान्, ज्या - जीनः, जीनवान्

*** ओदितश्च-** (8.2.45) ऐसी धातुयें जिनमें 'ओ' की इत्संज्ञा हुई है, वे ओदित् कहलाती हैं, जैसे भुजो टुओश्वि इत्यादि ओदित् धातुओं के बाद आने वाले क्त-क्तवतु के 'त्' को 'न्' हो जाता है। जैसे -

भुजो (भुज्) = भुग्नः / भुग्नवान्

टुओश्वि (श्वि) = शूनः / शूनवान्

ओहाक् (हा) = हीनः / हीनवान्

रुजो (रुज्) = रुग्णः / रुग्णवान्

उद् + ओविजी (विज्) = उद्विग्नः / उद्विग्नवान्

*** शुषः कः** (8.2.51) - शुष् धातु के बाद आने वाले निष्ठा (क्त, क्तवतु) के 'त्' को 'क्' हो जाता है।

यथा- शुष् + क्त = शुष्कः

शुष् + क्तवतु = शुष्कवान्

*** पचो वः** (8.2.52) 'पच्' धातु के बाद आने वाले निष्ठा (क्त,क्तवतु) के 'त्' को 'व्' हो जाता है। जैसे-

पच् + क्त = पक्वः ('चोः कुः' से कुत्व)

पच् + क्तवतु = पक्ववान्

*** क्षायो मः** (8.2.53) 'क्षै' धातु के बाद आने वाले निष्ठा (क्त, क्तवतु) के 'त्' को 'म्' हो जाता है।

क्षै (क्षा) + क्त = क्षामः

क्षै (क्षा) + क्तवतु = क्षामवान्

परीक्षोपयोगी प्रश्न -

* छिन्नः, भिन्नः में प्रत्यय है - क्त।

* 'शुष् + क्त = शुष्कः' में तकार को ककार आदेश किस सूत्र से = शुषः कः।

* 'पक्वः' में निष्ठासंज्ञक क्त के तकार के स्थान पर वकार आदेश किस सूत्र से/ 'पचो वः'

* क्षा + क्तवतु से पद बनेगा = क्षामवान्।

शतृ और शानच् प्रत्यय

1. सामान्य परिचय-

* शतृ और शानच् पूर्वकृदन्त प्रकरण के प्रत्यय हैं।

* शतृ और शानच् प्रत्ययों से बने शब्दों को वर्तमान कृदन्त भी कहा जाता है।

* ये दोनों प्रत्यय सामान्य रूप से लट् के स्थान पर होते हैं।

* लट् दो प्रकार के होते हैं - परस्मैपद और आत्मनेपद और ये प्रत्यय भी दो हैं- शतृ और शानच्।

* शतृँ प्रत्यय का अन्त्य ऋकार (ऋ) की 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से तथा आदि शकार (श्) की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से इत् संज्ञा होकर 'तस्य लोपः' से लोप हो जाता है। केवल 'अत्' शेष बनता है।

* 'शानच्' प्रत्यय का आदि शकार भी 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से तथा अन्त्य चकार् (च्) की 'हलन्त्यम्' से इत्संज्ञा होकर 'तस्य लोपः' से लोप हो जाता है। केवल 'आन' शेष बचता है।

* शानच् (आन) प्रत्यय 'तङानावात्मनेपदम्' सूत्र से आत्मनेपद संज्ञक है; अतः आत्मनेपदीधातुओं से शानच् प्रत्यय लगता है।

* शतृँ प्रत्यय 'लः परस्मैपदम्' से परस्मैपद संज्ञक है, अतः परस्मैपदी धातुओं से शतृ प्रत्यय लगता है।

* यदि धातु उभयपदी है, तो उससे शतृ शानच् दोनों प्रत्यय लगते हैं।

* 'तौ सत्' (3.2.127) सूत्र से शतृ और शानच् प्रत्ययों की 'सत्' संज्ञा होती है। जिसके फलस्वरूप 'लृटः सद् वा' सूत्र से ये दोनों प्रत्यय लृट् लकार में भी प्रयुक्त होते हैं।

सूत्र- लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे (3.2.124)

सूत्रार्थ- अप्रथमान्त (द्वितीयान्त आदि) शब्दों के साथ यदि लट् का समानाधिकरण हो तो 'लट्' के स्थान पर शतृ और शानच् आदेश होते हैं।

महत्त्वपूर्ण तथ्य- अप्रथमान्त - प्रथमा विभक्ति को छोड़कर द्वितीयान्त तृतीयान्त आदि।

समानाधिकरण- समान विभक्ति वाले पद

लँड् इत्यनुवर्त्तमाने पुनर्लड्ग्रहणात् प्रथमासामानाधिकरण्येऽपि क्वचित्। सन् द्विजः। अर्थात् शतृ और शानच् प्रत्ययों का प्रयोग कहीं कहीं प्रथमा विभक्ति के साथ समानाधिकरण होने पर भी दिखायी पड़ता

है। निष्कर्षतः इन प्रत्ययों का प्रयोग सातों विभक्तियों के साथ सम्भव है। जैसे - सन् द्विजः (ब्राह्मण है)

* विद् (जानना) धातु के बाद आने वाले शतृँ के स्थान पर विकल्प से वसुँ (वस्) आदेश हो जाता है। (सूत्र- विदेः शतुर्वसुँः 7.1.36)

जैसे- विद्+शतृ– (लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे)

विद् + वस् (विदेः शतुर्वसुः)

विद्वस् (विद्वान्)

वैकल्पिक रूप विद्+शतृ = विदन् भी रूप बनेगा।

उदाहरण–

पठ् + शतृ (लट्) = 'वर्तमाने लट्' सूत्र से कर्तृवाच्य में लट् पठन्।

सेव् + लट्- 'वर्तमाने लट्' से कर्तृवाच्य में लट् ।

सेव् + शानच् - सेवमानः इति सिद्धम्।

सूत्र- लृटः सद् वा (3.3.14)

सूत्रार्थ- लृट् के स्थान पर सत् संज्ञक अर्थात् शतृ और शानच् प्रत्यय विकल्प से होते हैं।

महत्त्वपूर्ण तथ्य- लृट् के स्थान पर शतृ और शानच् का विधान होने के कारण 'शप्' का बाध होकर 'स्यतासी लृलुटोः' सूत्र से 'स्य' विकरण प्रत्यय होगा। करिष्यन् (करता हुआ- भविष्यकाल में) करिष्यमाणः ।

तुमुन् प्रत्यय

1. सामान्य परिचय-

* यह उत्तर कृदन्त का प्रत्यय है।
* तुमुँन् प्रत्यय सभी धातुओं के बाद लगता है।
* 'तुमुँन्' प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' से 'न्' की इत्संज्ञा तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से 'उँ' की इत्संज्ञा होकर 'तुम्' शेष बचता है।
* 'तुम्' मकारान्त कृत् प्रत्यय है, अतः 'कृन्मेजन्तः'(1.1.39) सूत्र से तुमुन्नन्त शब्द अव्यय होते हैं। 'मान्तत्वाद् अव्ययत्वम्'
* 'अव्ययकृतो भावे' इस भाष्य वचन के अनुसार 'तुमुँन्' भाव अर्थ में होता है।
* 'सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु' वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम्' इस परिभाषा के अनुसार तुमुन् प्रत्ययान्त शब्द अव्यय होने के कारण तीनों लिङ्गों, सातों विभक्तियों एवं तीनों वचनों में एक समान होते हैं। जैसे- पठितुम् - सर्वत्र समान रूप में रहता है।

सूत्र- तुमुँन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम् (3.3.10)

सूत्रार्थ- क्रियार्था क्रिया के समीप रहते धातु से भविष्यत् अर्थ में तुमुँन् और ण्वुल् प्रत्यय होते हैं।

क्रियार्था क्रिया- किसी क्रिया की सिद्धि के लिए जब दूसरी क्रिया की जाती है, तो वह दूसरी क्रिया 'क्रियार्था क्रिया' कहलाती है। जैसे- बालकः भोक्तुं व्रजति। यहाँ जाने की क्रिया (व्रजति), खाने की क्रिया के लिए हो रही है, अतः जाने की क्रिया (व्रजति) क्रियार्था क्रिया है। क्रियार्था क्रिया (व्रजति) के उपपद अर्थात् समीप में रहने से भुज् धातु से तुमुन् प्रत्यय होकर (भोक्तुम्) बना है।

* 'उपपद' से समीप रहना अर्थ लिया जाता है, चाहे वह आगे रहे या पीछे। जैसे-पठितुं गच्छति। पढने के लिए जाता है।

पठ्+तुमुँन् - पठितुम् (पढने के लिए) इति सिद्धम्।

सूत्र-कालसमयवेलासु तुमुँन् (3.3.167)

सूत्रार्थ- काल, समय, वेला आदि कालवाची शब्दों के समीप आने वाले धातुओं से तुमुँन् प्रत्यय होता है।

महत्त्वपूर्ण तथ्य- ध्यान रहे- यहाँ न तो भविष्यत् काल है न ही क्रियार्था क्रिया, अतः पूर्वसूत्र 'तुमुण्ण्वुलौ क्रियायां- क्रियार्थायाम्' से 'तुमुँन्' की प्राप्ति नहीं थी।

सिद्धि प्रक्रिया- कालः भोक्तुम्। (भोजन का समय है)

भुज् + तुमुँन् - 'कालसमयवेलासु तुमुॅन्' सूत्र से तुमुॅन् प्रत्यय

भुज् + तुम् - अनुबन्ध लोप

भोज् + तुम् - 'पुगन्तलघूपधस्य च' से गुण

भोग् + तुम् - 'चोः कुः' से 'ज्' के स्थान पर 'ग्'।

भोक् + तुम् - 'खरि च' से 'ग' के स्थान पर 'क्'।

भोक्तुम् +सु- कृदन्त होने के कारण प्रातिपदिकसंज्ञा, सु प्रत्यय

भोक्तुम् - अव्ययसंज्ञक होने से 'सु' का लुक्।

'भोक्तुम्' इति सिद्धम्

उदाहरण- कालः भोक्तुम् (खाने का समय) समयः भोक्तुम् (खाने का समय) वेला भोक्तुम् (खाने का समय)

घञ् प्रत्यय

सामान्य परिचय- 'घञ्' 'कृदतिङ्' सूत्र से 'कृत्' संज्ञक प्रत्यय है।

* 'घञ्' प्रत्यय से बने शब्द पुँल्लिङ्ग में ही प्रयुक्त होते हैं। ('घञबन्तः' लिङ्गानुशासन 2.2)

*'घञ्' प्रत्यय में 'घ्' की 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से तथा 'ञ्' की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा होकर दोनों (घ् और ञ्) का 'तस्य लोपः' से लोप हो जाता है। केवल 'अ' शेष बचता है।

सूत्र - भावे (3.3.18)

सूत्रार्थ - जब धात्वर्थ सिद्धावस्था को प्राप्त हुआ हो तो उसके वाच्य होने पर धातु के बाद 'घञ्' प्रत्यय होता है।

9. महत्त्वपूर्ण तथ्य - धातु के अर्थ (क्रिया) को ही भाव कहते हैं। वह धात्वर्थ दो प्रकार का होता है -

(i) साध्यावस्था - भवति, पठति, पचति आदि धातुरूपों में धात्वर्थ साध्यावस्थापन्न होता है। अर्थात् जिस क्रिया में अन्य क्रिया की आकांक्षा नहीं होती है, वह साध्यावस्थापन्न क्रिया है।

(ii) सिद्धावस्था - जिस क्रिया में अन्य क्रिया की आकांक्षा होती है, वह सिद्ध अवस्था को प्राप्त क्रिया है। जैसे - पाकः, त्यागः, पठनम् , गमनम् , हसितम् आदि कृदन्तपद सिद्धावस्थापन्न है।

नोट- सिद्धावस्था को प्राप्त धातु से ही 'घञ्' प्रत्यय होता है।

*घञ् प्रत्ययान्त शब्दों का रूप 'राम' शब्द की तरह चलता है। जैसे- पाकः, पाकौ, पाकाः आदि।

सिद्धि प्रक्रिया -

पच् + घञ्- 'भावे' सूत्र से सिद्धावस्थापन्न भाव के वाच्य होने पर 'पच्' धातु से 'घञ्' प्रत्यय हुआ।

पच् + अ - 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से 'घ्' की तथा 'हलन्त्यम्' से 'ञ्' की इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से दोनों (घ्, ञ्) का लोप

पाच् + अ - 'अत उपधायाः' सूत्र से 'ञित्' प्रत्यय परे रहते उपधा 'अ' को वृद्धि 'आ' आदेश हुआ।

पाक् + अ - 'चजोः कु घिण्ण्यतोः' से घित् प्रत्यय परे रहते कुत्व होकर 'च्' के स्थान पर 'क्' हुआ। पाक - वर्णसम्मेलन

पाक + सु - प्रातिपदिकसंज्ञा, प्रथमा एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय आया। पाकः- सत्व, विसर्ग हुआ

पाकः- इति सिद्धम्

सूत्र - अकर्त्तरि च कारके संज्ञायाम् (3.3.19)

सूत्रार्थ - कर्ता से भिन्न अर्थात् कर्म, करण आदि कारक के वाच्य होने पर संज्ञा के विषय में धातु से 'घञ्' प्रत्यय होता है।

8. महत्त्वपूर्ण तथ्य -

*घञि च भावकरणयोः (6.4.27) सूत्र से भाव अथवा करण अर्थ वाला घञ् प्रत्यय हो तो रञ्ज् (रन्ज्) धातु के नकार का लोप होता है।

*रञ्ज् धातु में ञकार, मूल रूप से नकार ही है इसे 'नश्चाऽपदान्तस्य झलि' द्वारा अनुस्वार होकर परसवर्ण ञकार हुआ है, उसी नकार का लोप हो जाता है।

* भाव और करण से भिन्न अर्थ होने पर नकार का लोप नहीं होता। जैसे रज्यति अस्मिन् इति रङ्गः (रञ्ज् + घञ्) यहाँ घञ् प्रत्यय अधिकरण अर्थ में है अतः नकार का लोप नहीं हुआ।

* इस सूत्र में आया हुआ 'संज्ञायाम्' शब्द प्रायिक है अतः संज्ञा से अन्य अर्थ में भी उदाहरण प्राप्त होता है। जैसे- 'को भवता लाभो लब्धः।' यहाँ 'लाभः' संज्ञा अर्थ में नहीं है।

प्रायिक - अधिकांश या प्रायशः। अर्थात् अधिकतर जगहों में संज्ञा अर्थ में ही प्रत्यय होता है पर कुछ जगहों में अक्सर असंज्ञा होने पर भी घञ् होता है।

सिद्धि प्रक्रिया- रागः (रज्यते अनेन इति रागः) रँगना या प्रेम रखना

रञ्ज् + घञ् - 'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्' सूत्र से 'रञ्ज्' धातु से करण अर्थ में 'घञ्' हुआ

रञ्ज् + अ - 'घञ् के घकार और ञकार का 'लशक्वतद्धिते' और 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा होकर 'तस्य लोपः' से लोप हुआ।

रज् + अ - 'घञि च भावकरणयोः' सूत्र से रञ्ज् के नकार (ञकार) का लोप हुआ।

राज् अ - 'अत उपधायाः' से ञित् प्रत्यय परे रहते 'रज्' की उपधा अकार को वृद्धि 'आ' हुई।

राग् अ - 'चजोः कु घिण्ण्यतोः' से घित् प्रत्यय परे रहते 'राज्' के 'ज्' के स्थान पर कुत्व 'ग्' आदेश हुआ।

राग - वर्णसम्मेलन हुआ

राग + सु (स्) - प्रातिपदिकसंज्ञा, सु प्रत्यय

रागः - इति सिद्धम्

सूत्र - निवास-चितिशरीरोपसमाधानेष्वादेश्च कः (3.3.41)

सूत्रार्थ - निवास, चयन, शरीर और समूह - इन चार अर्थों में 'चि' धातु से घञ् प्रत्यय होता है तथा धातु के आदि वर्ण 'च्' के स्थान पर 'क्' आदेश भी हो जाता है। कर्तृभिन्न काल में संज्ञा का विषय हो तो।

8. महत्त्वपूर्ण तथ्य-

(i) निवास - निवसति अत्र इति निवासः - जहाँ रहते हैं, उसे निवास कहते हैं।

(ii) चिति - चीयते इति चितिः - जिसका चयन किया जाता है अर्थात् यज्ञाग्नि विशेष या उसका स्थान विशेष।

(iii) शरीर - चीयते अस्मिन् अस्थ्यादिकम् इति कायः - अस्थियों का समूह

(iv) उपसमाधानम् - राशीकरणम् - ढेर लगाना, एकत्र करना, इकट्ठा करना।

निकायः (रहने का स्थान अर्थात् घर)

निचीयन्ते संगृह्यन्ते धनधान्यादि अस्मिन्निति निकायः

(i) निवास अर्थ में - नि + चि + घञ् = निकायः (घर)

(ii) चिति अर्थ में - आङ् + चि + घञ् = आकायः (अग्नि विशेष)

(iii) शरीर अर्थ में - नि + घञ् = कायः (शरीर)

(iv) उपसमाधान अर्थ में - गोमय + नि + चि + घञ् = गोमयनिकायः (गोबर का ढेर)

सूत्र - हलश्च (3.3.121)

सूत्रार्थ- हलन्त (व्यञ्जनान्त) धातु से करण या अधिकरण

कारकों में प्रायः घञ् प्रत्यय हो जाता है। पुंल्लिङ्ग विशिष्ट संज्ञा अर्थ में।

महत्त्वपूर्ण तथ्य -

* 'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' (3.3.118) सूत्र से यहाँ 'घ' प्रत्यय प्राप्त था किन्तु उसका यहाँ अपवाद 'घञ्' प्रत्यय कहा गया। 'घाऽपवादः।'

. **सिद्धि प्रक्रिया-** रामः (रमन्ते योगिनः अस्मिन् इति रामः) (जिसमें योगिजन या भक्तजन रमण अर्थात् आनन्द मनाते हैं) अथवा रमते लोकोऽस्मिन्निति रामः, दशरथनन्दनः)

रम् + घञ् - 'हलन्त' रम् धातु से 'हलश्च' सूत्र द्वारा अधिकरण कारक में घञ् प्रत्यय।

रम् + अ - 'घञ्' प्रत्यय के घकार और ञकार की 'लशक्वतद्धिते' तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप हुआ।

राम् + अ - 'अत उपधायाः' सूत्र से धातु के उपधा अकार को वृद्धि (आ) हुआ।

राम - वर्णसम्मेलन

राम + सु (स्) - कृदन्त होने के कारण प्रातिपदिक संज्ञा, सु प्रत्यय

रामः - रुत्व, विसर्ग

रामः - इति सिद्धम्

सूत्र- एरच् (3.3.56)

सूत्रार्थ- इवर्णान्त धातु से अच् प्रत्यय होता है, यदि वह कर्ता से भिन्न (कर्म,करण,सम्प्रदान) कारक में अथवा भाव अर्थ में हो तथा संज्ञा का विषय हो। अर्थात् 'एरच्' सूत्र से अच् प्रत्यय तभी होगा जब धातु इवर्णान्त हो तथा भाव अर्थ में अथवा कर्ता से भिन्न कारक में होगा संज्ञावाची हो तो.....।

महत्त्वपूर्ण तथ्य-

* घाजन्तश्च (लिङ्गानुशासन 2.3) सूत्र से अच् प्रत्ययान्त शब्द पुँल्लिङ्ग में प्रयुक्त होते हैं।

* इस सूत्र से होने वाला अच् प्रत्यय 'भावे' (3.3.18)तथा 'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्' (3.3.19) सूत्रों द्वारा होने वाले 'घञ्' प्रत्यय का अपवाद है।

* इवर्णान्त धातु का तात्पर्य है- 'इ' वर्ण जिस धातु के अन्त में है, वह चाहे ह्रस्व 'इ' हो या दीर्घ 'ई'। जैसे- चि, जि, नी आदि धातुयें।

9. सिद्धि प्रक्रिया-चि+अच्- चयः (चयनं चयः, चुनना, संग्रह करना, बटोरना)

स्त्रियां क्तिन् (3.3.94)

स्त्रियां भावे अकर्तरि च कारके संज्ञायाम् धातोः परः क्तिन् प्रत्ययः।

'ऋल्वादिभ्यः क्तिन्निष्ठावद्वाच्यः' (वा.)

* इस वार्तिक से दीर्घ ऋकारान्त धातु तथा लू आदि गणपति 21 धातुओं के बाद आने वाला क्तिन् प्रत्यय निष्ठा (क्त, क्तवतु) की तरह माना जाता है। अर्थात् जैसे- निष्ठा प्रत्यय (क्त क्तवतु) में तकार को नकार आदेश होता है तो क्तिन् के तकार को भी नकार आदेश हो जाएगा। जैसे- कॄ+क्तिन् = कीर्णिः (बिखेरना), तॄ + क्तिन् = तीर्णिः (तैरना)

लू+क्तिन् = लूनिः (काटना) धू+क्तिन् = धूनिः (कम्पना)

सूत्र - अलंखल्वोः प्रतिषेधयोः प्राचां क्त्वा (3.4.18)

सूत्रार्थ - निषेध (प्रतिषेध) अर्थ में विद्यमान 'अलम्' और 'खलु' शब्दों के समीप आने वाली धातुओं से क्त्वा प्रत्यय होता है।

महत्त्वपूर्ण तथ्य - प्रतिषेधार्थक अर्थात् निषेधार्थक 'अलम्' और 'खलु' अव्यय के योग में ही इस सूत्र से क्त्वा प्रत्यय होता है अन्य प्रतिषेधार्थक अव्ययों के योग में नहीं। जैसे - 'मा कार्षीः' यहाँ 'क्त्वा' प्रत्यय नहीं हुआ।

उदाहरण तालिका -

(i) अलं दत्त्वा (मत दो) **(ii)** पीत्वा खलु (मत पीओ)

सूत्र - समानकर्तृकयोः पूर्वकाले (3.4.21)

सूत्रार्थ - समानकर्ता वाले दो क्रियाओं में पूर्वकाल में विद्यमान क्रियावाचक धातु से क्त्वा प्रत्यय होता है।

महत्त्वपूर्ण तथ्य - 'समानकर्तृकयोः' में उक्त द्विवचन प्रधान नहीं है, अतः दो या दो से अधिक धातुओं में भी यह नियम प्रवृत्त होता है।

उक्तं च - द्वित्वमतन्त्रम्। जैसे - बालकः भुक्त्वा, पीत्वा व्रजति/ बालक खाकर पीकर जाता है।

निष्कर्ष यह है कि इस सूत्र से क्त्वा प्रत्यय करते समय यह बात अवश्य ही ध्यातव्य है कि समान कर्ता वाली दो या दो से अधिक धातुओं में पूर्वकाल वाली क्रिया से ही क्त्वा प्रत्यय लगेगा।

जैसे-भुक्त्वा व्रजति (खाकर जाता है)

सूत्र-'आभीक्ष्ण्ये णमुल् च' (3.4.22)

सूत्रार्थ - क्रिया के पुनः पुनः अर्थ द्योतित होने पर पूर्वकालिक क्रिया में क्त्वा तथा णमुल् प्रत्यय होते हैं।

उदाहरण - क्त्वा/ स्मृत्वा स्मृत्वा शिवं नमति (स्मरण कर करके शिव को नमन करता है)

भुक्त्वा भुक्त्वा व्रजति। (खा-खाकर जाता है।)

इन दोनों उदाहरणों में क्रिया पुनः पुनः हो रही है, अतः क्त्वा प्रत्यय हुआ।

णमुल् होने पर स्मारं स्मारं शिवं नमति। भोजं भोजं व्रजति।(3.4.22)

ल्यप्

सूत्र - समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप् (7.1.37)

सूत्रार्थ - जिस समास के पूर्वपद में नञ् से भिन्न कोई अन्य

अव्यय (उपसर्ग) स्थित हो तो उस समास में 'क्त्वा' प्रत्यय के स्थान पर ल्यप् आदेश हो जाता है।

महत्त्वपूर्ण तथ्य -

* यदि धातु के पूर्व उपसर्ग हो तो क्त्वा के स्थान पर 'ल्यप्' प्रत्यय होता है। जैसे - प्र + पठ् + क्त्वा (ल्यप्) = प्रपठ्य

* ल्यप् प्रत्यय क्त्वा के स्थान पर होने के कारण कित् न होते हुए भी 'स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ' सूत्र के अनुसार आर्धधातुक तथा कित् ।

* अनुबन्ध लोप होने पर 'क्त्वा' प्रत्यय तकारादि (त्वा) है तथा ल्यप् (य) प्रत्यय यकारादि है, क्त्वा के स्थान पर होने पर भी 'ल्यप्' को तकारादि प्रत्यय नहीं मानेंगे।

* समास के पूर्वपद में यदि नञ् होगा तो उत्तरपद में स्थित क्त्वा के स्थान पर ल्यप् नहीं होगा। जैसे -न कृत्वा - अकृत्वा (न करके), न गत्वा = अगत्वा, न पठित्वा = अपठित्वा।

प्रकृत्य (भली भाँति या अच्छी तरह करके) सिद्धि प्रक्रिया-

कृ + क्त्वा	- 'समानकर्तृकयोः पूर्वकाले' सूत्र से 'कृ' धातु से क्त्वा प्रत्यय हुआ।
कृ + त्वा	- अनुबन्धलोप 'कृत्वा'
प्र + कृत्वा	- 'कुगतिप्रादयः' सूत्र से कृत्वा इस अव्यय के साथ 'प्र' का समास होने पर
प्र + कृ + ल्यप्	- 'समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप्' सूत्र से क्त्वा के स्थान पर 'ल्यप्' प्रत्यय हुआ।
प्र + कृ + य	- अनुबन्धलोप
प्र + कृ + तुक् + य	- 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' से धातु और प्रत्यय के बीच तुक् का आगम।
प्र + कृ + त् + य	- अनुबन्धलोप
प्रकृत्य	- वर्णसम्मेलन
प्रकृत्य + सु	- प्रातिपदिक संज्ञा, सु प्रत्यय
प्रकृत्य	- 'क्त्वा-तोसुन्-कसुनः' सूत्र से अव्यय संज्ञा तथा 'अव्ययादाप्सुपः' से 'सु का लुक् ।
प्रकृत्य	- इति सिद्धम्।

तद्धित प्रत्यय तालिका

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
1.	✹ **अग्र्यः** (अग्रे साधुः)	आगे रहने में प्रवीण, योग्य	अग्र + यत्	तत्र साधुः (4.4.98)
2.	✹ **अङ्गना** (कल्याणानि अङ्गानि सन्ति अस्याः)	सुन्दर अङ्गों वाली स्त्री	अङ्ग + न + टाप्	लोमादि-पामादि-पिच्छादिभ्यः शनेलचः (5.2.100)
3.	✹ **अङ्गुलीयम्** (अङ्गुल्यां भवम्)	अँगूठी	अङ्गुलि + छ	जिह्वामूलाङ्गुलेश्छः (4.3.62)
4.	✹ **अतः**	इसलिए	एतद् (अन्) + तस्	पञ्चम्यास्तसिँल् (5.3.7)
5.	✹ **अधीती** (अधीतम् अनेन)	जिसने अध्ययन कर रखा है, ऐसा व्यक्ति	अधीत + इनिँ	इष्टादिभ्यश्च (5.2.88)
6.	✹ **अन्ततः** (अन्ते)	अन्त में	अन्त + तसिँ	आद्यादिभ्यस्तसेरुपसंख्यानम् (वा0)
7.	✹ **अन्नमयम्** (प्रकृतं प्राचुर्येण प्रस्तुतम् अन्नम्)	अधिकता से विद्यमान अन्न	अन्न + मयट्	तत्प्रकृतवचने मयट् (5.4.21)
8.	✹ **अन्यदा** (अन्यस्मिन् काले)	अन्य समय में	अन्य+ दा	सर्वैकाऽन्य -किं-यत् - तदः काले दा (5.3.15)
9.	✹ **अपाच्यम्** (अपाचि जातं भवं वा)	दक्षिणदिशा (दक्षिण देश में पैदा हुआ या वहाँ होने वाला)	अप अञ्च् + यत्	द्युप्रागपागुदक्प्रतीचो यत् (4.2.100)
10.	✹ **अपूपमयम्** प्रकृताः (प्राचुर्येण प्रस्तुताः) अपूपाः	अधिकता से विद्यमान मालपूए	अपूप + मयट्	तत्प्रकृतवचने मयट् (5.4.21)
11.	✹ **अभितः**	दोनों ओर	अभि+ तसिँल्	पर्यभिभ्यां च (5.3.9)
12.	✹ **अमात्यः** (अमा भवः)	मन्त्री (साथ या समीप में होने वाला)	अमा+ त्यप्	* अमेह-क्व-तसिँ-त्रेभ्य एव (वा0) * अव्ययात् त्यप् (4.2.1.03)
13.	✹ **अमुतः (अमुष्मात्)**	उस से	अदस् + तसिँल्	पञ्चम्यास्तसिँल् (5.3.7)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
14.	**अर्घ्यः** (अर्हति इति अर्घ्यः)	पूज्य	अर्घ + यत्	दण्डादिभ्यो यत् (5.1.65)
15.	**अर्णवः** (प्रभूतम् अर्णोऽस्ति अस्मिन् इति)	समुद्र	अर्णस् + व	अर्णसो लोपश्च (वा.)
16.	**अर्शसः** (अर्शांसि विद्यन्ते अस्य)	अर्श, बवासीर वाला रोग	अर्शस् + अच्	अर्श- आदिभ्योऽच् (5.2.127)
17.	**अल्पशः** (अल्पानि ददाति)	थोड़ा देता है	अल्प+ शस्	बह्वल्पार्थाच्छस् कारका-दन्यतरस्याम् (5.4.42)
18.	**अवारपारीणः** (अवारपारे भवः)	इस पार और उस पार में होने वाला या पैदा हुआ	अवारपार+ख	राष्ट्राऽवारपाराद् घखौ (4.2.92)
19.	**अवारीणः** (अवारे भवो जातो वा)	इस तट में होने वाला या पैदा हुआ	अवार+ ख	अवारपाराद् विगृहीतादपि विपरीताच्चेति वक्तव्यम् (वा0)
20.	**अशीतिः** (अष्ट दशतः परिमाणमस्य सङ्घस्य इति)	अस्सी	अष्टदशत् (अशी) + ति	पङ्क्ति- विंशति-त्रिंशच्- चत्वारिंशत् - पञ्चाशत् - षष्टि-सप्तत्यशीति- नवति- शतम् (5.1.58)
21.	**अश्ममयम्** (अश्मनो विकारः)	पत्थर	अश्मन् + मयट्	मयड् वैतयोर्भाषायामभक्ष्या च्छादनयोः (4.3.141)
22.	**अश्वकः** (कुत्सितोऽश्वः)	निन्दित घोड़ा	अश्व+क	प्रागिवात् कः (5.3.70) कुत्सिते (5.3.74)
23.	**अस्मदीयः** (आवयोः अस्माकं वा अयम्)	हम दोनों का / हम सब का	अस्मद् + छ	युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ् च (4.3.1)
24.	**अहंयुः** (अहम् अस्ति अस्य इति)	अहङ्कार रखने वाला (घमण्डी)	अहम् + युस्	अहंशुभमोर्युस् (5.2.140)
25.	**अहीनः** (अह्नां समूहः)	सुत्याओं का समूहरूप एक यज्ञविशेष	अहन् + ख	अह्नः खः क्रतौ (वा.)
26.	**आक्षिकः** (अक्षैः दीव्यति)	पासों से खेलने वाला	अक्ष + ठक्	तेन दीव्यति खनति जयति जितम् (4.4.2)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
27.	● **आढ्यतमः** (अयम् एषाम् अतिशयेन आढ्यः)	सबसे अधिक धनी	आढ्य + तमप्	अतिशायने तमबिष्ठनौ (5.3.55)
28.	● **आत्मनीनम्** (आत्मने हितम्)	अपने लिए हितकर	आत्मन् + ख	आत्मन् - विश्वजन-भोगोत्तरपदात् खः (5.1.9)
29.	● **आदितः** (आदौ)	आदि में	आदि + तस्	आद्यादिभ्यस्तसेरुपसंख्यानम् (वा.)
30.	● **आदित्यः** (अदिते अपत्यम्)	अदिति की सन्तान	अदिति + ण्य	दित्यदित्यादित्यपत्युत्तर-पदाण्ण्यः (4.1.85)
31.	● **आधर्मिकः** (अधर्मं चरति)	अधर्म (पाप) का आचरण करने वाला	अधर्म + ठक्	अधर्माच्चेति वक्तव्यम् (वा0)
32.	● **आधिदैविकम्** (अधिदेवम्, अधिदेवे भवम् वा)	देवों में होने वाला	अधिदेव + ठञ्	अध्यात्मादेष्ठञ् इष्यते (वा0)
33.	● **आधिभौतिकम्** (अधिभूतम्, अधिभूते भवम् वा)	पृथ्व्यादि भूतों में होने वाला	अधिभूत + ठञ्	अध्यात्मादेष्ठञ् इष्यते (वा0)
34.	● **आध्यात्मिकम्** (अध्यात्मम् अध्यात्मे वा भवम्)	आत्मा में होने वाला	अध्यात्म + ठञ्	अध्यात्मादेष्ठञ् इष्यते (वा0)
35.	● **आपूपिकः** (अपूपभक्षणं शीलम् अस्य)	मालपुए खाना जिसका स्वभाव है, ऐसा पुरुष	अपूप+ ठक्	शीलम् (4.4.61)
36.	● **आम्रमयम्** (आम्रस्य विकारो अवयवो वा)	आम्रवृक्ष का विकार या उसका अवयव	आम्र + मयट्	नित्यं वृद्धशरादिभ्यः (4.3.142)
37.	● **आश्मः** (अश्मनेः विकारः)	पत्थर का विकार अर्थात् पत्थर से बना कोई पदार्थ	अश्मन् + अण्	तस्य विकारः (4.3.132)
38.	● **आश्वपतम्** (अश्वपतेः अपत्यम्)	अश्वपति की सन्तान	अश्वपति + अण्	अश्वपत्यादिभ्यश्च (4.1.84)
39.	● **आसिकः** (असिः प्रहरणम् अस्य इति)	जिसका हथियार तलवार है, ऐसा पुरुष	असि+ ठक्	प्रहरणम् (4.4.57)
40.	● **आह्निकम्** (अह्ना निर्वृत्तम्)	एक दिन में सम्पन्न किया गया कार्य	अहन् + ठञ्	तेन निर्वृत्तम् (5.1.78)
41.	● **इक्ष्वाकवः** (इक्ष्वाकोः अपत्यानि, इक्ष्वाकूणां जनपदानां राजानः)	इक्ष्वाकु की सन्तानें / इक्ष्वाकु देश के राजा लोग	इक्ष्वाकु + अञ्	जनपदशब्दात् क्षत्रियादञ् (4.1.166)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
42.	✹ **इतः** (अस्मात्)	यहाँ से, इससे, इस कारण में	इदम् + तसिँल्	पञ्चम्यास्तसिँल् (5.3.7)
43.	(i) इत्थम (अनेन प्रकारेण) (ii) इत्थम् (एतेन प्रकारेण)	इस प्रकार वाला, ऐसा इस प्रकार वाला, ऐसा	इदम् + थमुँ एतद् + थमुँ	इदमस्थमुः (5.3.24) एतदोऽपि वाच्यः (वा.)
44.	✹ **इयान्** (इदं प्रमाणम् अस्य)	यह है परिमाण इसका अर्थात् इतना	इदम् + वतुँप्	किमिदम्भ्यां वो घः (5.2.40)
45.	✹ **इष्टी** (इष्टम् अनेन)	यज्ञ कर चुका व्यक्ति	इष्ट + इनि	इष्टादिभ्यश्च (5.2.88)
46.	✹ **इह** (अस्मिन्)	इस पर / यहाँ पर	इदम् + ह	इदमो हः (5.3.11)
47.	✹ **इहत्यः** (इह भवः इह जातः वा)	यहाँ होने वाला / यहाँ पैदा हुआ	इह+ त्यप्	अव्ययात् त्यप् (4.2.103)
48.	✹ **उच्चकैः** (अज्ञातम् उच्चैः)	अज्ञात ऊँचा	उच्च् + अकँच् + ऐस्	अज्ञाते (5.3.73)
49.	✹ **उच्चैस्तमाम्** (अतिशयेन उच्चैः)	अत्यधिक ऊँचे	उच्चैस् + तमप् + आँमु	(i) अतिशायने तमबिष्ठनौ (5.3.55) (ii) किमेत्तिङव्यय- घादाम्व द्रव्यप्रकर्षे (5.4.11)
50.	✹ **उदीच्यम्** (उदीचि जातं भवं वा)	उत्तर दिशा या उत्तर देश में पैदा हुआ या वहाँ हीने वाला	उदीचि + यत्	द्युप्रागपागुदक्-प्रतीचो यत् (4.2.100)
51.	✹ **उभयम्** (उभौ अवयवौ अस्य)	(दो अवयवों वाला अवयवी)	उभ + तयप्	संख्याया अवयवे तयप् (5.2.42)
52.	✹ **ऊरुदघ्नम्** (ऊरू प्रमाणम् अस्य)	ऊरु के बराबर प्रमाण है जिसका अर्थात् नदी का जल उरू	ऊरु+ दघ्नम्	प्रमाणे द्वयसज्दघ्नञ्-मात्रचः (5.2.37)
53.	✹ **ऊरुद्वयसम्** (ऊरू प्रमाणम् अस्य)	ऊरु (जंघा) के बराबर प्रमाण है जिसका	ऊरु+ द्वयसच्	प्रमाणे द्वयसज्दघ्नञ् - मात्रचः (5.2.37)
54.	✹ **ऊरुमात्रम्** (ऊरू प्रमाणम् अस्य)	ऊरु (जंघा) के बराबर प्रमाण है	ऊरु+मात्रच्	प्रमाणे द्वयसज्दघ्नञ् मात्रचः (5.2.37)
55.	✹ **एकादशः** (एकादशानां पूरणः)	ग्यारह संख्या को पूर्ण करने वाला / ग्यारहवाँ	एकादशन् + डट्	तस्य पूरणे डट् (5.2.48)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
56.	✹ **एतर्हि** (अस्मिन् काले)	इस काल में / अब	इदम् + र्हिल्	इदमो र्हिल् (5.3.16)
57.	✹ **एतावान्** (एतत् परिमाणम् अस्य)	इतना	एतत् + वतुप्	यत्तदेतेभ्यः परिमाणे वतुप् (5.2.39)
58.	✹ **ऐन्द्रम्** (इन्द्रः देवता अस्य इति ऐन्द्रं हविः)	इन्द्र जिसका देवता है ऐसी हवि आदि	इन्द्र+ अण्	साऽस्य देवता (4.2.23)
59.	✹ **ऐहलौकिकम्** (इहलोके भवम्)	इस लोक में होने वाला	इहलोक + ठञ्	अध्यात्मादेष्ठञ् इष्यते (वा0)
60.	✹ **औडुपिकः** (उडुपेन तरति)	उडुप अर्थात् छोटी नौका के द्वारा पार करने वाला	उडुप + ठक्	तरति (4.4.5)
61.	✹ **औडुलोमिः** (उडुलोम्नः अपत्यम्)	उडुलोमन् नामक व्यक्ति की सन्तति	उडुलोमन् + इञ्	बाह्वादिभ्यश्च (4.1.96)
62.	✹ **औत्सः** (उत्से भव औत्सः)	उत्स अर्थात् झरने में होने वाला मण्डूक आदि	उत्स+ अञ्	उत्सादिभ्योऽञ् (4.1.86)
63.	✹ **औदुम्बरः देशः** (उदुम्बराः सन्ति अस्मिन् देशे)	उदुम्बर (गूलर) के पेड़ जिस देश में हैं, वह देश	उदुम्बर + अण्	तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि (4.2.66)
64.	✹ **औपगवम्** (उपगोः इदम् औपगवम्)	उपगु की यह वस्तु	उपगु + अण्	तस्येदम् (4.3.120)
65.	✹ **औपगवः** (उपगोः अपत्यम्)	उपगु की सन्तान	उपगु + अण्	* प्राग्दीव्यतोऽण् (4.1.83) * तस्याऽपत्यम् (4.1.92)
66.	✹ **औपनिषदः** (पुरुषः) (उपनिषद्भिः प्रतिपाद्यते)	उपनिषदों से प्रतिपादित किया जाने वाला (आत्मा)	उपनिषद् + अण्	शेषे (4.2.91)
67.	✹ **औपाध्यायकः** (उपाध्यायात् आगतः)	उपाध्याय से आया हुआ ग्रन्थ	उपाध्याय + वुञ्	विद्यायोनि सम्बन्धेभ्यो वुञ् (4.3.77)
68.	✹ **कण्ठ्यम्** (कण्ठाय हितम्)	कण्ठ के लिए हितकर	कण्ठ + यत्	शरीरावयवाद् यत् (5.1.6)
69.	✹ **कतमः** (को भवतां)	कौन	किम् + डतमच्	वा बहूनां जातिपरिप्रश्ने डतमच् (5.3.93)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
70.	✹ **कतरः**	कौन	किम् + डतरच्	किंयत्तदो निर्धारणे द्वयोरेकस्य डतरच् (5.3.92)
71.	✹ **कतिथः** (कतीनां पूरणः)	कितनों का पूरण (कितनवाँ)	कति + थुँक + डट्	तस्य पूरणे डट् (5.2.48)
72.	✹ **कतिपयथः** (कतिपयानां पूरणः)	कुछेक का पूरण (कुछेकवाँ)	कतिपय + थुँक्+ डट्	तस्य पूरणे डट् (5.2.48)
73.	✹ **कथम्** (केन प्रकारेण)	कैसा	किम् + थमुँ	किमश्च (5.3.25)
74.	✹ **कदा** (कस्मिन् काले)	किस काल में, कब	किम् + दा	सर्वैकाऽन्य-किं-यत् - तदः काले दा (5.3.15)
75.	✹ **कर्मण्यः** (कर्मसु साधुः)	कर्मों के करने में प्रवीण या योग्य	कर्मन् + यत्	तत्र साधुः (4.4.98)
76.	✹ **कर्हि** (कस्मिन् अनद्यतने काले)	किस अनद्यतन काल में	किम् + र्हिल्	अनद्यतने र्हिलन्यतरस्याम् (5.3.21)
77.	✹ **कवर्गीयम्** (कवर्गे भवम्)	कवर्ग में होने वाला	कवर्ग + छ	वर्गान्ताच्च (4.3.63)
78.	✹ **काकम्** (काकानां समूहः)	कौओं का समूह	काक + अण्	तस्य समूहः (4.2.36)
79.	✹ **कानीनः** (कन्याया अपत्यम्)	अविवाहिता का पुत्र, कर्ण या व्यास	कन्या + अण्	कन्यायाः कनीन च (4.1.116)
80.	✹ **कापेयम्** (कपेर्भावः कर्म वा)	कपि का भाव अर्थात् वानरपना	कपि + ढक्	कपि - ज्ञात्योर्ढक् (5.1.126)
81.	✹ **कार्पासम्** (कर्पासस्य विकारः)	कपास का विकार अर्थात् सूती ओढ़ने का वस्त्र	कर्पास + अण्	बिल्वादिभ्योऽण् (4.3.134)
82.	✹ **कालिकम्** (काले भवं जातं वा)	समय पर होने वाला	काल + ठञ्	कालाट्ठञ् (4.3.11)
83.	✹ **काषायम्** (कषायेण रक्तं वस्त्रम्)	गेरुए रंग से रङ्गा हुआ वस्त्र आदि	कषाय + अण्	तेन रक्तं रागात् (4.2.1)
84.	✹ **किन्तमाम्** (इदम् एषाम् अतिशयेन किम्)	सबसे अधिक कुत्सित वस्तु	किंतम + आमुँ	किमेत्तिङव्यय-घादाम्वद्रव्यप्रकर्षे (5.4.11)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
85.	* **कियान्** (किं परिमाणमस्य)	क्या है परिमाण इसका अर्थात् कितना	किम् + वतुँप्	किमिदम्भ्यां वो घः (5.2.40)
86.	* **कुत्र** (कस्मिन्)	कहाँ पर, किसमें, किस पर	किम् + त्रल्	सप्तम्यास्त्रल् (5.3.10)
87.	* **कुमुद्वान्** (कुमुदाः सन्ति अस्मिन् देशे)	श्वेतकमल जिसमें है, ऐसा देश	कुमुद+ ड्मतुँप्	कुमुद-नड- वेतसेभ्यो ड्मतुँप् (4.2.86)
88.	* **कृतपूर्वी** (पूर्वं कृतम् अनेन)	जो पहले कर चुका है, ऐसा व्यक्ति	कृतपूर्व + इनिँ	सपूर्वाच्च (5.2.87)
89.	* **केशवः** (केशाः सन्ति अस्य इति)	केशों वाला	केश+ व	केशाद्वोऽन्यतरस्याम् (5.2.109)
90.	* **केशवान्** (केशाः सन्ति अस्य)	केशों वाला	केश + मतुँप्	तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुँप् (5.2.94)
91.	* **केशिकः** (केशाः सन्ति अस्य)	केशों वाला	केश+ ठन्	अत इनिँ - ठनौ (5.2.115)
92.	* **केशी** (केशाः सन्ति अस्य)	केशों वाला	केश + इनिँ	अत इनिँ - ठनौ (5.2.115)
93.	* **कौरव्यः** (कुरोः अपत्यम्)	कुरु की सन्तान	कुरु+ ण्य	कुरु- नादिभ्यो ण्यः (4.1.170)
94.	* **कौशेयम्** (कोशे सम्भवति)	कोश में सम्भव होने वाला (रेशमी वस्त्र)	कोश + ढञ्	कोशाड् ढञ् (4.3.42)
95.	* **क्रमकः** (क्रमम् अधीते वेत्ति वा)	वैदिक क्रमपाठ को पढ़ने या जानने वाला	क्रम + वुन्	क्रमादिभ्यो वुन् (4.2.60)
96.	* **क्वत्यः** (क्व भवो जातो वा)	कहाँ होने वाला	क्व + त्यप्	* अमेह-क्व-तसिँ-त्रेभ्य एव (वा0) * अव्ययात् त्यप् (4.2.103)
97.	* **क्षत्त्रियः** (क्षत्त्रस्य अपत्यम्)	क्षत्त्र की सन्तति	क्षत्त्र + घ	क्षत्त्राद् घः (4.1.138)
98.	* **गजता** (गजानां समूहः)	हाथियों का समूह या झुण्ड	गज+ तल्	गज-सहायाभ्यां चेति वक्तव्यम् (वा0)
99.	* **गरुत्मान्** गरुतौ (पक्षौ स्तोऽस्य)	दो पंख हैं इसके अर्थात् पक्षी या गरुड़	गरुत् + मतुँप्	तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुँप् (5.2.94)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
100.	✹ **गव्यम्** (गवि भवम्)	गौ में होने वाला	गो + यत्	गोरजादिप्रसङ्गे यत् (वा0)
101.	✹ **गहीयः** (गहे भवः)	गुफा आदि गहन स्थान में होने वाला	गह + छ	गहादिभ्यश्च (4.2.137)
102.	✹ **गाङ्गः** (गङ्गाया अपत्यम्)	गङ्गा की सन्तान, भीष्म	गङ्गा+ अण्	शिवादिभ्योऽण् (4.1.112)
103.	✹ **गाणपतम्** (गणपतेरपत्यादि)	गणपति की सन्तान	गणपति+ अण्	अश्वपत्यादिभ्यश्च (4.1.84)
104.	✹ **गार्ग्यः** (गर्गस्य गोत्रापत्यम्)	गर्ग का गोत्रापत्य अर्थात् पौत्र आदि सन्तान	गर्ग + यञ्	गर्गादिभ्यो यञ् (4.1.105)
105.	✹ **गोता** (गोः भावः गोत्वं गोता वा)	गाय या बैल का भाव या गोत्व जाति	गो + तल्	तस्य भावस्त्वतलौ (5.1.118)
106.	✹ **गोत्वम्** (गोः भावः गोत्व)	गोत्व जाति	गो + त्व	तस्य भावस्त्वतलौ (5.1.118)
107.	✹ **गोमयम्** (गोः पुरीषम्)	गौ का मल अर्थात् गोबर	गो + मयट्	गोश्च पुरीषे (4.3.143)
108.	✹ **गोमान्** (गावः सन्ति अस्य)	गौएं हैं जिसकी अर्थात् गौओं वाला व्यक्ति	गो + मतुँप्	तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुँप् (5.2.94)
109.	✹ **ग्रामता** (ग्रामाणां समूहः)	गाँवों का समूह	(i) ग्राम + तल् (ii) ग्रामत+टाप्	(i) ग्राम-जन-बन्धुभ्यस्तल् (4.2.42) (ii) अजाद्यतष्टाप् (4.1.4)
110.	✹ **ग्रामीणः** (ग्रामे जातो भवो वा)	ग्राम में पैदा हुआ या ग्राम में होने वाला	ग्राम+ खञ्	ग्रामाद् य-खञौ (4.2.93)
111.	✹ **ग्राम्यः** (ग्रामे जातो भवो वा)	ग्राम में पैदा हुआ या ग्राम में होने वाला	ग्राम+ य	ग्रामाद् य-खञौ (4.2.93)
112.	✹ **चतुर्थः** (चतुर्णां पूरणः)	चौथा	चतुर् + डट्	तस्य पूरणे डट् (5.2.48)
113.	✹ **चत्वारिंशत्** (चत्वारो दशतः परिमाणमस्य सङ्घस्य इति)	चालीस	चतुर्दशत् + शत्	पङ्क्ति-विंशति-त्रिंशच्-चत्वारिंशत्- पञ्चाशत्-षष्टि-सप्तत्यशीति- नवति-शतम् (5.1.58)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
114.	✸ **चाक्षुषम्** (चक्षुषा गृह्यते)	चक्षुरिन्द्रिय से जो ग्रहण किया जाता है अर्थात् रूप आदि	चक्षुष् + अण्	शेषे (4.2.91)
115.	✸ **चातुरम्** (चतुर्भिः उह्यते)	चार घोड़ों से खींचा जाने वाला छकड़ा	चतुर्दशी + अण्	शेषे (4.2.91)
116.	✸ **चातुर्दशम्** (चतुर्दश्यां दृश्यते)	चतुर्दशी में दिखायी देने वाला राक्षस	चतुर्दशी + अण्	शेषे (4.2.91)
117.	✸ **चिरन्तनः** (चिरे भवः)	प्राचीनकाल में होने वाला	चिर + ट्यु / ट्युल्	सायं-चिरं- प्राह्णे-प्रगेऽव्यये-भ्यष्ट्युट्युलौ तुँट् च (4.3.23)
118.	✸ **चूडालः** (चूडा अस्ति अस्य इति)	चूडा है इसका अर्थात् चुटियावाला	चूडा+ लच्	प्राणिस्थादातो लजन्यतरस्याम् (5.2.96)
119.	✸ **चूडावान्** (चूडा अस्ति अस्य इति)	चुटियावाला	चूडा+ मतुँप्	तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुँप् (5.2.94)
120.	✸ **चैत्रवत्** (चैत्रस्य इव)	चैत्रनामक व्यक्ति की तरह	चैत्र+ वतिँ	तत्र तस्येव (5.1.115)
121.	✸ **जनता** (जनानां समूहः)	लोगों का समूह	(i) जन + तल् (i) जनत + टाप्	(i) ग्राम-जन-बन्धुभ्यस्तल् (4.2.42) (ii) अजाद्यतष्टाप् (4.1.4)
122.	✸ **जाड्यम्** (जडस्य भावः कर्म वा)	जड़ का भाव अर्थात् जड़ता, जड़पना	जड+ ष्यञ्	गुणवचन-ब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च (5.1.123)
123.	✸ **जिह्वामूलीयम्** (जिह्वामूले भवम्)	जिह्वा के मूल में होने वाला	जिह्वामूल + छ	जिह्वामूलाङ्गुलेश्छः (4.3.62)
124.	✸ **ज्ञातेयम्** (ज्ञातेर्भावः कर्म वा)	बन्धुता या बन्धु का कर्म	ज्ञाति + ढक्	कपि- ज्ञात्योर्ढक् (5.1.126)
125.	✸ **ज्यायान्** (अयम् अनयोः अतिशयेन प्रशस्यः)	दोनों में अधिक प्रशंसनीय	प्रशस्य (ज्य) + ईयसुँन्	द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुँनौ (5.3.57)
126.	✸ **ज्येष्ठः** (सर्वे इमे प्रशस्याः)	सबसे बढ़कर प्रशंसनीय	प्रशस्य (ज्य) + इष्ठन्	अतिशायने तमबिष्ठनौ (5.3.55)
127.	✸ **तत्र** (तस्मिन्)	उसमें, उस पर, वहाँ पर	तद् + त्रल्	सप्तम्यास्त्रल् (5.3.10)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
128.	✹ **तथा** (तेन प्रकारेण)	उस प्रकार वाला, वैसा	तद् + थाल्	प्रकारवचने थाल् (5.3.23)
129.	✹ **तदा** (तस्मिन् काले)	उस समय में, तब	तद् + दा	सर्वैकाऽन्य-किं-यत् - तदः काले दा (5.3.15)
130.	✹ **तदीयः** (तस्य अयम्)	उसका यह	तद् + छ	वृद्धाच्छः (4.2.113)
131.	✹ **तर्हि** (तस्मिन् अनद्यतने काले	उस अनद्यतन काल में, तब	तद् + र्हिल्	अनद्यतने र्हिलन्यतरस्याम् (5.3.21)
132.	✹ **तारकितम्** (तारकाः संजाता अस्य)	तारे उत्पन्न हो गये हैं इसके, ऐसा आकाश	तारका + इतच्	तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच् (5.2.36)
133.	✹ **तावकः** (तव अयम्)	तेरा यह	युष्मद् + अण्	युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ् च (4.3.1)
134.	✹ **तावकीनः** (तव अयम्)	तेरा यह	युष्मद् + खञ्	युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ् च (4.3.1)
135.	✹ **तावान्** (तत् परिमाणम् अस्य)	जो परिमाण है उसका अर्थात् उतना	तद् +वतुँप्	यत्तदेतेभ्यः परिमाणे वतुँप् (5.2.39)
136.	✹ **तुल्यम्** (तुलया सम्मितम्)	तराजू द्वारा परिच्छिन्न तोला गया	तुला+ यत्	नौ-वयो-धर्म-विष-मूल-मूल-सीता-तुलाभ्यस्तार्य-तुल्य-प्राप्य-वध्याऽऽनाम्य-सम-समित- संमितेषु (4.4.91)
137.	✹ **तृतीयः** (त्रयाणां पूरणः)	तीसरा	त्रि+ तीय	त्रेः सम्प्रसारणं च (5.2.55)
138.	✹ **त्रयम्** (त्रयोऽवयवा अस्य)	तीन अवयव हैं इसके	त्रि+तयप्	संख्याया अवयवे तयप् (5.2.42)
139.	✹ **त्रितयम्** (त्रयं त्रितयम्)	तीन अवयवों वाला अवयवी	त्रि + तयप्	संख्याया अवयवे तयप् (5.2.42)
140.	✹ **त्रिंशत्** (त्रयो दशतः परिमाणमस्य सङ्घस्येति त्रिंशत्)	तीस	त्रिदशत् + शत्	पङ्क्ति-विंशति-त्रिंशच्-चत्वारिंशत्-पञ्चाशत् -षष्टि-सप्तत्यशीति-नवति-शतम् (5.1.58)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
141.	✸ **त्वचिष्ठः** (अयम् एषाम् अतिशयेन त्वग्वान्)	सब त्वचा वालों में अधिक त्वचावान्	त्वच् + मतुप्	तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् (5.2.94)
142.	✸ **त्वदीयः** (तव अयम्)	तेरा यह	युष्मद् + छ	युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ् च (4.3.1)
143.	✸ **दण्डिकः** (दण्डोऽस्यास्तीति)	दण्ड वाला	दण्ड+ ठन्	अत इनिँ-ठनौ (5.2.115)
144.	✸ **दण्डी** (दण्डोऽस्यास्तीति)	दण्ड वाला	दण्ड + इनि	अत इनिँ-ठनौ (5.2.115)
145.	✸ **दण्ड्यः** (दण्डम् अर्हति)	सजा पाने के योग्य व्यक्ति	दण्ड + यत्	दण्डादिभ्यो यत् (5.1.65)
146.	✸ **दन्तुरः** (उन्नता दन्ताः सन्ति अस्य)	उन्नत दाँतों वाला	दन्त + उरच्	दन्त उन्नत उरच् (5.2.106)
147.	✸ **दन्त्यम्** (दन्तेभ्यो हितम्)	दाँतों के लिए हितकारी मञ्जन आदि	दन्त+ यत्	शरीरावयवाद् यत् (5.1.6)
148.	✸ **दाक्षिः** (दक्षस्य अपत्यम्)	दक्ष की सन्तान	दक्ष + इञ्	अत इञ् (4.1.95)
149.	✸ **दाक्षिणात्यः** (दक्षिणा जातो भवो वा)	दक्षिण दिशा में उत्पन्न हुआ	दक्षिणा+ त्यक्	दक्षिणा- पश्चात् - पुरसस्त्यक् (4.2.97)
150.	✸ **दाधिकम्** (दध्ना संस्कृतम्)	दही से संस्कार किया हुआ	दधि+ ठक्	संस्कृतम् (4.4.3)
151.	✸ **दाधिकः** (दध्ना चरति)	दही के साथ खाने वाला	दधि+ ठक्	चरति (4.4.8)
152.	✸ **दार्ढ्यम्** (दृढस्य भावः)	दृढ़पना, दृढ़ता	दृढ + ष्यञ्	वर्ण-दृढादिभ्यः ष्यञ् च (5.1.122)
153.	✸ **दार्दुरिकः** (दर्दुरं करोति)	दर्दुर को बनाने वाला कुम्भकार	दर्दुर+ ठक्	शब्ददर्दुरं करोति (4.4.34)
154.	✸ **दार्षदाः** (दृषदि पिष्टाः)	पत्थर पर पीसे गये सत्तू	दृषद् + अण्	शेषे (4.2.91)
155.	✸ **दिवाभूता** (अदिवा दिवा सम्पद्यमाना भूता)	जो दिन न थी पर दिन बन गयी ऐसी रात	दिवा+ च्विँ	कृभ्वस्तियोगे सम्पद्यकर्तरि च्विँः (5.4.50)
156.	✸ **दिव्यम्** (दिवि जातं भवं वा)	स्वर्ग में पैदा हुआ या होने वाला	दिव् + यत्	द्युप्रागपागुदक्प्रतीचो यत् (4.2.100)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
157.	✹ **दिश्यम्** (दिशि भवम्)	दिशा में होने वाला	दिश् + यत्	दिगादिभ्यो यत् (4.3.54)
158.	✹ **देवदत्तमयम्** (देवदत्ताद् आगतम्)	देवदत्त से आया हुआ	देवदत्त+ मयट्	मयट् च (4.3.82)
159.	✹ **दैत्यः** (दितेः अपत्यम्)	दिति की सन्तान	दिति+ ण्य	दित्यदित्यादित्यपत्युत्तर-पदाण्ण्यः (4.1.85)
160.	✹ **दैवतः** (देवता एव)	देवता	देवता+ अण्	प्रज्ञादिभ्यश्च (5.4.38)
161.	✹ **दैवदत्तम्** (देवदत्ताद् आगतम्)	देवदत्त से आया हुआ	देवदत्त + अण्	तत आगतः (4.3.74)
162.	✹ **दैवदत्तः** (देवदत्तस्य अयम्)	देवदत्त का यह	देवदत्त+ अण्	तस्येदम् (4.3.120)
163.	✹ **दैवम्** (देवस्य अपत्यादि)	देव की सन्तान आदि	देव+ अञ्	देवाद् यञञौ (वा0)
164.	✹ **दैव्यम्** (देवस्य अपत्यादि)	देव की सन्तान आदि	देव +यञ्	देवाद् यञञौ (वा0)
165.	✹ **दोषातनम्** (दोषा भवम्)	रात्रि में होने वाला	दोषा+ ट्यु/ ट्युल्	सायं-चिरं- प्राह्णे-प्रगेऽव्ययेभ्यष्ट्युट्युलौ तुँट् च (4.3.23)
166.	✹ **दोषाभूतम्** (अदोषा दोषा सम्पद्यमानं भूतम्)	जो रात्रि न था परन्तु रात्रि हो गया, ऐसा दिन	दोषा + च्विँ	कृभ्वस्तियोगे सम्पद्यकर्तरि च्विँः (5.4.50)
167.	✹ **दौहित्रः** (दुहितुरनन्तरापत्यम्)	लड़की की सन्तान अर्थात् धेवता	दुहितृ + अञ्	अनृष्यानन्तर्ये बिदादिभ्योऽञ् (4.1.104)
168.	✹ **द्वयम्** (अवयवौ अस्य)	दो अवयव हैं इसके अर्थात् दो अवयवों वाला अवयवी	द्वि+ तयप्	संख्याया अवयवे तयप् (5.2.42)
169.	✹ **द्वितयम्** (द्वौ अवयवौ अस्य)	दो अवयवों वाला अवयवी	द्वि+ तयप्	संख्याया अवयवे तयप् (5.2.42)
170.	✹ **द्वितीयः** (द्वयोः पूरणः)	दूसरा	द्वि+ तीय	द्वेस्तीयः (5.2.54)
171.	✹ **द्वैमातुरः** (द्वयोर्मात्रोरपत्यम्)	दो माताओं की सन्तान	द्विमातृ + अण्	मातुरुत्संख्यासम्भद्रपूर्वायाः (4.1.115)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
172.	✹ **धर्म्यम्** (धर्मेण प्राप्यम्)	धर्म के द्वारा प्राप्त किये जाने वाले सुख	धर्म + यत्	नौ-वयो- धर्म-विष- मूल-मूल-सीता-तुलाभ्यस्तार्य-तुल्य-प्राप्य-वध्याऽऽनाम्य-सम-समित-संमितेषु (4.4.91)
173.	✹ **धानुष्कः** (धनुः प्रहरणम् अस्य)	जिसका हथियार धनुष है, ऐसा पुरुष	धनुष् + ठक्	प्रहरणम् (4.4.57)
174.	✹ **धार्मिकः** (धर्मं चरति)	धर्म का आचरण करने वाला	धर्म + ठक्	धर्मं चरति (4.4.41)
175.	✹ **धुर्यः** (धुरं वहति)	धुर को वहन करने वाले बैल, घोड़े	धुर् + यत्	धुरो यड्ढकौ (4.4.77)
176.	✹ **धैनुकम्** (धेनूनां समूहः)	गौओं का समूह	धेनु + ठक्	अचित्त-हस्ति-धेनोष्ठक् (4.2.46)
177.	✹ **धौरेयः** (धुरं वहति)	धुर् को वहन करने वाले बैल, घोड़े आदि	धुर् + ढक्	धुरो यड्ढकौ (4.4.77)
178.	✹ **नड्वलः** (नडाः सन्ति अस्मिन्)	नडतृण जिसमें हैं, ऐसा प्रदेश	नड+ ड्वलच्	नड-शादाड् ड्वलच् (4.2.87)
179.	✹ **नड्वान्** (नडाः सन्ति अस्मिन्)	नडतृण जिसमें हैं, ऐसा देश	नड+ ड्मतुँप्	कुमुद-नड-वेतसेभ्यो ड्मतुँप् (4.2.86)
180.	✹ **नभ्यः** (नाभये हितः नभ्यः अक्षः)	रथ के पहिया के दण्ड लिए हितकर	नाभि + यत्	उगवादिभ्यो यत् (5.1.2)
181.	✹ **नवतिः** (नव दशतः परिमाणमस्य संघस्य इति)	नब्बे	नवदशत् + ति	पंक्ति-विंशति- त्रिंशच् -चत्वारिंशत् -पञ्चाशत्-षष्टि -सप्तत्यशीति- नवति- शतम् (5.1.58)
182.	✹ **नस्यम्** (नासिकायै हितम्)	नासिका के लिए हितकर	नासिका + यत्	शरीरावयवाद् यत् (5.1.6)
183.	✹ **नाकुलः** (नकुलस्य अपत्यम्)	नकुल की सन्तान	नकुल + अण्	ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च (4.1.114)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
184.	✹ **नादेयम्** (नद्यां जातं भवं वा)	नदी में होने वाला	नदी + ढक्	नद्यादिभ्यो ढक् (4.2.96)
185.	✹ **नाव्यम्** (नावा तार्यम्)	नौका द्वारा पार किया जा सकनें वाला नदी आदि का जल	नौ + यत्	नौ-वयो-धर्म-विष-मूल-मूल-सीता-तुलाभ्यस्तार्य-तुल्य-प्राप्य-वध्याऽऽनाम्यसम-समित-संमितेषु (4.4.91)
186.	✹ **नित्यः** (नियतम् = सर्वकालेषु भवः)	सब कालों में अर्थात् हमेशा रहने वाला	नि+ त्यप्	त्यब्नेर्ध्रुव इति वक्तव्यम् (वा0)
187.	✹ **नैकटिकः** (निकटे वसति)	निकट रहने वाला	निकट + ठक्	निकटे वसति (4.4.73)
188.	✹ **नैषध्यः** (निषधानां राजा)	निषध देश का राजा	निषध + ण्य	क्षत्रियसमानशब्दाज्जन-पदात् तस्य राजन्यपत्यवत् (वा0)
189.	✹ **पङ्क्तिः** (पञ्च परिमाणम् अस्य)	पाँच पाद परिमाण हैं, जिसका ऐसा छन्द	पञ्चन् + ति	पंक्ति-विंशति-त्रिंशच्-चत्वारिंशत् पञ्चाशत्-षष्टि-सप्तत्यशीति-नवति शतम् (5.1.58)
190.	✹ **पचतिकल्पम्** (ईषदूनं पचति)	कुछ कम पकाता है।	पचति + कल्पप्	ईषदसमाप्तौ कल्पब्देश्यदेशीयरः (5.3.67)
191.	✹ **पचतिदेशीयम्** (ईषदूनं पचति)	कुछ कम पकाता है।	पचति + देशीयर्	ईषदसमाप्तौ कल्पब्देश्यदेशीयरः (5.3.67)
192.	✹ **पचतिदेश्यम्**	कुछ कम पकाता है।	पचति + देश्य	ईषदसमाप्तौ कल्पब्देश्य देशीयरः (5.3.67)
193.	✹ **पञ्चतयम्** (पञ्च अवयवा अस्य)	पाँच अवयव हैं इसके	पञ्चन् + तयप्	संख्याया अवयवे तयप् (5.2.42)
194.	✹ **पञ्चमः** (पञ्चानां पूरणः)	पाँचवाँ	पञ्चन् + डट्	तस्य पूरणे डट् (5.2.48)
195.	✹ **पाञ्चालः** (पञ्चालस्य अपत्यम्)	पञ्चाल की सन्तान	पञ्चाल + अञ्	जनपदशब्दात् क्षत्रियादञ् (4.1.166)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
196.	❋ **पञ्चाशत्** (पञ्च दशतः परिमाणमस्य सङ्घस्य इति)	पचास	पञ्चदशत् + शत्	पंक्ति-विंशति-त्रिंशच्-चत्वारिंशत् - पञ्चाशत् - षष्टि-सप्तत्यशीति- नवति-शतम् (5.1.58)
197.	❋ **पण्डितः** (पण्डा सञ्जाता अस्य)	सत्-असत् का विवेक करने वाली बुद्धि उत्पन्न हो गयी है जिसको, ऐसा पुरुष	पण्डा+ इतच्	तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच् (5.2.36)
198.	❋ **पदकः** (पदमधीते वेत्ति वा)	वैदिक पदपाठ को पढ़ने या जानने वाला	पद + वुन्	क्रमादिभ्यो वुन् (4.2.60)
199.	❋ **पयस्यम्** (पयसो विकारः)	दूध का विकार दही, पनीर आदि	पयस् + यत्	गोपयसोर्यत् (4.3.158)
200.	❋ **परितः**	सब ओर	परि + तसिँल्	पर्यभिभ्यां च (5.3.9)
201.	❋ **पाञ्चालः** (पञ्चालस्य अपत्यम्)	पञ्चाल का पुत्र	पञ्चाल + अञ्	जनपदशब्दात् क्षत्रियादञ् (4.1.166)
202.	❋ **पाणिनीयम्** (पाणिनिना प्रोक्तम्)	पाणिनि द्वारा प्रथम प्रकाशित	पाणिनि + छ	वृद्धाच्छः (4.2.113)
203.	❋ **पाण्ड्यः** (पाण्डोः अपत्यम्)	पाण्डु की सन्तान	पाण्डु + ड्यण्	पाण्डोर्ड्यण् (वा0)
204.	❋ **पामनः** (पाम अस्ति अस्य इति)	गीली खुजली वाला व्यक्ति	पामन् + न	लोमादि- पामादि- पिच्छादिभ्यः शनेलचः (5.2.100)
205.	❋ **पामवान्** (पाम अस्ति अस्य इति)	गीली खुजली वाला व्यक्ति	पामन् + मतुँप्	तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुँप् (5.2.94)
206.	❋ **पारावारीणः** (पारावारे भवो जातो वा)	पार, अवार दोनों स्थानों में होने वाला	पारावार+ख	राष्ट्राऽवारपाराद् घ-खौ (4.2.92)
207.	❋ **पारीणः** (पारे भवो जातो वा)	पार तट पर होने वाला	पार + ख	राष्ट्राऽवारपाराद् घ-खौ (4.2.92)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
208.	❋ **पार्थिवः** (पृथिव्या ईश्वरः)	पृथ्वी का स्वामी अर्थात् राजा	पृथिवी+ अञ्	तस्येश्वरः (5.1.41)
209.	❋ **पार्श्वतः** (पार्श्वे)	पास में	पार्श्व + तसिँ	आद्यादिभ्यस्तसेरुपसंख्यानम् (वा0)
210.	❋ **पाशुपतम्** (पशुपतिः देवता अस्य इति)	शिव जिसका देवता है, ऐसी हविः आदि	पशुपति+ अण्	अश्वपत्यादिभ्यश्च (4.1.84)
211.	❋ **पाश्चात्त्यः** (पश्चात् जातो भवो वा)	पीछे या पश्चिम दिशा में पैदा हुआ	पश्चात् + त्यक्	दक्षिणा-पश्चात् - पुरसस्त्यक् (4.2.97)
212.	❋ **पिच्छिलः** (पिच्छम् अस्ति अस्य इति)	मोर पंख वाला	पिच्छ+ इलच्	लोमादि-पामादि-पिच्छादिभ्यः शनेलचः (5.2.100)
213.	❋ **पिच्छवान्** (पिच्छम् अस्ति अस्य इति)	मोर पंख वाला	पिच्छ+ मतुँप्	तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुँप् (5.2.94)
214.	❋ **पित्र्यम्** (पितरो देवता अस्येति)	पितर जिसके देवता हैं ऐसी हविः आदि	पितृ + यत्	वाय्वृतुपित्रुषसो यत् (4.2.30)
215.	❋ **पूर्वी** (पूर्वं कृतम् अनेन)	पहले कर चुका व्यक्ति	पूर्व + इनिँ	पूर्वादिनिः (5.2.86)
216.	❋ **पैतामहकः** (पितामहात् आगतः)	दादा से आया हुआ	पितामह + वुञ्	विद्या-योनि-सम्बन्धेभ्यो वुञ् (4.3.77)
217.	❋ **पैप्पलम्** (पिप्पलस्य अवयवो विकारो वा)	पीपल का विकार, भस्म राख आदि	पिप्पल+अण्	अवयवे च प्राण्योषधि वृक्षेभ्यः (4.3.133)
218.	❋ **पौत्रः** (पुत्रस्यानन्तरापत्यम्)	पुत्र की सन्तान अर्थात् पोता	पुत्र + अञ्	अनृष्यानन्तर्ये बिदादिभ्योऽञ् (4.1.104)
219.	❋ **पौनः पुनिकः** (पुनः पुनर्भवः)	बार बार होने वाला	पुनः पुनर् + ठञ्	कालाट्ठञ् (4.3.11)
220.	❋ **पौरवः** (पूरोरपत्यम्)	पूरु की सन्तान	पूरु + अण्	पूरोरण् वक्तव्यः (वा0)
221.	❋ **पौरस्त्यः** (पुरो जातो भवो वा)	पहले या पूर्व में पैदा हुआ	पुरस् + त्यक्	दक्षिणा-पश्चात् - पुरसस्त्यक् (4.2.97)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
222.	✹ **पौरोहित्यम्** (पुरोहितस्य भावः कर्म वा)	पुरोहितपना या पुरोहिताई	पुरोहित+ यक्	पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक् (5.1.127)
223.	✹ **पौषम्** (पुष्येण युक्तम्)	ऐसा दिन जिसमें चन्द्रमा पुष्यनक्षत्र से युक्त हो	पुस्+ अण्	नक्षत्रेण युक्तः कालः (4.2.3)
224.	✹ **पौंस्नम्** (पुंसो भावः)	पुरुषपना, मर्दानगी	पुंस+स्नञ्	स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्स्नञौ भवनात् (4.1.87)
225.	✹ **प्रगेतनः** (प्रगे भवो जातो वा)	प्रातः काल में होने वाला	प्रग+ ट्यु / ट्युल्	सायं- चिरं-प्राह्णे-प्रगेऽव्यये-भ्यष्ट्युट्युलौ तुट् च (4.3.23)
226.	✹ **प्रथिमा** (पृथोर्भावः)	विस्तृतपना, विस्तार विशालता, महत्ता	पृथु+इमनिँच्	पृथ्वादिभ्य इमनिँज्वा (5.1.121)
227.	✹ **प्राजापत्यः** (प्रजापतेः अपत्यम्)	प्रजापति की सन्तान	प्रजापति + ण्य	दित्यदित्यादित्यपत्युत्तरपदाण्ण्यः (4.1.85)
228.	✹ **प्राज्ञः** (प्रज्ञ एव)	जानकार, बुद्धिमान्, ज्ञाता	प्रज्ञ+ अण्	प्रज्ञादिभ्यश्च (5.4.38)
229.	✹ **प्रावृषिकः** (प्रावृषि जातः)	वर्षा ऋतु में होने वाला मेघ आदि	प्रावृष् + ठप्	प्रावृषष्ठप् (4.3.26)
230.	✹ **प्रावृषेण्यः** (प्रावृषि भवः)	वर्षा ऋतु में पैदा हुआ	प्रावृष् + एण्य	प्रावृष एण्यः (4.3.17)
231.	✹ **प्रास्थिकम्** (प्रस्थेन क्रीतम्)	प्रस्थभर वजन की वस्तु देकर खरीदी हुई वस्तु	प्रस्थ + ठञ्	तेन क्रीतम् (5.1.36)
232.	✹ **प्राह्णेतनः** (प्राह्णे भवो जातो वा)	पूर्वाह्ण में होने वाला या पैदा हुआ	प्राह्ण+ट्यु / ट्युल्	सायं-चिरं-प्राह्णे-प्रगेऽव्ययेभ्यष्ट्युट्युलौ तुँट् च (4.3.23)
233.	✹ **बन्धुता** (बन्धूनां समूहः)	बन्धुओं का समूह	बन्धु+ तल् बन्धुत + टाप्	ग्राम-जन-बन्धुभ्यस्तल् (4.2.42) अजाद्यतष्टाप् (4.1.4)
234.	✹ **बहुतः** (बहुभ्यः)	बहुतों से	बहु+ तसिँल्	पञ्चम्यास्तसिँल् (5.3.7)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
235.	✹ **बहुपटुः** (ईषदूनः पटुः)	कुछ कम चतुर	पटु + बहुच् बहुच् + पट	विभाषा सुँपो बहुच् पुरस्तात्तु (5.3.68)
236.	✹ **बहुशः** (बहूनि धनानि ददाति)	बहुत धन देता है।	बहु + शस्	बह्वल्पार्थाच्छस् कारकादन्यतरस्याम् (5.4.42)
237.	✹ **बादरिकः** (बदराणि उञ्छति इति)	बेरों की चुन चुन कर बटोरने वाला	बदर + ठक्	उञ्छति (4.4.32)
238.	✹ **बान्धवः** (बन्धुः एव)	बन्धु, सम्बन्धी	बन्धु + अण्	प्रज्ञादिभ्यश्च (5.4.38)
239.	✹ **बार्हस्पत्यम्** (बृहस्पतिः देवता अस्य इति)	बृहस्पति जिसका देवता है ऐसी हविः आदि	बृहस्पति + ण्य	दित्यदित्यादित्यपत्युत्तरपदाण्ण्यः (4.1.85)
240.	✹ **बाहविः** (बाहोः अपत्यम्)	बाहु नामक व्यक्ति की सन्तान	बाहु+ इञ्	बाह्वादिभ्यश्च (4.1.96)
241.	✹ **बाहीकः** (बहिर्भवः)	बाहर में होने वाला	बहिस् + ईकक्	ईकक् च (वा0)
242.	✹ **बाह्यः** (बहिर्भवः)	बाहरी	बहिस् + यञ्	बहिषष्टिलोपो यञ् च (वा0)
243.	✹ **बैदः** (बिदस्य गोत्र अपत्यम्)	बिद नामक ऋषि की पौत्र आदि सन्तति	बिद+ अञ्	अनृष्यानन्तर्ये बिदादिभ्योऽञ् (4.1.104)
245.	✹ **ब्राह्मण्यम्** (ब्राह्मणस्य भावः कर्म वा)	ब्राह्मण का भाव, ब्राह्मणपना	ब्राह्मण + ष्यञ्	गुणवचन-ब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च (5.1.123)
246.	✹ **भाद्रमातुरः** (भद्रमातुः अपत्यम्)	भली माता का पुत्र	भद्रमातृ + अण्	मातुरुत्संख्यासम्भद्रपूर्वायाः (4.1.115)
247.	✹ **भास्मनः** (भस्मनो विकारः)	भस्म से बना कोई पदार्थ	भस्मन् + अण्	तस्य विकारः (4.3.132)
248.	✹ **भूमा** (बहोर्भावः)	बहुतपना, बहुतायत	बहु+ इमनिच्	पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा (5.1.121)
249.	✹ **भूयान्** (अयम् अनयोः अतिशयेन बहुः)	दो में अधिक विपुल या विशाल	बहु+ ईयसुँन्	द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुँनौ (5.3.57)
250.	✹ **भूयिष्ठः** (अयम् एषाम् अतिशयेन बहुः)	सबमें अधिक विपुल या विशाल	बहु+ इष्ठन्	अतिशायने तमबिष्ठनौ (5.3.55)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
251.	✹ **भैक्षम्** (भिक्षाणां समूहः)	भिक्षाओं का समूह या ढेर	भिक्षा + अण्	भिक्षादिभ्योऽण् (4.2.37)
252.	✹ **भ्राष्ट्राः** (भ्राष्ट्रेषु संस्कृता भक्षा भ्राष्ट्रा यवाः)	भट्ठी में भूनकर संस्कृत किये खाने योग्य जौ	भ्राष्ट्र + अण्	संस्कृतं भक्षाः (4.2.15)
253.	✹ **मणिवः** (मणिः अस्ति अस्य)	मणिवाला सर्पविशेष	मणि+व	अन्येभ्योऽपि दृश्यते (वा0)
254.	✹ **मदीयः** (मम अयम्)	मेरा यह, मुझसे सम्बन्ध रखने वाला	अस्मद् + छ	युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ् च (4.3.1)
255.	✹ **मध्यतः** (मध्ये)	बीच में	मध्य + तसिँ	आद्यादिभ्यस्तसेरुपसंख्यानम् (वा0)
256.	✹ **मध्यमः** (मध्ये भवः)	मध्य में होने वाला	मध्य + म	मध्यान्मः (4.3.8)
257.	✹ **मातृभोगीणः** (मातृभोगाय हितः)	माता के शरीर के लिए हितकर आहार आदि	मातृभोग+ ख	आत्मन्-विश्वजन-भोगोत्तरपदात् खः (5.1.9)
258.	✹ **मामकीनः** (मम अयम्)	मेरा यह	अस्मद् + खञ्	युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ् च (4.3.1)
259.	✹ **मामकः** (मम अयम्)	मेरा यह	अस्मद् + अण्	युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ् च (4.3.1)
260.	✹ **मायावी** (माया अस्ति अस्य)	मायावाला, कपटी	माया+ विनिँ	अस्- माया-मेधा-स्रजो विनिँः (5.2.121)
261.	✹ **मायूरः** (मयूरस्य अवयवो विकारो वा)	मोर के टांग, सिर, गरदन आदि अवयव	मयूर+ अञ्	प्राणिरजतादिभ्योऽञ् (4.3.152)
262.	✹ **मार्त्तिकः** (मृत्तिकाया विकारः)	मिट्टी से बना कोई पदार्थ	मृत्तिका + अण्	तस्य विकारः (4.3.132)
263.	✹ **मार्दङ्गिकः** (मृदङ्गवादनं शिल्पम् अस्य)	मृदङ्ग बजाने में विशेष नैपुण्य रखने वाला व्यक्ति	मृदङ्ग + ठक्	शिल्पम् (4.4.55)
264.	✹ **मालीयः** (मालायां भवः)	माला में होने वाला, सूत, तागा आदि	माला + छ	वृद्धाच्छः (4.3.113)
265.	✹ **मासिकम्** (मासे भवं जातं वा)	महीने में होने वाला या पैदा होने वाला	मास+ ठञ्	कालाट्ठञ् (4.3.11)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
266.	● **माहेयम्** (मह्यां जातं भवं वा)	पृथ्वी में पैदा हुआ या पृथ्वी पर होने वाला	मही + ढक्	नद्यादिभ्यो ढक् (4.2.96)
267.	● **मीमांसकः** (मीमांसाम् अधीते वेद वा)	मीमांसाशास्त्र को पढ़ने या जानने वाला	मीमांसा + वुन्	क्रमादिभ्यो वुन् (4.2.60)
268.	● **मूल्यम्** (मूलेन आनाम्यम्)	मूल्य- मूल (पूंजी) द्वारा आनाम्य = अभिभवनीय	मूल + यत्	नौ -वयो- धर्म -विष- मूल-मूल-सीता-तुलाभ्यस्तार्य-तुल्य-प्राप्य-वध्याऽऽनाम्य-सम-समित-संमितेषु (4.4.91)
269.	● **मेधावी** (मेधा अस्य अस्ति)	बुद्धिमान्	मेधा+ विनिँ	अस्-माया-मेधा-स्रजो विनिँः (5.2.121)
270.	● **मौद्गः** (मुद्गानां विकारःमौदगः सूपः)	मूँगों का विकार अर्थात् मूंग की दाल	मुद्ग+ अण्	बिल्वादिभ्योऽण् (4.3.134)
271.	● **मौद्गीनम्** (मुद्गानां भवनं क्षेत्रम्)	मूँगधान्य का उत्पत्तिस्थान खेत	मुद्ग+ खञ्	धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ् (5.2.1)
272.	● **मौर्वम्** (मूर्वाया अवयवो विकारो वा)	मूर्वा नामक ओषधि का अवयव काण्ड, मूल आदि अथवा मूर्वा का विकार भस्म राख आदि	मूर्वा+ अण्	अवयवे च प्राण्योषधिवृक्षेभ्यः (4.3.133)
273.	● **यतः** (यस्मात्)	जिससे, जिस कारण से	यद् + तसिँल्	पञ्चम्यास्तसिँल् (5.3.7)
274.	● **यत्र** (यस्मिन्)	जिसमें, जिस पर, जहाँ पर	यद् + त्रल्	सप्तम्यास्त्रल् (5.3.10)
275.	● **यथा** (येन प्रकारेण)	जिस विशेष से विशिष्ट, जिस प्रकार वाला, जैसा	यद् + थाल्	प्रकारवचने थाल् (5.3.23)
276.	● **यदा** (यस्मिन् काले)	जिस काल में, जब	यद् + दा	सर्वैकाऽन्य-किं-यत्-तदः काले दा (5.3.15)
277.	● **यर्हि** (यस्मिन् अनद्यतने काले)	जिस अनद्यतन काल में, जब	यद् + र्हिल्	अनद्यतने र्हिलन्यतरस्याम् (5.3.21)
278.	● **यशस्वी** (यशोऽस्यास्ति)	यशवाला, कीर्तिवाला, प्रसिद्ध	यशस् + विनिँ	अस् -माया-मेधा-स्रजो-विनिँः (5.2.121)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
279.	✸ **यावान्** (यत् परिमाणम् अस्य)	जो परिमाण है इस का अर्थात् जितना	यद् + वतुप्	यत्तदेतेभ्यः परिमाणे वतुँप् (5.2.39)
280.	✸ **युग्यः** (युगं वहति)	जुआ (युग) को खींचने वाले बैल	युग+ यत्	तद्वहति रथ-युग-प्रासङ्गम् (4.4.76)
281.	✸ **युवकयोः** (अज्ञातयोर्युवयोः)	अज्ञात तुम दो का, अज्ञात तुम दो में	युष्मद् + अकँच्	अव्ययसर्वनाम्नामकँच् प्राक्टेः (5.3.71)
282.	✸ **युष्मकाभिः** (अज्ञातैः युष्माभिः)	अज्ञात तुम सब से	युष्मद् + अकँच्	अव्ययसर्वनाम्नामकँच् प्राक्टेः (5.3.71)
283.	✸ **युष्मदीयः** (युवयोः युष्माकं वा अयम्)	तुम दोनों का अथवा तुम सब का यह	युष्मद् + छ	युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ् च (4.3.1)
284.	✸ **यौवनम्** (युवतीनां समूहः)	युवतियों का समूह	युवन् + अण्	भिक्षादिभ्योऽण् (4.2.37)
285.	✸ **यौष्माकः** (युवयोर्युष्माकं वाऽयम्)	तुम दोनों का अथवा तुम सब का यह	युष्मद् + अण्	युष्मदस्मदोरन्यतरस्याम् खञ् च (4.3.1)
286.	✸ **यौष्माकीणः** (युवयोर्युष्माकं वाऽयम्)	तुम दो का, तुम सब का यह	युष्मद् + खञ्	युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ् च (4.3.1)
287.	✸ **रथ्यः** (रथं वहति)	रथ को खींचकर आगे ले जाने वाला घोड़ा	रथ+ यत्	तद्वहति रथ-युग- प्रासङ्गम् (4.4.76)
288.	✸ **राजनः** (राज्ञोऽपत्यम्)	राजा की सन्तान जो क्षत्रिय जाति की नहीं	राजन् + अण्	तस्याऽपत्यम् (4.1.92)
289.	✸ **राष्ट्रियः** (राष्ट्रे भवो जातो वा)	राष्ट्र में होने वाला, या पैदा हुआ	राष्ट्र+ घ	राष्ट्राऽवारपाराद् घ-खौ (4.2.92)
290.	✸**लक्ष्मणः** (लक्ष्मीः अस्ति अस्य)	धनवान्	लक्ष्मी+ न	लोमादि- पामादि- पिच्छादिभ्यः शनेलचः (5.2.100)
291.	✸ **लघिष्ठः** (अयम् एषाम् अतिशयेन लघुः)	सबसे अधिक छोटा वा हल्का	लघु + इष्ठन्	अतिशायने तमबिष्ठनौ (5.3.55)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
292.	✹ **लघीयान्** (अयम् अनयोः अतिशयेन लघुः)	इन दोनों में अधिक छोटा	लघु+ ईयसुँन्	द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुँनौ (5.3.57)
293.	✹ **लघुतमः** (अयम् एषाम् अतिशयेन लघुः)	सबसे अधिक छोटा	लघु+ तमप्	अतिशायने तमबिष्ठनौ (5.3.55)
294.	✹ **लघुतरः** (अयम् अनयोः अतिशयेन लघुः)	इन दोनों में अधिक छोटा	लघु+ तरप्	द्विवचनविभज्योपपदे तरबीय सुँनौ (5.3.57)
295.	✹ **लोमशः** (लोमानि सन्ति अस्य इति)	लोम हैं इसके अर्थात् लोमों वाला व्यक्ति	लोमन् + श	लोमादि-पामादि-पिच्छादिभ्यः शनेलचः (5.2.100)
296.	✹ **लोमवान्** (लोमानि सन्ति अस्य इति)	लोमों वाला व्यक्ति	लोमन् + मतुँप्	तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुँप् (5.2.94)
297.	✹ **वत्सीयः** (वत्सेभ्यो हितः)	बछड़ों के लिए हितकारी ग्वाला	वत्स+ छ	तस्मै हितम् (5.1.5)
298.	✹ **वध्यः** (वधम् अर्हति इति)	मृत्युदण्ड दिये जाने योग्य	वध+ यत्	दण्डादिभ्यो यत् (5.1.65)
299.	✹ **वयस्यः** (वयसा तुल्यः)	आयु में समान मित्र को	वयस् + यत्	नौ -वयो-धर्म-विष-मूल-मूल-सीता-तुलाभ्यस्तार्य तुल्य-प्राप्य-वध्याऽऽनाम्य-सम-समित-संमितेषु (4.4.91)
300.	✹ **वरणाः** (वरणानाम् अदूरभवं नगरम्)	वरणा नदी के निकटवर्ती कोई प्राचीन नगर (काशी)	वरणा+ अण्	अदूरभवश्च (4.2.69)
301.	✹ **वर्ग्यम्** (वर्गे भवम्)	समूह में होने वाला	वाच् + यत्	दिगादिभ्यो यत् (4.3.54)
302.	✹ **वाग्मी** (प्रशस्ता वाग् अस्ति अस्य)	प्रशस्त वाणी वाला, बोलने में चतुर	वाच् + ग्मिनिँ	वाचो ग्मिनिँः (5.2.124)
303.	✹ **वात्स्यः** (वत्सस्य गोत्रापत्यम्)	वत्स नामक व्यक्ति का गोत्रापत्य	वत्स+ यञ्	गर्गादिभ्यो यञ् (4.1.105)
304.	✹ **वामदेव्यम्** (वामदेवेन दृष्टम्)	वामदेव से देखा गया साम	वामदेव + ड्यत् / ड्य	वामदेवाड्ड्यड्-ड्यौ (4.2.8)
305.	✹ **वायव्यम्** (वायुः देवता अस्य इति)	वायु जिसका देवता है ऐसी हविः, आदि	वायु+ यत्	वाय्वृतुपित्रुषसो यत् (4.2.30)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
306.	✹ **वाराणसेयम्** (वाराणस्यां जातं भवं वा)	वाराणसी में पैदा हुआ	वाराणसी + ढक्	नद्यादिभ्यो ढक् (4.2.96)
307.	✹ **वासिष्ठः** (वसिष्ठस्य अपत्यम्)	वसिष्ठ ऋषि की सन्तान	वसिष्ठ + अण्	ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च (4.1.114)
308.	✹ **वासुदेवः** (वसुदेवस्य अपत्यम्)	वसुदेव की सन्तान, श्रीकृष्ण	वसुदेव+ अण्	ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च (4.1.114)
309.	✹ **वास्त्रः** (वस्त्रेण परिवृतः)	वस्त्र से ढका रथ	वस्त्र+अण्	परिवृतो रथः (4.2.9)
310.	✹ **विदुष्मान्** (विद्वांसः सन्ति अस्य अस्मिन् वा)	जिसमें विद्वान् हैं ऐसा वंश , देश, प्रदेश	विद्वस् + मतुँप्	तदस्यास्त्यास्मिन्निति मतुँप्
311.	✹ **विद्वद्देश्यः** (ईषदूनो विद्वान्)	कुछ कम विद्वान् के तुल्य	विद्वेश्यस् + देश्य	ईषदसमाप्तौ कल्पब्देश्यदेशीयरः (5.3.67)
312.	✹ **विद्वद्देशीयः** (ईषदूनो विद्वान्)	कुछ कम विद्वान् लगभग विद्वान्	विद्वस् + देशीयर्	ईषदसमाप्तौ कल्पब्देश्यदेशीयरः (5.3.67)
313.	✹ **विद्वत्कल्पः** (विद्वत् तुल्यः)	विद्वान् के सदृश	विद्वस् + कल्पप्	ईषदसमाप्तौ कल्पब्देश्यदेशीयरः (5.3.67)
314.	✹ **विश्वजनीनम्** (विश्वजनेभ्यो हितम्)	सब लोगों के लिए हितकर वस्तु	विश्वजन + ख	आत्मन् - विश्वजन - भोगोत्तरपदात् खः (5.1.9)
315.	✹ **विषमीयम्** (विषमाद् आगतम्)	विपरीत या अनुचित हेतु से आया हुआ धन आदि कुछ भी	विषम + छ	गहादिभ्यश्च (4.2.137)
316.	✹ **विष्यः** (विषेण वध्यः)	विषद्वारा वध करने योग्य शत्रु आदि	विष+ यत्	नौ-वयो-धर्म-विष-मूल-मूल-सीता-तुलाभ्यस्तार्य-तुल्य-प्राप्य-वध्याऽऽनाम्य-सम -समित-संमितेषु (4.4.91)
317.	✹ **विंशः** (विंशतेः पूरणः)	बीसवाँ	विंशति+ डट्	तस्य पूरणे डट् (5.2.48)
318.	✹ **विंशतिः** (द्वौ दशतौ परिमाणमस्य सङ्घस्य इति)	बीस	द्विदशत् + शतिच्	पंक्ति-विंशति-त्रिंशच् - चत्वारिंशत्-पञ्चाशत्-षष्टि-सप्तत्यशीति- नवति- शतम् (5.1.58)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
319.	✹ **व्रीहिकः** (व्रीहयः सन्ति अस्य अस्मिन् वा)	धानवाला	व्रीहि + ठन्	**व्रीह्यादिभ्यश्च** (5.2.116)
320.	✹ **व्रीही**	धानवाला	व्रीहि + इनि	व्रीह्यादिभ्यश्च (5.2.116)
321.	✹ **वेतस्वान्** (वेतसाः सन्ति अस्मिन् इति)	बेंत जिसमें हो ऐसा देश	वेतस+ ड्मतुँप्	कुमुद-नड-वेतसेभ्यो-ड्मतुँप् (4.2.86)
322.	✹ **वैदिशम्** (विदिशाया अदूरभवम्)	विदिशा के निकट कोई प्राचीन नगर	विदिशा+ अण्	अदूरभवश्च (4.2.69)
323.	✹ **वैनतेयः** (विनताया अपत्यम्)	विनता का पुत्र, गरुड	विनता+ ढक्	स्त्रीभ्यो ढक् (4.1.120)
324.	✹ **वैयाकरणः** (व्याकरणम् अधीते वेत्ति वा)	व्याकरण का अध्येता या ज्ञाता	व्याकरण+ अण्	तदधीते तद्वेद (4.2.58)
325.	✹ **वैश्वामित्रः** (विश्वामित्रस्य अपत्यम्)	विश्वामित्र ऋषि की सन्तान	विश्वामित्र+ अण्	ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च (4.1.114)
326.	✹ **व्रैहेयम्** (व्रीहीणां भवनं क्षेत्रं)	चावालों का उत्पत्तिस्थान,खेत	व्रीहि+ ढक्	व्रीहि-शाल्योर्ढक् (5.2.2)
327.	✹ **शंकणम्** (शंकवे हितम्)	खूँटी के लिए उपयोगी लकड़ी	शंकु+ यत्	उगवादिभ्यो यत् (5.1.2)
328.	✹ **शरण्यः** (शरणे त्राणे साधुः)	रक्षा करने में प्रवीण, योग्य, समर्थ	शरण+यत्	तत्र साधुः (4.4.98)
329.	✹ **शरमयम्** (शरस्य विकारो अवयवो वा)	सरकण्डे का विकार या अवयव	शर+ मयट्	नित्यं वृद्धशरादिभ्यः (4.3.142)
330.	✹ **शाद्वलः** (शादाः सन्ति अस्मिन् इति)	हरी घास वाला प्रदेश	शर+ मयट्	नड-शादाड् ड्वलच् (4.2.87)
331.	✹ **शाब्दिकः** (शब्दं करोति)	शाब्दिक	शब्द+ ठक्	शब्ददर्दुरं करोति (4.4.34)
332.	✹ **शारावः** (शरावे उद्धृतः ओदनः)	शराव में निकाल कर रखा गया भात	शराव+ अण्	तत्रोद्धृतममत्रेभ्यः (4.2.13)
333.	✹ **शारीरकीयः** (शरीरकम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः)	जीवात्मा को विषय बनाकर रचा गया	शारीरक + छ	वृद्धाच्छः (4.2.113)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
334.	✹ **शालीयः** (शालायां जातो भवो वा)	घर में पैदा हुआ या घर में होने वाला	शाला+ छ	वृद्धाच्छः (4.2.113)
335.	✹ **शालेयम्** (शालीनां भवनं क्षेत्रम्)	शाली चावलों का उत्पत्तिस्थान खेत	शालि+ ढक्	व्रीहि-शाल्योर्ढक् (5.2.2)
336.	✹ **शिक्षकः** (शिक्षाम् अधीते वेद वा)	शिक्षा ग्रन्थ को पढ़ने या जानने वाला	शिक्षा+ वुन्	क्रमादिभ्यो वुन् (4.2.60)
337.	✹ **शिखावलम्** (शिखाः सन्ति अस्मिन् इति)	शिखाओं वाला तन्नामक नगर	शिखा+ वलच्	शिखाया वलच् (4.2.88)
338.	✹ **शिखावान्** (शिखावान् दीपः)	शिखा वाला दीपक	शिखा+ मतुँप्	तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुँप् (5.2.94)
339.	✹ **शुक्रियम्** (शुक्रो देवता अस्य इति)	शुक्र जिसका देवता है ऐसी हविः आदि	शुक्र + घन्	शुक्राद् घन् (4.2.25)
340.	✹ **शुक्लः** (पटः) शुक्लः (गुणः) अस्य अस्ति	सफेद गुणवाला कपड़ा आदि	शुक्ल+ मतुँप्	तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुँप् (5.2.94)
341.	✹ **शुभंयुः** (शुभम् अस्ति अस्य इति)	शुभवाला, कल्याणवाला	शुभम् + युस्	अहंशुभमोर्युस् (5.2.140)
342.	✹ **शैबः** (शिबीनां निवासः)	शिबि नामक क्षत्रियों का निवास स्थान देश	शिबि + अण्	तस्य निवासः (4.2.68)
343.	✹ **शैवः** (शिवस्य अपत्यम्)	शिव की सन्तान	शिव+ अण्	शिवादिभ्योऽण् (4.1.112)
344.	✹ **शौक्ल्यम्** (शुक्लस्य भावः)	शुक्लपना सुफेदपना, सुफेदी	शुक्ल+ ष्यञ्	वर्णदृढादिभ्यः ष्यञ् च (5.1.122)
345.	✹ **शौल्कशालिकः** (शुल्कशालाया आगतः)	चुंगीघर से आया हुआ	शुल्कशाला+ ठक्	ठगायस्थानेभ्यः (4.3.75)
346.	✹ **श्रावणः शब्दः** (श्रवणेन गृह्यते)	श्रवणेन्द्रिय से जो ग्रहण किया जाता है अर्थात् शब्द	श्रवण+ अण्	शेषे (4.2.91)
347.	✹ **श्रेयान्** (अयमनयोरतिशयेन प्रशस्यः)	दो में अधिक प्रशंसनीय अर्थात् बढ़िया	प्रशस्य + ईयसुँन्	द्विवचनविभज्योपपदे तरबीय सुँनौ (5.3.57)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
348.	✹ **श्रेष्ठः** (अयमेषामतिशयेन प्रशस्यः)	सबसे बढ़कर प्रशंसनीय, बढ़िया या उत्तम	प्रशस्य+इष्ठन्	अतिशायने तमबिष्ठनौ (5.3.55)
349.	✹ **श्वशुर्यः** (श्वशुरस्य अपत्यम्)	ससुर का पुत्र, साला,या देवर	श्वसुर + यत्	राज-श्वशुराद् यत् (4.1.137)
350.	✹ **श्वाफल्कः** (श्वफल्कस्य अपत्यम्)	श्वफल्क की सन्तान	श्वफल्क+अण्	ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च (4.1.114)
351.	✹ **श्वैतच्छत्रिकः** (श्वेतच्छत्रम् अर्हति)	श्वेत छत्रको प्राप्त करने योग्य व्यक्ति	श्वेतच्छत्र+ठक्	आर्हादगोपुच्छसंख्यापरिमाणात् ठक् (5.1.19)
352.	✹ **षष्ठः** (षण्णां पूरणः)	छठा	षष् + डट्	तस्य पूरणे डट् (5.2.48)
353.	✹ **षाण्मातुरः** (षण्णां मातृणाम् अपत्यम्)	छः माताओं की सन्तान, कार्तिकेय	षण्मातृ + अण्	मातुरुत्संख्यासम्भद्रपूर्वायाः (4.1.115)
354.	✹ **सख्यम्** (सख्युः भावः कर्म वा)	मित्रता, मित्रपना, मैत्री अथवा मित्र का कर्म	सखि+ य	सख्युर्यः (5.1.125)
355.	✹ **सदा**	सदा, हमेशा	सर्व + दा	सर्वैकाऽन्य-किं-यत्-तदः काले दा (5.3.15)
356.	✹ **सभ्यः** (सभायां साधुः)	सभा में निपुण या योग्य	सभा + य	सभाया यः (4.4.105)
357.	✹ **सममयम्** (समाद् आगतम्)	उचित हेतु से आया हुआ धन आदि कुछ भी वस्तु	सम+ मयट्	मयट् च (4.3.82)
358.	✹ **समरूप्यम्** (समाद् आगतम्)	उचित हेतु से आया हुआ धन आदि कुछ भी वस्तु	सम + रूप्य	हेतु-मनुष्येभ्योऽन्यतरस्यां रूप्यः (4.3.81)
359.	✹ **सर्वत्र**	सब जगह	सर्व + त्रल्	सप्तम्यास्त्रल् (5.3.10)
360.	✹ **सर्वदा**	हमेशा, सदा	सर्व + दा	सर्वैकाऽन्य-किं- यत्-तदः काले दा (5.3.15)
361.	✹ **सहायता** (सहायानां समूहः)	सहायकों का समूह	सहाय+ तल्	गज-सहायाभ्यां चेति वक्तव्यम् (वा0)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
362.	✹ **सात्तुकम्** (सक्तूनां समूहः)	सत्तुओं का समूह	सक्तु + ठक्	अचित-हस्ति-धेनोष्ठक् (4.2.46)
363.	✹ **साप्ततिकम्** (सप्तत्या क्रीतम्)	सत्तर से खरीदी गयी वस्तु	सप्तति+ ठञ्	तेन क्रीतम् (5.1.36)
364.	✹ **सामन्यः** (सामसु साधुः)	सामगान में प्रवीण वा योग्य	सामन् + यत्	तत्र साधुः (4.4.98)
365.	✹ **सामाजिकः** (समाजं रक्षति इति)	समाज की रक्षा करने वाला	समाज + ठक्	रक्षति (4.4.33)
366.	✹ **साम्मातुरः** (सम्मातुः अपत्यम्)	भली माता का पुत्र	सम्मातृ + अण्	मातुरुत्संख्यासम्भद्रपूर्वायाः (4.1.115)
367.	✹ **सायंप्रातिकः** (सायं प्रातः भवः)	शाम सवेरे होने वाला	सायंप्रातर् + ठञ्	कालाट्ठञ् (4.3.11)
368.	✹ **सायन्तनः** (साये भवः)	सायंकाल में होने वाला	सायं+ ट्यु/ट्युल्	सायं-चिरं-प्राह्णे-प्रगेऽव्ययेभ्यष्ट्युट्युलौ तुँट् च (4.3.23)
369.	✹ **सार्वभौमः** (सार्वभूमेः ईश्वरः)	सारी भूमि का स्वामी अर्थात् चक्रवर्ती राजा	सर्वभूमि + अण्	तस्येश्वरः (5.1.41)
370.	✹**सांवत्सरिकम्** (संवत्सरे भवं जातं वा)	वर्ष में होने वाला या वर्षभर में पैदा होने वाला	संवत्सर+ ठञ्	कालाट्ठञ् (4.3.11)
371.	✹ **सीत्यं क्षेत्रम्** (सीतया समितम्)	हलाग्र से जोतकर एक समान किया गया खेत	सीता+ यत्	नौ-वयो-धर्म-विष-मूल-मूल-सीता-तुलाभ्यस्तार्य-तुल्य-प्राप्य-वध्याऽऽनाम्य-सम-समित-संमितेषु (4.4.91)
372.	✹ **सैनापत्यम्** (सेनापतेः भावः कर्म वा)	सेनापति का भाव या कर्म	सेनापति + यक्	पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक् (5.1.127)
373.	✹ **सौम्यम्** (सोमो देवताऽस्येति)	सोम जिसका देवता है ऐसी हविः या सूक्त	सोम + ट्यण्	सोमाट्ट्यण् (4.2.29)
374.	✹ **स्त्रैणम्** (स्त्रिया भावः)	स्त्री का भाव, स्त्रीपना	स्त्री + नञ्	स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्स्नञौ भवनात् (4.1.87)

क्र.	शब्द	अर्थ	तद्धित प्रत्यय	सूत्र
375.	✹ **स्रग्वी** (स्रग् अस्य अस्तीति)	मालावाला	स्रज् + विनिँ	अस् -माया-मेधा-स्रजो-विनिँः (5.2.121)
376.	✹ **स्रजिष्ठः** (अयम् एषाम् अतिशयेन स्रग्वी)	सब मालावालों में अधिक मालावाला	स्रज् + इष्ठन्	अतिशायने तमबिष्ठनौ (5.3.57)
377.	✹ **स्रजीयान्** (अयम् अनयोः अतिशयेन स्रग्वी)	दो मालावान् व्यक्तियों में अधिक मालावान् व्यक्ति	स्रज् + ईयसुँन्	द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुँनौ (5.3.57)
378.	✹ **स्रौघ्नः** (स्रुघ्ने जातः)	स्रुघ्न में उत्पन्न हुआ	स्रुघ्न+ अण्	तत्र जातः (4.3.25)
379.	✹ **हास्तिकम्** (हस्तिनां समूहः)	हाथियों का समूह या झुण्ड	हस्तिन् + ठक्	अचित्त -हस्ति-धेनोष्ठक् (4.2.46)
380.	✹ **हास्तिकः** (हस्तिना चरति)	हाथी के द्वारा गमन करने वाला	हस्तिन् + ठक्	चरति (4.4.8)
381.	✹ **हैमवती** (हिमवतः प्रभवति)	सर्वप्रथम हिमालय में प्रकट होने वाली गङ्गा नदी	हिमवत् + अण्	प्रभवति (4.3.83)
382.	✹ **हैयङ्गवीनम्** (ह्योगोदोहस्य विकारः)	कल के दुहे गोदुग्ध का विकार माखन या घृत	हियङ्गु + खञ्	हैयङ्गवीनं सञ्ज्ञायाम् (5.2.23)

स्त्रीप्रत्यय

1. 'टाप्'–प्रत्यय–विधायक–सूत्रम्

सूत्रम्–अजाद्यतष्टाप् 4.1.4
प्रत्यय – 'टाप्'
सूत्रार्थ–अजादिगण में पढ़े गए शब्द अथवा ह्रस्व अकारान्त शब्दों से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'टाप्' प्रत्यय** होता है।
उदाहरण–अजा, एडका, अश्वा, चटका, मूषिका, बाला, वत्सा, होडा, मन्दा, विलाता, मेधा, गङ्गा, सर्वा, त्रिफला, त्र्यनीका, एता, रोहिता, गोपालिका, प्रजापालिका, पशुपालिका, भूपालिका, द्वारपालिका, बहुपरिव्राजका, अर्या, क्षत्रिया, अतिकेशा, चन्द्रमुखा, सुगुल्फा, कल्याणक्रोडा, सुजघना, शूर्पणखा, गौरमुखा, ताम्रमुखा, मुण्डा, धनक्रीता, शूद्रा।

2. 'ङीप्' प्रत्यय विधायक सूत्र/वार्तिक

सूत्रम्–1. ''उगितश्च'' 4.1.6
प्रत्यय–'ङीप्'
सूत्रार्थ–जिसमें उक् = उ, ऋ, ऌ की इत्संज्ञा हो गयी हो, ऐसे प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'ङीप्' प्रत्यय** होता है।
उदाहरण–भवती, भवन्ती, पचन्ती, दीव्यन्ती।

सूत्रम्–2. ''**टिड्ढाणञ्द्वयसज्दघ्नञ्मात्रच्तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः**'' 4.1.15
प्रत्यय–'ङीप्'
सूत्रार्थ–अनुपसर्जन जो टित् प्रत्यय, ढ, अण्, अञ्, द्वयसच्, दघ्नञ्, मात्रच्, तयप्, ठक्, ठञ्, कञ् और क्वरप् ये प्रत्यय जिनके अन्त में हों, ऐसे प्रधान व अदन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में 'ङीप्' होता है। **'टित्' का अर्थ है**–ऐसा प्रत्यय जिसका टकार इत् है।
उदाहरण–● **टित्** – कुरुचरी, नदी, चोरी, देवी, मद्रचरी, स्तनन्धयी
- **'ढ' प्रत्ययान्त**–सौपर्णेयी,
- **'अण्' प्रत्ययान्त**–ऐन्द्री, कुम्भकारी
- **'अञ्' प्रत्ययान्त**–औत्सी
- **'द्वयसच्' प्रत्ययान्त**–ऊरुद्वयसी
- **'दघ्नञ्' प्रत्ययान्त**–ऊरुदघ्नी
- **'मात्रच्' प्रत्ययान्त**–ऊरुमात्री
- **'तयप्' प्रत्ययान्त**–पञ्चतयी

- **'ठक्' प्रत्ययान्त**–आक्षिकी
- **'ठञ्' प्रत्ययान्त**–प्रास्थिकी, लावणिकी
- **'कञ्' प्रत्ययान्त**–यादृशी
- **'क्वरप्' प्रत्ययान्त**–इत्वरी

वार्तिक 3. ''नञ्स्नञीकक्ख्युँस्तरुणतलुनानामुपसंख्यानम्''
प्रत्यय–'ङीप्'
वार्तिकार्थ–नञ्-प्रत्ययान्त, स्नञ् प्रत्ययान्त, ईकक्-प्रत्ययान्त, और ख्युन्-प्रत्ययान्त प्रातिपदिकों से तथा 'तरुण' व 'तलुन' प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'ङीप्' प्रत्यय** होता है।
उदाहरण–
- **'नञ्'-प्रत्ययान्त** – स्त्रैणी
- **'स्नञ्'-प्रत्ययान्त** – पौंस्नी
- **'ईकक्'-प्रत्ययान्त** – शाक्तीकी, याष्टीकी
- **'ख्युन्'-प्रत्ययान्त** – आढ्यङ्करणी
- **'तरुण'-प्रातिपदिक** – तरुणी
- **'तलुन'-प्रातिपदिक** – तलुनी

सूत्रम् 4. यञश्च 4.1.16
प्रत्यय–'ङीप्'
सूत्रार्थ–'यञ्' प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से **'ङीप्'** प्रत्यय होता है; स्त्रीत्व की विवक्षा में।
उदाहरण–गर्ग + यञ् = गार्ग्य। गार्ग्य + ङीप् = गार्गी

सूत्रम् 5. ''वयसि प्रथमे'' 4.1.20
प्रत्यय – 'ङीप्'
सूत्रार्थ – प्रथम अवस्था अर्थात् कौमार अवस्था के सूचक शब्दों से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'ङीप्' प्रत्यय** होता है।
उदाहरण–कुमारी, किशोरी

सूत्रम् 6. द्विगोः 4.1.21
प्रत्यय–'ङीप्'
सूत्रार्थ–अदन्त द्विगु समास से स्त्रीलिङ्ग की विवक्षा में **'ङीप्'** प्रत्यय होता है।
उदाहरण–त्रिलोकी, त्रिपादी, पञ्चमूली, अष्टाध्यायी, पञ्चवटी, चतुःसूत्री, सप्तश्लोकी, दशरथी

सूत्रम् 7. ''वर्णादनुदात्तात्तोपधात्तो नः'' 4.1.39
प्रत्यय–'ङीप्'
सूत्रार्थ–वर्णवाची जो अनुदात्तान्त तकारोपध (जिसकी उपधा 'तकार' है) तदन्त अनुपसर्जन प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'ङीप्'** प्रत्यय तथा तकार को नकारादेश विकल्प से होते हैं। 'ङीप्' होने के पक्ष में नकारादेश होता है, अन्यथा नहीं होता है। यहाँ 'वर्ण' शब्द सफेद, लाल, पीला आदि रंगों का वाचक है।
उदाहरण–एनी, रोहिणी, श्येनी, हरिणी

'ङीष्'-प्रत्यय विधायक सूत्र/वार्तिक

सूत्रम् 1. ''षिद्गौरादिभ्यश्च'' 4.1.41
प्रत्यय– 'ङीष्'
सूत्रार्थ–'षित्' = जिनका षकार इत् है; तथा गौरादिगण पठित अनुपसर्जन प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'ङीष्' प्रत्यय** होता है।
उदाहरण–नर्तकी, गार्ग्यायणी, गौरी, अनड्वाही, अनडुही, खनकी, रजकी, वात्स्यायनी, मत्सी, सुन्दरी, कटी, शुनी

सूत्र 2. वोतो गुणवचनात् 4.1.44
प्रत्यय– ङीष्
सूत्रार्थ–ह्रस्व उकारान्त शब्दों से स्त्रीत्व-विवक्षा में वैकल्पिक **'ङीष्' प्रत्यय** होता है।
उदाहरण–

ङीष्	विकल्प	ङीष्	विकल्प
मृद्वी	मृदुः	पट्वी	पटुः
गुर्वी	गुरुः	लघ्वी	लघुः
पृथ्वी	पृथुः	तन्वी	तनुः
साध्वी	साधुः	ऋज्वी	ऋजुः

सूत्रम् 3. ''बह्वादिभ्यश्च'' 4.1.45
प्रत्यय– **'ङीष्'**
सूत्रार्थ–'बहु' आदि गण में पठित प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में विकल्प से 'ङीष्' प्रत्यय होता है।
उदाहरण– बह्वी/बहुः,पद्धती/पद्धतिः, शक्ती/शक्तिः,कपी/कपिः

वार्तिक 4. 'कृदिकारादक्तिनः'
प्रत्यय– 'ङीष्'
वार्तिकार्थ–'कृत्' से सम्बन्धित इकारान्त प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में विकल्प से **'ङीष्'** प्रत्यय होता है; परन्तु 'क्तिन्' प्रत्ययान्त से नहीं होता है।
उदाहरण–रात्री/रात्रिः

वार्तिक 5. सर्वतोऽक्तिन्नर्थादित्येके
प्रत्यय–'ङीष्'
वार्तिकार्थ–'क्तिन्' प्रत्ययान्त से भिन्न सभी इदन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में विकल्प से **'ङीष्'** होता है। कुछ आचार्य ऐसा भी मानते हैं।
उदाहरण–शकटी/शकटिः

सूत्र 6. पुंयोगादाख्यायाम् 4.1.48
प्रत्यय–'ङीष्'
सूत्रार्थ–पुरुष के साथ सम्बन्ध के कारण पुंवाचक अदन्त शब्द से स्त्रीत्व की विवक्षा में 'ङीष्' होता है। स्त्री, वह पत्नी भी हो सकती है, और पुत्री, बहन आदि भी हो सकती है।
उदाहरण–(i) गोपस्य पत्नी, भगिनी, पुत्री **गोपी**।
(ii) बकस्य पत्नी **बकी**।
(iii) गणकस्य पत्नी **गणकी**
(iv)महापात्रस्य पत्नी **महापात्री**
(v) सूर्यस्य स्त्री मानुषी **सूरी (कुन्ती)**
(vi) केकयस्य अपत्यं स्त्री **केकयी**
(vii) देवकस्य दुहिता **देवकी**
(viii) रेवतस्य दुहिता **रेवती**
(ix) यमस्य भगिनी **यमी**

सूत्र 7. ''इन्द्र - वरुण - भव - शर्व - रुद्र - मृड - हिमाऽरण्य-यव - यवन - मातुलाऽऽचार्याणामानुक्'' 4.1.49

प्रत्यय–ङीष्

सूत्रार्थ–इन्द्र, वरुण, भव, शर्व, रुद्र, मृड, हिम, अरण्य, यव, यवन, मातुल, और आचार्य–इन बारह शब्दों से स्त्रीत्व की विवक्षा में **''ङीष्'' प्रत्यय** तथा इन शब्दों से **'आनुक्' आगम** होता है।

उदाहरण–इन्द्राणी, वरुणानी, भवानी, शर्वाणी, रुद्राणी, मृडानी, हिमानी, अरण्यानी, यवानी, यवनानी, मातुलानी, आचार्यानी

वार्तिक–'हिमारण्ययोर्महत्त्वे

वार्तिकार्थ–'हिम' और 'अरण्य' इन दो प्रातिपदिकों से 'महत्त्व' अर्थ में ही **'ङीष्'** प्रत्यय और **'आनुक्'** आगम होता है।

उदाहरण–(i) महत् हिमं = **हिमानी**

(ii) महत् अरण्यम् = **अरण्यानी**

वार्तिक–''यवाद् दोषे''

वार्तिकार्थ–दोष अर्थ द्योत्य होने पर 'यव' इस प्रातिपदिक से **'ङीष्'** प्रत्यय और **'आनुक्'** आगम होता है।

उदाहरण–दुष्टो यवो = **यवानी**

वार्तिक–'यवनाल्लिप्याम्'

वार्तिकार्थ–'यवन' इस प्रातिपदिक से लिपि विशेष अर्थ होने पर ही **'ङीष्' प्रत्यय** तथा 'आनुक्' आगम होता है।

उदाहरण–यवनानां लिपिः = **यवनानी**

वार्तिक–'मातुलोपाध्याययोरानुग् वा'

वार्तिकार्थ–'मातुल' और 'उपाध्याय' शब्दों से स्त्रीत्वविवक्षा में पुंयोग में 'आनुक्' आगम विकल्प से होता है।

उदाहरण–मातुली/मातुलानी। उपाध्यायी/उपाध्यायानी

वार्तिक–''आचार्यादणत्वं च''

वार्तिकार्थ–'आचार्य' इस प्रातिपदिक से परे 'आनुक्' के नकार को णत्व नही होता है।

उदाहरण–आचार्यस्य स्त्री = आचार्यानी

वार्तिक–''अर्यक्षत्रियाभ्यां वा स्वार्थे''

वार्तिकार्थ–'अर्य' और 'क्षत्रिय' – इन दो प्रातिपदिकों से स्वार्थ में **'ङीष्'** प्रत्यय और 'आनुक्' का आगम विकल्प से होता है।

उदाहरण–(i) अर्याणी/अर्या, (ii) क्षत्रियाणी/क्षत्रिया

सूत्रम् 8. ''क्रीतात् करणपूर्वात्'' 4.1.50

प्रत्यय–'ङीष्'

सूत्रार्थ– 'क्रीत' शब्द जिसके अन्त में हो तथा करणवाचक जिसका पूर्वावयव हो, ऐसे अदन्त प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'ङीष्' प्रत्यय** होता है।

उदाहरण–वस्त्रक्रीती

विशेष–यह सूत्र कहीं कहीं नही भी लगता है। यथा–**धनक्रीता।**

सूत्रम्–9. ''स्वाङ्गाच्चोपसर्जनादसंयोगोपधात्'' 4.1.54

प्रत्यय–''ङीष्'' (वैकल्पिक)

सूत्रार्थ–उपधा में संयोग न हो ऐसे उपसर्जन-संज्ञक स्वाङ्गवाची शब्द अन्त में हों तो ऐसे अदन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में विकल्प से **'ङीष्'** प्रत्यय होता है।

उदाहरण–

ङीष्	**टाप्**	**ङीष्**	**टाप्**
चन्द्रमुखी	चन्द्रमुखा	अतिकेशी	अतिकेशा
सुकेशी	सुकेशा	पीनस्तनी	पीनस्तना
ताम्रमुखी	ताम्रमुखा		

सूत्रम् 10. ''जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्'' 4.1.63

प्रत्यय–'ङीष्'

सूत्रार्थ–जो नित्यस्त्रीलिङ्ग न हो, और यकार भी उपधा में न हो, ऐसे जातिवाचक प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'ङीष्'** होता है।

उदाहरण–मयूरी, वृषली, तटी, सूकरी, बह्वृची, औपगवी, कठी

वार्तिक 11. ''योपधप्रतिषेधे हयगवयमुकयमनुष्यमत्स्यानामप्रतिषेधः।''

प्रत्यय–''ङीष्''

वार्तिकार्थ–हय, गवय, मुकय, मनुष्य, तथा मत्स्य – इन यकारोपध प्रातिपदिकों से भी **'ङीष्'** प्रत्यय होता है।

उदाहरण–हयी, गवयी, मुकयी, मनुषी, मत्सी।

वार्तिक–'मत्स्यस्य ङ्याम्'

वार्तिकार्थ–'ङी' के परे होने पर ही 'मत्स्य' शब्द के उपधाभूत 'यकार' का लोप हो।

यथा–मत्स्य + ङीष् (यकार का लोप) = **मत्सी**

सूत्रम् 12. ''इतो मनुष्यजातेः'' 4.1.65

प्रत्यय–'ङीष्'

सूत्रार्थ–मनुष्यजातिवाचक ह्रस्व इकारान्त प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में 'ङीष्' प्रत्यय होता है।

उदाहरण–दाक्षी (दक्षस्य अपत्यं स्त्री)। प्लाक्षी (प्लक्षस्य अपत्यं स्त्री)

'ऊङ्'–प्रत्यय-विधायक-सूत्राणि

सूत्रम्–01. ''ऊङुतः'' 4.1.66

प्रत्यय–'ऊङ्'

सूत्रार्थ–जिसकी उपधा में 'यकार' न हो, ऐसे मनुष्य जातिवाची, ह्रस्व उकारान्त प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'ऊङ्' प्रत्यय** होता है।

उदाहरण–कुरूः

सूत्रम् 2. ''पङ्गोश्च'' 4.1.68

प्रत्यय–'ऊङ्'

सूत्रार्थ–'पङ्गु' इस प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में 'ऊङ्' प्रत्यय होता है।

उदाहरण–पङ्गूः

वार्तिक 3. ''श्वशुरस्योकाराकारलोपश्च''

प्रत्यय–''ऊङ्''

वार्तिकार्थ–'श्वशुर' शब्द से स्त्रीत्व विवक्षा में 'ऊङ्' प्रत्यय के साथ उकार और अकार का लोप होता है।

उदाहरण–श्वश्रूः (सास)

सूत्रम् 4. ''ऊरूत्तरपदादौपम्ये'' 4.1.69

प्रत्यय–'ऊङ्'
सूत्रार्थ–जिसका पूर्वपद उपमानवाची तथा उत्तरपद 'ऊरु' हो तो उससे स्त्रीत्व की विवक्षा में 'ऊङ्' प्रत्यय होता है।
उदाहरणम्–करभोरूः, रम्भोरूः, कदलीस्तम्भोरूः, गजनासोरूः, नागनासोरूः, सुन्दरोरूः स्त्री, पीवरोरूः स्त्री।

सूत्रम् 05. ''संहितशफलक्षणवामादेश्च'' 4.1.70
प्रत्यय–'ऊङ्'
सूत्रार्थ–संहित, शफ, लक्षण और वाम–ये शब्द हैं पूर्वपद में जिसके तथा 'ऊरु' शब्द है उत्तरपद में जिसके, ऐसे प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में 'ऊङ्' प्रत्यय होता है।
उदाहरणम्– (i) संहितौ ऊरू यस्याः सा **संहितोरूः**,
(ii) शफौ ऊरू यस्याः सा **शफोरूः**,
(iii) लक्षणौ ऊरू यस्याः सा **लक्षणोरूः**,
(iv) वामौ ऊरू यस्याः सा **वामोरूः**

वार्तिक–संहितसहाभ्यां चेति वक्तव्यम्
वार्तिकार्थ–'संहित' और 'सह' शब्द से उत्तरवर्ती 'ऊरु' शब्द वाले प्रातिपदिक से 'ऊङ्' होता है।
उदाहरणम्–संहितोरूः, सहोरूः

'ङीन्'-प्रत्यय-विधायक-सूत्राणि

सूत्रम् 01. ''शार्ङ्गरवाद्यञो ङीन्'' 4.1.73
प्रत्यय–'ङीन्'
सूत्रार्थ–'शार्ङ्गरव' आदि गणपठित शब्दों तथा **'अञ्'** प्रत्यय अन्त में हों–ऐसे जातिवाचक प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'ङीन्'** प्रत्यय होता है।
उदाहरण्–शार्ङ्गरवी, ब्राह्मणी, बैदी

वार्तिक 02. ''नृनरयोर्वृद्धिश्च''
प्रत्यय–'ङीन्'
वार्तिकार्थ–'नृ' तथा 'नर'–इन दो जातिवाचक प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'ङीन्'** प्रत्यय होता है; तथा इन शब्दों को वृद्धि आदेश होता है।
उदाहरणम्– (i) नृ + ङीन् = नारी (ii) नर + ङीन् = नारी

'ति'-प्रत्यय-विधायक-सूत्रम्

सूत्रम्–''यूनस्तिः'' 4.1.77
प्रत्यय–'ति'
सूत्रार्थ–'युवन्' शब्द से स्त्रीत्व की विवक्षा में 'ति' प्रत्यय होता है।
उदाहरणम्–युवन् + ति = युवतिः

'चाप्'–प्रत्यय-विधायक-वार्तिक

वार्तिक–''सूर्याद् देवतायां चाब् वाच्या''
प्रत्यय–'चाप्'
वार्तिकार्थ–देवता अर्थ में 'सूर्य' शब्द से 'चाप्' प्रत्यय होता है।
उदाहरणम्–सूर्यस्य स्त्री देवता = सूर्या (सूर्य + चाप्)

स्त्री-प्रत्यय-तालिका

क्र0	शब्द	अर्थ	मूलपद + स्त्रीप्रत्यय	प्रत्यय-विधायक-सूत्र
01.	● अजा	बकरी	**अज + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
02.	● एडका	मादा भेड	**एडक + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
03.	● अश्वा	घोड़ी	**अश्व + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
04.	● चटका	चिड़िया	**चटक + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
05.	● मूषिका	चुहिया	**मूषक + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
06.	● बाला	बालिका	**बाल + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
07.	● वत्सा	बछिया	**वत्स + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
08.	● होडा	कन्या	**होड + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
09.	● मन्दा	कन्या	**मन्द + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
10.	● विलाता	कन्या	**विलात + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
11.	● मेधा	बुद्धि	**मेध + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
12.	● गङ्गा	नदी विशेष	**गङ्ग + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
13.	● सर्वा	सभी (स्त्री)	**सर्व + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
14.	● भवती	आप (स्त्री)	**भवत् + ङीप्**	उगितश्च
15.	● भवन्ती	होती हुई	**भवत् + ङीप्**	उगितश्च
16.	● पचन्ती	पकाती हुई	**पचत् + ङीप्**	उगितश्च
17.	● दीव्यन्ती	चमकती हुई	**दीव्यत् + ङीप्**	उगितश्च
18.	● शूद्रा	शूद्र स्त्री	**शूद्र + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्

क्र0	शब्द	अर्थ	मूलपद + स्त्रीप्रत्यय	प्रत्यय-विधायक-सूत्र
19.	• **कुरुचरी**	कुरु देश में विचरण करने वाली स्त्री	**कुरुचर + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
20.	• **नदी**	दरिया, सरिता	**नद + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
21.	• **सौपर्णेयी**	सुपर्णी की कन्या, गरुड़ की बहन	**सौपर्णेय + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
22.	• **ऐन्द्री**	इन्द्र देवता है जिसका, ऐसी पूर्वदिशा	**ऐन्द्र + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
23.	• **औत्सी**	झरने में उत्पन्न होने वाली मछली आदि	**औत्स + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
24.	• **ऊरुद्वयसी**	ऊरु प्रमाण है जिसका, ऐसी नदी	**ऊरुद्वयस + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
25.	• **ऊरुदघ्नी**	ऊरु (जंघा) पर्यन्त जल है, जिस नदी में	**ऊरुदघ्न + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
26.	• **ऊरुमात्री**	ऊरु (जंघा) पर्यन्त जल है, जिस नदी में	**ऊरुमात्र + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
27.	• **देवी**	देव स्त्री	**देव + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
28.	• **पञ्चतयी**	पञ्च अवयवाः अस्याः (पाँच अवयव वाली स्त्री)	**पञ्चतय + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
29.	• **आक्षिकी**	अक्षैर्दीव्यति (पाँसों से जुआ खेलने वाली स्त्री)	**आक्षिक + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
30.	• **प्रास्थिकी**	प्रस्थेन क्रीता (एक प्रस्थ में खरीदी गयी स्त्री)	**प्रास्थिक + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
31.	• **लावणिकी**	लवणं पण्यम् अस्याः (नमक का व्यापार करने वाली स्त्री)	**लावणिक + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
32.	• **यादृशी**	यत् प्रमाणम् अस्य (जिस प्रकार थी)	**यादृश + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
33.	• **इत्वरी**	यात्रा करने वाली स्त्री	**इत्वर + ङीप्**	"टिड्ढाणञ्-द्वयसज्-दघ्नञ्-मात्रच्-तयप्-ठक्-ठञ्-कञ्-क्वरपः"
34.	• **स्त्रैणी**	स्त्रियों की प्रकृति (स्त्रीत्व)	**स्त्रैण + ङीप्**	नञ् स्नञीकक्ख्युँस्तरुणतलुनानामुपसङ्ख्यानम् (वा0)
35.	• **पौंस्नी**	पुरुषार्थिनी स्त्री	**पौंस्न + ङीप्**	नञ्स्नञीकक्ख्युँस्तरुणतलुनानामुपसङ्ख्यानम् (वा0)
36.	• **शाक्तीकी**	बर्छी रखने वाली (भाला धारिणी स्त्री)	**शाक्तीक + ङीप्**	नञ्स्नञीकक्ख्युँस्तरुणतलुनानामुपसङ्ख्यानम् (वा0)
37.	• **याष्टीकी**	लाठी से सुसज्जित स्त्री	**याष्टीक + ङीप्**	नञ्स्नञीकक्ख्युँस्तरुणतलुनानामुपसङ्ख्यानम् (वा0)

क्र0	शब्द	अर्थ	मूलपद + स्त्रीप्रत्यय	प्रत्यय-विधायक-सूत्र
38.	• **आढ्यङ्करणी**	धनसम्पन्न स्त्री	**आढ्यङ्करण + ङीप्**	नञ्स्नञीकक्ख्युँस्तरुणतलुनानामुपसङ्ख्यानम् (वा0)
39.	• **तरुणी**	युवती	**तरुण + ङीप्**	नञ्स्नञीकक्ख्युँस्तरुणतलुनानामुपसङ्ख्यानम् (वा0)
40.	• **तलुनी**	सुन्दर तलवों वाली स्त्री	**तलुन + ङीप्**	नञ्स्नञीकक्ख्युँस्तरुणतलुनानामुपसङ्ख्यानम् (वा0)
41.	• **गार्गी**	गर्गस्य गोत्रापत्यं स्त्री (गर्ग गोत्र की सन्तति कन्या)	**गार्ग्य + ङीप्**	यञश्च
42.	• **गार्ग्यायणी**	गर्ग गोत्र की स्त्री	**गार्ग्यायण + ङीष्**	षिद्गौरादिभ्यश्च
43.	• **नर्तकी**	नाचने वाले स्त्री	**नर्तक + ङीष्**	षिद्गौरादिभ्यश्च
44.	• **गौरी**	पार्वती	**गौर + ङीष्**	षिद्गौरादिभ्यश्च
45.	• **अनड्वाही**	गाय	**अनडुह् + ङीष्**	षिद्गौरादिभ्यश्च
46.	• **अनडुही**	गाय	**अनडुह् + ङीष्**	षिद्गौरादिभ्यश्च
47.	• **कुमारी**	कौमार अवस्था की स्त्री	**कुमार + ङीप्**	वयसि प्रथमे
48.	• **किशोरी**	किशोरावस्था की स्त्री	**किशोर + ङीप्**	वयसि प्रथमे
49.	• **त्रिलोकी**	त्रयाणां लोकानां समाहरः (तीनों लोकों का स्वामी)	**त्रिलोक + ङीप्**	द्विगोः
50.	• **त्रिफला**	त्रयाणां फलानां समाहार (तीनों फलों का समाहार, औषधि विशेष)	**त्रिफल + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
51.	• **त्र्यनीका**	त्रयाणाम् अनीकानां समाहरः (तीन तरह की सेनाओं का समूह)	**त्र्यनीक + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
52.	• **एनी**	चितकबरी (अनेक रंगों वाली)	**एत + ङीप्**	वर्णादनुदात्तात्तोपधात्तो नः
53.	• **एता**	चितकबरी (अनेक रंगों वाली)	**एत + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
54.	• **रोहिणी**	लाल रंगों वाली	**रोहित + ङीप्**	वर्णादनुदात्तोत्तापधात्तो नः
55.	• **रोहिता**	लाल रंगों वाली	**रोहित + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
56.	• **मृद्वी (मृदुः)**	कोमल	**मृदु + ङीष्**	वोतो गुणवचनात्
57.	• **पट्वी (पटुः)**	चतुर स्त्री	**पटु + ङीष्**	वोतो गुणवचनात्
58.	• **बह्वी (बहुः)**	बहुत स्त्री	**बहु + ङीष्**	बह्वादिभ्यश्च
59.	• **रात्री (रात्रिः)**	रात	**रात्रि + ङीष्**	कृदिकारादक्तिनः (वा0)
60.	• **शकटी (शकटिः)**	छोटी गाड़ी	**शकटि + ङीष्**	सर्वतोऽक्तिन्नर्थादित्येके (वा0)
61.	• **गोपी**	गोपस्य स्त्री, पत्नी भगिनी पुत्री वा	**गोप + ङीष्**	पुंयोगादाख्यायाम्
62.	• **गोपालिका**	गाय पालने वाली स्त्री	**गोपालक + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
63.	• **सर्विका**	सब कुछ करने वाली स्त्री	**सर्वक + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्

क्र0	शब्द	अर्थ	मूलपद + स्त्रीप्रत्यय	प्रत्यय-विधायक-सूत्र
64.	● **कारिका**	व्याकरण, सांख्यदर्शन आदि से संबद्ध पद्यसंग्रह	**कारक + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
65.	● **अश्वपालिका**	घोड़े पालने वाली स्त्री	**अश्वपालक + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
66.	● **बहुपरिव्राजका**	संन्यासिनी स्त्री	**बहुपरिव्राजक + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
67.	● **सूर्या**	सूर्यस्य देवता स्त्री (सन्ध्या)	**सूर्य + चाप्**	सूर्याद् देवतायां चाब्वाच्यः (वा0)
68.	● **सूरी**	सूर्यस्य मानुषी स्त्री (कुन्ती)	**सूर्य + ङीष्**	पुंयोगादाख्यायाम् ''सूर्यागस्त्योश्छे च'' ङ्यां च'' (वा) से 'यकार' का लोप
69.	● **इन्द्राणी**	इन्द्रस्य स्त्री (इन्द्र की पत्नी)	**इन्द्र + आनुक् + ङीष्**	''इन्द्र-वरुण-भव-शर्व-रुद्र-मृड-हिमारण्य-यव-यवन-मातुलाचार्याणाम् आनुक्''
70.	● **वरुणानी**	वरुण की स्त्री या पत्नी	**वरुण + आनुक् + ङीष्**	''इन्द्र-वरुण-भव-शर्व-रुद्र-मृड-हिमारण्य-यव-यवन-मातुलाचार्याणाम् आनुक्''
71.	● **शर्वाणी**	शर्वस्य स्त्री	**शर्व + आनुक + ङीष्**	''इन्द्र-वरुण-भव-शर्व-रुद्र-मृड-हिमारण्य-यव-यवन-मातुलाचार्याणाम् आनुक्''
72.	● **रुद्राणी**	रुद्रस्य स्त्री	**रुद्र + आनुक् + ङीष्**	''इन्द्र-वरुण-भव-शर्व-रुद्र-मृड-हिमारण्य-यव-यवन-मातुलाचार्याणाम् आनुक्''
73.	● **भवानी**	भवस्य स्त्री	**भव + आनुक् + ङीष्**	''इन्द्र-वरुण-भव-शर्व-रुद्र-मृड-हिमारण्य-यव-यवन-मातुलाचार्याणाम् आनुक्''
74.	● **मृडानी**	मृडस्य स्त्री	**मृड + आनुक् + ङीष्**	''इन्द्र-वरुण-भव-शर्व-रुद्र-मृड-हिमारण्य-यव-यवन-मातुलाचार्याणाम् आनुक्''
75.	● **हिमानी**	महद्धिमं हिमानी (बड़ी बर्फ)	**हिम + आनुक् + ङीष्**	''हिमारण्ययोर्महत्त्वे'' (वा0) ''इन्द्र-वरुण-भव............."
76.	● **अरण्यानी**	महद् अरण्यम् (बड़ा जंगल)	**अरण्य + आनुक् + ङीष्**	''हिमारण्ययोर्महत्त्वे'' (वा0) ''इन्द्र-वरुण-भव............"
77.	● **यवानी**	दुष्टो यवो यवानी (दूषित जौ, अथवा अजवाइन	**यव + आनुक् + ङीष्**	''यवाद् दोषे'' (वा0)
78.	● **यवनानी**	यवनानां लिपिः यवनानी (यवनों की लिपि, उर्दू, फारसी आदि)	**यवन + आनुक् + ङीष्**	यवनाल्लिप्याम् (वा0) (इन्द्र-वरुण-भव....)
79.	● **मातुलानी**	मातुलस्य पत्नी (मामी)	**मातुल + आनुक्+ङीष्**	''मातुलोपाध्याययोरानुग् वा'' ''इन्द्र-वरुण-भव..."
80.	● **मातुली**	मामा की पत्नी, मामी	मातुल + ङीष्	''मातुलोपाध्याययोरानुग् वा'' (वा0) ('आनुक्' का आगम विकल्प से)
81.	● **उपाध्यायानी**	उपाध्याय की पत्नी	**उपाध्याय+आनुक् + ङीष्**	इन्द्र-वरुण-भव-शर्व-रुद्र-मृड-हिमारण्य यव-यवन-मातुलाचार्याणाम्-आनुक्''
82.	● **उपाध्यायी**	उपाध्याय की पत्नी	**उपाध्याय + ङीष्**	''मातुलोपाध्याययोरानुग् वा'' (वा0) (आनुक् का आगम विकल्प से)
83.	● **आचार्यानी**	आचार्यस्य स्त्री	**आचार्य+आनुक्+ङीष्**	''इन्द्र-वरुण-भव-शर्व.... ''आचार्यदणत्वं च'' वार्तिक से णत्व का निषेध।

क्र0	शब्द	अर्थ	मूलपद + स्त्रीप्रत्यय	प्रत्यय-विधायक-सूत्र
84.	• **अर्याणी**	अर्य अर्थात् वैश्य जाति की स्त्री	**अर्य + आनुक् + ङीष्**	''अर्यक्षत्रियाभ्यां वा स्वार्थे'' (वा0) इन्द्र-वरुण-भव– ('आनुक्' और 'ङीष्' दोनों वैकल्पिक)
85.	• **अर्या**	वैश्य जाति की स्त्री	**अर्य + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
86.	• **क्षत्रियाणी**	क्षत्रिय जाति की स्त्री	**क्षत्रिय+आनुक्+ङीष्**	''अर्यक्षत्रियाभ्यां वा स्वार्थे'' (वा0) इन्द्र-वरुण-भव..... ('आनुक्' और 'ङीष्' दोनों वैकल्पिक)
87.	• **क्षत्रिया**	क्षत्रिय जाति की स्त्री	**क्षत्रिय + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
88.	• **वस्त्रक्रीती**	वस्त्रों के द्वारा खरीदी गयी वस्तु, भूमि स्त्री आदि।	**वस्त्रक्रीत + ङीष्**	''क्रीतात् करणपूर्वात्''
89.	• **अतिकेशी**	केशों को लाँघने वाली (लम्बी माला आदि)	**अतिकेश + ङीष्**	''स्वाङ्गाच्चोपसर्जनादसंयोगोपधात्''
90.	• **अतिकेशा**	केशो को लाँघने वाली (लम्बी माला आदि)	**अतिकेश + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
91.	• **चन्द्रमुखी**	चन्द्र के समान मुख वाली स्त्री	**चन्द्रमुख + ङीष्**	''स्वाङ्गाच्चोपसर्जनादसंयोगोपधात्''
92.	• **चन्द्रमुखा**	चन्द्र के समान मुखवाली स्त्री	**चन्द्रमुख + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
93.	• **सुगुल्फा**	सुन्दर गुल्फों वाली स्त्री	**सुगुल्फ + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
94.	•**कल्याणक्रोडा**	अच्छी छाती वाली स्त्री, (घोड़ी)	**कल्याणक्रोड + टाप्**	अजाद्यतष्टाप् ''न क्रोडादिबह्वचः'' सूत्र से 'ङीष्' प्रत्यय का निषेध
95.	• **सुजघना**	अच्छी जघनों वाली स्त्री	**सुजघन + टाप्**	अजाद्यतष्टाप् ''न क्रोडादिबह्वचः'' सूत्र से 'ङीष्' प्रत्यय का निषेध
96.	• **शूर्पणखा**	रावण की बहन, जिसके नख शूपे की तरह होते हैं	**शूर्पनख + टाप्**	अजाद्यतष्टाप् ''नखमुखात् सञ्ज्ञायाम्'' से 'ङीष्' प्रत्यय का निषेध
97.	• **गौरमुखा**	'गौरमुख' नाम वाली स्त्री या गोरे मुख वाली स्त्री	**गौरमुख + टाप्**	अजाद्यतष्टाप् ''नखमुखात् सञ्ज्ञायाम्'' से 'ङीष्' प्रत्यय का निषेध
98.	• **ताम्रमुखी**	ताम्रमुख वाली स्त्री	**ताम्रमुख + ङीष्**	''स्वाङ्गाच्चोपसर्जनादसंयोगोपधात्'' (विकल्प से 'ङीष्')
99.	• **ताम्रमुखा**	ताम्रमुख वाली स्त्री	**ताम्रमुख + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
100.	• **तटी**	नदी का किनारा	**तट + ङीष्**	जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्
101.	• **बह्वृची**	बहुत ऋचाओं का अध्ययन करने वाली स्त्री	**बह्वृच + ङीष्**	जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्
102.	• **मुण्डा**	मुण्डितशिर वाली स्त्री	**मुण्ड + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्
103.	• **हयी**	घोड़ी	**हय + ङीष्**	''जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्'' ''योपधप्रतिषेधे हयगवयमुकयमनुष्यमत्स्यानामप्रतिषेधः'' (वा0)

क्र0	शब्द	अर्थ	मूलपद + स्त्रीप्रत्यय	प्रत्यय-विधायक-सूत्र
104.	• **गवयी**	नीलगाय	**गवय + ङीष्**	"जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्" "योपधप्रतिषेधे हयगवयमुकयमनुष्यमत्स्यानामप्रतिषेधः" (वा0)
105.	• **मुकयी**	खच्चरी	**मुकय + ङीष्**	"जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्" "योपधप्रतिषेधे हयगवयमुकयमनुष्यमत्स्यानामप्रतिषेधः" (वा0)
106.	• **मनुषी**	मनुष्य जाति की स्त्री	**मनुष्य + ङीष्**	"जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्" "योपधप्रतिषेधे......"
107.	• **मत्सी**	मादा मछली	**मत्स्य + ङीष्**	"जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्" "योपधप्रतिषेधे....." "मत्स्यस्य ङ्याम्" (वा0)
108.	• **दाक्षी**	दक्षस्य अपत्यं स्त्री (दक्ष की कन्या)	**दाक्षि + ङीष्**	"इतो मनुष्यजातेः"
109.	• **कुरूः**	कुरोः अपत्यं स्त्री कुरु की सन्तान स्त्री	**कुरु + ऊङ्**	"ऊङुतः"
110.	• **पङ्गूः**	लँगडी स्त्री	**पङ्गु + ऊङ्**	"पङ्गोश्च"
111.	• **श्वश्रूः**	श्वशुरस्य स्त्री (सास)	**श्वशुर + ऊङ्**	"श्वशुरस्योकाराकारलोपश्च" (वा0)
112.	• **करभोरूः**	करभ के समान अर्थात् मांसल जंघा वाली स्त्री	**करभोरु + ऊङ्**	"ऊरूत्तरपदादौपम्ये"
113.	• **संहितोरूः**	सटी हुई जाँघों वाली स्त्री	**संहितोरु + ऊङ्**	"संहितशफलक्षणवामादेश्च"
114.	• **लक्षणोरूः**	सुलक्षण जाँघों वाली स्त्री	**लक्षणोरु + ऊङ्**	"संहितशफलक्षणवामादेश्च"
115.	• **वामोरूः**	सुन्दर जाँघों वाली स्त्री	**वामोरु + ऊङ्**	"संहितशफलक्षणवामादेश्च"
116.	• **शफोरूः**	जिसकी जाँघे मिली हुई हो ऐसी स्त्री	**शफोरु + ऊङ्**	"संहितशफलक्षणवामादेश्च"
117.	• **शार्ङ्गरवी**	शृङ्गरोः अपत्यं स्त्री (शृङ्गरु की कन्या)	**शार्ङ्गरव + ङीन्**	"शार्ङ्गरवाद्यञो ङीन्"
118.	• **बैदी**	बिदस्य अपत्यं स्त्री (बैद ऋषि की कन्या)	**बैद + ङीन्**	"शार्ङ्गरवाद्यञो ङीन्"
119.	• **ब्राह्मणी**	ब्राह्मण की पत्नी, कन्या	**ब्राह्मण + ङीन्**	"शार्ङ्गरवाद्यञो ङीन्"
120.	• **नारी**	स्त्री जाति	**नृ + ङीन्** **नर + ङीन्**	"नृनरयोर्वृद्धिश्च"
121.	• **युवतिः**	जवान, स्त्री	**युवन् + ति**	"यूनस्तिः"
122.	• **धनक्रीता**	धन द्वारा खरीदी गयी स्त्री	**धनक्रीत + टाप्**	अजाद्यतष्टाप्

केवलसमासः ''विशेषसंज्ञा-विनिर्मुक्तः केवलसमासः''

क्र0	सामासिक-पदम्	अर्थः	लौकिकविग्रहः	अलौकिक-विग्रहः	समासविधायक सूत्रम्
1.	भूतपूर्वः वागर्थाविव	जो पहले हुआ हो वाणी और अर्थ की तरह	पूर्वं भूतः वागर्थौ इव	पूर्व अम् भूत सु वागर्थ औ इव	''सह सुपा'' इवेन समासो विभक्त्यलोपश्च (वा0)

1. पूर्वम् अदृष्टः = अदृष्टपूर्वः
2. पूर्वम् अभूतः = अभूतपूर्वः
3. न एकः = नैकः
4. नैकधा, नसंहत्ताः, नभिन्नवृत्तयः
5. आजन्मशुद्धानाम्, आसमुद्रक्षितीशानाम्
6. उत्तम ऋणे = उत्तमर्णः (ऋण देने वाला)
7. अधम ऋणे = अधमर्णः (ऋण लेने वाला)
8. निसर्गेण निपुणः = निसर्गनिपुणः (स्वभाव से चतुर)
9. प्रकृत्या वक्रः = प्रकृतिवक्रः (स्वभाव से टेढ़ा)
10. विस्पष्टं कटुकम् = विस्पष्टकटुकम् (स्पष्ट रूप से कटु)
11. अवश्यं स्तुत्यः = अवश्यस्तुत्यः
12. जीमूतस्य इव = जीमूतस्येव

अव्ययीभावसमासः (पूर्वपदार्थप्रधानः अव्ययीभावः)

सूत्रम्–

''अव्ययं विभक्ति - समीप - समृद्धि - व्यृद्ध्यर्थाभावात्ययासम्प्रति - शब्दप्रादुर्भाव - पश्चाद्यथानुपूर्व्य - यौगपद्य - सादृश्य - सम्पत्ति - साकल्यान्तवचनेषु''

क्र0	सामासिकदपदम्	अर्थ	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	विशेषः
1.	**अधिहरि**	हरि में (विभक्ति अर्थ में)	हरौ इति	हरि ङि अधि	**अतिमालम्**
2.	**अधिगोपम्**	गोप में (विभक्ति अर्थ में)	गोपि इति	गोपा ङि अधि	**अतिखट्वम्**
3.	**उपकृष्णम्**	कृष्ण के समीप (समीप अर्थ में)	कृष्णस्य समीपम्	कृष्ण ङस् उप	**उपकूपम्, उपवृक्षम्**
4.	**सुमद्रम्**	मद्रदेशवासियों की समृद्धि ('समृद्धि' के अर्थ में)	मद्राणां समृद्धिः	मद्र आम् सु	भिक्षाणां समृद्धिः **सुभिक्षम्**
5.	**दुर्यवनम्**	यवनों की समृद्धि का अभाव (वृद्धि का अभाव अर्थ में)	यवनानां व्यृद्धिः	यवन आम् दुर्	शकानां व्यृद्धिः **दुःशकम्**
6.	**निर्मक्षिकम्**	मक्खियों का अभाव (अभाव अर्थ में)	मक्षिकाणाम् अभावः	मक्षिका आम् निर्	मशकानाम् अभावः **निर्मशकम्,** विघ्नानाम् अभावः **निर्विघ्नम्**
7.	**अतिहिमम्**	हिम का अत्यय = नाश (अत्यय अर्थ में)	हिमस्य अत्ययः	हिम ङस् अति	शीतस्य अत्ययः **अतिशीतम्**
8.	**अतिनिद्रम्**	निद्रा इस समय उचित नहीं है 'असम्प्रति' इस समय उचित नहीं अर्थ में)	निद्रा सम्प्रति न युज्यते	निद्रा ङस् अति	कम्बलं सम्प्रति न युज्यते **अतिकम्बलम्**
9.	**इतिहरि**	हरि नाम की प्रसिद्धि 'शब्दप्रादुर्भाव' (नाम की प्रसिद्धि अर्थ में)	हरिशब्दस्य प्रकाशः	हरि ङस् इति	(i) पाणिनि शब्दस्य प्रकाशः-**इतिपाणिनि** (ii) ज्ञानशब्दस्य प्रकाशः-**इतिज्ञानम्**
10.	**अनुविष्णु**	विष्णु के पीछे ('पश्चात्' अर्थ में)	विष्णोः पश्चात्	विष्णु ङस् अनु	**अनुरथम्, अनुशिष्यम्, अनुगोपालम्**
11.	**अनुरूपम्**	रूप के योग्य ('यथा' के योग्यता अर्थ में समास)	रूपस्य योग्यम्	रूप ङस् अनु	**अनुगुणम्** **अनुलेखम्** **अनुविद्यालयम्**
12.	**प्रत्यर्थम्**	प्रत्येक अर्थ के प्रति ('यथा' के वीप्सा अर्थ में समास)	अर्थम् अर्थं प्रति	अर्थ अम् प्रति	(i) छात्रं छात्रं प्रति **प्रतिच्छात्रम्** (ii) जनं जनं प्रति **प्रतिजनम्** (iii) गृहं गृहं प्रति **प्रतिगृहम्**

क्र0	सामासिकदपदम्	अर्थ	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	विशेषः
13.	**यथाशक्ति**	शक्ति के अनुसार अर्थात् शक्ति के उल्लंघन के बिना (पदार्थानतिवृत्ति अर्थात् पद के अर्थ का उल्लंघन न करना - इस अर्थ में समास)	शक्तिम् अनतिक्रम्य	शक्ति अम् यथा	(i) बुद्धिम् अनतिक्रम्य **यथाबुद्धि** (ii) ज्ञानम् अनतिक्रम्य **यथाज्ञानम्**
14.	**सहरि**	हरि के सदृश (यथा के सदृश अर्थ में)	हरेः सादृश्यम्	हरि ङस् सह	"अव्ययं विभक्तिसमीप ...." इस सूत्र से समास
15.	**अनुज्येष्ठम्**	ज्येष्ठ के क्रम से (आनुपूर्व्य अर्थ में)	ज्येष्ठस्य आनुपूर्व्येण	ज्येष्ठ ङस् अनु	वृद्धस्य आनुपूर्व्येण अनुवृद्धम्
16.	**सचक्रम्**	चक्र के साथ एक ही काल में ('यौगपद्य' एक साथ-एक ही काल में- इस अर्थ में समास)	चक्रेण युगपत्	चक्र टा सह	"अव्ययं विभक्ति समीप ....." इस सूत्र से समास
17.	**ससखि**	सखा के समान (सादृश्य अर्थात् समान अर्थ में समास)	सदृशः सख्या	सखि टा सह	"अव्ययं विभक्ति....." सूत्र से समास
18.	**सक्षत्रम्**	क्षत्रियों के अनुरूप ('सम्पत्ति' अर्थ में समास)	क्षत्राणां सम्पत्तिः	क्षत्र आम् सह	"अव्ययं विभक्ति...." सूत्र से समास
19.	**सतृणम् (अत्ति)**	तिनके को भी छोड़े बिना सम्पूर्ण खाता है ('साकल्य' अर्थात् सम्पूर्ण अर्थ में समास)	तृणम् अपि अपरित्यज्य	तृण टा सह	"अव्ययं विभक्ति....." सूत्र से समास
20.	**साग्नि (अधीते)**	अग्निग्रन्थ की समाप्ति तक पढ़ता है ('अन्त' अर्थात् यहाँ तक-इस अर्थ में समास)	अग्निग्रन्थ-पर्यन्तम्	अग्नि टा सह	"अव्ययं विभक्ति....." सूत्र से समास
21.	**पञ्चगङ्गम्**	पाँच गङ्गाओं का समूह	पञ्चानां गङ्गानां समाहारः	पञ्चन् आम् गङ्गा आम्	"**नदीभिश्च**" सूत्र से समास
22.	**द्वियमुनम्**	दो यमुना नदी धाराओं का समूह	द्वयोर्यमुनयोः समाहारः	द्वि ओस् यमुना ओस्	"**नदीभिश्च**" सूत्र से समास
23.	**उपशरदम्**	शरद् ऋतु के समीप वाली ऋतु ('समीप' अर्थ में समास)	शरदः समीपम्	शरद् ङस् उप	"अव्ययं विभक्ति-समीप-...." सूत्र से समास
24.	**प्रतिविपाशम्**	विपाशा नदी के सम्मुख ('सम्मुख' इस अर्थ में समास)	विपाशं विपाशं प्रति (विपाशायाः अभिमुखम्)	विपाश अम् प्रति	"अव्ययं विभक्ति-समीप..." इस सूत्र समास
25.	**उपजरसम्**	बुढ़ापे के निकट ('समीप' अर्थ में समास)	जरायाः समीपम्	जरा ङस् उप	"अव्ययं विभक्ति...." इस सूत्र से समास
26.	**उपराजम्**	राजा के समीप ('समीप' अर्थ में समास)	राज्ञः समीपम्	राजन् ङस् उप	"अव्ययं विभक्ति....." इस सूत्र से समास
27.	**अध्यात्मम्**	आत्मा में, आत्मा के विषय में ('विभक्ति' अर्थ में समास)	आत्मनि	आत्मन् ङि अधि	"अव्ययं विभक्ति...." सूत्र से समास
28.	**उपचर्मम्/उपचर्म**	चमड़े के समीप ('समीप' अर्थ में (समास)	चर्मणः समीपम्	चर्मन् ङस् उप	"अव्ययं विभक्ति...." 'टच्' प्रत्यय होने पर उपचर्मम्
29.	**उपसमिधम्/ उपसमित्**	समिधा के पास = समिधा हवन की लकड़ी ('समीप' इस अर्थ में समास)	समिधः समीपम्	समिध ङस् उप	'टच्' प्रत्यय न होने पर उपसमित्

तत्पुरुषसमासः ''उत्तरपदार्थप्रधानः तत्पुरुषः''

क्र0	सामासिकपदम्	अर्थः	लौकिकविग्रहः	अलौकिक विग्रहः	सामासिक-सूत्रम्
1.	**कृष्णाश्रितः (हरिश्रितः) (लक्ष्मीश्रितः)**	कृष्ण का आश्रय लिया हुआ	कृष्णं श्रितः	कृष्ण अम् + श्रित सु	**''द्वितीया श्रितातीतपतितगतात्यस्त प्राप्तापन्नैः''** सूत्र से द्वितीया तत्पुरुष
2.	**अरण्यातीतः**	वन को पार किया हुआ	अरण्यम् अतीतः	अरण्य अम् + अतीत सु	**''द्वितीया श्रितातीत....''** सूत्र से द्वितीया तत्पुरुषसमास
3.	**कूपपतितः**	कुएँ में गिरा हुआ	कूपं पतितः	कूप अम् + पतित सु	**''द्वितीया श्रितातीतपतित.....''** सूत्र से द्वितीयातत्पुरुष
4.	**ग्रामगतः**	गाँव गया हुआ	ग्रामं गतः	ग्राम अम् + गत सु	**''द्वितीया श्रितातीत....''** सूत्र से द्वितीयातत्पुरुष
6.	**दुःखापन्नः**	दुःख को प्राप्त हुआ	दुःखम् आपन्नः	दुःख अम् + आपन्न सु	**''द्वितीया श्रितातीत .....''** सूत्र से द्वितीयातत्पुरुष
7.	**शङ्कुलाखण्डः**	सरोते से किया गया टुकड़ा	शङ्कुलया खण्डः	शङ्कुला टा + खण्ड सु	**''तृतीया तत्कृतार्थेन गुणवचनेन''** सूत्र से तृतीया तत्पुरुष
8.	**सुखप्राप्तः**	सुख को पाया हुआ	सुखं प्राप्तः	सुख अम् + प्राप्त सु	''द्वितीया श्रितातीत......''
9.	**विद्यार्थः**	विद्या से प्रयोजन	विद्यया अर्थः	विद्या टा + अर्थ सु	**''तृतीया तत्कृतार्थेन....''** सूत्र से तृतीया तत्पुरुष (**धनार्थः, हिरण्यार्थः**)
10.	**हरित्रातः**	हरि के द्वारा रक्षित	हरिणा त्रातः	हरि टा + त्रात सु	**''कर्तृकरणे कृता बहुलम्''** इस सूत्र से तृतीयातत्पुरुष
11.	**नखभिन्नः**	नाखूनों से चीरा गया	नखैः भिन्नः	नख भिस् + भिन्न सु	**''कर्तृकरणे कृता बहुलम्''** इस सूत्र से तृतीयातत्पुरुष
12.	**नखनिर्भिन्नः**	नखों से फाडा गया	नखैः निर्भिन्नः	नख भिस् + निर्भिन्न सु	**'कृद्ग्रहणे गतिकारक-पूर्वस्यापि ग्रहणम्'** इससे नि उपसर्ग लगने पर भी समास का ग्रहण हुआ
13.	**यूपदारु (गृहदारु, कङ्कण-सुवर्णम्)**	खम्भे के लिए लकड़ी	यूपाय दारु	यूप ङे + दारु सु	**''चतुर्थी तदर्थार्थबलिहित सुखरक्षितैः''** इस सूत्र से चतुर्थीतत्पुरुष
14.	**द्विजार्थः**	ब्राह्मण के लिए (दान)	द्विजाय अयम्	द्विज ङे + अर्थ सु	**''चतुर्थी तदर्थार्थ....''** सूत्र से विकल्प तथा **''अर्थेन नित्य समासो विशेष्यलिङ्गता चेति वक्तव्यम्''** इस वार्तिक से नित्यसमास।
15.	**भूतबलिः**	भूतों के लिए बलि	भूतेभ्यो बलिः	भूत भ्यस् + बलि सु	**''चतुर्थी तदर्थार्थबलिहित सुखरक्षितैः''** सूत्र से चतुर्थी तत्पुरुष
16.	**गोहितम्**	गायों का हित	गोभ्यो हितम्	गो भ्यस् + हित सु	**''चतुर्थी तदर्थार्थबलिहित सुखरक्षितैः''** सूत्र से समास। इसी तरह **'गोसुखम्'' 'गोरक्षितम्** आदि
17.	**चोरभयम्**	चोर से डर	चोरात् भयम्	चोर ङसि + भय सु	**'पञ्चमी भयेन'** सूत्र से समास। **वृकभीः, भयभीतः, सिंहभीतिः।**

क्र0	सामासिकपदम्	अर्थ	लौकिकविग्रहः	अलौकिक विग्रहः	सामासिक-सूत्रम्
18.	**स्तोकान्मुक्तः**	थोड़े से मुक्त हुआ	स्तोकात् मुक्तः	स्तोक ङसि + मुक्त सु	**''स्तोकान्तिकदूरार्थकृच्छ्राणि क्तेन''** सूत्र से अलुक् समास।
19.	**अन्तिकादागतः**	समीप से आया हुआ	अन्तिकाद् आगतः	अन्तिक ङसि + आगत सु	**''स्तोकान्तिकदूरार्थकृच्छ्राणि क्तेन''** सूत्र से अलुक् समास।
20.	**अभ्याशादागतः**	समीप से आया हुआ	अभ्याशात् आगतः	अभ्याश ङसि + आगत सु	**''स्तोकान्तिकदूरार्थकृच्छ्राणि क्तेन''** सूत्र से अलुक् समास।
21.	**दूरादागतः**	दूर से आया हुआ	दूरात् आगतः	दूर ङसि + आगत सु	**'स्तोकान्तिकदूरार्थ....'** सूत्र से अलुक् समास
22.	**कृच्छ्रादागतः**	कष्ट से आया हुआ	कृच्छ्रात् आगतः	कृच्छ्र ङसि + आगत सु	**''स्तोकान्तिक......''** सूत्र से समास
23.	**राजपुरुषः**	राजा का आदमी/सेवक	राज्ञः पुरुषः	राजन् ङस् + पुरुष सु	**'षष्ठी'** सूत्र से षष्ठी तत्पु0 समास।
24.	**आत्मज्ञानम्**	आत्मा का ज्ञान	आत्मनः ज्ञानम्	आत्मन् ङस् + ज्ञान सु	**'षष्ठी'** सूत्र से षष्ठी तत्पु0 समास।
25.	**मनोविकारः**	मन का विकार	मनसः विकारः	मनस् ङस् + विकार सु	**'षष्ठी'** सूत्र से षष्ठी तत्पु0 समास
26.	**सत्सङ्गतिः**	सज्जनों की सङ्गति	सतां सङ्गतिः	सत् आम् + सङ्गति सु	**'षष्ठी'** सूत्र से षष्ठी तत्पु0 समास
27.	**पूर्वकायः**	शरीर का अगला आधा भाग	पूर्वं कायस्य	काय ङस् + पूर्व सु	**'पूर्वापराधरोत्तरमेकदेशिनैकाधिकरणे'** सूत्र से तत्पुरुष समास।
28.	**अपरकायः**	शरीर का दूसरा आधा भाग	अपरं कायस्य	काय ङस् + अपर सु	**''पूर्वापरा.....''** सूत्र से समास
29.	**अर्धपिप्पली**	पिप्पली का आधा भाग	अर्धं पिप्पल्याः	पिप्पली ङस् + अर्ध सु	**''अर्धं नपुंसकम्''** सूत्र से समास। इसी तरह **''आसनार्धम् शरीरार्धम् पणार्धम्''** आदि।
30.	**अक्षशौण्डः**	पासाओं से खेलने में चतुर	अक्षेषु शौण्डः	अक्ष् सुप् + शौण्ड सु	**''सप्तमी शौण्डैः''** सूत्र से सप्तमीतत्पुरुष।
31.	**काव्यनिपुणः**	काव्यशास्त्र में निपुण	काव्ये निपुणः	काव्य ङि + निपुण सु	**''सप्तमी शौण्डैः''** सूत्र से सप्तमीतत्पुरुष समास
32.	**वेदविद्वान्**	वेद को जानने वाला	वेदं विद्वान्	वेद अम् + विद्वस् सु	द्वितीया समास करके वेद-विद्वान् शब्द बना है (द्वि. त.)
33.	**मदान्धः**	मद से अन्धा	मदेन अन्धः	मद टा + अन्ध सु	तृतीया तत्पुरुष समास
34.	**धर्मनियमः**	धर्म के लिए नियम	धर्माय नियमः	धर्म ङे + नियम सु	चतुर्थी तत्पुरुष
35.	**द्विजेतरः**	ब्राह्मण से अलग	द्विजाद् इतरः	द्विज ङसि + इतर सु	पञ्चमी तत्पुरुष
37.	**पूर्वेषु-कामशमी**	पूर्वेषुकामशमी नामक प्राचीन एक गाँव	पूर्वा चासौ इषुकामशमी	पूर्वा सु + इषुकामशमी सु	दिशावचक तथा संज्ञावाचक होने के कारण **''दिक्सङ्ख्ये संज्ञायाम्''** से समास हुआ।

क्र0	सामासिकपदम्	अर्थ	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	सामासिक-सूत्रम्
38.	**सप्तर्षयः**	सात ऋषियों की संज्ञा	सप्त च ते ऋषयः	सप्तन् जस् + ऋषि जस्	**''दिक्सङ्ख्ये संज्ञायाम्''** से तत्पुरुष हुआ।
39.	**पौर्वशालः**	पूर्व दिशा वाली शाला में होने वाली	पूर्वस्यां शालायां भवः	पूर्वा ङि + शाला ङि	**'तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च'** से समास
40.	**पञ्चगवधनः** (द्विगु + बहुव्रीहि)	पाँच गाय धन हैं जिसका वह व्यक्ति	पञ्च गावो धनं यस्य	पञ्चन् जस् + गो जस् धन सु।	**'अनेकमन्यपदार्थे'** सूत्र से बहुव्रीहि
41.	**पञ्चगवम्**	पाँच गायों का समूह	पञ्चानां गवां समाहारः	पञ्चन् आम् + गो आम्	**'तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च'** सूत्र से समास **''संख्यापूर्वो द्विगुः''** से द्विगुसंज्ञा
42.	**नीलोत्पलम्**	नील कमल	नीलम् उत्पलम्/ नीलं च तद् उत्पलम्	नील सु + उत्पल सु	**''विशेषणं विशेष्येण बहुलम्''** से कर्मधारय समास।
43.	**निर्मलगुणाः**	निर्मल गुण	निर्मलाः गुणाः अथवा निर्मलाश्च ते गुणाः	निर्मल जस् + गुण जस्	**'विशेषणं विशेष्येण बहुलम्'** से कर्मधारय समास।
44.	**कृष्ण-चतुर्दशी**	कृष्णपक्ष वाली चतुर्दशी	कृष्णा चतुर्दशी या कृष्णा चासौ चतुर्दशी	कृष्णा सु + चतुर्दशी सु	**'विशेषणं विशेष्येण बहुलम्'** से कर्मधारय समास।
45.	**अखिल-भूषणानि**	सारे आभूषण	'अखिलानि भूषणानि' या अखिलानि च तानि भूषणानि	अखिल जस् + भूषण जस्	**'विशेषणं विशेष्येण बहुलम्'** से कर्मधारय समास।
46.	**कृष्णसर्पः**	काला सर्प	कृष्णः सर्पः या कृष्णश्चासौ सर्पः	कृष्ण सु + सर्प सु	**'विशेषणं विशेष्येण बहुलम्'** से बहुलता के अर्थ में 'नित्य' समास
47.	**घनश्यामः**	बादल की तरह श्याम वर्ण वाले श्रीकृष्ण	घन इव श्यामः	घन सु + श्याम सु	**'उपमानानि सामान्यवचनैः'** सूत्र से समास
48.	**कर्पूरगौरः**	कपूर की तरह श्वेत वर्ण वाला	कर्पूर इव गौरः	कर्पूर सु + गौर सु	**'उपमानानि सामान्यवचनैः'** सूत्र से समास
49.	**शाकपार्थिवः**	शाक को प्रिय मानने वाला राजा	शाकप्रियः पार्थिवः	शाकप्रिय सु + पार्थिव सु	मध्यमपदलोपी समास
50.	**देवब्राह्मणः**	देवता का पूजन करने वाला ब्राह्मण	देवपूजको ब्राह्मणः	देवपूजक सु + ब्राह्मण सु	मध्यमपदलोपी समास
51.	**अब्राह्मणः**	ब्राह्मण से भिन्न, ब्राह्मण जैसा, क्षत्रिय आदि	न ब्राह्मणः	न ब्राह्मण सु	**'नञः' से नञ् तत्पुरुष** समास हुआ
52.	**अनश्वः**	घोड़े से भिन्न घोड़े जैसा गधा, खच्चर आदि	न अश्वः	न अश्व सु	**'नञः'** से नञ् तत्पुरुष समास हुआ
53.	**कुपुरुषः(कुमाता, कुदृष्टिः)**	निन्दित पुरुष	कुत्सितः पुरुषः	कु पुरुष सु	**''कुगतिप्रादयः''** से समास
54.	**ऊरीकृत्य**	स्वीकार करके	ऊरी कृत्वा		**''कुगतिप्रादयः''** से समास
55.	**शुक्लीकृत्य**	सफेद करके या अशुक्ल को शुक्ल करके	अशुक्लं शुक्लं कृत्वा	शुक्ल अम् कृत्वा	**''कुगतिप्रादयः''** से समास

क्र0	सामासिकपदम्	अर्थ	लौकिकविग्रहः	अलौकिक विग्रहः	सामासिक-सूत्रम्
56.	**पटपटाकृत्य**	पटत् पटत् इस प्रकार शब्द करके	पटत् पटत् इति कृत्वा	[illegible] + क्त्वा + डाच्	'**कुगतिप्रादयः**' से समास
57.	**सुपुरुषः**	सुन्दर पुरुष	शोभनः पुरुषः	सु पुरुष सु	''**कुगतिप्रादयः**'' से 'प्रादिसमास' होगा (ऐसे ही सुराजा, दुर्जनः, दुर्दिनम्)
58.	**प्राचार्यः** (प्रादितत्पुरुष)	दूर गया हुआ आचार्य, श्रेष्ठ आचार्य, अपने विषय में दक्ष या आचार्य का भी आचार्य	प्रगतः आचार्यः	प्र आचार्य सु	'**प्रादयो गताद्यर्थे प्रथमया**' से समास। (इसीतरह प्रपितामहः, विपक्षः, प्रवीरः आदि)
59.	**अतिमालः**	माला का अतिक्रमण करने वाला या सुगन्ध से माला आदि को मात दे चुका कोई पदार्थ	मालाम् अतिक्रान्तः	माला अम् अति	''**अत्यादयः क्रान्ताद्यर्थे द्वितीया**' से समास, (अतिमानुषः अत्यर्थः इत्यादि)
60.	**अवकोकिलः** आदि	कोयली से कूजित प्रदेश	अवक्रुष्टः कोकिलया	कोकिला टा + अव	''**अवादयः क्रुष्टाद्यर्थे तृतीया**'' से समास
61.	**पर्यध्ययनः**	अध्ययन से थका हुआ या घबराया हुआ	परिग्लानः अध्ययनाय	अध्ययन ङे + परि	''**पर्यादयो ग्लानाद्यर्थे चतुर्थ्या**'' से समास
62.	**निष्कौशाम्बिः**	कौशाम्बी नगरी से निकला हुआ	निष्क्रान्तः कौशाम्ब्याः	कौशाम्बी ङसि + निर्	'**निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्या**' इस वा0 से समास
63.	**कुम्भकारः**	घड़े को बनाने वाला	कुम्भं करोति	कुम्भ अम् + कृ	**उपपदमतिङ्** से समास। इसी तरह सूत्रकारः आदि बनता है
64.	**व्याघ्री**	विशेष रूप से सूँघने वाली	विशेषेण जिघ्रती		'**उपपदमतिङ्**' सूत्र से समास
65.	**अश्वक्रीती**	घोड़े के द्वारा खरीदी गई वस्तु भूमि आदि	अश्वेन क्रीता	अश्व टा क्रीत	'**कर्तृकरणे कृताबहुलम्**' से तृतीया तत्पुरुष
66.	**कच्छपी**	कच्छ से पीने वाली	कच्छेन पिबति	कच्छ टा + पा	**उपपदमतिङ्** से समास होता है
67.	**द्व्यङ्गुलम्**	दो अंगुल के बराबर नापवाली लकड़ी आदि	द्वे अङ्गुली प्रमाणम् अस्य	द्वि औ + अङ्गुलि औ	''**तद्धितार्थोत्तरपद-समाहारे च**'' सूत्र से द्विगुसमास
68.	**निरङ्गुलम्**	निकल गई अंगुली से जो, अंगूठी आदि	निर्गत अङ्गुलिभ्यः	निर् + अङ्गुलि + भ्यस्	''**निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्या**'' से प्रादि तत्पुरुष
69.	**अहोरात्रः**	दिन - रात	अहन् च रात्रिश्च, अनयोः समाहारः	अहन् सु + रात्रि सु	'**चार्थे द्वन्द्वः**' से द्वन्द्व समास
70.	**सर्वरात्रः**	सारी रात	सर्वा चासौ रात्रिः	सर्वा सु + रात्रि सु	''**विशेषणं विशेष्येण बहुलम्**'' से कर्मधारय समास
71.	**पूर्वरात्रः**	रात का पहला भाग	पूर्वं रात्रेः	पूर्व सु + रात्रि ङस्	**पूर्वापराधरोत्तरमेकदेशिनै–काधिकरणे**' से समास हुआ है
72.	**सङ्ख्यातरात्रः**	गिनी गई रात	सङ्ख्याता चासौ रात्रिः	सङ्ख्याता सु + रात्रि सु	''**पूर्वकालैकसर्व जरत्पुराणनवकेवलाः समानाधिकरणेन**'' से समास हुआ
73.	**द्विरात्रम्**	दो रातों का समूह	द्वयोः रात्र्योः समाहारः	द्वि ओस् + रात्रि ओस्	''**तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे-च**'' से समास हुआ

बहुव्रीहिः ''अन्यपदार्थप्रधानः बहुव्रीहिः''

क्र०	सामासिकपदम्	अर्थः	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	सामासिक-सूत्रम्
1.	**कण्ठेकालः**	कण्ठ में काल या नील वर्ण है जिसका वह, (शंकर जी या नीलकण्ठ पंक्षी)	कण्ठे कालो यस्य सः	कण्ठ ङि + काल सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** सूत्र से बहुव्रीहि समास
2.	**प्राप्तोदकः**	प्राप्त हो गया है जल जिसको = ग्राम	प्राप्ततम् उदकं यं (ग्रामम्)	प्राप्त सु + उदक सु	**''अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
3.	**ऊढरथः**	ढो चुका है रथ जिसने (घोड़े ने)	ऊढः रथः येन	ऊढ सु + रथ सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** सूत्र से बहुव्रीहि समास
4.	**उपहृतपशुः**	जिसको पशु भेंट चढ़ाया गया है वह, (शम्भू के अर्थ में)	उपहृतः पशुः यस्मै (शम्भवे)	उपहृत सु + पशु सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** सूत्र से बहुव्रीहि समास
5.	**दत्तद्रव्यः**	जिसको द्रव्य दिया गया है वह	दत्तं द्रव्यं यस्मै (जनाय)	दत्त सु + द्रव्य सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** सूत्र से बहुव्रीहि समास
6.	**उद्धृतौदना**	निकाल लिया गया है भात जिससे वह (बटलोई)	उद्धृतः ओदनः यस्याः (स्थाल्याः)	उद्धृत सु + ओदन सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
7.	**पीताम्बरः**	पीले वस्त्र हैं जिसके वह (विष्णु)	पीतम् अम्बरम् अस्ति यस्य सः (विष्णुः)	पीत सु + अम्बर सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
8.	**वीरपुरुषः**	वीर पुरुष है जिस (ग्राम) के	वीराः पुरुषाः सन्ति यस्मिन् (ग्रामे)	वीर जस् + पुरुष जस्	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
9.	**समृद्धपुरुषाणि**	समृद्धपुरुष हैं, जिन नगरों में, वे नगर	समृद्धाः पुरुषाः सन्ति येषु (नगरेषु)	समृद्ध जस् + पुरुष जस्	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
10.	**प्रपतितः**	जिसके पत्ते अच्छी तरह झड़ चुके हैं, वह (वृक्ष)	प्रपतितानि पर्णानि यस्मात् (सः वृक्षः)	प्रपतित जस् + पर्ण जस्	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास (ऐसे ही - विधवा, निर्जनः, निर्गुणः, निष्फलं, निरर्थकः आदि)
11.	**अपुत्रः**	जिसका पुत्र नहीं है वह पुत्रहीन पुरुष	अविद्यमानः पुत्रो यस्य	अविद्यमान सु + पुत्र सु	**नञोऽस्त्यर्थानां वाच्यो वा चोत्तरपद-लोपः** (वा०) (अनाथः, अक्रोधः आदि)
12.	**चित्रगुः**	चितकबरी गायों वाला व्यक्ति	चित्राः गावः यस्य	चित्रा जस् + गो जस्	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
13.	**रूपवद्भार्यः**	रूपवती स्त्री वाला पुरुष	रूपवती भार्या अस्ति यस्य	रूपवती सु + भार्या सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
14.	**दीर्घजङ्घः**	लम्बी जाँघ वाला पुरुष	दीर्घे जङ्घे स्तः यस्य (पुरुषस्य)	दीर्घा औ + जङ्घा औ	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास

क्र0	सामासिकपदम्	अर्थः	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	सामासिक-सूत्रम्
15.	**सुन्दरभार्यः**	सुन्दरी स्त्री वाला पुरुष	सुन्दरी भार्या अस्ति यस्य	सुन्दरी सु + भार्या सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
16.	**कल्याणीपञ्चमाः** (रात्रयः)	जिन रातों में पाँचवीं रात कल्याणदायिनी है, ऐसी सभी रातें	कल्याणी पञ्चमी यासां रात्रीणाम्	कल्याणी सु + पञ्चमी सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
17.	**स्त्रीप्रमाणः**	स्त्री जिसके लिए प्रमाण हो, वह पुरुष	स्त्री प्रमाणी यस्य सः	स्त्री सु + प्रमाणी सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
18.	**दीर्घसक्थः**	दीर्घ ऊरुओं वाला पुरुष	दीर्घे सक्थिनी स्तः यस्य (पुरुषस्य)	दीर्घ औ + सक्थि औ	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
19.	**जलजाक्षी**	कमल की तरह सुन्दर आँख वाली स्त्री	जलजे इव अक्षिणी यस्याः	जलजा औ + अक्षि औ	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
20.	**द्विमूर्धः**	दो सिर है जिसके वह पुरुष	द्वौ मूर्धानौ यस्य सः	द्वि औ + मूर्धन् औ	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
21.	**त्रिमूर्धः**	तीन सिर हैं जिसके वह पुरुष	त्रयो मूर्धानो यस्य सः	त्रि जस् + मूर्धन् जस्	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
22.	**अन्तर्लोमः**	अन्दर रोम है जिसके ऐसा पुरुष	अन्तर्लोमानि यस्य सः	अन्तर् + लोमन् जस्	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
23.	**बहिर्लोमः**	बाहर रोम है जिसके ऐसा वस्त्र	बहिर्लोमानि यस्य सः	बहिस् + लोमन् जस्	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
24.	**व्याघ्रपात्**	बाघ के पैरों की तरह पैर वाला	व्याघ्र पादौ इव पादौ यस्य सः	व्याघ्रपाद औ + पाद औ	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
25.	**द्विपात्**	दो पैरों वाला पुरुष	द्वौ पादौयस्य सः	द्वि औ पाद औ	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
26.	**सुपात्**	सुन्दर पैरों वाला पुरुष	सु शोभनौ पादौ यस्य सः	सु पाद + औ	**'अनेकमन्य पदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
27.	**उत्काकुत्**	उठे हुए तालु वाला	उद्गतं काकुदं यस्य सः	उत् + काकुद् सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
28.	**विकाकुत्**	विकृत तालु वाला पुरुष	विकृतं काकुदं यस्य सः	वि + काकुद् सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
29.	**पूर्णकाकुत्, पूर्णकाकुदः**	पूर्ण तालु वाला	पूर्णं काकुदं यस्य सः	पूर्ण सु+काकुद् सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
30.	**सुहृत् (सुहृद्मित्रम्)**	शोभन हृदय वाला मित्र	सु शोभनं हृदयं यस्य	सु + हृदय सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
31.	**दुर्हृत् (दुहृद्मित्रम्)**	दुष्ट हृदय वाला शत्रु	दुर् दुष्टं हृदयं यस्य	दुर् + हृदय सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
32.	**व्यूढोरस्कः**	चौड़ी छाती वाला पुरुष	व्यूढम् उरो यस्य	व्यूढ सु + उरस् सु (पुरुषस्य)	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
33.	**प्रियसर्पिष्कः**	जिसको घी प्रिय हो अर्थात् घी का प्रेमी व्यक्ति	प्रियं सर्पिः यस्य (पुरुषस्य)	प्रिय सु + सर्पिस् सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास

क्र0	सामासिकपदम्	अर्थः	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	सामासिक-सूत्रम्
34.	**युक्तयोगः**	सफल हुआ है योग जिसका	युक्तो योगो यस्य	युक्त सु + योग सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
35.	**कृतकृत्यः**	कर लिया है अपना कर्तव्य जिसने	कृतं कृत्यं येन	कृत सु + कृत्य सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास
36.	**महायशस्कः, महायशाः**	बड़े यश वाला व्यक्ति	महद् यशः यस्य (पुरुषस्य)	महत् सु + यशस् सु	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहि समास

द्वन्द्व-समासः ''उभयपदार्थप्रधानः द्वन्द्वः''

क्र0	सामासिकपदम्	अर्थः	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	सामासिक-सूत्रम्
1.	**धवखदिरौ**	धव और खदिर के वृक्ष	धवश्च खदिरश्च	धव सु खदिर सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
2.	**रामकृष्णौ**	राम और कृष्ण	रामश्च कृष्णश्च	राम सु कृष्ण सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
3.	**हरिकृष्णरामाः**	हरि कृष्ण और राम	हरिश्च कृष्णश्च रामश्च	हरि सु कृष्ण सु राम सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
4.	**संज्ञापरिभाषम्**	संज्ञा और परिभाषा का समूह	संज्ञा च परिभाषा च अनयोः समाहारः	संज्ञा सु परिभाषा सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
5.	**हस्तचरणम्**	हाथ और पैर	हस्तश्च चरणश्च या हस्तौ च चरणौ च एतेषां समाहारः	हस्त सु चरण सु या हस्त औ चरण औ	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
6.	**राजदन्ताः**	दाँतो का राजा अर्थात् ऊपर सामने के दाँत	दन्तानां राजा	दन्त आम् राजन् सु	**'षष्ठी'** सूत्र से तत्पुरुष समास
7.	**धर्मार्थौ/ अर्थधर्मौ**	धर्म और अर्थ	धर्मश्च अर्थश्च	धर्म सु अर्थ सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
8.	**हरिहरौ**	हरि और हर (विष्णु और शिव)	हरिश्च हरश्च	हरि सु हर सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
9.	**हरिहरगुरवः**	हरि (विष्णु), हर (शिव) और गुरु	हरिश्च हरश्च गुरुश्च	हरि सु हर सु गुरु सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
10.	**ईशकृष्णौ**	ईश और कृष्ण	ईशश्च कृष्णश्च	ईश सु कृष्ण सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
11.	**शिवकेशवौ**	शिव और केशव	शिवश्च केशवश्च	शिव सु केशव सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
12.	**पितरौ मातापितरौ**	माता और पिता	माता च पिता च	मातृ सु पितृ सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
13.	**पाणिपादम्**	हाथ और पैर का समूह	पाणी च पादौ च तेषां समाहारः	पाणी औ पाद औ	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
14.	**मार्दङ्गिकवैणविकम्**	मृदङ्गवादक और वेणुवादकों का समूह	मार्दङ्गिकाश्च वैणविकाश्च	मार्दङ्गिक जस् + वैणविक जस्	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्व समास
15.	**रथिकाश्वारोहम्**	रथिकों और घुड़सवारों का समूह	रथिकाश्च अश्वारोहाश्च तेषां समाहारः	रथिक जस् अश्वारोह जस्	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास

क्र0	सांमासिकपदम्	अर्थः	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	सामासिक-सूत्रम्
16.	**वाक्त्वचम्**	वाणी और त्वचा का समुदाय	वाक् च त्वक् च तयोः समाहारः	वाच् सु त्वच् सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
17.	**त्वक्स्रजम्**	त्वचा और माला का समुदाय	त्वक् च स्रक् च तयोः समाहारः	त्वच् सु स्रक् सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
18.	**शमीदृषदम्**	शमी और पत्थर का समुदाय	शमी च दृषत् च तयोः समाहारः	शमी सु दृषद् सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
19.	**वाक्त्विषम्**	वाणी और कान्ति का समुदाय	वाक् च त्विट् च तयोः समाहारः	वाच् सु त्विष् सु	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
20.	**छत्रोपानहम्**	छाते और जूते का समुदाय	छत्रं च उपानहौ च तेषां समाहारः	छत्र सु उपानह् औ	**'चार्थे द्वन्द्वः'** से द्वन्द्वसमास
21.	**प्रावृट्शरदौ**	बिजली और ठण्डी	प्रावृट् च शरच्च	प्रावृट् सु शरत् सु	द्वन्द्वसमास

समासान्ताः

क्र0	सामासिकपदम्	अर्थः	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	सामासिक-सूत्रम्
1.	**अर्धर्चः**	ऋचा का आधा भाग	ऋचः अर्धम्	ऋच् ङस् अर्ध सु	**'अर्धं नपुंसकम्'** से समास
2.	**विष्णुपुरम्**	विष्णु की नगरी	विष्णोः पूः	विष्णु ङस् पुर् सु	**'षष्ठी'** से तत्पुरुषसमास
3.	**विमलापं सरः**	निर्मल जल है जिसका ऐसा तालाब	विमला आपो यस्य	विमला जस् अप् जस्	**'अनेकमन्यपदार्थे'** सूत्र से बहुव्रीहि-समास
4.	**राजाधुरा**	राजा का कार्यभार	राज्ञः धूः	राजन् ङस् धुर् सु	**'षष्ठी'** से तत्पुरुष समास
5.	**सखिपथः**	मित्र का रास्ता	सख्युः पन्थाः	सखि ङस् पथिन् सु	**'षष्ठी'** से तत्पुरुष समास
6.	**राम्यपथो देशः**	सुन्दर रास्ता है, जिसका, ऐसा देश	रम्याः पन्थानो यस्य सः	रम्य जस् पथिन् जस्	**'अनेकमन्यपदार्थे'** से बहुव्रीहिसमास
7.	**गवाक्षः**	गाय की आखों जैसी खिड़की, झरोखा	गवाम् अक्षि इव	गो आम् अक्षि सु	**'षष्ठी'** से तत्पुरुष समास
8.	**प्राध्वो रथः**	वह रथ जो मार्ग पर चल पड़ा	प्रगतः अध्वानम्	प्र + अध्वन् अम्	**'अत्यादयः क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया''** (वा0) से समास
9.	**सुराजा**	अच्छा राजा	शोभनो राजा	सु + राजन् सु	**''कुगतिप्रादयः''** से तत्पुरुष समास
10.	**अतिराजा**	अच्छा राजा	अतिशयितो राजा	अति + राजन् सु	**'कुगतिप्रादयः'** से तत्पुरुष समास
11.	**परमराजः**	अच्छा राजा या महान् राजा	परमश्चासौ राजा	परम सु + राजन् सु	टच् प्रत्यय से 'परमराजः' बनेगा

कारक-सूत्रोदाहरण-तालिका

सूत्रम् / वार्तिकम् | **उदाहरण**

प्रथमाविभक्तिः

सूत्रम् / वार्तिकम्	उदाहरण
1. **प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा**	प्रथमाविभक्ति
क. अलिङ्ग प्रातिपदिकार्थमात्र	**उच्चैः, नीचैः**
ख. नियतलिङ्गप्रातिपदिकार्थमात्र	**कृष्णः, श्रीः, ज्ञानम्**
ग. अनियतलिङ्ग/लिङ्गमात्राधिक्य	**तटः, तटी, तटम्**
घ. परिमाणमात्र	**द्रोणो** ब्रीहिः
ङ. वचनमात्र	**एकः, द्वौ, बहवः**
2. **सम्बोधने च**	**हे देवदत्त!** अत्र आगच्छ

द्वितीयाविभक्तिः

सूत्रम् / वार्तिकम्	उदाहरण
3. **(क) कर्तुरीप्सिततमं कर्म**	कर्म संज्ञा
(ख) कर्मणि द्वितीया	**हरिं** भजति
4. **तथायुक्तं चानीप्सितम्**	ग्रामं गच्छन् **तृणं** स्पृशति। ओदनं भुञ्जानो **विषं** भुङ्क्ते

5. **अकथितं च**

♦ **दुह्–गां** दोग्धि पयः ♦ **याच्– बलिं** याचते वसुधाम् **अविनीतं** विनयं याचते ♦ **पच्– तण्डुलान्** ओदनं पचति ♦ **दण्ड – गर्गान्** शतं दण्डयति ♦ **रुध् – व्रजम्** अवरुणद्धि गाम् ♦**प्रच्छ – माणवकं** पन्थानं पृच्छति ♦ **चि– वृक्षम**वचिनोति फलानि ♦ **ब्रू, शास् –माणवकं** धर्मं ब्रूते, शास्ति वा ♦ **जि –** शतं जयति **देवदत्तम्** ♦ **मथ्– सुधां** क्षीरनिधिं मथ्नाति ♦ **मुष्** – **देवदत्तं** शतं मुष्णाति ♦ **नी, हृ, कृष् वह् –ग्रामम्** अजां नयति, हरति, कर्षति, वहति वा ♦ **भिक्ष्–बलिं** भिक्षते वसुधाम् ♦ **भाष् – माणवकं** धर्मं भाषते अभिधत्ते वक्ति वा।

6. **अकर्मकधातुभिर्योगे देशः कालो भावो गन्तव्योऽध्वा च कर्मसंज्ञक इति वाच्यम् (वार्तिक)**

(क). कुरून् स्वपिति (ख). मासम् आस्ते (ग). गोदोहम् आस्ते (घ). क्रोशम् आस्ते

7. **गतिबुद्धि-प्रत्यवसानार्थ-शब्द-कर्माकर्मकाणामणि कर्ता स णौ**

<u>अण्यन्त अवस्था</u>	<u>ण्यन्त अवस्था</u>
(क). शत्रवः स्वर्गम् अगच्छन्	**शत्रून्** स्वर्गम् अगमयत् ।
(ख). स्वे वेदार्थम् अविदुः ।	**स्वान्** वेदार्थम् अवेदयत् ।
(ग). देवा अमृतम् आश्नन् ।	**देवान्** अमृतम् आशयत् ।
(घ). विधिः वेदम् अध्यैत्	**वेदम्** अध्यापयत् विधिम्
(ङ). पृथ्वी सलिले आस्ते।	आसयत् सलिले **पृथ्वीम् ।**

सूत्रम् / वार्तिकम्	उदाहरण
9. **नीवह्योर्न (वा0)**	नाययति वाहयति वा **भारं भृत्येन।**
10. **नियन्तृकर्तृकस्य वहेरनिषेधः (वा0)**	वाहयति रथं वाहान् सूतः
11. **आदिखाद्योर्न (वा0)**	आदयति खादयति वा अन्नं वटुना।
12. **भक्षेरहिंसार्थस्य न (वा0)**	भक्षयति अन्नं **वटुना**
13. **जल्पतिप्रभृतीनामुपसङ्ख्यानम् (वा0)**	जल्पयति भाषयति वा **धर्मं पुत्रं** देवदत्तः ।
14. **दृशेश्च (वा0)**	दर्शयति **हरिं भक्तान्**
15. **शब्दायतेर्न (वा0)**	शब्दाययति **देवदत्तेन**

सूत्र	उदाहरण
16. **हृक्रोरन्यतरस्याम्**	हारयति कारयति वा **भृत्यं भृत्येन** वा कटम्
17. **अभिवादिदृशोरात्मनेपदे वेति वाच्यम् (वा0)**	अभिवादयते दर्शयते देवं **भक्तं भक्तेन** वा।
18. **अधिशीङ्स्थासां कर्म**	अधिशेते अधितिष्ठति अध्यास्ते वा **वैकुण्ठं** हरिः ।
19. **अभिनिविशश्च**	अभिनिविशते **सन्मार्गम्**
20. **उपान्वध्याङ्वसः**	उपवसति अनुवसति अधिवसति आवसति वा **वैकुण्ठं** हरिः
21. **अभुक्त्यर्थस्य न (वा0)**	**वने** उपवसति

उपपद- द्वितीया विभक्तिः

सूत्र	उदाहरण
22. **उभसर्वतसोः कार्या धिगुपर्यादिषु त्रिषु द्वितीयाऽऽम्रेडितान्तेषु ततोऽन्यत्रापि दृश्यते (वा0)**	(क) **उभयतः** कृष्णं गोपाः। (ख) **सर्वतः** कृष्णम् । (ग) **धिक्** कृष्णाऽभक्तम् (घ) **उपर्युपरि** लोकं हरिः (ङ) **अध्यधि** लोकम् । (च) **अधोऽधः** लोकम् ।
23. **अभितः-परितः-समया-निकषा-हा-प्रति-योगेऽपि (वा.)**	(क) **अभितः** कृष्णम् (ख) **परितः** कृष्णम् (ग) **ग्रामं** समया (घ) **निकषा** लङ्काम् (ङ) **हा** कृष्णाऽभक्तम् (च) बुभुक्षितं न **प्रति**भाति किञ्चित् ।
24. **अन्तराऽन्तरेण युक्ते**	(क) **अन्तरा** त्वां मां हरिः। (ख) **अन्तरेण** हरिं न सुखम् ।
25 **(क) अनुर्लक्षणे** **(ख) कर्मप्रवचनीययुक्ते द्वितीया**	 **जप**मनु प्रावर्षत्
26. **तृतीयार्थे**	**नदीम्** अन्ववसिता सेना।
27. **हीने**	अनु **हरिं** सुराः
28. **उपोऽधिके च**	उप **हरिं** सुराः
29. **लक्षणेत्थंभूताख्यानभागवीप्सासु प्रतिपर्यनवः**	
(क) लक्षणे	**वृक्षं** प्रति परि अनु वा विद्योतते विद्युत्
(ख) इत्थंभूताख्याने	भक्तो **विष्णुं** प्रति परि अनु वा
(ग) भागे	लक्ष्मीः **हरिं** प्रति परि अनु वा
(घ) वीप्सायाम्	**वृक्षं वृक्षं** प्रति परि अनु वा सिञ्चति।
30. **अभिरभागे**	
(क) लक्षणे	**हरिम**भिवर्तते।
(ख) इत्थंभूताख्याने	भक्तो **हरिम**भि।
(ग) वीप्सायाम्	**देवं देवम**भिसिञ्चति।
31. **अधिपरी अनर्थकौ**	(क) कुतोऽध्यागच्छति। (ख) कुतः पर्यागच्छति।
32. **सुः पूजायाम्**	(क). **सुसिक्तम्** (ख). **सुस्तुतम्**
33. **अतिरतिक्रमणे च**	**अतिदेवान्** कृष्णः
34. **अपिः पदार्थसम्भावनाऽन्ववसर्गगर्हासमुच्चयेषु**	
(क) पदार्थ	सर्पिषोऽपि स्यात् ।
(ख) सम्भावनम्	अपि स्तुयात् विष्णुम्
(ग) अन्ववसर्ग	अपि स्तुहि।
(घ) गर्हा	धिक् देवदत्तम् अपि स्तुयात् वृषलम्
(ङ) समुच्चय	अपि सिञ्च अपि स्तुहि
35. **कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे**	(क) **मासं** कल्याणी (ख) **मासम्** अधीते (ग) **क्रोशं** कुटिला नदी (घ). **क्रोश**मधीते (ङ) **क्रोशं** गिरिः

तृतीया विभक्ति

सूत्र	उदाहरण
36. **(क) साधकतमं करणम्**	करणसंज्ञा
(ख) कर्तृकरणयोस्तृतीया	रामेण **बाणेन** हतो बालिः।
37. **प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम् (वा0)**	(क) **प्रकृत्या** चारुः (ख) **प्रायेण** याज्ञिकः (ग) **गोत्रेण** गार्ग्यः (घ) **समेन** एति, विषमेण एति। (ङ) **द्विद्रोणेन** धान्यं क्रीणाति। (च) **सुखेन दुःखेन** वा याति।
38. **दिवः कर्म च (कर्म और करणसंज्ञा)**	**अक्षैः अक्षान्** वा दीव्यति।
39. **अपवर्गे तृतीया**	
क. कालवाचक	**अह्ना** अनुवाकः अधीतः
ख. मार्गवाचक	क्रोशेन अनुवाकः अधीतः
40. **सहयुक्तेऽप्रधाने**	**पुत्रेण** सह आगतः पिता।
41. **येनाङ्गविकारः**	**अक्ष्णा** काणः
42. **इत्थम्भूतलक्षणे**	**जटाभि**स्तापसः
43. **सञ्ज्ञोऽन्यतरस्यां कर्मणि**	**पित्रा पितरं** वा सञ्जानीते।
44. **हेतौ** (क) द्रव्य के प्रति हेतु	(क) **दण्डेन** घटः
(ख) क्रिया के प्रति हेतु	(ख) **पुण्येन** दृष्टः हरिः,**अध्ययनेन** वसति।
45. **अशिष्टव्यवहारे दाणः प्रयोगे चतुर्थ्यर्थे तृतीया (वा0)**	**दास्या** संयच्छते कामुकः

चतुर्थी विभक्तिः

सूत्र	उदाहरण
46. **(क) कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्**	सम्प्रदानसंज्ञा
(ख) चतुर्थी सम्प्रदाने	**विप्राय** गां ददाति
47. **क्रियया यमभिप्रैति सोऽपि सम्प्रदानम् (वा0)**	**पत्ये** शेते
48. **यजेः कर्मणः करणसंज्ञा सम्प्रदानस्य च कर्मसंज्ञा**	पशुना रुद्रं यजते।,पशुं रुद्राय ददाति इत्यर्थः।
49. **रुच्यर्थानां प्रीयमाणः**	**हरये** रोचते भक्तिः।
50. **श्लाघह्नुङ्स्थाशपां ज्ञीप्स्यमानः**	गोपी स्मरात् **कृष्णाय** श्लाघते ह्नुते तिष्ठते शपते वा।
51. **धारेरुत्तमर्णः**	**भक्ताय** धारयति मोक्षं हरिः
52. **स्पृहेरीप्सितः**	**पुष्पेभ्यः** स्पृहयति
53. **क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः**	**हरये** क्रुध्यति द्रुह्यति ईर्ष्यति असूयति वा ।
54. **क्रुधद्रुहोरुपसृष्टयोः कर्म**	**क्रूरम्** अभिक्रुध्यति अभिद्रुह्यति वा
55. **राधीक्ष्योर्यस्य विप्रश्नः**	**कृष्णाय** राध्यति ईक्षते वा ।
56. **प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः पूर्वस्य कर्ता**	**विप्राय** गां प्रतिशृणोति आशृणोति वा।
57. **अनुप्रतिगृणश्च**	**होत्रे** अनुगृणाति प्रतिगृणाति वा।
58. **परिक्रयणे सम्प्रदानमन्यतरस्याम्**	**शतेन शताय** वा परिक्रीतः
59. **तादर्थ्ये चतुर्थी वाच्या (वा0)**	**मुक्तये** हरिं भजति।
60. **क्लृपि सम्पद्यमाने च (वा0)**	भक्तिः **ज्ञानाय** कल्पते, सम्पद्यते, जायते।
61. **उत्पातेन ज्ञापिते च (वा0)**	**वाताय** कपिला विद्युत् ।
62. **हितयोगे च (वा0)**	**ब्राह्मणाय** हितम्
63. **क्रियार्थोपपदस्य च कर्मणि स्थानिनः**	क. **फलेभ्यो** याति। ख. नमस्कुर्मो **नृसिंहाय**। ग. **स्वयंभुवे** नमस्कृत्य
64. **तुमर्थाच्च भाववचनात्**	**यागाय** याति।
65. **नमः स्वस्ति-स्वाहा-स्वधाऽलं वषड्योगाच्च** (उपपद-चतुर्थी-विभक्तिः)	(क) **हरये** नमः (ख) **प्रजाभ्यः** स्वस्ति। (ग) **अग्नये** स्वाहा (घ) **पितृभ्यः** स्वधा (ङ) **दैत्येभ्यः** हरिः अलम् (च) **इन्द्राय** वषट् ।

66. **अलमिति पर्याप्त्यर्थग्रहणम् (वा0)** — **दैत्येभ्यो** हरिः अलम्, प्रभुः, समर्थः, शक्तः ।
67. **मन्यकर्मण्यनादरे विभाषाऽप्राणिषु** — न **त्वां** तृणं मन्ये **तृणाय** वा।
68. **अप्राणिष्वित्यपनीय नौकाकान्न-शुकशृगाल वर्जेष्विति वाच्यम् (वा0)** — (क) न **त्वां** नावम् अन्नं वा मन्ये। (ख) न **त्वां** शुने मन्ये।
69. **गत्यर्थकर्मणि द्वितीयाचतुर्थ्यौ चेष्टायामनध्वनि** — **ग्रामं ग्रामाय** वा गच्छति।

पञ्चमी विभक्तिः

70. **क. ध्रुवमपायेऽपादानम्** — (क) **ग्रामात्** आयाति।
ख. अपादाने पञ्चमी — (ख) **धावतोऽश्वात्** पतति।
71. **जुगुप्साविरामप्रमादार्थानामुपसङ्ख्यानम् (वा.)** — (क) **पापात्** जुगुप्सते।(ख) **पापात्** विरमति।(ग) **धर्मात्** प्रमाद्यति ।
72. **भीत्रार्थानां भयहेतुः** — (क) **चोरात्** बिभेति।(ख) **चोरात्** त्रायते।
73. **पराजेरसोढः** — **अध्ययनात्** पराजयते।
74. **वारणार्थानामीप्सितः** — **यवेभ्यो** गां वारयति।
75. **अन्तर्धौ येनादर्शनमिच्छति** — **मातुः** निलीयते कृष्णः।
76. **आख्यातोपयोगे** — **उपाध्यायात्** अधीते।
77. **जनिकर्तुः प्रकृतिः** — **ब्रह्मणः** प्रजाः प्रजायन्ते।
78. **भुवः प्रभवः** — **हिमवतः** गङ्गा प्रभवति।
79. **'ल्यब्लोपे कर्मण्यधिकरणे च' (वा0)** — (क) **प्रासादात्** प्रेक्षते। (ख) **आसनात्** प्रेक्षते।(ग) **श्वसुरात्** जिह्रेति।
80. **(क) गम्यमानाऽपि क्रिया कारकविभक्तीनां निमित्तम् ।** — क. **कस्मात्** त्वम् ? नद्याः
(ख) यतश्चाध्वकालनिर्माणं तत्र पञ्चमी (वा0) — ख. **वनात्** ग्रामो योजनं योजने वा
(ग) तदुक्तादध्वनः प्रथमासप्तम्यौ — ग. **कार्तिक्या** आग्रहायणी मासे।
(घ) कालात् सप्तमी च वक्तव्या (वा0)
81. **अन्यारादितरर्तेदिक्शब्दाञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते** (उपपद पञ्चमीविभक्तिः) — (क) अन्यः भिन्नः इतरः वा **कृष्णात्** (ख) आरात् **वनात्** (ग) ऋते **कृष्णात्** (घ) पूर्वो **ग्रामात्** (ङ) **चैत्रात्** पूर्वः फाल्गुनः (च) प्राक् प्रत्यक् वा **ग्रामात्** (छ) दक्षिणाहि **ग्रामात्** (ज) दक्षिणा **ग्रामात्** (झ) भवात् प्रभृति आरभ्य वा सेव्यः हरिः ञ. ग्रामात् बहिः
82. **(क) अपपरी वर्जने** — क. अपहरेः संसारः
(ख) आङ्मर्यादावचने — ख. परिहरेः संसारः
(ग) पञ्चम्यपाङ्परिभिः — ग. आमुक्तेः संसारः
83. **(क) प्रतिः प्रतिनिधिप्रतिदानयोः** — क. प्रद्युम्नः **कृष्णात्** प्रति।
(ख) प्रतिनिधिप्रतिदाने च यस्मात् — ख. **तिलेभ्यः** प्रतियच्छति माषान्
84. **अकर्तर्यृणे पञ्चमी** — **शतात्** बद्धः।
85. **विभाषा गुणेऽस्त्रियाम्** — (क) **जाड्यात्** जाड्येन वा बद्धः। (ख) **धूमादग्निमान्** । (ग) नास्ति घटोऽ**नुपलब्धेः**
86. **पृथग्विनानानाभिस्तृतीयाऽन्यतरस्याम्** — (क) पृथक् **रामेण रामात् रामं** वा।(ख) विना **रामेण रामात् रामं** वा। (ग) नाना **रामेण रामात् रामं** वा ।
87. **करणे च स्तोकाल्पकृच्छ्रकतिपयस्यासत्त्ववचनस्य** — **स्तोकेन स्तोकात्** वा मुक्तः
88. **दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च** (द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी का विधान) — क. ग्रामस्य **दूरं दूरात् दूरेण** वा ख. ग्रामस्य **अन्तिकम् अन्तिकात् अन्तिकेन** वा।

षष्ठीविभक्तिः

सूत्र	उदाहरण
89. षष्ठी शेषे	
(क) स्वस्वामिभावसम्बन्धः	(क) **राज्ञः** पुरुषः
(ख) कर्तृकारक के शेषत्व विवक्षा में षष्ठी	(ख) **सतां** गतम्
(ग) करणकारक से शेषत्व की विवक्षा में षष्ठी	(ग) **सर्पिषो** जानीते।
(घ) कर्मकारक के शेषत्व की विवक्षा में षष्ठी	(घ) **मातुः** स्मरति।
(ङ) कर्मकारक के शेषत्व की विवक्षा में षष्ठी	(ङ) **एधोदकस्यो**पस्कुरुते।
(च) कर्मत्व के शेष की विवक्षा में षष्ठी	(च) भजे **शम्भो**श्चरणयोः
(छ) करणत्व की शेषत्व विवक्षा में षष्ठी	(छ) **फलानां** तृप्तः ।
90. षष्ठी हेतुप्रयोगे	**अन्नस्य** हेतोर्वसति।
(''हैतो'' सूत्र द्वारा प्राप्त तृतीया का अपवाद)	
91. सर्वनाम्नस्तृतीया च	(क) **केन हेतुना** वसति।
(विकल्प से तृतीया एवं षष्ठी का विधान)	(ख) **कस्य हेतोः** वसति।
92. निमित्तपर्यायप्रयोगे सर्वासां प्रायदर्शनम् (वा0)	(क) किं निमित्तं वसति। केन निमित्तेन। कस्मै निमित्ताय।
(प्रायशः सभी विभक्तियों का प्रयोग)	(ख) किं कारणम् ,को हेतुः, किं प्रयोजनम्।
	(ग) ज्ञानेन निमित्तेन हरिः सेव्यः।(घ) ज्ञानाय निमित्ताय हरिः सेव्यः।
93. षष्ठ्यतसर्थप्रत्ययेन	(क) **ग्रामस्य** दक्षिणतः। (ख) **ग्रामस्य** पुरः। (ग) **ग्रामस्य** पुरस्तात्।
(पञ्चमी का अपवाद)	(घ) **ग्रामस्य** उपरि। (ङ) **ग्रामस्य** उपरिष्टात्
94. एनपा द्वितीया	(क) दक्षिणेन **ग्रामं ग्रामस्य** वा।
(विकल्प से द्वितीया, एवं षष्ठी का विधान)	(ख) उत्तरेण **ग्रामं ग्रामस्य** वा।
95. दूरान्तिकार्थैः षष्ठ्यन्यतरस्याम्	(क) दूरं **ग्रामस्य ग्रामात्** वा।
(विकल्प से पञ्चमी और षष्ठी का विधान)	(ख) निकटं **ग्रामस्य ग्रामात्** वा।
96. ज्ञोऽविदर्थस्य करणे	**सर्पिषः** ज्ञानम्
97. अधीगर्थदयेशां कर्मणि	(क) **मातुः** स्मरणम् (ख) **सर्पिषः** दयनम् (ग) **सर्पिषः** इशनम्
98. कृञः प्रतियत्ने	एधोदकस्य उपस्करणम्
99. रुजार्थानां भाववचनानामज्वरेः	चौरस्य रोगस्य रुजा।
100. अज्वरिसन्ताप्योरिति वाच्यम् (वा0)	(क) **रोगस्य** चौरज्वरः (ख) **रोगस्य** चौरसन्तापः
101. आशिषि नाथः	**सर्पिषः** नाथनम्
102.जासिनिप्रहणनाटक्राथपिषां हिंसायाम्	(क) **चौरस्य** उज्जासनम् (ख) **चौरस्य** निप्रहणनम्
(कर्म से शेषत्व विवक्षा में षष्ठी	(ग) **चौरस्य** उन्नाटनम् (घ) **चौरस्य** क्राथनम्
प्रणिहननम्, निहननम्, प्रहणनम्	(ङ) **वृषलस्य** पेषणम् ।
103. व्यवहृपणोः समर्थयोः	(क) **शतस्य** व्यवहरणम्
	(ख) **शतस्य** पणनम्
104.दिवस्तदर्थस्य (कर्म में षष्ठी)	**शतस्य** दीव्यति
105.विभाषोपसर्गे (कर्म में षष्ठी विभक्ति विकल्प से)	**शतस्य** शतं वा प्रतिदीव्यति।
106.प्रेष्यब्रुवोर्हविषो देवतासम्प्रदाने	अग्नये छागस्य हविषः वपायाः मेदसः प्रेष्य अनुब्रूहि वा।
107.कृत्वोऽर्थप्रयोगे कालेऽधिकरणे	(क) पञ्चकृत्वोऽह्नो भोजनम्
(कालवाचक अधिकरण में शेषत्व की विवक्षा में षष्ठी)	(ख) द्विरह्नो भोजनम्

108. कर्तृकर्मणोः कृति (अनुक्त कर्त्ता और कर्म में षष्ठी) — (क) **कृष्णस्य** कृतिः। (ख) **जगतः** कर्त्ता कृष्णः।

109. गुणकर्मणि वेष्यते (वा.) — नेता **अश्वस्य** स्रुघ्नस्य स्रुघ्नं वा

110. उभय प्राप्तौ कर्मणि (कृत् प्रत्यय के योग में कर्त्ता और कर्म दोनों में यदि षष्ठी प्राप्त हो, तो कर्म में ही षष्ठी हो) — आश्चर्यो गवां दोहः अगोपेन

111. स्त्रीप्रत्यययोरकाकारयोर्नायं नियमः (वा0) — भेदिका बिभित्सा वा रुद्रस्य जगतः।

112. शेषे विभाषा (वा0) — (क) विचित्रा जगतः कृतिः हरेः हरिणा वा।
(ख) शब्दानाम् अनुशासनम् आचार्येण आचार्यस्य वा।

113. क्तस्य च वर्तमाने — **राज्ञां** मतः बुद्धः पूजितः वा।

114. अधिकरणवाचिनश्च
(अधिकरणवाचक क्त प्रत्यय के योग में अनुक्त कर्त्ता और कर्म में षष्ठी विभक्ति) — (क) **इदम्** एषाम् आसितम् (ख) **इदम्** एषां शयितम्
(ग) इदम् **एषां** गतम् (घ) इदम् **एषां** भुक्तम्

115. न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम् । — (क) कुर्वन् कुर्वाणो वा सृष्टिं हरिः। (ख) हरिं दिदृक्षुः।
(ग) हरिम् अलङ्करिष्णुः। (घ) दैत्यान् घातुकः हरिः।

116. कमेरनिषेधः (वा.) — (क) लक्ष्म्याः कामुकः हरिः।(ख) जगत्सृष्ट्वा सुखं कर्तुम् ।
(ग) विष्णुना हता दैत्याः। (घ) दैत्यान् हतवान् विष्णुः ।
(ङ) ईषत्करः प्रपञ्चः हरिणः। (च) सोमं पवमानः
(छ) आत्मानं मण्डयमानः (ज) वेदमधीयन् (झ) कर्त्ता लोकान् ।

117. द्विषः शतुर्वा (वा.)
(षष्ठी का निषेध विकल्प से) — मुरस्य मुरं वा द्विषन् ।

118. अकेनोर्भविष्यदाधमर्ण्ययोः
(षष्ठी का निषेध) — (क) सतः पालकोऽवतरति। (ख) व्रजं गामी
(ग) शतं दायी

119. कृत्यानां कर्त्तरि वा
(अनुक्त कर्त्ता मे षष्ठी विकल्प से) — (क) मया मम वा सेव्यः हरिः।
(ख) नेतव्याः व्रजं गावः कृष्णेन ।

120. तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्यां तृतीयान्यतरस्याम् ।
(तृतीया और षष्ठी विकल्प से) — तुल्यः सदृशः समो वा कृष्णस्य कृष्णेन वा ।

121. चतुर्थी चाशिष्यायुष्यमद्रभद्रकुशलसुखार्थहितैः
(चतुर्थी और षष्ठी) — आयुष्यं चिरञ्जीवितं कृष्णाय कृष्णस्य वा भूयात्

सप्तमी विभक्तिः

122. आधारोऽधिकरणम् सप्तम्यधिकरणे च।
(सप्तमी विभक्ति) — (क) **कटे** आस्ते। (औपश्लेषिक आधार)
(ख) **स्थाल्यां** पचति। (औपश्लेषिक आधार)
(ग) **मोक्षे** इच्छा अस्ति। (वैषयिक आधार)
(घ) **सर्वस्मिन्** आत्मा अस्ति। (अभिव्यापक आधार)
(ङ) **तिलेषु** तैलम् (अभिव्यापक आधार)
(च) **दध्नि** सर्पिः (अभिव्यापक आधार)
(छ) वनस्य **दूरे अन्तिके** वा ।

123. क्तस्येन्विषयस्य कर्मण्युपसंख्यानम् (वा.) — (क) अधीती **व्याकरणे** ।

124. साध्वसाधुप्रयोगे च (वा.) — (क) साधुः कृष्णः **मातरि** (ख) असाधुः कृष्णः **मातुले**

125. निमित्तात् कर्मयोगे (वा.) — **चर्मणि** द्वीपिनं हन्ति ।, **दन्तयो**र्हन्ति कुञ्जरम् ।
केशेषु चमरीं हन्ति ।,**सीम्नि** पुष्कलको हतः ।

126. यस्य च भावेन भावलक्षणम्
(सति सप्तमी, भावे सप्तमी)
(क) **गोषु** दुह्यमानासु गतः ।
(ख) **ब्राह्मणेषु** अधीयानेषु गतः ।

127. अर्हाणां कर्तृत्वे अनर्हाणामकर्तृत्वे
तद्वैपरीत्ये च (वा.)
(क) सत्सु तरत्सु असन्तः आसते ।
(ख) असत्सु तिष्ठत्सु सन्तः तरन्ति ।
(ग) सत्सु तिष्ठत्सु असन्तः तरन्ति ।
(घ) असत्सु तरत्सु सन्तः तिष्ठन्ति ।

128. षष्ठी चानादरे
(षष्ठी और सप्तमी)
रुदति रुदतः वा प्राव्राजीत् ।

129. स्वामीश्वराधिपतिदायादसाक्षिप्रतिभूप्रसूतैश्च
(षष्ठी और सप्तमी)
(क) **गवां** स्वामी; **गोषु** स्वामी ।
(ख) **गवाम्** ईश्वरः ; **गोषु** ईश्वरः
(ग) **गवाम्** अधिपतिः, **गोषु** अधिपतिः
(घ) **गवां** दायादः ; **गोषु** दायादः ।
(ङ) **गवां** साक्षी, **गोषु** साक्षी ।
(च) **गवां** प्रतिभूः **गोषु** प्रतिभूः ।
(छ) **गवां** प्रसूतः **गोषु** प्रसूतः ।

130. आयुक्तकुशलाभ्यां चासेवायाम् । (षष्ठी और सप्तमी)
आयुक्तः कुशलः वा **हरिपूजने** हरिपूजनस्य वा।

131. यतश्च निर्धारणम् (षष्ठी और सप्तमी)
(जाति) (क) **नृणां नृषु** वा द्विजः श्रेष्ठः।
(गुण) (ख) **गवां गोषु** वा कृष्णा बहुक्षीरा।
(क्रिया) (ग) **गच्छतां गच्छत्सु** वा धावन् शीघ्रः।
(संज्ञा) (घ) **छात्राणां छात्रेषु** वा मैत्रः पटुः।

132. पञ्चमी विभक्ते
माथुराः **पाटलिपुत्रकेभ्यः** आढ्यतराः।

133. साधुनिपुणाभ्यामर्चायां सप्तम्यप्रतेः
मातरि साधुः निपुणः वा।

134. अप्रत्यादिभिरिति वक्तव्यम् (वा०)
(प्रति, परि, अनु के योग में सप्तमी का निषेध)
साधुः निपुणः वा मातरं प्रति परि अनु वा।

135. प्रसितोत्सुकाभ्यां तृतीया च (तृतीया और सप्तमी)
प्रसितः उत्सुकः **हरिणा हरौ** वा.

136. नक्षत्रे च लुपि (तृतीया और सप्तमी)
मूलेन आवाहयेत् देवीं श्रवणेन विसर्जयेत्

137. सप्तमी पञ्चम्यौ कारकमध्ये (सप्तमी और पञ्चमी)
(क) अद्य भुक्त्वा अयं द्व्यहाद् वा भोक्ता।
(ख) अयम् इहस्थः क्रोशे क्रोशाद् वा लक्ष्यं विध्येत् ।
(ग) लोके लोकाद् वा अधिको हरिः

138. क. अधिरीश्वरे
ख. **यस्मादधिकं यस्य चेश्वरवचनं तत्र सप्तमी**
(कर्मप्रवचनीय के योग में सप्तमी)
(क) उप **परार्धे** हरेर्गुणाः।
(ख) अधि **भुवि** रामः।
(ग) अधि**रामे** भूः।

139. विभाषा कृञि
यदत्र माम् अधिकरिष्यति।

कारक-संज्ञासूत्र-तालिका

'कर्त्तृसंज्ञा' विधायकसूत्र

1. **स्वतन्त्रः कर्त्ता** (क्रिया के साथ स्वतन्त्र रूप में जिसकी विवक्षा हो, उसे कर्त्ता कहते है)
2. **तत्प्रयोजको हेतुश्च**

'कर्मसंज्ञा' विधायकसूत्र

1. **कर्तुरीप्सिततमं कर्म** (ईप्सिततम की कर्मसंज्ञा)
2. **तथायुक्तं चानीप्सितम्** (अनीप्सित की कर्मसंज्ञा)
3. **अकथितं च** (अपादानादि कारकों की अविवक्षा में कर्मसंज्ञा)
4. **अकर्मकधातुभिर्योगे देशः कालो भावो गन्तव्योऽध्वा च कर्मसंज्ञक इति वाच्यम् (वार्तिक)**
5. **गति-बुद्धि-प्रत्यवसानार्थ-शब्द कर्माकर्मकाणामणि कर्ता स णौ (** अण्यन्तावस्था के कर्ता की ण्यन्तावस्था में कर्मसंज्ञा)
6. **हृक्रोरन्यतरस्याम्** (ण्यन्तावस्था में कर्ता की विकल्प से कर्मसंज्ञा)
7. **अभिवादिदृशोरात्मनेपदे वेति वाच्यम् (वार्तिक)** (विकल्प से कर्मसंज्ञा)
8. **अधिशीङ्स्थासां कर्म** ('आधार' की कर्मसंज्ञा)
9. **अभिनिविशश्च** ('आधार' की कर्मसंज्ञा)
10. **उपान्वध्याङ्वसः** ('आधार' की कर्मसंज्ञा)
11. **क्रुधद्रुहोरुपसृष्टयोः कर्म** (उपसर्ग युक्त 'क्रुध्' और द्रुह् धातु के योग में, जिसके प्रति कोप किया जाय,उसकी 'कर्मसंज्ञा)

'करणसंज्ञा' विधायकसूत्र

1. **साधकतमं करणम्** (क्रिया की सिद्धि में अत्यन्त उपकारक कारक की 'करणसंज्ञा')
2. **दिवः कर्म च।** ('कर्मसंज्ञा' और 'करणसंज्ञा')
3. **परिक्रयणे संप्रदानमन्यतरस्याम् ।**
   (परिक्रयण = पारिश्रमिक देकर खरीद लेना, में प्रकृष्ट उपकारक की संप्रदानसंज्ञा विकल्प से। पक्ष में 'करणसंज्ञा')

'सम्प्रदानसंज्ञा' विधायकसूत्र

1. **कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्** (कर्त्ता जिसके साथ सम्बन्ध बनाना चाहता है, उसकी 'सम्प्रदानसंज्ञा')
2. **रुच्यर्थानां प्रीयमाणः** (प्रीयमाण की 'सम्प्रदानसंज्ञा')
3. **श्लाघ-ह्नुङ्-स्था-शपां ज्ञीप्स्यमानः** (ज्ञीप्स्यमान की 'सम्प्रदानसंज्ञा')
4. **धारेरुत्तमर्णः** (उत्तमर्ण = उधार देने वाले की 'सम्प्रदानसंज्ञा')
5. **स्पृहेरीप्सितः** (ईप्सित की 'सम्प्रदानसंज्ञा')
6. **क्रुधद्रुहेर्ष्याऽसूयार्थानां यं प्रति कोपः** (जो कोप का विषय हो, उसकी सम्प्रदानसंज्ञा)
7. **राधीक्ष्योर्यस्य विप्रश्नः** (जिसके विषय में विविध प्रश्न किये जाय, उसकी 'सम्प्रदानसंज्ञा')
8. **प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः पूर्वस्य कर्ता** (पूर्व प्रेरणा रूप व्यापार के कर्ता की सम्प्रदानसंज्ञा')
9. **अनुप्रतिगृणश्च** (जो पूर्व व्यापार प्रेरणा का कर्ता हो, उसकी 'सम्प्रदानसंज्ञा')
10. **क्रियया यमभिप्रैति सोऽपि सम्प्रदानम् (वा०)**

'अपादानसंज्ञा' विधायकसूत्र

1. **ध्रुवमपायेऽपादानम्** (ध्रुव या अवधिभूत की अपादानसंज्ञा)
2. **भीत्रार्थानां भयहेतुः** (भय के हेतु की अपादानसंज्ञा)
3. **पराजेरसोढः** (असह्य पदार्थ की अपादानसंज्ञा)
4. **वारणार्थानामीप्सितः** (ईप्सित की अपादानसंज्ञा)

5. **अन्तर्धौ येनादर्शनमिच्छति** (जिससे स्वयं को छिपाना चाहता है,उसकी अपादानसंज्ञा)
6. **आख्यातोपयोगे** (गुरु की अपादानसंज्ञा)
7. **जनिकर्तुः प्रकृतिः** (जनिकर्तुः हेतुरूपकारकस्य अपादानसंज्ञा)
8. **भुवः प्रभवः** (प्रकट होने के स्थान की अपादानसंज्ञा)

'अधिकरणसंज्ञा' विधायक सूत्र

1. **आधारोऽधिकरणम्**
   (कर्त्ता और कर्म द्वारा उनमें क्रिया का जो आधार हो,उसकी 'अधिकरणसंज्ञा')

उपपद - द्वितीया विभक्तिः

(क) उभयतः (ख) सर्वतः (ग) धिक् (घ) उपरि,उपरि
(ङ) अध्यधि (च) अधोऽधो (छ) अभितः (ज) परितः
(झ) समया (ञ) निकषा (ट) हा (ठ) प्रति
(ड) अन्तरा (ढ़) अन्तरेण (ण) पृथक् (त) विना
(थ) नाना

किन कर्मप्रवचनीय के योग में द्वितीया होती है ?

(क) अनु (ख) उप (ग) प्रति (घ) परि (ङ) अभि
(च) अधि (छ) सु (ज) अति (झ) अपि

उपपद-तृतीया विभक्तिः

1. सह, साकम्, सार्धम्, समम्, सत्रा।
2. फल प्राप्ति होने पर कालवाचक, मार्गवाचक, अह्न, क्रोश आदि पदों से तृतीया।
3. प्रकृति आदि गण के शब्दों से तृतीया। जैसे -
   प्रकृति, प्राय, गोत्र, सम, विषम, द्विद्रोण, सुखम्, दुःखम्
4. पृथक् , विना, नाना
5. स्तोक, अल्प, कृच्छ्र, कतिपय

उपपद - चतुर्थी-विभक्तिः

(क) नमः (ख) स्वस्ति (ग) स्वाहा (घ) स्वधा (ङ) अलम् (च) वषट्

उपपद - पञ्चमी-विभक्तिः

(क) अन्य (ख) आरात् (ग) इतर (घ) ऋते (ङ) दिक्शब्द
(च) प्राक् (छ) प्रत्यक् (ज) पूर्वम् (झ) दक्षिणा (ञ) दक्षिणाहि
(ट) प्रभृति (ठ) आरभ्य (ड) पृथक् (ढ) विना (ण) नाना (त) स्तोक
(थ) अल्प (द) कृच्छ्र (ध) कतिपय
(न) दूर एव अन्तिक (समीप) अर्थ वाले शब्दों से
इन कर्मप्रवचनीय के योग में पञ्चमी विभक्ति होती है– अप, परि, आङ्, और प्रति।

उपपद-षष्ठी विभक्तिः

दक्षिणतः, पुरः पुरस्तात् उपरि, उपरिष्टात् दक्षिणेन
दूर और अन्तिक (निकट) अर्थ वाले शब्दों के योग में षष्ठीविभक्ति।
तुल्यार्थक शब्द - तुल्य, सदृश, सम आदि के योग में षष्ठीविभक्ति

उपपद - सप्तमी विभक्तिः

साधु, निपुण

वाच्य

➢ वाक्य के कहने की विधि को संस्कृत में वाच्य कहते हैं। वाच्य तीन प्रकार के होते हैं-

1. कर्तृवाच्य 2. कर्मवाच्य 3. भाववाच्य

1. कर्तृवाच्य- जिस वाक्य में कर्ता प्रधान हो उसे कर्तृवाच्य कहते हैं।

कर्तृवाच्य के वाक्यों में-

(i) कर्ता में प्रथमा विभक्ति होती है

(ii) कर्म में द्वितीया विभक्ति होती है

(iii) क्रिया का पुरुष तथा वचन कर्ता के अनुसार होता है।

जैसे-

	कर्ता	कर्म	क्रिया।
(i)	सीता	गृहं	गच्छति।
(ii)	अहं	रामायणं	पठामि।

उपर्युक्त दोनों वाक्यों के कर्ता में प्रथमाविभक्ति, कर्म में द्वितीया विभक्ति तथा क्रिया कर्ता के अनुसार प्रयुक्त है।

2. कर्मवाच्य- कर्मवाच्य के वाक्यों में कर्म की प्रधानता होती है, अतः-

(i) कर्म में प्रथमा विभक्ति होती है।

(ii) कर्ता में तृतीया विभक्ति होती है।

(iii) क्रिया का पुरुष तथा वचन कर्म के अनुसार होता है।

	कर्ता	कर्म	क्रिया
जैसे-	बालकेन	पुस्तकं	पठ्यते।
	त्वया	विद्यालयः	गम्यते।
	मया	पत्रं	लिख्यते।

स्पष्टीकरण- उपर्युक्त वाक्यों के कर्ता में तृतीया विभक्ति, कर्म में प्रथमा विभक्ति तथा क्रिया कर्म के अनुसार प्रयुक्त है। अतः सभी वाक्य कर्मवाच्य के उदाहरण हैं।

3. भाववाच्य- 'भाव' का अर्थ है- क्रिया। जिस वाक्य में भाव (क्रिया) की प्रधानता होती है, उसे भाववाच्य कहते हैं।

भाववाच्य में -

(i) कर्ता में तृतीया विभक्ति होती है।

(ii) क्रिया हमेशा प्रथमपुरुष एकवचन की प्रयुक्त होगी।

(iii) अकर्मक (कर्म रहित) धातुओं से ही भाववाच्य होगा।

(iv) भाववाच्य में कर्म का अभाव होता है।

जैसे-

	कर्ता	क्रिया
(i)	मया	हस्यते।
(ii)	त्वया	स्थीयते।
(iii)	ईश्वरेण	भूयते।

स्पष्टीकरण- उपर्युक्त उदाहरणों में कर्ता में तृतीया विभक्ति तथा अकर्मक क्रिया प्रथमपुरुष एकवचन की प्रयुक्त है। कर्म पद का अभाव है।

वाच्य के सन्दर्भ में कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य

➢ वाक्य में जो प्रधान होता है, उसमें प्रथमा विभक्ति आती है कर्तृवाच्य के वाक्यों में कर्ता प्रधान होता है, अतः इसके कर्ता में प्रथमा विभक्ति आती है। इसीप्रकार कर्मवाच्य के वाक्यों में कर्मप्रधान होता है, अतः इसके कर्म में प्रथमा विभक्ति आती है।

➢ सकर्मक (कर्म सहित) धातुओं के रूप दो वाच्यों में होते हैं- (i) कर्तृवाच्य और (ii) कर्मवाच्य

➢ अकर्मक (कर्म रहित) धातुओं के रूप भी दो वाच्यों में होते हैं- (i) कर्तृवाच्य (ii) भाववाच्य

➢ सकर्मक एवं अकर्मक दोनों प्रकार की धातुओं से- कर्तृवाच्य
सकर्मक धातुओं से - कर्मवाच्य
अकर्मक धातुओं से - भाववाच्य

➢ कर्मवाच्य और भाववाच्य में सार्वधातुक लकारों (लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ्) में धातु और प्रत्यय के बीच 'यक्' लग जाता है। 'यक्' का 'य' शेष रहता है। धातु का रूप सदा आत्मनेपद में ही चलता है।

जैसे- पठ्यते, लिख्यते, हस्यते, नीयते, पीयते आदि।

कर्ता पदों की सूची

कर्तृवाच्य कर्ता	कर्मवाच्य कर्ता/भाववाच्य कर्ता
भवान्	भवता
भवती	भवत्या
त्वम्	त्वया
अहम्	मया
सः	तेन
सा	तया
कः	केन
का	कया

कर्तृवाच्य कर्ता	कर्मवाच्य कर्ता/भाववाच्य कर्ता
एषः	एतेन
एषा	एतया
यः	येन
या	यया
सर्वः	सर्वेण
सर्वा	सर्वया
अयम्	अनेन
इयम्	अनया
रामः	रामेण
बालकः	बालकेन
हरिः	हरिणा
मुनिः	मुनिना
पिता	पित्रा
माता	मात्रा
रमा	रमया
लता	लतया
नदी	नद्या
लक्ष्मीः	लक्ष्म्या
गुरुः	गुरुणा
साधुः	साधुना
मतिः	मत्या
युवतिः	युवत्या
मित्रम्	मित्रेण
फलम्	फलेन
वारि	वारिणा

कर्मवाच्य/भाववाच्य के अनुसार प्रमुख धातुरूप

भू धातु (अकर्मक, अनिट्, परस्मैपद)

1. लट् लकार		
भूयते	भूयेते	भूयन्ते
भूयसे	भूयेथे	भूयध्वे
भूये	भूयावहे	भूयामहे

2. विधिलिङ् लकार		
भूयेत	भूयेयाताम्	भूयेरन्
भूयेथाः	भूयाथाम्	भूयध्वम्
भूयेय	भूयेवहि	भूयेमहि।

3. लोट् लकार		
भूयताम्	भूयेताम्	भूयन्ताम्
भूयस्व	भूयेथाम्	भूयध्वम्
भूयै	भूयावहै	भूयामहै।

4. लङ् लकार		
अभूयत	अभूयेताम्	अभूयन्त
अभूयथाः	अभूयेथाम्	अभूयध्वम्
अभूये	अभूयावहि	अभूयामहि।

5. लृट् लकार		
भविष्यते	भविष्येते	भविष्यन्ते
भविष्यसे	भविष्येथे	भविष्यध्वे
भविष्ये	भविष्यावहे	भविष्यामहे

गम् धातु (सकर्मक, अनिट्, परस्मैपद, भ्वादिगण)

लट् लकार		
गम्यते	गम्येते	गम्यन्ते
गम्यसे	गम्येथे	गम्यध्वे
गम्ये	गम्यावहे	गम्यामहे

वद् धातु (सकर्मक,सेट्,परस्मैपद,भ्वादिगण)

उद्यते	उद्येते	उद्यन्ते
उद्यसे	उद्येथे	उद्यध्वे
उद्ये	उद्यावहे	उद्यामहे

पठ् धातु (सकर्मक,सेट्,परस्मैपद,भ्वादिगण)

पठ्यते	पठ्येते	पठ्यन्ते
पठ्यसे	पठ्येथे	पठ्यध्वे
पठ्ये	पठ्यावहे	पठ्यामहे

कृ धातु लट् लकार

क्रियते	क्रियेते	क्रियन्ते
क्रियसे	क्रियेथे	क्रियध्वे
क्रिये	क्रियावहे	क्रियामहे

याच् धातु (सकर्मक,सेट्,उभयपदी,भ्वादिगण)

याच्यते	याच्येते	याच्यन्ते
याच्यसे	याच्येथे	याच्यध्वे
याच्ये	याच्यावहे	याच्यामहे

पच् धातु (सकर्मक, अनिट्, उभयपदी, भ्वादिगण)

पच्यते	पच्येते	पच्यन्ते
पच्यसे	पच्येथे	पच्यध्वे
पच्ये	पच्यावहे	पच्यामहे

रुच् धातु (अकर्मक, सेट्, आत्मनेपद, भ्वादिगण)

रुच्यते	रुच्येते	रुच्यन्ते
रुच्यसे	रुच्येथे	रुच्यध्वे
रुच्ये	रुच्यावहे	रुच्यामहे

रम् धातु (अकर्मक, अनिट्, आत्मनेपद, भ्वादिगण)		
रम्यते	रम्येते	रम्यन्ते
रम्यसे	रम्येथे	रम्यध्वे
रम्ये	रम्यावहे	रम्यामहे

यज् धातु (सकर्मक,अनिट्,उभयपदी,भ्वादिगण)		
इज्यते	इज्येते	इज्यन्ते
इज्यसे	इज्येथे	इज्यध्वे
इज्ये	इज्यावहे	इज्यामहे

वह् धातु (सकर्मक,अनिट्,उभयपदी,भ्वादिगण)		
उह्यते	उह्येते	उह्यन्ते
उह्यसे	उह्येथे	उह्यध्वे
उह्ये	उह्यावहे	उह्यामहे

श्रु धातु (सकर्मक,अनिट्,परस्मैपद,भ्वादिगण)		
श्रूयते	श्रूयेते	श्रूयन्ते
श्रूयसे	श्रूयेथे	श्रूयध्वे
श्रूये	श्रूयावहे	श्रूयामहे

तुद् धातु (सकर्मक,अनिट्,उभयपदी,तुदादिगण)		
तुद्यते	तुद्येते	तुद्यन्ते
तुद्यसे	तुद्येथे	तुद्यध्वे
तुद्ये	तुद्यावहे	तुद्यामहे

भुज् धातु (अकर्मक,अनिट्,परस्मैपद,तुदादिगण)		
भुज्यते	भुज्येते	भुज्यन्ते
भुज्यसे	भुज्येथे	भुज्यध्वे
भुज्ये	भुज्यावहे	भुज्यामहे

हन् धातु (सकर्मक,अनिट्,परस्मैपद,अदादिगण)		
हन्यते	हन्येते	हन्यन्ते
हन्यसे	हन्येथे	हन्यध्वे
हन्ये	हन्यावहे	हन्यामहे

हस् धातु (अकर्मक,सेट्,परस्मैपद,भ्वादिगण)		
हस्यते	हस्येते	हस्यन्ते
हस्यसे	हस्येथे	हस्यध्वे
हस्ये	हस्यावहे	हस्यामहे

क्रीड् धातु (अकर्मक,सेट्,परस्मैपद,भ्वादिगण)		
क्रीड्यते	क्रीड्येते	क्रीड्यन्ते
क्रीड्यसे	क्रीड्येथे	क्रीड्यध्वे
क्रीड्ये	क्रीड्यावहे	क्रीड्यामहे

स्था धातु		
स्थीयते	स्थीयेते	स्थीयन्ते
स्थीयसे	स्थीयेथे	स्थीयध्वे
स्थीये	स्थीयावहे	स्थीयामहे

आस् धातु (अकर्मक,सेट्,आत्मनेपद,अदादिगण)		
आस्यते	आस्येते	आस्यन्ते
आस्यसे	आस्येथे	आस्यध्वे
आस्ये	आस्यावहे	आस्यामहे

जीव् धातु (अकर्मक,सेट्,परस्मैपद,भ्वादिगण)		
जीव्यते	जीव्येते	जीव्यन्ते
जीव्यसे	जीव्येथे	जीव्यध्वे
जीव्ये	जीव्यावहे	जीव्यामहे

धातु/अर्थ	कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य/ भाववाच्य	कर्मवाच्य/ भाववाच्य प्रयोग	कर्तृवाच्य प्रयोग
भू (होना)	भवति	भूयते	ईश्वरेण भूयते	ईश्वरः अस्ति।
भी (डरना)	बिभेति	भीयते	शिशुभिः मूषकेभ्यः भीयते	शिशवः मूषकेभ्यः बिभ्यति।
शी (सोना)	शेते	शय्यते	पथिकैः मार्गे शय्यते	पथिकाः मार्गे शेरते।
याच् (माँगना)	याचति	याच्यते	याचकैः भैक्ष्यं याच्यते	याचकाः भैक्ष्यं याचन्ते।
अद् (खाना)	अत्ति	अद्यते	तेन मिष्ठानं अद्यते	सः मिष्ठान्नं अत्ति।
वद् (बोलना)	वदति	उद्यते	आचार्येण सत्यम् उद्यते	आचार्यः सत्यं वदति।
ज्ञा (जानना)	जानाति	ज्ञायते	तेन श्लोकः न ज्ञायते	सः श्लोकं न जानाति।
खन् (खोदना)	खनति	खन्यते	श्रमिकेण भूमिः खन्यते	श्रमिकः भूमिं खनति।
वप् (बोना)	वपति	उप्यते	कृषकेण बीजानि उप्यन्ते	कृषकः बीजानि वपति।
स्था (ठहरना)	तिष्ठति	स्थीयते	मुनिना कुटीरे स्थीयते	मुनिः कुटीरे तिष्ठति।
कथ् (कहना)	कथयति	कथ्यते	ऋषिणा रामकथा कथ्यते	ऋषिः रामकथां कथयति।
दुह् (दोहना)	दोग्धि	दुह्यते	तेन गौः पयः दुह्यते	सः गां पयः दोग्धि।

धातु/अर्थ	कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य/ भाववाच्य	कर्मवाच्य/ भाववाच्य प्रयोग	कर्तृवाच्य प्रयोग
नी (ले जाना)	नयति	नीयते	भृत्येन भारः नीयते	भृत्यः भारं नयति।
गम् (जाना)	गच्छति	गम्यते	पुत्रेण ग्रामः गम्यते	पुत्रः ग्रामं गच्छति।
भक्ष् (खाना)	भक्षयति	भक्ष्यते	मया फलानि भक्ष्यन्ते	अहं फलानि भक्षयामि।
हन् (मारना)	हन्ति	हन्यते	राज्ञा सिंहः हन्यते	राजा सिंहं हन्ति।
पा (पीना)	पिबति	पीयते	शिशुना दुग्धं पीयते	शिशुः दुग्धं पिबति।
अस् (होना)	अस्ति	भूयते	तेन कुत्रापि न भूयते	सः कुत्रापि न भवति।
श्रु (सुनना)	शृणोति	श्रूयते	बालकेन कथा श्रूयते	बालकः कथां शृणोति।
सेव् (सेवा करना)	सेवते	सेव्यते	प्रजाभिः राजा सेव्यते	प्रजाः राजानं सेवन्ते।
चि (चुनना)	चिनोति	चीयते	मालाकारेण पुष्पाणि चीयन्ते	मालाकारः पुष्पाणि चिनोति।
हु (हवन करना)	जुहोति	हूयते	यतिभिः अग्नौ हूयते	यतयः अग्नौ जुह्वति।
स्वप् (सोना)	स्वपिति	सुप्यते	चालकेन मार्गे सुप्यते	चालकः मार्गे स्वपिति।
मन्थ् (मथना)	मथ्नाति	मथ्यते	मात्रा दधि मथ्यते	माता दधि मथ्नाति।
पूज् (पूजा करना)	पूजयति	पूज्यते	यत्र नार्यः पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः	यत्र नारीः पूजयन्ति रमन्ते तत्र देवताः।
कृ (करना)	करोति	क्रियते	ऋषिभिः शुभकर्माणि क्रियन्ते	ऋषयः शुभकर्माणि कुर्वन्ति।
धृ (धारण करना)	धारयति	धार्यते	शिष्येण वस्त्रं धार्यते	शिष्यः वस्त्रं धरति
गण् (गिनना)	गणयति	गण्यते	छात्रेण शतं गण्यते	छात्रः शतं गणयति।
लिख् (लिखना)	लिखति	लिख्यते	छात्रेण पत्रं लिख्यते	छात्रः पत्रं लिखति।
स्मृ (याद करना)	स्मरति	स्मर्यते	मया ईश्वरः स्मर्यते	अहं ईश्वरं स्मरामि।
दृश् (देखना)	पश्यति	दृश्यते	बालकेन चित्रं दृश्यते	बालकः चित्रं पश्यति।
प्रच्छ् (पूछना)	पृच्छति	पृच्छ्यते	अध्यापकेन प्रश्नः पृच्छ्यते	अध्यापकः प्रश्नं पृच्छति।
वस् (रहना)	वसति	उष्यते	बालकैः उद्याने उष्यते	बालकाः उद्याने वसन्ति।

कर्तृवाच्य से कर्मवाच्य में प्रयोग

- कर्तृवाच्य के कर्त्ता में प्रथमा विभक्ति तथा कर्मवाच्य के कर्त्ता में तृतीया विभक्ति होती है।
- कर्तृवाच्य के कर्म में द्वितीया विभक्ति तथा कर्मवाच्य के कर्म में प्रथमा विभक्ति हो जाती है।
- कर्मवाच्य में क्रिया का पुरुष और वचन कर्म के पुरुष और वचन के अनुसार हो जाता है।

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य
अहं शिक्षां लभे	मया शिक्षा लभ्यते
सः पुस्तकं पठति	तेन पुस्तकं पठ्यते
सः ईश्वरं स्मरति	तेन ईश्वरः स्मर्यते
छात्राः प्रश्नं पृच्छन्ति	छात्रैः प्रश्नः पृच्छ्यते
गायकः गीतानि गायति	गायकेन गीतानि गीयन्ते
शिशुः दुग्धं पिबति	शिशुना दुग्धं पीयते
सः सत्यं वदति	तेन सत्यम् उद्यते
अहं पुस्तकं पश्यामि	मया पुस्तकं दृश्यते
माता ओदनं पचति	मात्रा ओदनं पच्यते
वयं युद्धं कुर्मः	अस्माभिः युद्धं क्रियते

कर्मवाच्य से कर्तृवाच्य में प्रयोग

- कर्मवाच्य में कर्ता की तृतीया विभक्ति कर्तृवाच्य के कर्ता में प्रथमा विभक्ति हो जाती है।
- कर्मवाच्य में कर्म के स्थान पर प्रयुक्त प्रथमा विभक्ति कर्तृवाच्य में द्वितीया विभक्ति हो जाती है।
- क्रिया के पुरुष और वचन कर्त्ता के अनुसार हो जाते हैं।
- कर्मवाच्य में प्रयुक्त क्त के स्थान पर कर्तृवाच्य में क्तवतु प्रत्यय हो जाता है।
- कर्मवाच्य में प्रयुक्त तव्यत् प्रत्यय के स्थान पर कर्तृवाच्य में विधिलिङ् का प्रयोग कर दिया जाता है।

वाच्य परिवर्तन अभ्यास

कर्मवाच्य	कर्तृवाच्य
अध्यापकेन पाठः पठ्यते	अध्यापकः पाठं पठति
अस्माभिः सिंहः दृश्यते	वयं सिंहं पश्यामः
सैनिकैः युद्धं क्रियते	सैनिकाः युद्धं कुर्वन्ति
रमेशेन ईश्वरः स्मर्यते	रमेशः ईश्वरं स्मरति
बालकेन पत्रं लिख्यते	बालकः पत्रं लिखति
गायकेन गीतं गीयते	गायकः गीतं गायति
नृपेण सिंहः हन्यते	नृपः सिंहं हन्ति
स्वामिना कथा कथ्यते	स्वामी कथां कथयति
तेन ग्रामः गम्यते	सः ग्रामं गच्छति
सेनया युद्धः जीयते	सेना युद्धं जयति
तेन कथा श्रूयते	सः कथां शृणोति
मया चन्द्रः दृश्यते	अहं चन्द्रं पश्यामि
गुरुभिः किं न ज्ञायते	गुरवः किं न जानन्ति
मया लोभः त्यजते	अहं लोभं त्यजामि
वृक्षैः फलानि दीयन्ते	वृक्षाः फलानि ददति

कर्तृवाच्य से भाववाच्य में प्रयोग

भाववाच्य के कर्त्ता में तृतीया विभक्ति होती है और क्रिया सदा प्रथम पुरुष एकवचन में होती है। उदाहरण-

कर्तृवाच्य	भाववाच्य
छात्रः क्रीडति	छात्रेण क्रीड्यते
बालकाः तिष्ठन्ति	बालकैः स्थीयते
सिंहः गर्जति	सिंहेन गर्ज्यते
अहं पठामि	मया पठ्यते
ईश्वरः अस्ति	ईश्वरेण भूयते
अश्वाः धावन्ति	अश्वैः धाव्यते
कन्याः लिखन्ति	कन्याभिः लिख्यते
अहं गच्छामि	मया गम्यते
त्वं खादसि	त्वया खाद्यते
लता वर्धते	लतया वर्ध्यते
युवां हसथः	युवाभ्यां हस्यते
पुष्पाणि विकसन्ति	पुष्पैः विकस्यते
गुरुः तिष्ठति	गुरुणा स्थीयते
वयं हसामः	अस्माभिः हस्यते
त्वं पठसि	त्वया पठ्यते

भाववाच्य	कर्तृवाच्य
हरिणा वैकुण्ठे उष्यते	हरिः वैकुण्ठे वसति
अस्माभिः विद्यालये स्थीयते	वयं विद्यालये तिष्ठामः
मयूरैः नृत्यते	मयूराः नृत्यन्ति
मया नैव रुद्यते	अहं नैव रोदिमि
तेन गृहे सुप्यते	सः गृहे स्वपिति

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य
रामः वेदं पठति	रामेण वेदः पठ्यते।
बालकः चन्द्रं पश्यति	बालकेन चन्द्रः दृश्यते।
बालकः गीतां पठति	बालकेन गीता पठ्यते।
रामः पत्रं लिखति	रामेण पत्रं लिख्यते।
सुरेशः ग्रामं गच्छति	सुरेशेन ग्रामः गम्यते।
सः आपणं गच्छति	तेन आपणः गम्यते।
सः गीतं गायति	तेन गीतं गीयते।
सः रघुवंशं पठति	तेन रघुवंशं पठ्यते।
कृष्णः जलं पिबति	कृष्णेन जलं पीयते।
बालकः मोहनं पश्यति	बालकेन मोहनः दृश्यते।
बालिका पुस्तकं पठति	बालिकया पुस्तकं पठ्यते।
रजकः गर्दभं ताडयति	रजकेन गर्दभः ताड्यते।
कृषकः जलं पिबति	कृषकेण जलं पीयते।
सः दुग्धं पिबति	तेन दुग्धं पीयते।
कविः काव्यं करोति	कविना काव्यं क्रियते।
सा विद्यालयं गच्छति	तया विद्यालयः गम्यते।
माता ओदनं पचति	मात्रा ओदनं पच्यते।
रामः तीव्रं हसति	रामेण तीव्रं हस्यते।
भक्तः ज्ञानं प्राप्नोति	भक्तेन ज्ञानं प्राप्यते।
रामः धनं ददाति	रामेण धनं दीयते।
सः ईश्वरं स्मरति	तेन ईश्वरः स्मर्यते।
सः सत्यं वदति	तेन सत्यम् उद्यते।
सः कथां शृणोति	तेन कथा श्रूयते।
वृक्षाः फलानि ददति	वृक्षैः फलानि दीयन्ते।
सैनिकाः युद्धं कुर्वन्ति	सैनिकैः युद्धं क्रियते।
छात्राः पत्रं लिखन्ति	छात्रैः पत्रं लिख्यते।
तौ प्रयागं गच्छतः	ताभ्याम् प्रयागः गम्यते।
छात्राः पुस्तकानि नयन्ति	छात्रैः पुस्तकानि नीयन्ते।
तौ गृहं गच्छतः	ताभ्याम् गृहं गम्यते।
कृषकाः जलं पिबन्ति	कृषकैः जलं पीयते।
ते पुस्तकानि पठन्ति	तैः पुस्तकानि पठ्यन्ते।

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य
बालकौ गीतं गायतः	बालकाभ्यां गीतं गीयते।
भक्तौ ईश्वरं स्मरतः	भक्ताभ्याम् ईश्वरः स्मर्यते।
तौ पुस्तकं पठतः	ताभ्याम् पुस्तकं पठ्यते।
त्वं गृहं गच्छसि	त्वया गृहं गम्यते।
त्वं पत्रं लिखसि	त्वया पत्रं लिख्यते।
त्वं किं लिखसि	त्वया किं लिख्यते।
यूवां पुस्तकं पठथः	युवाभ्याम् पुस्तकं पठ्यते।
त्वं कुत्र गच्छसि	त्वया कुत्र गम्यते।
त्वं ईश्वरं पश्यसि	त्वया ईश्वरः दृश्यते।
त्वं प्रश्नं पृच्छसि	त्वया प्रश्नः पृच्छ्यते।
युवां गृहं गच्छथः	युवाभ्यां गृहं गम्यते।
युवां प्रश्नानि पृच्छथः	युवाभ्यां प्रश्नानि पृच्छयन्ते।
युवां बालकौ पश्यथः	युवाभ्यां बालकौ दृश्येते।
यूयं पुस्तकानि पठथ	युष्माभिः पुस्तकानि पठ्यन्ते।
यूयं गीतानि गायथ	युष्माभिः गीतानि गीयन्ते।
अहं पुस्तकं पठामि	मया पुस्तकं पठ्यते।
अहं दुग्धं पिबामि	मया दुग्धं पीयते।
अहं पुस्तकं लिखामि	मया पुस्तकं लिख्यते।
अहं त्वां पश्यामि	मया त्वं दृश्यसे।
अहं जलं पिबामि	मया जलं पीयते।
अहं पत्रं लिखामि	मया पत्रं लिख्यते।
आवां गृहं गच्छावः	आवाभ्यां गृहं गम्यते।
आवां पुस्तकानि पठावः	आवाभ्यां पुस्तकानि पठ्यन्ते
आवां जलं पिबावः	आवाभ्यां जलं पीयते
वयं पत्रं लिखामः	अस्माभिः पत्रं लिख्यते
वयं नगरं गच्छामः	अस्माभिः नगरं गम्यते
वयं विद्यालयं गच्छामः	अस्माभिः विद्यालयः गम्यते
वयं बालकं पश्यामः	अस्माभिः बालकः दृश्यते।
रामः वेदं पठिष्यति	रामेण वेदः पठिष्यते
बालकः चन्द्रं द्रक्ष्यति	बालकेन चन्द्रः द्रक्ष्यते।
रमेशः पत्रं पठिष्यति	रमेशेन पत्रं पठिष्यते।
सीता काव्यं करिष्यति	सीतया काव्यं करिष्यते।
सः ग्रन्थं पठिष्यति	तेन ग्रन्थः पठिष्यते।
मोहनः दुग्धं पास्यति	मोहनेन दुग्धं पास्यते
मुनिः रामायणं कथयिष्यति	मुनिना रामायणं कथयिष्यते
छात्रः विद्यालयं गमिष्यति	छात्रेण विद्यालयः गंस्यते
राधा नृत्यं करिष्यति	राधया नृत्यं करिष्यते
शिशुः दुग्धं पास्यति	शिशुना दुग्धं पास्यते।
सः त्वां द्रक्ष्यति	तेन त्वं द्रक्ष्यसे

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य
सः आपणं गमिष्यति	तेन आपणः गम्यते
तौ दुग्धं पास्यतः	ताभ्याम् दुग्धं पास्यते
तौ कार्याणि करिष्यतः	ताभ्याम् कार्याणि करिष्यन्ते
तौ वनं गमिष्यतः	ताभ्याम् वनं गंस्यते
ते पत्राणि पठिष्यन्ति	तैः पत्राणि पठिष्यन्ते
ते फलानि नेष्यन्ति	तैः फलानि नेष्यन्ते
ते कथां कथयिष्यन्ति	तैः कथा कथयिष्यते।

कर्तृवाच्य	भाववाच्य
सः हसति	तेन हस्यते
त्वं पठसि	त्वया पठ्यते
अहं गच्छामि	मया गम्यते
वयं हसामः	अस्माभिः हस्यते
ते हसन्ति	तैः हस्यते
रामः गच्छति	रामेण गम्यते
सीता गच्छति	सीतया गम्यते
पिता गच्छति	पित्रा गम्यते
अहं वदामि	मया उद्यते
यूयं पठथ	युष्माभिः पठ्यते
अहं हसामि	मया हस्यते
सा लिखति	तया लिख्यते
सः तिष्ठति	तेन स्थीयते
त्वं हससि	त्वया हस्यते
त्वं खादसि	त्वया खाद्यते
सः क्रीडति	तेन क्रीड्यते
रामः हसति	रामेण हस्यते
अहं तिष्ठामि	मया स्थीयते
श्यामः गच्छति	श्यामेन गम्यते
छात्रः क्रीडति	छात्रेण क्रीड्यते
बालकाः तिष्ठन्ति	बालकैः स्थीयते
ईश्वरः अस्ति	ईश्वरेण भूयते
गुरुः तिष्ठति	गुरुणा स्थीयते
मयूराः नृत्यन्ति	मयूरैः नृत्यते

शब्दरूप

अजन्त, हलन्त, (पुं. स्त्री. नपुं.)

1. अकारान्त पुंलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	बालकः	बालकौ	बालकाः
द्वितीया	बालकम्	बालकौ	बालकान्
तृतीया	बालकेन	बालकाभ्याम्	बालकैः
चतुर्थी	बालकाय	बालकाभ्याम्	बालकेभ्यः
पञ्चमी	बालकात्	बालकाभ्याम्	बालकेभ्यः
षष्ठी	बालकस्य	बालकयोः	बालकानाम्
सप्तमी	बालके	बालकयोः	बालकेषु
सम्बोधन	हे बालक!	हे बालकौ!	हे बालकाः!

तादृश-उसकी तरह

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	तादृशः	तादृशौ	तादृशाः
द्वितीया	तादृशम्	तादृशौ	तादृशान्
तृतीया	तादृशेन	तादृशाभ्याम्	तादृशैः
चतुर्थी	तादृशाय	तादृशाभ्याम्	तादृशेभ्यः
पञ्चमी	तादृशात्/द्	तादृशाभ्याम्	तादृशेभ्यः
षष्ठी	तादृशस्य	तादृशयोः	तादृशानाम्
सप्तमी	तादृशे	तादृशयोः	तादृशेषु
सम्बोधन	हे तादृश!	हे तादृशौ!	हे तादृशाः!

नोट- ये ही शब्द इसी अर्थ में शकारान्त भी हैं। उनके रूप व्यञ्जनान्त संज्ञाओं में मिलेंगे।

आकारान्त पुंल्लिङ्ग शब्द

विश्वपा-संसार का रक्षक

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	विश्वपाः	विश्वपौ	विश्वपाः
द्वितीया	विश्वपाम्	विश्वपौ	विश्वपः
तृतीया	विश्वपा	विश्वपाभ्याम्	विश्वपाभिः
चतुर्थी	विश्वपे	विश्वपाभ्याम्	विश्वपाभ्यः
पञ्चमी	विश्वपः	विश्वपाभ्याम्	विश्वपाभ्यः
षष्ठी	विश्वपः	विश्वपोः	विश्वपाम्
सप्तमी	विश्वपि	विश्वपोः	विश्वपासु
सम्बोधन	हे विश्वपाः!	हे विश्वपौ!	हे विश्वपाः!

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	हाहाः	हाहौ	हाहाः
द्वितीया	हाहाम्	हाहौ	हाहान्
तृतीया	हाहा	हाहाभ्याम्	हाहाभिः
चतुर्थी	हाहै	हाहाभ्याम्	हाहाभ्यः
पञ्चमी	हाहाः	हाहाभ्याम्	हाहाभ्यः
षष्ठी	हाहाः	हाहौः	हाहाम्
सप्तमी	हाहे	हाहौः	हाहासु
सम्बोधन	हे हाहाः!	हे हाहौ!	हे हाहाः!

2. इकारान्त पुंलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	कविः	कवी	कवयः
द्वितीया	कविम्	कवी	कवीन्
तृतीया	कविना	कविभ्याम्	कविभिः
चतुर्थी	कवये	कविभ्याम्	कविभ्यः
पञ्चमी	कवेः	कविभ्याम्	कविभ्यः
षष्ठी	कवेः	कव्योः	कवीनाम्
सप्तमी	कवौ	कव्योः	कविषु
सम्बोधन	हे कवे!	हे कवी!	हे कवयः!

पति- स्वामी, मालिक

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पतिः	पती	पतयः
द्वितीया	पतिम्	पती	पतीन्
तृतीया	पत्या	पतिभ्याम्	पतिभिः
चतुर्थी	पत्ये	पतिभ्याम्	पतिभ्यः
पञ्चमी	पत्युः	पतिभ्याम्	पतिभ्यः
षष्ठी	पत्युः	पत्योः	पतीनाम्
सप्तमी	पत्यौ	पत्योः	पतिषु
सम्बोधन	हे पते!	हे पती!	हे पतयः!

किन्तु जब पति शब्द किसी शब्द के साथ समास के अन्त में आता है तो उसके रूप कवि के ही समान होते हैं, जैसे-

भूपति- राजा

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	भूपतिः	भूपती	भूपतयः
द्वितीया	भूपतिम्	भूपती	भूपतीन्
तृतीया	भूपतिना	भूपतिभ्याम्	भूपतिभिः
चतुर्थी	भूपतये	भूपतिभ्याम्	भूपतिभ्यः
पञ्चमी	भूपतेः	भूपतिभ्याम्	भूपतिभ्यः
षष्ठी	भूपतेः	भूपत्योः	भूपतीनाम्
सप्तमी	भूपतौ	भूपत्योः	भूपतिषु
सम्बोधन	हे भूपते!	हे भूपती!	हे भूपतयः!

सखि-मित्र

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सखा	सखायौ	सखायः
द्वितीया	सखायम्	सखायौ	सखीन्
तृतीया	सख्या	सखिभ्याम्	सखिभिः
चतुर्थी	सख्ये	सखिभ्याम्	सखिभ्यः
पञ्चमी	सख्युः	सखिभ्याम्	सखिभ्यः
षष्ठी	सख्युः	सख्योः	सखीनाम्
सप्तमी	सख्यौ	सख्योः	सखिषु
सम्बोधन	हे सखे!	हे सखायौ!	हे सखायः!

ईकारान्त पुंल्लिङ्ग शब्द

(क) प्रधी- अच्छा ध्यान करने वाला

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	प्रधीः	प्रध्यौ	प्रध्यः
द्वितीया	प्रध्यम्	प्रध्यौ	प्रध्यः
तृतीया	प्रध्या	प्रधीभ्याम्	प्रधीभिः
चतुर्थी	प्रध्ये	प्रधीभ्याम्	प्रधीभ्यः
पञ्चमी	प्रध्यः	प्रधीभ्याम्	प्रधीभ्यः
षष्ठी	प्रध्यः	प्रध्योः	प्रध्याम्
सप्तमी	प्रध्यि	प्रध्योः	प्रधीषु
सम्बोधन	हे प्रधीः!	हे प्रध्यौ!	हे प्रध्यः!

(ख) सुधी-पण्डित, विद्वान्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सुधीः	सुधियौ	सुधियः
द्वितीया	सुधियम्	सुधियौ	सुधियः
तृतीया	सुधिया	सुधीभ्याम्	सुधीभिः
चतुर्थी	सुधिये	सुधीभ्याम्	सुधीभ्यः
पञ्चमी	सुधियः	सुधीभ्याम्	सुधीभ्यः
षष्ठी	सुधियः	सुधियोः	सुधियाम्
सप्तमी	सुधियि	सुधियोः	सुधीषु
सम्बोधन	हे सुधीः!	हे सुधियौ!	हे सुधियः!

(ग) सखी (सखायमिच्छतीति)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सखा	सखायौ	सखायः
द्वितीया	सखायम्	सखायौ	सख्यः
तृतीया	सख्या	सखीभ्याम्	सखीभिः
चतुर्थी	सख्ये	सखीभ्याम्	सखीभ्यः
पञ्चमी	सख्युः	सखीभ्याम्	सखीभ्यः
षष्ठी	सख्युः	सख्योः	सख्याम्
सप्तमी	सख्यि	सख्योः	सखीषु
सम्बोधन	हे सखीः!	हे सखायौ!	हे सखायः!

उकारान्त पुंलिङ्ग शब्द

भानु-सूर्य

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	भानुः	भानू	भानवः
द्वितीया	भानुम्	भानू	भानून्
तृतीया	भानुना	भानुभ्याम्	भानुभिः
चतुर्थी	भानवे	भानुभ्याम्	भानुभ्यः
पञ्चमी	भानोः	भानुभ्याम्	भानुभ्यः
षष्ठी	भानोः	भान्वोः	भानूनाम्
सप्तमी	भानौ	भान्वोः	भानुषु
सम्बोधन	हे भानो!	हे भानू!	हे भानवः!

ऊकारान्त पुंल्लिङ्ग शब्द

स्वयम्भू-ब्रह्मा

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्वयम्भूः	स्वयम्भुवौ	स्वयम्भुवः
द्वितीया	स्वयम्भुवम्	स्वयम्भुवौ	स्वयम्भुवः
तृतीया	स्वयम्भुवा	स्वयम्भूभ्याम्	स्वयम्भूभिः
चतुर्थी	स्वयम्भुवे	स्वयम्भूभ्याम्	स्वयम्भूभ्यः
पञ्चमी	स्वयम्भुवः	स्वयम्भूभ्याम्	स्वयम्भूभ्यः
षष्ठी	स्वयम्भुवः	स्वयम्भुवोः	स्वयम्भुवाम्
सप्तमी	स्वयम्भुवि	स्वयम्भुवोः	स्वयम्भुषु
सम्बोधन	हे स्वयम्भूः!	हे स्वयम्भुवौ!	हे स्वयम्भुवः!

ऋकारान्त पुंलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पिता	पितरौ	पितरः
द्वितीया	पितरम्	पितरौ	पितॄन्
तृतीया	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभिः
चतुर्थी	पित्रे	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
पञ्चमी	पितुः	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
षष्ठी	पितुः	पित्रोः	पितॄणाम्
सप्तमी	पितरि	पित्रोः	पितृषु
सम्बोधन	हे पितः!	हे पितरौ!	हे पितरः!

नृ-मनुष्य

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	ना	नरौ	नरः
द्वितीया	नरम्	नरौ	नॄन्
तृतीया	न्रा	नृभ्याम्	नृभिः
चतुर्थी	न्रे	नृभ्याम्	नृभ्यः
पंञ्चमी	नुः	नृभ्याम्	नृभ्यः
षष्ठी	नुः	न्रोः	नृणाम्/नॄणाम्
सप्तमी	नरि	न्रोः	नृषृ
सम्बोधन	हे नः!	हे नरौ!	हे नरः!

दातृ- देने वाला

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	दाता	दातारौ	दातारः
द्विवतीया	दातारम्	दातारौ	दातॄन्
तृतीया	दात्रा	दातृभ्याम्	दातृभिः
चतुर्थी	दात्रे	दातृभ्याम्	दातृभ्यः
पञ्चमी	दातुः	दातृभ्याम्	दातृभ्यः
षष्ठी	दातुः	दात्रोः	दातॄणाम्
सप्तमी	दातरि	दात्रोः	दातृषु
सम्बोधन	हे दातः!	हे दातारौ!	हे दातारः!

अकारान्त नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	फलम्	फले	फलानि
द्वितीया	फलम्	फले	फलानि
तृतीया	फलेन	फलाभ्याम्	फलैः
चतुर्थी	फलाय	फलाभ्याम्	फलेभ्यः
पञ्चमी	फलात्/द्	फलाभ्याम्	फलेभ्यः
षष्ठी	फलस्य	फलयोः	फलानाम्
सप्तमी	फले	फलयोः	फलेषु
सम्बोधन	हे फल!	हे फले!	हे फलानि!

इकारान्त नपुंसकलिङ्ग

(क) वारि-पाना

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वारि	वारिणी	वारीणि
द्वितीया	वारि	वारिणी	वारीणि
तृतीया	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभि
चतुर्थी	वारिणे	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
पञ्चमी	वारिणः	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
षष्ठी	वारिणः	वारिणोः	वारीणाम्
सप्तमी	वारिणि	वारिणोः	वारिषु
सम्बोधन	हे वारि/हे वारे!	हे वारिणी!	हे वारीणि!

(ख) दधि-दही

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	दधि	दधिनी	दधीनि
द्वितीया	दधि	दधिनी	दधीनि
तृतीया	दध्ना	दधिभ्याम्	दधिभिः
चतुर्थी	दध्ने	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
पञ्चमी	दध्नः	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
षष्ठी	दध्नः	दध्नोः	दध्नाम्
सप्तमी	दध्नि	दधनि	दध्नोः/दधिषु
सम्बोधन	हे दधे,हे दधि!	हे दधिनी!	हे दधीनि!

अक्षि- आँख

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अक्षि	अक्षिणी	अक्षीणि
द्वितीया	अक्षि	अक्षिणी	अक्षीणि
तृतीया	अक्ष्णा	अक्षिभ्याम्	अक्षिभिः
चतुर्थी	अक्ष्णे	अक्षिभ्याम्	अक्षिभ्यः
पञ्चमी	अक्ष्णः	अक्षिभ्याम्	अक्षिभ्यः
षष्ठी	अक्ष्णः	अक्ष्णोः	अक्ष्णाम्
सप्तमी	अक्ष्णि	अक्षणि	अक्ष्णोः अक्षिषु
सम्बोधन	हे अक्षि,हे अक्षे!	हे अक्षिणी!	हे अक्षीणि!

शुचि (पवित्र)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	शुचि	शुचिनी	शुचीनि
द्विवचन	शुचि	शुचिनी	शुचीनि
तृतीया	शुचिना	शुचिभ्याम्	शुचिभिः
चतुर्थी	शुचये, शुचिने	शुचिभ्याम्	शुचिभ्यः
पञ्चमी	शुचेः, शुचिनः	शुचिभ्याम्	शुचिभ्यः
षष्ठी	शुचेः, शुचिनः	शुच्योः, शुचिनोः	शुचीनाम्
सप्तमी	शुचौ, शुचिनि	शुच्योः, शुचिनोः	शुचिषु
सम्बोधन	हे शुचि, हे शुचे	हे शुचिनी	हे शुचीनि

उकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द
वस्तु-चीज

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वस्तु	वस्तुनी	वस्तूनि
द्विवचन	वस्तु	वस्तुनी	वस्तूनि
तृतीया	वस्तुना	वस्तुभ्याम्	वस्तुभिः
चतुर्थी	वस्तुने	वस्तुभ्याम्	वस्तुभ्यः
पञ्चमी	वस्तुनः	वस्तुभ्याम्	वस्तुभ्यः
षष्ठी	वस्तुनः	वस्तुनोः	वस्तूनाम्
सप्तमी	वस्तुनि	वस्तुनोः	वस्तुषु
सम्बोधन	हे वस्तो,हे वस्तु!	हे वस्तुनी!	हे वस्तूनि!

उकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्द
बहु

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	बहु	बहुनी	बहूनि
द्वितीया	बहु	बहुनी	बहूनि
तृतीया	बहुना	बहुभ्याम्	बहुभिः
चतुर्थी	बहवे/बहुने	बहुभ्याम्	बहुभ्यः
पञ्चमी	बहोः/बहुनः	बहुभ्याम्	बहुभ्यः
षष्ठी	बहोः/बहुनः	बह्वोः/बहुनोः	बहूनाम्
सप्तमी	बहौ/बहूनि	बह्वोः/बहुनोः	बहुषु
सम्बोधन	हे बहो,हे बहु!	हे बहुनी!	हे बहूनि!

ऋकारान्त नपुंसकलिङ्ग
कर्तृ- करने वाला

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्तृ	कर्तृणी	कर्तॄणि
द्वितीया	कर्तृ	कर्तृणी	कर्तॄणि
तृतीया	कर्त्रा /कर्तृणा	कर्तृभ्याम्	कर्तृभिः
चतुर्थी	कर्त्रे /कर्तृणे	कर्तृभ्याम्	कर्तृभ्यः
पञ्चमी	कर्तुः/कर्तृणः	कर्तृभ्याम्	कर्तृभ्यः
षष्ठी	कर्तुः/कर्तृणः	कर्त्रोः/कर्तृणोः	कर्तॄणाम्
सप्तमी	कर्तरि/कर्तृणि	कर्त्रोः/कर्तृणोः	कर्तृषु
सम्बोधन	हे कर्तृ!/हे कर्तः!	हे कर्तृणी!	हे कर्तॄणि!

आकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द

विद्या

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	विद्या	विद्ये	विद्याः
द्वितीया	विद्याम्	विद्ये	विद्याः
तृतीया	विद्यया	विद्याभ्याम्	विद्याभिः
चतुर्थी	विद्यायै	विद्याभ्याम्	विद्याभ्यः
पञ्चमी	विद्यायाः	विद्याभ्याम्	विद्याभ्यः
षष्ठी	विद्यायाः	विद्ययोः	विद्यानाम्
सप्तमी	विद्यायाम्	विद्ययोः	विद्यासु
सम्बोधन	हे विद्ये!	हे विद्ये!	हे विद्याः!

इकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द

रुचि

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	रुचिः	रुची	रुचयः
द्वितीया	रुचिम्	रुची	रुचीः
तृतीया	रुच्या	रुचिभ्याम्	रुचिभिः
चतुर्थी	रुच्यै/ रुचये	रुचिभ्याम्	रुचिभ्यः
पञ्चमी	रुच्याः/रुचेः	रुचिभ्याम्	रुचिभ्यः
षष्ठी	रुच्याः/रुचेः	रुच्योः	रुचीनाम्
सप्तमी	रुच्याम्/रुचौ	रुच्योः	रुचिषु
सम्बोधन	हे रुचे!	हे रुची!	हे रुचयः!

ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द

नदी

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	नदी	नद्यौ	नद्यः
द्वितीया	नदीम्	नद्यौ	नदीः
तृतीया	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः
चतुर्थी	नद्यै	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
पञ्चमी	नद्याः	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
षष्ठी	नद्याः	नद्योः	नदीनाम्
सप्तमी	नद्याम्	नद्योः	नदीषु
सम्बोधन	हे नदि!	हे नद्यौ!	हे नद्यः!

ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द

लक्ष्मी

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	लक्ष्मीः	लक्ष्म्यौ	लक्ष्म्यः
द्वितीया	लक्ष्मीम्	लक्ष्म्यौ	लक्ष्मीः
तृतीया	लक्ष्म्या	लक्ष्मीभ्याम्	लक्ष्मीभिः
चतुर्थी	लक्ष्म्यै	लक्ष्मीभ्याम्	लक्ष्मीभ्यः
पञ्चमी	लक्ष्म्याः	लक्ष्मीभ्याम्	लक्ष्मीभ्यः
षष्ठी	लक्ष्म्याः	लक्ष्म्योः	लक्ष्मीणाम्
सप्तमी	लक्ष्म्याम्	लक्ष्म्योः	लक्ष्मीषु
सम्बोधन	हे लक्ष्मि!	हे लक्ष्म्यौ!	हे लक्ष्म्यः!

स्त्री

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्त्री	स्त्रियौ	स्त्रियः
द्वितीया	स्त्रियम्/स्त्रीम्	स्त्रियौ	स्त्रियः, स्त्री
तृतीया	स्त्रिया	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभिः
चतुर्थी	स्त्रियै	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभ्यः
पञ्चमी	स्त्रियाः	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभ्यः
षष्ठी	स्त्रियाः	स्त्रियोः	स्त्रीणाम्
सप्तमी	स्त्रियाम्	स्त्रियोः	स्त्रीषु
सप्तमी	हे स्त्रि!	हे स्त्रियौ!	हे स्त्रियः!

श्री-लक्ष्मी

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	श्रीः	श्रियौ	श्रियः
द्वितीया	श्रियम्	श्रियौ	श्रियः
तृतीया	श्रिया	श्रीभ्याम्	श्रीभिः
चतुर्थी	श्रियै, श्रिये	श्रीभ्याम्	श्रीभ्यः
पञ्चमी	श्रियाः, श्रियः	श्रीभ्याम्	श्रीभ्यः
षष्ठी	श्रियाः, श्रियः	श्रियोः	श्रीणाम्, श्रियाम्
सप्तमी	श्रियाम्,	श्रियि	श्रियोः/श्रीषु
सम्बोधन	हे श्रीः!	हे श्रियौ!	हे श्रियः!

भी (डर), ह्री (लज्जा), धी (बुद्धि), सुश्री इत्यादि के रूप श्री के समान होते हैं।

उकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द
धेनु-गाय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	धेनुः	धेनू	धेनवः
द्वितीया	धनुम्	धेनू	धेनूः
तृतीया	धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभिः
चतुर्थी	धेन्वै/धेनवे	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
पञ्चमी	धेन्वाः/धेनोः	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
षष्ठी	धेन्वाः/धेनोः	धेन्वाः	धेनूनाम्
सप्तमी	धेन्वाम्/धेनौ	धेन्वोः	धेनुषु
सम्बोधन	हे धेनौ!	हे धेनू!	हे धेनवः!

ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द
वधू-बहू

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वधूः	वध्वौ	वध्वः
द्वितीया	वधूम्	वध्वौ	वधूः
तृतीया	वध्वा	वधूभ्याम्	वधूभिः
चतुर्थी	वध्वै	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
पञ्चमी	वध्वाः	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
षष्ठी	वध्वाः	वध्वोः	वधूनाम्
सप्तमी	वध्वाम्	वध्वोः	वधूषु
सम्बोधन	हे वधु!	हे वध्वौ	हे वध्वः!

(क) भू-पृथ्वी

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	भूः	भुवौ	भुवः
द्वितीया	भुवम्	भुवौ	भुवः
तृतीया	भुवा	भूभ्याम्	भूभिः
चतुर्थी	भुवै/भुवे	भुभ्याम्	भूभ्यः
पञ्चमी	भुवाः/भुवः	भूभ्याम्	भूभ्यः
षष्ठी	भुवाः/भुवः	भुवोः	भुवाम/भूनाम्
सप्तमी	भुवाम्/भुवि	भुवोः	भूषु
सम्बोधन	हे भूः!	हे भुवौ!	हे भुवः!

(ख) सुभ्रू - सुन्दर भौं वाली स्त्री

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सुभ्रूः	सुभ्रुवौ	सुभ्रुवः
द्वितीया	सुभ्रुवम्	सुभ्रुवौ	सुभ्रुवः
तृतीया	सुभ्रुवा	सुभ्रूभ्याम्	सुभ्रूभिः
चतुर्थी	सुभ्रुवे	सुभ्रूभ्याम्	सुभ्रूभ्यः
पञ्चमी	सुभ्रुवः	सुभ्रूभ्याम्	सुभ्रूभ्यः
षष्ठी	सुभ्रुवः	सुभ्रुवोः	सुभ्रुवाम्
सप्तमी	सुभ्रुवि	सुभ्रुवोः	सुभ्रुषु
सम्बोधन	हे सुभ्रु!	हे सुभ्रुवौ!	हे सुभ्रुवः!

ऋकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द
मातृ-माता

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	माता	मातरौ	मातरः
द्वितीया	मातरम्	मातरौ	मातृः
तृतीया	मात्रा	मातृभ्याम्	मातृभिः
चतुर्थी	मात्रे	मातृभ्याम्	मातृभ्यः
पञ्चमी	मातुः	मातृभ्याम्	मातृभ्यः
षष्ठी	मातुः	मात्रोः	मातृणाम्
सप्तमी	मातरि	मात्रोः	मातृषु
सम्बोधन	हे मातः!	हे मातरौ!	हे मातरः!

स्वसृ-बहिन

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्वसा	स्वसारौ	स्वसारः
द्वितीया	स्वसारम्	स्वसारौ	स्वसृः
तृतीया	स्वस्रा	स्वसृभ्याम्	स्वसृभिः
चतुर्थी	स्वस्रे	स्वसृभ्याम्	स्वसृभ्यः
पञ्चमी	स्वसुः	स्वसृभ्याम्	स्वसृभ्यः
षष्ठी	स्वसुः	स्वस्रोः	स्वसृणाम्
सप्तमी	स्वसरि	स्वस्रोः	स्वसृषु
सम्बोधन	हे स्वसः!	हे स्वसारौ!	हे स्वसारः!

(क) इदम् - यह

पुंल्लिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अयम्	इमौ	इमे
द्वितीया	इमम्/एनम्	इमौ/एनौ	इमान्/एनान्
तृतीया	अनेन/एनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पञ्चमी	अस्मात्/द्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी	अस्य	अनयोः/एनयोः	एषाम्
सप्तमी	अस्मिन्	अनयोः/एनयोः	एषु

नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	इदम्	इमे	इमानि
द्वितीया	इदम्/एनत्	इम/एने	इमानि/एनानि
तृतीया	अनेन/एनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पञ्चमी	अस्मात्/द्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी	अस्य	अनयोः/एनयोः	एषाम्
सप्तमी	अस्मिन्	अनयोः/एनयोः	एषु

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	इयम्	इमे	इमाः
द्वितीया	इमाम्/एनाम्	इमे/एने	इमाः/एनाः
तृतीया	अनया/एनया	आभ्याम्	आभिः
चतुर्थी	अस्यै	आभ्याम्	आभ्यः
पञ्चमी	अस्याः	आभ्याम	आभ्यः
षष्ठी	अस्याः	अनयोः/एनयोः	आसाम्
सप्तमी	अस्याम्	अनयोः/एनयोः	आसु

(ख) एतद् - यह

पुंल्लिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	एषः	एतौ	एते
द्वितीया	एतम्/एनम्	एतौ/एनौ	एतान्/एनान्
तृतीया	एतेन/एनेन	एताभ्याम्	एतैः
चतुर्थी	एतस्मै	एताभ्याम्	एतेभ्यः
पञ्चमी	एतस्मात्/द्	एताभ्याम्	एतेभ्यः
षष्ठी	एतस्य	एतयोः/एनयोः	एतेषाम्
सप्तमी	एतस्मिन्	एतयोः/ एनयोः	एतेषु

नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	एतत्/द्	एते	एतानि
द्वितीया	एतत्/द् एनत् /द्	एते, एने	एतानि, एनानि
तृतीया	एतेन/एनेन	एताभ्याम्	एतैः
चतुर्थी	एतस्मै	एताभ्याम्	एतेभ्यः
पञ्चमी	एतस्मात/द्	एताभ्याम्	एतेभ्यः
षष्ठी	एतस्य	एतयोः/एनयोः	एतेषाम्
सप्तमी	एतस्मिन्	एतयोः/एनयोः	एतेषु

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	एषा	एते	एताः
द्वितीया	एताम्/एनाम्	एते/एने	एताः/एनाः
तृतीया	एतया/एनया	एताभ्याम्	एताभिः
चतुर्थी	एतस्यै	एताभ्याम्	एताभ्यः
पञ्चमी	एतस्याः	एताभ्याम्	एताभ्यः
षष्ठी	एतस्याः	एतयोः/एनयोः	एतासाम्
सप्तमी	एतस्याम्	एतयोः/एनयोः	एतासु

(ग) तद् - वह

पुंल्लिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सः	तौ	ते
द्वितीया	तम्	तौ	तान्
तृतीया	तेन	ताभ्याम्	तैः
चतुर्थी	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः
पञ्चमी	तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्यः
षष्ठी	तस्य	तयोः	तेषाम्
सप्तमी	तस्मिन्	तयोः	तेषु

नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	तत्/तद्	ते	तानि
द्वितीया	तत्/तद्	ते	तानि
तृतीया	तेन	ताभ्याम्	तैः
चतुर्थी	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः
पञ्चमी	तस्मात्/द्	ताभ्याम्	तेभ्यः
षष्ठी	तस्य	तयोः	तेषाम्
सप्तमी	तस्मिन्	तयोः	तेषु

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सा	ते	ताः
द्वितीया	ताम्	ते	ताः
तृतीया	तया	ताभ्याम्	ताभिः
चतुर्थी	तस्यै	ताभ्याम्	ताभ्यः
पञ्चमी	तस्याः	ताभ्याम्	ताभ्यः
षष्ठी	तस्याः	तयोः	तासाम्
सप्तमी	तस्याम्	तयोः	तासु

(घ) अदस् - वह

पुंल्लिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	असौ	अमू	अमी
द्वितीया	अमुम्	अमू	अमून्
तृतीया	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
चतुर्थी	अमुष्मै	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
पञ्चमी	अमुष्मात्/द्	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
षष्ठी	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
सप्तमी	अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु

नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अदः	अमू	अमूनि
द्वितीया	अदः	अमू	अमूनि
तृतीया	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
चतुर्थी	अमुष्मै	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
पञ्चमी	अमुष्मात्, द्	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
षष्ठी	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
सप्तमी	अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	असौ .	अमू	अमूः
द्वितीया	अमुम्	अमू	अमूः
तृतीया	अमुया	अमूभ्याम्	अमूंभिः
चतुर्थी	अमुष्यै	अमूभ्याम्	अमूभ्यः
पञ्चमी	अमुष्याः	अमूभ्याम्	अमूभ्यः
षष्ठी	अमुष्याः	अमुयोः	अमूषाम्
सप्तमी	अमुष्याम्	अमुयोः	अमूषु

यद् - जो

पुंल्लिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	यः	यौ	ये
द्वितीया	यम्	यौ	यान्
तृतीया	येन	याभ्याम्	यैः
चतुर्थी	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पञ्चमी	यस्मात्/द्	याभ्याम्	येभ्यः
षष्ठी	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी	यस्मिन्	ययोः	येषु

नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	यत्/यद्	ये	यानि
द्वितीया	यत्/यद्	ये	यानि
तृतीया	येन	याभ्याम्	यैः
चतुर्थी	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पञ्चमी	यस्मात्/द्	याभ्याम्	येभ्यः
षष्ठी	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी	यस्मिन्	ययोः	येषु

स्त्रीलिङ्ग			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	या	ये	याः
द्वितीया	याम्	ये	याः
तृतीया	यया	याभ्याम्	याभिः
चतुर्थी	यस्यै	याभ्याम्	याभ्यः
पञ्चमी	यस्याः	याभ्याम्	याभ्यः
षष्ठी	यस्याः	ययोः	यासाम्
सप्तमी	यस्याम्	ययोः	यासु

किम् - कौन

पुँल्लिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	कः	कौ	के
द्वितीया	कम्	कौ	कान्
तृतीया	केन	काभ्याम्	कैः
चतुर्थी	कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः
पञ्चमी	कस्मात्, द्	काभ्याम्	केभ्यः
षष्ठी	कस्य	कयोः	केषाम्
सप्तमी	कस्मिन्	कयोः	केषु

नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	किम्	के	कानि
द्वितीया	किम्	के	कानि
तृतीया	केन	काभ्याम्	कैः
चतुर्थी	कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः
पञ्चमी	कस्मात्, द्	काभ्याम्	केभ्यः
षष्ठी	कस्य	कयोः	केषाम्
सप्तमी	कस्मिन्	कयोः	केषु

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	का	के	काः
द्वितीया	काम्	के	काः
तृतीया	कया	क्राभ्याम्	काभिः
चतुर्थी	कस्यै	काभ्याम्	काभ्यः
पञ्चमी	कस्याः	काभ्याम्	काभ्यः
षष्ठी	कस्याः	कयोः	कासाम्
सप्तमी	कस्याम्	कयोः	कासु

धातु रूप

(1) भू सत्तायाम् (होना) परस्मैपदी।

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवति	भवतः	भवन्ति
मध्यम पुरुष	भवसि	भवथः	भवथ
उत्तम पुरुष	भवामि	भवावः	भवामः

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	बभूव	बभूवतुः	बभूवुः
मध्यम पुरुष	बभूविथ	बभूवथुः	बभूव
उत्तम पुरुष	बभूव	बभूविव	बभूविम

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भविता	भवितारौ	भवितारः
मध्यम पुरुष	भवितासि	भवितास्थः	भवितास्थ
उत्तम पुरुष	भवितास्मि	भवितास्वः	भवितास्मः

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उत्तम पुरुष	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवतु-भवतात्	भवताम्	भवन्तु
मध्यम पुरुष	भव-भवतात्	भवतम्	भवत
उत्तम पुरुष	भवानि	भवाव	भवाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अभवत्	अभवताम्	अभवन्
मध्यम पुरुष	अभवः	अभवतम्	अभवत
उत्तम पुरुष	अभवम्	अभवाव	अभवाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवेत्	भवेताम्	भवेयुः
मध्यम पुरुष	भवेः	भवेतम्	भवेत
उत्तम पुरुष	भवेयम्	भवेव	भवेम

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भूयात्	भूयास्ताम्	भूयासुः
मध्यम पुरुष	भूयाः	भूयास्तम्	भूयास्त
उत्तम पुरुष	भूयासम्	भूयास्व	भूयास्म

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अभूत्	अभूताम्	अभूवन्
मध्यम पुरुष	अभूः	अभूतम्	अभूत
उत्तम पुरुष	अभूवम्	अभूव	अभूम

लृङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अभविष्यत्	अभविष्यताम्	अभविष्यन्
मध्यम पुरुष	अभविष्यः	अभविष्यतम्	अभविष्यत
उत्तम पुरुष	अभविष्यम्	अभविष्याव	अभविष्याम

(2) एध-वृद्धौ (बढ़ना)। अकर्मक। सेट्। आत्मनेपदी।

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	एधते	एधेते	एधन्ते
मध्यम पुरुष	एधसे	एधेथे	एधध्वे
उत्तम पुरुष	एधे	एधावहे	एधामहे

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	एधाञ्चक्रे	एधाञ्चक्राते	एधाञ्चक्रिरे
मध्यम पुरुष	एधाञ्चकृषे	एधाञ्चक्राथे	एधाञ्चकृढ्वे
उत्तम पुरुष	एधाञ्चक्रे	एधाञ्चकृवहे	एधाञ्चकृमहे

एवम्- एधामास। एधाम्बभूव इत्यादि बोध्यम्।

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	एधिता	एधितारौ	एधितारः
मध्यम पुरुष	एधितासे	एधितासाथे	एधिताध्वे
उत्तम पुरुष	एधिताहे	एधितास्वहे	एधितास्महे

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	एधिष्यते	एधिष्येते	एधिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	एधिष्यसे	एधिष्येथे	एधिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	एधिष्ये	एधिष्यावहे	एधिष्यामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	एधताम्	एधेताम्	एधन्ताम्
मध्यम पुरुष	एधस्व	एधेथाम्	एधध्वम्
उत्तम पुरुष	एधै	एधावहै	एधामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ऐधत	ऐधेताम्	ऐधन्त
मध्यम पुरुष	ऐधथाः	ऐधेथाम्	ऐधध्वम्
उत्तम पुरुष	ऐधे	ऐधावहि	ऐधामहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	एधेत	एधेयाताम्	एधेरन्
मध्यम पुरुष	एधेथाः	एधेयाथाम्	एधेध्वम्
उत्तम पुरुष	एधेय	एधेवहि	एधेमहि

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	एधिषीष्ट	एधिषीयास्ताम्	एधिषीरन्
मध्यम पुरुष	एधिषीष्ठाः	एधिषीयास्थाम्	एधिषीध्वम्
उत्तम पुरुष	एधिषीय	एधिषीवहि	एधिषीमहि

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ऐधिष्ट	ऐधिषाताम्	ऐधिषत
मध्यम पुरुष	ऐधिष्टाः	ऐधिषाथाम्	ऐधिढ्वम्
उत्तम पुरुष	ऐधिषि	ऐधिष्वहि	ऐधिष्महि

लृङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ऐधिष्यत	ऐधिष्येताम्	ऐधिष्यन्त
मध्यम पुरुष	ऐधिष्यथाः	ऐधिष्येथाम्	ऐधिष्यध्वम्
उत्तम पुरुष	ऐधिष्ये	ऐधिष्यावहि	ऐधिष्यामहि

3. अद्-भक्षणे। (खाना)– परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अत्ति	अत्तः	अदन्ति
मध्यम पुरुष	अत्सि	अत्थः	अत्थ
उत्तम पुरुष	अद्मि	अद्वः	अद्मः

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जघास	जक्षतुः	जक्षुः
मध्यम पुरुष	जघसिथ	जक्षथुः	जक्ष
उत्तम पुरुष	जघास-जघस	जक्षिव	जक्षिम

आत्मनेपदी

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आद	आदतुः	आदुः
मध्यम पुरुष	आदिथ	आदथुः	आद
उत्तम पुरुष	आद	आदिव	आदिम

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अत्ता	अत्तारौ	अत्तारः
मध्यम पुरुष	अत्तासि	अत्तास्थः	अत्तास्थ
उत्तम पुरुष	अत्तास्मि	अत्तास्वः	अत्तास्मः

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अत्स्यति	अत्स्यतः	अत्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	अत्स्यसि	अत्स्यथः	अत्स्यथ
उत्तम पुरुष	अत्स्यामि	अत्स्यावः	अत्स्यामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अत्तु-अत्तात्	अत्ताम्	अदन्तु
मध्यम पुरुष	अद्धि-अत्तात्	अत्तम्	अत्त
उत्तम पुरुष	अदानि	अदाव	अदाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आदत्	आत्ताम्	आदन्
मध्यम पुरुष	आदः	आत्तम्	आत्त
उत्तम पुरुष	आदम्	आद्व	आद्म

विधिर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अद्यात्	अद्याताम्	अद्युः
मध्यम पुरुष	अद्याः	अद्यातम्	अद्यात
उत्तम पुरुष	अद्याम्	अद्याव	अद्याम

अशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अद्यात्	अद्यास्ताम्	अद्यासुः
मध्यम पुरुष	अद्याः	अद्यास्तम्	अद्यास्त
उत्तम पुरुष	अद्यासम्	अद्यास्व	अद्यास्म

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अघसत्	अघसताम्	अघसन्
मध्यम पुरुष	अघसः	अघसतम्	अघसत
उत्तम पुरुष	अघसम्	अघसाव	अघसाम

ऌङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आत्स्यत्	आत्स्यताम्	आत्स्यन्
मध्यम पुरुष	आत्स्यः	आत्स्यतम्	आत्स्यत
उत्तम पुरुष	आत्स्यम्	आत्स्याव	आत्स्याम

4. हु-दानादयोः। (देना,यज्ञ करना) परस्मैपदी ।

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जुहोति	जुहुतः	जुह्वति
मध्यम पुरुष	जुहोषि	जुहुथः	जुहुथ
उत्तम पुरुष	जुहोमि	जुहुवः	जुहुमः

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जुहवाञ्चकार	जुहवाञ्चक्रतुः	जुहवाञ्चक्रुः
मध्यम पुरुष	जुहवाञ्चकर्थ	जुहवाञ्चक्रथुः	जुहवाञ्चक्र
उत्तम पुरुष	जुहवाञ्चकार-चकर	जुहवाञ्चकृव	जुहवाञ्चकृम

(लिट्) पक्षे

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जुहाव	जुहुवतुः	जुहुवुः
मध्यम पुरुष	जुहुविथ	जुहुवथुः	जुहुव
उत्तम पुरुष	जुहाव-जुहव	जुहुविव	जुहुविम

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	होता	होतारौ	होतारः
मध्यम पुरुष	होतासि	होतास्थः	होतास्थ
उत्तम पुरुष	होतास्मि	होतास्वः	होतास्मः

ऌट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	होष्यति	होष्यतः	होष्यन्ति
मध्यम पुरुष	होष्यसि	होष्यथः	होष्यथ
उत्तम पुरुष	होष्यामि	होष्यावः	होष्यामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जुहोतु-जुहुतात्	जुहुताम्	जुह्वतु
मध्यम पुरुष	जुहुधि-जुहुतात्	जुहुतम्	जुहुत
उत्तम पुरुष	जुहवानि	जुहवाव	जुहवाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अजुहोत्	अजुहुताम्	अजुहवुः
मध्यम पुरुष	अजुहोः	अजुहुतम्	अजुहुत
उत्तम पुरुष	अजुहवम्	अजुहुव	अजुहुम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जुहुयात्	जुहुयाताम्	जुहुयुः
मध्यम पुरुष	जुहुयाः	जुहुयातम्	जुहुयात
उत्तम पुरुष	जुहुयाम्	जुहुयाव	जुहुयाम

आशीर्लिङ्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	हूयात्	हूयास्ताम्	हूयासुः
मध्यम पुरुष	हूयाः	हूयास्तम्	हूयास्त
उत्तम पुरुष	हूयासम्	हूयास्व	हूयास्म

लुङ्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अहौषीत्	अहौष्टाम्	अहौषुः
मध्यम पुरुष	अहौषीः	अहौष्टम्	अहौष्ट
उत्तम पुरुष	अहौषम्	अहौष्व	अहौष्म

ऌङ्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अहोष्यत्	अहोष्यताम्	अहोष्यन्
मध्यम पुरुष	अहोष्यः	अहोष्यतम्	अहोष्यत
उत्तम पुरुष	अहोष्यम्	अहोष्याव	अहोष्याम

5. डुदाञ्-दाने। (देना) उभयपदी

लट्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददाति	दत्तः	ददति
मध्यम पुरुष	ददासि	दत्थः	दत्थ
उत्तम पुरुष	ददामि	दद्वः	दद्मः

लिट्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददौ	ददतुः	ददुः
मध्यम पुरुष	ददिथ-ददाथ	ददथुः	दद
उत्तम पुरुष	ददौ	ददिव	ददिम

लुट्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दाता	दातारौ	दातारः
मध्यम पुरुष	दातासि	दातास्थः	दातास्थ
उत्तम पुरुष	दातास्मि	दातास्वः	दातास्मः

ऌट्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दास्यति	दास्यतः	दास्यन्ति
मध्यम पुरुष	दास्यसि	दास्यथः	दास्यथ
उत्तम पुरुष	दास्यामि	दास्यावः	दास्यामः

लोट्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददातु-दत्तात्	दत्ताम्	ददतु
मध्यम पुरुष	देहि-दत्तात्	दत्तम्	दत्त
उत्तम पुरुष	ददानि	ददाव	ददाम

लङ्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अददात्	अदत्ताम्	अददुः
मध्यम पुरुष	अददाः	अदत्तम्	अदत्त
उत्तम पुरुष	अददाम्	अदद्व	अदद्म

विधिलिङ्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दद्यात्	दद्याताम्	दद्युः
मध्यम पुरुष	दद्याः	दद्यातम्	दद्यात
उत्तम पुरुष	दद्याम्	दद्याव	दद्याम

आशीर्लिङ्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	देयात्	देयास्ताम्	देयासुः
मध्यम पुरुष	देयाः	देयास्तम्	देयास्त
उत्तम पुरुष	देयासम्	देयास्व	देयास्म

लुङ्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अदात्	अदाताम्	अदुः
मध्यम पुरुष	अदाः	अदातम्	अदात
उत्तम पुरुष	अदाम्	अदाव	अदाम

ऌङ्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अदास्यत्	अदास्यताम्	अदास्यन्
मध्यम पुरुष	अदास्यः	अदास्यतम्	अदास्यत
उत्तम पुरुष	अदास्यम्	अदास्याव	अदास्याम

आत्मनेपदपक्षे

लट्			
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दत्ते	ददाते	ददते
मध्यम पुरुष	दत्से	ददाथे	दद्ध्वे
उत्तम पुरुष	ददे	दद्वहे	दद्महे

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददे	ददाते	ददिरे
मध्यम पुरुष	ददिषे	ददाथे	ददिध्वे
उत्तम पुरुष	ददे	ददिवहे	ददिमहे

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दाता	दातारौ	दातारः
मध्यम पुरुष	दातासे	दातासाथे	दाताध्वे
उत्तम पुरुष	दाताहे	दातास्वहे	दातास्महे

ऌट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दास्यते	दास्येते	दास्यन्ते
मध्यम पुरुष	दास्यसे	दास्येथे	दास्यध्वे
उत्तम पुरुष	दास्ये	दास्यावहे	दास्यामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दत्ताम्	ददाताम्	ददताम्
मध्यम पुरुष	दत्स्व	ददाथाम्	दद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	ददै	ददावहै	ददामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अदत्त	अददाताम्	अददत
मध्यम पुरुष	अदत्थाः	अददाथाम्	अदद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अददि	अदद्वहि	अदद्महि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददीत	ददीयाताम्	ददीरन्
मध्यम पुरुष	ददीथाः	ददीयाथाम्	ददीध्वम्
उत्तम पुरुष	ददीय	ददीवहि	दहीमहि

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दासीष्ट	दासीयास्ताम्	दासीरन्
मध्यम पुरुष	दसीष्ठाः	दासीयास्थाम्	दासीध्वम्
उत्तम पुरुष	दासीय	दासीवहि	दासीमहि

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अदित	अदिषाताम्	अदिषत
मध्यम पुरुष	अदिथाः	अदिषाथाम्	अदिध्वम्
उत्तम पुरुष	अदिषि	अदिष्वहि	अदिष्महि

ऌङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अदास्यत	अदास्येताम्	अदास्यन्त
मध्यम पुरुष	अदास्यथाः	अदास्येथाम्	अदास्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अदास्ये	अदास्यावहि	अदास्यामहि

6. दिवु-क्रीडाविजिगीषाव्यवहार-द्युति-स्तुतिमोदमद-स्वप्न-कान्तिगतिषु। परस्मैपदी ।

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दीव्यति	दीव्यतः	दीव्यन्ति
मध्यम पुरुष	दीव्यसि	दीव्यथः	दीव्यथ
उत्तम पुरुष	दीव्यामि	दीव्यावः	दीव्यामः

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दिदेव	दिदिवतुः	दिदिवुः
मध्यम पुरुष	दिदेविथ	दिदिवथुः	दिदिव
उत्तम पुरुष	दिदेव	दिदिविव	दिदिविम

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	देविता	देवितारौ	देवितारः
मध्यम पुरुष	देवितासि	देवितास्थः	देवितास्थ
उत्तम पुरुष	देवितास्मि	देवितास्वः	देवितास्मः

ऌट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	देविष्यति	देविष्यतः	देविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	देविष्यसि	देविष्यथः	देविष्यथ
उत्तम पुरुष	देविष्यामि	देविष्यावः	देविष्यामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दीव्यतु-दीव्यात्	दीव्यताम्	दीव्यन्तु
मध्यम पुरुष	दीव्य-दीव्यतात्	दीव्यतम्	दीव्यत
उत्तम पुरुष	दीव्यानि	दीव्याव	दीव्याम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अदीव्यत्	अदीव्यताम्	अदीव्यन्
मध्यम पुरुष	अदीव्यः	अदीव्यतम्	अदीव्यत
उत्तम पुरुष	अदीव्यम्	अदीव्याव	अदीव्याम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दीव्येत्	दीव्येताम्	दीव्येयुः
मध्यम पुरुष	दीव्येः	दीव्येतम्	दीव्येत
उत्तम पुरुष	दीव्येयम्	दीव्येव	दीव्येम

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दीव्यात्	दीव्यास्ताम्	दीव्यासुः
मध्यम पुरुष	दीव्याः	दीव्यास्तम्	दीव्यास्त
उत्तम पुरुष	दीव्यासम्	दीव्यास्व	दीव्यास्म

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अदेवीत्	अदेविष्टाम्	अदेविषुः
मध्यम पुरुष	अदेवीः	अदेविष्टम्	अदेविष्ट
उत्तम पुरुष	अदेविषम्	अदेविष्व	अदेविष्म

लृङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अदेविष्यत्	अदेविष्यताम्	अदेविष्यन्
मध्यम पुरुष	अदेविष्यः	अदेविष्यतम्	अदेविष्यत
उत्तम पुरुष	अदेविष्यम्	अदेविष्याव	अदेविष्याम

7. षुञ्-अभिषवे- (स्नान करना) उभयपदी।

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुनोति	सुनुतः	सुन्वन्ति
मध्यम पुरुष	सुनोषि	सुनुथः	सुनुथ
उत्तम पुरुष	सुनोमि	सुनुवः-सुन्वः	सुनुमः-सुन्मः

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुषाव	सुषुवतुः	सुषुवुः
मध्यम पुरुष	सुषविथ-सुषोथ	सुषुवथुः	सुषुव
उत्तम पुरुष	सुषाव-सुषव	सुषुविव	सुषुविम

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सोता	सोतारौ	सोतारः
मध्यम पुरुष	सोतासि	सोतास्थः	सोतास्थ
उत्तम पुरुष	सोतास्मि	सोतास्वः	सोतास्मः

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सोष्यति	सोष्यतः	सोष्यन्ति
मध्यम पुरुष	सोष्यसि	सोष्यथः	सोष्यथ
उत्तम पुरुष	सोष्यामि	सोष्यावः	सोष्यामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुनोतु-सुनुतात्	सुनुताम्	सुन्वन्तु
मध्यम पुरुष	सुनु-सुनुतात्	सुनुतम्	सुनुत
उत्तम पुरुष	सुनवानि	सुनवाव	सुनवाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	असुनोत्	असुनुताम्	असुन्वन्
मध्यम पुरुष	असुनोः	असुनुतम्	असुनुत
उत्तम पुरुष	असुनवम्	असुनुव-असुन्व	असुनुम-असुन्म

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुनुयात्	सुनुयाताम्	सुनुयुः
मध्यम पुरुष	सुनुयाः	सुनुयातम्	सुनुयात
उत्तम पुरुष	सुनुयाम्	सुनुयाव	सुनुयाम

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सूयात्	सूयास्ताम्	सूयासुः
मध्यम पुरुष	सूयाः	सूयास्तम्	सूयास्त
उत्तम पुरुष	सूयासम्	सूयास्व	सूयास्म

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	असावीत्	असाविष्टाम्	असाविषुः
मध्यम पुरुष	असावीः	असाविष्टम्	असाविष्ट
उत्तम पुरुष	असाविषम्	असाविष्व	असाविष्म

लृङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	असोष्यत्	असोष्यताम्	असोष्यन्
मध्यम पुरुष	असोष्यः	असोष्यतम्	असोष्यत
उत्तम पुरुष	असोष्यम्	असोष्याव	असोष्याम

आत्मनेपदपक्षे

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुनुते	सुन्वाते	सुन्वते
मध्यम पुरुष	सुनुषे	सुन्वाथे	सुनुध्वे
उत्तम पुरुष	सुन्वे	सुनुवहे-सुन्वहे	सुनुमहे-सुन्महे

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुषुवे	सुषुवाते	सुषुविरे
मध्यम पुरुष	सुषुविषे	सुषुवाथे	सुषुविध्वे-ढ्वे
उत्तम पुरुष	सुषुवे	सुषुविवहे	सुषुविमहे

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सोता	सोतारौ	सोतारः
मध्यम पुरुष	सोतासे	सोतासाथे	सोताध्वे
उत्तम पुरुष	सोताहे	सोतास्वहे	सोतास्महे

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सोष्यते	सोष्येते	सोष्यन्ते
मध्यम पुरुष	सोष्यसे	सोष्येथे	सोष्यध्वे
उत्तम पुरुष	सोष्ये	सोष्यावहे	सोष्यामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुनुताम्	सुन्वाताम्	सुन्वताम्
मध्यम पुरुष	सुनुष्व	सुन्वाथाम्	सुनुध्वम्
उत्तम पुरुष	सुनवै	सुनवावहै	सुनवामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	असुनुत	असुन्वाताम्	असुन्वत
मध्यम पुरुष	असुनुथाः	असुन्वाथाम्	असुनुध्वम्
उत्तम पुरुष	असुन्वि	असुनुवहि-असुन्वहि	असुनुमहि-असुन्महि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुन्वीत	सुन्वीयाताम्	सुन्वीरन्
मध्यम पुरुष	सुन्वीथाः	सुन्वीयाथाम्	सुन्वीध्वम्
उत्तम पुरुष	सुन्वीय	सुन्वीवहि	सुन्वीमहि

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सोषीष्ट	सोषीयास्ताम्	सोषीरन्
मध्यम पुरुष	सोषीष्ठाः	सोषीयास्थाम्	सोषीध्वम्
उत्तम पुरुष	सोषीय	सोषीवहि	सोषीमहि

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	असोष्ट	असोषाताम्	असोषत
मध्यम पुरुष	असोष्ठाः	असोषाथाम्	असोढ्वम्
उत्तम पुरुष	असोषि	असोष्वहि	असोष्महि

लृङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	असोष्यत	असोष्येताम्	असोष्यन्त
मध्यम पुरुष	असोष्यथाः	असोष्येथाम्	असोष्यध्वम्
उत्तम पुरुष	असोष्ये	असोष्यावहि	असोष्यामहि

8. तुद-व्यथने।

(दुःख देना, पीड़ा करना, घाव करना।) **उभयपदी**

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तुदति	तुदतः	तुदन्ति
मध्यम पुरुष	तुदसि	तुदथः	तुदथ
उत्तम पुरुष	तुदामि	तुदावः	तुदामः

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तुतोद	तुतुदतुः	तुतुदुः
मध्यम पुरुष	तुतोदिथ	तुतुदथुः	तुतुद
उत्तम पुरुष	तुतोद	तुतुदिव	तुतुदिम

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तोत्ता	तोत्तारौ	तोत्तारः
मध्यम पुरुष	तोत्तासि	तोत्तास्थः	तोत्तास्थ
उत्तम पुरुष	तोत्तास्मि	तोत्तास्वः	तोत्तास्मः

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तोत्स्यति	तोत्स्यतः	तोत्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	तोत्स्यसि	तोत्स्यथः	तोत्स्यथ
उत्तम पुरुष	तोत्स्यामि	तोत्स्यावः	तोत्स्यामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तुदतु-तुदतात्	तुदताम्	तुदन्तु
मध्यम पुरुष	तुद-तुदतात्	तुदतम्	तुदत
उत्तम पुरुष	तुदानि	तुदाव	तुदाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतुदत्	अतुदताम्	अतुदन्
मध्यम पुरुष	अतुदः	अतुदतम्	अतुदत
उत्तम पुरुष	अतुदम्	अतुदाव	अतुदाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तुदेत्	तुदेताम्	तुदेयुः
मध्यम पुरुष	तुदेः	तुदेतम्	तुदेत
उत्तम पुरुष	तुदेयम्	तुदेव	तुदेम

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तुद्यात्	तुद्यास्ताम्	तुद्यासुः
मध्यम पुरुष	तुद्याः	तुद्यास्तम्	तुद्यास्त
उत्तम पुरुष	तुद्यासम्	तुद्यास्व	तुद्यास्म

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतौत्सीत्	अतौत्ताम्	अतौत्सुः
मध्यम पुरुष	अतौत्सीः	अतौत्तम्	अतौत्त
उत्तम पुरुष	अतौत्सम्	अतौत्स्व	अतौत्स्म

लृङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतोत्स्यत्	अतोत्स्यताम्	अतोत्स्यन्
मध्यम पुरुष	अतोत्स्यः	अतोत्स्यतम्	अतोत्स्यत
उत्तम पुरुष	अतोत्स्यम्	अतोत्स्याव	अतोत्स्याम

आत्मनेपदपक्षे

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तुदते	तुदेते	तुदन्ते
मध्यम पुरुष	तुदसे	तुदेथे	तुदध्वे
उत्तम पुरुष	तुदे	तुदावहे	तुदामहे

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तुतुदे	तुतुदाते	तुतुदिरे
मध्यम पुरुष	तुतुदिषे	तुतुदाथे	तुतुदिध्वे
उत्तम पुरुष	तुतुदे	तुतुदिवहे	तुतदिमहे

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तोत्ता	तोत्तारौ	तोत्तारः
मध्यम पुरुष	तोत्तासे	तोत्तासाथे	तोत्ताध्वे
उत्तम पुरुष	तोत्ताहे	तोत्तास्वहे	तोत्तास्महे

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तोत्स्यते	तोत्स्येते	तोत्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	तोत्स्यसे	तोत्स्येथे	तोत्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	तोत्स्ये	तोत्स्यावहे	तोत्स्यमहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तुदताम्	तुदेताम्	तुदन्ताम्
मध्यम पुरुष	तुदस्व	तुदेथाम्	तुदध्वम्
उत्तम पुरुष	तुदै	तुदावहै	तुदामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतुदत	अतुदेताम्	अतुदन्त
मध्यम पुरुष	अतुदथाः	अतुदेथाम्	अतुदध्वम्
उत्तम पुरुष	अतुदे	अतुदावहि	अतुदामहि

वि.लि.

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तुदेत	तुदेयाताम्	तुदेरन्
मध्यम पुरुष	तुदेथाः	तुदेयाथाम्	तुदेध्वम्
उत्तम पुरुष	तुदेय	तुदेवहि	तुदेमहि

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तुत्सीष्ट	तुत्सीयास्ताम्	तुत्सीरन्
मध्यम पुरुष	तुत्सीष्ठाः	तुत्सीयास्थाम्	तुत्सीध्वम्
उत्तम पुरुष	तुत्सीय	तुत्सीवहि	तुत्सीमहि

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतुत्त	अतुत्साताम्	अतुत्सत
मध्यम पुरुष	अतुत्थाः	अतुत्साथाम्	अतुद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अतुत्सि	अतुत्स्वहि	अतुत्स्महि

लृङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतोत्स्यत	अतोत्स्येताम्	अतोत्स्यन्त
मध्यम पुरुष	अतोत्स्यथाः	अतोस्येथाम्	अतोत्स्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अतोत्स्ये	अतोत्स्यावहि	अतोत्स्यामहि

९. रुधिर्-आवरण।

(रोकना, घेर लेना, घेरना)। उभयपदी ।

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुणद्धि	रुन्द्धः	रुन्धन्ति
मध्यम पुरुष	रुणत्सि	रुन्द्धः	रुन्द्ध
उत्तम पुरुष	रुणध्मि	रुन्ध्वः	रुन्ध्मः

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुरोध	रुरुधतुः	रुरुधुः
मध्यम पुरुष	रुरोधिथ	रुरुधथुः	रुरुध
उत्तम पुरुष	रुरोध	रुरुधिव	रुरुधिम

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रोद्धा	रोद्धारौ	रोद्धारः
मध्यम पुरुष	रोद्धासि	रोद्धास्थः	रोद्धास्थ
उत्तम पुरुष	रोद्धास्मि	रोद्धास्वः	रोद्धास्मः

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रोत्स्यति	रोत्स्यतः	रोत्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	रोत्स्यसि	रोत्स्यथः	रोत्स्यथ
उत्तम पुरुष	रोत्स्यामि	रोत्स्यावः	रोत्स्यामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुणद्धु-रुन्धात्	रुन्द्धाम्	रुन्धन्तु
मध्यम पुरुष	रुन्द्धि-रुन्धात्	रुन्द्धम्	रुन्द्ध
उत्तम पुरुष	रुणधानि	रुणधाव	रुणधाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अरुणत्-द्	अरुन्द्धाम्	अरुन्धन्
मध्यम पुरुष	अरुणः, त्	अरुन्द्धम्	अरुन्द्ध
उत्तम पुरुष	अरुणधम्	अरुन्ध्व	अरुन्ध्म

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुन्ध्यात्	रुन्ध्याताम्	रुन्ध्युः
मध्यम पुरुष	रुन्ध्याः	रुन्ध्यातम्	रुन्ध्यात
उत्तम पुरुष	रुन्ध्याम्	रुन्ध्याव	रुन्ध्याम

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुध्यात्	रुध्यास्ताम्	रुध्यासुः
मध्यम पुरुष	रुध्याः	रुध्यास्तम्	रुध्यास्त
उत्तम पुरुष	रुध्यासम्	रुध्यास्व	रुध्यास्म

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अरुधत्	अरुधताम्	अरुधन्
मध्यम पुरुष	अरुधः	अरुधतम्	अरुधत
उत्तम पुरुष	अरुधम्	अरुधाव	अरुधाम

अथवा (लुङ्) पक्षे

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अरौत्सीत्	अरौद्धाम्	अरौत्सुः
मध्यम पुरुष	अरौत्सीः	अरौद्धम्	अरौद्ध
उत्तम पुरुष	अरौत्सम्	अरौत्स्व	अरौत्स्म

ऌङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अरोत्स्यत्	अरोत्स्यताम्	अरोत्स्यन्
मध्यम पुरुष	अरोत्स्यः	अरोत्स्यतम्	अरोत्स्यत
उत्तम पुरुष	अरोत्स्यम्	अरोत्स्याव	अरोत्स्याम

आत्मनेपदपक्षे

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुन्द्धे	रुन्धाते	रुन्धते
मध्यम पुरुष	रुन्त्से	रुन्धाथे	रुन्ध्वे
उत्तम पुरुष	रुन्धे	रुन्ध्वहे	रुन्ध्महे

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुरुधे	रुरुधाते	रुरुधिरे
मध्यम पुरुष	रुरुधिषे	रुरुधाथे	रुरुधिध्वे
उत्तम पुरुष	रुरुधे	रुरुधिवहे	रुरुधिमहे

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रोद्धा	रोद्धारौ	रोद्धारः
मध्यम पुरुष	रोद्धासे	रोद्धासाथे	रोद्धाध्वे
उत्तम पुरुष	रोद्धाहे	रोद्धास्वहे	रोद्धास्महे

ऌट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रोत्स्यते	रोत्स्येते	रोत्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	रोत्स्यसे	रोत्स्येथे	रोत्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	रोत्स्ये	रोत्स्यावहे	रोत्स्यामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुन्धाम्	रुन्धाताम्	रुन्धताम्
मध्यम पुरुष	रुन्त्स्व	रुन्धाथाम्	रुन्ध्वम्
उत्तम पुरुष	रुणधै	रुणधावहै	रुणधामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अरुन्द्ध	अरुन्धाताम्	अरुन्धत
मध्यम पुरुष	अरुन्द्धाः	अरुन्धाथाम्	अरुन्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अरुन्धि	अरुन्ध्वहि	अरुन्ध्महि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुन्धीत	रुन्धीयाताम्	रुन्धीरन्
मध्यम पुरुष	रुन्धीथाः	रुन्धीयाथाम्	रुन्धीध्वम्
उत्तम पुरुष	रुन्धीय	रुन्धीवहि	रुन्धीमहि

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुत्सीष्ट	रुत्सीयास्ताम्	रुत्सीरन्
मध्यम पुरुष	रुत्सीष्ठाः	रुत्सीयास्थाम्	रुत्सीध्वम्
उत्तम पुरुष	रुत्सीय	रुत्सीवहि	रुत्सीमहि

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अरुद्ध	अरुत्साताम्	अरुत्सत
मध्यम पुरुष	अरुद्धाः	अरुत्साथाम्	अरुद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अरुत्सि	अरुत्स्वहि	अरुत्स्महि

ऌङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अरोत्स्यत	अरोत्स्येताम्	अरोत्स्यन्त
मध्यम पुरुष	अरोत्स्यथाः	अरोत्स्येथाम्	अरोत्स्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अरोत्स्ये	अरोत्स्यावहि	अरोत्स्यामहि

10. तनु-विस्तारे।

(विस्तारः दैर्घ्यम्)। फैलाना, बढ़ाना। उभयपदी।

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनोति	तनुतः	तन्वन्ति
मध्यम पुरुष	तनोषि	तनुथः	तनुथ
उत्तम पुरुष	तनोमि	तनुवः-तन्वः	तनुमः-तन्मः

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ततान	तेनतुः	तेनुः
मध्यम पुरुष	तेनिथ	तेनथुः	तेन
उत्तम पुरुष	ततान-ततन	तेनिव	तेनिम

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनिता	तनितारौ	तनितारः
मध्यम पुरुष	तनितासि	तनितास्थः	तनितास्थ
उत्तम पुरुष	तनितास्मि	तनितास्वः	तनितास्मः

ऌट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनिष्यति	तनिष्यतः	तनिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	तनिष्यसि	तनिष्यथः	तनिष्यथ
उत्तम पुरुष	तनिष्यामि	तनिष्यावः	तनिष्यामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनोतु-तनुतात्	तनुताम्	तन्वन्तु
मध्यम पुरुष	तनु-तनुतात्	तनुतम्	तनुत
उत्तम पुरुष	तनवानि	तनवाव	तनवाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतनोत्	अतनुताम्	अतन्वन्
मध्यम पुरुष	अतनोः	अतनुतम्	अतनुत
उत्तम पुरुष	अतनवम्	अतन्व,अतनुव	अतनुम-अतन्म

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनुयात्	तनुयाताम्	तनुयुः
मध्यम पुरुष	तनुयाः	तनुयातम्	तनुयात
उत्तम पुरुष	तनुयाम्	तनुयाव	तनुयाम

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तन्यात्	तन्यास्ताम्	तन्यासुः
मध्यम पुरुष	तन्याः	तन्यास्तम्	तन्यास्त
उत्तम पुरुष	तन्यासम्	तन्यास्व	तन्यास्म

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतानीत्	अतानिष्टाम्	अतानिषुः
मध्यम पुरुष	अतानीः	अतानिष्टम्	अतानिष्ट
उत्तम पुरुष	अतानिषम्	अतानिष्व	अतानिष्म

ऌङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतनिष्यत्	अतनिष्यताम्	अतनिष्यन्
मध्यम पुरुष	अतनिष्यः	अतनिष्यतम्	अतनिष्यत
उत्तम पुरुष	अतनिष्यम्	अतनिष्याव	अतनिष्याम

आत्मनेपदपक्षे

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनुते	तन्वाते	तन्वते
मध्यम पुरुष	तनुषे	तन्वाथे	तनुध्वे
उत्तम पुरुष	तन्वे	तन्वहे-तनुवहे	तन्महे-तनुमहे

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तेने	तेनाते	तेनिरे
मध्यम पुरुष	तेनिषे	तेनाथे	तेनिध्वे
उत्तम पुरुष	तेने	तेनिवहे	तेनिमहे

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनिता	तनितारौ	तनितारः
मध्यम पुरुष	तनितासे	तनितासाथे	तनिताध्वे
उत्तम पुरुष	तनिताहे	तनितास्वहे	तनितास्महे

ऌट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनिष्यते	तनिष्येते	तनिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	तनिष्यसे	तनिष्येथे	तनिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	तनिष्ये	तनिष्यावहे	तनिष्यामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनुताम्	तन्वाताम्	तन्वताम्
मध्यम पुरुष	तनुष्व	तन्वाथाम्	तनुध्वम्
उत्तम पुरुष	तनवै	तनवावहै	तनवामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतनुत	अतन्वाताम्	अतन्वत
मध्यम पुरुष	अतनुथाः	अतन्वाथाम्	अतनुध्वम्
उत्तम पुरुष	अतन्वि	अतन्वहि-अतनुवहि	अतन्महि-अतनुमहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तन्वीत	तन्वीयाताम्	तन्वीरन्
मध्यम पुरुष	तन्वीथाः	तन्वीयाथाम्	तन्वीध्वम्
उत्तम पुरुष	तन्वीय	तन्वीवहि	तन्वीमहि

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनिषीष्ट	तनिषीयास्ताम्	तनिषीरन्
मध्यम पुरुष	तनिषीष्ठाः	तनिषीयास्थाम्	तनिषीध्वम्
उत्तम पुरुष	तनिषीय	तनिषीवहि	तनिषीमहि

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतत-अतनिष्ट	अतनिषाताम्	अतनिषत
मध्यम पुरुष	अतथाःअतनिष्ठाः	अतनिषाथाम्	अतनिढ्वम्-अतनिध्वम्
उत्तम पुरुष	अतनिषि	अतनिष्वहि	अतनिष्महि

ऌङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतनिष्यत	अतनिष्येताम्	अतनिष्यन्त
मध्यम पुरुष	अतनिष्यथाः	अतनिष्येथाम्	अतनिष्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अतनिष्ये	अतनिष्यावहि	अतनिष्यामहि

11. डुक्रीञ् —द्रव्यविनिमये।
(खरीदना, बदले में लेना)। उभयपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीणाति	क्रीणीतः	क्रीणन्ति
मध्यम पुरुष	क्रीणासि	क्रीणीथः	क्रीणीथ
उत्तम पुरुष	क्रीणामि	क्रीणीवः	क्रीणीमः

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चिक्राय	चिक्रियतुः	चिक्रियुः
मध्यम पुरुष	चिक्रयिथ-चिक्रेथ	चिक्रियथुः	चिक्रिय
उत्तम पुरुष	चिक्राय- चिक्रय	चिक्रियिव	चिक्रियिम

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रेता	क्रेतारौ	क्रेतारः
मध्यम पुरुष	क्रेतासि	क्रेतास्थः	क्रेतास्थ
उत्तम पुरुष	क्रितास्मि	क्रेतास्वः	क्रेतास्मः

ऌट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रेष्यति	क्रेष्यतः	क्रेष्यन्ति
मध्यम पुरुष	क्रेष्यसि	क्रेष्यथः	क्रेष्यथ
उत्तम पुरुष	क्रेष्यामि	क्रेष्यावः	क्रेष्यामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीणातु-क्रीणीतात्	क्रीणीताम्	क्रीणन्तु
मध्यम पुरुष	क्रीणीहि-क्रीणीतात्	क्रीणीतम्	क्रीणीत
उत्तम पुरुष	क्रीणानि	क्रीणाव	क्रीणाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अक्रीणात्	अक्रीणीताम्	अक्रीणन्
मध्यम पुरुष	अक्रीणाः	अक्रीणीतम्	अक्रीणीत
उत्तम पुरुष	अक्रीणाम्	अक्रीणीव	अक्रीणीम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीणीयात्	क्रीणीयाताम्	क्रीणीयुः
मध्यम पुरुष	क्रीणीयाः	क्रीणीयातम्	क्रीणीयात
उत्तम पुरुष	क्रीणीयाम्	क्रीणीयाव	क्रीणीयाम

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीयात्	क्रीयास्ताम्	क्रीयासुः
मध्यम पुरुष	क्रीयाः	क्रीयास्तम्	क्रीयास्त
उत्तम पुरुष	क्रीयासम्	क्रीयास्व	क्रीयास्म

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अक्रैषीत्	अक्रैष्टाम्	अक्रैषुः
मध्यम पुरुष	अक्रैषीः	अक्रैष्टम्	अक्रैष्ट
उत्तम पुरुष	अक्रैषम्	अक्रैष्व	अक्रैष्म

ऌङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अक्रेष्यत्	अक्रेष्यताम्	अक्रेष्यन्
मध्यम पुरुष	अक्रेष्यः	अक्रेष्यतम्	अक्रेष्यत
उत्तम पुरुष	अक्रेष्यम्	अक्रेष्याव	अक्रेष्याम

आत्मनेपदे पक्षे

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीणीते	क्रीणाते	क्रीणते
मध्यम पुरुष	क्रीणीषे	क्रीणाथे	क्रीणीध्वे
उत्तम पुरुष	क्रीणे	क्रीणीवहे	क्रीणीमहे

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चिक्रिये	चिक्रियाते	चिक्रियिरे
मध्यम पुरुष	चिक्रियिषे	चिक्रियाथे	चिक्रियिध्वे
उत्तम पुरुष	चिक्रिये	चिक्रियिवहे	चिक्रियिमहे

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रेता	क्रेतारौ	क्रेतारः
मध्यम पुरुष	क्रेतासे	क्रेतासाथे	क्रेताध्वे
उत्तम पुरुष	क्रेताहे	क्रेतास्वहे	क्रेतास्महे

ऌट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रेष्यते	क्रेष्येते	क्रेष्यन्ते
मध्यम पुरुष	क्रेष्यसे	क्रेष्येथे	क्रेष्यध्वे
उत्तम पुरुष	क्रेष्ये	क्रेष्यावहे	क्रेष्यामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीणीताम्	क्रीणाताम्	क्रीणताम्
मध्यम पुरुष	क्रीणीष्व	क्रीणाथाम्	क्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	क्रीणै	क्रीणावहै	क्रीणामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अक्रीणीत	अक्रीणाताम्	अक्रीणत
मध्यम पुरुष	अक्रीणीथाः	अक्रीणाथाम्	अक्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	अक्रीणि	अक्रीणीवहि	अक्रीणीमहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीणीत	क्रीणीयाताम्	क्रीणीरन्
मध्यम पुरुष	क्रीणीथाः	क्रीणीयाथाम्	क्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	क्रीणीय	क्रीणीवहि	क्रीणमहि

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रेषीष्ट	क्रेषीयास्ताम्	क्रेषीरन्
मध्यम पुरुष	क्रेषीष्ठाः	क्रेषीयास्थाम्	क्रेषीढ्वम्
उत्तम पुरुष	क्रेषीय	क्रेषीवहि	क्रेषीमहि

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अक्रेष्ट	अक्रेषाताम्	अक्रेषत
मध्यम पुरुष	अक्रेष्ठाः	अक्रेषाथाम्	अक्रेढ्वम्
उत्तम पुरुष	अक्रेषि	अक्रेष्वहि	अक्रेष्महि

ऌङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अक्रेष्यत	अक्रेष्येताम्	अक्रेष्यन्त
मध्यम पुरुष	अक्रेष्यथाः	अक्रेष्येथाम्	अक्रेष्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अक्रेष्ये	अक्रेष्यावहि	अक्रेष्यामहि

12. चुर-स्तेये। (चोरी करना) उभयपदी ।

परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयति	चोरयतः	चोरयन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयसि	चोरयथः	चोरयथ
उत्तम पुरुष	चोरयामि	चोरयावः	चोरयामः

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयाञ्चकार	चोरयाञ्चक्रतुः	चोरयाञ्चक्रुः
मध्यम पुरुष	चोरयाञ्चकर्थ	चोरयाञ्चक्रथुः	चोरयाञ्चक्र
उत्तम पुरुष	चोरयाञ्चकार	चोरयाञ्चकृव	चोरयाञ्चकृम

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयिता	चोरयितारौ	चोरयितारः
मध्यम पुरुष	चोरयितासि	चोरयितास्थः	चोरयितास्थ
उत्तम पुरुष	चोरयितास्मि	चोरयितास्व	चोरयितास्म

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयिष्यति	चोरयिष्यतः	चोरयिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसि	चोरयिष्यथः	चोरयिष्यथ
उत्तम पुरुष	चोरयिष्यामि	चोरयिष्यावः	योरयिष्यामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयतु-चोरयतात्	चोरयताम्	चोरयन्तु
मध्यम पुरुष	चोरय-चोरयतात्	चोरयतम्	चोरयत
उत्तम पुरुष	चोरयाणि	चोरयाव	चोरयाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अचोरयत्	अचोरयताम्	अचोरयन्
मध्यम पुरुष	अचोरयः	अचोरयतम्	अचोरयत
उत्तम पुरुष	अचोरयम्	अचोरयाव	अचोरयाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयेत्	चोरयेताम्	चोरयेयुः
मध्यम पुरुष	चोरयेः	चोरयेतम्	चोरयेत
उत्तम पुरुष	चोरयेयम्	चोरयेव	चोरयेम

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोर्यात्	चोर्यास्ताम्	चोर्यासुः
मध्यम पुरुष	चोर्याः	चोर्यास्तम्	चोर्यास्त
उत्तम पुरुष	चोर्यासम्	चोर्यास्व	चोर्यास्म

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अचूचुरत्	अचूचुरताम्	अचूचुरन्
मध्यम पुरुष	अचूचुरः	अचूचुरतम्	अचूचुरत
उत्तम पुरुष	अचूचुरम्	अचूचुराव	अचूचुराम

लृङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अचोरयिष्यत्	अचोरयिष्यताम्	अचोरयिष्यन्
मध्यम पुरुष	अचोरयिष्यः	अचोरयिष्यतम्	अचोरयिष्यत
उत्तम पुरुष	अचोरयिष्यम्	अचोरयिष्याव	अचोरयिष्याम

आत्मनेपदपक्षे

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयते	चोरयेते	चोरयन्ते
मध्यम पुरुष	चोरयसे	चोरयेथे	चोरयध्वे
उत्तम पुरुष	चोरये	चोरयावहे	चोरयामहे

लिट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयाञ्चक्रे	चोरयाञ्चक्राते	चोरयाञ्चक्रिरे
मध्यम पुरुष	चोरयाञ्चकृषे	चोरयाञ्चक्राथे	चोरयाञ्चकृढ्वे
उत्तम पुरुष	चोरयाञ्चक्रे	चोरयाञ्चकृवहे	चोरयाञ्चकृमहे

लुट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयिता	चोरयितारौ	चोरयितारः
मध्यम पुरुष	चोरयितासे	चोरयितासाथे	चोरयिताध्वे
उत्तम पुरुष	चोरयिताहे	चोरयितास्वहे	चोरयितास्महे

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयिष्यते	चोरयिष्येते	चोरयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसे	चोरयिष्येथे	चोरयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	चोरयिष्ये	चोरयिष्यावहे	चोरयिष्यामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयताम्	चोरयेताम्	चोरयन्ताम्
मध्यम पुरुष	चोरयस्व	चोरयेथाम्	चोरयध्वम्
उत्तम पुरुष	चोरयै	चोरयावहै	चोरयामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अचोरयत	अचोरयेताम्	अचोरयन्त
मध्यम पुरुष	अचोरयथाः	अचोरयेथाम्	अचोरयध्वम्
उत्तम पुरुष	अचोरये	अचोरयावहि	अचोरयामहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयेत	चोरयेयाताम्	चोरयेरन्
मध्यम पुरुष	चोरयेथाः	चोरयेयाथाम्	चोरयेध्वम्
उत्तम पुरुष	चोरयेय	चोरयेवहि	चोरयेमहि

आशीर्लिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयिषीष्ट	चोरयिषीयास्ताम्	चोरयिषीरन्
मध्यम पुरुष	चोरयिषीष्ठाः	चोरयिषीयास्थाम्	चोरयिषीध्वम्
उत्तम पुरुष	चोरयिषीय	चोरयिषीवहि	चोरयिषीमहि

लुङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अचूचुरत	अचूचुरेताम्	अचूचुरन्त
मध्यम पुरुष	अचूचुरथाः	अचूचुरेथाम्	अचूचुरध्वम्
उत्तम पुरुष	अचूचुरे	अचूचुरावहि	अचूचुरामहि

लृङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अचोरयिष्यत	अचोरयिष्येताम्	अचोरयिष्यन्त
मध्यम पुरुष	अचोरयिष्यथाः	अचोरयिष्येथाम्	अचोरयिष्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अचोरयिष्ये	अचोरयिष्यावहि	अचोरयिष्यामहि

4. भाषाविज्ञान

भाषा की उत्पत्ति

- 'भाषा की उत्पत्ति' यह विषय अत्यन्त उलझा हुआ है। इस विषय पर विद्वानों ने जो विचार प्रस्तुत किये हैं, वे अपूर्ण और अनिर्णयात्मक हैं।
- भाषा उत्पत्ति के लिए दो बातें अनिवार्य हैं-

1. वाग्यन्त्र से ध्वनन या वर्णोच्चारण की क्षमता प्राप्त करना।
2. उच्चरित ध्वनि का, अर्थ के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का प्रारम्भ।

- प्रथम बात प्रायः सभी पशु-पक्षियों एवं अन्य जीवों में प्राप्त होती है।
- पशु- पक्षियों में स्पष्ट उच्चारण या व्यक्त वाक् का अभाव है, अतः वे स्पष्ट रूप से बोलनें में असमर्थ हैं।
- मनुष्य को बोलने की क्षमता जन्म से प्राप्त है, अतः वह जन्म से वाग्यन्त्र या वागिन्द्रिय का प्रयोग करता है।
- दूसरी बात में शब्द और अर्थ के सम्बन्ध जानने की जिज्ञासा ही मुख्य विषय है।
- भाषा-उत्पत्ति विषयक समस्त सिद्धान्त अनुमान पर आश्रित हैं एवं विज्ञान अनुमान पर आश्रित न होकर तथ्यों पर निर्भर होता है।
- यह दर्शन, मानव-विज्ञान या समाज-विज्ञान का विषय होने के कारण भाषा-विज्ञान इस दिशा में अपनी असमर्थता प्रकट करता है।
- सामान्य लोकप्रियता का विषय होने से इसके प्रस्तावित सिद्धान्तों का वर्णन किया जा रहा है-

1. दिव्योत्पत्ति-सिद्धान्त

- यह सबसे प्राचीन मत है। इसके अनुसार- जिस प्रकार परमात्मा ने मानव- सृष्टि की, उसी प्रकार मानव के लिए एक परिष्कृत भाषा भी दी।
- दैवीय शक्ति ही इस सिद्धान्त का मूल है। उसी दैवी शक्ति ने ही सृष्टि के प्रारम्भ में ही वेदों का ज्ञान दिया, जिससे मानव अपना क्रिया-कलाप चला सका।
- वेदों, उपनिषदों तथा अनेक दर्शन ग्रन्थों में यह बात प्रमाणित है कि ईश्वर से ही वेदों की उत्पत्ति हुई।

समीक्षा- इस सिद्धान्त पर निम्न आपत्तियाँ की गयी हैं।

1. यह सिद्धान्त तर्क या विज्ञान संगत नहीं है, केवल आस्था पर निर्भर है।
2. यदि भाषा ईश्वर-प्रदत्त होती तो सृष्टि में भाषा भेद नहीं होता।
3. जर्मन् विद्वान् **हेर्डेर** ने लिखा है कि ''यदि भाषा ईश्वरकृत होती तो यह अधिक सुव्यवस्थित और तर्कसंगत होगी, अधिकांश भाषाएं अव्यवस्थित और त्रुटिपूर्ण हैं।''

2. सङ्केत-सिद्धान्त

- इसे **निर्णयवाद**, **निर्णयसिद्धान्त** तथा **स्वीकारवाद** आदि अनेक नामों से जाना जाता है।
- इस सिद्धान्त के प्रवर्तक 18वीं शताब्दी के फ्रेंच विद्वान् **'रूसो'** हैं।
- इनके अनुसार 'व्यक्ति प्रारम्भ में सङ्केतों के माध्यम से अपना अभिप्राय व्यक्त करता था तथा बाद में सामूहिक रूप से वस्तुओं की संज्ञा दी गयी।'
- इसे **'सामाजिक-समझौता'** कहा जा सकता है।

समीक्षा- इस सिद्धान्त की कुछ न्यूनताएं हैं-

1. बिना भाषा के सभा का आयोजन और विचार-विनिमय कैसे हुआ?
2. सङ्केत शब्दों के निर्माण के लिए क्या आधार था? किसी व्यक्ति का सुझाव मान लिया गया या फिर सबके अलग-अलग मत थे?
3. यदि भाषा के बिना सभा का आयोजन, सङ्केत निर्माण एवं सङ्केतों की सामाजिक सम्पुष्टि हो सकती है, तो भाषा की क्या आवश्यकता रह जाती है।

अतः यह सिद्धान्त मान्य नहीं है।

3. रणन-सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त को **धातु-सिद्धान्त, अनुकरण-सिद्धान्त, अनुरणनमूलकतावाद, अनुरणात्मक-अनुकरण, डिंग-डांगवाद** आदि नामों से निर्दिष्ट किया गया है।
- इस सिद्धान्त के मूल प्रवर्तक **'प्लेटो'** थे तथा इसको **'हेस'** और **'मैक्समूलर'** ने व्यवस्थित किया।
- इस मत के अनुसार 'प्रकृति में एक सामान्य नियम है किसी वस्तु पर चोट मारने पर एक विशेष ध्वनि होती है। यह ध्वनि ही उसकी विशेषता है। इसी ध्वनि को रणन कहा जाता है।

समीक्षा-

1. इस सिद्धान्त में इतने दोष थे कि बाद में मैक्समूलर ने इसे छोड़ दिया।
2. इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि किस वस्तु से मस्तिष्क में कौन-सी ध्वनि झंकृत हुई।

3. यह सिद्धान्त शब्द और अर्थ में रहस्यात्मक स्वाभाविक सम्बन्ध मानता है। शब्द और अर्थ का साङ्केतिक सम्बन्ध है न कि स्वाभाविक यह मत अस्वीकृत होने पर भी रोचकता के लिए प्रचलित है।

4. ध्वन्यनुकरण-सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त के अन्य नाम भी हैं, जैसे- **अनुकरण-सिद्धान्त, ध्वन्यात्मकानुकरण-सिद्धान्त, अनुकरणमूलकतावाद, शब्दानुकरणवाद, भों-भों-वाद** आदि।
- कुत्ते की ध्वनि को अंग्रेजी में BOW-WOW कहते हैं, अतः हिन्दी में यह **भों-भों-वाद** हुआ।
- इस सिद्धान्त का अभिमत है कि प्राकृतिक वस्तुओं,पशु-पक्षियों आदि की ध्वनि के अनुकरण पर विभिन्न वस्तुओं के नाम रखे जाते हैं। जो वस्तु जैसी ध्वनि करती है, उसका वैसा ही नाम पड़ता है। जैसे-काँव-काँव से काक या कौआ, कू-कू से कोयल, झर-झर से झरना आदि।

समीक्षा-

1. विश्व की भाषाओं में ध्वन्यनुकरण वाले शब्दों की संख्या एक प्रतिशत भी नहीं है। अतः यह भाषोत्पत्ति सम्बन्धी उचित समाधान नहीं है।
2. **प्रो0 रेनन** की आपत्ति है, यदि मनुष्य पक्षियों जैसे तुच्छ जीवों के शब्दों का अनुकरण करके भाषा बना सकता है, तो वह पशु-पक्षियों से निकृष्ट सिद्ध होता है।
3. कुछ भाषाओं में ध्वन्यनुकरण-शब्द हैं ही नहीं। जैसे- उत्तरी अमेरिका की **'अथवस्कन'** भाषा।

आंशिक रूप से स्वीकार्य होते हुए भी यह मत सम्पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं हैं।

5. आवेग-सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त को **'मनोभावाभिव्यक्तिवाद, मनोरागव्यञ्जक शब्दमूलकतावाद, पूह-पूह सिद्धान्त, मनोभावाभि-व्यञ्जकतावाद** आदि के नाम से जाना जाता है।
- इसके अनुसार आरम्भ में मनुष्य भाव प्रधान था और प्रसन्नता, दुःख, विस्मय, घृणा आदि के भाववश उसके मुख से ओ, छि, धिक्, आह आदि शब्द सहज ही निकले। धीरे-धीरे इन्हीं से भाषा का विकास हुआ।

समीक्षा- इसको माननें में निम्न कठिनाइयाँ हैं-

1. ये शब्द विचारपूर्वक प्रयुक्त नहीं होते हैं बल्कि आवेग की तीव्रता में अनायास निकल पड़ते हैं।
2. भिन्न-भिन्न भाषाओं में ऐसे शब्द एक रूप में नहीं मिलते यदि स्वभावतः निकलते तो सभी मनुष्यों में लगभग एक समान होते।
3. भाषा में आवेग शब्दों की संख्या 40-50 से अधिक नहीं होगी इन शब्दों से पूरी भाषा पर प्रकाश नहीं पड़ता। अतः इनको पूर्णतः भाषा का अंग नहीं माना जा सकता।

यह भी समस्या को समाप्त करनें में असमर्थ है।

6. श्रम-ध्वनि-सिद्धान्त

- इसे **यो-हे-हो-वाद, श्रम-परिहरणमूलकतावाद** भी कहा जाता है। इनके प्रतिपादक **'न्वायर' (न्वारे)** नामक भाषाशास्त्री हैं।
- इनके अनुसार 'परिश्रम का कार्य करते समय साँस तेजी से बाहर-भीतर आने-जाने,साथ-साथ स्वरतन्त्रियों को विभिन्न रूपों में कम्पित होने एवं तदनुकूल ध्वनियाँ उच्चरित होने से कार्य करने वाले को राहत मिलती है।
- उदाहरणार्थ कपड़ा धोते समय धोबी 'हियो' या 'छियो' कहता है और मजदूर आदि 'हो-हो, हूँ-हूँ कहते हैं।

समीक्षा-

1. यह मत भाषा की उत्पत्ति के लिए सर्वथा असन्तोष जनक है।
2. शारीरिक परिश्रम जन्य ये शब्द निरर्थक हैं। भाषा की उत्पत्ति के लिए सार्थक शब्दों की आवश्यकता है।
3. अर्थहीन शब्दों से भाषा की उत्पत्ति नहीं हो सकती। यह मत सबसे निकृष्ट और अग्राह्य है।

7. इंगित-सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त के प्रवर्तन का श्रेय पालिनेशियन भाषा विद्वान् डॉ. **'राये'** को है। **डार्विन** भी इसके समर्थक हैं।
- **प्रो. रिचर्ड** इसे 'मौखिक इंगित सिद्धान्त' कहते हैं।
- इस मत के अनुसार प्रारम्भ में मानव ने अपनी आङ्गिक चेष्टाओं का ही वाणी के द्वारा अनुकरण किया और भाषा बनी। जैसे- पानी पीने के समय मुँह से 'पा' जैसी ध्वनि हुई, अतः 'पा' का अर्थ 'पीना' हुआ।

समीक्षा-

1. अपने अनुकरण पर शब्द-रचना हास्यास्पद है। दूसरे के अनुकरण पर शब्द रचना मान्य हो सकती है।
2. हाथ, पैर, ओष्ठ आदि के आधार पर शब्द- रचना की कल्पना निर्मूल है।
3. इंगित- सिद्धान्त पर बने शब्दों की संख्या भाषा में बहुत कम है। यह सिद्धान्त भी सारहीन है।

8. सम्पर्क- सिद्धान्त

- इस मत के प्रतिपादक **जी. रेवेज़ हैं,** जो मनोविज्ञान के विद्वान् थे।
- इनके मतानुसार 'मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, उसमें पारस्परिक

सम्पर्क की प्रवृत्ति जन्मसिद्ध है। प्रारम्भ में भूख आदि की अभिव्यक्ति के लिए मौखिक और साङ्केतिक अभिव्यक्ति का सहारा लिया होगा, उनसे जो ध्वनियाँ निकली वे धीरे-धीरे भाषा बनी।'

समीक्षा-

1. प्रो0 रेवेज़ का यह सिद्धान्त बालमनोविज्ञान, जीव-मनोविज्ञान और आदिम प्राणि-मनोविज्ञान पर आश्रित है एवं तर्कसंगत भी है।
2. कुछ अन्य भाषाशास्त्री भी इस मत को अमान्य नहीं करते किन्तु भाषोत्पत्ति के प्रश्न को अनिर्णीत मानते हैं।

9. सङ्गीत-सिद्धान्त

- इसको **प्रेम-सिद्धान्त, सिंग-सांग थ्योरी,** WOO-WOO थियरी भी कहा जाता है।
- डार्विन, स्पेन्सर एवं येस्पर्सन ने इसे कुछ रूपों में माना था।
- इनके सिद्धान्त के अनुसार, 'मानव के सङ्गीत से भाषा की उत्पत्ति हुई।'

समीक्षा-

1. गुनगुनाने से भाषा की उत्पत्ति होना केवल अनुमान पर आश्रित है, इसका कोई प्रमाण नहीं है।
2. प्रारम्भिक व्यक्ति गुनगुनाता था, इसका भी कोई पुष्ट आधार नहीं है।

   अतः यह सिद्धान्त भी अस्वीकार्य है।

10. प्रतीक-सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त में माना जाता है कि 'संयोग से किसी शब्द का किसी अर्थ से सम्बन्ध हो जाता है, और वह शब्द उस अर्थ का प्रतीक हो जाता है।'
- भाषा-विज्ञान में ऐसे शब्दों को 'नर्सरी-शब्द' कहते हैं जैसे- माता, पिता, बाबा आदि।

समीक्षा-

1. प्रतीक सिद्धान्त मूलतः भाषा के प्रारम्भिक शब्दों की व्याख्या करता है। भाषा में 'नर्सरी-शब्द' आये, ये भी सत्य है।
2. यह स्थूल शब्दों की उत्पत्ति बता सकता है, सूक्ष्म अर्थ के बोधक शब्दों की उत्पत्ति बताने में असमर्थ है।

11. समन्वय-सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त के प्रवर्तक प्रसिद्ध भाषाशास्त्री **'हेनरी स्वीट'** हैं।
- उन्होंने नये सिद्धान्त की अपेक्षा सर्वसिद्धान्त - संकलन को अधिक उपयुक्त समझा है।
- उनके अनुसार 'यदि सभी सिद्धान्तों में से आवश्यक तत्त्व को एकत्रित कर लिया जाय तो भाषा की उत्पत्ति सम्बन्धी समस्याओं का निराकरण हो सकता है।'

समीक्षा-

1. भाषा की उत्पत्ति समझाने के लिए अन्य कोई एकमत शुद्ध न होने से सबका समन्वय उपयुक्त माना गया।
2. यह सिद्धान्त सामान्यतया निर्विरोध रूप से स्वीकार किया जाता है।

12. प्रतिभा-सिद्धान्त

- प्रतिभा- सिद्धान्त के संस्थापक आचार्य **भर्तृहरि** हैं।
- 'वाक्यपदीय' में भर्तृहरि ने प्रतिभा को विश्व की आत्मा माना है और उसे सर्वशक्ति- सम्पन्न बताया है।
- इस प्रकार भाषा की उत्पत्ति मनुष्य के प्रतिभाओं से हुई है।
- भर्तृहरि, पूर्व-जन्म के संस्कारों को भी भाषोत्पत्ति का कारण मानते हैं।

समीक्षा

1. मनुष्यों में कोई मौलिक उद्भावना या शक्ति नहीं थी। अतः भाषोत्पत्ति सम्बन्धी 'समन्वय-सिद्धान्त'ही सर्वथा उत्कृष्ट है।

संस्कृत भाषा का उद्भव और विकास

- संस्कृत भाषा भारत- यूरोपीय अथवा भारत- जर्मनीय परिवार की प्रमुख भाषाओं में है।
- संस्कृत के मूल स्रोत के सम्बन्ध में चाहे जो भी कल्पनाएं की जायें, किन्तु इसके भाषायी इतिहास का प्रारम्भ इसके प्राचीनतम रूप 'ऋग्वेद' से ही मानना होगा।
- 'अवेस्ता' और 'हित्ती', भाषाओं के दो ऐसे रूप हैं जो कि ऋग्वेद से काफी बाद के होने पर भी वैदिक भाषा के प्राग्वैदिक रूपों की झाँकी प्रस्तुत कर सकते हैं।
- संस्कृत आर्यों की भाषा थी और आर्य का मूल निवास भारत ही है। इस बात को पश्चिमी देश नहीं मानते हैं क्योंकि पूरे विश्व को सभ्य और शिक्षित करने के ठेकेदार सिर्फ मिस्र, यूनान आदि देश ही हो सकते हैं।
- भारोपीय भाषाविज्ञानी संस्कृत के उस मूल रूप की स्थिति एशिया या यूरोप में चाहे जहाँ मानने की बात कहें, किन्तु संस्कृत से भाषा के जिस रूप का बोध होता है उसका जन्म एवं पोषण भारत की इसी भूमि पर हुआ था, इसमें कोई सन्देह नहीं।
- सौभाग्य की बात है कि संस्कृत विश्व की एक ऐसी पुरातन भाषा है, जिसके साहित्य भण्डार में विश्व की प्राचीनतम लिखित सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, जिसकी साहित्यिक भागीरथी का प्रवाह कई हजार वर्षो से निरवच्छिन्न रूप में प्रवाहमान रहा है यद्यपि उसके भाषिक विकास की प्रक्रिया अवश्य ही आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व एक बिन्दु पर आकर स्थिर-सी हो गयी थी।

- ऋग्वैदिक काल के उपरान्त हमें इसके विकास के विभिन्न स्तरों के रूप अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट रूप में दृष्टिगोचर होने लगते हैं।
- ऋग्वेद तथा अथर्ववेद के मन्त्रों की भाषा संहिताओं तथा ब्राह्मण ग्रन्थों की भाषा, ब्राह्मणों तथा सूत्रों एवं उपनिषदों की भाषा, उपनिषदों तथा महाकाव्यों की भाषा की पारस्परिक तुलना करने पर स्पष्ट हो जाता है कि संस्कृत में, एक जीवित भाषा में कालक्रम से होने वाले परिवर्तनों के समान, उल्लेख्य परिवर्तन घटित हो रहे थे।
- संस्कृत भाषा के विकास स्तर को तीन-स्तरों पर देखा जा सकता है।

  1. वैदिक 2. उत्तरवैदिक 3. लौकिक
- वैदिक के अन्तर्गत संहिताओं तथा ब्राह्मण- ग्रन्थों की भाषा को,उत्तरवैदिक में आरण्यकों, उपनिषदों एवं सूत्र साहित्यों की भाषा को रखा जा सकता है।
- इसके बाद की साहित्यिक एवं शास्त्रीय भाषा को लौकिक के अन्तर्गत रखा जा सकता है।
- लौकिक साहित्य ग्रन्थ 'रामायण' है। रामायण काल से लेकर वर्तमान समय तक संस्कृत का विकास हो रहा है। इस प्रकार संस्कृत भाषा रूपी गङ्गा को वैदिक काल से लेकर वर्तमानकाल तक पहुँचने में अनेक मार्गों का अनुसरण करना पड़ा है।

1.3 भारोपीय परिवार

भारतीय यूरोपीय (भारोपीय) से मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं की सामान्य रूपरेखा-

विश्व भाषाओं के पारिवारिक वर्गीकरण के अनुसार 18 भेद माने गये हैं। इन 18 भाषाओं को चार भूखण्डों में बाँटा गया है।

(क) यूरेशिया (यूरोप-एशिया)

(ख) अफ्रीका

(ग) प्रशान्त महासागरीय भूखण्ड

(घ) अमेरिका भूखण्ड

यूरेशिया भूखण्ड के अन्तर्गत ही भारोपीय परिवार की गणना की जाती है।

विश्व के भाषा परिवारों में भारोपीय परिवार का सबसे अधिक महत्त्व। इसके मुख्य कारण निम्न हैं -

- **प्रयोगाधिक्य -** इस परिवार की भाषाओं के बोलने वालों की संख्या सबसे अधिक है।
- **भौगोलिक व्यापकता -** प्रायः सारे विश्व में इस परिवार की भाषाएं बोली जाती हैं।
- **सांस्कृतिक उत्कर्ष -** इस परिवार के लोग सभ्यता और संस्कृति में विश्व में सबसे अग्रणी हैं।
- **भाषावैज्ञानिक उत्कर्ष -** भाषाविज्ञान एवं भाषाशास्त्र के अभ्युदय का सर्वाधिक श्रेय इसी परिवार को है। संस्कृत, अंग्रेजी, जर्मन और फ्रेंच में सर्वाधिक भाषाशास्त्रीय चिन्तन हुआ।
- **तुलनात्मक भाषाविज्ञान का जन्मदाता -** भारोपीय परिवार की विभिन्न भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से ही तुलनात्मक भाषाविज्ञान का जन्म हुआ है।
- **भारोपीय परिवार के विभिन्न नाम**

  भारोपीय परिवार के विभिन्न नाम समय-समय पर सुझाए गए हैं। जिनमें प्रमुख चार नाम है-

  1 इण्डो जर्मनिक या भारत जार्मनिक परिवार

  2 आर्य परिवार

  3 भारोपीय परिवार - यह नाम अत्यन्त प्रचलित हुआ, अतः इसे ही अपनाया गया। यह नाम सर्वप्रथम फ्रेंच विद्वानों ने दिया।

4 भारत हित्ती परिवार-

- **भारोपीय परिवार की शाखाएँ -**
- भारोपीय शब्द भारत + यूरोपीय का मूल रूप है।
- यह Indo-European अनुवाद है।
- इस परिवार में भारतवर्ष से लेकर यूरोप तक फैली हुई भाषाओं का संग्रह है।
- इस परिवार में दस शाखाएँ हैं -

1. भारत-ईरानी (आर्य) (Aryan, Indo- Iranian)
2. बाल्टो स्लाविक (Balto-Slavic,Letto-Slavic)
3. आर्मीनी (Armenian)
4. अल्बानी (Albanian, Illyraian)
5. ग्रीक (Greek, Hellenic)
6. केल्टिक (Keltic)
7. जर्मानिक (ट्यूटानिक) (Germanic, Teutonic)
8. इटालिक (Italic)
9. हिटाइट (Hiltite)
10. तोखारी (To khorian)

- **केन्टुम् और शतम् (सतम्) वर्ग**
- भारोपीय परिवार की भाषाओं को ध्वनि के आधार पर दो भागों में विभक्त किया जाता है-

1. केन्टुम् 2. शतम्

- इस विभाजन का श्रेय **प्रो. अस्कोली** को है।

- सभी भारोपीय भाषाओं को दो भागों में विभक्त किया गया है
- प्रथम चार परिवार शतम् वर्ग में आते हैं और शेष छः परिवार 'केन्टुम्' वर्ग में
- 'सौ' के लिए मूल भारोपीय भाषा का शब्द क्मतोम् (Kmtom) माना जाता है।

मूल भारोपीय शब्द - Kmtom **(क्मतोम् = शतम्)**

शतम् (सतम्) वर्ग	केन्टुम् वर्ग
संस्कृत - शतम्	लैटिन - केन्टुम्
अवेस्ता - सतम्	ग्रीक - हेकटोन
फारसी - सद	केल्टिक - केत्
हिन्दी - सौ	तोखारी - कन्ध
रुसी - स्तो (Sto)	गाथिक - हुन्ड
लिथुआनियन - (स्जिम्तास)	जर्मन - हुन्डर्ट
	फ्रेंच - सं
	इटालियन - केन्तो

- **भारोपीय परिवार-विभाजन**

  भारोपीय-परिवार को केन्टुम् और शतम् वर्ग के आधार पर निम्न प्रकार से बाँटा गया है-

शतम् वर्ग	**केन्टुम् वर्ग**
1. भारत-ईरानी	5. ग्रीक
2. बाल्टो स्लाविक	6. केल्टिक
3. आर्मीनी	7. जार्मनिक
4. अल्बानी	8. इटालिक
	9. हिटाइट
	10. तोखारी

भारोपीय परिवार की विशेषताएँ -

- रचना की दृष्टि से भारोपीय परिवार श्लिष्ट योगात्मक है।
- इस परिवार की मूल भाषाएँ संस्कृत, ग्रीक, लैटिन आदि संयोगात्मक थीं, परन्तु इनसे विकसित आधुनिक भाषाएँ हिन्दी, अंग्रेजी आदि वियोगात्मक हो गई।
- भारोपीय भाषाओं की धातुएँ प्रायः एकाक्षर थीं।
- इन भाषाओं में (संस्कृत में) प्रत्यय दो प्रकार के थे-

1. **कृत् -** जो सीधे धातु से जोड़े जाते थे। इन्हें Primary Suffixes कहते हैं। जैस - भू + त = भूत
2. **तद्धित -** ये शब्दो से जुड़ते हैं। जैसे - भूत + इक = भौतिक इन्हें Secondary Suffixes कहते हैं।

- शब्द या धातु से पद बनाने के लिए दो प्रकार से प्रत्यय लगते थे -

  (क) सुप् - (Case-imdicating Suffixes)(शब्दों से)

  (ख) तिङ्- (Verbal Suffixes) (धातुओं से)

- पदों का ही वाक्य में प्रयोग होता था।
- पदों को समस्त कर बृहत् पद बनाने की प्रवृत्ति मूल भारोपीय भाषा में थी। वह भारोपीय परिवार में भी रही।
- मूल भारोपीय भाषा में उदात्त स्वर के कारण स्वर भेद (गुण, वृद्धि, दीर्घ) होता था।
- भारोपीय भाषाओं में मूल प्रत्ययों का लोप हो गया और स्वर परिवर्तन से ही अर्थ-परिवर्तन का काम लिया जाने लगा। अंग्रेजी धातुओं में - Drink - Drank - Drunk, संस्कृत में देव > दैव, विधि > वैध, कुमार > कौमार
- भारोपीय भाषा में प्रत्ययों की अधिकता है। मूल भाषा से पृथक् होकर अनेक भाषाएँ विकसित हुईं।
- विश्व भाषा परिवारों में भारोपीय भाषा-परिवार का सबसे अधिक महत्त्व है। भारोपीय परिवार में भी आर्य परिवार या आर्य शाखा का सर्वाधिक महत्त्व है।

शतम् वर्ग

1.भारत ईरानी (आर्य) 2.बाल्टो स्लाविक 3.आर्मीनी 4. अल्बानी

1 आर्य या भारत ईरानी शाखा

- **प्राचीनतम साहित्य -** विश्व का प्राचीनतम ग्रन्थ 'ऋग्वेद' अपने शुद्ध और प्राचीनतम रूप में संस्कृत में उपलब्ध है।
- समस्त वैदिक साहित्य इसी शाखा में प्राप्त है।
- पारसियों का धर्मग्रन्थ अवेस्ता इसी शाखा में प्राप्त है।
- **प्राचीन वर्णमाला एवं ध्वनियाँ -** मूल भारोपीय भाषा की प्राचीन ध्वनियों के निर्धारण में संस्कृत और अवेस्ता का असाधारण योगदान है।
- **प्राचीन संस्कृति एवं सभ्यता -** विश्व की प्राचीनतम संस्कृति और सभ्यता का सर्वांगीण इतिहास संस्कृत और अवेस्ता भाषा के साहित्य से प्राप्त होता है।
- **भाषाशास्त्रीय देन -** भाषाशास्त्र को ध्वनिविज्ञान, पद विज्ञान (व्याकरण), अर्थविज्ञान का मौलिक आधार संस्कृत से ही प्राप्त होता है।

भारतीय आर्यभाषाएँ

कालविभाजन

भारतीय आर्यभाषाओं को काल की दृष्टि से तीन भागों में बाँटा गया है-

1. **प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ -** 2500ई. पू. से 500ई. पू. तक
2. **मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएँ -** 500ई.पू. से 1000ई. तक

3. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ - 1000 ई. से वर्तमान समय तक

प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ

- विकास क्रम के अनुसार प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं को दो भागों में बाँटा गया है-

1. वैदिक संस्कृत 2. लौकिक संस्कृत

वैदिक संस्कृत -

- वैदिक संस्कृत को ही 'वैदिक', 'वैदिकी', 'छन्दस्' तथा 'छान्दस' आदि नामों से भी जाना जाता है।
- प्राचीनतम रूप ऋग्वेद में मिलता है।
- अन्य वेदों का समय इसके बाद ही माना जाता है।
- समस्त प्राचीनतम संस्कृत वाङ्मय वैदिक संस्कृत में मिलता है
- वैदिक भाषा की पद रचना श्लिष्ट योगात्मक थी।
- धातुरूपों में लेट् लकार का प्रयोग होता था।
- वेद में संगीतात्मक स्वर की प्रधानता थी।

लौकिक संस्कृत

- संस्कृत का सबसे प्राचीन एवं आदिकाव्य वाल्मीकिरामायण 500 ई.पू. का है।
- महाभारत, पुराण, काव्य, नाटक आदि ग्रन्थ 500 ई.पू. से आज तक अविच्छिन्न एवं अविहत गति से अपना गौरव स्थापित किये हुए हैं।
- यास्क, पतञ्जलि, कात्यायन, भास, कालिदास आदि के लेखों से यह स्वतः सिद्ध होता है कि ईसा पूर्व तक संस्कृत लोक व्यवहार की भाषा थी।
- संस्कृत में ही समस्त प्राचीनज्ञान, विज्ञान, कला, पुराण, काव्य, नाटक आदि है।
- संस्कृत ने न केवल भारतीय भाषाओं को अनुप्राणित किया अपितु विश्व भाषाओं मुख्यतया भारोपीय भाषाओं को भी प्रभावित किया।

मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएँ

- मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाओं को तीन भागों में बाँटा गया है -

1.प्राचीन प्राकृत या पालि (500 ई. पू. से 100 ई. तक)

2.मध्यकालीन प्राकृत (100 ई. से 500 ई. तक)

3.परकालीन प्राकृत या अपभ्रंश (500 ई. से 1000ई. तक)

आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ -

1. पश्चिमी हिन्दी - इसकी पाँच प्रमुख बोलियाँ हैं-

1. खड़ी बोली 2. ब्रजभाषा 3. बाँगरु 4. कन्नौजी 5. बुन्देली

2. राजस्थानी -

- इसका विकास शौरसेनी के नागर अपभ्रंश से हुआ है।
- पिंगल के अनुकरण पर राजस्थानी में **डिंगल** काव्य की रचना हुई। इसकी चार प्रमुख बोलियाँ हैं - मारवाड़ी, जयपुरी, मालवी, मेवाती।

3. गुजराती -

4. मराठी - 4 बोलियाँ मुख्य है- देशी, कोंकणी नागपुरी, बरारी

5. बिहारी - 3 प्रमुख भाषाएँ हैं- भोजपुरी, मैथिली, मगही

6. बंगाली **7. उड़िया** **8. असमी**

9. पूर्वी हिन्दी -इसकी तीन बोलियाँ हैं।अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी

10. लहँदा (लहँदी) - लहँदा का अर्थ है पश्चिमी। इसकी चार प्रमुख बोलियाँ हैं-

- केन्द्रीय बोली, दक्षिणी (मुलतानी), उत्तरपूर्वी (पोठवारी), उत्तरपश्चिमी (धन्नी)

11. सिन्धी -

- इसकी पाँच बोलियाँ हैं- विचौली, सिरैकी, लाड़ी, थरेली, कच्छी

12. पंजाबी

13. पहाड़ी - इसके तीन भाषा वर्ग हैं-

- पश्चिमी (30 बोलियाँ)
- मध्य (दो 1. गढ़वाली 2. कुमायूँनी)
- पूर्वी (नेपाली) यह नेपाल की राजभाषा है।

मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएँ

- प्राचीन प्राकृत या पालि (500 ई.पू. से 100 ई. तक)

प्राचीन प्राकृत या पालि (प्रथम प्राकृत)

- तृतीय शताब्दी ई.पू. से प्रथम शती ई. तक के शिलालेख इसके अन्तर्गत आते हैं।
- पालि बौद्धग्रन्थ - महावंश, जातक आदि कथाएँ, प्राचीन जैनसूत्रों की भाषा, प्रारम्भिक नाटकों की भाषा प्राकृत रही है।
- प्राचीन प्राकृत को प्रथम प्राकृत भी कहते हैं।

प्राकृत की उत्पत्ति संस्कृत से - प्रकृति का अर्थ है-मूलभाषा संस्कृत, उससे उत्पन्न भाषा प्राकृत है।

- प्राकृत भाषा के सभी प्राचीन वैयाकरणों ने प्राकृत की उत्पत्ति संस्कृत से मानी है।
- प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भवं तत आगतं वा प्राकृतम् (हेमचन्द्र)
- प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भवं प्राकृतमुच्यते (प्राकृतसर्वस्व)
- प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भवत्वात् प्राकृतं स्मृतम् (प्राकृत चन्द्रिका)
- प्राकृतस्य तु स्वयमेव संस्कृतं योनिः (प्राकृत संजीवनी)
- नाट्यशास्त्रकार भरतमुनि ने यह कहा है कि संस्कृत भाषा के शब्दों का ही विकृत एवं परिवर्तित रूप प्राकृत भाषा है।

पालि की व्युत्पत्ति -

➢ डा. मैक्स वेलेसन ने पाटलि (पाटलिपुत्र) से पालि की उत्पत्ति मानी है। पाटलि > पाडलि > पालि

➢ भिक्षु जगदीश काश्यप ने परियाय (बुद्धोपदेश) शब्द से पालि की उत्पत्ति मानी है।
परियाय > पलियाय > पालियाय > पालि

➢ अमरकोश के टीकाकार भानुजी दीक्षित ने 'पालरक्षणे' से पालि शब्द माना है। पाल् + इ = पालि

➢ आचार्य बुद्धघोष और आचार्य धम्पपाल ने छठी शती ई. ने पालि शब्द का प्रयोग बुद्धवचन या मूल त्रिपिटक के लिये किया है। उससे यह शब्द 'पालि' भाषा के लिए आया है।

➢ अभिधानप्पदीपिका ने पा धातु से पालि शब्द माना है पा - पालेति रक्खतीति पालि, जो रक्षा करती है या पालन करती है।

पालि की प्रमुख विशेषताएँ

➢ पालि में वैदिक संस्कृत की 5 स्वर ध्वनियाँ लुप्त हो गई - ॠ , ॠ , ऌ , ऐ, औ।

➢ पालि में वैदिक संस्कृत के 5 व्यंजन लुप्त हो गए- श, ष, (ः) विसर्ग, जिह्वामूलीय, उपध्मानीय

➢ पालि मे दो नए स्वर आयें - ह्रस्व ऍ, ह्रस्व ओ।

➢ संस्कृत के ऐ > ए, औ > ओ हो गए।

➢ ड, ढ को ळ, ळह्।

➢ संधियों में केवल तीन संधियाँ हैं-

1. स्वर सन्धि 2. व्यंजन सन्धि 3. निग्गहीत (अनुस्वार) सन्धि

➢ पालि में हलन्त शब्द नही हैं। केवल अजन्त ही हैं।

➢ पालि में द्विवचन नहीं होता है।

➢ शब्दरूपों में चतुर्थी और षष्ठी के रूप समान होते हैं।

➢ स्त्री प्रत्यय सात हैं - आ, ई, इनी, नी, आनी, ऊ, ति।

➢ पालि में 500 से अधिक धातुएँ हैं, 9 गण हैं। अदादिगण और जुहोत्यादि गण नहीं है।

➢ पालि में लेट् लकार के रूप भी मिलते हैं - हनासि, दहासि

➢ आत्मनेपद का प्रयोग प्रायः लुप्त हो गया। परस्मैपद शेष रहा

➢ पालि में तद्भव शब्दों का आधिक्य है। तत्सम और देशज शब्द कम है।

शिलालेखी प्राकृत

➢ प्राचीन प्राकृत में अशोक के शिलालेखों की प्राकृत भी आती है, अतः इसे **शिलालेखी प्राकृत** भी कहते है।

➢ शिलालेखी प्राकृत को ही अशोकन प्राकृत, लाट प्राकृत भी कहते हैं।

मध्यकालीन प्राकृत (द्वितीय प्राकृत)

➢ मध्यकालीन प्राकृत को **'साहित्यिक प्राकृत'** भी कहते हैं।

➢ सर्वप्रथम भरतमुनि ने प्राकृत भाषाओं के विषय में विचार किया है। उनके मतानुसार 7 मुख्य प्राकृत है और 7 गौण

➢ **मुख्य प्राकृत -** मागधी, अवन्तिजा, प्राच्या, शौरसेनी, अर्धमागधी, बाहलीक, दाक्षिणात्य (महाराष्ट्री)

➢ **गौण प्राकृत -** शाबरी, आभीरी, चाण्डाली, सचरी, द्राविड़ी, उद्स्ता, वनेचरी

➢ प्राचीन प्राकृत वैयाकरण वररुचि ने चार प्राकृत मानी हैं- शौरसेनी, महाराष्ट्री, मागधी, पैशाची। मागधी के दो रूप हो गये (1) मागधी (2) अर्धमागधी

1- शौरसेनी

➢ इसका क्षेत्र शूरसेन (मथुरा के आस-पास) प्रदेश था।

➢ इसका विकास पालि कालीन स्थानीय भाषा से हुआ।

➢ मध्यदेश की भाषा थी।

➢ नाटकों में सर्वाधिक प्रयोग हुआ।

➢ स्त्रियों आदि का वार्तालाप शौरसेनी प्राकृत में ही होता था।

➢ शौरसेनी से वर्तमान **हिन्दी का विकास** हुआ

➢ राजशेखर कृत **कर्पूरमंजरी का समस्त गद्य भाग शौरसेनी प्राकृत** में है।

➢ भास, कालिदास आदि के **नाटकों में गद्य शौरसेनी** में ही है।

2 - महाराष्ट्री

➢ मूलस्थान महाराष्ट्र है। इससे ही **मराठी भाषा का विकास** हुआ।

➢ प्राकृत में सर्वाधिक साहित्य महाराष्ट्री में है।

➢ दण्डी ने काव्यादर्श में महाराष्ट्री को सर्वश्रेष्ठ प्राकृत माना है।

➢ प्राकृत नाटकों में **पद्यरचना महाराष्ट्री** में है।

➢ महाराष्ट्री प्राकृत के प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं - राजा हाल कृत गाहा सत्तसई (गाथा सप्तशती), प्रवरसेन कृत रावणवहो (सेतुबन्धः), वाक्पति कृत गउडवहो (गौडवधः), जयवल्लभ कृत - वज्जालग्ग, हेमचन्द्राचार्य कृत 'कुमारपालचरित'

➢ कर्पूरमञ्जरी के पद्य महाराष्ट्री में है।

➢ भरतमुनि ने दाक्षिणात्य प्राकृत से महाराष्ट्री का निर्देश किया है।

3- मागधी

➢ यह मगध की भाषा थी।

➢ प्राचीनतम रूप अश्वघोष के नाटकों में मिलता है।

➢ लंका में पालि को मागधी कहते हैं।

➢ कालिदास के नाटकों में तथा शूद्रक के मृच्छकटिक में मागधी का प्रयोग मिलता है।

➢ भरत के नाट्यशास्त्र के अनुसार अन्तःपुर के नौकर, अश्वपालक आदि की भाषा मागधी थी।

➢ इसके तीन प्रकार मिलते हैं -

1. शकारी 2. चाण्डाली 3. शाबरी

➤ मागधी से ही भोजपुरी, मैथिली, बंगला, उड़िया, असमी विकसित हुई।

4- अर्धमागधी

➤ अर्धमागधी का क्षेत्र मागधी और शौरसेनी के मध्य में है।
➤ यह कोसल के समीपवर्ती क्षेत्र की भाषा थी।
➤ इसमें मागधी के गुण अधिक है और साथ ही शौरसेनी के भी, अतः इसे अर्धमागधी कहा जाता है।
➤ मागधी को **ऋषिभाषा** या **आर्यभाषा** भी कहते हैं।
➤ भगवान् महावीर के सभी धर्मोपदेश इसी भाषा में हैं।
➤ अधिकांश **जैन साहित्य** इसी भाषा में है।
➤ इसमें गद्य और पद्य दोनों प्रकार का साहित्य है।
➤ आचार्य विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में इसे चेट, राजपुत्र एवं सेठों की भाषा बताया है।
➤ इसका प्राचीनतम प्रयोग **अश्वघोष के नाटको में** मिलता है।
➤ **मुद्राराक्षस और प्रबोधचन्द्रोदय में** अर्धमागधी का प्रयोग हुआ है।
➤ इससे **पूर्वी हिन्दी का विकास** हुआ है।

5 - पैशाची

➤ इसका क्षेत्र पश्चिमोत्तर भारत एवं अफगानिस्तान का क्षेत्र था।
➤ पैशाची को **पैशाचिकी, भूतभाषा, भूतभाषित** आदि भी कहते हैं।
➤ गुणाढ्य की प्रसिद्ध रचना 'बृहत्कथा' पैशाची प्राकृत में ही है।
➤ वर्तमान समय में इसका साहित्य **'नगण्य'** है।
➤ इसका विकसित रूप **'लहँदा' भाषा** है।
➤ हेमचन्द्र कृत-कुमारपालित और काव्यानुशासन में तथा हम्मीरमदमर्दन नाटक में इसका प्रयोग मिलता है।
➤ राक्षस, पिशाच, निम्नकोटि के पात्र लोहार आदि इसी भाषा का प्रयोग करते थे। (रक्षः पिशाचनीचेषु पैशाची द्वितयं भवेत्)

प्राकृत भाषाओं की सामान्य विशेषताएं -

➤ प्राकृत श्लिष्ट योगात्मक भाषा है।
➤ शब्दरूपों और धातुरूपों की संख्या प्राकृत में कम हो गई।
➤ शब्दरूप केवल तीन या चार प्रकार के रह गए।
➤ धातु के रूप भी प्रायः एक या दो प्रकार से चलने लगे।
➤ प्राकृत भाषा संयोगात्मक से वियोगात्मक की ओर अग्रसर हुई।
➤ प्राकृत भाषा में आत्मनेपद का अभाव हो गया।
➤ तद्भव शब्दों की संख्या प्राकृत में अधिक है। तत्सम शब्दों की कम।

अपभ्रंश (परकालीन प्राकृत, तृतीय प्राकृत)

➤ अपभ्रंश शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग आचार्य व्याडि और पतञ्जलि ने किया है। भर्तृहरि, भामह, दण्डी आदि ने भी अपभ्रंश का उल्लेख किया है।
➤ अपभ्रंश के सबसे प्राचीन उदाहरण भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में मिलते हैं।
➤ दण्डी के समय से इसका प्रयोग प्रारम्भ हो गया था।
➤ अपभ्रंश साहित्य की प्रमुख रचनाएँ निम्न हैं-
हरिषेण कृत - पउमचरिउ
पुष्पदन्त कृत - महापुराण और जसहर चरिउ
विद्यापति कृत - कीर्तिलता
अद्दहमाण कृत - सन्देश-रासक
➤ अपभ्रंश को देशीभाषा, देसी, अपभ्रष्ट, अवहट्ट भी कहते हैं।
➤ मार्कण्डेय ने प्राकृत सर्वस्व में तीन अपभ्रंश माने हैं- नागर, उपनागर, ब्राचड।
➤ नागर गुजरात की अपभ्रंश, ब्राचड सिन्धु की, उपनागर दोनों के मध्य की मानी जाती है।
➤ सामान्यतया सभी भाषाशास्त्री विद्वानों का मत है कि पाँच प्राकृतों से ही अपभ्रंश का विकास हुआ है।

भाषाविज्ञान बिन्दुवार अध्ययन

☞ 'वैदिकभाषा' किस भाषा के सबसे निकट है–**अवेस्ता**
☞ भाषा की परिभाषा में अन्तर्भूत नहीं है– **विभाषा**
☞ भारतीय भाषाओं की जननी है– **संस्कृत**
☞ भाषायाः कौशलानि सन्ति–**चत्वारि**
☞ भाषा.......विनिमयस्य साधनम् –**विचारस्य**
☞ बाह्यप्रयत्नस्तु–**एकादशधा**
☞ ''विचार जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है, तो वह भाषा कहलाती है।'' यह किसका विचार है– **प्लेटो का**
☞ अशोकस्य अभिलेखस्य लिपिः अस्ति– **ब्राह्मी एवं खरोष्ठी**
☞ ग्रन्थलिपि अस्मिन् प्रान्ते प्रचुरप्रचारं गता– **मद्रासे**
☞ भाषा की कौन सी प्रकृति सत्य नहीं है– **प्रत्येक समुदाय में भाषा एक होती है।**
☞ पाण्डुलिपेः नामान्तरम् –**मातृका**
☞ तुलनात्मक-भाषाशास्त्रस्य अध्ययनस्य आरम्भकाले कयोः भाषयोः मध्ये ध्वनिसाम्यं प्रत्यक्षीकृतम् –**संस्कृत-लैटिन-मध्ये**
☞ ध्वनि के आधार पर भारोपीय भाषा के मुख्य विभाग हैं– **दो**
☞ भारोपीय भाषा में संस्कृत 'च वर्ग' की उत्पत्ति बताने वाला– **कालित्स (COLITZ)**

- ☞ भारतीय आर्यभाषा की कितनी अवस्थाएँ हैं– **तीन**
- ☞ 'संस्कृत' भाषा आती है –**भारोपीय**
- ☞ भारोपीयपरिवारस्य भाषा नास्ति–**तमिलभाषा**
- ☞ आंग्लभाषा भारोपीयपरिवारस्य कया भाषया सम्बद्धा अस्ति– **जर्मानिकभाषया**
- ☞ भारोपीयभाषापरिवारे शतमवर्गस्य कति प्रमुखभेदाः? **चत्वारः**
- ☞ भारोपीयभाषापरिवारे भारत-ईरानीवर्गः कस्मिन् वर्गे? **शतमवर्गे**
- ☞ भारोपीय परिवार की भाषा नहीं है–**सियोयन**
- ☞ का भारोपीया भाषा अस्ति–**ग्रीक**
- ☞ भारोपीय परिवार की भाषा – **मलयालम**
- ☞ कवर्गस्य त्रयः प्रकाराः आसन्– **मूलभारोपीयध्वनिषु**
- ☞ संस्कृतस्य भाषा-परिवारः कथ्यते– **भारोपीयः**
- ☞ भारोपीयभाषा कस्मिन् भाषाखण्डे समाहिताः– **यूरेशियाखण्डे**
- ☞ 'भारोपीय' प्रथमं केन उक्तम् – **थाँमस यंग**
- ☞ भाषा की उत्पत्ति का मूल कारण है– **शब्द**
- ☞ भाषाविज्ञाने यो-हे-हो- सिद्धान्तः कस्मिन् प्रसङ्गे प्रवृत्तः– **भाषोत्पत्ति से**
- ☞ 'मे पोल-सिद्धान्त' में 'पोल' क्या है–**एक खम्भा**
- ☞ 'यो-हे-हो वाद' किस प्रसङ्ग में आया है–**भाषा का उद्भव**
- ☞ भाषा की 'दैवी उत्पत्ति' के सिद्धान्त का समर्थन किसने किया है– **सुसमिल्श**
- ☞ **भाषा के 'धातु-सिद्धान्त' के प्रतिपादक हैं**–मैक्समूलर
- ☞ भाषा की उत्पत्ति विषयक 'समन्वय सिद्धान्त' के प्रवर्तक भाषाशास्त्री हैं– **हेनरीस्वीट**
- ☞ भाषा की उत्पत्ति विषयक 'रणन सिद्धान्त' के मूल प्रवर्तक स्वीकार किये जाते हैं –**प्लेटो**
- ☞ हिन्दी भाषा की उत्पत्ति हुयी है–**शौरसेनी अपभ्रंश से**
- ☞ दिगम्बर जैन आगमों की मुख्य भाषा है–**शौरसेनी**
- ☞ 'मराठी' किस भाषापरिवार के अन्तर्गत है– **आधुनिकभारतीयभाषा**
- ☞ 'अवेस्ता' का भाषापरिवार है– **भारतीय आर्यभाषा**
- ☞ मध्य आर्य भारतीय भाषा है– **MAGADHI (मागधी)**
- ☞ 'शतम्' वर्ग की भाषा है– **आर्मीनी**
- ☞ चीनी भाषा इस प्रकार में आती है– **ISOLATING अयोगात्मक**
- ☞ आधुनिक दृष्ट्या संस्कृतं कस्मिन् भाषावर्गे अन्तर्भवति? **भारत यूरोपीय परिवार**
- ☞ यह विभक्तिप्रधान भाषा है– **संस्कृत**
- ☞ यह संश्लिष्ट भाषा है– **INDO-EUROPEAN (भारोपीय)**
- ☞ 'पूर्वेभिः' इस पद का प्रयोग इसी भाषा में होता है– **VEDIC SANSKRIT (वैदिक संस्कृत)**
- ☞ 'संस्कृतभाषा' अस्ति – **INFLECTIONAL (श्लिष्ट योगात्मक)**
- ☞ संस्कृतभाषा है– **विभक्तिप्रधान**
- ☞ एकाक्षरी भाषा है– **चीनी**
- ☞ द्रविड भाषा है– **AGGLUTINATIVE (अश्लिष्ट योगात्मक)**
- ☞ 'शतम्' परिवार की भाषा है– **अवेस्ता**
- ☞ आकृतिमूलक वर्गीकरण को इस नाम से भी जाना जाता है– **रूपात्मक**
- ☞ 'बहड्डकहा' (बृहत्कथा) इति कथाग्रन्थस्य भाषा श्रूयते – **पैशाची**
- ☞ अयोगात्मकवर्गस्य प्रतिनिधिभाषाऽस्ति– **चीनी**
- ☞ 'अपभ्रंश' अस्ति – **मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा**
- ☞ भाषावर्गीकरणस्य आधारः स्वीकृतः–**आकृतिः**
- ☞ तुमर्थक प्रत्यय अधिक उपलब्ध होते हैं– **वैदिकसंस्कृत में**
- ☞ भारतीयार्यभाषासु प्राचीनतमा भाषा का अस्ति– **वैदिकसंस्कृतभाषा**
- ☞ संयोगात्मक भाषा– **संस्कृतम्**
- ☞ अधोनिर्दिष्टेषु वियोगात्मकभाषा....। **हिन्दी**
- ☞ भारतीय-आर्यभाषायाः अवस्थाः सन्ति– **तिस्रः**
- ☞ अयोगात्मकभाषासु न भवन्ति– **उपसर्गाः**
- ☞ भाषापरिवर्तनस्य कति बाह्यकारणानि–**अष्टौ**

- ☞ आर्यभाषापरिवारस्य भाषा न मन्यते – **तमिल**
- ☞ पारिवारिकवर्गीकरणस्य कति प्रमुखभेदाः– **अष्टादश**
- ☞ 'शतम्' वर्गस्य कति शाखाः सन्ति– **चतस्त्रः**
- ☞ 'शौरसेनी' इसके अन्तर्गत है– **प्राकृत**
- ☞ पालिभाषा प्राचीनकाले केन नाम्ना प्रसिद्धा आसीत्? **मागधी**
- ☞ भाषाओं का आकृतिमूलक वर्गीकरण विषयक विकल्प सही है– **अयोगात्मक, अश्लिष्ट, श्लिष्ट, प्रश्लिष्ट**
- ☞ तुखारी (तोखारी) शाखा का पता कब लगा– **बीसवीं शताब्दी में**
- ☞ 'अवेस्ता' भाषा है–**ईरानी**
- ☞ भाषाओं के पारिवारिक वर्गीकरण का आधार है– **इतिहास**
- ☞ निम्नलिखित में से कौन द्रविड परिवार की भाषा है– **कन्नड़**
- ☞ 'शतम्'-वर्गस्य भाषा नास्ति– **लैटिनभाषा**
- ☞ 'अपभ्रंश' शब्द का प्रयोग मध्यकालीन संस्कृत ग्रन्थों में होता है– **कुछ आधुनिक भारतीय भाषाओं के आरम्भिक रूपों को इंगित करने के लिये।**
- ☞ भाषाणां पारिवारिकं वर्गीकरणमेव मन्यते– **ऐतिहासिकं वर्गीकरणम्**
- ☞ भाषायाः आकृतिमूलकं वर्गीकरणं न कथ्यते– **ध्वन्यात्मकम्**
- ☞ युगाश्रित-निर्धारणे पालि-भाषाऽस्ति– **मध्ययुगीना**
- ☞ सम्बन्धतत्त्वाश्रयं वर्गीकरणं किम् – **परिवारमूलकम्**
- ☞ संस्कृतस्य सहभाषे आस्ताम्– **पालि-प्राकृते**
- ☞ 'अवेस्ता' की सदृशतम भाषा कौन है? **वैदिकसंस्कृतम्**
- ☞ श्लिष्ट योगात्मकता किस भाषा का वैशिष्ट्य है–**संस्कृत**
- ☞ अधोलिखितेषु भारतीयभाषापरिवारः किं नास्ति– **दक्षिण-एशियाई**
- ☞ सन्थाली..........अस्ति– **ऑस्ट्रो-एशियाई**
- ☞ मणिपुरी.......भाषा अस्ति– **तिब्बती-बर्मी**
- ☞ बोडो.........भाषा अस्ति– **तिब्बती-बर्मी**
- ☞ 'संस्कृत' किस तरह की भाषा है– **श्लिष्टयोगात्मक**
- ☞ संसार में भाषायें प्रचलित हैं– **लगभग 3,000**
- ☞ संस्कृत से सीधा सम्बन्ध किस भाषा का है–**प्राकृत**
- ☞ अधोलिखितेषु का भाषा 'केन्टुम्'–वर्गे नहि आयाति?**रूसी**
- ☞ अवेस्ता भारोपीयपरिवारस्य कया शाखया सम्बद्धास्ति? – **भारत-ईरानीशाखया**
- ☞ मध्यकालिकी आर्यभाषा नास्ति– **बांग्ला**
- ☞ लिखित-भाषास्वरूपेषु प्राचीनतममस्ति–**वैदिकसंस्कृतम्**
- ☞ आकृतिमूलकवर्गीकरणेन असम्बद्धम् **–व्यापारः**
- ☞ पारिवारिकवर्गीकरणेन असम्बद्धम् – **फलसाम्यम्**
- ☞ किं तत्त्वं वियोगात्मक-भाषायाः प्रकृतिलक्षणम् – **प्रकृति-प्रत्यय-पार्थक्यम्**
- ☞ का भाषा 'केन्टुम्'–वर्गेण असम्बद्धम्–**संस्कृत-भाषा**
- ☞ को भाषापरिवारः बृहत्तमा–**भारोपीयभाषापरिवारः**
- ☞ मराठीभाषायाः भाषापरिवारः कः–**भारोपीयः**
- ☞ अयोगात्मकभाषा का– **तिब्बती**
- ☞ दो क्रमिक व्यञ्जन महाप्राण ध्वनियों में से एक के महाप्राणत्वहास का प्रस्ताव जिसने किया, वह है– **ग्रासमान**
- ☞ 'स्वराघात के कारण ध्वनि परिवर्तन होता है।' इस नियम के प्रवर्तक हैं – **VERNER (वर्नर)**
- ☞ 'तालव्यीकरण' का नियम किसमें लागू होता है– **चकार में**
- ☞ किसमें ग्रासमान का नियम लागू होता है–**बभूव में**
- ☞ 'बभूव' इस पद में यह नियम लागू होता है– **ग्रासमान नियम**
- ☞ 'वर्नर' नियम के अनुसार 'क' का परिवर्तित रूप है– **ग्**
- ☞ ग्रिम नियम के अन्तर्गत 'भ' का परिवर्तित रूप है–**ब्**
- ☞ 'बभार' इस पद में यह नियम लागू होता है। **ग्रासमाननियम**
- ☞ कॉलिजनियमस्य उपयोगो भवति अस्मिन्– **चकार**
- ☞ कः नियमः ग्, द्, ब् इति व्यञ्जनानि क्रमानुसारेण क्, त्, प् इति व्यञ्जने परिवर्तते?–**ग्रिमनियम**
- ☞ ध्वनिनियमस्य प्रवर्तको वर्तते– **ग्रिम, ग्रासमान, वर्नर।**

- 'वर्गस्य प्रथमवर्णस्य परिवर्तनं केवलम् असंयुक्तध्वनिषु एव भवति, न तु संयुक्तध्वनिषु।' इति अपवादनियमः केन प्रदत्तः– **ग्रिममहोदयेन**
- ध्वनिनियमेषु क्रमेण प्रथमः को गण्यते?–**ग्रिमनियमः**
- ध्वनिनियमेषु द्वितीयः को गण्यते– **ग्रासमाननियमः**
- क्या ध्वनि परिवर्तन के लिये वर्नर ने ग्रिम नियम में सुधार किया है– **हाँ**
- ग्रिम, ग्रासमैन एवं वर्नर सम्बन्धित हैं –**ध्वनि नियमों से**
- ग्रिमनियम के अनुसार निम्न जर्मन 'THREE' का उच्च जर्मन में परिवर्तित रूप है –**DREI**
- ध्वनिनियमस्य कर्ता अस्ति– **ग्रासमानः**
- 'ग्रासमान-नियमः' केन सम्बद्धः अस्ति–**ध्वनितत्त्वेन**
- प्रथमवर्णपरिवर्तनं कस्मिन् ध्वनिनियमे समाहितम् – **ग्रिमनियमे**
- प्रसिद्धध्वनिनियमेषु अर्वाचीनतमः कः– **वर्नरनियमः**
- संस्कृतभाषायाः 'शतम्' इति पदं गाथिकभाषायां 'हुन्द' भवति, इति कस्य मतम् – **वर्नरमहोदयस्य**
- ग्रिमनियमस्य सम्बन्धः कति स्पर्शध्वनिभिः अस्तिः–**9**
- \`d' का अघोष रूप कौन-सा है– **त्**
- 'स' का घोष रूप है– **ज्**
- यह सन्ध्यक्षर पालि भाषा में नहीं है– **ऐ**
- यह पश्चस्वर है– **आ**
- संस्कृत का 'ऐ' पालि भाषा में हो जाता है–**ए**
- यह अग्र स्वर है– **इ**
- 'अ' किस प्रकार का स्वर है? **केन्द्रीय स्वर**
- पालि में संस्कृत की यह ध्वनि नहीं मिलती– **ऐ**
- निर्दिष्टेषु स्पर्शः कः? **म्**
- तालव्येषु अन्तर्भवति– **श्**
- कण्ठ्यवर्णः–**ग्**
- संवृतस्वरः कः? **ऊ**
- तालव्यवर्णः– **ज**
- कः सन्ध्यक्षरः? **औ**
- भाषाविज्ञानदृष्ट्या अर्धस्वरः कः? **य्**
- ह्रस्वस्वरभक्तेः उच्चारणकालो भवति–**अर्धोनमात्राकालः**
- भाषाविज्ञानदृशा अर्धस्वरो भवति– **व्**
- 'ई' से सङ्केतित स्वर है? **अग्र**
- 'अघोष अल्पप्राण' ध्वनि कौन सी है? **क, त**
- 'अघोष-दन्त्य-संघर्षी' व्यञ्जनम् अस्ति – **स्**
- देवनागरी लिपि की उत्पत्ति किससे हुई?–**ब्राह्मी**
- अघोषध्वनिः अस्ति –**त्**
- प्राकृते प्रायः वर्गाणां द्वितीय-चतुर्थवर्णानां तथा शल् वर्णानां स्थाने परिवर्तितो भवति– **हकारः**
- भाषाविज्ञान के अनुसार व्यञ्जनों के मूल चार प्रकारों में कौन सा प्रकार नहीं आता है– **निःश्वासी**
- भाषाविज्ञान में अग्रस्वरों के उच्चारण में जिह्वा की चार कोटियों में कौन नहीं है– **निम्नोच्च**
- भाषाविज्ञान के अनुसार स्वर के उच्चारण से सम्बद्ध चार प्रकारों में कौन सा प्रकार नहीं है–**पार्श्विक**
- जिह्वाभाग-विशेषोच्चारणदृष्ट्या मध्यस्वरोऽस्ति– **अकारः**
- 'च' इति वर्णः कीदृशोऽस्ति?–**अघोष-अल्पप्राणः**
- 'अर्थसंकोच' का उदाहरण है– **वारिज**
- 'ब्रील महोदय' के अनुसार अर्थविकास की दिशाएँ होती हैं– **3**
- 'अर्थसंकोचस्य' उदाहरणमस्ति – **सरसिज**
- व्यंग्य-प्रयोग इनमें से किसका कारण है? **अर्थ-परिवर्तन का**
- एहोल-शिलालेखः कस्य वर्तते–**द्वितीयपुलकेशिनः**
- 'प्रवीण' उदाहरण है? **अर्थविस्तार का**
- अर्थविस्तारस्योदाहरणं नास्ति? **महापात्रः**
- अर्थविस्तारस्योदाहरणं वर्तते – **तैलम्**
- 'देवानां प्रियः' अर्थपरिवर्तनं लभते– **'मूर्ख' इत्यर्थे**
- 'कुशलः' इत्युदाहरणमस्ति – **अर्थविस्तारस्य**
- अर्थपरिवर्तनकारणेष्वन्यतमम्– **सादृश्यम्**
- 'देवानां प्रियः' इति वाक्यम् उदाहरणं भवति – **अर्थापकर्षस्य**
- भारोपीय भाषा का प्राचीनतम अभिलेखीय प्रमाण मिलता है– **ईरान से**
- ग्रन्थसम्पादने पाठभेदाः कुत्र दर्शनीयाः–**प्रतिपृष्ठमधोभागे**
- 'पण्डित जी > पण्डीजी' इसमें ध्वनिपरिवर्तन का कारण है– **प्रयत्नलाघव**
- ध्वनिसिद्धान्तस्य मूलाधारः सिद्धान्तः वर्तते– **स्फोटवादः**
- धर्म का 'धम्म' होना किसका उदाहरण है– **समीकरण**
- धर्म शब्द का रूपान्तर 'धम्म' सम्बन्धित है? **पालिभाषा से**

- 'प्रयत्नलाघवम्' इति कस्याभ्यन्तरकारणमस्ति? **ध्वनि-परिवर्तन**
- वर्नरनियमस्य प्रतिष्ठाता कालवर्नर कस्य देशस्य निवासी– **जर्मनी**
- ध्वनिपरिवर्तनस्य अन्तःकारणं नास्ति –**ध्वनिनां परिवेशम्**
- छात्राणाम् उच्चारणदोषं दूरीकरणाय भाषाशिक्षकः भाषाविज्ञानस्य कस्मिन् विज्ञाने पारङ्गतः भूयात्– **ध्वनिविज्ञाने**
- 'ध्वनि परिवर्तन तो जिह्वानर्तन है।' इसके बारे में आप क्या समझते हैं? **यह उक्ति एकाङ्गी है।**
- ध्वनिपरिवर्तन का आभ्यन्तर कारण है?–**अनुकरण की अपूर्णता**
- ध्वनिपरिवर्तन का सबसे प्रमुख कारण है?–**प्रयत्न-लाघव**
- 'ध्वनि-परिवर्तन' का आन्तरिक कारण है? **प्रयत्नलाघव**
- 'धर्म का धम्म' रूप में परिवर्तन उदाहरण है? **पश्चगामी समीकरण का**
- 'समाक्षर लोप' की अवधारणा प्रस्तुत की? मैक्समूलर ने
- भाषाविज्ञान की दृष्टि में 'प्रयत्नलाघव' का अर्थ है? **उच्चारण की सुविधा**
- 'वाराणसी' का 'बनारस' रूप में विकास उदाहरण है? **वर्ण-विपर्यय का**
- वर्णलोपस्य उदाहरणम् अस्ति– **गतम्**
- ध्वनिपरिवर्तनस्य कारणं नास्ति– **समीकरणं विषमीकरणं वा**
- ध्वनिपरिवर्तन का कारण कौन नहीं है? **आनुवांशिकता**
- भाषायां ध्वनि-परिवर्तनस्य कारणं नास्ति–**शुद्धोच्चारणम्**
- सूर्यः पदस्य 'सुज्जो' इति परिवर्तने कारणमस्ति– **स्थानपरिवर्तनम्**
- बलाघातेन 'त्रि' स्थाने भवति– **थ्री**
- ध्वनि-परिवर्तन के मुख्य कारण कितने हैं?– **2**
- आभ्यन्तर परिवर्तन के द्वारा एक दूसरे से सम्बद्ध ध्वनियों तथा रूपियों के मध्य के प्रत्यावर्तन के अध्ययन को कहते हैं –**रूपध्वनिम-विज्ञान**
- ध्वनिवैज्ञानिकैः कारणत्वेन किं स्वीक्रियते?–**मृदुतालु**
- 'उष्ट्र' का 'ऊँट' ध्वनि परिवर्तन निम्नलिखित में से कौन-सा प्रकार है? **लोप**
- कस्मात् कारणात् 'स्थल' इति शब्दस्य 'थल' इति उच्चारणं क्रियते ? **आदिलोपस्य**
- 'पुढवी' इति प्राकृत-शब्दस्य संस्कृतमूलमस्ति– पृथ्वी
- 'सम्मासम्बुद्धि' इति पालिप्रयोगस्य पूर्वरूपमस्ति– **सम्यक् सम्बुद्धिः**
- भारतीयार्यभाषायाः वर्गाणां प्रथमवर्णः पारसीकभाषायां तृतीयवर्णो भवति, कथम्? **मातृ > मादर**
- भाषा के परिवर्तन में आभ्यन्तर कारण कौन है? **प्रयत्नलाघव**
- लिप्यन्तरणज्ञानस्य मुख्यं प्रयोजनम्– **ग्रन्थसम्पादनम्**
- ऊष्मा भेदाः सन्ति– **त्रयः**
- 'वृक्ष' किस प्रकार का शब्द है? **योगरूढ**
- 'वे शब्द जिनके सार्थक खण्ड न हो सके' उन्हें कहते हैं– **रूढ (मूल)**
- वाक्य-विचार के अन्तर्गत क्या अध्ययन किया जाता है? **वाक्यों का**
- प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों में प्राप्य 'यवनप्रिय' शब्द द्योतक है– **कालीमिर्च का**
- हरिषेणविरचिते इलाहाबादशिलालेखे 'कविराज' इत्युपाधिः भवति–**समुद्रगुप्तस्य**
- रुद्रदाम्नः गिरनारशिलालेखे सुदर्शनतडागस्य कः पुनर्निर्माता– **सुविशाषः**
- पिउदस्सि 'राजा' इति उल्लेखो मिलति– **अशोकस्याभिलेखेषु**
- **क**वि कालिदास के नाम का उल्लेख किसमें हुआ है?– एहोल के उत्कीर्णलेख में
- एषु कस्य देशस्य नाम हरिषेणस्य एलाहाबादशिलालेखे नास्ति– **चीनः**

5. साहित्य शास्त्र

काव्यप्रकाशः

अथ प्रथम उल्लासः

ग्रन्थारम्भे विघ्नविघाताय समुचितेष्टदेवतां ग्रन्थकृत् परामृशति-

अनुवाद- ग्रन्थ के प्रारम्भ में ग्रन्थकार (आचार्य मम्मट) विघ्नों के विनाश के लिए समुचित (प्रतिपाद्य विषय के अनुरूप) अपनी अभीष्ट देवी भारती का स्मरण करते हैं, स्तुति करते हैं -

नियतिकृतनियमरहितां ह्लादैकमयीमनन्यपरतन्त्राम् ।
नवरसरुचिरां निर्मितिमादधती भारती कवेर्जयति ॥1॥

अनुवाद - नियति के द्वारा निर्धारित नियमों से रहित, केवल आनन्दमयी (आनन्द-प्रचुरा), अन्य किसी के अधीन न रहने वाली अर्थात् समवायादि कारणों से निरपेक्ष, नव रसों के योग से मनोहारिणी निर्मिति (काव्य-सृष्टि) को प्रकट करने वाली कवि की भारती (वाग्देवी सरस्वती सर्वोत्कृष्टा है (मैं उसकी स्तुति करता हूँ) ।।1।।

इहाभिधेयं सप्रयोजनमित्याह -

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृत्तये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे ॥2॥

अनुवाद - 'काव्य-रचना यश के लिए, धन अर्जन के लिए, लोक व्यवहार के ज्ञान के लिए, अमंगल के नाश के लिए, सद्यः परमानन्द की प्राप्ति के लिए और कान्ता-सम्मित (प्रिया के सदृश) होने से उपदेश के लिए होता है ।।2।।

एवमस्य प्रयोजनमुक्त्वा कारणमाह -

शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्रकाव्याद्यवेक्षणात्।
काव्यज्ञशिक्षयाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे ॥3॥

अनुवाद - शक्ति, लोक-शास्त्र-काव्य आदि के पर्यवेक्षण से उत्पन्न निपुणता और काव्य के जानने वाले (कवि और आलोचक) की शिक्षा के द्वारा अभ्यास - ये तीनों मिलकर काव्य के उद्भव के हेतु हैं ।।3।।

काव्य का स्वरूप

(सू01) तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि ॥

इस प्रकार काव्य प्रयोजन तथा काव्य के कारणों का निरूपण करने के पश्चात् ग्रन्थकार अब काव्य के स्वरूप का विवेचन करते हैं -

अनुवाद - दोष-रहित, गुणसहित, कहीं-कहीं स्पष्ट अलंकारों से रहित भी शब्द और अर्थ (मिलकर) काव्य हैं ।।

यः कौमारहरः स एव हि वरस्ता एव चैत्रक्षपा -
स्ते चोन्मीलितमालतीसुरभयः प्रौढाः कदम्बानिलाः ।
सा चैवास्मि तथापि तत्र सुरतव्यापारलीलाविधौ
रेवारोधसि वेतसीतरुतले चेतः समुत्कण्ठते ॥1॥

अत्र स्फुटो न कश्चिदलंकारः रसस्य च प्राधान्यान्नलंकारता।

अनुवाद - दोष, गुण और अलंकारों का विवेचन आगे किया जायेगा। 'क्वापि' इस पद से यह कहते हैं कि सब जगह अलंकार युक्त, किन्तु कहीं पर अलंकार स्पष्ट न होने पर भी काव्यत्व की हानि नहीं होती । तद्भेदान् क्रमेणाह -

1. उत्तम काव्य (ध्वनिकाव्य)

(सू02)इदमुत्तममतिशयिनि व्यंग्ये वाच्याद् ध्वनिर्बुधैः कथितः ॥4॥

अनुवाद - वाच्य अर्थ की अपेक्षा व्यंग्य अर्थ में अधिक चमत्कार होने से वह उत्तम काव्य होता है और विद्वानों ने उसे 'ध्वनिःकाव्य' कहा है ।।4।।

यथा-निःशेषच्युतचन्दनं स्तनतटं निर्मृष्टरागोऽधरो
नेत्रे दूरमनञ्जने पुलकिता तन्वी तवेयं वपुः।
मिथ्यावादिनि दूति बान्धवजनस्याज्ञातपीडागमे
वापीं स्नातुमितो गतासि न पुनस्तस्याधमस्यान्तिकम् ॥2॥

अत्र तदन्तिकमेव रन्तुं गतासीति प्राधान्येनाधमपदेन व्यज्यते।

ध्वनि काव्य का उदाहरण -

अनुवाद - हे दूति ! तुम्हारे स्तनों के किनारों पर लगा हुआ चन्दन पूरा छूट गया है; तुम्हारे अधरों की लाली छूट गई है, तेरी आँखों का अंजन बिल्कुल पुँछ गया है और तुम्हारा कृश-शरीर पुलकित हो गया है। अरे अपनी सखी की पीड़ा को न समझने वाली, झूठ बोलने वाली दूति ! तू तो बावड़ी में स्नान करने गई थी, न कि उस नीच (अधम) के पास ।।2।।

2. मध्यम काव्य

(गुणीभूतव्यङ्ग्य काव्य)

(सू.3) अतादृशि गुणीभूतव्यंग्यं व्यंग्ये तु मध्यमम्।

अतादृशि वाच्यादनतिशायिनि । यथा -

अनुवाद - जहाँ पर वाच्यार्थ की अपेक्षा व्यंग्यार्थ में अधिक चमत्कार नहीं पाया जाता, उसे 'मध्यम-काव्य' कहते हैं। इसे ही 'गुणीभूतव्यंग्य' भी कहते हैं ।।3।।

अतादृशि - वैसा न होने पर अर्थात् व्यंग्यार्थ के अधिक चमत्कार जनक न होने पर गुणीभूतव्यंग्य काव्य होता है।

ग्रामतरुणं तरुण्या नववंजुलमंजरीसनाथकरम्।
पश्यन्त्या भवति मुहुर्नितरां मलिना मुखच्छाया ॥3॥

अनुवाद - वेतस (अशोक) लता की मंजरी को हाथ में लिये हुए ग्राम के उस नवयुवक को देखती हुई उस तरुणी के मुख की कान्ति (छवि) अत्यन्त मलिन (धूमिल) होती जा रही है ।।3।।

(3) चित्रकाव्य (अधमकाव्य)

इस प्रकार काव्य के ध्वनि और गुणीभूतव्यङ्ग्य (उत्तम और मध्यम) काव्य भेदों के निरूपण करने के पश्चात् अब तृतीय प्रकार अधमकाव्य–

(सू0 4) शब्दचित्रं वाच्यचित्रमव्यङ्ग्यं त्ववरं स्मृतम् ॥5॥

अनुवाद - व्यङ्ग्य से रहित काव्य अधमकाव्य (अवरकाव्य) कहा गया है। इसे ही विद्वानों ने चित्रकाव्य कहा है। यह दो प्रकार का होता है- शब्दचित्र और वाच्यचित्र ।।5।।

यथा-

स्वच्छन्दोच्छलदच्छकच्छकुहरच्छातेतराम्बुच्छटा-
मूर्च्छन्मोहमहर्षिहर्षविहितस्नानाह्निकाह्नाय वः।
भिद्यादुद्यदुदारदर्दुरदरीदीर्घादरिद्रद्रुम-
द्रोहोद्रेकमहोर्मिमेदुरमदामन्दाकिनी मन्दताम् ॥4॥

(i) शब्दचित्र का उदाहरण -

अनुवाद - स्वच्छन्द रूप से उछलती हुई किनारों के गड्ढे में अत्यन्त वेग से प्रवाहित होने वाली स्वच्छ जलधारा की छटा से विगत मोह वाले महर्षियों के सहर्ष स्नान तथा दैनिक कार्यों को सम्पन्न करने वाली, जहाँ तहाँ दिखाई पड़ने वाले मेढ़कों से भरी बड़ी-बड़ी दरारों से युक्त, बड़े-बड़े वृक्षों को उखाड़ फेंकने में निरत, ऊपर उठने वाली बड़ी-बड़ी तरंगों से उन्मत्त मन्दाकिनी गंगा आप लोगों के पापों को नष्ट करें ।।4।।

(ii) अर्थचित्र का उदाहरण-

विनिर्गतं मानदमात्ममन्दिराद् भवत्युपश्रुत्य यदृच्छयापि यम्।
ससम्भ्रमेन्द्रद्रुतपातितार्गलानिमीलिताक्षिव भियामरावती॥

अनुवाद- शत्रुओं के मान-मर्दन करने वाले हयग्रीव को स्वेच्छा से घूमने के लिए अपने महल से निकला हुआ, सुनकर घबराये हुए इन्द्र ने जिसकी अर्गला गिरा दी हैं ऐसी अमरावती नगरी ने मानों भय के कारण द्वाररूपी आँखे बन्द कर ली है।

अथ द्वितीय उल्लासः

(शब्दार्थस्वरूपनिर्णयः)

क्रमेण शब्दार्थयोः स्वरूपमाह -

(सू. 5) स्याद्वाचको लाक्षणिकः शब्दोऽत्र व्यञ्जकस्त्रिधा।
अत्रेति काव्ये। एषां स्वरूपं वक्ष्यते।

अनुवाद - (5) काव्य में वाचक, लाक्षणिक और व्यंजक ये तीन प्रकार के शब्द होते हैं।

(सू. 6) वाच्यादयस्तदर्थाः स्युः। वाच्य-लक्ष्य व्यङ्ग्याः।

अनुवाद (सू. 6) -
वाच्य आदि (वाच्य, लक्ष्य, व्यंग्य) उन (वाचक, लक्षक, व्यंजक) शब्दों के अर्थ होते हैं।

अनुवाद (सू. 7) तात्पर्यार्थोऽपि केषुचित्
वाच्य एव वाक्यार्थ इति 'अन्विताभिधानवादिनः।'
वाच्यादि का तात्पर्य वाच्य, लक्ष्य और व्यंग्य है।
किन्हीं आचार्यों के मत में तात्पर्यार्थ एक अर्थ होता है।

(सू. 8) सर्वेषां प्रायशोऽर्थानां व्यञ्जकत्वमपीष्यते
तत्र वाच्यस्य यथा -

अनुवाद- प्रायः सभी अर्थों की व्यंजकता भी इष्ट है।

(मातर्गृहोपकरणमद्य खलु नास्तीति साधितं त्वया।
तद्भण किं करणीयमेवमेव न वासरः स्थायी ॥6॥

(इति संस्कृतम्)

अनुवाद - हे मातः! आज घर में (अन्न, इन्धन, शाकादि) सामग्री नहीं है, यह तुमने बतला ही दिया था, तो अब यह बताओ। कि क्या करना चाहिए? क्योंकि इस प्रकार दिन भी तो स्थिर नहीं रहेगा अर्थात् दिन ढलता जा रहा है ।।6।।
यहाँ पर कोई नायिका स्वच्छन्द विहार की अभिलाषिणी है, यह व्यंग्यार्थ है।

लक्ष्यस्य यथा-

(साधयन्ती सखि सुभगं क्षणे क्षणे दूनासि मत्कृते ।
सद्भावस्नेहकरणीयसदृशकं तावद् विरचितं त्वया ॥7॥

लक्ष्य अर्थ की व्यंजकता (का उदाहरण) जैसे -

अनुवाद - हे सखि! मेरे लिए उस सुन्दर नायक को मनाती हुई तुम क्षण-क्षण बहुत दुःखी हुई हो। तुम्हें मेरे प्रति सद्भाव और स्नेह के कारण जो करना चाहिए था, वही कार्य तुमने कर लिया ।।7।।

(पश्य निश्चलनिष्पन्दा बिसिनीपत्रे राजते बलाका।
निर्मलमरकतभाजनपरिस्थिता शंङ्खशुक्तिरिव ॥8॥)

व्यंग्यार्थ की व्यंजकता का उदाहरण-

अनुवाद - देखो, कमलिनी के पत्ते पर निश्चल और निष्पन्द (बिना हिले-डुले) बैठी हुई बलाका निर्मल मरकतमणि के पात्र में रखी हुई शंखशुक्ति की तरह शोभित हो रही है ।।8।।

(सू. 9) साक्षात्संकेतितं योऽर्थमभिधत्ते स वाचकः

अनुवाद - जो साक्षात् संकेतिक अर्थ को कहता है उसे 'वाचक' शब्द कहते हैं।

(सू. 10) संकेतितश्चतुर्भेदो जात्यादिर्जातिरेव वा।)

अनुवाद - संकेतित अर्थ चार प्रकार का होता है - जाति, गुण, क्रिया और यदृच्छा अथवा केवल जाति रूप एक प्रकार का होता है।

अभिधा-वृत्ति

अनुवाद - 'सः' पद से साक्षात् संकेतित अर्थ गृहीत है और 'अस्य' का अभिप्राय है शब्द का।

(सू. 11) स मुख्योऽर्थस्तत्र मुख्यो व्यापारोऽस्याभिधोच्यते ॥8॥

स इति साक्षात् संकेतितः अस्येति शब्दस्य

अनुवाद - (सूत्र 11) वह (साक्षात् संकेतित) अर्थ ही मुख्य अर्थ है। उस मुख्य अर्थ के बोधन में शब्द का जो व्यापार है, उसे अभिधा कहते हैं ।।8।।

लक्षणा - निरूपण

(सू. 12) मुख्यार्थबाधे तद्योगे रूढितोऽथ प्रयोजनात्।
अन्योऽर्थो लक्ष्यते यत्सा लक्षणारोपिता क्रिया ॥9॥

अनुवाद - मुख्य अर्थ के बाध होने पर तथा उस (मुख्य अर्थ) के योग (सम्बन्ध) होने पर रूढ़ि अथवा प्रयोजन से जिसके द्वारा अन्य अर्थ की प्रतीति होती है, वह आरोपित वृत्ति (व्यापार) लक्षणा है ।।9।।

(सू. 13) स्वसिद्धये पराक्षेपः परार्थं स्वसमर्पणम्।
उपादानं लक्षणं चेत्युक्ता शुद्धैव सा द्विधा ॥10॥

लक्षणा के भेद

अनुवाद - अपने (वाच्यार्थ के) अन्वय की सिद्धि के लिए अन्य (दूसरे) अर्थ का आक्षेप करना 'उपादानलक्षणा' है और दूसरे के लिए (अमुख्य अर्थ के अन्वय की सिद्धि के लिए) अपने को समर्पित कर देना (मुख्यार्थ का समर्पण या त्याग करना) 'लक्षण लक्षणा' है। इस प्रकार उपादान और लक्षण रूप से ये दोनों (उपादानलक्षणा और लक्षणलक्षणा) शुद्धा ही कहीं गई हैं ।।10।।

सारोपा और साध्यवसाना

(सू. 14) सारोपान्या तु यत्रोक्तौ विषयी विषयस्तथा।

अनुवाद - जहाँ पर विषयी (आरोप्यमाण) और विषय (आरोपविषय) दोनों शब्दतः (स्वरूप से) कथित हों, वह एक (अन्या) 'सारोपा' लक्षणा है।

अनुवाद- जहाँ आरोप्यमाण और आरोप विषय का भेद छिपाया नहीं जाता और दोनों का समानाधिकरण रूप से निर्देश किया जाता है; वहाँ 'सारोपा' लक्षणा होती है।

साध्यवसाना लक्षणा

(सू. 15) विषय्यन्तः कृतेऽन्यास्मिन् सा स्यात् साध्यवसानिका ॥1॥

अनुवाद - जहाँ पर विषयी (आरोप्यमाण) के द्वारा अन्य आरोप विषय को अन्तर्लीन कर लिया जाता है, वहाँ 'साध्यवसाना' लक्षणा होती है ।।11।।

(सू. 16) भेदाविमौ च सादृश्यात्सम्बन्धान्तरतस्तथा।
गौणौ शुद्धौ च विज्ञेयौ ....॥

अनुवाद - ये (सारोपा और साध्यवसाना) दोनों भेद सादृश्य सम्बन्ध से तथा अन्य सम्बन्ध से गौण और शुद्ध भेद समझने चाहिए।

शुद्धा सारोपा और साध्यवसाना लक्षणा के उदाहरण।

अनुवाद -'आयुर्घृतम्' (घी आयु है) और 'आयुरेवेदम्' (यह आयु ही है)

लक्षणा के छः भेद

(सू.17) लक्षणा तेन षड्विधा

अनुवाद - (सू 0 17) उक्त प्रकार से (तेन) लक्षणा छः प्रकार की है।

अनुवाद - आदि के दोनों भेदों के साथ (लक्षणा) छः प्रकार की होती है।
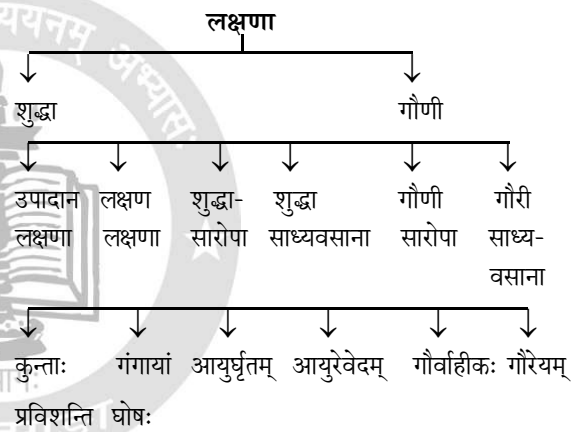
(सू. 18) व्यङ्ग्येन रहिता रूढौ सहिता तु प्रयोजने।

अनुवाद - रूढि में व्यंग्य से रहित और प्रयोजन में व्यंग्य के सहित होती है।

(सू. 19) तच्च गूढमगूढं वा

अनुवाद - और वह व्यंग्य गूढ (सहृदयमात्रवेद्य) अथवा अगूढ (जनसाधारणवेद्य) होता है।

(सू. 23) यस्य प्रतीतिमाधातुं लक्षणा समुपास्यते ॥14॥
फले शब्दैकगम्येऽत्र व्यंजनान्नापरा क्रिया॥

अनुवाद -जिस (प्रयोजन विशेष) की प्रतीति कराने के लिए लक्षणा का आश्रय लिया जाता है, केवल शब्द से गम्य उस प्रयोजन के विषय में व्यंजना के अतिरिक्त और कोई व्यापार नहीं है ।।14।।

(सू. 24) नाभिधा समयाभावात्।

अनुवाद - व्यञ्जना व्यापार ही क्यों होता है? 'ऐसा क्यों ? इस पर कहते हैं।

अनुवाद - समय अर्थात् संकेतग्रह न होने से अभिधा नहीं है

(सू. 25) हेत्वभावान्न लक्षणा ॥15॥

अनुवाद-हेतुओं के न होने से लक्षणा भी नहीं है ।।15।।

(सू. 26) लक्ष्यं न मुख्यं नाप्यत्र बाधो योगः फलेन नो।
न प्रयोजनमेतस्मिन् न च शब्दः स्खलद्गतिः ॥16॥

अनुवाद - (और भी) यहाँ पर लक्ष्यार्थ मुख्य अर्थ नहीं है, उसका यहाँ बाध भी नहीं है, और न (पावनत्वादि) फल के साथ सम्बन्ध ही है और न इसमें कोई प्रयोजन है तथा न शब्द स्खलद्गति ही है ।।16।।

अनुवाद - (वृत्ति) मुख्यार्थ का बाध आदि तीन हेतु हैं।

रस स्वरूप विचार

तत्र रस स्वरूपमाह - रस प्रकरण

(सू. 43) कारणान्यथ कार्याणि सहकारीणि यानि च।
रत्यादेः स्थायिनो लोके तानि चेन्नाट्यकाव्ययोः ॥27॥
विभावा अनुभावास्तत् कथ्यन्ते व्यभिचारिणः।
व्यक्तः स तैर्विभावाद्यैः स्थायीभावो रसः स्मृतः ॥28॥

अनुवाद - उन रस, भाव आदि में प्रथम रस के स्वरूप का विवेचन करते हैं - (सू0 43) लोक में रति आदि स्थायीभावों के जो कारण, कार्य और सहकारी हैं, वे यदि नाट्य और काव्य में प्रयुक्त होते हैं तो वे विभाव, अनुभाव और व्यभिचारीभाव कहे जाते हैं और उन विभावादि से व्यक्त वह स्थायीभाव रस कहा गया है ।।27-28।।

उक्तं हि भरतेन-विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः। एतद्विवृण्वते -विभावैर्ललनोद्यानादिभिरालम्बनोद्दीपनाकारणैः रत्यादिको भावो जनितः अनुभावैः कटाक्षभुजाक्षेपप्रभृतिः कार्यैः प्रतीतियोग्यः कृतः व्यभिचारिभिर्निर्वेदादिभिः सहकारिभिरूपचितो मुख्यया वृत्त्या रामादावनुकार्ये तद्रूपतानुसन्धानान्नर्त्तकेऽपि प्रतीयमानो रस इति भट्टलोल्लटप्रभृतयः।

जैसा कि भरत ने कहा है -

अनुवाद - विभाव, अनुभाव और व्यभिचारिभाव के संयोग के रस की निष्पत्ति होती है।

भट्टलोल्लट का उत्पत्तिवाद

अनुवाद - विभावों ललना आदि आलम्बन तथा उद्यान आदि उद्दीपन कारणों से रति आदि भाव (स्थायीभाव) उत्पन्न होता है, अनुभाव कटाक्ष, भुजाक्षेप आदि कार्यों से प्रतीति के योग्य किया जाता है, व्यभिचारीभाव अर्थात् निर्वेद आदि सहकारी भावों द्वारा परिपुष्ट (उपचित) किया गया मुख्य रूप से राम आदि अनुकार्य में तथा उनके रूप का अनुसन्धान अर्थात् रामादि के रूप का अनुसन्धान के कारण (अनुकर्ता) नर्तक में भी प्रतीयमान (प्रतीत होने वाला) रस है। यह भट्टलोल्लट प्रभृति विद्वानों का मत है।

'राम एवायम् अयमेव राम इति' न रामोऽयमित्यौत्तरकालिके बाधे रामोऽयमिति, रामः स्याद्वा न वाऽयमिति, रामसदृशोऽयमिति च **सम्यङ्मिथ्यासंशयसादृश्यप्रतीतिभ्यो विलक्षणया चित्रतुरगादिन्यायेन रामोऽयमिति प्रतिपत्त्या ग्राह्यो नटे -**

सेयं ममाङ्गेषु सुधारसच्छटा सुपूरकर्पूरशलालिका दृशोः।
मनोरथश्रीर्मनसः शरीरिणी प्राणेश्वरी लोचनगोचरं गोचरं गता (विश्वेश्वर टीका) ॥25॥

'यह मेरे अंगों में अमृत-रस की छटा, आँखों की सुन्दर कपूर की शलाका ओर मेरे मन की शरीर-धारिणी मनोरथश्री (मनोरथ की शोभा) वह प्राणेश्वरी (प्राणप्रिया) अब दृष्टिगोचर हुई अर्थात् दिखाई दी ।।25।।

श्री शंकुक का अनुमितिवाद

अनुवाद - 'यह राम ही है। या 'यह ही राम है' इस प्रकार की (सम्यक् प्रतीति) 'यह राम नहीं है' इस प्रकार उत्तरकाल में बाध होने पर 'यह राम है' इस प्रकार की (मिथ्या प्रतीति) 'यह राम है अथवा नहीं' इस प्रकार की (संशय प्रतीति), 'यह राम के समान है' इस प्रकार की (सादृश्य प्रतीति) इस प्रकार सम्यक् प्रतीति, मिथ्या प्रतीति, संशय प्रतीति और 'सादृश्य प्रतीति' से विलक्षण 'चित्रतुरगन्याय' से यह राम है इस प्रकार की प्रतीति होने से ग्राह्य **नट में -**

दैवादमहद्य तया चपलायतनेत्रया वियुक्तश्च।
अविरलविलोलजलदः कालः समुपागतश्चायम् ॥26॥

इत्यादिकाव्यानुसन्धानबलाच्छिक्षाभ्यासनिर्वर्तितस्वकार्यप्रकटनेन च नटेनैव प्रकाशितैः कारणकार्यसहकारिभिः कृत्रिमैरपि तथाऽनभिमन्यमानैर्विभावादिशब्दव्यपदेश्यैः संयोगात् गम्यगमकभावरूपात्, अनुमीयमानोऽपि वस्तुसौन्दर्य-बलाद्रसनीयत्वेनान्यानुमीयमानविलक्षणः स्थायित्वेन सम्भाव्यमानो रत्यादिर्भावस्तत्रासन्नपि सामाजिकानां वासनया चर्व्यमाणो रस इति श्रीशंकुकः।

'दैववश आज मैं उस चंचल दीर्घ नेत्रों वाली (प्रियतमा) से विमुक्त हुआ और घने चारों ओर छाये हुए बादलों से युक्त यह समय आ गया है' ।।26।।

इत्यादि काव्यों के अनुसन्धान के बल से तथा शिक्षा और अभ्यास से सम्पादित अपने कार्य प्रकट न होने नट के द्वारा ही प्रकाशित होने वाले कृत्रिम होने पर भी वैसा न समझे जाने वाले विभावादि (विभाव, अनुभाव, संचारीभाव) शब्द से व्यवहृत होने वाले (कहे जाने वाले) कारण, कार्य और सहकारी (भावों) के साथ संयोग गम्य गमक भाव सम्बन्ध से अनुमीयमान होकर भी वस्तु के सौन्दर्य के कारण रसनीय (आस्वाद के योग्य) होने से अन्य अनुमीयमान विषयों से विलक्षण स्थायीभाव रूप में संभाव्यमान (ज्ञायमान) रति आदि भाव वहाँ नट में न रहने पर भी सामाजिकों की वासना के द्वारा आस्वाद्यमान (चर्व्यमाण) होकर 'रस कहलाता है, यह श्री शंकुक का मत है।।

'न ताटस्थ्येन नात्मगतत्वेन रसः प्रतीयते, नोत्पद्यते, नाभिव्यज्यते, अपितु काव्ये नाट्ये चाभिधातो। द्वितीयेन विभावादिसाधारणीकरणात्मना भावकत्वव्यापारेण भाव्यमानः स्थायी सत्त्वोद्रेकप्रकाशानन्दमय-संविद्विश्रान्तिसतत्त्वेन भोगेन भुज्यते' इति भट्टनायकः।

भट्टनायक का भुक्तिवाद

अनुवाद - 'न तटस्थ रूप से और न आत्मगत रूप से रस की प्रतीति होती है न उत्पत्ति होती है और न अभिव्यक्ति होती है, अपितु काव्य और नाटक में अभिधा से भिन्न विभावादि के साधारणीकरण रूप 'भावकत्व' नामक व्यापार से भाव्यमान (साधारणीकृत) स्थायीभाव सत्त्व के उद्रेक से प्रकाश और आनन्दमयसंविद् (ज्ञान) के विश्रान्त स्वरूप वाला अर्थात् वेद्यान्तर सम्पर्कशून्य भोग से भोगा जाता है अर्थात् भोजकत्व व्यापार द्वारा अनुभव (भोग) किया जाता है' यह भट्टनायक का मत है।

लोके प्रमदादिभिः स्थाय्यनुमानेऽभ्यासपाटववतां काव्ये नाट्ये च तैरेव कारणत्वादिपरिहारेण विभावनादिव्यापारवत्त्वादलौकिक-विभावादिशब्दव्यावहार्य्यैर्ममैवेते, शत्रोरवैते तटस्थस्यैवैते, न ममैवैते, न शत्रोरेवैते, न ताटस्थस्यैवैते, इति सम्बन्धाविशेषस्वीकारपरिहारनियमानध्यवसायात् साधारण्येन–प्रतीतैरभिव्यक्तः सामाजिकानां वासनात्मकतया स्थितः स्थायी रत्यादिको नियतप्रमातृगतत्वेन स्थितोऽपि साधारणोपायबलात् तत्कालविगलितपरमितप्रमातृ-भाववशोन्मिषितवेद्यान्तर–सम्पर्कशून्यापरमितभावेन प्रमात्र सकलसहृदयसंवादभाजा साधारण्येन स्वीकार इवाभिन्नोऽपि गोचरीकृतश्चर्व्यमाणतैकप्राणः विभावादिजीवितावधिः, पानकरसन्यायेन चर्व्यमाणः, पुर इव परिस्फुरन्, हृदयमिव प्रविशन् सर्वाङ्गीणमिवालिङ्गन्, अन्यत्सर्वमिव तिरोदधद्, ब्रह्मास्वादमिवानुभावयन्; अलौकिकचमत्कारकारी शृङ्गारादिको रसः।

अभिनवगुप्त का अभिव्यक्तिवाद

अनुवाद - लोक में प्रमदा आदि के द्वारा (रत्यादि) स्थायीभाव के अनुमान करने में निपुण सामाजिकों को काव्य और नाटक में उन्हीं कारणत्व आदि (कारण, कार्य, सहकारी आदि) को छोड़कर विभावन आदि व्यापार से युक्त होने से अलौकिक विभाव आदि शब्दों से व्यवहृत किये जाने वाले (व्यवहार्य) उन्हीं से 'ये मेरे ही हैं' ये शत्रु के ही हैं, 'ये तटस्थ के ही हैं, 'ये मेरे नहीं हैं' 'ये शत्रु के नहीं हैं,' ये तटस्थ के भी नहीं हैं, इस प्रकार के सम्बन्ध विशेष के स्वीकार अथवा परिहार (निषेध) करने के नियम का निश्चय न होने से साधारणरूप से प्रतीत होने वाले (ज्ञायमान) से अभिव्यक्त सामाजिकों में वासनारूप स्थित रत्यादि स्थायीभाव नियत प्रमाता (व्यक्तिगत सामाजिक) के रूप में स्थित होने पर भी साधारण उपायों के बल से उसी समय परमित प्रमातृ भाव के नष्ट हो जाने के कारण आविर्भूत हो गया है वेद्यान्तर के सम्पर्क से शून्य अपरिमित प्रमातृभाव जिसका ऐसे प्रमाता के द्वारा समस्त सहृदयों में समान अनुभव से युक्त सामान्य रूप से अपने आकार के समान अभिन्न रूप से अनुभूत होता हुआ आस्वादमात्र स्वरूप वाला विभाव आदि की स्थिति पर्यन्त रहने वाला, पानक रस के समान आस्वाद्यमान, सामने परिस्फुरित होता सा हृदय में प्रविष्ट होता हुआ सा, सारे अंगो को स्पर्श करता हुआ सा, अन्य सब को तिरोभूत करता हुआ सा, ब्रह्मास्वाद के समान आनन्द का अनुभव करता हुआ सा, अलौकिक चमत्कार को उत्पन्न करने वाला शृंगार आदि रस कहा जाता है।

स च न कार्यः, विभावादिविनाशेऽपि तस्य सम्भवप्रसङ्गात्। नापि- ज्ञाप्यः, सिद्धस्य तस्यासम्भवात्; अपितु विभावादिभिर्व्यञ्जितश्चर्वणीयः।

कारकज्ञापकाभ्यामन्यत् क्व दृष्टमिति चेन्न क्वचिद् दृष्टमित्यलौकिकत्वसिद्धर्भूषणमेतन्न दूषणम् ।

रस की अलौकिकता

अनुवाद- और वह रस कार्य नहीं है, विभावादि का नाश होने पर भी उसकी स्थिति सम्भव हो जायेगी। वह ज्ञाप्य भी नहीं है; क्योंकि वह पूर्वसिद्धि अर्थात् पहले से विद्यमान नहीं है। अपितु विभावादि से व्यंजित और आस्वादनीय (चर्वणा के योग्य) है।
कारक और ज्ञापक के अतिरिक्त अन्यत्र कहाँ देखे जाते हैं? तो यह भी ठीक नहीं; (ऐसा कहा जाय); क्योंकि 'कहीं नहीं देखे जाते' यह बात अलौकिकता की सिद्धि का भूषण है, दूषण नहीं ।

तद्विशेषानाह -

(सू044) शृङ्गारहास्यकरुणरौद्रवीरभयानकाः बीभत्साद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः ॥29॥

रस भेद निरूपण

रस का सामान्य निरूपण करने के बाद अब रस-विशेष (रस के भेदों) का निरूपण करते हैं -

अनुवाद - शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, और अद्भुत नाट्य में ये आठ रस कहे गये हैं।

तत्र शृंगारस्य द्वौ भेदौ, सम्भोगो विप्रलम्भश्च। तत्राद्यः परस्परावलोकनालिङ्गनाधरपानपरिचुम्बनाद्यनन्तभेदत्वादपरिच्छेद्य इत्येक एव गण्यते।

(1) श्रृंगार रस के भेद

अनुवाद - उन रसों में शृङ्गार के दो भेद होते हैं - सम्भोग शृङ्गार और विप्रलम्भ शृङ्गार। उनमें पहिला (सम्भोग शृङ्गार) परस्पर अवलोकन, आलिंगन, अधरपान, चुम्बन आदि अनन्त प्रकार का होने से असंख्येय है, किन्तु वह एक ही प्रकार का गिना जाता है । जैसे -

यथा-शून्यं वासगृहं विलोक्य शयनादुत्थाय किञ्चिच्छ्न
निद्राव्याजमुपागतस्य सुचिरं निर्वर्ण्य पत्युर्मुखम्।
विस्रब्धं परिचुम्ब्य जातपुलकामालोक्य गण्डस्थलीं
लज्जा नम्रमुखी प्रियेण हसता बाला चिरं चुम्बिता ॥30॥

अनुवाद - कोई नायिका शयन-गृह को सूना देखकर धीरे से शय्या (पलंग) से थोड़ा सा उठकर नींद का बहाना बनाकर सोए हुए प्रियतम के मुख को बड़ी देर तक देखकर निःशंक होकर चुम्बन करके तब पति के कपोलों को रोमांच (पुलकित) देखकर लज्जा से नम्र मुख वाली बाला का हँसते हुए प्रियतम ने चिरकाल तक चुम्बन किया ।।30।।

यथा- त्वं मुग्धाक्षि विनैव कञ्चुलिकया धत्से मनोहारिणीं
लक्ष्मीमित्याभिधायिनि प्रियतमे तद्वीटिकासंस्पृशि।
शय्योपान्तनिविष्टसस्मितसखीनेत्रोत्सवानन्दितो
निर्यातः शनकैरलीकवचनोपन्यासमालीनजनः ॥31॥

अपरस्तु अभिलाषविरहेर्ष्याप्रवासशापहेतुक इति पञ्चविधः।
क्रमेणोदाहरणम् -**और**

अनुवाद - हे मुग्धाक्षि ! (सुन्दर नेत्रों वाली) 'तुम तो बिना चोली के ही मन को हरण करने वाली शोभा धारण कर रही हो, अर्थात् तुम बिना चोली धारण किये ही बड़ी सुन्दर लग रही हो' इस प्रकार प्रियतम के कहने पर और उसकी गाँठ (खोलने के लिए) छूने पर शय्या के पास बैठी हुई मुस्कुराती हुई सखी के नेत्रों की उत्फुल्लता से आनन्दित हुई अन्य सखियाँ झूठी बात बनाकर धीरे-धीरे निकल गई अर्थात् वहाँ से खिसक गई ।।31।।

दूसरा (अर्थात् विप्रलमभ्शृङ्गार) अभिलाष, ईर्ष्या, विरह, प्रवास तथा शाप (रूप पाँच प्रकार के हेतुओं) के होने के कारण पाँच प्रकार का होता है।

अन्यत्र व्रजतीति का खलु कथा नाप्यस्य तादृक् सुहृद्
यो मां नेच्छति नागतश्च हहहा कोऽयं विधेः प्रक्रमः।
इत्यल्पेतरकल्पनाकवलितस्वान्ता निशान्तान्तरे
बाला वृत्तविवर्तनव्यतिकरा नाप्नोति निद्रां निशि ॥33॥

एषा विरहोत्कण्ठिता

विरहविप्रलम्भ का उदाहरण

अनुवाद - वे अन्यत्र कहीं दूसरी ओर चले गये, इस बात की सम्भावना ही नहीं, (यदि यह कहा जाय कि किसी मित्र के यहाँ चले गये तो उनका कोई वैसा मित्र भी नहीं है, वे मुझे नहीं चाहते, यह बात भी नहीं; फिर भी नहीं आये। अहह ! दैव (भाग्य) का यह कैसा प्रारब्ध (खेल; उद्योग) है? इस प्रकार की अनेक कल्पनाओं से ग्रसित (कवलित) हृदय-वाली बाला (मुग्धा) नायिका शयनगृह के भीतर करवटें बदलती रहती रात में नींद नहीं ले पाती ।।33।।

हास्यादीनां क्रमेणोदाहरणम्-

आकुञ्च्य पाणिमशुचिं मम मूर्ध्नि वेश्या
मन्त्राम्भसां प्रतिपदं पृषतैः पवित्रे।
तारस्वनं प्रथितथूत्कमदात् प्रहारं
हा हा हतोऽहमिति रोदिति विष्णुशर्मा ॥37॥

(2) हास्य रस का उदाहरण

अनुवाद - वेश्या ने अपने अपवित्र हाथ को सिकोड़कर अर्थात् मुट्ठी बाँधकर मन्त्रों से पवित्र जल के बिन्दुओं से प्रतिपद पवित्र मेरे सिर पर जोर से थूत्कार करते हुए (थू-थू करते हुए) प्रहार कर दिया। 'हाय-हाय' मैं मर गया' इस प्रकार कहता हुआ विष्णुशर्मा रो रहा है। ।।37।।

हा मातस्त्वरिताऽसि कुत्र किमिदं हा देवताः क्वाशिषः
धिक् प्राणान् पतितोऽशनिर्हुतवहस्तेऽङ्गेषु दग्धे दृशौ।
इत्थं घर्घरमध्यरुद्धकरुणाः पौराङ्गनानां गिर -
श्चित्रस्थानपि रोदयन्ति शतधा कुर्वन्ति भित्तीरपि ॥38॥

(3) करुणरस का उदाहरण

अनुवाद - हे मातः! इतनी शीघ्रता से कहाँ चली? यह क्या हो गया? हाय देवताओं! (और ब्राह्मणों के) आशीर्वाद कहाँ चले गये? प्राणों को धिक्कार है। तुम्हारे अंगों पर वज्रपात के समान अग्नि गिर गई और नेत्र भी जल गये, इस प्रकार उच्च स्वर से चिल्लाने से (घरघराती) बीच में रुँधी हुई पौरांगनाओं (पुरवासिनी नारियों) के करुण-क्रन्दन से चित्र में लिखित नर-नारियों को भी रुला रही हैं और भित्तियों को शतधा विदीर्ण कर रही हैं ।।38।।

कृतमनुमतं दृष्टं वा यैरिदं गुरुपातकं
मनुजपशुभिर्निर्मर्यादैर्भवद्भिरुदायुधैः।
नरकरिपुणा सार्धं तेषां सभीमकिरीटिना-
मयमहमसृङ्नेदोमांसैः करोमि दिशां बलिम् ॥39॥

(4) रौद्ररस का उदाहरण

अनुवाद - नर पशुओं के सदृश मर्यादा का पालन न करने वाले, हाथ में हथियार लिए हुए आप लोगों ने यह महान् (गुरुहत्या रूप) पातक किया है, करने की अनुमति दी है अथवा देखा है । यह मैं नरकासुर के शत्रु कृष्ण, भीम तथा अर्जुन के साथ उनके (धृष्टद्युम्न आदि के) रक्त, चर्बी और मांस से दिशाओं को बलि प्रदान करता हूँ ।।39।।

क्षुद्राः संत्रासमेते विजहत हरयः क्षुण्णशक्रेभकुम्भा
युष्मद्देहेषु लज्जां दधति परममी सायका निष्पतन्तः।
सौमित्रे ! तिष्ठ पात्रं त्वमसि नहि रुषां नन्वहं मेघनादः
किञ्चिद् भ्रूभंगलीलानियमितजलधिं राममन्वेषयामि ॥40॥

(5) वीर रस का उदाहरण

अनुवाद - अरे क्षुद्र वानरों ! तुम भय को छोड़ दो, क्योंकि इन्द्र के हाथी ऐरावत के गण्डलस्थल को विदीर्ण करने वाले ये बाण तुम्हारे शरीर पर गिरने में लज्जा को धारण करते हैं। हे लक्ष्मण ! ठहरो, तुम भी मेरे क्रोध के पात्र नहीं हो, जानते हो, मैं मेघनाद हूँ, मैं तो भौंहों को थोड़ा वक्र करने मात्र से समुद्र को वश कर लेने वाले राम को खोज रहा हूँ ।।40।।

ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने दत्तदृष्टिः
पश्चार्द्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम्।
दर्भैरर्द्धावलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्त्मा
पश्योदग्रप्लुतत्वाद्वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति ॥41॥

6 - भयानक रस का उदाहरण

अनुवाद - देखो, पीछे दौड़ते हुए रथ पर गरदन मोड़ने से सुन्दर बार-बार दृष्टि डालता हुआ, बाण लगने के भय से शरीर के पिछले आधे भाग को अगले भाग में प्रविष्ट हुआ सा, थकावट के कारण खुले हुए मुख से गिरने वाले आधे चबाये हुए कुशों को मार्ग में बिखेरता हुआ यह मृग, ऊँची छलांग लगाने के कारण आकाश में अधिक और भूमि पर कम चलता है ।।41।।

उत्कृत्योत्कृत्य कृत्तिं प्रथममथ पृथूत्सेधभूयांसि मांसा-
न्यंसस्फिक्पृष्ठपिण्ड्याद्यवयवसुलभान्युग्रपूतीनि जग्ध्वा।
आर्त्तः पर्यस्तनेत्रः प्रकटितदशनः प्रेतरङ्कः करङ्का -
दङ्कस्थादस्थिसंस्थं स्थपुटगतमपि क्रव्यमव्यग्रमत्ति ॥42॥

7 - बीभत्स रस का उदाहरण

अनुवाद - पहिले चमड़े को उधेड़ -उधेड़ कर तब कन्धे, जाँघों, पीठ, पिंडली आदि अवयवों में सुलभ ऊँचे उठने से पुष्कल और उग्र दुर्गन्धयुक्त माँस को खाकर चारों ओर देखता हुआ, दाँत निकाले हुए भूखा दरिद्र प्रेत अपनी गोद में रखे हुए मुर्दे के अस्थि-पञ्जर में से हड्डियों के ऊँचे-नीचे भागों में लगे हुए कच्चे माँस को धीरे-धीरे खा रहा है ।।42।।

चित्रं महानेष बतावतारः क्व कान्तिरेषाऽभिनवैव भङ्गिः।
लोकोत्तरं धैर्यमहो प्रभावः काप्याकृतिर्नूतन एष सर्गः ॥43॥

8 - अद्भुत रस का उदाहरण

अनुवाद - अरे यह महान् अवतार तो विचित्र (अद्भुत) है, यह कान्ति और कहाँ? इसकी भङ्गिमा (गतिविधि) बिलकुल नई सी है। इसका धैर्य भी लोकोत्तर है अहो ! इसका प्रभाव भी अलौकिक है और आकृति भी अनिर्वचनीय है।यह एक नवीन सृष्टि है ।।43।।

एषां स्थायिभावानाह-

(सू0 45) रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहौ भयं तथा।
जुगुप्सा विस्मयश्चेति स्थायिभावाः प्रकीर्त्तिताः ॥30॥

इस प्रकार स्थायीभावों का निरूपण करते हैं -

अनुवाद - रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा और विस्मय ये आठ स्थायीभाव कहे गये हैं ।।30।।

व्यभिचारिणो ब्रूते-

(सू0 46) निर्वेदग्लानिशंकाख्यास्तथाऽसूयामदश्रमाः।
आलस्यञ्चैव दैन्यं च चिन्ता मोहः स्मृतिर्धृतिः ॥31॥
व्रीडा चपलता हर्ष आवेगो जडता तथा।
गर्वो विषाद औत्सुक्यं निद्राऽपस्मार एव च ॥32॥
सुप्तं प्रबोधोऽमर्षश्चाप्यवहित्थमथोग्रता ।
मतिर्व्याधिस्तथोन्मादस्तथा मरणमेव च ॥33॥
त्रासश्चैव वितर्कश्च विज्ञेया व्यभिचारिणः।
त्रयस्त्रिंशदमी भावाः समाख्यातास्तु नामतः ॥34॥

अब व्यभिचारीभाव को कहते हैं -

अनुवाद– निर्वेद, ग्लानि, शंका, असूया, मद, श्रम, आलस्य, दैन्य, चिन्ता, मोह, स्मृति, धृति, व्रीडा, चपलता, हर्ष आवेग, जड़ता, गर्व, विषाद, औत्सुक्य, निद्रा, अपस्मार, सुप्त, प्रबोध, क्रोध, अवहित्था, उग्रता, मति, व्याधि, उन्माद, मरण, त्रास, वितर्क ये 33 व्यभिचारीभाव कहे गये हैं। ।।31-34।।

(सू0 47) निर्वेदस्थायिभावोऽस्ति शान्तोऽपि नवमो रसः।

अनुवाद - जिसका निर्वेद स्थायीभाव है वह 'शान्त' नामक नवम रस है।

अहौ वा हारे वा कुसुमशयने वा दृषदि वा
मणौ वा लोष्ठे वा बलवति रिपौ वा सुहृदि वा।
तृणे वा स्त्रैणे वा मम समदृशो यान्ति दिवसाः
क्वचित् पुण्यारण्ये शिव शिव शिवेति प्रलपतः ॥44॥

9 - शान्तरस

अनुवाद - निर्वेद के प्रायः अमङ्गल रूप होने से सर्वप्रथम उसका कथन उपादेय न होने पर भी (उसका) प्रथम उपादान (ग्रहण) 'व्यभिचारीभाव होने पर भी उसके स्थायीभावत्व के बतलाने के लिए' किया गया है।

अनुवाद - सर्प में अथवा हार में, फूलों की शय्या पर या पत्थर की शिला में, मणि में या ढेले में, बलवान् शत्रु अथवा मित्र में, तिनके में या स्त्रियों के समूह में समदृष्टि रखते हुए किसी तपोवन में 'शिव' 'शिव' इस प्रकार प्रलाप करते हुए मेरे दिन बीत रहे हैं ।।44।।

(सू0 48) रतिर्देवादिविषया व्यभिचारी तथाञ्जितः ॥35॥
भावः प्रोक्तः

भाव-ध्वनि

अनुवाद - (सू048)- देव आदि विषयक रति और (प्राधान्य रूप से) व्यञ्जित व्यभिचारी को भाव कहा गया है ।।35।।

(सू0 49) तदाभासा अनौचित्यप्रवर्त्तिताः।
तदाभासा रसाभासा भावाभासाश्च।

रसाभास और भावाभास

अनुवाद- (49) उनका (रस और भावों का) अनुचित रूप में प्रवृत्त होना रसाभाव और भावाभास है। तदाभास का तात्पर्य रसाभास और भावाभास है।

तत्र रसाभासो यथा -

स्तुमः कं वामाक्षि! क्षणमपि विना यं न रमसे
विलेभे कः प्राणान् रणमखमुखे यं मृगयसे।
सुलग्ने को यातः शशिमुखि ! यमालिङ्गसि बलात्
तपःश्रीः कस्यैषा मदननगरि ! ध्यायसि तु यम् ॥48॥

अत्रानेकाकामुकविषयमभिलाषं तस्याः 'स्तुमः इत्याद्यनुगतं बहुव्यापारोपादानं व्यनक्ति।

रसाभास का उदाहरण

उनमें रसाभास जैसे -

अनुवाद - हे सुन्दर नेत्रों वाली ! हम किसकी प्रशंसा करें ? जिसके बिना तुम क्षण भर भी प्रसन्न नहीं रहती (ऐसा, भाग्यशाली कौन है?) । किसने युद्ध रूपी यज्ञ में प्राणों की आहुति दी है जिसे तुम खोज रही हो? हे चन्द्रमुखि ! कौन ऐसे शुभ मुहूर्त्त में पैदा हुआ है, जिसका तुम बलात् आलिंगन करती हो? हे कामदेव की नगरी! किसकी यह तपः सम्पत्ति हैं, जिसका तुम ध्यान करती हो? ।।48।।

भावाभासो यथा -

राकासुधाकरमुखी तरलायताक्षी
सा स्मेरयौवनतरंगितविभ्रमांगी।
तत्किं करोमि विदधे कथमत्र मैत्रीं
तत् स्वीकृतिव्यतिकरे क इवाभ्युपायः ॥49॥

अत्र चिन्ता अनौचित्यप्रवर्त्तिता। एवमन्येऽप्युदाहार्याः

भावाभास का उदाहरण

अनुवाद - वह (सीता) पूर्णचन्द्र के समान मुख वाली, चञ्चल एवं दीर्घ नेत्रों वाली, तथा अभिनव यौवन से तरंगित हाव - भावादि विलास युक्त अंङ्गो से सुशोभित है, सो मैं क्या करूँ? उसके साथ मित्रता किस प्रकार करूँ? उसकी प्रणय-स्वीकृति प्राप्त करने का क्या उपाय है ? ।।49।।

यहाँ चिन्ता अनौचित्य रूप में प्रवर्तित होने से भावाभास है। इसी प्रकार अन्य उदाहरण भी समझने चाहिए।

(सू0 50) भावस्य शान्तिरुदयः सन्धिः शबलता तथा ॥36॥

अनुवाद - भाव की शान्ति, भाव का उदय, भावसन्धि तथा भावशबलता ये चार भी भावों के साथ गिने जाने चाहिए क्रमशः (उनके) उदाहरण (आगे देते हैं)

क्रमेणोदाहरणम् - तस्याः सान्द्रविलेपनस्तनतटप्रश्लेषमुद्राङ्कितं
किं वक्षश्चरणानतिव्यतिकरव्याजेन गोपाय्यते।
इत्युक्ते क्व तदित्युदीर्य सहसा तत्सम्प्रमार्ष्टुं मया
साऽऽश्लिष्टा रभसेन तत्सुखवशात्तन्व्या च तद्विस्मृतम् ॥50॥

अत्र कोपस्य।

अनुवाद - उस (अन्यस्त्री)के गाढ़- विलेपनवाले स्तनों के अग्रभाग की मुद्रा से अङ्कित अपनी छाती को चरणो में झुकने के बहाने से क्यों छिपा रहे हो (कुपित स्वपत्नी के द्वारा) ऐसा कहे जाने पर, वह (स्तनाग्र की मुद्रा मेरे वक्षः स्थल पर) कहाँ है? 'यह कहकर उस (अन्य स्त्री के आलिङ्गन के चिह्न) को मिटाने के लिए मैंने एकदम जोर से उस (स्वपत्नी) का आलिङ्गन कर लिया और उसके सुख के कारण वह (तन्वी) भी उसको भूल गयी ।।150।।

अथ अष्टम उल्लासः

(गुण-निरूपण)

काव्यप्रकाश के प्रथम उल्लास में ''तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि'' यह काव्य का लक्षण दिया गया है। इस काव्यलक्षण में मम्मट ने शब्दार्थौ का एक विशेषण 'सगुणौ' दिया है। इसी 'सगुणौ' विशेषण की स्पष्ट व्याख्या अष्टम उल्लास में करते हैं। सर्वप्रथम अग्निपुराणकार ने गुण की स्पष्ट व्याख्या करते हुए लिखा है कि जो काव्य में महती शोभा को अनुगृहीत करता है उसे गुण कहते हैं **(यः काव्ये महतीं छायामनुगृह्णात्यसौ गुणः अग्निपुराण-** अग्निपुराणकार ने काव्य में शोभाकारक धर्म को गुण कहा है **(काव्यशोभाकरान् धर्मानलंकारान् प्रचक्षते- अग्निपुराण)** और काव्य में शोभा के अनुग्राहक तत्त्व को गुण कहा है। इस प्रकार अग्निपुराण में गुण और अलङ्कारों का समान महत्त्व प्रतिपादित है। वामन ने जो गुण का लक्षण दिया है **(काव्यशोभायाः कर्त्तारो धर्माः गुणाः)** वह अग्निपुराण के गुण लक्षण से साम्य रखता है।

एवं दोषानुक्त्वा गुणालङ्कारविवेकमाह -

(सू 0 87) ये रसस्याङ्गिनो धर्माः शौर्यादय इवात्मनः।
उत्कर्षहेतवस्ते स्युरचलस्थितयो गुणाः॥66॥

अनुवाद - इस प्रकार सप्तम उल्लास में दोषों का निरूपण करने के पद अब (अष्टम उल्लास में) गुण और अलङ्कार का भेद निरूपण करते हैं -

अनुवाद– जो आत्मा के शौयादि धर्म के समान (काव्य में) अंगीभूत (प्रधान) रस के उत्कर्षक धर्म हैं और अचल स्थित (नियत रूप से रहने वाले) हैं, वे गुण कहे जाते हैं ।

(सू0 88) उपकुर्वन्ति तं सन्तं येऽङ्गद्वारेण जातुचित् ।
हारादिवदलङ्कारास्तेऽनुप्रासोपमादयः ॥67॥

अनुवाद - जो (धर्म) शब्द और अर्थ रूप अङ्ग के द्वारा इसमें विद्यमान अंगी (रस) को कभी-कभी उपकृत करते हैं। वे अनुप्रास, उपमा आदि हार आदि के समान अलङ्कार कहे जाते हैं ।।67।।

अपसारय घनसारं कुरु हारं दूर एव किं कमलैः।
अलमलमालिमृणालैरिति वदति दिवानिशं बाला ॥34॥

इत्यादौ वाचकमुखेन।

अनुवाद - (कोई विरहिणी नायिका सखी से कहती है) हे सखि ! कपूर को हटा लो, हार को भी दूर कर दो, कमलों से क्या लाभ? कमलनाल को भी रहने दो, इस प्रकार वह बाला रातों-दिन बोलती रहती है ।।344।।

गुण-भेद

(सू089) माधुर्यौजः प्रसादाख्यास्त्रयस्ते न पुनर्दश।

एषां क्रमेण लक्षणमाह -

अनुवाद - अब गुणों के भेद का निरूपण करते हैं -

माधुर्य, ओज और प्रसाद ये तीन ही गुण होते हैं, दश गुण नहीं ।

आह्लादकत्वं माधुर्यं शृङ्गारे द्रुतिकारणम् ॥68॥

शृंगारे अर्थात् सम्भोगे। द्रुतिर्गलितत्वमिव। श्रव्यत्वं पुनरोजः प्रसादयोरपि।

अनुवाद - चित्त की द्रुति का कारण आह्लादकत्व (आनन्दस्वरूपता) ही माधुर्य गुण है और वह शृंगार रस में रहता है ।।68।।

शृङ्गार में अर्थात् सम्भोग शृङ्गार में । द्रुति का अर्थ चित्त का द्रवीकरण (चित्त का पिघलना) है। श्रव्यत्व ओज और प्रसाद गुणों में भी होता है।

(सू091) करुणे विप्रलम्भे तच्छान्ते चातिशयान्वितम् ॥

अत्यन्त द्रुतिहेतुत्वात्।

अनुवाद - वह माधुर्य करुण, विप्रलम्भ शृंगार और शान्त रस में उत्तरोत्तर चमत्कारजनक होता है। अत्यन्त द्रवीभाव का कारण होने से।

(सू0 92) दीप्त्यात्मविस्तृतेर्हेतुरोजो वीररसस्थिति ॥69॥

चित्तस्य विस्ताररूपदीप्तत्वजनकमोजः।

अनुवाद - चित्त के विस्तार की हेतुभूत दीप्ति ही ओज गुण है और उसकी स्थिति वीररस में होती है ।।69।।

चित्त के विस्ताररूप दीप्तत्व का जनक ओज गुण है।

(सू093) बीभत्सरौद्ररसयोस्तस्याधिक्यं क्रमेण च।

वीराद्बीभत्से ततो रौद्रे सातिशयमोजः।

अनुवाद – (यह ओज सामान्यतः वीररस में रहता है किन्तु) बीभत्स और रौद्र रसों में क्रमशः उसका आधिक्य (अर्थात् उत्तरोत्तर चमत्कारजनकत्व) रहता है।

अर्थात् वीररस से बीभत्स में और वीभत्स से रौद्र रस में ओज गुण उत्तरोत्तर बढ़कर होता है।

(सू094) शुष्केन्धनाग्निवत् स्वच्छजलवत्सहसैव यः ॥70॥
व्याप्नोत्यन्यत् प्रसादोऽसौ सर्वत्र विहितस्थितिः॥

अन्यदिति व्याप्यमिह चित्तम् । सर्वत्रेति सर्वेषु, रसेषु, सर्वासु रचनासु च।

अनुवाद– सूखे इन्धन में अग्नि के समान तथा स्वच्छ (वस्त्र में) जल के समान जो (गुण) सहसा चित्त में व्याप्त हो जाता है, उसे प्रसाद गुण कहते हैं। इसकी स्थिति सर्वत्र है (अर्थात् यह सभी रसों तथा सभी रचनाओं में रहता है) ।।70।।

यहाँ पर 'अन्यत्' पद का अभिप्राय है व्याप्य चिन्त का ग्रहण है और व्याप्य का अभिप्राय है - सहृदय का हृदय। 'सर्वत्र' पद का अभिप्राय है - सभी रसों में तथा सभी रचनाओं में

(सू095) गुणवृत्त्या पुनस्तेषां वृत्तिः शब्दार्थयोर्मता ॥71॥

गुणवृत्त्या उपचारेण 'तेषां गुणानां। आकारे शौर्यस्येव'
कुतस्त्रय एव न दश इत्याह

अनुवाद उन माधुर्यादि गुणों की शब्द और अर्थ में स्थिति गौण रूप से मानी जाती है ।।71।।

गुणवृत्ति से अर्थात् उपचार से । 'तेषाम्' उन गुणों का। आकार में शौर्य के समान ।

अनुवाद - तीन ही गुण क्यों होते हैं ? दस क्यों नहीं ?

केचिदन्तर्भवन्त्येषु दोषत्यागात्परे श्रिताः।
अन्ये भजन्ति दोषत्वं कुत्रचिन्न ततो दश॥

अनुवाद– इनमें (वामन के 10 गुणों में) से कुछ (गुण तो ऐसे हैं) जो (माधुर्य, ओज, प्रसाद) इन तीनों में अन्तर्भूत हो जाते हैं और कुछ दोषाभाव मात्र है तथा कुछ कहीं दोष रूप हो जाते हैं। इसलिए दस गुण नहीं हैं ।।72।।

अथ नवम उल्लासः

विमर्श - मम्मट ने छः प्रकार के शब्दालङ्कारों का निरूपण किया है। काव्य प्रकाश के टीकाकार सोमेश्वर ने छः प्रकार के शब्दालङ्कार इस प्रकार बताये हैं -

वक्रोक्तिरनुप्रासो यमकं श्लेषचित्रके।
पुनरुक्तवदाभासः शब्दालंकृतयस्तु षट् ॥

अर्थात् वक्रोक्ति अनुप्रास, यमक, श्लेष, चित्र और पुनरुक्तवदाभास ये छः शब्दालङ्कार हैं। इन्हें शब्दालङ्कार इसलिए माना गया है कि इनमें शब्द के परिवर्तन कर देने पर अलङ्कार नष्ट हो जाता है। इस प्रकार शब्द परिवृत्यसह होने से ये शब्दालङ्कार कहे जाते हैं।

(1) वक्रोक्ति अलंकार

(सू0 103) यदुक्तमन्यथावाक्यमन्यथाऽन्येन योज्यते। श्लेषेण काक्वा वा ज्ञेया सा वक्रोक्तिस्तथा द्विधा ॥78॥

तथेति श्लेषवक्रोक्तिः काकुवक्रोक्तिश्च । तत्र पदभङ्गश्लेषेण

अनुवाद - वक्ता के द्वारा, अन्य अभिप्राय से कहा गया जो वाक्य अन्य के द्वारा श्लेष अथवा काकु (ध्वनिविकार) अन्य अर्थ (वक्ता के अभिप्राय से भिन्न अर्थ) में लगा लिया जाता है, वह वकोक्ति नामक शब्दालङ्कार है और वह दो प्रकार का होता है ।।78।।

अनुवाद (वृत्ति) वक्रोक्ति अलङ्कार दो प्रकार का होता है श्लेष वक्रोक्ति और काकुवक्रोक्ति। उनमें पदभंगश्लेष के द्वारा जैसे-

यथा-नारीणामनुकूलमाचरसि चेज्जानासि कश्चेतनो
वामानां प्रियमादधाति हितकृन्नैवाबलानां भवान् ।
युक्तं किं हितकर्तनं ननु वलाभावप्रसिद्धात्मनः।
सामर्थ्यं भवतः पुरन्दरमतच्छेदं विधातुं कुतः ॥352॥

अनुवाद - (वक्ता) यदि तुम स्त्रियों के (नारीणाम्) अनुकूल आचरण करते हो समझदार (बुद्धिमान्) हो। (श्रोता) यदि तुम शत्रुओं के (न+अरी-णाम्) अनुकूल आचरण नहीं करते हो तो बुद्धिमान् हो, (यह अर्थ लगाकर उत्तर देता है कि) कौन बुद्धिमान् (चेतनः) व्यक्ति विरोधियों का (वामानाम्) प्रिय करता है? (वक्ता) तो क्या आप अबलाओं - नारियों के (अबलानाम्) हितकारी (हितकृत्) नहीं हैं? (श्रोता) बल के अभाव के लिए प्रसिद्ध (निर्बल रूप से प्रसिद्ध) दुर्बलजन के हित का विनाश क्या उचित है? (वक्ता) अरे ! (बलासुर के विनाश करने में प्रसिद्ध) इन्द्र के अभिमत (अभीष्ट) का विनाश करने का सामर्थ्य आप में कहाँ है ?

अभंगश्लेषेण यथा -

अहो केनेदृशी बुद्धिर्दारुणा तव निर्मिता ।
त्रिगुणा श्रूयते बुद्धिर्न तु दारुमयी क्वचित् ॥353॥

अभंगश्लेष का उदाहरण, जैसे -

अनुवाद - अहो ! किसने तुम्हारी बुद्धि इस प्रकार दारुण (कठोर, कर) बना दी है? किन्तु त्रिगुणात्मक (सत्त्वरजस्तमोगुण रूप) बुद्धि तो (साख्यदर्शन में) सुनी जाती है, परन्तु दारुमयी (काष्ठ की बनी हुई) बुद्धि तो कहीं नहीं सुनी है ।।353।।

काक्वा यथा-गुरुजनपरतन्त्रतया दूरतरं देशमुद्यतो गन्तुम्। अलिकुलकोकिलललिते नैष्यति सखि!सुरभिसमयेऽसौ ॥354॥

काकु के द्वारा वक्रोक्ति का उदाहरण, जैसे -

अनुवाद - अरे सखि! गुरुजनों के परतन्त्र (अधीन) होने से वे विदेश जाने के लिए उद्यत (तैयार) थे, अतः हे सखि! भ्रमरकुल और कोयलों से रमणीय इस वसन्त काल में नहीं आयेंगे?।।354।।

(2) अनुप्रास अलंकार

(सू0104) वर्णसाम्यमनुप्रासः।

स्वरवैसादृश्येऽपि व्यञ्जनसदृशत्वं वर्णसाम्यम्। रसाद्यनुगतः प्रकृष्टो न्यासोऽनुप्रासः।

अनुवाद -वर्णों की समानता अनुप्रास अलङ्कार है । स्वरों की विसदृशता (असमानता) होने पर भी व्यञ्जनों की समानता ही वर्णसाम्य (वर्णों की समानता) है। रसादि के अनुकूल वर्णों का प्रकृष्ट न्यास (सन्निवेश) अनुप्रास है।

(सू0 105) छेकवृत्तिगतो द्विधा ।

अनुवाद (सू0105) - छेकगत और वृत्तिगत (वह) दो प्रकार का होता है ।

छेका विदग्धाः, वृत्तिर्नियतवर्णगतो रसविषयो व्यापारः। गत इति छेकानुप्रासो वृत्त्यनुप्रासश्च ।

अनुवाद (वृत्ति) छेक शब्द अर्थ विदग्ध (चतुर व्यक्ति) है और वृत्ति नियत वर्णों में रहने वाला रस विषयक व्यापार है । 'गत' इससे छेकानुप्रास और वृत्त्यनुप्रास (अभिप्रेत) है।

किं तयोः स्वरूपमित्याह -

(सू0 106) सोऽनेकस्य सकृत्पूर्वः .....

अनेकस्य अर्थात् व्यञ्जनस्य सकृदेकवारं सादृश्यं छेकानुप्रासः। उदाहरणम् -

अनुवाद - अनेक (वर्णों) का एक बार सादृश्य प्रथम अर्थात् छेकानुप्रास है अर्थात् अनेक व्यञ्जनों का सकृत् एक बार सादृश्य छेकानुप्रास है। जैसे -

ततोऽरुणपरिस्पन्दमन्दीकृतवपुः शशी ।
दध्रे कामपरिक्षामकामिनीगण्डपाण्डुताम् ॥355॥

अनुवाद - इसके बाद अरुण (सूर्य-सारथि) के परिस्पन्द (संचरण, गतिशील होने) से मन्दकान्ति (मलिन स्वरूप) वाले चन्द्रमा ने किसी काम से परिक्षीण (रति-खिन्न) कामिनी के कपोलों की पाण्डुता धारण कर ली ।।355।।

(सू0 107) एकस्याप्यसकृत्परः ॥79॥

एकस्य अपिशब्दादनेकस्य व्यञ्जनस्य द्विर्बहुकृत्वो वा सादृश्यं वृत्त्यनुप्रासः। तत्र -

अनुवाद एक अथवा अनेक (वर्णों, व्यञ्जनों) की अनेक बार सादृश्य (आवृत्ति) दूसरा अर्थात् वृत्त्यनुप्रास है।

एक वर्ण का और 'अपि' शब्द के अनेक व्यञ्जनों का दो बार अथवा अनेक बार सादृश्य वृत्यनुप्रास कहलाता है।

(सू0 108) माधुर्यव्यञ्जकैर्वर्णैरुपनागरिकोच्यते।

अनुवाद - माधुर्य व्यञ्जक वर्णों से युक्त वृत्ति उपनागरिका कही जाती है।

(सू0 109) ओजः प्रकाशकैस्तैस्तु परुषा ।

अनुवाद-ओज के प्रकाशक वर्णों से युक्त परुषा वृत्ति कहलाती है।

उभयत्रापि प्रागुदाहृतम् ('अनङ्गरङ्ग' 'इत्यादि, 'मूर्ध्नामुद्वृत्त' इत्यादि च)

अनुवाद (वृत्ति) - दोनों का उदाहरण पहिले दिया जा चुका है। अर्थात् अष्टम उल्लास में उपनागरिका वृत्ति का उदाहरण 'अनङ्गरङ्गप्रतिमम्' इत्यादि (उदाहरण सं0 349) तथा परुषावृत्ति का उदाहरण 'मूर्ध्नामुद्वृत्त' इत्यादि (उ0सं0350) में दिया जा चुका है।

(सू0112) शाब्दस्तु लाटानुप्रासो भेदे तात्पर्यमात्रतः ॥81॥

अनुवाद –तात्पर्यमात्र से भेद होने पर शब्दानुप्रास लाटानुप्रास कहलाता है ।।81।।

शब्दगतोऽनुप्रासः शब्दार्थयोरभेदेऽप्यन्वयमात्रभेदात् । लाटजनवल्लभत्वाच्च लाटानुप्रासः। एष पदानुप्रास इत्यन्ये।

अनुवाद (वृत्ति) - यह शब्दगत अनुप्रास (शब्दानुप्रास) शब्द और अर्थ का अभेद होने पर भी अन्वय (तात्पर्य) मात्र के भेद होने से तथा लाट देश के लोगों का प्रिय होने के कारण लाटानुप्रास कहलाता है। कुछ आचार्य इसे पदानुप्रास कहते हैं।

(3) यमक अलंकार

(सू0 116) अर्थे सत्यर्थभिन्नानां वर्णानां सा पुनः श्रुतिः। यमकम्

अनुवाद - अर्थ होने पर भिन्न-भिन्न अर्थ वाले वर्णों की पूर्वक्रम के पुनः श्रुति (पुनरावृत्ति) यमक अलङ्कार कहलाता है।

'समरसमरसोऽयम्' (यह समर-समरस है अर्थात् युद्ध में एकरस है) इत्यादि में एक (वर्ण समूह समर) के सार्थक होने पर और दूसरे (वर्णसमूह समरस में 'समर' के) के अनर्थक होने से 'भिन्नार्थानाम्' (भिन्न अर्थ वाले वर्णसमूह का) यह कहना युक्त (ठीक) नहीं है। इसलिए यमक के लक्षण में 'अर्थे सति' (अर्थ के होने पर) यह कहा गया है। 'सा' (उसी रूप में आवृत्ति) उससे 'सरो रसः' इससे विलक्षण रूप से अर्थात् उसी क्रम से स्थित (वर्णों की आवृत्ति होनी चाहिए।)

सन्नारीभरणोमायमाराध्य विधुशेखरम्।
सन्नारीभरणोऽमायस्ततस्त्वं पृथिवीं जय॥360॥

अनुवाद - सती (पतिव्रता) नारियों का भरण-पोषण करने वाली (अथवा पतिव्रता स्त्रियों के आभरण-आभूषण रूप= सन्नारीभरण) उमा (पार्वती) को प्राप्त करने वाले (सन्नारीभरणा या उमा तां याति अयते (प्राप्नोति) वा इति सन्नारीभरण + उमायः तम्) विधुशेखर शिव की आराधना करके सन्नारीभरण (सन्नाःमृता अरीणां शत्रूणाम् इभा गजा यत्र तादृशो रणो युद्धं यस्य सः सन्नारीभरणः) अर्थात् शत्रुओं के हाथियों के विनाशक युद्ध करने वाले, कपट-रहित (अमायः-न माया कपटः-अमायः = कपट-रहितः) आप पृथिवी का विजय प्राप्त करें ।।360।।

विनायमेनो नयताऽसुखादिना विना यमेनोनयता सुखादिना।
महाजनोऽदीयत मानसादरं महाजनोदी यतमानसादरम् ॥361॥

अनुवाद - इस महापुरुष (अयं महाजनः) दुर्जनों का दमन करने वाले (महाजनोदी - महान् उत्सवान् अजन्ति क्षिपन्ति इति महाजाः= दुर्जनाः, तान् नुदति इति महाजनोदी) और शत्रुओं का मान मर्दन करने वाले (मानसात्- (मानं शत्रूणामभिमानं सादयति विनाशयति इति मानसात्) हंस नामक जीवात्मा को (विना - विः =पक्षी, विश्चासौ ना च इति विना पक्षिरूपः पुरुषः हंसाख्यो जीव इति) बिना अपराध के ही (एनोऽपराधं विना) ले जाने वाले (नयता) प्राणों का भक्षण करने वाले (असुखादिना असून् प्राणान् खादति भक्षयति इति तेन असुखादिना प्राणभक्षकेण) सुख का नाश करने वाले (सुखादिना=सुखम् अत्ति भक्षयति तेन इति सुखादिना सुखभक्षकेण) सबको नीचा दिखाने वाले या हानि करने वाले (ऊनयता=हीनं हानिं वा कुर्वता) यमराज ने (यमेन) प्राणरक्षा के लिए प्रयत्न करने वाले लोगों को दुःख देकर (यतमाननां जीवनरक्षणाय प्रयत्नवतां सादं विषादं दुखं राति ददाति इति= यतमानसादरं) मानस से शीघ्र ही (अरं) अलग कर दिया (अदीयत-अखण्डयत)। अर्थात् यमराज ने शरीर से जीव को अलग कर दिया ।।361।।

(4) श्लेष अलंकार

(सू0 118) वाच्यभेदेन भिन्ना यद् युगपद् भाषणस्पृशः। शिलष्यन्ति शब्दाः श्लेषोऽसावक्षरादिभिरष्टधा ॥84॥

अर्थभेदेन शब्दभेदः इति दर्शने 'काव्यमार्गे स्वरो न गण्यते' इति च नये वाच्यभेदेन भिन्ना अपि शब्दा यद् युगपदुच्चारणेन शिलष्यन्ति भिन्नं स्वरूपमपह्नुवते स श्लेषः। स च वर्ण-पद-लिंग-भाषा-प्रकृति-प्रत्यय-विभक्ति-वचनानां भेदादष्टधा। क्रमेणोदाहरणम् -

अनुवाद - अर्थ भेद होने से भिन्न-भिन्न शब्द एक साथ उच्चारण-विषय के कारण जो एक रूप (शिलष्ट) प्रतीत होते हैं, वह श्लेष अलङ्कार है और वह श्लेष अक्षर आदि के भेद से आठ प्रकार का होता है ।।84।।

अनुवाद (वृत्ति)- 'अर्थ भेद से शब्द भेद होता है' अर्थात् यदि 'अर्थ भिन्न-भिन्न हैं तो शब्द भी भिन्न-भिन्न होंगे' इस सिद्धान्त के अनुसार और 'काव्यमार्ग में स्वर (उदात्तादि स्वर) का विचार नहीं किया जाता' इस नियम (न्याय) के अनुसार - अर्थ के भेद से भिन्न होने पर भी शब्द जब एक साथ उच्चारण के द्वारा शिलष्ट हो जाते हैं अर्थात् अपने भिन्न स्वरूप को छिपा लेते हैं, तब वह श्लेष अलङ्कार कहलाता है और वह श्लेष अलङ्कार वर्ण, पद, लिङ्ग,

भाषा, प्रकृति, प्रत्यय, विभक्ति और वचन के भेद से आठ प्रकार का होता है । क्रमशः उनका उदाहरण देते हैं -

(1) वर्णश्लेष

अलङ्कारः शङ्काकरनरकपालं परिजनो–
विशीर्णाङ्गों भृङ्गी वसु च वृष एको बहुवयाः।
अवस्थेयं स्थाणोरपि भवतिं सर्वामरगुरो -
विंधौ वक्रे मूर्ध्नि स्थितवति वयं के पुनरमी ॥369॥

अनुवाद - भय को उत्पन्न करने वाला मानव का कपाल (खोपड़ी) जिस शिव का अलङ्कार है और उनका अनुचर गलित अंगों वाला भृङ्गी है, और (सम्पत्ति) धन एक बूढ़ा बैल है । समस्त देवताओं के पूज्य गुरु (श्रेष्ठ) शिवजी के (स्थाणोः) भी मस्तक पर वक्र (टेढ़े) चन्द्रमा (भाग्य) के स्थित होने पर जब यह दुरवस्था है तो हम तुच्छ मनुष्यों की गणना ही क्या है? ।।369।।

(2) पदश्लेष

पृथुकार्त्तस्वरपात्रं भूषितनिःशेषपरिजनं देव।
विलसत्करेणुगहनं सम्प्रति सममावयोः सदनम् ॥370॥

अनुवाद - हे राजन् ! इस समय हम दोनों का (आपका और हमारा) घर पृथुकार्त्तस्वरपात्र (आपका-विशाल सुवर्ण के पात्रों युक्त और हमारा घर- बच्चों के करुण क्रन्दन का स्थान है), भूषितनिःशेष परिजन (आपका अलंकृत समस्त परिजनों वाला और हमारा-भूमि पर लेटने वाले समस्त परिजनों वाला है), विलसत्करेणुगहन (आपका आवास - सुन्दर हथिनियों से सुशोभित है और हमारा घर - बिल में रहने वाले चूहों के बिल की मिट्‌टी से भरा है) होने से एक समान है ।।370।।

अथ दशम उल्लासः

(अर्थालङ्कारविवेकः)

अलंकार काव्य का सबसे प्रमुख तत्त्व है। काव्य में शोभाकारक धर्म को अलंकार कहते हैं और वह शोभाकारक धर्म यदि अर्थ को अलंकृत करता है तो उसे अर्थालंकार कहते हैं ।

अर्थालङ्कारानाह -

(सू0 125) साधर्म्यमुपमा भेदे

उपमानोपमेययोरेव न तु कार्यकारणादिकयोः साधर्म्यं भवतीति तयोरेव समानेन धर्मेण सम्बन्ध उपमा।

अनुवाद – (उपमान और उपमेय का) भेद होने पर साधर्म्य (सादृश्य) का कथन उपमा (अलङ्कार) है।

अनुवाद (वृत्ति) -उपमान और उपमेय का ही साधर्म्य होता है, कार्य और कारण आदि का साधर्म्य नहीं होता। इसलिए उन दोनों का ही समान धर्म से सम्बन्ध होना उपमा है।

क्रमेणोदाहरणम् -

(1) वाक्यगा श्रौती उपमा का उदाहरण

स्वप्नेऽपि समरेषु त्वां विजयश्रीर्न मुञ्चति ।
प्रभावप्रभवं कान्तं स्वाधीनपतिका यथा ॥392॥

अनुवाद - हे राजन् ! स्वाधीनपतिका नायिका के समान विजयश्री युद्ध में प्रभुशक्तिसम्पन्न आपको स्वप्न में भी नहीं छोड़ती ।।392।।

(2) वाक्यगा आर्थी उपमा का उदाहरण

चकितहरिणलोललोचनायाः क्रुधि तरुणारुणतारहारिकान्ति।
सरसिजमिदमाननं च तस्याः सममिति चेतसि सम्मदं विधत्ते ॥393॥

अनुवाद - चकित हरिणी के समान चञ्चल नेत्र वाली उस नायिका का क्रोध में तरुण-अरुण (सूर्य-सारथि) के समान मनोहर कान्ति वाला यह मुख और यह कमल दोनों समान हो रहे हैं। इसलिए चित्त में आनन्द उत्पन्न करता है ।।393।।

(4) उत्प्रेक्षा अलंकार

(सू0137) सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्

समेन उपमानेन उदाहरणम् -

अनुवाद - जहाँ पर प्रकृत (उपमेय) की सम (उपमान) के साथ सम्भावना की जाती है, वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है।

(यहाँ पर सूत्र में) समेन का अर्थ उपमान के साथ है।

लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवाञ्जनं नभः।
असत्पुरुषसेवेव दृष्टिर्विफलतां गता ॥418॥

अनुवाद - मानो अन्धकार अङ्गों में लिप्त हो रहा है (लेप लगा रहा है) और आकाश काजल की वर्षा कर रहा है तथा दुष्ट-पुरुष की सेवा के समान आँखें विफल सी हो गई हैं ।।418।।

(5) रूपक अलंकार

(सू0 139) तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः।

अतिसाम्यादनपह्नुतभेदयोरभेदः

अनुवाद - उपमान और उपमेय का जो अभेद (अभेदारोप) है, उसे रूपक अलङ्कार कहते हैं।

अत्यन्त साम्य के कारण प्रसिद्ध वैधर्म्य वाचक उपमान और उपमेय में (अभेदारोप रूपक अलंकार है)।

यथा–ज्योत्स्नाभस्मच्छुरणधवला बिभ्रती तारकास्थी -
न्यन्तर्द्धानव्यसनरसिका रात्रिकापालिकीयम् ।
द्वीपाद् द्वीपं भ्रमति दधती चन्द्रमुद्राकपाले
न्यस्तं सिद्धाञ्जनपरिमलं लाञ्छनस्यच्छलेन ॥422॥

अनुवाद (वृत्ति) - आरोप विषय (उपमान) के समान आरोप्यमाण (उपमान) जब शब्दतः, उपात्त (कथित) होते हैं, तब समस्त वस्तुएँ जिसका विषय है ऐसा (समस्तानि) वस्तुति विषयोऽस्य इस

व्युत्पत्ति के अनुसार) समस्तवस्तुविषयक साङ्गरूपक होता। 'आरोपिताः' में बहुवचन अविवक्षित है। जैसे -

''चाँदनी रूप भस्म लगाने से सफेद (शुभ्र), तारका (तारे) रूपी अस्थियों को धारण किये हुए और अन्तर्धान (छिपने) की कला में निपुण (रसिक) यह रात्रि रूपी कापालिकी चन्द्ररूपी मुद्राकापाल में कलङ्क (लाञ्छन) के व्याज से सिद्धाञ्जन का चूर्ण रखे हुए एक द्वीप से दूसरे द्वीप घूम रही है ।।422।।

(6) अतिशयोक्ति अलङ्कार

(सू0 153) निगीर्याध्यवसानं तु प्रकृतस्य परेण यत् ,
प्रस्तुतस्य यदन्यत्वं यद्यर्थोक्तौ च कल्पनम् ॥100॥
कार्यकारणयोर्यश्च पौर्वापर्यविपर्ययः।
विज्ञेयाऽतिशयोक्तिः सा .... ॥

अनुवाद - उपमान के द्वारा उपमेय का निगरण करके काल्पनिक और अभेद का निश्चय (अध्यवसान) करना, प्रस्तुत का अन्य रूप में वर्णन करना, यदि के समानार्थक शब्दों के द्वारा कल्पना अर्थात् असंभव अर्थ की कल्पना करना और कार्य तथा कारण के पूर्वापर भाव का विपर्यय इस प्रकार अतिशयोक्ति अलंकार जानना चाहिए।

अनुवाद (वृत्ति) - उपमान के द्वारा अपने भीतर निगरण कर लिये गये उपमेय का जो अध्यवसान (तादात्म्य निश्चय) होता है, उसे प्रथम प्रकार की अतिशयोक्ति कहते हैं। **जैसे-**

कमलमनम्भसि कमले च कुवलये तानि कनकलतिकायाम्
सा च सुकुमारसुभगेत्युत्पातपरम्परा केयम् ॥450॥

अनुवाद- (अपनी प्रियतमा को देखकर कोई नायक उसकी सखी से कह रहा है कि) जल-स्थल पर कमल, उस कमल पर नीलकमल और वे तीनों (कमल) कनक-लता पर लगे हैं और वह कनकलता कोमल और सुन्दर है। यह कैसी उत्पात की परम्परा है ।।450।।

(7) अर्थान्तरन्यास अलंकार

(सू0 165) सामान्यं वा विशेषो वा तदन्येन समर्थ्यते।
यत्तु सोऽर्थान्तरन्यासः साधर्म्येण परेण वा ॥109॥
साधर्म्येण वैधर्म्येण वा सामान्यं विशेषेण यत् समर्थ्यते, विशेषो वा सामान्येन सोऽर्थान्तरन्यासः।

अनुवाद - जहाँ पर सामान्य का विशेष के द्वारा अथवा विशेष का सामान्य के द्वारा समर्थन होता है, वह अर्थान्तरन्यास अलंकार साधर्म्य अथवा वैधर्म्य से दो प्रकार का होता है ।।109।।

(1) निजदोषावृतमनसामतिसुन्दरमेव भाति विपरीतम् ।
पश्यति पित्तोपहतः शशिशुभ्रं शङ्खमपि पीतम् ॥479॥

अनुवाद - अपने ही दोष से जिनका मन व्याप्त (आवृत) है उनका अति सुन्दर वस्तु भी विपरीत (बुरी) लगा करती है। पित्त (पीलिया) रोग से पीड़ित लोगों को चन्द्रमा के समान शुभ्र (सफेद) शङ्ख भी पीला दिखाई देता है ।।479।।

विमर्श - यहाँ पर पूर्वार्द्ध में कथित 'अपने ही दोष से व्याप्त मन वाले व्यक्ति को सुन्दर वस्तु भी बुरी लगती है' इस सामान्य का समर्थन उत्तरार्द्ध में कथित 'पीलिया रोग से पीड़ित व्यक्ति को सफेद शंख भी पीला दिखाई देता है' इस विशेष कथन से किया गया है, अतः यह साधर्म्य के द्वारा विशेष से सामान्य के समर्थन का उदाहरण है।

(2) सुसितवसनालङ्कारायां कदाचन कौमुदी -
महसि सुदृशि स्वैरं यान्त्यां गतोऽस्तमभूद्विधुः
तदनु भवतः कीर्तिः केनाप्यगीयत येन सा
प्रियगृहमगान्मुक्ताशङ्का क्व नासि शुभप्रदः ॥480॥

अनुवाद - सुन्दर श्वेत वस्त्रों और अलंकारों को धारण किये हुए सुनयना नायिका कभी (किसी दिन) चन्द्रमा की चाँदनी में अभिसार के लिए जा रही थी कि मार्ग में चन्द्रमा अस्त हो गया। उसके बाद आपकी कीर्ति का किसी ने गायन किया, जिससे वह (नायिका) निःशङ्क होकर प्रियतम के घर चली गई, आप कहाँ लोगों के लिए कल्याणकारी नहीं हैं ।।480।।

विमर्श - यहाँ पर 'आप कहाँ पर कल्याणकारी नहीं है' इस सामान्य कथन के द्वारा 'सुसितवसनालङ्कारायाम्' इत्यादि में उपकार विशेष का समर्थन किया गया है; अतः यह साधर्म्य के द्वारा सामान्य से विशेष के समर्थन का उदाहरण है।

काव्यप्रकाश प्रश्नोत्तरी

- मम्मटस्य ग्रन्थः अस्ति— **काव्यप्रकाशः**
- मम्मटस्य कीदृशः ग्रन्थः अस्ति- **लक्षणग्रन्थः**
- कस्य ग्रन्थस्य टीकाः गृहे गृहे विद्यन्ते तथाप्येष तथैव दुर्गमः- **काव्यप्रकाशस्य**
- उपलब्धासु काव्यप्रकाशस्य प्राचीनतमा टीका मन्यते– **सङ्केतटीका**
- गोविन्द-ठक्कुरः अस्ति–**काव्यप्रकाशस्य टीकाकारः**
- काव्यप्रकाशस्य मङ्गलश्लोके कस्याः प्रशंसा कृता– **कविभारत्याः**
- 'ग्रन्थारम्भे भारती कवेर्जयति' इति समुचितेष्टदेवतां कः परामृशति– **मम्मटः**
- 'नियतिकृतनियमरहितां नवरसरुचिराम्' किमस्ति– **काव्यम्**
- काव्यप्रकाशे काव्यप्रयोजनानि सन्ति- **6**

- ☞ 'संकेतितार्थः' कतिधा विभज्यते– **चतुर्धा**
- ☞ मम्मटाचार्येण काव्यभेदाः निरूपिताः – **त्रिविधाः**
- ☞ गुणीभूतव्यङ्ग्यस्य प्रभेदाः कति– **अष्ट**
- ☞ लक्षणायाः हेतवः सन्ति–**त्रयः**
- ☞ अर्थबोधस्य कति प्रमुखसाधनानि–**अष्ट**
- ☞ मम्मटानुसारं लक्षणायाः भेदाः कति– **6**
- ☞ शब्दशक्त्युद्भवो भावो ध्वनिः कतिधा निरूपितः काव्यप्रकाशे– **द्विधा**
- ☞ अविवक्षितवाच्यो ध्वनिः कतिधा उदाहृतः–**द्विधा**
- ☞ काव्यप्रकाशे शब्दः कतिधा निरूपितः – **त्रयः**
- ☞ पदगतदोषाः कति– **षोडश**
- ☞ मम्मटस्य मतेन काव्ये कति गुणाः– **त्रयः**
- ☞ काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
  सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे।।
  –यह उक्ति है– **मम्मट की**
- ☞ मम्मट के अनुसार प्रमुख काव्यप्रयोजन क्या है–**आनन्दप्राप्ति**
- ☞ मम्मट के अनुसार काव्य प्रयोजन नहीं है- **प्रतिभा**
- ☞ 'शिवेतरक्षतये' इत्यत्र शिवेतरपदे कस्य ग्रहणम्–**अमङ्गलस्य**
- ☞ काव्यप्रकाशे स्वीकृतेषु षट्प्रयोजनेषु मौलिभूतं प्रयोजन किम्? – **सद्यःपरनिर्वृति**
- ☞ 'कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे' यह उक्ति है- **मम्मट**
- ☞ श्रीहर्षादे.............दीनामिव धनम् –**धावका**
- ☞ ''काव्यं यशसे'' अत्र 'यशसे' पदे विभक्तिरस्ति–**चतुर्थी**
- ☞ इतिहास का स्वरूप है – **उपदेशप्रधानम्**
- ☞ 'काव्यं यशसे' इति मम्मटोक्तस्योदाहरणं विद्यते– **कालिदासादीनामिव यशः**
- ☞ आचार्य मम्मटानुसारेण काव्यस्योपदेशो भवति–**कान्तासम्मितः**
- ☞ **पुराणं कीदृशम्– सुहृत्सम्मितम्**
- ☞ 'काव्यं यशसे' के उल्लेख वाला ग्रन्थ है–**काव्यप्रकाश**
- ☞ 'काव्यज्ञशिक्षयाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे' इयमुक्तिः कस्माद् ग्रन्थादुद्धृता?–**काव्यप्रकाशात्**
- ☞ 'शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्रकाव्याद्यवेक्षणात् काव्यज्ञशिक्षयाभ्यास इति हेतुः' कस्य मतम्– **मम्मटस्य**
- ☞ का कवित्वबीजरूपः संस्कारविशेषः– **शक्तिः**
- ☞ 'इति हेतुस्तदुद्भवे' में तत् पद का अर्थ है–**काव्य**
- ☞ शक्तिः .... लोकशास्त्रकाव्याद्यवेक्षणात्– **निपुणता**
- ☞ शक्तिर्निपुणतेत्यादिना काव्यहेतुत्वेन कति परिगणिताः काव्यप्रकाशे? – **त्रयः**
- ☞ 'त्रयः समुदिता हेतुः' कौन मानता है –**मम्मट**
- ☞ काव्यप्रकाशस्य काव्यहेतुकारिकायां प्रयुक्तस्य 'शक्तिः' पदस्य कः आशयः– **कविप्रतिभाम्**
- ☞ काव्यहेतुविषये मम्मटरीत्या किं साधु वर्तते–**इति हेतुः**
- ☞ आचार्य मम्मट के अनुसार काव्य का लक्षण है- **तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि**
- ☞ ''स्वभावोक्तिरसौ चारु यथावद् वस्तुवर्णनम्।'' स्वभावोक्ति अलङ्कारस्य अस्मिन् लक्षणे 'चारु' शब्दस्य तात्पर्यमस्ति– **सहृदयहृदयावर्जकं वर्णनम्**
- ☞ मम्मटकृतकाव्यलक्षणे 'अनलङ्कृती' इति पदं कस्मिन् वचने प्रयुक्तम्– **द्विवचने**
- ☞ 'शब्दार्थ काव्य है' यह उक्ति किससे सम्बद्ध है–**मम्मट से**
- ☞ काव्यप्रकाश में उल्लिखित 'अनलङ्कृती' किसका विशेषण है– **शब्दार्थ का**
- ☞ 'सगुणावनलङ्कृती' का अभिप्राय है–**'सर्वत्र सालङ्कारौ' क्वचित्तु स्फुटालङ्कारविरहेऽपि न काव्यत्वहानिः।**
- ☞ 'तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि'अत्र 'तद्' पदस्य किं तात्पर्यम्– **काव्यम्**
- ☞ कस्य काव्यलक्षणं खण्डितं विश्वनाथेन–**मम्मटस्य**
- ☞ काव्यस्य शरीरं किम्– **शब्दार्थौ**
- ☞ काव्यं नाम किम्– **कवेः कर्म**
- ☞ अत्र स्फुटो न कश्चिदलङ्कारः। .... च प्राधान्यान्नालङ्कारता–**रसस्य**
- ☞ 'यः कौमारहरः स एव हि वरः' इत्यादौ रसस्य प्राधान्यात् स्फुटः कः अलङ्कारः परिलक्षितः–**न कश्चित्**
- ☞ 'शब्दपरिवृत्ति असहिष्णुत्व' प्राप्त होता है– **शब्दालङ्कार में**
- ☞ यः कौमारहरः स एव हि– **वरः**
- ☞ 'उपकृतं बहु तत्र किमुच्यते' इत्यादौ पद्ये मम्मटेन को ध्वनिभेदः स्वीकृतः**–अत्यन्ततिरस्कृतवाच्यध्वनिः।**
- ☞ 'स्फोटाश्रित'–काव्यसिद्धान्तोऽस्ति–**ध्वनिः**
- ☞ अर्थान्तरसङ्क्रमितवाच्यध्वनिः कस्य ध्वनेः प्रभेदः– **लक्षणामूलध्वनेः**
- ☞ सशङ्खचक्रो हरिः इत्यस्मिन् उदाहरणे 'हरिशब्दस्य' वाच्यार्थः अस्ति – **विष्णुः**
- ☞ मम्मटानुसारेण उत्तमकाव्यमस्ति- **ध्वनि को**
- ☞ मम्मट के मत में ध्वनिकाव्य है–**उत्तमम्**

- 'वाच्यादतिशयिनि व्यङ्ग्ये' काव्य होता है–**उत्तमम्**
- सारोपालक्षणा कस्यालङ्कारस्य बीजम् अस्ति– **रूपकस्य**
- ''वापीं स्नातुमितो गतासि न पुनस्तस्याधमस्यान्तिकम्'' इत्यत्र कः काव्यभेदः– **व्यङ्ग्यप्राधान्ययुक्तम्**
- 'अतिशयिनि व्यङ्ग्ये' परिभाषया परिचयः भवति– **ध्वनिकाव्यस्य**
- अतादृशि गुणीभूतव्यङ्ग्ये किं काव्यम्–**मध्यमम्**
- काव्यप्रकाश का सबसे प्राचीन टीका 'संकेत' के प्रणेता हैं– **माणिक्यचन्द्र**
- काव्यप्रकाश पर विश्वनाथकृत टीका है– **दर्पणटीका**
- काव्यप्रकाश की सबसे नवीन टीका है– **बालबोधिनी**
- 'बालबोधिनी' टीका के रचनाकार हैं– **वामनाचार्य**
- काव्यप्रकाश में कारिकाओं की कुल संख्या है– **142**
- 142 कारिकाओं का विभाजन किया गया है– **212 सूत्रों में**
- 'काव्यप्रकाश' के प्रथम उल्लास का नाम है– **काव्यप्रयोजनकारण स्वरूपनिर्णय**
- 'काव्यप्रकाश' के द्वितीय उल्लास का नाम है– **शब्दार्थस्वरूपनिर्णय**
- 'काव्यप्रकाश' के तृतीय उल्लास का नाम है– **अर्थव्यञ्जकतानिर्णय**
- 'काव्यप्रकाश' के चतुर्थ उल्लास का नाम है– **ध्वनिनिर्णय**
- 'काव्यप्रकाश' के पञ्चम उल्लास का नाम है– **ध्वनिगुणीभूतव्यङ्ग्य संकीर्णभेदनिर्णय**
- 'काव्यप्रकाश' के षष्ठ उल्लास का नाम है– **शब्दार्थचित्रनिरूपण**
- 'काव्यप्रकाश' के सप्तम उल्लास का नाम है– **दोषदर्शननिरूपण**
- 'काव्यप्रकाश' के अष्टम उल्लास का नाम है– **गुणालंकारभेदनिर्णय**
- काव्यप्रकाश के नवम उल्लास का नाम है– **शब्दालंकारनिर्णय**
- 'काव्यप्रकाश' के दशम उल्लास का नाम है– **अर्थालंकारनिर्णय**
- 'काव्यप्रकाश' के मङ्गलाचरण में वर्णन किया गया है– **सरस्वती का (कविभारती का)**
- 'काव्यप्रकाश' के मङ्गलाचरण में अलंकार है– **व्यतिरेक**
- मङ्गलाचरण में ब्रह्मा की सृष्टि से उत्कृष्ट सृष्टि बतायी गयी है– **कविभारती की**
- मङ्गलाचरण में कितने प्रकार की विशेषताओं का वर्णन किया गया है?– **चार**
- मङ्गलाचरण में छन्द है– **आर्या**
- नियतिकृतनियमरहितां ह्लादैकमयीमनन्यपरतन्त्राम्।
  नवरसरुचिरां निर्मितिमादधती भारती कवेर्जयति।।
  यह काव्यप्रकाश का है– **मङ्गलाचरण**
- 'काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये' यह काव्यप्रकाश का है– **काव्यप्रयोजन**
- 'कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे' यह काव्यप्रकाश का है– **काव्यप्रयोजन**
- आचार्यमम्मट ने काव्य के प्रयोजन बताएँ हैं– **6**
- काव्य की कौन-सी शैली सबसे विलक्षण है?– **उपदेशशैली**
- 'धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च' यह भामह का है– **काव्यप्रयोजन**
- प्रयोजन षट्क का निरूपण किया है– **मम्मट ने**
- 'तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि' यह काव्य-परिभाषा है– **मम्मट की**
- उपदेशशैली के प्रकार हैं– तीन
  1. प्रभुसम्मित 2 सुहृत्सम्मित 3. कान्तासम्मित
- प्रभुसम्मित शैली को कहा जाता है– **शब्दप्रधान**
- सुहृतसम्मित शैली को कहा जाता है– **अर्थप्रधान**
- कान्तासम्मित शैली को कहा जाता है– **रसप्रधान**
- वेदशास्त्र आदि की शैली है– **प्रभुसम्मित**
- इतिहासपुराण आदि की शैली है– **सुहृत्सम्मित**
- काव्यादि की शैली है– **कान्तासम्मित**
- 'शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्रकाव्याद्यवेक्षणात्' यह काव्य हेतु है– **मम्मट का**
- 'इति हेतुस्तदुद्भवे' यह है– **काव्यहेतु**
- शक्ति (प्रतिभा) निपुणता और अभ्यास को काव्य के उद्भव का कारण मानते हैं– **मम्मट**
- कवित्वबीजरूप संस्कार विशेष है– **शक्ति**

साहित्यदर्पणः

प्रथमः परिच्छेदः

ग्रन्थारम्भे निर्विघ्नेन प्रारिप्सितपरिसमाप्तिकामो वाङ्मयाधिकृततया वाग्देवतायाः सांमुख्यमाधत्ते-

(वाग्देवी-वन्दना)

(साहित्यदर्पण के रचयिता कविराज विश्वनाथ) अपने ग्रन्थ (साहित्यदर्पण) की निर्विघ्नसमाप्ति की कामना से, ग्रन्थारम्भ के पहले, वाङ्मय की एकमात्र अधिकारिणी भगवती वाग्देवी की दया-दीक्षा का ध्यान कर रहे हैं-

शरदिन्दुसुन्दररुचिश्चेतसि सा मे गिरां देवी।
अपहृत्यतमः सन्ततमर्थानखिलान्प्रकाशयतु॥1॥

शरच्चन्द्र की कान्ति से भी बढ़ी-चढ़ी कान्ति वाली, वह (त्रिभुवनवन्दिता) वाग्देवी सरस्वती हमारे हृदय का अज्ञानान्धकार दूर करती रहे और उसमें समस्त (काव्यात्मक) अर्थ-तत्त्वों को अवभासित करती रहे।

(काव्य-प्रयोजन : पुरुषार्थचतुष्टय की प्राप्ति)

चतुर्वर्गफलप्राप्तिः सुखादल्पधियामपि।
काव्यादेव यतस्तेन तत्स्वरूपं निरूप्यते॥2॥

(चतुर्वर्गप्राप्तिरूप काव्य-प्रयोजन का तात्पर्य)

चतुर्वर्गफलप्राप्तिर्हि काव्यतो 'रामादिवत्प्रवर्तितव्यं न रावणादिवत्' इत्यादि कृत्याकृत्यप्रवृत्तिनिवृत्त्युपदेशद्वारेण सुप्रतीतैव।

(चतुर्वर्ग-प्राप्ति का सरल सुखद साधन काव्य ही है)

पुरुषार्थचतुष्टय-प्राप्तिरूप काव्य-प्रयोजन वस्तुतः सर्वविदित है क्योंकि यह सभी जानते हैं कि काव्य उपदेश दिया करता है-राम के जैसा आचार-व्यवहार बनाओ, रावण के जैसा आचार-व्यवहार न बनाओ।' काव्य का यह उपदेश 'कृत्य'-धर्मादिरूप कर्त्तव्य-कर्म-की ओर हमारी प्रवृत्ति और 'अकृत्य' अधर्मादिरूप अकर्त्तव्य-अकर्म-की ओर से हमारी निवृत्ति का कारण है (और इस प्रकार चतुर्वर्ग-प्राप्ति का अन्यतम उपाय है)।

उक्तं च (भामहेन)-

'धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च।
करोति कीर्तिं प्रीतिं च साधुकाव्यनिबन्धनम्॥' इति।

तत्किं पुनः काव्यमित्युच्यते-

वाक्यं रसात्मकं काव्यम् -

रसस्वरूपं निरूपयिष्यामः। रस एवात्मा साररूपतया जीवनाधायको यस्य। तेन विना तस्य काव्यत्वाभावस्य प्रातिपादितत्वात् 'रस्यते इति रसः' इति व्युत्पत्तियोगाद्भावतदाभासादयोऽपि गृह्यन्ते।

काव्य क्या है? 'काव्य वह वाक्य है जो रसात्मक हो।'

'रस क्या है? इसका निरूपण तो आगे (तृतीय परिच्छेद में) किया ही जायगा। यहां 'रसात्मक' वाक्य का अभिप्राय बता देना उचित है। 'रसात्मक' वाक्य उस वाक्य को कहते हैं जिसका आत्मतत्त्व 'रस' हुआ करता है। अथवा जिसे जीवित-जागृत रखने वाला एकमात्र सारतम तत्त्व 'रस' है। 'रस' के बिना कोई भी वाक्य काव्य नहीं हो सकता-यह ऐसी बात है जो पहले ही बता दी जा चुकी है। यहाँ 'रस' का अभिप्राय केवल (शृङ्गारादि) रस नहीं अपि तु वह है जो आस्वादविषय हो' इस 'रस' शब्द की व्युत्पत्ति के आधार पर जो भी सहृदयों के आस्वाद के विषय हुआ करते हैं जैसे कि भाव, रसाभास और भावाभास आदि 2 वे सभी यहाँ विवक्षित और समुच्चित हैं।

(काव्य-रसात्मकवाक्य-के निदर्शन)

तत्र रसो यथा-

शून्यं वासगृहं विलोक्य शयनादुत्थाय किञ्चिच्छनै-
र्निद्राव्याजमुपागतस्य सुचिरं निर्वर्ण्य पत्युर्मुखम्।
विस्रब्धं परिचुम्ब्य जातपुलकामालोक्य गण्डस्थलीं
लज्जानम्रमुखी प्रियेण हसता बाला चिरं चुम्बिता॥

अत्र हि संभोगशृङ्गाराख्यो रसः।

जैसे कि यह (प्राचीन) सूक्ति जिसमें 'रस' ही सारतम तत्त्व है- 'नवोढा सुन्दरी ने देखा कि शयनगृह से और सभी लोग जा चुके हैं, वह अपनी सेज से कुछ-कुछ धीरे-धीरे उठी, उसने नींद का बहाना बनाये सोने वाले अपने प्रियतम का मुँह बड़े ध्यान से देखा, उसे सचमुच सोया समझ कर निश्चिन्तता के साथ, उसका मुख-चुम्बन कर लिया और जैसे ही उसके कपोलों पर आनन्द का रोमाञ्च देखती वह लज्जा से अपना मुँह झुकायें खड़ी हुई कि उसने (प्रियतम ने) हँस-हँसकर, बड़ी देर तक, उस पर चुम्बनों की बौछार शुरू कर दी।

यहाँ जो वाक्य है वह 'काव्य' है क्योंकि इसमें इसका जीवनाधायक संभोगशृङ्गाररस साक्षात् विराजमान है।

द्वितीयः परिच्छेदः

वाक्यस्वरूपमाह—

वाक्यं स्याद्योग्यताकाङ्क्षासत्तियुक्तः पदोच्चयः।

योग्यता पदार्थानां परस्परसम्बन्धे बाधाभावः। पदोच्चयस्यैतदभावेऽपि वाक्यत्वे 'वह्निना सिञ्चति' इत्यादावपि वाक्यं स्यात्। आकाङ्क्षा = प्रतीतिपर्यवसानविरहः। स च श्रोतुर्जिज्ञासारूपः। निराकाङ्क्षस्य वाक्यत्वे, 'गौरश्वः पुरुषो हस्ती' इत्यादीनामपि वाक्यत्वं स्यात्। आसत्तिर्बुद्ध्यविच्छेदः। बुद्धिविच्छेदेऽपि वाक्यत्वे इदानीमुच्चारितस्य देवदत्तशब्दस्य दिनान्तरोच्चारितेन गच्छतीति पदेन सङ्गतिः

स्यात् । अत्राऽऽकाङ्क्षायोग्यतयोरात्मार्थधर्मत्वेऽपि पदोच्चयधर्मत्वमुपचारात्।

वाक्य का लक्षण कहते हैं–

आकाङ्क्षा योग्यता और आसत्ति से युक्त पदसमूह को वाक्य कहते हैं। पदार्थों की परस्पर सम्बन्ध में बाध न होने को ''योग्यता'' कहते हैं। योग्यता के न होने पर पदसमुदाय को वाक्य मानें तो ''वह्निना सिञ्चति'' अर्थात् आग से सेचन करता है इत्यादि प्रयोग भी वाक्य होगा। सेचन क्रिया में वह्नि की करणता न होने से (योग्यता न होने से) यह वाक्य नहीं है।

ज्ञान की समाप्ति के अभाव को 'आकाङ्क्षा' कहते हैं। यह श्रोता की जिज्ञासारूप है। आकाङ्क्षा से रहित पदसमूह को वाक्य मानें तो ''गौरश्वः पुरुषो हस्ती'' ''गाय, घोड़ा, पुरुष, हाथी'' इत्यादि पदसमूह भी वाक्य हो जायेगा। आकाङ्क्षा के न रहने से यह वाक्य नहीं है। बुद्धि का विच्छेद अर्थात् व्यवधान न होने का ''आसत्ति'' कहते हैं। बुद्धिविच्छेद होने पर भी पदसमूह को वाक्य मानें तो इस समय में उच्चारण किये गये ''देवदत्तः'' शब्द का दूसरे दिनमें उच्चारण किये गये ''गच्छति'' जाता है इस पद के साथ सगति होगी, अतः बुद्धिविच्छेद के होने से यह वाक्य नहीं है। यहाँ पर आकाङ्क्षा आत्मा का धर्म है और योग्यता पदार्थ का धर्म है तथाऽपि परस्परासम्बन्ध से ये पदसमूह के भी धर्म माने गये हैं।

वाक्योच्चयो महावाक्यम्–

योग्यताकाङ्क्षासत्तियुक्त इत्येव।

इत्थं वाक्यं द्विधा मतम्।

योग्यता, आकाङ्क्षा और आसत्ति से युक्त वाक्यसमूह को ''महावाक्य'' कहते हैं। इस प्रकार वाक्य के दो भेद हैं- वाक्य और महावाक्य ।।1।।

अर्थो वाच्यश्च लक्ष्यश्च व्यङ्ग्यश्चेति त्रिधा मतः ॥2॥

वाच्य, लक्ष्य और व्यङ्ग्य इस प्रकार अर्थ के तीन भेद होते हैं।

एषां स्वरूपमाह–

वाच्योऽर्थोऽभिधया बोध्यो लक्ष्यो लक्षणया मतः।

व्यङ्ग्यो व्यञ्जनया ताः स्युस्तिस्रः शब्दस्य शक्तयः ॥3॥

अर्थों का लक्षण कहते हैं- अभिधा से वाच्य अर्थ का, लक्षणा से लक्ष्य अर्थ का और व्यञ्जना से व्यङ्ग्यअर्थ का बोध होता है, इस प्रकार शब्द की तीन शक्तियाँ (वृत्तियाँ) होती हैं। ।।3।।

तत्र संकेतितार्थस्य बोधनादग्रिमाऽभिधा

उनमें सङ्केतित (मुख्य) अर्थ का बोध करने से पहली वृत्ति को ''अभिधा'' कहते हैं।

(संकेतग्रह के उपाय) उत्तमवृद्धेन मध्यमवृद्धिमुद्दिश्य 'गामानय' इत्युक्ते तं गवानयनप्रवृत्तमुपलभ्य बालोऽस्य वाक्यस्य 'सास्नादिमात्यिडानयनमर्थः' इति प्रथमं प्रतिपद्यते, अनन्तर च 'गां बधान' अश्वमानय इत्यादावावापोद्वापाभ्यां गोशब्दस्य 'सास्ना दिमानर्थः' आनयनपदस्य च आहरणमर्थः इति संकेतमवधारयति क्वचिच्च प्रसिद्ध पदसमभिव्याहारात् यथा इह प्रभिन्नकमलोदरे मधूनि मधुकरः पिबति' इत्यत्र। क्वचिद्आप्तोपदेशात्, यथा - 'अयमश्वश ब्दवाच्यः' इत्यत्र। तं च सङ्कतितमर्थ बोधयन्ती शब्दास्य शक्त्यन्तरानन्तरिता शक्तिरभिधा नाम।

उत्तम वृद्ध के मध्यम वृद्ध को उद्देश्य करके ''गाय लाओ'' ऐसा कहने पर मध्यम वृद्ध को गाय लाने पर तत्पर अनुमान कर बालक इस वाक्य का ''सास्ना (गलकम्बल) आदि से युक्त पिण्ड को लाना अर्थ है। ऐसा पहले समझ लेता है। पीछे ''गाय को बाँधो'' ''घोडे.को लाओ'' इत्यादि वाक्य में अन्वय और व्यतिरेक से गोशब्द-का सास्ना (गलकम्बल) वाला पिण्ड अर्थ है और आनय पद का लाना अर्थ है ऐसे सङ्केत (शक्ति) को निश्चय करता है। इस प्रकार व्यवहार शक्तिग्रह का उदाहरण है।

कहीं पर प्रसिद्ध अर्थ वाले पद के समीप उच्चारण से शक्तिग्रह होता है। जैसे- ''इस विकसित कमल के बीच में बैठकर मधुकर शहद पी रहा है'' यहाँ पर प्रसिद्धार्थ पद कमल के समीपोच्चारण से मधुकर पद का भ्रम में शक्तिग्रह होता है। कहीं पर आप्त (यथार्थ वक्ता) के उपदेश से शक्तिग्रह होता है। जैसे यह 'अश्व' शब्द से कहा जाता है। यहाँ पर आप्त के उपदेश से घोड़े से अश्व शब्द का शक्तिग्रह हुआ है। उस सङ्केतित (मुख्य) अर्थ का बोध कराने वाली, शब्द का किसी दूसरी शक्ति (वृत्ति) से व्यवधान-शून्य शक्ति (वृत्ति) को ''अभिधा'' कहते हैं। जाति, गुण, द्रव्य और क्रिया में सङ्केत (शक्ति) का ग्रहण किया जाता है। ।।4।।

संकेतोगृह्यते जातौ गुणद्रव्यक्रियासु च ॥4॥

शब्द चार प्रकार के हाते हैं- जातिवाचक, गुणवाचक, द्रव्यवाचक और क्रियावाचक।

लक्षणाशक्ति-निरूपण

अथ लक्षणा–

मुख्यार्थबाधे तद्युक्तो ययान्योऽर्थः प्रतीयते ।

रूढेः प्रयोजनाद्वाऽसौ लक्षणा शक्तिरर्पिता ॥5॥

अब लक्षणा का निरूपण करते हैं–

अभिधा शक्ति से निरूपित मुख्य अर्थ का बोध (प्राचीनों के मत में अन्वय की) अनुपपत्ति, नवीनों के मत में तात्पर्य की अनुपपत्ति होने पर रूढि (प्रसिद्धि) वा प्रयोजन का उद्देश्य जिस (वृत्ति) से

अन्य अर्थ की प्रतीति होती है उसे ''लक्षणा'' कहते हैं। यह शक्ति अर्पित अर्थात् स्वाभाविक से भिन्न है या ईश्वर से उद्भावित नहीं है। ।।5।।

'कलिङ्गः साहसिकः' इत्यादौ कलिङ्गादिशब्दो देशविशेषादिरूपे स्वार्थेऽसंभवन् यया शब्दशक्त्वा स्वसंयुक्तान् पुरुषादीन् प्रत्याययति, यया च 'गङ्गायां घोषः' इत्यादौ गङ्गादिशब्दो जलमयादिरूपार्थ-वाचकत्वात्प्रकृतेऽसंभवन् स्वस्य सामीप्यादि-सम्बन्धसम्बन्धिनं तटादिं बोधयति, सा शब्दस्यार्पिता स्वाभाविकेतरा ईश्वरानुद्भाविता वा शक्तिर्लक्षणा नाम। पूर्वत्र हेतू रूढिः प्रसिद्धिरेव। उत्तरत्र 'गङ्गातटे घोषः' इति प्रतिपादनालभ्यस्य शीतत्वपावनत्वातिशयस्य बोधनरूपं प्रयोजनम्। हेतुं विनापि यस्य कस्यचित्सम्बन्धिनो लक्षणेऽतिप्रसङ्गः स्यात्, इत्युक्तम्– 'रूढेः प्रयोजनाद्वाऽसौ' इति।

''कलिङ्गः साहसिकः'' अर्थात् ''कलिङ्गदेश साहसी है'' इत्यादि वाक्य में कलिङ्ग आदि शब्द देशविशेष आदि रूप स्वार्थ (मुख्य अर्थ) में अनुपपन्न होकर जिस शब्द शक्ति से स्व = मुख्य अर्थ देशविशेष, उसके साथ संयुक्त = संयोगसम्बन्ध से वर्तमान पुरुष आदियों की प्रतीति करता है। (रूढ़ि लक्षणा में)।

उसी तरह ''गङ्गायां घोषः'' अर्थात् ''गङ्गापर आभीरों का ग्राम है'' इत्यादि वाक्य में गङ्गाआदि शब्द जलमयादि (प्रवाह रूप अर्थ का वाचक होने से प्रकृत (प्रस्तुत) गङ्गा शब्द में, अन्वय में अनुपपन्न होकर जिस शब्दशक्ति से गङ्गा शब्द के सामीप्य आदि सम्बन्ध से सम्बद्ध तट आदि का बोध कराती है, वह शब्द की अर्पिता = अर्थात् स्वाभाविक से भिन्न अथवा ईश्वर से अनुद्भावित शक्ति को ''लक्षणा'' कहते हैं।

पहले ''कलिङ्गः साहसिकः'' इस वाक्य में हेतु रूढि अर्थात् प्रसिद्धि ही है। दूसरे ''गङ्गायां घोषः'' इस वाक्य में ''गङ्गातट में घोष है'' ऐसे प्रतिपादन से अलभ्य शीतलत्व और पावनत्व के आधिक्य का बोध करना प्रयोजन है। हेतु के बिना जिस किसी भी सम्बन्धी = मुख्य अर्थ के सम्बन्ध से युक्त की लक्षणा करेंगे तो अतिप्रसङ्ग (अव्याप्ति) होगा इसलिए कहा है– ''रूढेः प्रयोजनाद्वाऽसौ'' कुछ लोग (काव्यप्रकाशकार) ''कर्मणि कुशलः'' इसको रूढिमती लक्षणा का उदाहरण बताते हैं। उनका यह अभिप्राय है, ''कुशान् लाति'' अर्थात् कुशों को लाता है, इसमें कुशल पदका व्युत्पत्ति लभ्य कुशग्राहकत्व रूप मुख्य अर्थ यहाँ पर अनुपपन्न होता हुआ विवेचकत्व (दूर्वा तृण आदि का परिहारकत्वरूप) आदि साधर्म्य सम्बन्ध से सम्बद्ध दक्ष (निपुण) रूप अर्थ का बोधन करता है। उनसे भिन्न और लोग इस बात को नहीं मानते हैं। व्युत्पत्ति के कुशल पद का कुशग्राहक रूप अर्थ की प्राप्ति होने पर भी इस का दक्षरूप ही मुख्य अर्थ है। क्योंकि शब्दों की व्युत्पत्ति का निमित्त और प्रवृत्ति भिन्न-भिन्न होता है। व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ को मुख्य अर्थ मानेंगे तो निमित्त और प्रवृत्ति निमित्त भिन्न-भिन्न होता है। व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ को मुख्य अर्थ मानेंगे तो ''गौः शेते'' गाय सोती है यहाँ भी लक्षणा होगी, क्योंकि ''गमेर्डोः'' गाय सोती है यहाँ भी लक्षणा होगी, क्योंकि ''गामेर्डोः'' इस सूत्र से गम्धातु डो प्रत्यय से निष्पन्न गो शब्द का शयन काल में प्रयोग होने से लक्षणा करनी पड़ेगी।

तद्भेदानाह–

मुख्यार्थस्येतराक्षेपो वाक्यार्थेऽन्वयसिद्धये ।
स्यादात्मनोऽप्युपादानादेषोपादानलक्षणा ॥6॥

लक्षणा के भेद बतलाते हैं– वाक्यार्थ में मुख्य अर्थ के अन्वय की सिद्धि के लिए जहाँ अन्य अर्थ का आक्षेप होता है वहाँ पर मुख्य अर्थ का भी ग्रहण होने से उसे ''उपादान-लक्षणा'' कहते हैं। ।।6।।

रूढावुपादानलक्षणा यथा- 'श्वेतो धावति'। प्रयोजने यथा- 'कुन्ताः प्राविशन्ति'। अनयोर्हि श्वेतादिभिः कुन्तादिभिश्चाचेतनतया केवलैर्धावन-प्रवेशनक्रिययोः कर्तृतयान्वयमलभमानैरेतत्सिद्धये आत्मसम्बन्धिनोऽश्वादयः पुरुषादयश्चाक्षिप्यन्ते। पूर्वत्र प्रयोजनाभावाद्रूढिः, उत्तरत्र तु कुन्तादीनामतिगहनत्वं प्रयोजनम्। अत्र च मुख्यार्थस्यात्मनोऽप्युपादानम्। लक्षणलक्षणायां तु परस्यैवोपलक्षणमित्यनयोर्भेदः। इयमेवाजहत्स्वार्थेत्युच्यते।

रूढि में उपादानलक्षण जैसे- ''श्वेतो धावति'' (सफेद दौड़ रहा है)। प्रयोजन में उपादान लक्षणा जैसे- कुन्ताः प्रविशन्ति (भाले प्रवेश कर रहे हैं।) इन दो उदाहरणों में ''श्वेतो धावति'' यहाँ पर श्वेत आदि और ''कुन्ताः प्रविशन्ति'' यहाँ पर केवल कुन्त आदि अचेतन (जड़) होने से धावन और प्रवेशन क्रिया में कर्ता होकर अन्वित नहीं हो सकते हैं अतः अन्वय की सिद्ध के लिए श्वेत वर्णवाले अश्व आदि का कुन्तक के धारण करनेवाले पुरुष आदि का आक्षेप करते हैं। ''श्वेतो धावति'' यहाँ पर प्रयोजन न होने से रूढिमती लक्षणा। ''कुन्ताः प्रविशन्ति'' यहाँ पर कुन्तों की अतिगहनता प्रयोजन है। उपादान लक्षणा में मुख्यार्थ का भी ग्रहण होता है। लक्षणलक्षणा में तो लक्ष्य अर्थ का ही उपलक्षण होता है यह इन दोनों का भेद है। इसे ही अजहत् स्वार्था' कहते हैं। ।।6।।

लक्षण-लक्षणा

अर्पणं स्वस्य वाक्यार्थे परस्यान्वयसिद्धये।
उपलक्षणहेतुत्वादेषा लक्षणलक्षणा ॥7॥

लक्षणलक्षणा का लक्षण करते हैं- वाक्यार्थ में पर = मुख्य अर्थ से भिन्न अर्थ की अन्वयसिद्धि के लिए जहाँ मुख्य अर्थ का समर्पण होता है वहाँ लक्षणलक्षणा होती है। यह उपलक्षण (अमुख्य अर्थमात्रके बोधन) का कारण होती है। ।।7।।

रूढिप्रयोजनयोर्लक्षणलक्षणा यथा- 'कलिङ्गः साहसिकः' 'गङ्गायां घोषः' इति च। अनयोर्हि पुरुषतटयोर्वाक्यार्थेऽन्वयसिद्धये कलिङ्गगङ्गाशब्दा-वात्मानमर्पयतः।

यथा वा–

'उपकृतं बहु तत्र किमुच्यते, सुजनता प्रथिता भवता परम् ।'
विदधदीदृशमेव सदा सखे! सुखितमास्स्व ततः शरदां शतम् ॥'

अत्रापकारादीनां वाक्यार्थेऽन्वयसिद्धये उपकृतादयः शब्दा आत्मानमर्पयन्ति। अपकारिणं प्रत्युपकारादिप्रतिपादनान्मुख्यार्थबाधो वैपरीत्यलक्षणः सम्बन्धः, फलमप्यपकारातिशयः। इतमेव जहत्स्वार्थेत्युच्यते।

रूढ़ि लक्षणलक्षणा- ''कलिङ्गः साहसिकः''। प्रयोजन में लक्षणलक्षणा जैसे- ''गङ्गायां घोषः''। इन दोनों में क्रम से वाक्यार्थ में पुरुष और तट के अन्वय की सिद्धि के लिए ''कलिङ्ग'' और गङ्गा शब्द अपने मुख्यार्थ का समर्पण करते हैं।

अथवा- उपकृतम्. अपकारी को कोई कहता है- ''हे मित्र! आपने बहुत उपकार किया है, क्या कहना है आपने अत्यन्त सौजन्य का विस्तार किया है। आप ऐसे ही कर्म को करते हुए सौ साल तक सुखपूर्वक जीते रहें।'' इस वाक्यार्थ में अपकार आदियों के अन्वय की सिद्धि के लिए अपकृत आदि शब्द अपने स्वरूप का समर्पण करते हैं। अपकारी के प्रति उपकार आदि का प्रतिपादन करने से मुख्याऽर्थ का बाध (अन्वयाऽनुपपत्ति) है। वैपरीत्यरूप सम्बन्ध है। अपकार का आधिक्य फल (प्रयोजन) है। इसे ही जहत्स्वार्था (जहल्लक्षणा) कहते हैं। ।।7।।

विरतास्वभिधाद्यासु ययाऽर्थो बोध्यतेपरः ॥12॥
सा वृत्तिर्व्यञ्जना नाम शब्दस्यार्थादिकस्य च ।

अभिधा आदि वृत्तियों के विरत होने पर जिस वृत्ति से अन्य अर्थ का बोधन होता है। वह शब्द में तथा अर्थ आदि में रहने वाली वृत्ति ''व्यञ्जना'' कहलाती है।।12।।

अभिधालक्षणामूला शब्दस्य व्यञ्जना द्विधा। ॥13॥

अभिधामूलामाह–

अनेकार्थस्य शब्दस्य संयोगाद्यैर्नियन्त्रिते।
एकत्रार्थेऽन्यधीहेतुर्व्यञ्जना साऽभिधाश्रया ॥14॥

अभिधामूला व्यञ्जना का लक्षण कहते हैं–

संयोग आदियों से अनेकाऽर्थ शब्द के एक अर्थ के नियन्त्रित होने पर जिस से दूसरा अर्थ उपस्थित होता है उसे ''अभिधामूला'' व्यञ्जना कहते हैं। ।14।।

संयोगो विप्रयोगश्च साहचर्यं विरोधिता।
अर्थः प्रकरणं लिङ्गं शब्दस्यान्यस्य सन्निधिः॥
सामर्थ्यमौचिती देशः कालो व्यक्तिः स्वरादयः।
शब्दार्थस्यानवच्छेदे विशेषस्मृतिहेतवः॥ इति।

अनुवाद- यहां 'संयोगाद्यैः' इत्यादि कथन से अभिधानियामक तत्त्वों में 'संयोग' के अतिरिक्त जिन अन्यान्य तत्त्वों का समावेश अपेक्षित है उनमें 'विप्रयोग' आदि-आदि समझे जाने चाहिये। वस्तुतः इस प्रगङ्ग में (आचार्य भर्तृहरि की) यह सूक्ति स्मरणीय है- 'ऐसे प्रसङ्गों में, जहां किसी (अहनेकार्थक) शब्द के अर्थ का परिच्छेद अथवा निर्णय न हो रहा हो, जिन कारणों से किसी अर्थ-विशेष का ज्ञान संभव है वे हैं-संयोग, विप्रयोग, साहचर्य, विरोधिता, अर्थ, प्रकरण, लिङ्ग, शब्दान्तरसान्निध्य, सामर्थ्य, औचित्य, देश, काल, व्यक्ति और स्वर आदि।'

उपर्युक्त अर्थ विशेष-स्मारक तत्त्वों के उदाहरण-

(1) संयोग- जैसे कि, **'सशङ्खचक्रो हरिः'**। यहां (अनेकार्थक) 'हरि' शब्द इसलिये केवल भगवान् विष्णु का ही अर्थ दे सकता है क्योंकि शङ्ख और चक्र का सम्बन्ध इसी अर्थ में उपपन्न है (न कि अन्य अर्थों जैसे कि यम, अनिल, इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, सिंह, भेक आदि आदि में)।

(2) विप्रयोग- जैसे कि **'अशङ्खचक्रो हरिः'**। यहाँ शङ्ख और चक्र के विश्लेप के कारण 'हरि' शब्द एकमात्र विष्णुवाचक ही बन रहा है (क्योंकि जैसे शङ्ख और चक्र विष्णु से ही संभव है न कि यमादि से)।

(3) साहचर्य- जैसे कि **'भीमार्जुनौ'**। यहाँ अर्जुन पद अनेकार्थक है (क्योंकि 'अर्जुन' के अर्थ पृथापुत्र पाण्डवप्रवीर किंवा एक वृक्षविशेष-दोनों हैं)। किन्तु 'साहचर्य' के कारण अर्थात् 'भीम' पद के भीमसेनरूप और 'अर्जुन' पद के पाण्डवप्रवीर भीमानुज अर्जुनरूप अर्थों में ही सहचरभाव की संगति के कारण 'अर्जुन' पद का अर्थ एकमात्र पृथापुत्र अर्जुन ही हो सकता है (न कि वृक्षविशेष)।

(4) विरोधिता- जैसे कि **'कर्णार्जुनौ'**। यहाँ 'विरोधिता' अर्थात् पारस्परिक वैरविरोध के भाव के कारण 'कर्ण' पद का अर्थ केवल सूतपुत्र कर्ण ही हो सकता है (न कि कान आदि आदि)।

(5) अर्थ- जैसे कि **'स्थाणुं वन्दे'**। यहां 'अर्थ' अर्थात् वन्दना के अर्थ अथवा प्रयोजन की दृष्टि से 'स्थाणु', पद का अभिप्राय एक मात्र भगवान् शिव हो सकता है (न कि और कुछ जैसे कि ढूंढ आदि)।

(6) प्रकरण- जैसे कि **'सर्वं जानाति देवः'**। यहाँ 'देव' पद, जो कि अनेकार्थक है, प्रकरण के कारण एक मात्र 'आप' इस अर्थ का ही उपस्थापक हो रहा है (न कि देवता आदि आदि का)।

(7) लिङ्ग- जैसे कि **'कुपितो मकरध्वजः'**। यहाँ लिङ्ग अर्थात् मीनध्वजरूप धर्मविशेष के कारण 'मकरध्वजशब्द' का अर्थ एकमात्र 'कामदेव' ही हो सकता है (न कि 'समुद्र' आदि) क्योंकि समुद्ररूप अर्थ में यह धर्मविशेष साक्षात् संगत नहीं।

(8) शब्दान्तरसान्निध्य- जैसे कि **'देवः पुरारिः'**। यहाँ 'अन्यशब्दसन्निधि' के कारण अर्थात् 'देव' शब्द के समीप्य से 'पुरारिः' पद केवल शिव का ही वाचक हो सकता है (न कि किसी शत्रुनगरसंहारक अन्य राजवीर आदि का)।

(9) सामर्थ्य- जैसे कि **'मधुना मत्तः पिकः'**। यहाँ सामर्थ्य के कारण अर्थात् कोकिल को उन्मत्त बनाने के सामर्थ्य के कारण 'मधु' पद का एकमात्र अर्थ वसन्त ऋतु ही हो सकता है (न कि और कुछ जैसे कि दैत्यविशेष, मधु आदि।)

(10) औचिती- अथवा औचित्य, जैसे कि **'पातु वो दयितामुखम्'**। यहाँ औचित्य के कारण कामार्त्त प्रेमी के परित्राण की योग्यता की दृष्टि से 'मुखम्' पद का अर्थ एक मात्र 'साम्मुख्य' अथवा अनुकूलता ही निकल सकता है (न कि मुंह जिसमें प्रेमी के परित्राण की कोई योग्यता नहीं)।

(11) देश- जैसे कि **'विभाति गगने चन्द्रः'**। यहाँ 'देश' के कारण अर्थात् आकाशरूप देश अथवा स्थान के विवक्षित होने की दृष्टि से 'चन्द्र' पद (जो कि कर्पूर आदि अर्थो का भी वाचक है) एक मात्र 'चन्द्रमा' का अर्थ रख सकता है।

(12) काल- जैसे कि **'निशि चित्रभानुः'** पद (जो कि अग्नि और सूर्य दोनों अर्थो का वाचक है) केवल 'अग्नि' का ही अर्थ रख सकता है।

(13) व्यक्ति- जैसे कि **'भाति रथाङ्गम्'**। यहाँ 'रथाङ्ग' पद (जो कि चक्र और चक्रवाक दोनों अर्थो जा वाचक है) व्यक्ति अर्थात् नपुंसकलिङ्ग के कारण एकमात्र रथ के चक्र (पहिये) का ही अर्थ दे सकता है।

(14) स्वर- 'स्वर' के द्वारा अनेकार्थक पद के अर्थ का निर्णय केवल वेद में ही संभव है न कि काव्य-साहित्य में। स्वर की अर्थ-नियामकता का उदाहरण इसीलिये यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

लक्षणामूलामाह—

लक्षणोपास्यते यस्य कृते तत्तु प्रयोजनम् ।
यया प्रत्याय्यते सा स्याद्व्यञ्जना लक्षणाश्रया ॥15॥

अब लक्षणामूला व्यञ्जना को कहते हैं। **लक्षणोपास्यते इति।** लक्षणा जिसके लिए की जाती है वह प्रयोजन जिस वृत्ति से प्रतीत होता है उसे लक्षणामूला व्यञ्जना कहते हैं। ।।15।।

'गङ्गायां घोषः' इत्यादौ जलमयाद्यर्थबोधनादभिधायां तटाद्यर्थबोधनाच्च लक्षणायां विरतायां यथा शीतत्वपावनत्वाद्यतिशयादिर्बोध्यते सा लक्षणामूला व्यञ्जना।

एवं शाब्दीं व्यञ्जनामुक्त्वाऽऽर्थीमाह—

वक्तृबोद्धव्यवाक्यानामन्यसन्निधिवाच्ययोः ।
प्रस्तावदेशकालानां काकोश्चेष्टादिकस्य च ॥16॥
वैशिष्ट्यदन्यमर्थं या बोधयेत्साऽर्थसम्भवा ।

''गङ्गायां घोषः'' इत्यादि स्थल में जलमय आदि अर्थ का बोधन कर अभिधाके निवृत्त होने पर और तट आदि अर्थ का बोधन कर लक्षणा के निवृत्त होने पर जिस वृत्ति से शीतलत्व और पावनत्व आदि के आधिक्य आदि का बोध होता है उसे ''लक्षणामूला'' व्यञ्जना कहते हैं। इस प्रकार शाब्दी व्यञ्जना का प्रतिपादन कर आर्थी व्यञ्जना कहते हैं– **वक्तृबोद्धव्यति।** वक्ता, बोद्धव्य, वाक्य, अन्य का सामीप्य, वाच्य (अर्थ) प्रस्ताव (प्रकरण) देश, काल, काकु (ध्वनिविकार), और चेष्टा आदि इनकी विशेषता से जो शक्ति अन्य अर्थ का बोधन करती है उसे ''आर्थी व्यञ्जना'' कहते हैं। ।।16।।

तृतीयः परिच्छेदः

अथ कोऽयं रस इत्युच्यते—

विभावेनानुभावेन व्यक्तः सञ्चारिणा तथा ।
रसतामेति रत्यादिः स्थायी भावः सचेतसाम् ॥1।

अब रस क्या है? ऐसा प्रश्न कर उसका निरूपण करते हैं। **विभावेन।** विभाव (आलम्बन और उद्दीपन) अनुभाव ओर सञ्चारीभाव से व्यञ्जना वृत्ति से अभिव्यक्त सहृदयों के हृदय में विद्यमान रति आदि स्थायी भाव रस के स्वरूप में परिणत होता है।।।1।।

अस्य स्वरूपकथनगर्भ आस्वादनप्रकारः कथ्यते—

सत्त्वोद्रेकादखण्डस्वप्रकाशानन्दचिन्मयः।
वेद्यान्तरस्पर्शशून्यो ब्रह्मास्वादसहोदरः ॥2॥
लोकोत्तरचमत्कारप्राणः कैश्चित् प्रमातृभिः।

स्वाकारवदभिन्नत्वेनायमास्वाद्यते रसः ॥3॥

रस के स्वरूप का कथन और आस्वादन के प्रकार कहते हैं। **सत्त्वोद्रेकात् इति** सत्त्व गुण के आधिक्य से अखण्ड, स्वतः प्रकाशवाला, आनन्दमय, चिन्मय (ज्ञानस्वरूप) दूसरे वेद्य पदार्थ के सम्पर्क से रहित, ब्रह्मसाक्षात्कारके सदृश अलौकिक चमत्कारस्वरूप प्राणवाला रस कुछ विद्वानों से अपने आकार के समान अभिन्नरूप से आस्वादन किया जाता है

चतुर्थः परिच्छेदः

रस भेद स्थायी भाव

अथ काव्यभेदमाह-

काव्यं ध्वनिर्गुणीभूतव्यङ्ग्य चेति द्विधा मतम्।

तत्र -

वाच्यातिशयिनि व्यङ्ग्य ध्वनिस्तत्काव्यमुत्तमम् ॥1॥

वाच्यादधिकचमत्कारिणि व्यङ्ग्यार्थे ध्वन्यतेदस्मिन्निति व्युत्प्रत्त्या ध्वनिर्नामोत्तमं काव्यम्।

अनुवाद- अब काव्य के भेदों का निरूपण किया जा रहा है- 'काव्य' (रसात्मक वाक्य) के दो प्रमुख भेद हैं- (1) ध्वनि और (2) गुणीभूतव्यङ्ग्य।

अनुवाद- इन दोनों काव्य-भेदों में-'ध्वनि' संज्ञक काव्य, जिसे सर्वोत्तम काव्य-प्रकार कहा गया है, वह है जिसमें वाच्यार्थ की अपेक्षा,'व्यङ्ग्य' रूप अर्थ अधिक सुन्दर (अतिशय चमत्कारजनक) हुआ करता है।

(ध्वनिकाव्य के 2 भेद : 1 अविवक्षितवाच्य और 2 विवक्षितान्यपरवाच्य)

भेदौ ध्वनेरपि द्वावुदीरितौ लक्षणाभिधामूलौ।
अविवक्षितवाच्योऽन्यो विवक्षितान्यपरवाच्यश्च ॥2॥

तत्राविवाक्षितवाच्यो नाम लक्षणामूलो ध्वनिः। लक्षणामूलत्वादेवात्र वाच्यमविवक्षितं बाधितस्वरूपम्।

विवक्षितान्यपरवाच्यस्त्वभिधामूलः, अत एवात्र वाच्यं विवक्षितम्। अन्यपरं व्यङ्ग्यनिष्ठम्। अत्र हि वाच्योऽर्थः स्वरूपं प्रकाशयन्नेव व्यङ्ग्यार्थस्य प्रकाशकः।

अनुवाद- 'ध्वनि' काव्य के भी दो भेद बताए गए हैं- (1) लक्षणामूलक ध्वनिकाव्य और (2) अभिधामूलक ध्वनिकाव्य। इन दोनों भेदों में लक्षणामूलक ध्वनिकाव्य को तो 'अविवक्षितवाच्यध्वनि' काव्य कहा गया है और अभिधामूलक ध्वनि-काव्य का नाम 'विवक्षितान्यपरवाच्यध्वनि' काव्य है।

(अविवक्षितवाच्यध्वनि के दो भेदः1-'अर्थान्तरसंक्रमिवाच्य' ध्वनि)

अविवक्षितवाच्यस्य भेदावाह-

अर्थान्तरं संक्रमिते वाच्येऽत्यन्तं तिरस्कृते।
अविवक्षितवाच्योऽपि ध्वनिर्द्वैविध्यमृच्छति॥3॥

'अविवक्षितवाच्यध्वनि' काव्य भी दो प्रकार का हुआ करता है- (1) वह, जिसमें वाच्यार्थ अपने से भिन्न अर्थ में संक्रमित हो जाने के कारण 'अविवक्षित' (अपने स्वरूप में अनुपयुक्त) लगा करता है और (2), वह जिसमें वाच्यार्थ अत्यन्त तिरस्कृत रहने के कारण 'अविवक्षित' (सर्वथा अनन्वित) हो जाया करता है।

अविवक्षितवाच्यो नाम ध्वनिरर्थान्तरसङ्क्रमितवाच्यो-ऽत्यन्ततिरस्कृतवाच्यश्चेति द्विविधः।

तात्पर्य यह है कि 'अविवक्षितवाच्य' नामक ध्वनि-काव्य के दो भेद हुआ करते हैं-

(1) 'अर्थान्तरसंक्रमितवाच्यध्वनि' काव्य और (2) 'अत्यन्त तिरस्कृतवाच्यध्वनि' काव्य।

यत्र स्वयमनुपयुज्यमानो मुख्योऽर्थः स्वविशेषरूपेऽर्थान्तरे परिणमति, तत्र मुख्यार्थस्य स्वविशेषरूपार्थान्तरसंक्रमितत्वाद-र्थान्तरसङ्क्रमितवाच्यत्वम्।

'ध्वनि' काव्य के 'अर्थान्तरसंक्रमितवाच्य' होने का अभिप्राय है यहाँ ऐसे व्यंग्यार्थ के अवस्थान का, जिसका उपकरणभूत (व्यञ्जक) अर्थ एक ऐसा वाच्यार्थ हुआ करता है जो (प्रकरण की दृष्टि से) अपने सामान्य स्वरूप में अनुपयुक्त हो जाया करता है और फिर (अपनी अनुपपत्ति के निराकरण के लिये) अपने से भिन्न एक ऐसे अर्थ में परिणत हो जाया करता है जो कि उसी का एक विशेष रूप अंश हुआ करता है। तात्पर्य यह है कि ध्वनि-काव्य की 'अर्थान्तरसंक्रमितवाच्यता' यहाँ के (व्यञ्जक रूप से विराजमान) मुख्यार्थ की, अपने से भिन्न किन्तु अपने ही स्वरूप-विशेषभूत अर्थ (लक्ष्यार्थ) में संक्रान्ति अथवा परिणति है।

यथा-

'कदली कदली, करभः करभः, करिराजकरः करिराजकरः।
भुवनत्रितयेऽपि बिभर्ति तुलामिदमूरुयुगं न चमूरुदृशः॥'

उदाहरण के लिये यह सूक्ति-

'कदली-कदली है, करभ-करभ ही है और शुण्डादण्ड (हाथी की सूँड़) भी शुण्डादण्ड ही हैं। इस त्रिभुवन में कोई भी वस्तु ऐसी नहीं जो इस मृगनयनी सुन्दरी के उरुयुगल की समानता रख सके।'

अत्र द्वितीयकदल्यादिशब्दाः पौनरुक्त्यभिया सामान्यकदल्यादिरूपे मुख्यार्थे बाधिता जाड्यादिगुण-विशिष्टकदल्यादिरूपमर्थं बोधयन्ति। जाड्याद्यतिशयश्च व्यङ्ग्यः।

यह सूक्ति 'अर्थान्तरसंक्रमितवाच्यध्वनि' काव्य है क्योंकि यहाँ दूसरी बाद प्रयुक्त 'कदली' आदि शब्द ऐसे हैं जो 'पुनरुक्त' नहीं- क्योंकि 'पुनरुक्ति' तो एक भयंकर पद दोष है- अपितु अपने 'कदली' आदि रूप सामान्य भूत मुख्यार्थ में अनुपपन्न हैं और इसीलिये अपने से भिन्न किन्तु अपने ही विशेषस्वरूपभूत

जाड्यादिविशिष्ट 'कदली' आदि रूप (लक्ष्य) अर्थों का ही अवबोधन करा रहे हैं (अर्थात् अपने सामान्य अर्थ स्वरूप में अनुपयुक्त और अपने से भिन्न किन्तु अपने ही विशेष रूप अर्थ के उपलक्षक बने हुए दीख रहे हैं)। यहाँ जो व्यंग्य रूप से अवस्थित और अनुभूत अर्थ है वह है ऊरुद्वन्द्व के उपमान माने गये 'कदली' आदि पदार्थों की जड़ता आदि का अत्याधिक्य।

अष्टमः परिच्छेदः

गुणानाह–

रसस्याङ्गित्वमाप्तस्य धर्माः शौर्यादयो यथा। गुणाः–

गुणों का निरूपण करते हैं– **रसस्येति।** अङ्गित्व (शरीरित्व वा प्रधानत्व) को प्राप्त आत्मा के जैसे शौर्य आदि धर्म होते हैं वैसे ही अङ्गित्व (प्रधानत्व) को प्राप्त रस के धर्मों को गुण कहते हैं।

माधुर्यमोजोऽथ प्रसाद इति ते त्रिधा ॥1॥

ते गुणाः।

माधुर्य, ओज और प्रसाद इस प्रकार वे गुण तीन प्रकार के होते हैं।

चित्तद्रवीभावमयो ह्लादो माधुर्यमुच्यते।

माधुर्यमिति।

चित्त आर्द्रतास्वरूप सुखविशेष को ''माधुर्य'' कहते हैं।

संभोगे करुणे विप्रलम्भे शान्तेऽधिकं क्रमात्।

संभोग इति। संभोग, करुण, विप्रलम्भ शृङ्गार और शान्तरस इनमें क्रम से माधुर्य अधिक होता है। ।।2।।

ओजश्चित्तस्य विस्ताररूपं दीप्तत्वमुच्यते ॥4॥

वीरबीभत्सरौद्रेषु क्रमेणाधिक्यमस्य तु।

ओजगुण का लक्षण करते हैं–**ओज इति।** चित्त के विस्ताररूप दीप्ततत्त्व को ''ओज'' कहते हैं।।4।। वीर, बीभत्स और रौद्ररस में इसका क्रम से आधिक्य होता है।

चित्तं व्याप्नोति यः क्षिप्रं शुष्केन्धनमिवानलः ॥7॥

स प्रसादः समस्तेषु रसेषु रचनासु च।

प्रसाद गुण का लक्षण करते हैं- **चित्तमिति।** जैसे सूखी लकड़ी को अग्नि व्याप्त करता है उसी तरह जो शीघ्र चित्त को व्याप्त करता है। वह ''प्रसाद'' गुण है, वह समस्त रसों में और रचनाओं में होता है। प्रसाद गुण के व्यञ्जक शब्द श्रवणमात्र से अर्थ का बोधन करते हैं। ।।8।।

नवमः परिच्छेदः

पदसंघटना रीतिरङ्गसंस्थाविशेषवत्।

पदसंघटनेति। शरीर में जैसे कर, चरण आदि अवयवों का विन्यास होता है उसी तरह काव्य शरीर में रस आदि का उपकार करनेवाली सुबन्त, तिङन्त आदि पदों की संयोजना को ''रीति'' कहते हैं।

उपकर्त्री रसादीनां–

रसादीनामर्थाच्छब्दार्थशरीरस्य काव्यस्यात्मभूतानाम्।

-सा पुनः स्याच्चतुर्विधा ॥1॥

रसादीनामिति। रस आदि अर्थात् शब्दाऽर्थशरीरवाले काव्य के आत्मभूत रस भाव आदियों की उपकार करने वाली को ''रीति'' कहते हैं, यह भाव है।

सेति। वह रीति चार प्रकार की होती है। ।।1।।

वैदर्भी चाथ गौडी च पाञ्चाली लाटिका तथा।

सा = रीतिः।

वैदर्भी, गौडी, पाञ्चाली और लाटी (लाटिका)।

तत्र-

माधुर्यव्यञ्जकैर्वर्णैः रचना ललितात्मिका ॥2॥

अवृत्तिरल्पवृत्तिर्वा वैदर्भी रीतिरिष्यते।

उनमें **माधुर्येति।** माधुर्य गुण के व्यञ्जक वर्णों से आवृत्ति (समासरहित) वा अल्पवृत्ति (छोटे समासों)-से युक्त सुकुमारस्वरूप रचना को ''वैदर्भी'' रीति कहते हैं ।।3।।

अत्र दशगुणास्तन्मतोक्ताः श्लेषादयः।

ओजः प्रकाशकैर्वर्णैर्बन्ध आडम्बरः पुनः ॥3॥

समासबहुला गौडी–

यहाँ दश गुण कहने से उनके मत में कहे गये श्लेष आदि को **जानना चाहिये।** ओज गुण को प्रकाशित करनेवाले अक्षरों से उद्धत वर्णघटित रचना और प्रचुर समासों से युक्त रीति को ''गौडी'' कहते हैं।

-वर्णैः शेषैः पुनर्द्वयोः।

समस्तपञ्चषपदो बन्धः पाञ्चालिका मता ॥4॥

पाञ्चालिका का लक्षण कहते हैं- **वर्णैरिति।** वैदर्भी और गौडी रीतियों के अवशिष्ट वर्णों से उपलक्षित, पांच वा छः पदों के समास से युक्त रीति ''पाञ्चाली'' मानी गई है। ।।4।।

लाटी तु रीतिर्वैदर्भीपाञ्चाल्योरन्तर स्थिता।

लाटी का लक्षण- वैदर्भी और पाञ्चाली के बीच में रहने वाली दोनों के कुछ लक्षणों से युक्त रीति को ''लाटी'' कहते हैं।

दशमः परिच्छेदः

अथावसरप्राप्तानलङ्कारानाह–

शब्दार्थयोरस्थिरा ये धर्माः शोभातिशायिनः ।

रसादीनुपकुर्वन्तोऽलङ्कारास्तेऽङ्गदादिवत् ॥1॥

अब प्रसङ्ग से प्राप्त अलङ्कारों का लक्षण करते हैं–

रस आदियों का उपकार करते हुए शब्द और अर्थ की शोभा को बढ़ाने वाले अस्थिर जो धर्म हैं वे शरीर में अङ्गद (बाजूबन्द) के समान अलङ्कार कहलाते हैं। ।।1।।

अनुप्रासः शब्दसाम्यं वैषम्येऽपि स्वरस्य यत्।

अनुप्रास इति। स्वर की विषमता अर्थात् असमता होने पर भी व्यञ्जन की सरूपता होने को ''अनुप्रास'' कहते हैं।

छेको व्यञ्जनसङ्घस्य सकृत्साम्यमनेकधा ।।3।

छेक इति। व्यञ्जन समूह का एक बार अनेक प्रकार से समानता होने को ''छेकाऽनुप्रास'' कहते हैं। ।।3।।
उदाहरणं मम तातपादानाम्–

'आदाय बकुलगन्धानन्धीकुर्वन् पदे पदे भ्रमरान् ।
अयमेति मन्दमन्दं कावेरीवारिपावनः पवनः।।'

आदायेति। मौलसिरी के सुगन्ध लेकर पग पर भौंरों को मद से अन्धा करता हुआ, कावेरी नदी के जल से युक्त होने से पवित्र करने वाला, यह पवन (वायु) धीरे धीरे बह रहा है।
अत्रेति। ''गन्धानन्धी'' यहाँ पर संयुक्त ''न'' और ''ध'' की, ''कावेरीवारि'' यहाँ पर असंयुक्त ''व'' और ''र'' की ''पवनः पवनः'' यहाँ पर बहुत-से व्यञ्जनों की एक बार आवृत्ति है ''छेक'' कहते हैं विदग्ध (रसिक) पुरुष को, उससे प्रयोग किये जाने से यह छेकाऽनुप्रास है।

अनेकस्यैकधा साम्यमसकृद्वाप्यनेकधा ।
एकस्य सकृदप्येष वृत्यनुप्रास उच्यते ।।4।।

अत्रेति। अनेक व्यञ्जनसमूह की एक प्रकार से (केवल स्वरूप से क्रम से नहीं), समता अर्थात् आवृत्ति (यह पहला भेद है), अथवा अनेक व्यञ्जन समूह का अनेक प्रकार से (स्वरूप और क्रम से) समता (आवृत्ति) (यह दूसरा भेद है। अथवा एक व्यञ्जन का एक बार समता (आवृत्ति) (यह तीसरा भेद है) तथा एक व्यञ्जन की ''अपि'' शब्द से वारं वार समता (आवृत्ति) से अन्त्योऽनुप्रास होता है, यह चौथा भेद है।

उदाहरणम्–

'उन्मीलन्मधुगन्धलुब्धमधुव्याधूतचूताङ्कुर-
क्रीडत्कोकिलकाकलीकलकलैरुद्गीर्णकर्णज्वराः।
नीयन्ते पथिकैः कथं कथमपि ध्यानावधानक्षण-
प्राप्तप्राणसमासमागमरसोल्लासैरमी वासराः।।'

उदाहरण– **उन्मीलदिति।** प्रियतमा के चिन्तन में एकाग्रता के अवसर पर प्राण की समान प्रियतमा के समागमरस के आनन्द को पाने वाले पथिकों से, प्रचुरता उत्पन्न होने वाले मकरन्द के सुगन्ध से लुब्ध भौरों से प्रकम्पित आमों की मञ्जरियों में क्रीड़ा करने वाले कायलों की सूक्ष्मध्वनियों से और कोलाहलों से कानों में ज्वर उत्पन्न करने वाले वसन्त ऋतु के वे दिन बड़े ही कष्ट से बिताये जा रहे हैं।।

अत्रेति। यहाँ ''रसोल्लासैरमी'' इनमें र का और स का एक ही प्रकार से स्वरूप से साम्य है, उसी क्रम से नहीं। दूसरे चरण में ''क'' और ''ल'' की वारं वार उसी क्रम से आवृत्ति हुई है। पहले चरण में ''म'' का र का एक ही बार और ''ध'' की अनेक बार आवृत्ति हुई है। रसविषयक व्यापार से युक्त वर्णरचना को ''वृत्ति'' कहते हैं उसका अनुगत होकर उत्कर्ष से न्यास करने से ''वृत्यनुप्रास'' होता है।

सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यञ्जनसंहतेः।
क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते ।।8।।

सत्यर्थ इति– अर्थ के होने पर भिन्न अर्थ वाले स्वरों और व्यञ्जनों के समुदाय की उसी क्रम में आवृत्ति को ''यमक'' कहते हैं। ।।8।।

'नवपलाश-पलाशवनं पुरः स्फुटपराग-परागत-पङ्कजम्।
मृदुल-तान्त-लतान्तमलोकयत् स सुरभिं-सुरभिं सुमनोभरैः।।''

दिङ्मात्रमिति। थोड़ा-सा उदाहरण देते हैं–
नवेति। भगवान् श्रीकृष्ण ने आगे नये पत्तों वाले पलाशवृक्ष के वन जिसमें उत्पन्न होते हैं, पुष्पचूर्णों से व्याप्त विकसित कमलों से युक्त, कोमल और धूप से क्लान्त लताओं के प्रान्तभाग से संयुक्त और पुष्पों व समूह से सुगन्धपूर्ण वसन्त ऋतु को देखा।

इस पद्य में पदावृत्ति है, ''पलाश-पलाश'' और ''सुरभि- सुरभिम्'' यहाँ दोनों पद साऽर्थक हैं। ''लतान्त-लतान्त'' यहाँ पहला ''लतान्त'' निरर्थक है, दूसरा लतान्त सार्थक है। ''पराग-पराग'' यहाँ दूसरा ''पराग'' निरर्थक है (पहला ''पराग'' सार्थक है।) इस प्रकार और भी उदाहरण जानना चाहिये।

शिलष्टैः पदैरनेकार्थाभिधाने श्लेष इष्यते।
वर्णप्रत्ययलिङ्गानां प्रकृत्योः पदयोरपि ।।11।।

शिलष्टैरिति। शिलष्ट (अनेकार्थयुक्त) पदों से अनेक अर्थों का अभिधान होने पर ''श्लेष'' अलङ्कार नहीं है।

श्लेषाद्विभक्तिवचनभाषाणामष्टधा च सः।

भावार्थ– वर्णों, प्रत्ययों, लिङ्गों, प्रकृतियों, पदों और विभक्तियों, वचनों और भाषाओं के श्लेष (अनेक अर्थ का सम्बन्ध) होने से वह श्लेष अलङ्कार आठ प्रकार होता है।

क्रमेणोदाहरणम्–

'प्रतिकूलतामुपगते हि विधौ विफलत्वमेति बहुसाधनता।
अवलम्बनाय दिनभर्त्तुरभून्न पतिष्यतः करसहस्त्रमपि ।।'

क्रम से उदाहरण- **प्रतिकूलतामिति।** विधि (भाग्य वा चन्द्रमा) के प्रतिकूल होने पर बहुत साधन भी निष्फल हो जाते हैं, गिरते हुए अर्थात् अस्त पर्वत पर जाते हुए सूर्य के हजारों किरणों वा हाथ भी अवलम्बन के लिए नहीं (समर्थ) हुए।

अत्र 'विधौ' इति
विधुविधिशब्दयोरुकारेकारयोरौकाररूपत्वाच्छ्लेषः।

इस पद्य में ''विधौ'' इस सप्तम्यन्तपद में चन्द्रवाचक उकारान्त विधुशब्द और भाग्यवाचक इकारान्त विधि शब्द के उकार और इकार का औकार रूप होने से यह पदश्लेष का उदाहरण है।

साहित्यदर्पण प्रश्नोत्तरी

- ☞ साहित्यदर्पणस्य प्रणेता- **विश्वनाथः**
- ☞ साहित्यदर्पणस्य आरम्भे विश्वनाथः देवतां नमस्करोति- **वाग्देवताम्**
- ☞ 'परिच्छेद' विभाजन किस ग्रन्थ से सम्बद्ध है? **साहित्यदर्पण से**

- साहित्यदर्पणे परिच्छेदाः सन्ति- **दश**
- साहित्यदर्पणे अस्ति–**परिच्छेद**
- साहित्यदर्पणस्य प्रथमपरिच्छेदः अस्ति– **काव्य-स्वरूप-निरूपणम्**
- अधोलिखितेषु कतमत् विशेषणं विश्वनाथकृते न प्रयुज्यते– **चतुर्दशभाषावारविलासिनीभुजङ्गः**
- आचार्यविश्वनाथानुसारेण काव्यस्य प्रयोजनमस्ति– **पुरुषार्थ-चतुष्टय**
- 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' इत्यत्र रसमध्ये ग्रहणं कृतम्– **रस-भाव-तदाभासादीनाम्**
- विश्वनाथमते काव्यशरीरे रसस्य का स्थितिर्वर्तते– **आत्मवत्**
- विश्वनाथेन कृतं काव्यलक्षणम् -**वाक्यं रसात्मकं काव्यम्**

दशरूपक

अथ–श्रीधनञ्जयविरचितम्
दशरूपकम्

धनिककृतावलोकसहितं संस्कृत-हिन्दीव्याख्यासमन्वितं च

प्रथमः प्रकाशः

इह सदाचारं प्रमाणयद्भिरविघ्नेन प्रकरणस्य समाप्त्यर्थमिष्टयोः प्रकृताभिमतदेवतयोर्नमस्कारः क्रियते श्लोकद्वयेन—

नमस्तस्मै गणेशाय यत्कण्ठः पुष्करायते ।
मदाभोगघनध्वानो नीलकण्ठस्य ताण्डवे ॥1॥

उन गणेश को नमस्कार है, जिनका मद की परिपूर्णता (आभोग) के कारण गम्भीर ध्वनिवाला कण्ठ शङ्कर के उद्धत नृत्य में मृदङ्ग का काम करता है ।।1।।

दशरूपानुकारेण यस्य माद्यन्ति भावकाः ।
नमः सर्वविदे तस्मै विष्णवे भरताय च ॥2॥

(1) जिसके (मत्स्य, कूर्म आदि) दश रूपों की प्रतिमाओं से अथवा (रामलीला तथा रासलीला आदि में) दशरूपों के अनुकरण से भक्त-जन (ध्यान करने वाले व्यक्ति) प्रसन्नता से गद्‌गद हो उठते हैं, उन सर्वज्ञ विष्णु को तथा (2) जिसके (द्वारा विभक्त) दश (प्रकार के) नाटकों के अभिनय के द्वारा रसिक-जन प्रसन्न होते हैं उन (दश प्रकार के रूपकों के) सर्वज्ञ (आचार्य) भरत को भी नमस्कार है ।।2।।

कस्यचिदेव कदाचिद्दयया विषयं सरस्वती विदुषः।
घटयति कमपि तमन्यो व्रजति जनो येन वैदग्धीम् ॥3॥

सरस्वती कृपा करके कभी-कभी ही किसी विद्वान् को किसी (ऐसे) विषय से संयुक्त करती है, (अर्थात् सरस्वती की कृपा से कभी कोई विद्वान् या कवि ऐसे नाटक आदि ग्रन्थ का निर्माण करता है), जिससे (पढ़नेवाला) दूसरा व्यक्ति निपुणता (व्यवहार-निपुणता) को प्राप्त करता है ।।3।।

अवस्थानुकृतिर्नाट्यं– (राम आदि मूल पात्रों की) अवस्था का अनुकरण ही नाट्य है।

रूपं दृश्यतयोच्यते– यही नाट्य दृश्य होने के कारण रूप (भी) कहा जाता है।

रूपकं तत्समारोपात् –(नट में राम आदि का) आरोप किया जाने के कारण वह नाट्य रूपक (भी कहा जाता) है।

दशधैव रसाश्रयम् ॥7॥

रसों पर आश्रित (यह नाट्य) केवल दस तरह का होता है ।।7।।

नाटकं सप्रकरणं भाणः प्रहसनं डिमः ।
व्यायोगसमवकारौ वीथ्यङ्केहामृगा इति ॥8॥

(1) नाटक, (2) प्रकरण, (3) भाण, (4) प्रहसन, (5) डिम, (6) व्यायोग, (7) समवकार, (8) वीथी, (9) अङ्क, (10) ईहामृग

अन्यद्भावाश्रयं नृत्यम्– भाव पर आश्रित रहनेवाला नृत्य (नाट्य से) भिन्न होता है।

नृत्तं ताललयाश्रयम् –नृत्त ताल एवं लय पर आश्रित होता है।

आद्यं पदार्थाभिनयो मार्गो देशी तथा परम् ॥9॥

पहला (अर्थात् नृत्य) पदार्थाभिनयरूप होता है तथा इसे मार्ग भी कहते हैं। दूसरा (अर्थात् नृत्त) देशी भी कहा जाता है ॥9॥

मधुरोद्धतभेदेन तद् द्वयं द्विविधं पुनः
लास्यताण्डवरूपेण नाटकाद्युपकारकम् ॥10॥

वे दोनों (नृत्य तथा नृत्त) मधुर और उद्धत भेद से फिर दो-दो प्रकार के होते हैं। मधुर को लास्य तथा उद्धत को ताण्डव कहते हैं। (ये दोनों ही) नाटक आदि (रूपकों) के उपकारक होते हैं।।10।।

वस्तु नेता रसस्तेषां भेदकः– रूपकों को परस्पर एक-दूसरे से अलग करने वाले तत्त्व–वस्तु (कथावस्तु), नायक और रस उन (दशों रूपकों) के भेदकतत्त्व हैं।

–वस्तु च द्विधा –

कथा-वस्तु के भेद—

वस्तु (कथा-वस्तु) दो प्रकार की होती है।

उनमें मुख्य (कथावस्तु) को आधिकारिक और अङ्गरूप वस्तु को प्रासङ्गिक (कथावस्तु) कहते हैं। ।।11।।

तत्राधिकारिकं मुख्यमङ्गं प्रासङ्गिकं विदुः ॥11॥

फल का स्वामी होना ही अधिकार है, और उस फल का स्वामी ही अधिकारी है। उस फल की सिद्धि तक अभिव्याप्त या उस

अधिकारी के द्वारा निष्पन्न वृत्त या कथा आधिकारिक (वस्तु) कहलाती है।।12।।

अधिकारः फलस्वाम्यमधिकारी च तत्प्रभुः ।
तन्निर्वृत्तमभिव्यापि वृत्तं स्यादाधिकारिकम् ॥12॥
प्रासङ्गिकं परार्थस्य स्वार्थो यस्य प्रसङ्गतः।

(जो कथा या वृत्त) दूसरे (अर्थात् आधिकारिक कथा) के लिए होता है, किन्तु प्रसङ्गवश जिसका अपना प्रयोजन भी सिद्ध हो जाता है; वह प्रासङ्गिक (वृत्त) है।

सानुबन्धं पताकाख्यं प्रकरी च प्रदेशभाक् ॥13॥
प्रासङ्गिक कथा के भेद– पताका और प्रकरी।

अनुबन्ध सहित (अर्थात् मुख्य कथा के साथ गौण रूप से दूर तक चलने वाले) प्रासङ्गिक वृत्त को पताका तथा एक प्रदेश में रहनेवाले (अर्थात् थोड़ी दूर तक चलनेवाले) प्रासङ्गिक वृत्त को प्रकरी कहते हैं ।।13।।

प्रस्तुतागन्तुभावस्य वस्तुनोऽन्योक्तिसूचकम् ।
पताकास्थानकं तुल्यसंविधानविशेषणम् ॥14॥

पताकास्थानक–

पताका के प्रसङ्ग से (उससे मिलते-जुलते) 'पताकास्थानक' की व्युत्पत्ति करते हैं—

जो अन्योक्ति के द्वारा (अर्थात् किसी अन्यवस्तु के कथन के द्वारा) प्रस्तुत (अर्थात् प्रसङ्गप्राप्त) भावी कथानक (वस्तु) का सूचक होता है, उसे 'पताका-स्थानक' क़हते हैं। वह समान इतिवृत्त तथा समान विशेषण (के भेद से दो तरह का) होता है।।14।।

प्रख्यातोत्पाद्यमिश्रत्वभेदात्त्रेधापि तत्त्रिधा।
प्रख्यातमितिहासादेरुपाद्यं कविकल्पितम् ॥15॥

वह तीन प्रकार का (इतिवृत्त) भी (1) प्रख्यात, (2) उत्पाद्य (3) मिश्र भेद से तीन-तीन प्रकार का होता है। इतिहास आदि से लिया गया इतिवृत्त प्रख्यात कवि के द्वारा कल्पित इतिवृत्त उत्पाद्य कहा गया है। तथा उन दोनों (प्रख्यात तथा उत्पाद्य) के मिश्रण से मिश्र की रचना होती है। (ये सभी इतिवृत्त) दिव्य, मर्त्य तथा दिव्यादिव्य भेद से (भिन्न होते हैं)।।15।।

कार्यं त्रिवर्गस्तच्छुद्धमेकानेकानुबन्धि च ॥16॥

(उस इतिवृत्त के अभिनय, अभिनय के अवलोकन तथा अध्ययन का) फल है त्रिवर्ग। यह फल कभी तो शुद्ध (अर्थात् त्रिवर्गरूप धर्म, अर्थ तथा काम में से कोई एक ही) और कभी (अन्य)एक से अनुगत तथा कभी अनेक (अर्थात् दो) से अनुगत (एक होता है)।।16।।

फल की प्राप्ति के साधन (अर्थप्रकृतियां)

स्वल्पोद्दिष्टस्तु तद्धेतुर्बीजं विस्तार्यनेकधा।

उस (फल) का कारण ही बीज है। आरम्भ में इसका स्वल्प संकेत किया जाता है, किन्तु आगे चल कर यह अनेक प्रकार से पल्लवित होता है।

अवान्तरार्थविच्छेदे बिन्दुरच्छेदकारणम् ॥17॥

अवान्तर अर्थ से (अर्थात् अवान्तर कथा के कारण) मुख्य कथा-वस्तु के विच्छिन्न हो जाने पर, जो उसे जोड़ने तथा आगे बढ़ाने का कारण होता है, वह बिन्दु कहलाता है ।।17।।

बीजबिन्दुपताकाख्यप्रकरीकार्यलक्षणाः ।
अर्थप्रकृतयः पञ्च ता एताः परिकीर्तिताः ॥18॥

बीज, बिन्दु, पताका, प्रकरी तथा कार्य नामक ये पाँच अर्थप्रकृतियाँ कही गयी हैं ।।18।।

अवस्थाः पञ्च कार्यस्य प्रारब्धस्य फलार्थिभिः।
आरम्भयत्नप्राप्त्याशानियताप्तिफलागमाः॥19॥

कार्य की पाँच अवस्थाएँ–

(ग्रन्थकार नाटक की) अन्य पाँच अवस्थाओं को बतलाते हैं—

फल की इच्छावाले व्यक्तियों के द्वारा प्रारम्भ किये गये कार्य की पाँच अवस्थाएं (Stages) होती हैं— 1. आरम्भ, 2. यत्न, 3. प्राप्त्याशा, 4. नियताप्ति और 5. फलागम ।।19।।

औत्सुक्यमात्रमारम्भः फललाभाय भूयसे ।
प्रयत्नस्तु तदप्राप्तौ व्यापारोऽतित्वरान्वितः ॥20॥

1. महान् फल की प्राप्ति के लिए केवल उत्सुकता का होना ही 'आरम्भ' क़हा गया है।

2. अब प्रयत्न बतलाते हैं— उस (फल) के प्राप्त न होने पर (उसके लिए) अत्यन्त वेग के साथ कार्य प्रारम्भ कर देना ही 'प्रयत्न' है ।।20।।

उपायापायशङ्काभ्यां प्राप्त्याशा प्राप्तिसम्भवः।

3. अब प्राप्त्याशा को बतलाते हैं—

(फल-प्राप्ति के) उपाय तथा (फल-प्राप्ति के) विध्वंसक विघ्न की शङ्का— दोनों की उपस्थिति) —से जो फल-प्राप्ति की सम्भावनामात्र होती है। वह 'प्राप्त्याशा' कही जाती है (अर्थात् जहाँ फल-प्राप्ति के लिए तो उपाय चलता रहता है, किन्तु उसी बीच किसी विघ्न की सम्भावना के आ जाने से जब दर्शकों के मन में फल-प्राप्ति के प्रति द्विविधा की भावना आ जाती है तब प्राप्त्याशा नामक अवस्था होती है)।

अपायाभावतः प्राप्तिर्नियताप्तिः सुनिश्चिता ॥21॥

4. नियताप्ति को बतलाते हैं—विघ्नों के अभाव के कारण (जब

कि फल की) प्राप्ति पूर्ण निश्चित हो जाती है, तब नियताप्ति (नामक अवस्था) होती है। ।।21।।

5. फलागम–

समग्रफलसंपत्तिः फलयोगो यथोदितः।

जैसा कि पहले कहा गया है, समस्त फल की प्राप्ति ही 'फलागम' है।

अर्थप्रकृतयः पञ्च पञ्चावस्थासमन्विताः ॥22॥

यथासंख्येन जायन्ते मुखाद्याः पञ्च सन्धयः ।

पाँच अवस्थाओं से मिलकर पाँच अर्थप्रकृतियाँ ही क्रमशः मुख आदि पाँच सन्धियाँ बन जाती हैं।

अन्तरैकार्थसम्बन्धः सन्धिरेकान्वये सति ॥23॥

सन्धियों का लक्षण बतला रहे हैं–

सन्धि का सामान्य लक्षण बतला रहे हैं—

(कथांशों का) एक प्रयोजन से अन्वय (अर्थात् सम्बन्ध) होने पर (उनका) किसी एक अवान्तर प्रयोजन से सम्बन्धित होना ही सन्धि है ।।23।।

के पुनस्ते सन्धयः—

मुखप्रतिमुखे गर्भः सावमर्शोपसंहृतिः।

मुख, प्रतिमुख, गर्भ, सावमर्श और उपसंहृति ।

मुखं बीजसमुत्पत्तिर्नानार्थरससम्भवा ॥24॥

अङ्गानि द्वादशैतस्य बीजारम्भसमन्वयात्।

जहाँ अनेक प्रयोजनों तथा (शृङ्गारादि) रसों को उत्पन्न करनेवाली बीजोत्पत्ति पायी जाती है, वहां मुखसन्धि होती है। बीज (नामक अर्थप्रकृति) तथा आरम्भ (नामक कार्यावस्था) के सम्मिलन से इस (मुखसन्धि) के बारह भेद हो जाते हैं।

प्रतिमुख-सन्धि

लक्ष्यालक्ष्यतयोद्भेदस्तस्य प्रतिमुखं भवेत् ।

बिन्दुप्रयत्नानुगमादङ्गान्यस्य त्रयोदश ॥30॥

(जहाँ) उस (बीज) का कुछ-कुछ लक्ष्यरूप में और कुछ-कुछ अलक्ष्यरूप में प्रकाशन (उद्भेद) होता है (वहाँ) प्रतिमुख-सन्धि होती है) (अर्थात् जहाँ पर बीज का प्रस्फुटित होना कुछ लोगों को ज्ञात हो तथा कुछ को पूर्णरूप से निश्चय के साथ ज्ञात न हो वहाँ प्रतिमुख संधि होती है)। बिन्दु (नामक अर्थप्रकृति) तथा प्रयत्न (नामक कार्यावस्था) के संयोग से (इसका निर्माण होता है) । इसके तेरह अङ्ग होते हैं ।।30।।

गर्भसन्धि और उसके अङ्ग

गर्भस्तु दृष्टनष्टस्य बीजस्यान्वेषणं मुहुः ।

द्वादशाङ्गः पताका स्यान्न वा स्यात्प्राप्तिसंभवः॥36॥

यहाँ दिखलाई पड़ने के अनन्तर अदृश्य हो गये बीज का बार-बार अन्वेषण किया जाता है वहाँ गर्भसन्धि होती है। इसके बारह अङ्ग होते हैं। इसमें पताका (नामक अर्थप्रकृति) कहीं होती है और कहीं नहीं भी होती है; किन्तु प्राप्त्याशा (नामक कार्यावस्था) होनी ही चाहिए ।।36।।

विमर्श (अवमर्श) सन्धि तथा उसके अङ्ग

क्रोधेनावमृशेद्यत्र व्यसनाद्वा विलोभनात् ।

गर्भनिर्भिन्नबीजार्थः सोऽवमर्श इति स्मृतः ॥43॥

जहाँ क्रोध से, दुःख से अथवा प्रलोभन से (फल-प्राप्ति के विषय में) विमर्श किया जाय, एवं जिसमें गर्भ-सन्धि के प्रस्फुटित बीजार्थ का सम्बन्ध पाया जाय, वहाँ अवमर्श (या विमर्श) सन्धि होती है ।।43।।

निर्वहण-सन्धि तथा उसके अङ्ग

बीजवन्तो मुखाद्यर्था विप्रकीर्णा यथायथम्॥48॥

ऐकार्थ्यमुपनीयन्ते यत्र निर्वहणं हि तत्।

वह निर्वहण-सन्धि है, जहाँ कि बीज से युक्त मुख आदि (अर्थात् मुख, प्रतिमुख, गर्भ और अवमर्श) सन्धियों में नियमानुसार (यथायथं) बिखरे हुए (प्रारम्भ आदि) अर्थों का एक (अर्थात् प्रधान) प्रयोजन के लिए एक साथ समेटना पाया जाता है (अर्थात् प्रधान प्रयोजन के साथ सम्बन्ध दिखलाया जाता है)।।48-49।।

षट्प्रकारं चाङ्गानां प्रयोजनमित्याह—

उक्ताङ्गानां चतुःषष्टिः षोढा चैषां प्रयोजनम्॥54॥

उक्त (सन्धियों के) अङ्ग चौसठ (64) हैं तथा इनका प्रयोजन छः (6) प्रकार का है ।।54।।

कानि पुनस्तानि षट् प्रयोजनानि? (तान्याह)–

इष्टस्यार्थस्य रचना गोप्यगुप्तिः प्रकाशनम् ।

रागः प्रयोगस्याश्चर्यं वृत्तान्तस्यानुपक्षयः॥55॥

अच्छा वे छः (6) प्रयोजन कौन-कौन हैं? यह बतला रहे हैं—
(1) इष्ट अर्थ (बुद्धि में स्थिर की गई कथावस्तु) की रचना, (2) गोपनीय बात को गुप्त रखना, (3) (उस बात को) प्रकाशित करना (जो कथावस्तु को समृद्ध कर सके), (4) राग, (5) प्रयोग की अद्भुतता और (6) इतिवृत्त (अर्थात् कथानक) का विच्छिन्न न होना ।।55।।

पुनर्वस्तुविभागमाह–

द्वेधा विभागः कर्तव्यः सर्वस्यापीह वस्तुनः।

सूच्यमेव भवेत् किंचिद् दृश्यश्रव्यमथापरम् ॥56॥

यहाँ (रूपक में) सम्पूर्ण कथा-वस्तु का दो प्रकार से विभाग करना चाहिए; कथा-वस्तु का कुछ भाग एकमात्र सूच्य होना चाहिए और दूसरा भाग दृश्य तथा श्रव्य ।।56।।

कादृक्सूच्यं कीदृग्दृश्यश्रव्यमित्याह–

नीरसोऽनुचितस्तत्र संसूच्यो वस्तुविस्तरः ।

दृश्यस्तु मधुरोदात्तरसभावनिरन्तरः ॥57॥

रूपक में नीरस तथा अनुचित कथा-वस्तु स्पष्ट तथा सरल ढंग से सूचित कर देनी चाहिए। किन्तु देखने में मोहक, उदात्त तथा रस एवं भावों से पूर्ण हो उसे रङ्गमञ्च पर अभिनय के द्वारा प्रदर्शित करना चाहिये।।57।।

सूच्यस्य प्रतिपादनप्रकारमाह–

अर्थोपक्षेपकैः सूच्यं पञ्चभिः प्रतिपादयेत् ।

विष्कम्भचूलिकाङ्कास्याङ्कावतारप्रवेशकैः ॥58॥

(1) विष्कम्भक, (2) चूलिका, (3) अङ्कास्य, (4) अङ्कावतार और (5) प्रवेशक— इन पाँच अर्थोपक्षेपकों (कथावस्तु के सूचकों) के द्वारा सूच्य (कथा-भाग) का प्रतिपादन करना चाहिए ।।58।।

तत्र विष्कम्भः—

वृत्तवर्तिष्यमाणानां कथांशानां निदर्शकः ।

संक्षेपार्थस्तु विष्कम्भो मध्यपात्रप्रयोजितः॥59॥

एकानेककृतः शुद्धः सङ्कीर्णो नीचमध्यमैः।

1– विष्कम्भक (या विष्कम्भ)

अब विष्कम्भ (की परिभाषा दी जा रही) है—

व्यतीत हो चुके और आगे होने वाले कथा के अंशों का सूचक, संक्षिप्त अर्थवाला तथा मध्यम दर्जे के पात्रों के द्वारा प्रयुक्त (जो अर्थोपक्षेपक है वह) विष्कम्भक (कहा गया) है ।।59।।

वह (विष्कम्भक) दो प्रकार का होता है—

(1) शुद्ध तथा (2) सङ्कीर्ण । इन्हें बतला रहे हैं—

एक अथवा अनेक (मध्यम पात्रों) के द्वारा सम्पादित (विष्कम्भक) शुद्ध कहलाता है तथा नीच एवं मध्यम श्रेणी के पात्रों के द्वारा मिलकर प्रयुक्त विष्कम्भक सङ्कीर्ण कहलाता है।

अथ प्रवेशकः–

तद्वदेवानुदात्तोक्त्या नीचपात्रप्रयोजितः ॥60॥

प्रवेशोऽङ्कद्वयस्यान्तः शेषार्थस्योपसूचकः ।

2–प्रवेशक

अब प्रवेशक (की परिभाषा दी जा रही है)—

उसी तरह (अर्थात् विष्कम्भक की तरह भूत एवं भावी कथानक को जोड़ने वाला), नीच पात्रों के द्वारा निम्न भाषा (low language) से प्रयुक्त, दो अङ्कों के अन्तराल में स्थित, शेष (अर्थात् अभिनय के द्वारा अप्रदर्शित) अर्थ का सूचक (अर्थोपक्षेपक) प्रवेशक कहा गया है।

अन्तर्जवनिकासंस्थैश्चूलिकार्थस्य सूचना ॥61॥

3– चूलिका

जवनिका के भीतर स्थित पात्रों के द्वारा (किसी) अर्थ (बात) की सूचना 'चूलिका' (नामक अर्थोपक्षेपक) कहलाता है ।।61।।

अङ्कान्तपात्रैरङ्कास्यं छिन्नाङ्कस्यार्थसूचनात् ।

4– अङ्कास्य

अङ्क के अन्त में अभिनय करनेवाले पात्रों के द्वारा (जिस अङ्क में वे पात्र हैं उस अङ्क से) विच्छिन्न (disconnected), आगे आनेवाले अङ्क के अर्थ की सूचना देने के कारण यह अङ्कास्य कहलाता है।

5– अङ्कावतार

अङ्कावतारस्त्वङ्कान्ते पातोऽङ्कस्याविभागतः ॥2॥

जहाँ (पूर्व) अङ्क की समाप्ति हो जाने पर (अगले) अङ्क का, कथा-प्रवाह को बिना रोके या बदले (अविच्छिन्न रूप से), अवतरण होता है। वह अङ्कावतार कहलाता है।

एभिः संसूचयेत् सूच्यं दृश्यमङ्कैः प्रदर्शयेत् ।

इन (विष्कम्भकादि अर्थोपक्षेपकों) के द्वारा सूचित करने योग्य अर्थ को सूचित करना चाहिए तथा रङ्गमञ्च पर अभिनय करने योग्य अर्थ को अङ्कों के द्वारा (विभक्त करके) दिखलाना चाहिए।

पुनस्त्रिधा वस्तुविभागमाह—

नाट्यधर्ममपेक्ष्यैतत्पुनर्वस्तु त्रिधेष्यते ॥63॥

नाट्य-धर्म के अनुसार कथा-वस्तु के भेद

नाट्य-धर्म (नाट्य के स्वभाव, अभिनय के नियम) की दृष्टि से भी यह वस्तु फिर तीन प्रकार की बलताई गई है ।।63।।

सर्वेषां नियतस्यैव श्राव्यमश्राव्यमेव च ।

सर्वश्राव्यं प्रकाशं स्यादश्राव्यं स्वगतं मतम्॥64॥

(1) सबके लिए सुनने योग्य (= सर्वश्राव्य), (2) कुछ नियत जनों को ही सुनने योग्य (= नियतश्राव्य) तथा, (3) किसी को भी न सुनने योग्य (अश्राव्य) ।उनमें-(क) प्रकाश, (ख) स्वगत— सर्व को सुनने लायक वस्तु ''प्रकाश'' तथा अश्राव्य वस्तु ''स्वगत'' कही गई है ।।64।।

द्विधाऽन्यन्नाट्यधर्माख्यं जनान्तमपवारितम् ।

अन्य नाट्य-धर्म (अर्थात् नियतश्राव्य) दो प्रकार का है—1) जनान्त (जनान्तिक) और अपवारित।

1– जनान्तिक

त्रिपताकाकरेणान्यानपवार्यान्तरा कथाम् ॥65॥

अन्योन्यामन्त्रणं यत्स्याज्जनान्ते तज्जनान्तिकम् ।

चल रहे संवाद के बीच में, त्रिपताकारूप हाथ (की मुद्रा) के द्वारा दूसरे (पात्रों) को बचाकर, कतिपय जनों के मध्य दो पात्र आपस में जो बात-चीत करते हैं—वह जनान्तिक कहलाता है।

अथापवारितम्—

रहस्यं कथ्यतेऽन्यस्य परावृत्त्यापवारितम् ॥66॥

2– अपवारित

(बहुत पात्रों के रहते) जहाँ (किसी एक पात्र के द्वारा) मुँह दूसरी ओर करके दूसरे (पात्र) से गोपनीय बात कही जाती है, वह अपवारित (संवाद) कहलाता है ।।66।।

आकाशभाषित

किं ब्रवीष्येवमित्यादि विना पात्रं ब्रवीति यत् ।

श्रुत्वेवानुक्तमप्येकस्तत्स्यादाकाशभाषितम् ॥67॥

जहाँ कोई एक ही पात्र किसी दूसरे पात्र के बिना ही बात करता है तथा किसी के बिना कुछ कहे भी मानो सुन कर ही 'क्या कह रहे हो?''—इस प्रकार कथोपकथन करता है, वह आकाशभाषित होता है ।।67।।

प्रस्तावना–

सूत्रधारो नटीं ब्रूते मार्षं वाऽथ विदूषकम् ॥7॥

स्वकार्यं प्रस्तुताक्षेपि चित्रोक्त्या यत्तदामुखम् ।

प्रस्तावना वा

तत्र स्युः कथोद्धातः प्रवृत्तकम् ॥8॥

प्रयोगातिशयश्चाथ वीथ्यङ्गानि त्रयोदश ।

जहाँ सूत्रधार विचित्र उक्ति के द्वारा नटी, पारि-पार्श्विक अथवा विदूषक को प्रस्तुत अर्थ का आक्षेप करने वाला (अर्थात् प्रस्तुत अर्थ की सूचना देने वाला) अपना कार्य बतलाता है, वह आमुख है। इसे ही प्रस्तावना भी कहते हैं।।7-8।।

उस (आमुख या प्रस्तावना) में (क) कथोद्घात, (ख) प्रवृत्तक, (ग) प्रयोगातिशय तथा (घ) वीथी में होने वाले तेरह अङ्ग होते हैं ।।8-9।।

नायक के भेद

भेदैश्चतुर्धा ललितशान्तोदात्तोद्धतैरयम् ।

यह (नायक) ललित, शान्त, उदात्त और उद्धत भेद से **चार प्रकार** का होता है।

1. धीरललित

निश्चिन्तो धीरललितः कलासक्तः सुखी मृदुः॥3॥

चिन्ता से मुक्त, (ललित) कथाओं का प्रेमी, सुखी तथा कोमल प्रकृति का (नायक) धीरललित कहलाता है।

2– शान्त

सामान्यगुणयुक्तस्तु धीरशान्तो द्विजादिकः।

(अर्थात् धीरशान्त) सामान्य गुणों से युक्त द्विज आदि नायक धीरशान्त (नायक) कहा गया है।

3– धीरोदात्त

महासत्त्वोऽतिगम्भीरः क्षमावानविकत्थनः।

स्थिरो निगूढाहङ्कारो धीरोदात्तो दृढव्रतः ॥4॥

अब धीरोदात्त (नायक का लक्षण बतलाया जा रहा) है–

विशाल एवं अविचल अन्तःकरणवाला, अत्यन्त गम्भीर, क्षमाशील, आत्म-प्रशंसा न करने वाला (अर्थात् डींग न हाँकने वाला), अविचल, अभिमान को दबाकर रखने वाला तथा दृढव्रती (नायक) धीरोदात्त कहा गया है ।।

4– धीरोद्धत

दर्पमात्सर्यभूयिष्ठो मायाच्छद्मपरायणः

धीरोद्धतस्त्वहङ्कारी चलश्चण्डो विकत्थनः।

घमण्ड और डाह की अधिकता से युक्त (अर्थात् अत्यन्त घमण्डी एवं प्रबल ईर्ष्यालु), माया और कपट से भरपूर, अहङ्कारी, अस्थिर, अत्यन्त क्रोधी तथा अपनी प्रशंसा करने वाला (नायक धीरोद्धत नायक कहा गया है)

नान्दी

आशीर्वचनसंयुक्ता स्तुतिर्यस्मात् प्रयुज्यते।

देवद्विजनृपादीनां तस्मान्नान्दीति संज्ञिता॥(सा.द. 6/24)

नान्दी उसे कहते हैं, जो नाटक के प्रारम्भ में देवता, ब्राह्मण या राजाओं आदि की आशीर्वाद से युक्त स्तुति करता है।

सूत्रधार–

नाट्यस्य यदनुष्ठानं तत्सूत्रं स्यात् सबीजकम् ।

रङ्गदैवतपूजाकृत् सूत्रधार उदीरितः ॥

बीजसहित नाटक के अनुष्ठान को 'सूत्र' कहते हैं, जो उसको धारण करने वाला अर्थात् संचालन करने वाला होता है तथा रंगमंच के अधिष्ठातृ देव की पूजा करता है, उसे सूत्रधार कहते हैं।

नेपथ्य–

कुशीलवकुटुम्बस्य गृहं नेपथ्यमुच्यते ।

अभिनेतागण जहाँ पर नाटक के उपयुक्त वेषभूषा धारण करते हैं, उसे नेपथ्य कहते हैं।

कञ्चुकी–

अन्तःपुरचरो वृद्धो विप्रो गुणगणान्वितः ।

सर्वकार्यार्थकुशलः कञ्चुकीत्यभिधीयते ॥

अन्तःपुर में जाने वाले, वृद्ध, गुणवान् ब्राह्मण को, जो सब कार्यों को करने में कुशल होता है, कंचुकी कहते हैं। **(नाट्यशास्त्र)**

विदूषक–

कुसुमवसन्ताद्यभिधः कर्मवपुर्वेषभाषाद्यैः ।
हास्यकरः कलहरतिर्विदूषकः स्यात् स्वकर्मज्ञः ॥
(सा. द. 3-42)

जो अपने कार्यों, शारीरिक चेष्टाओं, वेष और बोली आदि के द्वारा जनता को हँसाता है, कलह में प्रेम करता है और अपने हास्य के कार्यों को ठीक जानता है, उसे विदूषक कहते हैं। कुसुम, वसन्त आदि उसके नाम होते हैं।

दशरूपक प्रश्नोत्तरी

- दशरूपकस्य रचयिता अस्ति- **धनञ्जयः**
- रूपकाणां भेदकतत्त्वम् – **रस, नेता, वस्तु**
- दशरूपके प्रकाशाः सन्ति- **चत्वारः**
- कस्मिन् रसे 'आरभटीवृत्तिः' अस्ति-**रौद्र**
- 'उन्मादः' अस्ति– **व्यभिचारीभावः**
- 'वस्तु च द्विधा' इति केन ग्रन्थेन सम्बद्धोऽस्ति– **दशरूपकेन**
- ''फलार्थिभिः प्रारब्धस्य कार्यावस्थाः'' सन्ति– **पञ्च**
- 'स्वीया'- नायिकायाः भेदाः– **त्रयोदश**
- 'फलागमस्य' परिगणना भवति—**कार्यावस्थासु**
- दशरूपकानुसारेण नागानन्दस्य नायकः जीमूतवाहनः अस्ति– **धीरोदात्तः**
- शृङ्गाररसाश्रया वृत्तिरस्ति– **कैशिकी**

ध्वन्यालोक

प्रथम उद्योतः

स्वेच्छाकेसरिणः स्वच्छस्वच्छायायासितेन्दवः।
त्रायन्तां वो मधुरिपोः प्रपन्नार्तिच्छिदो नखाः॥

स्वयं अपनी इच्छासे सिंह (नृसिंह) रूप धारण किये हुए (मधुरिपु) विष्णु भगवान् के, अपनी निर्मल कान्तिसे चन्द्रमा को खिन्न (लज्जित) करनेवाले, शरणागतों के दुःखनाशन में समर्थ, नख तुम सब (व्याख्याता तथा श्रोता) की रक्षा करें।

काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति बुधैर्यः समाम्नातपूर्व-
स्तस्याभावं जगदुरपरे भाक्तमाहुस्तमन्ये।
केचिद् वाचां स्थितमविषये तत्त्वमूचुस्तदीयं
तेन ब्रूमः सहृदयमनःप्रीतये तत्स्वरूपम् ॥1॥

काव्य के आत्मभूत जिस तत्त्व को विद्वान् लोग ध्वनि नाम से कहते आये हैं, कुछ लोग उसका अभाव मानते हैं। दूसरे लोग उसे भाक्त (गौण, लक्षणागम्य) कहते हैं और कुछ लोग उसके रहस्य को वाणी का अविषय (अवर्णनीय, अनिर्वचनीय) बतलाते हैं। अतएव (ध्यनिके विषयमें इन नाना विप्रतिपत्तियों के होने के कारण उनका निराकरण कर, ध्वनिस्थापना द्वारा) सहृदयों (काव्यमर्मज्ञ जनों) की मन की प्रसन्नता (हृदयाह्लाद) के लिए हम उस (ध्वनि) के स्वरूप का निरूपण करते हैं ।।1।।

प्रतीयमानं पुनरन्यदेव वस्त्वस्ति वाणीषु महाकवीनाम् ।
यत् तत् प्रसिद्धावयवातिरिक्तं विभाति लावण्यमिवाङ्गनासु ॥4॥
(भ्रम धार्मिक विस्त्रब्धः स शुनकोऽद्य मारितस्तेन।
गोदावरीनदीकच्छकुञ्जवासिना दृप्तसिंहेन॥ इत च्छाया)

प्रतीयमान कुछ और ही चीज है जो रमणियों के प्रसिद्ध (मुख, नेत्र, श्रोत्र, नासिकादि) अवयवों से भिन्न (उनके) लावण्य के समान, महाकवियों की सूक्तियों में (वाच्य अर्थ से) अलग ही भासित होता है ।।4।।

वस्तुध्वनि का वाच्यार्थ से स्वरूपकृत भेद

वह (प्रतीयमान) अर्थ वाच्य सामर्थ्य से आक्षिप्त वस्तु मात्र, अलङ्कार और रसादि भेद से अनेक प्रकार का दिखाया जाएगा। उन सभी भेदों में वह वाच्य से अलग ही है। जैसे पहला (वस्तुध्वनि) भेद वाच्य से अत्यन्त भिन्न है। (क्योंकि) कहीं वाच्य के विधिरूप होने पर (भी) वह (प्रतीयमान) निषेधरूप होता है। जैसे- पण्डितजी महाराज! गोदावरी के किनारे कुञ्ज में रहने वाले मदमत्त सिंह ने आज उस कुत्ते को मार डाला है, अब आप निश्चिन्त होकर घूमिये।

2. **क्वचिद् वाच्ये प्रतिषेधरूपे विधिरूपो यथा-**
   (श्वश्रूरत्र निमज्जति अत्राहं दिवसकं प्रलोकय।
   मा पथिक रात्र्यन्धक शय्यायां मम निमंक्ष्यसि॥
   (इति च्छाया)
3. **क्वचिद् वाच्ये विधिरूपेऽनुभयरूपो यथा-**
   (व्रज ममैवैकस्या भवन्तु निःश्वासरोदितव्यानि।
   मा तवापि तया बिना दाक्षिण्यहतस्य जनिषत॥
   (इति च्छाया)

कहीं वाच्यार्थ प्रतिषेधरूप होनेपर (प्रतीयमानार्थ) विधिरूप होता है। जैसे- हे पथिक ! दिन में अच्छी तरह देख लो, यहाँ सास जी सोती हैं और यहाँ मैं सोती हूँ। (रात को) रतौंधीग्रस्त (होकर) कहीं हमारी खाट पर न गिर पड़ना।

कहीं वाच्य विधिरूप होने पर (प्रतीयमान अर्थ) अनुभयात्मक (विधि,निषेध दोनों से भिन्न) होता है। जैसे-

(तुम) जाओ, मैं अकेली ही इन निःश्वास और रोने को भोगूँ (सो अच्छा है) कहीं दाक्षिण्य (मेरे प्रति भी अनुराग अनेकम-

हिलासमरागो दक्षिणः कथितः') के चक्कर में पड़कर, उसके बिना तुमको भी यह सब न भोगना पड़े।

अलङ्कारध्वनि का वाच्यार्थ से भेद

इस प्रकार वाच्यार्थसे भिन्न प्रतीयमान (वस्तुध्वनि) के और भी भेद हो सकते हैं। यह तो उनका केवल दिग्दर्शनमात्र कराया है। दूसरा (अलङ्कारध्वनिरूप) प्रकार भी वाच्यार्थसे भिन्न है। उसे आगे (द्वितीय उद्योत में) सविस्तार दिखलायेंगे।

रसध्वनिका वाच्यार्थ से भेद

तीसरा (रसध्वनि) रसादिरूप भेद वाच्य की सामर्थ्य से आक्षिप्त होकर ही प्रकाशित होता है, साक्षात् शब्दव्यापार (अभिधा, लक्षणा, तात्पर्या शक्तिव्यापार) का विषय नहीं होता, इसलिए वाच्यार्थ से भिन्न ही है।

यत्रार्थः शब्दो वा तमर्थमुपसर्जनीकृतस्वार्थौ।
व्यङ्क्तः काव्यविशेषः स ध्वनिरिति सूरिभिः कथितः॥13॥

यत्रार्थो वाच्यविशेषः, वाचकविशेषः शब्दो वा, तमर्थं व्यङ्क्तः, स काव्यविशेषो ध्वनिरिति। अनेन वाच्यवाचकचारुत्वहेतुभ्य उपमादिभ्योऽनुप्रासादिभ्यश्च विभक्त एव ध्वनेर्विषय इति दर्शितम्।

इस प्रकार वाच्यार्थ से अतिरिक्त व्यङ्ग्यार्थ की सत्ता तथा प्राधान्य (सद्भाव शब्द का सत्ता तथा साधुभाव अर्थात् प्राधान्य दोनों अर्थ हैं) प्रतिपादन करके प्रकृत में उसका उपयोग दिखलाते हुए कहते हैं- जहाँ अर्थ अपने को (स्व) अथवा शब्द अपने अर्थ को गुणीभूत करके उस (प्रतीयमान) अर्थ को अभिव्यक्त करते हैं, उस काव्यविशेषको विद्वान् लोग ध्वनि (काव्य) कहते हैं।।13।।

जहाँ अर्थ वाच्यविशेष, अथवा वाचकविशेष शब्द, उस (प्रतीयमान) अर्थ को अभिव्यक्त करते हैं उस काव्यविशेष को 'ध्वनिकाव्य' कहते हैं। इससे वाच्यवाचक के

यदप्युक्तम्- **''प्रसिद्धप्रस्थानातिरेकिणो मार्गस्य काव्यत्वहानेर्ध्वनिर्नास्ति'', इति तदप्ययुक्तम्। यतो लक्षणकृतामेव स केवलं न प्रसिद्धः, लक्ष्ये तु परीक्ष्यमाणे स एव सहृदयहृदयाह्लादकारि काव्यतत्त्वम्।**

चारुत्वहेतु उपमादि और अनुप्रासादि से अलग ही ध्वनिका विषय है यह दिखलाया। और जो यह कहा था कि 'प्रसिद्ध (शब्दार्थशरीरं काव्यं वाले) मार्ग से भिन्न मार्ग में काव्यत्व ही नहीं रहेगा इसलिए ध्वनि नहीं है' वह ठीक नहीं है, क्योंकि वह केवल (उन) लक्षणकारों को ही प्रसिद्ध (ज्ञात) नहीं है, परन्तु लक्ष्य (रामायण, महाभारत प्रभृति) की परीक्षा करने पर तो सहृदयों के हृदयों को आह्लादित करने वाला काव्य का सारभूत वही (ध्वनि) है।

स चाविवक्षितवाच्यो विवक्षितान्यपरवाच्यश्चेति द्विविधः सामान्येन। तत्राद्यस्योदाहरणम् -

ध्वनि के दो मुख्य भेद

(इसलिए) ध्वनि है। वह सामान्यतः अविवक्षितवाच्य (लक्षणामूल) और विवक्षितान्यपरवाच्य (अभिधामूल) भेद से दो प्रकार का होता है। उनमें से प्रथम (अविवक्षितवाच्य, लक्षणामूल ध्वनि) का उदाहरण यह है

सुवर्णपुष्पां पृथिवीं चिन्वन्ति पुरुषास्त्रयः।
शूरश्च कृतविद्यश्च यश्च जानाति सेवितुम् ॥

द्वितीयस्यापि -

शिखरिणि क्व नु नाम कियच्चिरं किमभिधानमसावकरोत्तपः।
सुमुखि येन तवाधरपाटलं दशति बिम्बफलं शुकशावकः॥13॥

सुवर्ण जिसका पुष्प है ऐसी पृथिवी का चयन (अर्थात् पृथिवीरूप लता के सुवर्णरूप पुष्पों का चयन) तीन ही पुरुष करते हैं-शूर, विद्वान् और जो सेवा करना जानता है।

दूसरे (विवक्षितान्यपरवाच्य, अभिधामूलध्वनि) का भी (उदाहरण देते हैं) हे सुमुखि! इस शुकशावक ने किस पर्वत पर, कितने दिनों तक, कौन-सा तप किया है, जिसके कारण तुम्हारे अधर के समान रक्तवर्ण बिम्बफल को काट (नेका सौभाग्य-पुण्यातिशयलभ्य सौभाग्य-प्राप्त कर) रहा है।।13।।

ध्वन्यालोक प्रश्नोत्तरी

- ध्वनिसिद्धान्तस्य प्रवर्तकःअस्ति- **आनन्दवर्धनः**
- काव्यस्यात्मा ध्वनिः –**आनन्दवर्धनः**
- ध्वन्यालोकः विभक्तः अस्ति– **उद्योतेषु**
- आनन्दवर्धनाचार्यमतानुसारं काव्यस्यात्मा भवति–**ध्वनिः**
- 'लोचनं' कस्य ग्रन्थस्य आख्यानम् अस्ति– **ध्वन्यालोकस्य**
- 'ध्वन्यालोकः' इत्यस्मिन् ग्रन्थे कति उद्योताः सन्ति– **चत्वारः**
- काव्यस्यात्मा स एवार्थः कारिकायाः रचयिताऽस्ति– **आनन्दवर्धनः**
- ध्वन्यालोके ध्वनिविरोधिनां पक्षाः भवन्ति**–त्रयः**
- ध्वनिप्रभेदेषु उत्कृष्टः अस्ति- **रसध्वनिः**
- ध्वन्यालोके प्रतीयमानस्य तृतीयः प्रभेदः उक्तः– **रसादिः**
- ध्वनिकाव्यं भवति–**यत्र वाच्यातिशयि व्यङ्ग्यं प्रधानम्**

6. लौकिक साहित्य

1. रामायण

- रामायण महर्षि वाल्मीकि की कृति है।
- इसमें सात काण्ड हैं-

काण्ड का नाम	सर्ग संख्या
1. बालकाण्ड	77सर्ग
2. अयोध्याकाण्ड	119 सर्ग
3. अरण्यकाण्ड	75 सर्ग
4. किष्किन्धाकाण्ड	67 सर्ग
5. सुन्दरकाण्ड	68 सर्ग
6. युद्धकाण्ड	128 सर्ग
7. उत्तरकाण्ड	111 सर्ग
कुलसर्ग	**645 सर्ग**

- इसमें 24000 श्लोक हैं, अतः इसे **चतुर्विंशति साहस्त्री संहिता** भी कहते हैं।
- रामायण में मुख्यतः **अनुष्टुप्** श्लोक (छन्द) हैं।
- गायत्री मन्त्र में 24 वर्ण होते हैं। अतः यह मान्यता है कि इसको आधार मानकर रामायण में **24,000 श्लोक** लिखे गये हैं।
- प्रत्येक 1000 श्लोकों के बाद गायत्री मन्त्र के नये वर्ण से नया श्लोक प्रारम्भ होता है।
- संस्कृत साहित्य में इतिहास संज्ञक दो ग्रन्थ प्राप्त होते हैं एक रामायण दूसरा महाभारत।
- रामायण तथा महाभारत दोनों महाकाव्य के रूप में प्रसिद्ध हैं।
- वाल्मीकिकृत रामायण **आदिकाव्य** है।
- यह संस्कृतवाङ्मय में प्राप्त रामकथाओं के अतिरिक्त संसार के अनेक रामकथाओं जैसे अध्यात्म रामायण,अद्भुत रामायण, कम्बरामायण आदि राम विषयक काव्यों का मूल उपजीव्य स्वीकार किया जा सकता है।
- राजशेखर ने काव्यमीमांसा में इतिहास के दो भेद किये हैं,

  1. परिक्रिया **2. पुराकल्प**
- परिक्रियात्मक इतिहास एक नायक से सम्बद्ध है, पुराकल्पात्मक इतिहास अनेक नायकों से सम्बद्ध होता है।
- इसप्रकार रामायण केवल एक नायक विषयक होने से परिक्रियात्मक इतिहास स्वीकार किया जा सकता है।
- महाभारत में अनेक नायक सम्बन्धित कथायें होने से उसे पुराकल्पात्मक इतिहास माना जाना चाहिए।
- वेदों के बाद सर्वप्रथम अनुष्टुप् वाणी का प्रवर्तन आदि काव्य रामायण में ही है।
- ऋषि वाल्मीकि के द्वारा विरचित होने के कारण इसे **आर्षकाव्य** भी कहा जाता है।
- वाल्मीकि ने नारदजी से राम का वृत्तान्त सुना जो रामायण के बालकाण्ड का प्रथम सर्ग है जिसे **मूल रामायण** भी कहा जाता है।
- वाल्मीकि राम के समकालीन थे, अतः उन्होंने राम के चरित्र को काव्यबद्ध किया।
- ब्रह्मा की आज्ञा से वाल्मीकि ऋषि ने रामायण को रचा।

  न ते वागनृता काव्ये काचिदत्र भविष्यति।
  कुरु रामकथां पुण्यां श्लोकबद्धां मनोरमाम्॥
- महाभारत में प्राप्त रामोपाख्यान वाल्मीकि रामायण पर ही आधारित प्रतीत होता है। इससे वाल्मीकिरामायण की प्राचीनता प्रमाणित होती है।
- महाभारत के खिलभाग हरिवंश पुराण में रामायण महाकाव्य को लक्षित करके नाटक रचने का उल्लेख मिलता है-

  'रामायणं महाकाव्यमुद्दिश्य नाटकं कृतम्'
- स्कन्दमहापुराण में 'रामायणमाहात्म्य', पद्मपुराण के पातालखण्ड में 'रामकथा', अग्निपुराण का 'रामायणसार' गरुड़पुराण के पूर्वखण्ड में 'रामायणसार' का वर्णन,भागवतपुराण तथा बृहद्धर्मपुराण में रामविषयक आख्यान, आदिकवि वाल्मीकि रचित रामायण से आविर्भूत हुए हैं।
- यह सनातन काव्य बीज होने से परवर्ती काव्यों का उपजीव्य है।**'काव्यबीजं सनातनम्'-**
- रामायण ने अपने को वेदों का उपबृंहण करने वाला बतलाया है-

  स तु मेधाविनौ दृष्ट्वा वेदेषु परिनिष्ठतौ।
  वेदोपबृंहणार्थाय तावग्राहयत प्रभुः॥
- रामायण का महत्त्व एक शास्त्रीय ग्रन्थ के रूप में भी अङ्गीकार किया जा सकता है। कथाओं के मध्य-मध्य में धर्मशास्त्रीय, नीतिशास्त्रीय तथा राजनीति विषयक श्लोक आये हैं। जिनमें शास्त्रीयता दृष्टिगत होती है।

- बालकाण्ड में विश्वामित्र के साथ रहने वाले साधु महात्मा पितृ-देवताओं का तर्पण करके अग्निहोत्र करने के पश्चात् अमृत के समान हविष्य का भक्षण करते थे।
- इतिहास पुराण को भी पञ्चमवेद की संज्ञा प्राप्त है- **''इतिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदः ।''**
- रामायण महाकाव्य में राम धीरोदात्त क्षत्रिय नायक हैं।
- रामायण में **'तपःस्वाध्यायनिरतं तपस्वी वाग्विदां वरम्'** इत्यादि मङ्गलाचरणात्मक पद्य में वस्तुनिर्देशात्मक मङ्गलाचरण है।
- सर्गान्त में छन्द परिवर्तन की परम्परा का निर्वाह रामायण में सर्वत्र किया गया है।
- रामायण के प्रायः सभी रसों का वर्णन आया है परन्तु **करुणरस** प्रधान है।
- बुद्धचरित में अश्वघोष वाल्मीकि का नाम लेकर उन्हें प्रथम अनुष्टुप् छन्द का रचयिता स्वीकार करते हैं। **'वाल्मीकिरादौ च ससर्ज पद्यं'** (बुद्धचरित-1.43)

रामायण के विविध संस्करण

1. बम्बई संस्करण (देवनागरी संस्करण)-

- इसका प्रकाशन बम्बई के निर्णयसागर प्रेस से **1902** ई. में **के. पी. परब** के सम्पादन में हुआ।
- यह संस्करण भारत में सर्वाधिक लोकप्रिय है।
- इस संस्करण पर नागेश द्वारा अपने आश्रयदाता राम के नाम से लिखी **'तिलक'** टीका मिलती है।
- **'शिरोमणि'** और **'भूषण'** नामक टीकाएँ भी प्राप्त होती हैं।
- इसी संस्करण के आधार पर R.T.H ग्रिफिथ महोदय ने अंग्रेजी पद्यानुवाद किया।
- इसे **'देवनागरी संस्करण'** भी कहते हैं।

2. बंगाल संस्करण

- इस संस्करण का प्रकाशन इटालियन विद्वान् जी. गोरेशियो ने 1843 ई. से 1867ई. तक अनेक खण्डों में किया।
- इसी संस्करण के आधार पर इटालियन व फ्रेंच अनुवाद हुए।
- इसे **गौडीय संस्करण** भी कहते हैं।

3. पश्चिमोत्तर या काश्मीर संस्करण-

- 1923 ई. में डी. ए. वी. कालेज लाहौर के अनुसन्धान विभाग से प्रकाशित हुआ।
- इसमें कटक टीका भी दी गयी है।

4. दाक्षिणात्य संस्करण-

- यह संस्करण मद्रास के कुम्भकोणम् से 1929 ई. में प्रकाशित हुआ।
- बम्बई संस्करण से मिलता-जुलता संस्करण है।

रामायण की विषयवस्तु

1. बालकाण्ड -77 सर्ग

- बालकाण्ड के आरम्भ के 4 सर्गों में रामायण की रचना की पूर्व पीठिका दी गयी है। नारद ने महर्षि वाल्मीकि को राम कथा सुनायी।
- क्रौञ्चवध की घटना, अयोध्यापुरी का वर्णन, ऋषि शृङ्ग तथा शान्ता के विवाह का वर्णन।
- दशरथ द्वारा अश्वमेध यज्ञ ।
- ऋषिशृङ्ग द्वारा दशरथ का पुत्रेष्टि यज्ञ कराया गया।
- श्रीरामावतार, भरत , लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न का जन्म।
- ताटका वध।विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा।
- गङ्गा से कार्तिकेय की उत्पत्ति का प्रसङ्ग।
- सगर के पुत्रों की उत्पत्ति तथा यज्ञ की तैयारी।
- भगीरथ की तपस्या, गङ्गावतरण।
- मिथिला गमन, अहल्या का उद्धार।
- त्रिशङ्कु का यज्ञ। श्रीराम द्वारा धनुर्भङ्ग।
- श्रीरामादि चारों भाइयों का विवाह।
- वामनावतार,सागरमंथन वर्णन।

2. अयोध्याकाण्ड-119 सर्ग

- श्रीराम के राज्याभिषेक का प्रस्ताव।
- मन्थरा एवं कैकेयी प्रसङ्ग।दशरथ विलाप वर्णन।
- राम की वन यात्रा, स्त्रियों का विलाप।
- निषादराज गुह का वर्णन।
- प्रयाग भरद्वाज आश्रम में राम का अतिथि सत्कार।
- चित्रकूट की महत्ता एवं शोभा का वर्णन।
- राजा दशरथ का दिवंगत होना एवं रानियों का करुण विलाप।
- दशरथ का अन्त्येष्टि संस्कार एवं भरत का राज्य न स्वीकार करना भरत की वनयात्रा एवं चित्रकूट यात्रा का वर्णन।
- भरतसंताप एवं राजचिन्ह स्वरूप चरण पादुकाएँ लेकर अयोध्या आगमन।
- जाबालि का नास्तिक मत एवं राम द्वारा खण्डन।
- अनुसूया द्वारा सीता का सत्कार एवं पातिव्रत्य धर्म का उपदेश, अन्तिम सर्ग में दण्डकारण्य में प्रवेश।

3. अरण्यकाण्ड-75 सर्ग

- राम-लक्ष्मण-सीता का दण्डकारण्य में निवास।
- पञ्चवटी निवास, विराध आदि राक्षसों का वध।
- सुतीक्ष्ण एवं अगस्त्य आश्रम में राम आदि के जाने का वर्णन।
- पम्पासरोवर, पञ्चाप्सरतीर्थ एवं माण्डकर्णि मुनि की कथा।
- पञ्चवटी में लक्ष्मण द्वारा सुन्दर पर्णकुटी (पर्णशाला) निर्माण।

- हेमन्त ऋतु वर्णन।
- शूर्पणखा का वर्णन एवं लक्ष्मण का उसके नाक-कान काट लेना।
- खरदूषण सहित चौदह सहस्र राक्षसों का वध,त्रिशिरा वध।
- रावण द्वारा छल से सीता हरण,रावण द्वारा जटायु की हत्या।
- राम का करुण विलाप।
- राम की कबन्ध से भेंट तथा उनके द्वारा सुग्रीव से मैत्री करने का परामर्श।

4. किष्किन्धाकाण्ड-67 सर्ग

- पम्पासरोवर के वसन्तऋतु दर्शन से श्रीराम की व्याकुलता।
- हनुमान् द्वारा राम और सुग्रीव की मैत्री कराना।
- राम द्वारा बालि का वध, तारा का विलाप, सुग्रीव तथा अङ्गद का राज्याभिषेक।
- राम का प्रस्रवण पर्वत पर चातुर्मास यापन।
- वर्षा ऋतुवर्णन, सम्पाती कथा, जाम्बवान् द्वारा हनुमान् का उद्‌बोधन

5. सुन्दरकाण्ड -68 सर्ग

- हनुमान् द्वारा सागर लांघ कर लङ्का में प्रवेश।
- सीता की खोज, अशोकवन में सीता दर्शन, अङ्गुलीयक वृत्तान्त (अँगूठी वर्णन)।
- अशोक वाटिका विध्वंस, अक्षयकुमार वध एवं हनुमान् का बन्दी होकर रावण सभा में जाना।
- विभीषण द्वारा दूतवध निषेध तथा हनुमान् की पूँछ में आग लगाना तथा लङ्का-दहन।
- हनुमान् का लौटना तथा वानरों का मधुवन घर्षण।
- राम को हनुमान् द्वारा सीता की चूड़ामणि दिया जाना तथा सीता का वृत्तान्त सुनाना।
- इस काण्ड को 'सुन्दर' कहे जाने का कारण नायक और नायिका दोनों को संकट के विषम काल में शुभ समाचार प्राप्त होना।
- हनुमान् इस काण्ड के नायक हैं, उनके सुन्दर कार्यों के कारण इस काण्ड का नाम सुन्दरकाण्ड पड़ा
- अन्य काण्डों से अधिक काव्यात्मक होने से भी इसे 'सुन्दरकाण्ड' कहते हैं।

6. युद्धकाण्ड-128 सर्ग

- राम द्वारा हनुमान् प्रशंसा।
- श्रीराम के साथ वानर-सेना का प्रस्थान समुद्र तट पर पड़ाव।
- समुद्र से प्रार्थना, सेतु निर्माण।
- राम और रावण के बीच युद्ध का वर्णन।
- सभी काण्डों की अपेक्षा सबसे बड़ा काण्ड।
- रावण को सभा में मन्त्रणा,विभीषण परित्याग।
- विभीषण का राम की शरण में आना।
- रावण द्वारा गुप्तचर प्रयोग।
- अङ्गद दूत बनकर रावण के पास जाते हैं।
- कुम्भकर्ण को जगाना, कुम्भकर्ण वध।
- ब्रह्मास्त्र का प्रयोग, माया सीता का वध देखकर राम की मूर्च्छा।
- शक्ति से लक्ष्मण को मूर्च्छा और संजीवनी बूटी से मूर्च्छा की समाप्ति।
- राम द्वारा सूर्य पूजा (सर्ग-105)।
- रावण वध, विभीषण का राज्याभिषेक।
- सीता की अग्निपरीक्षा, ब्रह्मा द्वारा राम की स्तुति।
- सीता सहित राम का अयोध्या लौटना।
- राम का राज्याभिषेक और प्रजापालन।

नोट- पाश्चात्य विद्वानों का मत है कि रामायण की यहीं समाप्ति हो गयी थी, उत्तरकाण्ड प्रक्षिप्त है।

7. उत्तरकाण्ड-111 सर्ग

- बालकाण्ड के समान ही अनेक इतिहास पुराणात्मक आख्यान हैं।
- राम द्वारा प्रश्न पूछे जाने पर अगस्त्य ऋषि रावण के वंश की कथा सुनाते हैं।
- अगस्त्य ऋषि पुनः हनुमान् की कथा भी कहते हैं,सीता परित्याग।
- राजा नृग-उर्वशी-वशिष्ठ-ययाति के आख्यान।
- लवणासुर का शत्रुघ्न द्वारा वध तथा शत्रुघ्न का राज्याभिषेक।
- लव-कुश जन्म,रामचरित की रचना और गान,शम्बूक वध।
- इला-पुरुरवा आख्यान एवं राम द्वारा अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान।
- शपथ लेकर सीता का पाताल प्रवेश।
- कुश लव का राज्याभिषेक तथा राम का महाप्रस्थान।
- अन्तिम सर्ग में रामायण का पाठफल कहा गया है।

प्रक्षिप्त अंश

- भारत में रामायण के विभिन्न संस्करणों में पाठ-भेद होने पर ऐसा भी माना गया है कि पूरी रामायण एक ही व्यक्ति महर्षि वाल्मीकि के द्वारा लिखी गयी थी जो मौखिक परम्परा से प्रचलित होने के कारण पृथक् संस्करणों में मिलती है।
- बालकाण्ड एवं उत्तरकाण्ड बाद में जोड़े गये हैं।इन यूरोपीय आलोचकों में वेबर तथा याकोबी प्रमुख हैं।
- प्रक्षिप्त मानने के इन्होंने निम्न तर्क दिये-

1. मूलकथा से असम्बद्धता।
2. भाषा-शैली का अन्तर होना।
3. प्रक्षिप्त काण्डों में ही राम को विष्णु का अवतार बताना।
4. महाभारत के रामोपाख्यान में तथा अन्य राम काव्यों में उत्तरकाण्ड की कथा नहीं है।
5. पाश्चात्त्य विद्वानों के मत में बड़ी त्रुटियाँ हैं। वस्तुतः रामायण की दीर्घकालीन मौखिक परम्परा के कारण कुछ सर्ग या श्लोक प्रक्षिप्त हुए हैं।

- सम्पूर्ण काण्डों को प्रक्षिप्त कहना पूर्वाग्रह तथा भ्रान्ति का द्योतक है।
- श्री वी. वरदाचार्य ने मूलग्रन्थ और प्रक्षिप्त अंश के विषय में पर्याप्त विवेचन किया और सारांश दिया है कि रामायण के सातों काण्ड मौलिक हैं।
- प्रसिद्ध समालोचक आनन्दवर्धन ने ध्वन्यालोक में सीतापरित्याग तक की कथा को मूल रामायण की कथा माना है।

रामायण में रस

- यद्यपि रामायण में करुण, शृङ्गार और वीर रस का व्यापक प्रयोग है, तथापि कवि का विशेष प्रयोग **करुण** की ओर ही है। अतः रामायण में **करुण रस** को ही अङ्गी रस स्वीकार किया गया है।
- आचार्य **आनन्दवर्धन ने (850ई०)** ध्वन्यालोक में स्पष्ट रूप से रामायण में करुण रस की पुष्टि की है -

रामायणे हि करुणो रसः स्वयम् आदिकविना सूत्रतः।
(ध्वन्यालोक 4/5 के बाद)

- रस उद्भावना के कारण ही वाल्मीकि **'रससिद्ध-कवीश्वर'** कहलाते हैं।
- आदिकवि वाल्मीकि ने रामायण की रचना की प्रेरणा करुण रस के प्रसङ्ग से ही प्राप्त की थी।
- क्रौञ्च पक्षी के युगल में से एक के मारे जाने से कवि का हृदय शोकाकुल हो उठा था और वही शोक श्लोक बनकर निर्गत (निकला) हुआ-

'सोऽनुव्याहरणाद् भूयः शोकः श्लोकत्वमागतः
(रामायण -1.2.41)

- वाल्मीकि ने रामायण की समाप्ति सीता के आत्यन्तिक वियोग तक की कथा का समावेश करते हुए की है -जैसा कि आनन्दवर्धन ने लिखा है -

'निर्व्यूढश्च स एव सीतात्यन्तवियोगपर्यन्त मेवस्वप्रबन्धमुपरचयता' (ध्वन्यालोक 4/5 के बाद)

- महाकवि भवभूति ने भी रामायण के प्रसंगों को ध्यान में रखकर **'एको रसः करुण एव'** का उद्घोष किया है। अतः स्पष्ट है आदिकाव्य रामायण का अङ्गी रस करुण ही है।

रामायण की भाषा शैली

- महर्षि वाल्मीकि की शैली वैदर्भी है।
- प्रसाद, ओज और माधुर्य शैली गत तीनों गुण उनमें सन्निविष्ट हैं।
- आदिमहाकाव्य रामायण की भाषा सरस, प्राञ्जल, ललित और परिष्कृत है। यद्यपि कहीं-कहीं आर्ष प्रयोग भी प्राप्त होते हैं।

रामायण में छन्दोयोजना

- आदिकाव्य में अनुष्टुप् छन्द का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है।
- अनुष्टुप् के सर्वाधिक प्रयोग से ज्ञात होता है कि अनुष्टुप् उनका प्रिय छन्द है।
- रामायण के सर्गान्त में प्रायः इन्द्रवज्रा तथा उपजाति छन्द हैं।

रामायण का समय निर्धारण

- रामायण की रचना समय के निर्धारण में विद्वानों में बहुत मतभेद है। तथापि अनेक विद्वत्गण की समीक्षा पर आधारित निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि -
- रामायण वैदिक साहित्य के अन्तिम पड़ाव अर्थात् 700ई॰पू॰ तथा बौद्ध धर्म (500ई॰पू॰) उदय के मध्य रचा गया ।
- निष्कर्षतः रामायण का समय वर्तमान स्वरूप के साथ द्वितीय शताब्दी ई॰पू॰में स्थिर हो चुका था।

रामायण का वर्तमान स्वरूप

- श्लोकों की संख्या -24000
- चौबीस हजार श्लोक होने से इसे **चतुर्विंशतिसाहस्त्री संहिता** कहते हैं।
- रामायण में 7काण्ड और 500सर्ग हैं।
- बालकाण्ड में कहा गया है -

चतुर्विंशसहस्त्राणि श्लोकानामुक्तवान् ऋषिः ।
तथा सर्गशतान् पञ्च षट् काण्डानि तथोत्तरम् ॥

रामायण के प्रसिद्ध पद्य एवं सुभाषित रत्न

- वाल्मीकि के सुभाषित और अर्थान्तरन्यास अत्यन्त भाव युक्त एवं हृदयङ्गम करने योग्य संवेदना एवं व्यंजना प्रधान हैं -
- उत्साहवन्तः पुरुषा नावसीदन्ति कर्मसु।
- सुलभाः पुरुषा राजन् सततं प्रियवादिनः ।
  अप्रियस्य च पथ्यस्य, वक्ता श्रोता च दुर्लभः।।
- कुलीनमकुलीनं वा, वीरं पुरुषमानिनम्।
  चारित्रमेव व्याख्याति, शुचिं वा यदि वाऽशुचिम्।।
- न परेणाहृतं भक्ष्यं व्याघ्रः खादितुमिच्छति।

- भयं भीताद् हि जायते।
- ऋद्धि युक्ता हि पुरुषा न सहन्ते परस्तवम्।
- आम्रं छित्वा कुठारेण, निम्बं परिचरेत्तु कः।
- राम द्वारा रावण की मृत्यु के बाद विभीषण को उपदेश - मरणान्तानि वैराणि निवृत्तं नः प्रयोजनम्। क्रियातामस्य संस्कारो ममाप्येष यथा तव।।

रामायण की उपजीव्यता

- किसी काव्य की कथावस्तु के मूल स्रोत को उस काव्य का उपजीव्य कहा जाता है।
- रामायण की राम कथा ने लोगों पर ऐसा प्रभाव किया कि किसी कवि के लिए रामकथा से सम्बद्ध कथानक का आश्रय अपने काव्य की प्रसिद्धि और गौरव के लिए आवश्यक सा हो गया ।
- रामायण से परकालीन कवियों, नाट्यकारों तथा चम्पूकारों ने रामायण को उपजीव्य बनाया ।
- रामायण के उत्तरकाण्ड में स्वयं वाल्मीकि रामकथा की उपजीव्यता इन शब्दों में कहते है।-

'' न ह्यन्योऽर्हति काव्यानां यशोभाग् राघवाद् ऋते।''

रामायण पर आश्रित ग्रन्थ

रामायण ग्रन्थ

1.योग वासिष्ठ (वसिष्ठ रामायण)।
2. अध्यात्म रामायण।
3. कम्बरामायण-तमिल भाषा में ।
4. अद्भुत रामायण।
5. अगस्त्य रामायण।
6. रङ्गनाथ रामायण- तेलगु में ।
7. कृत्तिवास रामायण- बंगला भाषा में
8. रामचरितमानस (तुलसीकृत)- अवधीभाषा में ।

रामायण आधारित महाकाव्य

रघुवंशम्	-	कालिदास ।
रामचरित	-	कवि अभिनन्द ।
रावणवध	-	भट्टि कवि ।
सेतुबन्ध	-	प्रवरसेन।
जानकीहरण	-	कुमारदास ।
रामायणमंजरी	-	क्षेमेन्द्र।
रघुनाथाभ्युदय	-	वामनभट्ट बाण।
राघवपाण्डवीय	-	माधवभट्ट ।
रामायणसार	-	रघुनाथ ।

रामायण आधारित रूपक ग्रन्थ

1.भास	-	प्रतिमानाटक
2. भास	-	अभिषेकनाटक
3. दिङ्नाग	-	कुन्दमाला
4. भवभूति	-	उत्तररामचरित
5. भवभूति	-	महावीरचरित
6. राजशेखर	-	बालरामायण
7. मुरारि	-	अनर्घराघव
8. जयदेव	-	प्रसन्नराघव
9. शक्तिभद्र	-	आश्चर्य चूड़ामणि
10. रामभद्र	-	जानकीपरिणय
11. महादेव	-	अद्भुत दर्पण
12. दामोदर मिश्र	-	हनुमन्नाटक (महानाटक)

रामायण आश्रित चम्पूग्रन्थ

1. रामायणचम्पू	-	भोज
2. उत्तरचम्पू	-	वेंकटाध्वरि
3. चम्पूराघव	-	अनन्ताचार्य
4. अमोघराघव	-	दिवाकर
5. रामचन्द्र चम्पू	-	विश्वनाथ सिंह

रामायण विषयक महत्त्वपूर्ण तथ्य

- संस्कृत साहित्य में रामायण और महाभारत आधारभूत ग्रन्थ है।
- रामायण को काव्य तथा महाभारत को इतिहास कहा जाता है।
- बौद्ध साहित्य पर भी रामायण का प्रभाव दिखाई पड़ता है - 'दशरथ जातक' नामक बौद्धग्रन्थ में राम कथा प्राप्त होती है।
- जैन ग्रन्थों पर भी रामायण का प्रभाव मिलता है। जैन कवि विमलसूरि ने रामायण का प्रथम रूपान्तरण 118 सर्गात्मक प्राकृत काव्य **"पउमचरिउ'' (पद्मचरित)** में किया था।
- रामायण की अमरता रामायण के बालकाण्ड में कही गयी है-
  यावत्स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले।
  तावद् रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति॥
- नलचम्पूकार त्रिविक्रमभट्ट ने वाल्मीकि को नमन करते हुए कहा है- **सदूषणाऽपि निर्दोषा सखराऽपि सुकोमला। नमस्तस्मै कृता येन रम्या रामायणी कथा।**
- संस्कृत के मूर्धन्य विद्वान् प्रो0 सत्यव्रतशास्त्री ने थाईलैण्ड की रामकथा पर आधारित संस्कृत महाकाव्य **''श्रीरामकीर्ति महाकाव्य''** लिखा है।
- प्रो0 सत्यव्रत शास्त्री ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त करने वाले प्रथम संस्कृत विद्वान् हैं।
- कुश और लव ने ही सर्वप्रथम रामायण का मञ्चगान किया था।

2. महाभारत

- महाभारत के लेखक का नाम व्यास (कृष्ण द्वैपायन वेदव्यास)है।
- **पिता का नाम -** पराशर ऋषि।
- **माता का नाम -** सत्यवती।
- यमुनाद्वीप में जन्म के कारण वेद व्यास को- द्वैपायन कहा जाता है।
- शरीर से कृष्ण वर्ण होने के कारण- कृष्णमुनि कहा जाता है।
- वैदिक मन्त्रों को याज्ञिक उपयोग के लिए चार वेदों में विभक्त करने के कारण- वेदव्यास कहा जाता है।

  'विव्यास वेदान् यस्मात् स तस्मात् व्यास इति स्मृतः'
- व्यास ने तीन वर्षों में महाभारत जैसे महान् ग्रन्थ की रचना की थी।

  वंशावली -
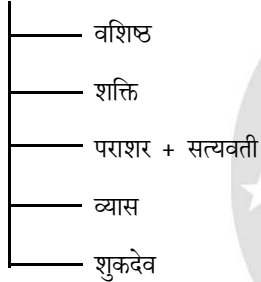
- **जन्म स्थान**- उत्तरापथ हिमालय
- भारतीय जनमानस की विश्वास परम्परा के आधार पर व्यास को कौरवों और पाण्डवों के समकालीन माना जाता है।
- वेदव्यास वेदों के विभाजन कर्त्ता, महाभारत, एवं भागवत पुराण सहित सभी अट्ठारह पुराणों के कर्त्ता के रूप में प्रसिद्ध हैं।
- भारतीय विश्वास में प्रत्येक द्वापर में आकर वेदव्यास वेदों का विभाजन करते हैं। अट्ठाईसवें व्यास का नाम 'कृष्ण द्वैपायन व्यास' है।
- पाश्चात्त्य विद्वानों के अनुसार 'व्यास' किसी का नाम न होकर प्रतीकात्मक कल्पना है।

  व्यास का अन्य नाम-

1. बादरायण व्यास (बदरिकाश्रम में ज्ञान की साधना की थी।
2. पराशर्य (पराशर का पुत्र)

महाभारत का परिचय एवं महत्त्वपूर्ण तथ्य

- विश्व वाङ्मय में सर्वाधिक विशाल ग्रन्थ महाभारत है।
- महाभारत में एक लाख से अधिक श्लोक हैं।
- यह भारतीय जीवन शैली की समग्र और यथार्थ प्रस्तुति है।
- यह आकरग्रन्थ है, इसकी मान्यताएँ शाश्वत अर्थात् सार्वकालिक और सार्वदेशिक हैं।
- भारतीय परम्परा महर्षि व्यास की गणना सप्त चिरंजीवियों में करती है।

  अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनुमांश्च विभीषणः।
  कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः॥
- महाभारत भारतीय संस्कृति और आचार परम्परा का सर्वोत्तम विश्वसनीय और आदर्श एवं महानतम ग्रन्थ है।
- महाभारत एक आर्षमहाकाव्य है।
- ऋषि प्रणीत काव्यों को आर्षमहाकाव्य कहा जाता है।
- को एक लाख श्लोक होने के कारण महाभारत **शतसाहस्री संहिता** भी कहा जाता है।
- महाभारत, वाल्मीकि रामायण से चार गुना विशाल है।
- महाभारत में लेखक ने अपने युग के समस्त उल्लेखनीय विषयों को उल्लिखित किया है-**'यन्न भारते तन्न भारते।'**
- भारतवर्ष के समस्त पक्ष महाभारत में निहित हैं-

  धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ ।
  यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित् ॥
- अनेक आध्यात्मिक तथा भक्तिपूर्ण ग्रन्थ जैसे-**गीता, विष्णुसहस्रनाम, अनुगीता, गजेन्द्रमोक्ष, भीष्मस्तवराज** (पञ्चरत्न) महाभारत के ही भाग हैं।
- वैदिक धर्म और सिद्धान्तों का व्यावहारिक रूप हमें महाभारत में उपलब्ध होता है।
- महाभारत जीवित भारतीय संस्कृति का प्रकाश स्तम्भ है।

महाभारत का समय

- बालगंगाधर तिलक -ई.पू. 5000
- डॉ. वचनदेव कुमार -ई.पू. 3100 वर्ष
- विण्टरनित्स-ई.पू. चौथी शताब्दी से पहले।
- रामजी उपाध्याय ई.पू. 600 से 1200 के मध्य
- चन्द्रशेखर पाण्डेय एवं डॉ. नानूराम व्यास-320ई.पू. से 50 ई. के मध्य।

काल विषयक प्रमाण

- कश्मीरी कवि क्षेमेन्द्र ने महाभारत की कथा का संक्षिप्त रूप ग्यारहवीं शताब्दी ई. के 'भारतमञ्जरी' के रूप में प्रस्तुत किया है।
- ब्युहलर ने 'भारतमञ्जरी' को महाभारत से मिलती जुलती कथा बताया है।
- कुमारिलभट्ट (8वीं शताब्दी ई. का आरम्भ) ने महाभारत के दस पर्वों का उल्लेख किया।
- आठवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में शंकराचार्य ने महाभारत को स्त्रियों और शूद्रों की स्मृति कहा है।

- कम्बोज प्रदेश (कम्पूचिया) में प्राप्त 600 ई. के एक अभिलेख में वहाँ के एक मन्दिर के लिए रामायण और महाभारत की प्रतिलिपियों को उपहार के रूप में प्रदान किये जाने का उल्लेख मिलता है।
- जावा और बालिद्वीप में भी महाभारत छठी शताब्दी में प्रचलित था।
- 445 ई. के एक गुप्तकालीन अभिलेख में महाभारत को 'शतसाहस्री संहिता' कहा गया है।
- गुप्तकाल के दानपात्रों में भी यही उल्लेख है-
  'शतसाहस्त्रयां संहितायां वेदव्यासेनोक्तम्'
- शान्तिपर्व के सीरियन-भाषीय रूपान्तर के तीन अध्यायों के आधार पर हर्टेल ने भी इसे प्राचीन स्वीकार किया है।
- यूनानी लेखक दिया क्रिसोस्तोम (Dio chrysostom) 50 ई. में भारत आया था, उसने लिखा है कि भारत में एक लाख श्लोकों का 'इलियड' प्रचलित था।
- विन्टरनित्ज ने 'इलियड' से उसका तात्पर्य महाभारत ही माना है।
- अनेक गृह्यसूत्रों में महाभारत के पर्वों की कथाएँ तथा भारत, महाभारत का उल्लेख प्राप्त होता है।

निष्कर्ष

- महाभारत का मूल रूप तो वैदिक युग की समाप्ति 800 ई.पू. में 'जय' नाम से बन चुका था।
- 'भारत' की रचना 500 ई.पू. हुई।
- वर्तमान महाभारत-200ई. पू. से 100 ई. पू. तक बनाहोगा।

महाभारत का स्वरूप

- एक लाख से अधिक श्लोक हैं।
- 'शत-साहस्री-संहिता' भी कहते हैं।
- अट्ठारह पर्वों में विभक्त है।
- युधिष्ठिर इस ऐतिहासिक काव्य के नायक हैं।
- सबसे बड़ा पर्व शान्तिपर्व (14 हजार श्लोक)
- सबसे छोटा पर्व- महाप्रस्थानिक पर्व (1500 श्लोक) है।
- अट्ठारह पर्वों के अलावा अन्त में इसके परिशिष्ट के रूप में हरिवंश पर्व में कृष्ण जीवन चरित वर्णित है, इसे मिलाकर श्लोकों की संख्या एक लाख होती है।

महाभारत के संस्करण

1. कलकत्ता संस्करण- (1834-39 ई.)

- चार भागों में प्रकाशित ।
- बिना किसी टीका के प्रकाशित।
- हरिवंश पर्व सम्मिलित।
- बाद में 1875 ई. में अनुज मिश्र तथा नीलकण्ठ की टीका के साथ प्रकाशित हुआ।

2. बम्बई संस्करण (1862 ई.)

- नीलकण्ठी टीका के साथ प्रकाशित।
- कलकत्ता संस्करण की अपेक्षा उत्कृष्ट।
- गीताप्रेस गोरखपुर से यही संस्करण छह खण्डों में सुन्दर हिन्दी अनुवाद के साथ प्रकाशित।
- इस संस्करण के साथ हरिवंश पर्व नहीं है।
- गीताप्रेस से हरिवंश पर्व अलग ग्रन्थ के रूप में हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित है।

3. मद्रास संस्करण (1855-60 ई.)

- दाक्षिणात्य पाठ का यह संस्करण मद्रास से तेलगू लिपि में प्रकाशित है।
- हरिवंश पर्व तथा नीलकण्ठी टीका के उद्धरण भी शामिल हैं।

विशेष- भारतवर्ष के बाहर महाभारत का कोई संस्करण प्रकाशित नहीं हुआ।

- आलोचनात्मक संस्करण का सम्पादन, प्रकाशन पुणे (महाराष्ट्र) के भण्डारकर ओरियेन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट (BORI) के तत्त्वावधान में प्रकाशित है।
- यह 24 जिल्दों में प्रकाशित है।
- यह संस्कृतशोध का एक मानदण्ड माना जाता है।
- इसका प्रकाशन 1923 ई. में विराटपर्व से प्रारम्भ हुआ था।
- इसके सम्पादक प्रारम्भ में उतगीकर थे, बाद में अन्य सम्पादक हुये।
- यह प्रामाणिक एवं वैज्ञानिक संस्करण है।

महाभारत का विकास

(i) जय

- महाभारत का मूलरूप जय के नाम से प्रसिद्ध था।
  जयोनामेतिहासोऽयं श्रोतव्यो विजिगीषुणा।
  (महाभारत 1/62/20)
- महाभारत के मङ्गल श्लोक में भी स्पष्ट उल्लेख है-
  नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
  देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥
- वर्तमान महाभारत के आदिपर्व के 65वें अध्याय से जय की सामग्री का आरम्भ हुआ था।
- क्षत्रिय उत्पत्ति का वर्णन इसी में है।
- इसमें 8800 श्लोक थे।
- व्यास ने इसे वैशाम्पायन को सुनाया था।
- धर्मचर्चा मुख्य विषयवस्तु थी।

(ii) भारत

- द्वितीय अवस्था में जय का विस्तार भारत के रूप में हुआ।
- इसमें 24000 श्लोक थे।
- इसमें उपाख्यानों को सम्मिलित नहीं किया गया था।
- भारत का प्रवचन वैशम्पायन ने व्यास के आदेश पर जनमेजय के समक्ष नागयज्ञ के अवसर पर किया था।

(iii) महाभारत

- अन्तिम अवस्था में एक लाख से अधिक श्लोकों का महाभारत ग्रन्थ बना ।
- भारत को 'महाभारत' के रूप में परिणत करने का अवसर नैमिषारण्य नामक पवित्र स्थान पर होने वाला यज्ञ था।
- इस यज्ञ को शौनक ऋषि ने अनुष्ठित किया। यह द्वादशवार्षिक सत्र था।
- इसके प्रवक्ता सौति नामक ऋषि थे।
- बारह वर्षों के दीर्घकाल में सौति ने अपने श्रोताओं की जिज्ञासा शान्त की।
- भारतवर्ष का विश्वकोष 'महाभारत' है।

महत्वाद् भातरतत्वाच्च महाभरतमुच्यते।(1.1.274)

- पूना संस्करण के सम्पादक डॉ. सुक्थनकर के अनुसार इसके उपबृंहण का कार्य मुख्यतः भृगुवंशी ब्राह्मणों ने किया।
- कुलपति शौनक स्वयं भार्गव थे।
- कृष्ण की कथा से अलंकृत करने के लिए इसमें हरिवंश खिलपर्व (परिशिष्ट) के रूप में जोड़ा गया है।
- सौति ने विशालकाय महाभारत को अट्ठारह मुख्य एवं दीर्घकाय पर्वों में विभक्त किया।
- वैशम्पायन के अनुसार इसमें दो सहस्त्र अध्याय हैं।
- इसके वर्तमान संस्करण में 1925 अध्याय प्राप्त होते हैं।

महाभारत की विषय वस्तु

1. आदिपर्व

- 19 उपपर्व, 233 अध्याय, 9000 श्लोक।
- तीसरा पौष्य उपपर्व -गद्यात्मक है। जिसमें जनमेजय के सर्प यज्ञ की पृष्ठभूमि है।
- पैलोम तथा आस्तीक उपपर्व में महाभारत की भूमिका वर्णित है।
- शकुन्तला आख्यान, पुरुवंशी राजाओं का वर्णन इसी पर्व में मिलता है।
- धृतराष्ट्र का अपनी पत्नी गांधारी से 100 पुत्रों की प्राप्ति ।
- पाण्डु की पत्नियों (कुन्ती+माद्री) से नियोग द्वारा 5 पुत्रों के जन्म की घटनाएँ ।
- कौरवों पाण्डवों की शिक्षा, दीक्षा तथा विवाहादि का वर्णन।

2. सभापर्व

- 10 उपपर्व,81 अध्याय।
- पाण्डवों की दिग्विजय यात्रा,जरासन्ध वध।
- युधिष्ठिर द्वारा राजसूय यज्ञ,शिशुपाल वध।
- द्रोपदी का चीर हरण, द्यूत क्रीड़ा में युधिष्ठिर का हारना।
- 12 वर्ष का वनवास, एक वर्ष का अज्ञातवास।

3 वनपर्व

- 22 उपपर्व,315 अध्याय ।
- नल और राम के आख्यान प्राप्त होते हैं।
- सावित्री तथा सत्यवान् की कथा।
- दुःशासन द्वारा द्रौपदी का चीरहरण।
- इन्द्र द्वारा कवच- कुण्डल लेने की वर्णन
- मनोरंजन के विविध आख्यान है।
- पाण्डवों की तीर्थ यात्रा।

4. विराटपर्व

- उपपर्व- 72 अध्याय, 2700 श्लोक
- पाण्डव वेश बदलकर मत्सराज विराट के राजप्रसाद में अज्ञातरूप में रहते थे।
- द्रौपदी के प्रति आसक्त कीचक का भीम द्वारा वध।
- विराट की गायों का कौरवों द्वारा हरण कर लेने पर अर्जुन और कौरवों का भीषण युद्ध तथा कौरव पराजित।
- अन्तिम उपपर्व (वैवाहिक पर्व) में विराट की पुत्री उत्तरा का विवाह अर्जुन पुत्र अभिमन्यु के साथ हुआ।

5. उद्योगपर्व

- 10 उपपर्व, 196 अध्याय, 7100 श्लोक
- इसका मुख्य वृत्त शान्ति के लिए वार्तालाप एवं युद्ध की पूर्वपीठिका की प्रस्तुति।
- दोनों पक्ष मित्रसंग्रह में सन्नद्ध होते हैं।
- कृष्ण के पास सहायता हेतु अर्जुन और दुर्योधन जाते हैं। दुर्योधन को पूरी सेना, अर्जुन को शस्त्र न धारण करने वाली प्रतिज्ञा के साथ कृष्ण मिले।
- शान्ति प्रस्ताव जो पाण्डव केवल पाँच गाँव लेकर भी सन्तुष्ट रहने की बात करते हैं।
- कृष्ण का भी शान्ति दूत बनना व्यर्थ हो जाता है।
- अम्बोपाख्यान' के रूप में पूर्व कथा सुनाई गयी है।
- काशिराज की पुत्री अम्बा का हरण भीष्म ने किया था।

- दूसरे जन्म में अम्बा द्रुपद के घर में शिखण्डी के रूप में जन्म लेती है।
- शिखण्डी में भीष्म से बदला लेने की भावना।
- महाभारत युद्ध की प्रस्तावना।

6. भीष्म पर्व

- 5 पर्व,122 अध्याय, 6100 श्लोक
- भीष्म के सेनापतित्व में10 दिनों तक महाभारत युद्ध का वर्णन।
- सञ्जय धृतराष्ट्र को समस्त युद्ध वृत्तान्त दिव्य दृष्टि से देखकर बताता है।
- सभापर्व के समान इस पर्व के आरम्भ में भूगोल वर्णन है।
- युद्ध के आरम्भ में कृष्णार्जुन संवाद के रूप में 18 अध्यायों का अंश **श्रीमद्भगवद्गीता** है।
- युद्ध के तीसरे दिन भीष्म के पराक्रम से विवश होकर कृष्ण अपनी प्रतिज्ञा तोड़कर भीष्म के वध के लिए उद्यत होते हैं। भीष्म कृष्ण की स्तुति करते हैं।
- शिखण्डी को आगे करके अर्जुन द्वारा भीष्म को बाणों की शय्या पर सुला दिया गया।
- भीष्म को प्राण त्यागने के लिए उत्तरायण की प्रतीक्षा ।

7-द्रोण पर्व

- 8- उपपर्व, 202- अध्याय, 10000 श्लोक
- द्रोणाचार्य के सेनापतित्व में कौरवों तथा पाण्डवों के साथ 5 दिनों तक के भीषण तथा अन्यायपूर्ण युद्ध का वर्णन है।
- युद्ध में क्रमशः संशप्तकों, अभिमन्यु, जयद्रथ, घटोत्कच, तथा द्रोणाचार्य का वध होता है।
- अभिमन्यु की मृत्यु पर व्यास युधिष्ठिर के दुःख को कम करने के लिए 16 राजाओं का चरित सुनाते हैं।
- द्रोण का वध छलपूर्वक होने से उनका पुत्र अश्वत्थामा कुपित होकर 'नारायणास्त्र' का प्रयोग करता है।
- द्रोणपर्व के पाठ और श्रवण का फल भी बताया गया है।

8- कर्णपर्व

- कौरव-सेना का अध्यक्ष कर्ण बनता है जो दो दिनों (16 वें 17वें) तक युद्ध करके मारा जाता है।
- कर्ण के अहम् की तुष्टि के लिए मद्रनरेश शल्य को उसका सारथि बनाया जाता है।
- कर्ण और शल्य का परस्पर रोचक वाग्युद्ध (वाणी युद्ध) होता है।

9 शल्य पर्व

- 2 उपपर्व (ह्रद पर्व, गदापर्व),65 अध्याय,3700 श्लोक
- इसमे महाभारत के अन्तिम दिन (18 वें दिन) के युद्ध का वर्णन है।
- शल्य कौरवों का सेनापति बना था।

द्रोणे च निहते कर्णे भीष्मे च विनिपातिते।
आशा बलवती राजन् शल्यो जेष्यति पाण्डवान् ॥

- शल्य का वध ।
- दुर्योधन का गदा युद्ध और ऊरुभङ्ग इस पर्व की मुख्य घटना है।
- इस पर्व के साथ युद्ध समाप्त हो जाता है।
- शल्य पर्व के आख्यानों में तीर्थों का माहात्म्य वर्णित है।

10 - सौप्तिक पर्व

- 1-उपपर्व (ऐषीक), 18 अध्याय , 810 श्लोक
- मुख्य कथा पाण्डवों की सोई हुई सेना पर आक्रमण करके द्रौपदी के पाँचों पुत्रों के मारे जाने की है।
- यह कुकर्म -**कृपाचार्य, कृतवर्मा और अश्वत्थामा** ने किया था।
- इस समाचार से दुर्योधन की सन्तोष पद मृत्यु होती है।
- पाण्डव अश्वत्थामा को पकड़ कर उसके सिर की मणि निकाल लेते हैं।

11- स्त्रीपर्व

- 3-उपपर्व (जलप्रदानिक, स्त्रीविलाप, श्राद्ध) 27 अध्याय, 820 श्लोक
- श्राद्ध उपपर्व में कुन्ती युधिष्ठिर को कर्ण के जन्म का वृत्तान्त सुनाकर उसका भी श्राद्ध करने को कहती हैं।
- इस घटना पर युधिष्ठिर स्त्री जाति को शाप देते हैं कि अब स्त्रियों के मन में रहस्य की कोई बात छिपी नहीं रहेगी।
- गान्धारी द्वारा कृष्ण के वंश के विनाश का शाप।

12-शान्ति पर्व

- 3 उपपर्व - (राजधर्मानुशासन, आपद्धर्म, मोक्षधर्म)
- 365 अध्याय,14725 श्लोक
- यह पर्व महाभारत में बाद में जोड़ा हुआ पर्व प्रतीत होता है।
- यह पर्व जय और भारत में नहीं था।
- यह महाभारत का सबसे बड़ा पर्व है।
- इसमें धार्मिक और दार्शनिक सामग्री सर्वाधिक हैं।
- राजधर्म, वर्णधर्म, आश्रमधर्म, दण्डनीति आपद्धर्म आदि की विवेचना हुई है।

- मोक्षधर्म के अन्तर्गत सृष्टि, जीव, आत्मा, कर्मज्ञान, पुरुषार्थ आदि का प्रतिपादन। इस प्रसंग में पराशरगीता - (अध्याय-290-98) हंसगीता - (अध्याय -299) आदि महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं।
- यह पर्व अपने आप में स्वतन्त्र पुराण जैसा है ।
- शरशय्या पर ही भीष्म के द्वारा युधिष्ठिर आदि को उपदेश दिया गया है।

13 - अनुशासन पर्व

- 2-उपपर्व 168 - अध्याय
- 10000 श्लोक मुख्य रूप से धर्मशास्त्रीय उपदेश।
- विषयवस्तु की दृष्टि से शान्तिपर्व के समान।
- प्रथम उपपर्व - दान धर्म (166 अध्याय)
- द्वितीय उपपर्व -'भीष्म का स्वर्गारोहण' (2अध्याय)
- ब्राह्मणों की महत्ता तथा उन्हें दान करने का वर्णन जैसा महाभारत में है वैसा अन्यत्र कहीं नहीं है।
- इस पर्व के 17वें अध्याय में ''शिवसहस्रनामस्तोत्र'' तथा 149 वें अध्याय में - **'विष्णुसहस्रनामस्तोत्र'** वर्णित है।

14- आश्वमेधिक पर्व

- 92 अध्याय, 4250 श्लोक
- व्यास के आदेश पर युधिष्ठिर अश्वमेध-यज्ञ करते हैं।
- अर्जुन द्वारा 1 वर्ष तक यज्ञाश्व की रक्षा होती है।
- 'अनुगीता' नामक उपपर्व में दर्शनशास्त्र की सामग्री है।
- दक्षिणभारतीय संस्करण में 21 अध्यायों का एक अतिरिक्त उपपर्व-वैष्णव धर्म है।

15 - आश्रमवासिक पर्व

- 3-उपपर्व 39- अध्याय 110 - श्लोक
- मुख्यवस्तु- धृतराष्ट्र के साथ गान्धारी, कुन्ती और विदुर का वन में आश्रम बनाकर निवास करना।
- धृतराष्ट्र के15 वर्षों तक युधिष्ठिर परामर्श दाता बने रहे। उसके बाद वनवास।

16- मौसल पर्व

- 304 श्लोक
- युधिष्ठिर के सिंहासनारोहण के 36 वर्ष बाद गांधारी का शाप सत्य होता है ।
- यादव वंश के लोग परस्पर युद्ध करके समाप्त हो जाते हैं।
- कृष्ण भी एक व्याध द्वारा भ्रमवश मारे जाते हैं।
- यदुवंश के विनाशक 'मूसल' के कारण ही इस पर्व का नाम मौसल है।

17 -महाप्रस्थानिक पर्व

- 3- अध्याय, 115- श्लोक
- पाण्डवों की हिमालय यात्रा का वर्णन ।
- हिमालय में क्रमशः द्रौपदी,सहदेव आदि गिरते जाते हैं और युधिष्ठिर उनके पतन का कारण बतालाते हैं।
- युधिष्ठिर पार्थिव शरीर से ही स्वर्ग जाते हैं।

18-स्वर्गारोहण पर्व

- 5- अध्याय 220 - श्लोक
- इसमें युधिष्ठिर के स्वर्ग पहुँचने तथा देवदूत के साथ नरक में जाकर अपने अनुजों के करुण क्रन्दन सुनने का वृत्तान्त ।
- आश्वासन पाकर दिव्य लोक जाकर कृष्ण अर्जुन आदि से मिलते हैं।
- अन्तिम अध्याय में महाभारत का माहात्म्य तथा उपदेश ।
- इसे महाभारत का सार- ''भारत-सावित्री'' कहते हैं।

महाभारत की प्रमुख टीकाएँ

- कुल 36 टीकाएँ प्राप्त होती है जिनमें मुख्य टीकाएँ निम्नलिखित हैं।

टीकाकार	टीका
1. देवबोध	ज्ञानदीपिका
2. वैशम्पायन	मोक्षधाम
3. विमलबोध	विषमश्लोकी
4. नारायणसर्वज्ञ	भारतार्थप्रकाश
5. चतुर्भुज मिश्र	भारतोपायप्रकाश
6. आनन्दपूर्ण	जयकौमुदी
7. अर्जुन मिश्र	भारत संग्रहदीपिका
8. वादिराज	लक्षाभरण
9. नीलकण्ठ चतुर्धर	भारतभावदीप

महाभारत के प्रमुख उपाख्यान

1. शकुन्तलोपाख्यान - आदिपर्व, अध्याय -68-74 तक।

2. मत्स्योपाख्यान - मत्स्य द्वारा प्रलय में मनु को बचाने की कथा।

3. रामोपाख्यान - वनपर्व 274-291 अध्याय। वाल्मीकिरामायण की कथा संक्षेप में।

4. शिवि उपाख्यान - वनपर्व अध्याय 292-299 तक। शिवि द्वारा अपने प्राण देकर भी शरणागत कपोत की बाज से रक्षा ।

5. सावित्री उपाख्यान - वनपर्व में पतिव्रत धर्म की पराकाष्ठा

6. नलोपाख्यान - वनपर्व अध्याय - 53 से 79 तक। राजानल दमयन्ती की प्रणय कथा। नैषधीयचरितम् का उपजीव्य ।

7. **अम्बोपाख्यान -**उद्योगपर्व में

8. हरिवंश पुराण - यादवों की विस्तारपूर्वक कथा

इसमें तीन पर्व -

(1) हरिवंशपर्व - श्रीकृष्ण के पूर्वजों का वर्णन।

(2) विष्णुपर्व - श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन।

(3) भविष्यपर्व - कलियुग के प्रभाव का वर्णन ।

महाभारत में अङ्गीरस

- महाभारत में **शान्त रस** की प्रधानता है।
- मोक्ष नामक पुरुषार्थ का अङ्गीत्वेन वर्णन है।

महाभारत आश्रित ग्रन्थ				
महाकाव्य -				
किरातार्जुनीय	-	भारवि	-	बृहत्त्रयी
शिशुपालवध	-	माघ	-	बृहत्त्रयी
नैषधीयचरित	-	श्रीहर्ष	-	बृहत्त्रयी
भारतमञ्जरी	-	क्षेमेन्द्र		
नलाभ्युदय	-	वामनभट्ट बाण		
दूतघटोत्कच	-	भास		
मध्यमव्यायोग	-	भास		
बालचरित	-	भास		
ऊरुभङ्ग	-	भास		
पञ्चरात्र	-	भास		
दूतवाक्य	-	भास		
कर्णभार	-	भास		
अभिज्ञानशाकुन्तल	-	कालिदास		
वेणीसंहार	-	भट्टनारायण		
बालभारत	-	राजशेखर		
किरातार्जुनीयव्यायोग	-	वत्सराज		
चम्पूग्रन्थ				
नलचम्पू	-	त्रिविक्रमभट्ट		
भारतचम्पू	-	अनन्तभट्ट		
भारतचम्पू	-	राजचूड़ामणि दीक्षित		
पाञ्चालीस्वयंवरचम्पू	-	नारायण चम्पू		

महाभारत का अंश भगवद्गीता

- स्मार्त परम्परा में एकमात्र ग्रन्थ भगवद्गीता स्वीकृत है।
- यह भीष्मपर्व (अध्याय-25-42) में है।
- इसमें 18 अध्याय, 700श्लोक एवं अनुष्टुप् छन्द है।
- श्रीमद्भगवद्गीता संस्कृत भाषा की सर्वाधिक लोकप्रिय रचना है।
- दार्शनिक चिन्तन के तीन प्रस्थान हैं-
  श्रौतप्रस्थान, सौत्रप्रस्थान व स्मार्तप्रस्थान।
- गीता का अर्थ है - गायी गयी / कही गयी ।
- भीष्म पर्व के अनुसार -
  ''या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माद्विनिःसृता।''
- उपनिषद् शब्द स्त्रीलिङ्ग है अतः गीता शब्द में स्त्रीलिङ्ग का प्रयोग।
- गीता में उपनिषत्सु शब्द का प्रयोग है। यह आदरार्थ प्रयोग है ।
- गीता का रचनाकाल महाभारत का प्रारम्भिक दिवस है।
- मार्गशीर्ष शुक्ल एकादशी को गीता जयन्ती मनाई जाती है ।
- गीता पर सर्वाधिक प्राचीन भाष्य '**शाङ्करभाष्य**' है।

गीता के अध्यायों के नाम

अध्याय नाम		श्लोक संख्या
1. अर्जुन विषाद योग	-	47
2. सांख्ययोग	-	72
3. कर्मयोग	-	43
4. ज्ञानकर्मसंन्यासयोग	-	42
5. कर्मसंन्यायोग	-	29
6. आत्मसंयमयोग	-	47
7. ज्ञानविज्ञानयोग	-	30
8. अक्षरब्रह्मयोग	-	28
9. राजविद्याराजगुह्ययोग	-	34
10. विभूतियोग	-	42
11. विश्वरूपदर्शनयोग	-	55
12. भक्तियोग	-	20
13. क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोग	-	34
14. गुणत्रयविभागयोग	-	27
15. पुरुषोत्तमयोग	-	20
16. दैवासुरसम्पद्विभागयोग	-	24
17. श्रद्धात्रयविभागयोग	-	28
18. मोक्षसंन्यासयोग	-	78
कुल श्लोक	-	700

महाभारत के प्रमुख पद्य

- धर्मे चार्थे च कामे च ....।
- प्रकाशलक्षणदेवा मनुष्याः कर्मलक्षणाः
- अहो सिद्धार्थता तेषां सन्तीह पाणयः।
  न पाणिलाभादधिको लाभ कश्चन विद्यते।।
- न नः समितिं गच्छेद् यश्च नो निर्वपेत कृषिम्।
- गुह्यं ब्रह्म तदितं ब्रवीमि, न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित् ।
- यास्मिन् यथा वर्तते यो मनुष्यस्तस्मिंस्तथा वर्तिव्यं स धर्मः ।
  मायाचारो मायया वर्तितव्यः साध्वाचारः साधुना प्रत्युपेयः ।।

- वृत्तं यत्नेन संरक्षेद् वित्तमेति च याति च ।
  अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्ततस्तु हतो हतः ।।
- सुलभाः पुरुषा राजन्, सततं प्रियवादिनः ।
  अप्रियस्य च पथ्यस्य, वक्ताश्रोता च दुर्लभः ।।
- अक्रोधेन जयेत् क्रोधम् असाधुं साधुना जयेत् ।
  जयेत् कदर्यं दानेन जयेत् सत्येन चानृतम् ।।
- न च शत्रुरवज्ञेयो दुर्बलोऽपि बलीयसा ।
  अल्पोऽपीहि दहत्यग्निर्विषमल्पं हिनस्ति च ।।
- अर्थः कामश्च स्वर्गश्च, हर्षः क्रोधं श्रुतं दमः
  अर्थादेतानि सर्वाणि, प्रवर्तन्ते नराधिप।।
- धनमाहुः परं धर्मं प्रतिष्ठितम्
  जीवन्ति धनिनो लोके, मृता ये त्वधना नराः।।
- राजा प्रजानां प्रथमं शरीरं प्रजाश्च राज्ञोऽप्रतिमं शरीरम् ।
  राज्ञा विहीना न भवन्ति देशा, देशैर्विहीना न नृपा भवन्ति ।
- बन्धुरात्मात्मनस्तस्य, येनैवात्माऽऽत्मनाजितः ।
  स एव नियतो बन्धुः स एव नियतो रिपुः ।।
- रथः शरीरं पुरुषस्य राजन् आत्मा नियन्तेन्द्रियाण्यस्य चाश्वाः ।
  तैरप्रमत्तः कुशली सदश्वैर्दान्तैः सुखं याति रथीव धीरः ।।
- शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा ।
  ऊहापोहोऽर्थविज्ञानं, तत्त्वज्ञानं च धीगुणाः।
- यस्मिन् सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः
  यश्च सर्वमयो देवस्तस्मै सर्वात्मने नमः ।।
- उपदेशेन वर्तामि नानुशास्मीह कञ्चन
- यथा बीजं विना क्षेत्रमुप्तं भवति निष्फलम्।
  तथापुरुषकारेण विना दैवं न सिध्यति।।
- "अहिंसा परमो धर्मः"
- चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ।
- 'धर्म एव ततो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।
- प्रज्ञा प्रतिष्ठा भूतानां प्रज्ञा लाभः परो मतः
  प्रज्ञा वै श्रेयसी लोके प्रज्ञा स्वर्गो मतः सताम्।।

कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य

- गान्धारी किसकी माँ थी - दुर्योधन की
- सुभद्रा किसकी बहन थी - कृष्ण की
- माद्री किसी माता थी - नकुल एवं सहदेव की।
- भीष्मस्य पितृकृतं नाम किम् - देवव्रतः।
- सैवलोऽस्ति -शकुनिः।
- द्रौणिः अस्ति - अश्वत्थामा।
- दासी पुत्रः कः - विदुरः।
- वैरोचनिः कः - बलिः।
- द्रोणाचार्यस्य वधं केन अकरोत् - धृष्टद्युम्नेन।
- बृहन्नला ....आतीत्। - अर्जुनः।

प्रमुख महाकाव्य

महाकवि भारवि का परिचय

- **पिता** – (i) श्रीधर, (ii) नारायणस्वामी (अवन्तिसुन्दरीकथा के अनुसार)
- **माता** – सुशीला
- **पत्नी** – रसिकवती या रसिका
- **पुत्र** – मनोरथ
- **मूल नाम** – दामोदर
- **गोत्र** – कुशिक
- **जन्म स्थान** – (i) दक्षिण भारत में नासिक प्रदेश के **'अचलपुर'** (एलिचपुर), (ii) धारानगरी (अवन्तिसुन्दरी कथा के अनुसार)
- **समय** – छठवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध/सातवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध

भारवि की वंशपरम्परा

नारायणस्वामी (श्रीधर) – (भारवि के पिता)
↓
भारवि – (दण्डी के प्रपितामह)
↓
मनोरथ – (दण्डी के पितामह)
↓
वीरदत्त-गौरी – (दण्डी के पिता-माता)
↓
दण्डी – (भारवि के प्रपौत्र)

- **सम्प्रदाय** – शैव
- **उपाधि** – 'आतपत्र भारवि'
- **"आधत्ते कनकमयातपत्रलक्ष्मीम्" (किरात. 5.39)** इस श्लोक में **'कनकमय आतपत्र'** (सोने का छाता) की उपमा को अति सुन्दर मानकर आलोचकों ने कवि का नाम ही **'आतपत्र भारवि'** रख दिया।
- **आश्रयदाता** – 1. विष्णुवर्द्धन (पुलकेशिन द्वितीय के अनुज), 2. सिंहविष्णु (अवन्तिसुन्दरीकथा के अनुसार), 3. दुर्विनीत, 4. महेन्द्रविक्रम (सिंहविष्णु का पुत्र)
- राजा दुर्विनीत ने 'किरातार्जुनीयम्' के 15वें सर्ग पर संस्कृतटीका लिखी।
- 'भारवि' **दण्डी के प्रपितामह** हैं।
- भारवि की वाणी को **'प्रकृतिमधुरा'** कहा जाता है।
- भारवि महाकाव्यों में **'अलङ्कृतकाव्यशैली'** या **'रीतिशैली' के जन्मदाता हैं।** इनके काव्यमार्ग को **विचित्रमार्ग** कहते हैं।
- श्री एन. सी. चटर्जी भारवि को **'ट्रावनकोर' का निवासी** सिद्ध करते हैं।
- एक किंवदन्ती के अनुसार पिता द्वारा अपमानित भारवि उनके वध के लिए उद्यत हो गये, परन्तु पिता द्वारा उनके हित के लिए डाँटा गया, यह जानकर उन्हें बहुत पश्चात्ताप हुआ, और पिता ने छः माह तक ससुराल में सेवा करने का आदेश दिया।

➢ भारवि का जन्म 560 ई. के लगभग तथा रचनाकाल 580 ई. के लगभग अधिकांश आलोचकों ने माना है।
➢ भारवि '**अर्थगौरव**' के लिए प्रसिद्ध हैं।
➢ आचार्य मल्लिनाथ ने भारवि के 'किरातार्जुनीयम्' पर '**घण्टापथ**' नाम की टीका लिखी है।
➢ भारवि राजनीति के प्रकाण्ड पण्डित हैं।
➢ मल्लिनाथ, भारवि की कविता की उपमा '**नारिकेलफल**' से करते हैं– '**नारिकेलफलसम्मितं वचः**'
➢ दक्षिण के '**एहोल शिलालेख**' में भारवि का नाम उल्लिखित है।
➢ भारवि के किरातार्जुनीयम् को '**लक्ष्म्यन्त**' महाकाव्य, माघ के शिशुपालवधम् को '**श्र्यन्त**' महाकाव्य तथा श्रीहर्ष के नैषधीय चरितम् को '**आनन्दान्त**' महाकाव्य कहते हैं।

महाकवि 'भारवि' विषयक प्रशस्तियाँ

1. भारवेरर्थगौरवम्। **– उद्भट**
2. वृत्तच्छत्रस्य सा कापि वंशस्थस्य विचित्रता।
   प्रतिभा भारवेर्येन सच्छायेनाधिकीकृता।।
   – क्षेमेन्द्र - सुवृत्ततिलक
3. नारिकेलफलसम्मितं वचो भारवेः सपदि तद् विभज्यते।
   स्वादयन्तु रसगर्भनिर्भरं सारमस्य रसिका यथेप्सितम्।।
   – मल्लिनाथ
4. प्रदेशवृत्यापि महान्तमर्थं प्रदर्शयन्ती रसमादधाना।
   सा भारवेः सत्पथदीपिकेव एषा कृतिः कैरिव नोपजीव्या।।
   – कृष्णकवि
5. तादात्म्यं रसभावयोः भारविः स्पष्टमूचिवान्।।
   – शारदातनय
6. "प्रकृतिमधुरा भारविगिरः।" **– श्रीधरदास (सदुक्तिकर्णामृत)**
7. वंशस्थवृत्तेन धृतातपत्रो वृत्तेन संदर्शितराजवृत्तिः।
   अर्थप्रकर्षाहृतराजलक्ष्मीर्नृपायते भारविरात्तकीर्तिः।।
   – आचार्य कपिलदेव द्विवेदी
8. There is no doubt of the power of Bharvi in describption, his style at its best has a calm dignity which is certainly attractive, while he excels also in the observation and record of the beauties of nature and of maidens.
   हिन्दी अनुवाद – भारवि की वर्णन-शक्ति के विषय में सन्देह को अवसर नहीं है। उनकी शैली उत्कृष्टरूप में शान्त गौरवमयी है जो निश्चय ही आकर्षक है। वे प्रकृति और प्रमदाओं के सौन्दर्य, निरीक्षण और उन्हें चित्रित करने में सर्वश्रेष्ठ हैं।
   – प्रो. ए. बी. कीथ, संस्कृत साहित्य का इतिहास
9. स मेधावी कविर्विद्वान् भारविः प्रभवो गिराम्।
   अनुसाध्याकरोन्मैत्रीं नरेन्द्रे विष्णुवर्धने।।
   – ऐहोल शिलालेख - रविकीर्ति।
10. अर्थदीधितिसंवीता, सन्नीरजसुहासिनी।
    अज्ञोलूकनिरानन्दा, भा रवेरिव भारवेः।।
    – आचार्य कपिलदेव द्विवेदी

किरातार्जुनीयम्

➢ **लेखक** – भारवि
➢ **विधा** – महाकाव्य
➢ **सर्ग** – 18
➢ **प्रधानरस** – वीर
➢ **उपजीव्य** – महाभारत का वनपर्व
➢ **कथानक** – अर्जुन द्वारा भगवान् शिव की तपस्या से पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति।
➢ **प्रमुखपात्र** – अर्जुन, द्रौपदी, युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव, श्रीकृष्ण, वनेचर, सुयोधन (दुर्योधन), इन्द्र, किरातवेशधारी शिव, व्यास, यक्ष आदि
➢ भारवि का प्रामाणिक जीवनवृत्त सर्वथा अप्राप्त है, कुछ किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं।
➢ महाकवि दण्डी विरचित 'अवन्तिसुन्दरीकथा' के अनुसार भारवि का जीवनवृत्त निम्नलिखित है।
➢ भारवि चालुक्यवंशी सम्राट् पुलकेशिन द्वितीय के अनुज विष्णुवर्धन (615 ई0) के मित्र/सभापण्डित/राजकवि थे।
स मेधावी कविर्विद्वान् भारविः प्रभवो गिराम्।
अनुरुध्याकरोन्मैत्रीं नरेन्द्रे विष्णुवर्धने॥
➢ भारवि **कुशिक/कौशिक गोत्रीय** ब्राह्मण थे।
➢ दण्डी की रचना – **दशकुमारचरितम्।**
➢ भारवि का सम्बन्ध कोङ्कण के गङ्गवंशी नरेश दुर्विनीत और काञ्ची के पल्लववंशी नरेश सिंहविष्णु तथा उनके पुत्र महेन्द्रविक्रम के साथ भी था।
➢ सिंहविष्णु से मिलते समय कवि की अवस्था थी – **बीस वर्ष।**
➢ किरातार्जुनीयम् के 15वें सर्ग की संस्कृत टीका लिखी थी – **विद्वान् नरेश दुर्विनीत ने।**
➢ एक अन्य किंवदन्ती के अनुसार भारवि धारानगरी के निवासी थे।

भारवि के समय निर्धारण में प्रमुख स्रोत

➢ पुलकेशिन द्वितीय का एहोल शिलालेख।
➢ वामन और जयादित्य की काशिकावृत्ति।
➢ गुम्मरेड्डीपुर का पत्रलेख।
➢ महाकवि दण्डी की अवन्तिसुन्दरीकथा और उस पर आधारित 'अवन्तिसुन्दरीकथासार'।
➢ विष्णुवर्धन, सिंहविष्णु तथा दुर्विनीत की ऐतिहासिकता।
➢ भारवि का जन्मसमय – **560 ई0 के लगभग।**
➢ भारवि का रचनाकाल – **615 ई0 के लगभग।**
➢ भारवि का समय – **600 ई0 के आसपास (555 ई0 से 625 ई0 के मध्य) (छठी शती के उत्तरार्ध से सातवीं शती के पूर्वार्द्ध तक)**
➢ श्री एन0सी0 चटर्जी ने उन्हें **ट्रावनकोर** का निवासी बताया है।
➢ विद्वानों का मानना है कि महाकवि भारवि विष्णुवर्धन, सिंहविष्णु, महेन्द्रविक्रम एवं दुर्विनीत के आश्रय में रहने वाले एक **दाक्षिणात्य कवि** थे।

➤ महाकवि भारवि का जन्म – **नासिक के समीपवर्ती बरारप्रान्त के 'अचलपुर' (एलिचपुर) नामक ग्राम में।**
➤ भारवि **शैवदर्शन** के अनुयायी थे, उन्होंने किरातार्जुनीयम् के 18वें सर्ग में शिवस्तुति की है।
➤ भारवि किस कवि से प्रभावित थे – **कालिदास से**
➤ भारवि से कौन प्रभावित था – **महाकवि माघ**
➤ राजशेखर के अनुसार कालिदास एवं भर्तृमेण्ठ की भाँति भारवि की भी परीक्षा उज्जयिनी में ली गयी थी – **''श्रूयते चोज्जयिन्यां काव्यकारपरीक्षा''**
➤ **उत्फुल्लस्थलनलिनीवनादमुष्मात्.......कनकमयातप-त्रलक्ष्मीम् (5/39)** 'किरातार्जुनीयम्' के इस श्लोक की उपमा के कारण ही उन्हें **'आतपत्रभारवि'** की उपाधि मिली।

भारवि की रचना

➤ भारवि की रचना/कृति – **''किरातार्जुनीयमहाकाव्यम्' (एकमात्र कृति)**
➤ सर्ग – **18 (अठारह)**
➤ श्लोक – **1040 (कुछ विद्वानों के अनुसार-1030)**
➤ उपजीव्यग्रन्थ – **महाभारत का वनपर्व**
➤ नायक – **मध्यमपाण्डव अर्जुन (धीरोदात्त)**
➤ प्रतिनायक – **किरातवेशधारी शिव**
➤ नायक की प्रकृति – **धीरोदात्त**
➤ नायिका – **द्रौपदी**
➤ मुख्य/अङ्गी/प्रधानरस – **वीररस**
➤ गौण/अङ्गरस – **शृङ्गार आदि**
➤ रीति एवं गुण – **पाञ्चाली रीति एवं ओजगुण**
➤ किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग में वैदर्भी रीति
➤ अलङ्कार – **3 शब्दालङ्कार, 60 अर्थालङ्कार, 7 चित्राक्षर**
➤ भारवि की शैली – **पाण्डित्यप्रधान अलङ्कृतशैली**
➤ बृहत्त्रयी में प्रथमस्थान पर परिगणित महाकाव्य –
1. भारवि का किरातार्जुनीयम् (सर्ग 18)
2. माघ का शिशुपालवधम् (सर्ग 20)
3. श्रीहर्ष का नैषधीयचरितम् (सर्ग 22)
➤ भारवि के किरातार्जुनीयम् का प्रारम्भ – **'श्री'** – शब्द से तथा प्रत्येक सर्ग के अन्तिम श्लोक में **'लक्ष्मी'** पद का प्रयोग हुआ है।
➤ भारवि के काव्य को कहा जाता है – **''लक्ष्मीपदाङ्क''**
➤ किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग में श्लोक/पद्य हैं – **46**
➤ किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग में छन्द – **वंशस्थ** (1-44 श्लोकों तक)
➤ 45वें श्लोक में (न समयपरिरक्षणं क्षमं ते....) – **पुष्पिताग्रा छन्द**
➤ अन्तिम 46वें श्लोक में (विधिसमयनियोगाद् दीप्तिसंहारजिह्मम्) – **मालिनी छन्द**
➤ अर्थगौरव के लिए प्रसिद्ध हैं – **भारवि** (भारवेरर्थगौरवम्)
➤ नायक अर्जुन और प्रतिनायक किरात (शिव) के नाम पर महाकाव्य का नाम पड़ा – **'किरातार्जुनीयम्'**
➤ श्रीकृष्णमाचारियर ने किरातार्जुनीयम् की कितनी टीकाओं का उल्लेख किया है – **34**
➤ किरातार्जुनीयम् की सर्वाधिक प्रसिद्ध, प्रामाणिक एवं सारवती टीका का नाम – **'घण्टापथ' – मल्लिनाथ**
➤ ''घण्टापथ'' का शाब्दिक अर्थ है – **राजमार्ग**
➤ किरात की अन्य टीकाओं में सर्वाधिक लोकप्रिय टीका है – **'शब्दार्थदीपिका' – श्री चित्रभानु** (केवल प्रथम तीन सर्गों पर)
➤ किरातार्जुनीयम् के प्रथम तीन सर्गों को कहा जाता है – **'पाषाणत्रय'**
➤ भारवि के आश्रयदाता दुर्विनीत ने संस्कृत टीका लिखी – **किरातार्जुनीयम् के 15वें सर्ग पर।**
➤ 'शब्दावतार' नाम से बृहत्कथा का संस्कृत रूपान्तरण किसने किया – **दुर्विनीत ने**
➤ किरातार्जुनीयम् का 15वाँ सर्ग प्रसिद्ध है – **चित्रकाव्य के लिए**
➤ भारवि का एकाक्षर श्लोक – (केवल नकार का प्रयोग)
न नोननुन्नो नुन्नोनो नाना नानानना ननु।
नुन्नोऽनुन्नो ननुन्नेनो नानेना नुन्ननुन्ननुत्॥
(किरात0 – 15/14)
➤ अर्थगौरव का क्या अर्थ है – अल्पशब्दों में प्रभूत अर्थ का सन्निवेश अर्थात् 'गागर में सागर भरना।'
➤ **''नारिकेलफलसम्मितं वचः''** मल्लिनाथ का यह कथन किसके लिए है – भारवि के लिए।
➤ **''प्रसन्नगम्भीरपदा सरस्वती''** यह वाक्य किस ग्रन्थ से सम्बन्धित है – किरातार्जुनीयम् से
➤ **''स्फुटता न पदैरपाकृता न च न स्वीकृतमर्थगौरवम्''** यह वाक्य किस ग्रन्थ से सम्बन्धित है – किरातार्जुनीयम् (2/27)
➤ किरातार्जुनीयम् का मुख्य कथानक है – अर्जुन द्वारा किरातवेशधारी भगवान् शङ्कर से पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति।
➤ अर्जुन पाशुपत अस्त्र के लिए भगवान् शङ्कर को प्रसन्न करने के लिए हिमालय (इन्द्रकील) पर्वत की यात्रा व्यास के कहने पर करते हैं।
➤ किरातार्जुनीयम् में 'किरात' से तात्पर्य है–**किरातवेषधारी शिव**
➤ 'किरातार्जुनीयम्' का मङ्गलाचरण है – **वस्तुनिर्देशात्मक**
➤ किरातार्जुनीयम् महाकाव्य का फल है – **नायक अर्जुन को किरातवेशधारी शिव से पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति।**
➤ युधिष्ठिर बारह वर्षों के वनवास के काल में अपने अनुजों और द्रौपदी के साथ कहाँ रहते थे – **द्वैतवन में।**

किरातार्जुनीयम् का नामकरण

➤ किरातश्च अर्जुनश्च किरातार्जुनौ **(द्वन्द्वसमास)** तौ अधिकृत्य कृतं काव्यम् इति किरातार्जुनीयम्।
➤ **किरातार्जुन + 'छ'** ('अधिकृत्य कृते ग्रन्थे' के अर्थ में ''छ'' प्रत्यय)
➤ **'शिशुक्रन्दयमसभद्वन्द्वेन्द्रजननादिभ्यश्छः'** सूत्र से ''छ'' प्रत्यय।
➤ किरातार्जुन + छ (ईय) = किरातार्जुनीय। (**''आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्ययादीनाम्''** से 'छ' के स्थान पर 'ईय' आदेश हो गया)

➢ ग्रन्थवाची शब्द सदा नपुंसकलिङ्ग में होते हैं, अतः – 'किरातार्जुनीयम्' पद बना।
➢ इस प्रकार नायक अर्जुन और प्रतिनायक (शिव) के नाम पर महाकाव्य का नाम '**किरातार्जुनीयम्**' पड़ा।

किरातार्जुनीयमहाकाव्य के पात्र

➢ अर्जुन (**नायक**), द्रौपदी (**नायिका**), किरातवेशधारी शिव (**प्रतिनायक**), श्रीकृष्ण, युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव, वनेचर, दुर्योधन, कर्ण, भीष्म, परशुराम, यक्ष, द्रोण, इन्द्र, व्यास, मूक (शूकर) आदि प्रमुख पात्र हैं।

किरातार्जुनीयमहाकाव्य के टीकाकार आचार्य मल्लिनाथसूरि का जीवनचरित्र

➢ काश्यपगोत्रीय तेलगू ब्राह्मण – **मल्लिनाथ सूरि**
➢ मल्लिनाथ के पिता – **कार्दिन**
➢ मल्लिनाथ के दो पुत्र – **पेड्डुभट्ट तथा कुमारस्वामी**
➢ कुमारस्वामी की रचना– **प्रतापरुद्रयशोभूषण** (काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ)
➢ मल्लिनाथ की आनुवांशिक उपाधि – **कोलाचल**
➢ मल्लिनाथ की व्यक्तिगत उपाधि – **महामहोपाध्याय**
➢ मल्लिनाथ का समय – **14वीं शताब्दी का उत्तरार्ध**

मल्लिनाथ की सुप्रसिद्ध संस्कृत टीकायें

1. रघुवंशमहाकाव्यम् (कालिदास) – **सञ्जीवनी टीका**
2. कुमारसम्भवम् (कालिदास) – **सञ्जीवनी टीका**
3. मेघदूतम् (कालिदास) – **सञ्जीवनी टीका**
4. किरातार्जुनीयम् (भारवि) – **घण्टापथ टीका**
5. शिशुपालवधम् (माघ) – **सर्वङ्कषा टीका**
6. रावणवध (भट्टि) – **जीवातु टीका**
7. नैषधीयचरितम् (श्रीहर्ष) – **जीवातु टीका**

➢ इसके अतिरिक्त तार्किकरक्षा, नलोदयकाव्य, प्रशस्तपादभाष्य, और लघुशब्देन्दुशेखर पर भी मल्लिनाथ ने टीका लिखी है।
➢ इनका पूरा नाम– **महामहोपाध्याय कोलाचल मल्लिनाथसूरि**
➢ किरातार्जुनीयम् के दूसरे प्रसिद्ध टीकाकार– **चित्रभानु–''शब्दार्थदीपिका'' (त्रिसागरिका)** (प्रारम्भ के केवल तीन सर्गों पर)

किरातार्जुनीयम् की संक्षिप्त कथा

➢ किरातार्जुनीयम् में कौरवों पर विजय प्राप्ति के लिए अर्जुन का हिमालयपर्वत पर जाकर तपस्या करना, किरातवेशधारी शिव से युद्ध और प्रसन्न हुए भगवान् शिव से पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति का वर्णन है।
➢ **सर्ग – 1.** हस्तिनापुर भेजे गये वनेचर का द्वैतवन में आकर युधिष्ठिर से मिलना, दुर्योधन के शासन प्रबन्ध का वर्णन तथा युधिष्ठिर के लिए/द्रौपदी का उत्तेजनापूर्ण कथन।
➢ **सर्ग – 2.** युधिष्ठिर–भीम का संवाद, व्यास का आगमन।
➢ **सर्ग – 3.** युधिष्ठिर – व्यास संवाद, व्यास द्वारा अर्जुन को पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति के लिए हिमालय पर जाकर तपस्या करने का आदेश, अर्जुन का प्रस्थान।
➢ **सर्ग – 4.** शरद् ऋतु का वर्णन।
➢ **सर्ग – 5.** हिमालय पर्वत का वर्णन।
➢ **सर्ग – 6.** हिमालय पर अर्जुन की तपस्या, तपोविघ्न के लिए इन्द्र द्वारा अप्सराओं को भेजना।
➢ **सर्ग – 7.** इन्द्र द्वारा प्रेषित गन्धर्वों और अप्सराओं के आने और उनके विलासों का वर्णन
➢ **सर्ग – 8.** गन्धर्वों और अप्सराओं का उद्यानविहार और जलक्रीडा।
➢ **सर्ग – 9.** सायंकाल और चन्द्रोदयवर्णन, सुरतवर्णन तथा प्रभातवर्णन।
➢ **सर्ग – 10.** वर्षा आदि का वर्णन, अप्सराओं का चेष्टावर्णन तथा उनका प्रयत्न वैफल्य।
➢ **सर्ग – 11.** मुनिरूप में इन्द्र का आगमन, इन्द्र अर्जुन संवाद, इन्द्र का पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति के लिए अर्जुन को शिवाराधना करने का उपदेश।
➢ **सर्ग – 12.** अर्जुन की तपस्या, शूकर के रूप में मूक नामक दानव का अर्जुन वध के लिए आगमन, तथा किरातवेशधारी शिव का भी आगमन।
➢ **सर्ग – 13.** शूकररूपधारी मूकदानव पर शिव और अर्जुन के बाणों का प्रहार, उस वराह की मृत्यु, बाण के विषय में शिव के अनुचर और अर्जुन का विवाद।
➢ **सर्ग – 14.** सेना सहित शिव का आगमन और सेना के साथ अर्जुन का युद्ध।
➢ **सर्ग – 15.** चित्रयुद्ध वर्णन, (चित्रकाव्य)।
➢ **सर्ग – 16.** शिव और अर्जुन का अस्त्रयुद्ध।
➢ **सर्ग – 17.** शिव की सेना के साथ अर्जुन का युद्ध, शिव और अर्जुन का युद्ध।
➢ **सर्ग – 18.** शिव और अर्जुन का बाहुयुद्ध, शिव का वास्तविक रूप में प्रकट होना, इन्द्रादि का आगमन, अर्जुन को पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति, इन्द्रादि का अर्जुन को विविध अस्त्र देना, सफल मनोरथ अर्जुन का युधिष्ठिर के समीप पहुँचना।
➢ सम्भोग शृङ्गार का सुन्दर वर्णन है – **सर्ग 8 और 9 में।**
➢ युद्ध वर्णन में वीररस का वर्णन है – **सर्ग 13 से 17 तक।**
➢ उपमा अलङ्कार का सुन्दर प्रयोग है – **सर्ग 13 से 17 में।**
➢ प्रमुख वर्णनवैचित्र्य – सर्ग 4 में **शरद् वर्णन।**
– सर्ग 5 में **हिमालय वर्णन।**
– सर्ग 8 में **जलक्रीडा वर्णन।**
– सर्ग 9 में **सन्ध्या, चन्द्रोदय और सुरत वर्णन।**
– सर्ग 12 से 18 तक – **युद्ध वर्णन।**
➢ अर्थगौरव या अर्थगाम्भीर्य के लिए प्रशंसा की जाती है – **महाकवि भारवि की।**
➢ भारवि को कौन सा रस सर्वाधिक प्रिय है – **वीर और शृङ्गार रस**
➢ महाकाव्यों में रीतिशैली के जन्मदाता कवि हैं – **भारवि।**
➢ ग्रन्थ के आरम्भ में '**श्री**' शब्द तथा सर्गान्त श्लोकों में '**लक्ष्मी**' शब्द का प्रयोग किया गया है – **किरातार्जुनीयम् में।**

- किस कवि का काव्यसौन्दर्य 'नारिकेलफलसम्मितम्' माना गया है – **भारवि का।**
- भारवि की प्रशंसा में कही गयी सूक्तियाँ हैं –
  (1) ''भारवेरर्थगौरवम्''
  (2) ''भा रवेरिव भारवेः''
  (3) ''प्रकृतिमधुरा भारविगिरः''
  (4) ''नारिकेलफलसम्मितं वचः''
  (5) ''स्फुटता न पदैरपाकृता''
- केवल 'न' कार को लेकर सर्वप्रथम एकाक्षरी श्लोक लिखने वाले कवि हैं – **भारवि।**
- अपने काव्य में सर्वप्रथम चित्रालङ्कारों का प्रयोग करने वाले कवि हैं – **भारवि** (किरातार्जुनीयम्, सर्ग-15)
- भारवि ने विभिन्न सर्गों में 11 छन्दों का प्रयोग किया है और सर्गान्त श्लोकों में मालिनी और वसन्ततिलका प्रमुख हैं।
- भारवि द्वारा प्रयुक्त मुख्य छन्दों की संख्या है – **13**
- भारवि का अत्यन्त प्रिय छन्द है – **वंशस्थ तथा उपजाति।**
- क्षेमेन्द्र ने वंशस्थ छन्द के लिए प्रशंसा की है – **भारवि की।**
- संस्कृतसाहित्य में रीतिकाव्यपरम्परा के जन्मदाता हैं – **भारवि।**
- किरातार्जुनीयम् में दुर्योधन को किस नाम से वर्णित किया गया है – **सुयोधन।**
- 'राजनीतिपरक महाकाव्य' कहा गया है – **किरातार्जुनीयम् को**
- शिव और अर्जुन पर आधारित महाकाव्य है – **किरातार्जुनीयम्**
- किरातार्जुनीयम् में एकाक्षर श्लोकों की संख्या है – **7 (सप्त)**
- महाकवि भारवि की मित्रता थी – **चालुक्यवंशी राजा विष्णुवर्धन से**
- भारवि के तीन पुत्र थे, इनके मध्यम पुत्र मनोरथ के चार पुत्र थे, जिनमें एक पुत्र वीरदत्त था इन्हीं वीरदत्त और गौरी के पुत्र दण्डी हुए।
- महाकवि भारवि, दण्डी के प्रपितामह और दण्डी, भारवि के प्रपौत्र थे।
- भारवि **शैव** थे, जबकि **माघ वैष्णव** थे।
- दक्षिण के एहोल शिलालेख में कालिदास और भारवि का नामोल्लेख हुआ। इस शिलालेख का समय 634 ई0 है – **''कविताश्रित-कालिदास-भारवि-कीर्तिः''।**
- गुम्मरेड्डीपुर के शिलालेखों से हमें पता चलता है कि राजा दुर्विनीत ने किरातार्जुनीयम् के 15वें सर्ग पर टीका लिखी थी। दुर्विनीत का समय 580 ई0 के आसपास माना जाता है।
- भारवि के किरातार्जुनीयम् का उद्धरण जयादित्य की 'काशिकावृत्ति' में उपलब्ध होता है। मैक्समूलर 'काशिका' का समय 660 ई0 मानते हैं।
- बाणभट्ट (सप्तम शताब्दी) अपने ''हर्षचरित'' में पूर्ववर्ती सभी कवियों का उल्लेख करते हैं, किन्तु उसमें भारवि का नामोल्लेख नहीं है।
- कीथमहोदय भारवि का समय 550 ई0 मानते हैं।
- जैकोबी, मैक्डानल, बलदेव उपाध्याय, चन्द्रशेखर पाण्डेय इत्यादि विद्वानों ने भारवि का समय 600 ई0 के लगभग मानते हैं।
- शिवजी अर्जुन की तपस्या की परीक्षा के लिए 'किरात' का वेश धारण करते हैं।
- किरातार्जुनीयम् में **मूक दानव** अर्जुन को मारने के लिए मायावी वाराह का रूप धारण करता है।
- महाकाव्यकारों में **कालिदास** और **अश्वघोष** के बाद **भारवि** का नाम लिया जाता है।
- भारवि व्याकरण, वेदान्त, न्याय, धर्म, राजनीति, कामशास्त्र, पुराण, इतिहास आदि के मूर्धन्य विद्वान् थे।
- उदात्त एवं सजीव वर्णन, कमनीय कल्पनाओं, अर्थगौरव, हृदयग्राही शब्दयोजना, कोमलकान्त पदावली, हृदयस्पर्शी एवं रोचक संवाद, अलङ्कारों का चमत्कारिक प्रयोग, कलात्मक काव्यशैली, मनोहर प्रकृतिचित्रण, रसपेशलता, सजीव चरित्रचित्रण इत्यादि महनीय गुणों ने भारवि को महाकवियों में अत्यन्त उच्चस्थान पर प्रतिष्ठित किया है।
- भारवि राजनीतिशास्त्र और नीतिशास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित थे।
- किरातार्जुनीयम् के प्रथमसर्ग में वनेचर की स्वामिभक्ति, सत्यवादिता, निश्छलता, विनम्रता, साहस, स्पष्टवादिता आदि गुणों का चित्रण है।
- द्रौपदी की मानसिकपीड़ा, व्याकुलता, प्रतिकार की तीव्रभावना का वर्णन है।
- अर्जुन की वीरता, भ्रातृभक्ति, कर्तव्यनिष्ठा का वर्णन है।
- भीम की वीरता, नीतिज्ञता, असहिष्णुता का वर्णन है।
- युधिष्ठिर की नीतिज्ञता, शान्तिप्रियता, धर्मपरायणता इत्यादि का वर्णन है।
- किरातार्जुनीयम् प्रथमसर्ग के प्रारम्भ में वनेचर की उक्तियों का तथा उत्तरार्ध में द्रौपदी की उक्तियों का चित्रण है।
- सम्पूर्ण प्रथमसर्ग युधिष्ठिर को सम्बोधित करके लिखा गया है।
- भारवि का संस्कृतसाहित्य में **'अलङ्कृतकाव्यशैली'** तथा **'विचित्रमार्ग के जनक'** के रूप में विशिष्ट स्थान है।
- विचित्रमार्ग की विशेषता यह है कि इसमें कथानक बहुत कम होता है और वर्णन अधिक।
- भारवि की अलंकृतकाव्यशैली में पाण्डित्यप्रदर्शन और अलङ्कार सन्निवेश को प्रधानता दी गयी है, इसमें कलापक्ष की प्रधानता तथा भावपक्ष (हृदयपक्ष) की अप्रधानता का वर्णन है।
- कालिदास के प्रमुख छन्द 6 हैं, भारवि के 13 और माघ के 16 माने गये हैं।
- भारवि ने **वंशस्थ छन्द** का सर्वाधिक प्रयोग किया है, इसके अतिरिक्त इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, द्रुतविलम्बित, प्रमिताक्षरा, प्रहर्षिणी, स्वागता, पुष्पिताग्रा, आदि का प्रयोग मिलता है।
- भारवि **वीररस** के सिद्धहस्त कवि हैं।
- किरातार्जुनीयम् के प्रथमसर्ग में युधिष्ठिर के मुख से किसी उक्ति (कथन) को नहीं कहलाया गया है।
- महाकवि भारवि की **एकमात्र रचना 'किरातार्जुनीय'** का उपजीव्य महाभारत के वनपर्व की एक घटना है।
- किरातश्च अर्जुनश्च (द्वन्द्व) = किरातार्जुन + 'छ' प्रत्यय लगकर 'किरातार्जुनीय' शब्द बना है। ग्रन्थवाची होने पर नपुंसकलिङ्ग में 'किरातार्जुनीयम्' बना।

➢ इसमें अर्जुन का हिमालय पर्वत पर जाकर तपस्या करने व किरातवेषधारी भगवान् शिव से युद्ध करके उन्हें प्रसन्न कर **'पाशुपत अस्त्र'** प्राप्त करने की कथा है।
➢ 'किरात' में कुल **18 सर्ग और 1040 श्लोक** हैं।
➢ 'किरातार्जुनीय' में **कुल 25 छन्दों और मुख्यतः 13 छन्दों का** प्रयोग हुआ है।
➢ भारवि का **अत्यन्त प्रिय छन्द वंशस्थ** है। तत्पश्चात् उन्होंने **उपजाति** का ज्यादा प्रयोग किया है। 4 सर्गों में वंशस्थ, 3 सर्गों में उपजाति प्रयुक्त है।
➢ भारवि ने 3 शब्दालंकार, 60 अर्थालंकार और 7 चित्राक्षर अलंकारों का प्रयोग किया है। सर्वाधिक उपमा अलंकार प्रयुक्त है।
➢ भारवि ने 'किरात' के **15वें सर्ग में** युद्ध प्रसङ्ग में **चित्रालंकारों** का प्रयोग किया है।
➢ किरातार्जुनीय में **'वीर रस' मुख्य रस** है तथा 'शृंगार' गौण रस है।
➢ किरात में **'पाञ्चाली रीति'** और 'प्रसाद गुण' है, किन्तु वैदर्भीरीति का भी प्रयोग बाहुल्य है।
➢ किरात का **नायक 'अर्जुन'** (कहीं-कहीं युधिष्ठिर प्राप्त होता है), **प्रतिनायक किरातवेषधारी 'शिव'** तथा **नायिका 'द्रौपदी'** हैं।
➢ 'किरात' के 18वें सर्ग में शिव की अत्यन्त भावुक स्तुति की गई है।
➢ भारवि का प्रसिद्ध **एकाक्षर श्लोक** (न नोननुन्नो....) 15वें सर्ग में मिलता है।
➢ भारवि ने मङ्गलाचरण में **'श्री' शब्द** तथा सर्गान्त श्लोकों में **'लक्ष्मी'** शब्द का प्रयोग किया है।
➢ क्षेमेन्द्र ने भारवि के वंशस्थ वृत्त की प्रशंसा की है और वंशस्थ को राजनीतिक चर्चा के लिए सर्वाधिक उपयुक्त माना है।
➢ काव्य का आरम्भ **'द्वैतवन'** से होता है जहाँ महाराज युधिष्ठिर द्यूतक्रीड़ा में दुर्योधन से हारकर **'तेरह वर्ष'** का वनवास काट रहे होते हैं।
➢ युधिष्ठिर द्वारा नियुक्त ब्रह्मचारी वेष वाला गुप्तचर वनेचर लौटकर आता है और दुर्योधन के राज्य की शासन प्रणाली का वर्णन करता है।
➢ द्रौपदी इस समाचार से अत्यधिक क्रुद्ध हुयी और युधिष्ठिर को युद्ध के लिए प्रोत्साहित करती है।
➢ द्वितीय सर्ग में महर्षि व्यास आते हैं और अर्जुन को पाशुपत अस्त्र प्राप्त करने की सलाह देते हैं।
➢ अर्जुन तपस्या हेतु **इन्द्रकील** (हिमालय) पर जाते हैं।
➢ किरातार्जुनीय के प्रारम्भिक तीन सर्ग विशेष कठिन हैं अतः उन्हें **'पाषाण-त्रय'** के नाम से जाना जाता है।
➢ अर्जुन को **18वें सर्ग में पाशुपत अस्त्र प्राप्त** होता है।
➢ प्रथमसर्ग के अन्तिम दो श्लोकों में क्रमशः पुष्पिताग्रा और 'मालिनी' छन्दों का प्रयोग हुआ है। प्रथमसर्ग का अन्तिम श्लोक **'विधिसमयनियोगात् ....'** है।
➢ **'प्रसन्नगम्भीरपदा सरस्वती'** भारवि की भाषा तथा शैली का द्योतक महनीय मन्त्र है।
➢ भारवि के किरात के **'प्रथमसर्ग' में कुल 46 श्लोक** हैं।

किरातार्जुनीयम् (प्रथमसर्ग)

➢ 'किरातार्जुनीयम्' में **'वस्तुनिर्देशात्मक मङ्गलाचरण'** किया गया है।
➢ दुर्योधन के प्रजाविषयक व्यवहार को जानने के लिए युधिष्ठिर ने वनेचर को नियुक्त किया था।
➢ युधिष्ठिर को प्रणाम करके उसने शत्रु द्वारा जीती गयी पृथ्वी का वर्णन किया। ऐसा करते हुए किरात का मन खिन्न नहीं हुआ।
➢ शत्रुओं के नाश के लिए यत्न करने वाले युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर वह एकान्त में अपनी बात कहता है।
➢ वनेचर कहता है कि सेवकों द्वारा गुप्तचर रूपी नेत्र वाले 'स्वामी' को धोखा नहीं दिया जाना चाहिए।
➢ जो स्वामी को उचित सलाह न दे वह बुरा मित्र है और जो स्वामी हितैषी मित्र की न सुने वह बुरा स्वामी है।
➢ राजाओं का चरित्र स्वभाव से ही कठिनाई से जानने योग्य होता है। वनेचर जो कुछ जान पाया वह युधिष्ठिर का प्रभाव है।
➢ दुर्योधन अब 'जुएँ' में जीती गई पृथ्वी को 'नीति' से जीतना चाहता है।
➢ युधिष्ठिर को जीतने के लिए दुर्योधन अपने गुणों से यश का विस्तार करता है।
➢ दुर्योधन अपने छः शत्रुओं - काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य पर विजय प्राप्त कर लिया।
➢ दुर्योधन सेवकों से मित्र जैसा, मित्रों से भाइयों जैसा और भाई-बन्धुओं को शासक मानकर व्यवहार करता है।
➢ दुर्योधन का मधुर वचन दान के बिना नहीं होता, दान आदर-सत्कार को छोड़कर नहीं होता और विशेष आदर गुणों के अनुराग के बिना नहीं होता।
➢ जितेन्द्रिय दुर्योधन 'अपना कर्तव्य मानकर धर्म-विप्लव' को दण्ड से रोकता है अन्य कारण से नहीं।
➢ राजाओं के उपहारस्वरूप प्राप्त हाथियों के मदजल से दुर्योधन का आँगन गीलेपन को प्राप्त है।
➢ कुरुदेश के निवासी कृषि के लिए वर्षा जल पर निर्भर नहीं रहते। कुरुप्रदेश की कृषि अदेवमातृक है।
➢ दुर्योधन के 'कुबेर' सदृश गुणों से द्रवित पृथ्वी स्वयं धनरूपी दुग्ध देती है।
➢ दुर्योधन के धनुर्धर लोग मानरूपी धन वाले, धन से सम्मानित और युद्ध में यश पाने वाले हैं।
➢ महीपाल लोग दुर्योधन के गुणों में अनुराग के कारण उसके आदेश को 'माला' की भाँति शिरोधार्य करते हैं।
➢ दुर्योधन ने दुःशासन को 'युवराज' नियुक्त किया है।
➢ वनेचर प्रथमसर्ग के 25वें श्लोक तक का वक्ता है और उसके चले जाने पर युधिष्ठिर द्रौपदी के आवास में प्रवेश करते हैं।
➢ 'बुरी मनोव्यथाएँ' द्रौपदी को बोलने के लिए उद्यत करती हैं।
➢ द्रौपदी कहती है युधिष्ठिर ने मदस्रावी हाथी के समान पृथ्वी को माला की तरह अपने हाथ से त्याग दिया।
➢ सफल क्रोध वालों के वश में प्राणी स्वयं हो जाता है।
➢ **वृकोदर (भीम)** धूलधूसरित होकर पैदल ही पर्वतों में घूमता है।
➢ इन्द्र के समान पराक्रमी अर्जुन ने 'उत्तरकुरुदेश' को जीतकर

प्रचुर धन युधिष्ठिर को दिया था, वह अब **'वल्कल वस्त्र'** संग्रह करता है।

- नकुल और सहदेव का शरीर वन में सोने के कारण कठोर हो गया है और दोनों जुड़वे हाथियों के समान हैं।
- युधिष्ठिर कुशवाली भूमि पर सोकर शृगाली (सियारिनियों) के शब्दों से निद्रा का परित्याग करते हैं।

किरातार्जुनीयम्-सूक्तियाँ

- हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः। (1/4)
- न हि प्रियं प्रवक्तुमिच्छन्ति मृषा हितैषिणः। (1/2)
- सदानुकूलेषु हि कुर्वते रतिं नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः। (1/5)
- स किं सखा साधु न शास्ति योऽधिपं हितान्न यः संशृणुते स किं प्रभुः(1/5)
- वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः। (1/8)
- निरत्ययं साम न दानवर्जितम्। (1/12)
- नभूरि दानं विरहय्य सत्क्रियाम्। (1/12)
- गुणानुरोधेन विना न सत्क्रिया। (1/12)
- अहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता। (1/23)
- तथापि वक्तुं व्यवसाययन्ति मां, निरस्तनारीसमया दुराधयः।।(1/28)
- व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।।(1/30)
- अबन्ध्यकोपस्य विहन्तुरापदां भवन्ति वश्याः स्वयमेव देहिनः।(1/33)
- अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्विषादरः।। (1/33)
- विचित्ररूपाः खलु चित्तवृत्तयः। (1/37)
- परैरपर्य्यासितवीर्य्यसम्पदां पराभवोऽप्युत्सव एव मानिनाम्।(1/41)
- व्रजन्ति शत्रूनवधूय निःस्पृहाः शमेन सिद्धिं मुनयो न भूभृतः।(1/42)
- निराश्रया हन्त हता मनस्विता। (1/43)
- अरिषु हि विजयार्थिनः क्षितीशाः विदधति सोपधि सन्धिदूषणानि।(1/45)

महाकवि माघ का परिचय

- शिशुपालवध-नामक महाकाव्य के रचयिता महाकवि माघ हैं। इन्हें विद्वानों ने श्रेष्ठ महाकाव्य का प्रणेता माना है-

काव्येषु माघः

- भारवि के द्वारा प्रवर्तित विचित्र-मार्ग को माघ ने बहुत ऊँचाई पर पहुँचाया तथा भारवि से आगे बढ़ने का सफल प्रयास किया।
- माघ के **पितामह सुप्रभदेव** थे जो राजा वर्मलात (या श्रीवर्मल) के सर्वाधिकारी अर्थात् दीवान थे। वे पुण्यात्मा, अनासक्त तथा सात्त्विक वृत्ति के पुरुष थे-

सर्वाधिकारी सुकृताधिकारी श्रीवर्मलाख्यस्य बभूव राज्ञः।
असक्तदृष्टिर्विरजाः सदैव देवोऽपरः सुप्रभदेवनामा।।

- सुप्रभदेव के पुत्र का नाम 'दत्तक' था जो अत्यन्त उदार, क्षमाशील, कोमल स्वभाव के एवं धर्मपरायण थे।
- इन्हें लोग 'सर्वाश्रय' भी कहते थे क्योंकि सबकी सहायता के लिए वे तत्पर रहते थे।इन्हीं दत्तक के पुत्र महाकवि माघ थे।
- माघ सूर्य-पूजक थे।
- माघ की मृत्यु 'पादशोथ'-रोग से हुई।

निवासस्थान

- माघ का निवासस्थान श्रीमाल या भिन्नमाल नामक नगर में था।यह नगर अभी माउंटआबू से 40 मील पूर्व जोधपुर प्रमण्डल (राजस्थान) में अवस्थित है।यह नगर उस समय गुर्जर राज्य की राजधानी के रूप में प्रसिद्ध था
- श्रीमाल (भीनमाल) संस्कृत विद्या का महान् केन्द्र था, अनेक विद्याएँ यहाँ पढ़ायी जाती थीं।
- वर्मलात नामक राजा इसी नगर में रहते थे। माघ के पितामह उनके प्रधानमन्त्री थे। माघ का परिवार बहुत धनाढ्य था जगत्स्वामी सूर्य के मन्दिर के ये लोग उपासक थे। माघ अनेक शास्त्रों के विद्वान् थे, राजाश्रित होने के कारण अनेक शास्त्रों के अध्ययन की सुविधा इन्हें प्राप्त थी।

माघ का समय

- माघ को 675 ई. के अनन्तर माना जा सकता है। अधिकतर विद्वान् 700 ई. के आसपास ही माघ को स्वीकार करने के पक्षधर हैं।

शिशुपालवध महाकाव्य का परिचय

- यह महाकवि माघ की एकमात्र कृति 20 सर्गों के महाकाव्य के रूप में है।
- इसमें 1645 पद्य हैं, पन्द्रहवें सर्ग में 34प्रक्षिप्त श्लोक हैं जिनकी व्याख्या मल्लिनाथ ने नहीं की है। पाँच पद्य कविवंश वर्णन के हैं उन्हें मिलाकर माघ की रचना 1650 पद्यों की है।

शिशुपालवध की कथा

- **सर्ग 1**- देवर्षि नारद का द्वारका में आगमन,श्रीकृष्ण द्वारा उनका सत्कार, नारद द्वारा शिशुपाल के पूर्वजन्मों तथा उसके अत्याचारों का वर्णन, शिशुपाल को मारने के लिए प्रेरित करना।

शिशुपालवध

- **सर्ग 2**- श्रीकृष्ण, बलराम और उद्धव की मन्त्रणा,बलराम का शिशुपाल पर आक्रमण का प्रस्ताव किन्तु उद्धव का नीतिपूर्ण प्रस्ताव कि इस विषय में शीघ्रता न करके युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सेना-सहित भाग लें।
- **सर्ग 3**- द्वारका से श्रीकृष्ण का इन्द्रप्रस्थ के लिए प्रस्थान। नगरी, सेना और समुद्र का वर्णन।
- **सर्ग 4**- रैवतक पर्वत का वर्णन।
- **सर्ग 5**- रैवतक पर सैन्य-शिविर की स्थापना।
- **सर्ग 6**- छह ऋतुओं का द्रुतविलम्बित छन्द में 'यमक' का निवेश करते हुए वर्णन।
- **सर्ग 7**- वन-विहार-वर्णन
- **सर्ग 8**- जलक्रीडा-रात्रि-विहार का वर्णन।
- **सर्ग 9**- सन्ध्या, चन्द्रोदय तथा शृङ्गार-विधान का वर्णन।
- **सर्ग 10**- पान-गोष्ठी एवं रात्रि-विहार का वर्णन।
- **सर्ग 11**- प्रभात-वर्णन।

- **सर्ग 12**- श्रीकृष्ण का पुनः प्रस्थान तथा यमुना नदी का वर्णन।
- **सर्ग 13**- श्रीकृष्ण और पाण्डवों का मिलना, नगर-प्रवेश तथा दर्शक नारियों की चेष्टाओं का, अश्वघोष तथा कालिदास से प्रतिस्पर्धा करते हुये वर्णन।
- **सर्ग 14**- युधिष्ठिर द्वारा राजसूय यज्ञ का प्रस्ताव, श्रीकृष्ण की पूजा तथा भीष्म-द्वारा उनकी स्तुति।
- **सर्ग 15**- शिशुपाल का कोप और उनके पक्ष के राजाओं का युद्ध के लिए सन्नद्ध होना।
- **सर्ग 16**- शिशुपाल के दूत का श्रीकृष्ण के समक्ष उभयार्थक शब्दों का प्रयोग, सात्यकि का उत्तर,दूत का पुनः शिशुपाल के पराक्रम का वर्णन करना।
- **सर्ग 17**- श्रीकृष्ण के पक्ष के राजाओं का कोप, सेना की प्रस्तुति तथा प्रस्थान।
- **सर्ग 18**- सेनाओं के घोर युद्ध का वर्णन
- **सर्ग 19**- चित्रालङ्कार से पूर्ण पद्यों के द्वारा व्यूह-रचना एवं विचित्र युद्ध का वर्णन।
- **सर्ग 20** -श्रीकृष्ण और शिशुपाल का शस्त्र-युद्ध, दिव्यास्त्र– युद्ध तथा वाग्युद्ध, शिशुपाल के शब्दों से कुपित कृष्ण द्वारा सुदर्शनचक्र से शिशुपाल का शिरश्छेदन , शिशुपाल के तेज का विजयी कृष्ण में प्रवेश।

शिशुपालवध के महत्त्वपूर्ण बिन्दु

- यह कथानक महाभारत के सभापर्व (अध्याय 35-43) से लिया गया है, जिसमें युधिष्ठिर के यज्ञ में शिशुपाल के मारे जाने की कथा है।
- श्रीमद्भागवत पुराण के दशम स्कन्ध (अध्याय 71-75) में भी शिशुपाल की कथा प्रायः वैसी ही है, जैसी इस महाकाव्य में वर्णित है इसलिए बहुत से विद्वान् भागवतपुराण को ही इस महाकाव्य का उपजीव्य (स्रोत) बताते हैं।
- विद्वानों के बीच एक लोकोक्ति है- **काव्येषु माघः कवि-कालिदासः।** अर्थात् कवि की दृष्टि से कालिदास श्रेष्ठ हैं किन्तु काव्य (महाकाव्य) के लेखन में माघ उत्कृष्ट हैं
- अलङ्कारवादी महाकवियों में भी माघ अग्रणी हैं क्योंकि प्रौढ़ पाण्डित्य के साथ कथानक को विचित्र मार्ग पर ले जाने की क्षमता इनमें सर्वाधिक है।
- कृष्ण के द्वारा शिशुपाल के मारे जाने का कथानक इतिहास-प्रसिद्ध है, यह कथा महाभारत और भागवतपुराण पर आश्रित है।
- इसके नायक कृष्ण हैं जो यदुपति तथा विष्णु के अवतार (जगन्निवासः) हैं।
- महाकाव्य का **प्रधानरस वीर** है, अन्य रसों में शृंगार,हास्य, अद्भुत, भयानक इत्यादि का स्वाभाविक रूप से निवेश हुआ है।
- इसके सर्ग छन्दों के नियम का पालन करते हैं पूरा सर्ग एक छन्द में हो और सर्गान्त में एक दो पद्य दूसरे छन्दों में हों।
- प्रथम सर्ग में वंशस्थ,द्वितीय सर्ग में अनुष्टुप्, तृतीय सर्ग में उपजाति छन्द है।
- पंचम सर्ग में वसन्ततिलका है तो षष्ठसर्ग द्रुतविलम्बित छन्द का है, सबके अन्त में छन्द परिवर्तित होते रहें हैं।
- चतुर्थ सर्ग में अनेक छन्दों का प्रयोग है।
- माघ ने शिशुपालवध के 19वें सर्ग में एकाक्षर,द्व्यक्षर, सर्वतोभद्र, मुरजबन्ध, प्रतिलोमयमक (33-34), गोमूत्रिकाबन्ध, समुद्गयमक (58), अर्धप्रतिलोम-यमक (88) तथा चक्रबन्ध (120) जैसा श्रमसाध्य चित्रकाव्यों का प्रयोग किया है।
- युद्ध का वर्णन माघ ने कई सर्गों में किया है। 19वाँ सर्ग तो चित्रकाव्य के रूप में विचित्र युद्ध का भ्रम देता ही है 20वें सर्ग में दोनों पक्षों के नेताओं द्वारा विविध दिव्यास्त्रों का प्रयोग होता है। शिशुपाल के अस्त्रों को कृष्ण काटते जाते हैं।
- षष्ठसर्ग का षड्ऋतुवर्णन तथा एकादश सर्ग का प्रभातवर्णन अधिक आवर्जक है।
- माघ के पाण्डित्य और कवित्व के विषय में कई प्रशस्तियाँ विख्यात हैं। इनके शब्द भाण्डागार के विषय में कहा गया है-**नवसर्गगते माघे नव शब्दो न जायते (विद्यते)** अर्थात् माघ काव्य में नौ सर्ग समाप्त कर लेने पर संस्कृत में कोई नया शब्द जानने को रह ही नहीं जाता।
- माघ ने धातुरूपों के प्रयोग स्वाभाविक रूप से किये हैं। जैसे- अचूचुरत् (1/16), विरेजिरे (1/21), अभ्युपेयुषी (1/24), न्यधायिषाताम् (1/13), अपूपुजत् (1/14), निवेशयामासिथ (1/34), उपाजिहीथाः (1/37), अकारि तथा अशिश्रियत् (1/46) , भूतकाल में समुच्चयार्थक लोट् लकार का प्रयोग (1/51) अनुचकम्पिरे (1/61), दुःखाकरोति (2/11) इत्यादि।
- माघ की एक अन्य प्रशस्ति है- **माघे मेघे गतं वयः।** अर्थात् शिशुपाल महाकाव्य के अध्ययन में और मेघदूत का आनन्द लेने में सारी आयु बीत गयी।
- **माघे सन्ति त्रयो गुणाः-** माघ-विषयक प्रशस्तियों में यह सर्वाधिक प्रसिद्ध है। इसमें एकसाथ कालिदास,भारवि और दण्डी (या श्रीहर्ष) के साथ माघ की महत्ता का निरूपण किया गया है।
- **उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।**
  दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः॥
  अर्थात् महाकवि कालिदास की विशिष्टता उपमा के कारण है तो माघ में **तीनों गुणों** का समन्वित प्रयोग प्रमुख वैशिष्ट्य है।
- माघ की सामान्य उपमाओं में यह बहुत प्रसिद्ध है,जिसके कारण उन्हें '**घण्टामाघ**' का विरुद प्राप्त हुआ है-
  उदयति विततोर्ध्व - रश्मि - रज्जा
  वहिमरुचौ हिमधाम्नि याति चास्तम्।
  वहति गिरिरयं विलम्बि-घण्टा-
  द्वय-परिवारित-वारणेन्द्र-लीलाम्॥ (4/20)
- राजनीति की तुलना शब्दविद्या से की गयी है- **शब्दविद्येव नो भाति राजनीतिरपस्पशा (2/112)**

प्रथम सर्ग के प्रमुख कथन एवं सूक्तियां

कवि द्वारका के राजप्रासाद में स्थित श्रीकृष्ण द्वारा नारदमुनि को देखने की बात कर रहे हैं-

श्रियः पतिः श्रीमति शासितुं जगज्जगन्निवासो वसुदेवसद्मनि।
वसन् ददर्शावतरन्तमम्बराद्धिरण्यगर्भाङ्गभुवं मुनिं हरिः॥1॥

अनुवाद- लक्ष्मी के पति, संसार के आधारस्वरूप, दुष्टदमन तथा शिष्टरक्षण से संसार का शासन करने के लिए शोभायुक्त वसुदेव-भवन में श्रीकृष्ण रूप से निवास करते हुए हरि ने आकाशमार्ग से उतरते हुए ब्रह्मा के मानसपुत्र महर्षि नारद को देखा।।1।।

रणद्भिराघट्टनया नभस्वतः,
पृथग्विभिन्नश्रुतिमण्डलैः स्वरैः।
स्फुटीभवद्ग्रामविशेषमूर्च्छनाम-
वेक्षमाणं महतीं मुहुर्मुहुः॥10॥

वायु के आघात से स्पष्ट ध्वनि करते हुए एवं व्यस्थित स्वर समूह वाले

इन सप्तस्वरों से स्पष्ट होने वाले ग्राम तथा मूर्छनावाली महती नामक वीणा को बार-बार देखते हुए (उन्हें नारद इस प्रकार समझा)।।10।।

भगवान् श्रीकृष्ण का कथन

गृहानुपैतुं प्रणयादभीप्सवो
भवन्ति नापुण्यकृतां मनीषिणः॥14॥

क्योंकि, महात्मा लोग पुण्य न करने वाले के घर प्रेम से जाने के लिए इच्छुक नहीं होते।।14।।

शरीरभाजां भवदीयदर्शनं
व्यनक्ति कालत्रितयेऽपि योग्यताम्॥26॥

आने वाले शुभ का हेतु है; पहले आचरण किये हुए शुभ कर्मों से सम्पादित है।।26।।

सदोपयोगेऽपि गुरुस्त्वमक्षयो
निधिः श्रुतीनां धनसम्पदामिव॥28॥

आप धन-सम्पत्ति के समान वेदों के सदा उपयोग किये जाने पर भी क्षीण न होने वाले महान् निधि बनाये गये हैं।।28।।

गिरोऽथवा श्रेयसि केन तृप्यते॥29॥

अथवा (क्योंकि) कल्याण के विषय में कौन तृप्त होता है। अर्थात् कोई तृप्त नहीं होता? नारद जी का कथन

बहिर्विकारं प्रकृतेः पृथग्विदुः
पुरातनं त्वां पुरुषं पुराविदः॥33॥

उदासीन, महत् आदि प्रकृतिविकारों से पृथक् रहने वाला पुराण पुरुषपदवाच्य विज्ञानधनरूप में- जानते हैं।।33।।

हृतेऽपि भारे महतस्त्रपाभरा-
दुवाह दुःखेन भृशानतं शिरः॥57॥

यमराज का भैंसा (वाहन) बोझ दूर किये जाने पर भी महा लज्जाभार से अत्यन्त अवनत मस्तक को दुःख से वहन करता रहा।।57।।

सदाभिमानैकधना हि मानिनः॥67॥

क्योंकि मानी जन सदा मान मात्र धनवाले होते हैं।।67।।

रसंशयं सम्प्रति तेजसा रविः॥70॥

वह किरणों से पर्वतों को आक्रान्त करने वाला मानो सूर्य है।।70।।

सतीव योषित् प्रकृतिः सुनिश्चला
पुमांसमभ्येति भवान्तरेष्वपि॥72॥

पतिव्रता स्त्री के समान अतिस्थिर प्रकृति दूसरे जन्मों में भी स्वपुरुष को प्राप्त करती है।।72।।

विपादनीया हि सतामसाधवः॥73॥

क्योंकि दुराचार के कारण परिपक्व आपत्तिवाले दुष्टजन सज्जनों द्वारा मारे जाने योग्य होते हैं।।73।।

ओमित्युक्तवतोऽथशार्ङ्गिण इति व्याहृत्य वाचं नभ-
स्तस्मिन्नुत्पतिते पुरः सुरमुनाविन्दोः श्रियं बिभ्रति।
शत्रूणामनिशं विनाशपिशुनः क्रुद्धस्य चैद्यं प्रति
व्योम्नीव भ्रुकुटिच्छलेन वदने केतुश्चकारास्पदम्॥75॥

अनुवाद- उन महर्षि नारद के इस प्रकार (इन्द्र का सन्देश) वचन कहकर आकाश में प्रस्थित होने पर तथा सामने चन्द्रमा की शोभा को धारण करने पर 'आपका वचन मुझे स्वीकार है' ऐसा कहने वाले तथा शिशुपाल के प्रति क्रुद्ध हुए श्रीकृष्ण के आकाश के समान मुख पर, सदैव शत्रु-विनाश के सूचक केतु ने (उत्पाद-विशेष ने) भुकुटि के बहाने से स्थान ग्रहण किया।।75।।

गृहानुपैतुं प्रणयादभीप्सवो भवन्ति नापुण्यकृतां मनीषिणः महात्मा लोग अपुण्यात्माओं के घर प्रेम से आना नहीं चाहते। **(1/14)**

श्रेयसि केन तृप्यते (1/29) मंगलमय कार्य में कौन तृप्ति हो सकता है?

सदाभिमानैकधना हि मानिनः (1/67) मानी (मनस्वी) लोगों का एक मात्र धन स्वाभिमान ही होता है

शिशुपालवध की टीकायें

- शिशुपालवध पर अनेक टीकाएँ हैं जिनमें वल्लभदेव कृत' सन्देहविषौषधि', मल्लिनाथ-कृत 'सर्वाङ्कषा', भरतमल्लिक-कृत 'सुबोधा' तथा दिनकरमिश्र -कृत 'सुबोधिनी' मुख्य हैं हिन्दी साहित्य सम्मलेन, प्रयाग से राम प्रताप त्रिपाठी का एवं चौखम्बा विद्याभवन से हरगोविन्द शास्त्री का हिन्दी-अनुवाद पूरे ग्रन्थ पर प्रकाशित है।

नैषधीयचरितम्

महाकवि श्रीहर्ष का परिचय

- **नाम** - श्रीहर्ष
- **पिता** - श्रीहीर
- **माता** - मामल्लदेवी
- **श्रीहर्षं कविराजराजिमुकुटालङ्कारहीरः सुतम्**
  श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियं मामल्लदेवी च यम्। (1/145)
- **समय-** 12वीं शताब्दी के मध्य से 12वीं शताब्दी के उत्तरार्ध के बीच (सम्भावित)
  आश्रयदाता- जयचन्द्र
  उपाधि-1.नवभारती 2. कविपण्डित (राजा गोविन्दचन्द्र द्वारा)
  उपासक- शिव, विष्णु, सरस्वती
  प्रिय छन्द- उपजाति
- श्रीहीर काशी के राजा गहरवारवंशी विजयचन्द्र की राज्यसभा के प्रधान पण्डित थे।
- श्रीहीर को विजयचन्द्र की राज्यसभा में मिथिला के प्रसिद्ध पण्डित श्री उदयनाचार्य ने शास्त्रार्थ में पराजित किया था।
- श्रीहीर पुत्र श्रीहर्ष ने उदयनाचार्य को पराजित करने का वचन अपने पिता (श्रीहीर) को उनके मरते समय दिया था।
- श्रीहर्ष ने 'चिन्तामणि' मन्त्र का एक वर्ष पर्यन्त जप किया था।
- त्रिपुरादेवी के वरदान से श्रीहर्ष **अत्यन्त** उत्कृष्ट विद्वान् हो गये।
- जयचन्द्र की प्रार्थना स्वीकार कर श्रीहर्ष ने नैषधीयचरितम् महाकाव्य की रचना की।
- नैषधीयचरित महाकाव्य की दोष रहित प्रामाणिकता के लिए श्रीहर्ष कश्मीर गये थे।
- महाकवि श्रीहर्ष नदी तट पर बैठकर रुद्र मन्त्र का जप किये थे।
- हरिहर कवि को भी श्रीहर्ष का वंशज माना जाता है।
- श्रीहर्ष के निवास स्थान के सम्बन्ध में विद्वान् मतैक्य नहीं हैं।
- कुछ विद्वान् कन्नौज का, कुछ वाराणसी का, कुछ बंगाल का एवं अन्य कश्मीर का निवासी बतलाते हैं। **''ताम्बूलद्वयमासनं च लभते यः कान्यकुब्जेश्वरात्।''** (नैषध. 22/15)
- कविवर राजशेखर सूरि ने महाकवि श्रीहर्ष की सौ से अधिक रचनायें होने का उल्लेख किया है -
  ''खण्डनादिग्रन्थान् परश्शतान् जग्रन्थ।''
- नैषधीयचरित में नैषध के अतिरिक्त 8 ग्रन्थों का उल्लेख किया गया है।
- महाकवि श्रीहर्ष ने अपने नैषधीयचरित में अपनी रचनाओं के साथ-साथ प्रत्येक सर्गान्त श्लोक में अपने माता व पिता का भी उल्लेख किया है। श्रीहर्षं कविराजराजिमुकुटालङ्कारहीरः सुतम् श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियं मामल्लदेवी च यम्।।
- श्रीहर्ष के शताधिक ग्रन्थों के नाम का कोई प्रबल प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं।
- ये 10 रचनायें अविवादित व प्रमाणित हैं-
  1. नैषधीयचरित 2. स्थैर्यविचारप्रकरण 3. विजय-प्रशस्ति 4. खण्डनखण्डखाद्य 5. गौडोर्वीशकुल-प्रशस्ति 6. अर्णववर्णन 7. छिन्दप्रशस्ति 8. शिवशक्तिसिद्ध 9. नवसाहसाङ्कचरितचम्पू 10. ईश्वराभिसन्धि
- इनमें से नैषधीयचरित व खण्डनखण्डखाद्य के अलावा शेष 8 ग्रन्थ अनुपलब्ध हैं।
- श्रीहर्ष की काव्य शैली प्रसादगुणों से युक्त वैदर्भी शैली है।
- गुण में प्रमुखतः माधुर्य और ओज की प्रचुरता है।
- महाकाव्य में एक स्थल पर श्लेष अलंकार का इतना सुन्दर चित्रण किया है कि, अन्य कवि इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं।
  देवः पतिर्विदुषि नैषधराजगत्या
  निर्णीयते न किमु न व्रियते भवत्या।
  नायं नलः खलु तवातिमहानलाभो
  यद्येनमुज्झसि वरः कतरः पुनस्ते ॥ (नैषध 13/33)
- हर्ष ने उपर्युक्त श्लोक के पाँच अर्थ बताये हैं-
  1. इन्द्रपक्ष में 2. अग्नि पक्ष में 3. यम पक्ष में 4. वरुण पक्ष में 5. नल पक्ष में
- नैषधीयचरित में 9 निधियों का उल्लेख है-
  महापद्म, पद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील व खर्व

नैषधीयचरितम् का परिचय

- **लेखक** - श्रीहर्ष
- **काव्यविधा** - महाकाव्य
- **कुल सर्ग** - 22 (बाईस)
- **नायक** - नल (धीरोदात्त)
- **नायिका** - दमयन्ती
- **प्रतिनायक -** 4 नल के रूप में क्रमशः अग्नि, वरुण, इन्द्र व यम।
- **अङ्गीरस/प्रधानरस** -शृङ्गार
- **अन्य रस-**वीर, हास्य, करुण, रौद्र एवम् अद्भुत आदि।
- **गुण -** माधुर्य, ओज, प्रसाद (प्रायः सभी काव्य गुण पाये जाते हैं)
- **रीति** - मुख्यतः वैदर्भी
- **अलङ्कार** - अनुप्रास (मुख्य रूप से)
- **अन्य अलङ्कार** - अतिशयोक्ति आदि।
- **छन्द -** कुल उन्नीस 19 छन्दों का प्रयोग है जिनमें उपजाति, वसन्ततिलका, अनुष्टुप्, वंशस्थ तथा शिखरिणी प्रुमख हैं। (उपजाति सर्वाधिक 7 सर्गों में है।)

प्रमुख उक्तियाँ

- **''काव्यं नवं नैषधम्''** - चाण्डु पण्डित
- **''नैषधं विद्वदौषधम्''**
- **'उदिते नैषधे काव्ये क्व माघः क्व च भारविः'**
- **नैषधे पदलालित्यम्** अथवा
- **''उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।**
  नैषधे पदलालित्यम् माघे सन्ति त्रयो गुणाः।।''

- **उपजीव्य** - महाभारत (वनपर्व)
- **अन्य स्रोत** - शतपथ-ब्राह्मण, कथासारित्सागर, कुमारपालप्रतिबोध, लिङ्गपुराण, वायुपुराण, हरिवंश-पुराण, ब्रह्माण्ड-पुराण आदि।
- **कुल श्लोक -** 2804 (लगभग)
- **नोट** - प्रत्येक सर्ग के अन्त के परिचयात्मक सभी श्लोक शार्दूलविक्रीडित छन्द में हैं।
- बृहत्त्रयी का **सबसे बड़ा ग्रन्थ** नैषधीयचरितम् ही है।
- महाभारत के वनपर्व में **'नलोपाख्यान'** उनतीस अध्यायों (58-78) में है।
- नलोपाख्यान की सरल छोटी कथा 'नैषधीयचरित' में बहुत थोड़ी ही ली गयी है।
- नलोपाख्यान एक उपदेश कथा है, जबकि नैषधीयचरितम् एक सरस एवं मनोरम महाकाव्य है।
- नलोपाख्यान के आदि के छः सर्गों की घटना को श्रीहर्ष ने विशाल 22 (बाईस) सर्गों में नैषधीयचरितम् नामक ग्रन्थ में उल्लिखित किया है।

नैषधीयचरितम् का मङ्गलाचरण

निपीय यस्य क्षितिरक्षिणः कथां तथाद्रियन्ते न बुधाः सुधामपि।
नलः सितच्छत्रितकीर्ति मण्डलः स राशिरासीन्महसां महोज्ज्वलः॥

भावार्थ- अपने विस्तृत कीर्तिमण्डल को श्वेत छत्र के समान धारण करने वाले तेजपुञ्ज स्वरूप पृथ्वी रक्षक जिस सूर्य की कथा का पूर्णतया पान करके देवगण जैसे चन्द्रमा का आदर नहीं करते वैसे ही वह राजा नल थे। जिनकी कथा का पान करके विद्वान् लोग अमृत का भी वैसा आदर नहीं करते थे। अर्थात् राजा नल का भी कीर्तिमण्डल सूर्य के समान था। जो उत्सवों में देदीप्यमान होता था। (1/1)

- 'नैषधीयचरितम्' का प्रारम्भ श्रीहर्ष ने नल रूपी कथा वस्तु को संकेत करते हुए **वस्तुनिर्देशात्मक मङ्गलाचरण** से किया है। मङ्गलाचरण **वंशस्थ छन्द** में है। वस्तुतः प्रथम सर्ग के एक से लेकर **एक सौ बयालिस** (1-142) श्लोकों तक वंशस्थ छन्द का ही प्रयोग किया है। (जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ) सम्पूर्ण मङ्गलाचरण के चरण में संसृष्टि अलंकार है।

नैषधीयचरितम् की टीका एवं टीकाकार

टीका	टीकाकार
नैषधीयप्रकाश टीका	नारायण
नैषधदीपिका	चाण्डुपण्डित (प्राचीन टीकाकार)
साहित्यविद्याधरी	विद्याधर
दीपिका	नरहरि
तिलक	चारित्रवर्धन
जीवातु	मल्लिनाथ
सुखावबोध	जिनराज

अन्य टीकाकार - आनन्दराजानक, ईशानदेव, उदयनाचार्य, गोपीनाथ, भगीरथ, आदि।

नैषधीयचरित की सर्गवार कथा

प्रथम सर्ग - इस सर्ग में निषध देशाधिपति महाराज नल के शौर्य, गुण, प्रताप एवम् उत्कर्ष का वर्णन किया गया है।

- राजा नल का विदर्भनरेश भीम की पुत्री दमयन्ती के प्रति कामार्त होना एवं उपवन में जाना इसी सर्ग में है।
- उपवन में राजा, हंस पक्षी को पकड़ते हैं और उसकी करुण वाणी सुनकर उसे छोड़ देते हैं।

द्वितीय सर्ग -

- हंस के हर्षोल्लास से यह सर्ग आरम्भ होता है।
- हंस अपने परिवार से मिलकर पुनः कृतज्ञता प्रकट करने नल के पास उपवन में जाता है।
- राजा नल, हंस से दमयन्ती के पास कुण्डिनपुर जाने के लिए आग्रह करते हैं।
- हंस कुण्डिनपुर पहुँचकर उपवन में सखियों के साथ विहार कर रही दमयन्ती के पास रुक जाता है।

तृतीय सर्ग -

- दमयन्ती, हंस को पकड़ना चाहती है और इसी प्रयास में वह हंस के पीछे-पीछे सघन वन में पहुँच जाती है।
- वहाँ एकान्त पाकर हंस राजा नल के अलौकिक गुणों का एवम् अनुपम सौन्दर्य का वर्णन करता है।
- दमयन्ती, राजा नल के प्रति अपनी आसक्ति प्रकाशित करती हैं।
- हंस पुनः राजा नल के पास लौट आता है और सफलता की सूचना देता है।

चतुर्थ सर्ग -इसमें दमयन्ती की वियोगावस्था का वर्णन है।

- दमयन्ती, राजा नल से मिलने की इच्छा प्रकट करती हैं और विकल होने लगती हैं।
- विदर्भ नरेश भीमसेन अपनी पुत्री दमयन्ती की यह विचित्र दशा देखकर स्वयंवर का निश्चय करते हैं।

पञ्चम सर्ग -

- पञ्चम सर्ग का प्रारम्भ देवलोक में महर्षि नारद द्वारा इन्द्र की सभा में दमयन्ती की विलक्षण सुन्दरता का वर्णन करते हुए होता है।
- इन्द्र, वरुण, अग्नि, एवं यम देवताओं के साथ पृथ्वीलोक में प्रस्थान करते हैं।
- मार्ग में जाते हुए नल का अनुपमेय सौन्दर्य देखकर देवताओं को ईर्ष्या होती है।
- देवता, राजा नल को दमयन्ती के पास जाने के लिए कहते हैं एवं दमयन्ती, 'इन्द्र, वरुण, अग्नि व यम' में से किसी को वरण करें ऐसा दमयन्ती से कहने की याचना करते हैं।
- राजा नल ऐसा करने के लिए तैयार हो जाते हैं और इन्द्र द्वारा इन्हें अदृश्य होने की शक्ति प्रदान हो जाती है।

षष्ठ सर्ग -
- राजा नल अदृश्य रूप में दमयन्ती के राजप्रासाद में पहुँचते हैं।
- देवों की दूतियाँ नल के पहुँचने के पहले से ही किसी एक देवता को वरण करने का आग्रह कर रही थीं
- दमयन्ती उन्हें मना कर देती है। यह देखकर नल अत्यधिक प्रसन्न होते हैं।

सप्तम सर्ग -
- राजा नल दमयन्ती के सौन्दर्य का अवलोकन एवं स्वयं को प्रकट कर देने का भी निश्चय कर लेते हैं।
- इस सर्ग में दमयन्ती के नखशिख का स्वरूप भी वर्णित है।

अष्टम सर्ग -
- राजा नल अपने स्वरूप को प्रकट कर, स्वयं को देवदूत बताकर, देवताओं में से किसी एक देवता का वरण करने को कहते हैं।

नवम सर्ग -
- इस सर्ग में नल एवं दमयन्ती में परस्पर वार्तालाप होता है।
- दमयन्ती राजा नल का ही वरण करने को कहती हैं।
- नल, दमयन्ती को उसकी स्वयंवर सभा में आने की स्वीकृति देकर वापस लौट आते हैं।

दशम सर्ग -
- स्वयंवर के कार्यक्रम से यह सर्ग प्रारम्भ होता है
- चारों दिशाओं से आये राजाओं से पृथ्वी के ठसाठस भर जाने का वर्णन है।
- इन्द्रादि चारों देवता भी नल रूप में स्वयंवर में उपस्थित होते हैं।
- विष्णु, देव, अप्सरायें आदि भी स्वयंवर में दर्शनार्थ होते हैं।
- विष्णु राजाओं के वर्णन के लिए सरस्वती को भेजते हैं।

एकादश सर्ग -
- सरस्वती द्वारा राजाओं के वर्णन से यह सर्ग प्रारम्भ होता है।
- नल के प्रति आसक्ति से दमयन्ती स्वयंवर सभा में बैठे सभी राजाओं को क्रमशः छोड़ते हुए आगे बढ़ती जाती हैं।

द्वादश सर्ग -
- इस सर्ग में भी अन्यान्य अवशिष्ट राजाओं के स्वयंवर में सम्मिलित होकर दमयन्ती द्वारा उपेक्षित होने का वर्णन है।
- सरस्वती विभिन्न देशों के नरेशों का एक-एक करके वर्णन करने के उपरान्त अन्त में नल के समीप पहुँचती है।
- दमयन्ती पाँच राजा को नल के समान देखकर आश्चर्य-चकित हो जाती है।

त्रयोदश सर्ग -
- राजा नल के वेश में विद्यमान पाँचों नलों का श्लेष शब्दों का प्रयोग करके वर्णन सरस्वती द्वारा किया जाता है और दमयन्ती आश्चर्य एवं संशय में पड़ जाती हैं।
- दमयन्ती देवताओं और राजा नल में अन्तर न कर सकने के कारण क्षुब्ध एवं दुःखी हो जाती है।

चतुर्दश सर्ग -
- दमयन्ती, देवताओं का मानसिक पूजन करती हैं जिससे देवता प्रसन्न होकर श्लेष शब्दों को समझने की शक्ति प्रदान करते हैं।
- दमयन्ती अपने विवेक से राजा नल को पुष्प माला पहनाकर वरण कर लेती हैं।
- तदुपरान्त सरस्वती व सभी देवता आशीर्वाद देते हैं।

पञ्चदश सर्ग -
- स्वयंवर में दमयन्ती द्वारा नल का वरण करने के उपरान्त भीमसेन विवाह की तैयारी में लग जाते हैं और नल को आमन्त्रित करते हैं।

षोडश सर्ग -
- राजा भीम बारात का पर्याप्त स्वागत सत्कार करते हैं।
- राजा नल वहाँ छः दिन निवास करके पुनः अपनी राजधानी की ओर प्रस्थान करते हैं।
- राजधानी में नल का जनता द्वारा स्वागत किया जाता है।

सप्तदश सर्ग -
- स्वर्ग को प्रस्थान करते हुए देवताओं की कलि/कल्कि से भेंट हो जाती है।
- कलि/कल्कि देवताओं से बतलाता है कि वह दमयन्ती के स्वयंवर में जा रहा है।
- कलि को देवता बताते हैं कि दमयन्ती, नल को वरण कर चुकी है तो वह राजा नल को राज्यच्युत होने और दमयन्ती से वियुक्त होने का शाप दे देता है।
- द्वापर के साथ कलि निषध देश में गया और उपवन में **बिभीतक** वृक्ष का आश्रय लेकर कई वर्षों तक दमयन्ती तथा नल में दोषान्वेषण किया किन्तु कोई दोष नहीं पाया।

अष्टादश सर्ग -
- यह सर्ग प्रमोदोद्यान के वर्णन से प्रारम्भ होता है।
- कामशास्त्र के मर्मज्ञ नल, एवं नवोढ़ा दमयन्ती की काम क्रीड़ा का वर्णन है।

एकोनविंश सर्ग -
- उषा काल से दूरारूढ़ सूर्य का क्रमिक वर्णन है।
- दमयन्ती द्वारा बन्दीगण को उपहार दिया जाता है।
- तदनन्तर आकाशगंगा में स्नान कर लौटे हुए नल, दमयन्ती के पास आते हैं।

विंश सर्ग -
- नल राजभवन में प्रवेश करते हैं, जहाँ दमयन्ती द्वारा उनका स्वागत होता है।
- दमयन्ती को स्वर्ण कमल देकर, प्रातः कालीन कृत्य के लिए उससे आज्ञा माँगते हैं।
- दमयन्ती व्यथित एवं रुष्ट होकर अपनी सखी के घर चली जाती है।
- दमयन्ती के लौटने पर नल उसकी सखी 'कला' की सहायता से उसका ध्यान भंग करना चाहते हैं और उससे विविध प्रकार के सम्भोगों का स्मरण दिलाते हैं।
- मध्याह्न की सूचना से नल स्नानादि के लिए उठ जाते हैं।

एकविंश सर्ग -
- यह सर्ग नल के चारुचरित वर्णन से प्रारम्भ होता है।

➢ अर्थ एवं मोक्ष पुरुषार्थों का विस्तृत चित्रण हुआ है।
➢ चकवी के विरह को दूर करने के लिए सूर्य से प्रार्थना करने के बहाने सन्ध्योपासन के लिए नल नदी तट पर चले जाते हैं।

द्वाविंश सर्ग -

➢ इसके उपरान्त ग्रन्थ की प्रशस्ति तथा संक्षिप्त परिचय के साथ इस महाकाव्य का उपसंहार होता है।

नैषधीयचरितमहाकाव्यम्

प्रथमः सर्गः

निपीय यस्य क्षितिरक्षिणः कथां
तथाद्रियन्ते न बुधास्सुधामपि।
नलस्सितच्छत्रितकीर्तिमण्डलः
स राशिरासीन्महसां महोज्ज्वलः॥1॥

हिन्दी-अनुवाद- क्षितिरक्षिणः = पृथ्वीपालक, **यस्य** = जिस राजा नल की, **कथाम्** = कथा को [अर्थात् जीवनवृत्त को], **निपीय** = भली-भाँति आस्वादनकर, **बुधाः** = उस राजा नल से अथवा उसके जीवनवृत्त से भली-भाँति परिचित विद्वज्जन अथवा देवगण, **सुधामपि** = अमृत का भी, **तथा** = उतना [जितना कि इस राजा नल की कथा का], **न आद्रियन्ते** = आदर नहीं करते हैं [अर्थात् राजा नल की कथा का अमृत से भी अधिक आदर करते हैं।]। **सितच्छत्रितकीर्तिमण्डलः** = अपने यशःसमूह को श्वेतच्छत्र बनाये हुये, **महसां राशिः इव** = तेज समूह की राशि अर्थात् सूर्य के सदृश, **महोज्ज्वलः** = उत्सवों से देदीप्यमान अथवा महान् तेजस्वी, **स नलः** = वह राजा नल, **आसीत्** = था।

चतुर्दशत्वं कृतवान् कुतः स्वयं
न वेद्मि विद्यासु चतुर्दशस्वयम्॥4॥

[प्रत्येक विद्या को] **चतस्रः** = चार प्रकार की, **दशाः** = अवस्थायें, **प्रणयन्** = करते हुये, **स्वयम्** = अपने आप ही, **चतुर्दशत्वम्** = चतुर्दशता को, **कुतः** = कहाँ से अथवा कैसे, **कृतवान्** = कर दिया, **इति** = यह, **न वेद्मि** = [मैं] नहीं जानता हूँ।

प्रतीपभूपालमृगीदृशां दृशः॥11॥

प्रतीपभूपालमृगीदृशाम् = शत्रु राजाओं की मृगी सदृश नेत्रों वाली सुन्दरियों [उनकी पत्नियों] के, **दृशः** = नेत्रों को, न तत्यजुः = नहीं छोड़ा। **नूनम्** = (मैं ऐसा) मानता हूँ। तात्पर्य यह है कि राजा नल द्वारा जिनके पतियों का हनन किया जा चुका था। ऐसे शत्रुराजाओं की स्त्रियाँ निरन्तर रुदन किया करती थीं।

त्यजन्त्यसूञ्शर्म च मानिनो वरं त्यजन्ति न त्वेकमयाचितव्रतम्॥50॥

मानी पुरुष प्राण एवं सुख के त्याग की अपेक्षा न माँगने सम्बन्धी नियम को न त्यागना ही अधिक श्रेष्ठ समझा करते हैं। तात्पर्य यह है कि वे प्राणों तथा अपने सुखों का उत्सर्ग सरलतापूर्वक कर सकते हैं किन्तु किसी से याचना न करने सम्बन्धी नियम को कभी भी छोड़ना पसन्द नहीं करते हैं।

क्व भोगमाप्नोति न भाग्यभाग्जनः?॥

क्व = कहाँ, **भोगम्** = सुख अथवा सुख सम्बन्धी साधनों से प्राप्त किये जाने वाले भोग को, **न आप्नोति** = नहीं प्राप्त कर लिया करता है? अर्थात् भाग्यशाली पुरुष सभी स्थानों पर आवश्यक भोगों की प्राप्ति कर ही लिया करते हैं।

नृपः पतङ्गं समधत्त पाणिना॥124॥

हिन्दी अनुवाद- अयं नृपः = इस राजा नल ने, **स्वयम्** = अपने आप ही, **कपटेन** = छल से, **बलिध्वंसिविडम्बिनीम्** = राजा बलि के दर्प को नाश करने वाले अथवा राजा बलि का ध्वंस करने वाले वामनावतार विष्णु की मूर्ति का अनुकरण करने वाले, **वामनीम्** = छोटे से, **मूर्तिम्** = स्वरूप को, **विधाय** = बनाकर, **मौनिना** = शब्द रहित- चुपचाप, **चरणेन** = (दबे) पैर से, **उपेत्तपार्श्वः** = पास जाकर, **पाणिना** = (अपने) हाथ से, **पतङ्गम्** = पक्षी (हंस) को, **समधत्त** = पकड़ लिया।

धिगस्तु तृष्णातरलं भवन्मनः समीक्ष्य पक्षान्मम हेमजन्मनः।

हिन्दी अनुवाद- मम = मेरे, **हेमजन्मनः** = स्वर्ण से उत्पन्न, **पक्षान्** = पंखों को, **समीक्ष्य** = देखकर, **तृष्णातरलम्** = लोभ से चंचल, **भवन्मनः** = आपके मन को, **धिक् अस्तु** = धिक्कार है।

फलेन मूलेन च वारिभूरुहां मुनेरिवेत्थं मम यस्य वृत्तयः।

यस्य मम = जिस मेरी, मुनेः **इव** = मुनि के समान, **वारिभूरुहाम्** = कमलों के [मुनि पक्ष में- जल में उत्पन्न होने वाले कमल आदि तथा पृथ्वी पर उत्पन्न होने वाले आम्र आदि वृक्षों के], **फलेन मूलेन च** = फल तथा मूल (मृणाल, कन्द आदि) से, **इत्थम्** = इस प्रकार, **वृत्तयः** = जीविका होती है।

तस्मिन् अपि = उसको भी, **दण्डधारिणा** = दण्ड धारण करने वाले, **त्वया पत्या** = तुम्हारे जैसे स्वामी से, **अद्य** = इस समय, **धरणी** = पृथ्वी, **कथं न** = क्यों नहीं, **ह्रणीयते** = लज्जित होती है?

मदेकपुत्रा जननी जरातुरा नवप्रसूतिर्वरटा तपस्विनी।
गतिस्तयोरेष जनस्तमर्दयन्नहो विधे! त्वां करुणा रुणद्धि नो॥135॥

हिन्दी-अनुवाद- अहो! = हाय, **जननी** = [मेरी] माता, **मदेकपुत्रा** = मैं ही हूँ एकमात्र पुत्र जिसका ऐसी है [तथा], **जरातुराः** = वृद्धावस्था से पीड़ित है। **तपस्विनी** = पतिव्रता अथवा दीन अथवा बेचारी, **वरटा** = मेरी पत्नी, **नवप्रसूतिः** = नव प्रसववाली [अर्थात् उसके शीघ्र ही बच्चा होने वाला है]। (**अथवा-वरटा** = मेरी पत्नी, **नवप्रसूतिः** = शीघ्र ही सन्तान उत्पन्न करने वाली है अतएव **तपस्विनी** = शोचनीय है)। एषजनः

= यह व्यक्ति अर्थात् मैं ही, **तयोर्गतिः** = उन दोनों [माता और पत्नी] का सहारा हूँ [उन दोनों की जीवन-रक्षा के निमित्त मैं ही एकमात्र सहारा हूँ], **तम्** = [ऐसे] उस (मुझ) को, **अर्दयन्** = सताते हुये- पीड़ित करते हुये, **हे विधे!** = हे विधाता! **त्वाम्** = आपको, **करुणा** = दया, **न रुणद्धि** = [क्यों] नहीं रोकती है।

नैषधीयचरित की प्रमुख सूक्तियाँ

1. अदृष्टमप्यर्थमदृष्टवभवात्करोति सुप्तिर्जनदर्शनातिथिम्
भावार्थ- चित्रदर्शन के बाद दमयन्ती के द्वारा नल को स्वप्न में देखे जाने का वर्णन किया गया है- **(1/39)**
''कभी प्रत्यक्ष दर्शन न किये गये पदार्थ को भी स्वप्न मनुष्यों की दृष्टि का अतिथि बना देता है अर्थात् दिखा देता है।''

2. त्यजन्त्यसञ्शर्म च मानिनो वरं त्यजन्ति न त्वेकमयाचितव्रतम्।
भावार्थ- यह सूक्ति राजा नल के विषय में कही गयी है कि ''स्वाभिमानी लोग प्राण और सुख भले ही त्याग देते हैं किन्तु माँगते नहीं हैं। यह उनका व्रत होता है।'' **(1/50)**

3. स्मरः स रत्यामनिरुद्धमेव यत्सृजत्ययं सर्गनिसर्ग ईदृशः।
भावार्थ- यह सूक्ति राजा नल के विषय में कही गयी है कि- ''प्रकृति का स्वभाव ही ऐसा है कि अनुराग होने पर कामदेव चञ्चलता को जन्म देता है।'' **(1/54)**

4. क्व भोगमाप्नोति न भाग्यभाग्जनः (1/102)
भावार्थ- नल के लिए (कामपीड़ित होने पर), वन में भी तरंगों के वादन, कोयलों तथा भौरों के संगीत एवं मयूर के नृत्य आदि सुख के सभी साधन (संगीत, नृत्य, वाद्य आदि), उपलब्ध हैं। ''क्योंकि भाग्यशाली पुरुष को भोग कहाँ नहीं प्राप्त होता है?''

5. विगर्हितं धर्मधनैर्निबर्हणं विशिष्य विश्वासजुषां द्विषामपि।
भावार्थ- हंस, राजा नल की निन्दा करते हुए कहता है कि - हे राजन! मेरा वध करने से आपको प्राणिवध के साथ विश्वास - घात का भी पाप लगेगा ''क्योंकि विश्वास युक्त शत्रुओं का भी वध धर्माचार्यों के द्वारा विशेष रूप से निन्दनीय कहा गया है। **(1/131)**

6. नृपः पतङ्गं समधत्त पाणिना ।
भावार्थ- राजा नल ने स्वयं कपट से नारायण की तरह अपने शरीर को छोटा करके शब्द रहित चरण से हंस के पास जाकर हंस (पक्षी) को हाथ से पकड़ लिया।

7. सरोरूहं तस्य दृशैव तर्जितम्, जिताः स्मितेनैव विधोरपि श्रियः।
''कुतः परं भव्यमहो महोयसी, तदाननस्योपमितौ दरिद्रता॥''

भावार्थ- नल के नेत्र के द्वारा कमल और मुस्कुराहट के द्वारा चन्द्रमा की शोभा जीत ली गई है। ''नल से अधिक सुन्दर वस्तु क्या हो सकती है, आश्चर्य है कि नल के मुख की उपमा में बहुत दरिद्रता हो गई है' **(1/24)**

रघुवंशम् का परिचय

- **रचयिता-** महाकवि कालिदास
- **नायक-** दिलीप, रघु, अज, दशरथ, रामादि अनेक रघुवंशी राजागण (सभीनायक धीरोदात्त प्रकृति के) मुख्यरूप से 'राम' धीरोदात्त नायक।
- **काव्यविधा-** 'महाकाव्य'
- **रचनाकाल-** ई. पू. प्रथम शताब्दी से चतुर्थ शताब्दी के मध्य (विद्वानों में मतभेद)
- **सर्ग-** 19 सर्ग

सर्ग क्र.	सर्गों के नाम	श्लोक संख्या
01.	वशिष्ठ आश्रम अभिगमन	95
02.	नन्दिनी वरदान	75
03.	रघुराज्याभिषेक	70
04.	रघुदिग्विजय	88
05.	स्वयंवर-अभिगमन	76
06.	स्वयंवर-वर्णन	86
07.	अज-पाणिग्रहण	71
08.	अजविलाप	95
09.	मृगयावर्णन	82
10.	रामावतार	86
11.	सीता-विवाहवर्णन	93
12.	रावण-वध	104
13.	दण्डका-प्रत्यागमन	79
14.	सीता-परित्याग	87
15.	श्रीराम-स्वर्गारोहण	103
16.	कुमुद्वती-परिणय	88
17.	अतिथि-वर्णन	81
18.	वंशानुक्रम	53
19.	अग्निवर्ण शृङ्गार	57
कुल सर्ग - 19		**कुल श्लोक -1569**

- सर्वाधिक श्लोकों वाला सर्ग - 12वाँ, श्लोक = 104
- न्यूनतम श्लोकों वाला सर्ग - 18वाँ, श्लोक = 53

रस

- रघुवंश वीररस प्रधान काव्य है।
- वीररस के चार भेद- 1. धर्मवीर 2. युद्धवीर 3. दानवीर 4. दयावीर
- रघुवंश में चारों वीर रसों का वर्णन है।
- रघुवंश के अन्तिम सर्ग में मुक्तरूप से शृङ्गार का वर्णन।
- 'करुणरस' के उद्भावन में रघुवंश का 'अजविलाप' अत्यन्त द्रावक है।
- 'वीररस' के प्रयोग में कालिदास पौराणिक 'अनुष्टुप् छन्द' का प्रयोग करते हैं। (रघु की दिग्विजय, राम-रावण युद्ध)
- कालिदास का प्रिय रस **शृङ्गार** है।

अलंकार-योजना

- रघुवंश में शब्दालंकारों में अनुप्रास का सर्वाधिक प्रयोग।
- यमक का सामान्य प्रयोग।
- अर्थालंकारों में सर्वाधिक उपमा का प्रयोग।
- उत्प्रेक्षा, दृष्टान्त, स्वभावोक्ति, निदर्शना, अर्थान्तरन्यास आदि अलंकारों का सन्निवेश।

शैली

- वैदर्भी रीति का प्रयोग।
- रघुवंश में आकर्षक चरित्र-चित्रण विशद एवं रुचिर वर्णन, प्रौढ़प्रतिभा, सुन्दर रसव्यञ्जना, सरल अलंकृत शैली का मणिकाञ्चन संयोग।

कथानक का मूल स्रोत

- रघुवंश का मूलस्रोत- मुख्यतः वाल्मीकि रामायण
- अनुश्रुतियों एवं पौराणिक तथा अन्य स्रोत- पद्मपुराण, वायु पुराण, विष्णुपुराण
- रघुवंश में रघुवंशीय राजाओं की वंशावली वाल्मीकि रामायण से भिन्न है।

प्रमुख वर्णन

- रघुवंश के 19 सर्गों में दिलीप से लेकर अग्निवर्ण तक रघुवंश के 29 राजाओं का वर्णन। मनु और इक्ष्वाकु सहित कुल 31 राजाओं का वर्णन।
- प्रथम दो सर्ग में दिलीप का वर्णन।
- तीसरे, चौथे और पाँचवें के आधे भाग में रघु का वर्णन।
- पाँचवें के बचे हुए आधे भाग तथा छठें, सातवें और आठवें सर्ग में अज का वर्णन।
- नवम सर्ग में दशरथ का वर्णन।
- दशम से पन्द्रहवें सर्ग तक रामचरित वर्णित है।
- सोलहवें सर्ग में कुश तथा सत्रहवें में कुश पुत्र अतिथि का वर्णन है।
- अठारहवें में निषध तथा नल एवं नभ आदि 21 राजाओं का वर्णन।
- उन्नीसवें सर्ग में अतिविलासी राजा अग्निवर्ण के दुःखद अवसान के साथ ग्रन्थ समाप्त होता है।

रघुवंश में वर्णित राजाओं का क्रम

दिलीप → रघु → अज → दशरथ

दशरथ: राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न

राम: कुश, लव

अतिथि → निषध → नल → नभ →

पुण्डरीक → क्षेमधन्वा → देवानीक

देवानीक: पुत्री, अहीनगु (अहीनय)

पारियात्र → शील

→ उन्नाभ → शङ्खण → व्युषिताश्व → विश्वसह →

हिरण्यनाभ → कौशल्य (सोमसुत) → पुत्र → पौष्य →

ध्रुवसन्धि → सुदर्शन → अग्निवर्ण

(अन्तिम रघुवंशीय राजा जहाँ तक रघुवंश में वर्णन प्राप्त होता है)
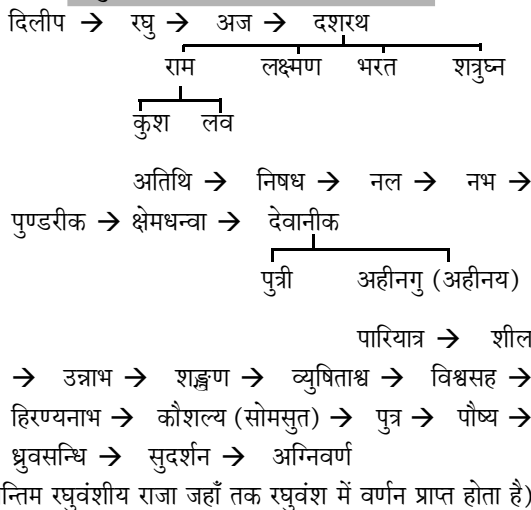
प्रमुख चरित्र

राजा दिलीप-

- रघुवंश महाकाव्य के प्रथम उन्नायक के रूप में वर्णित हैं।
- वैवश्वत मनु के शुद्ध वंश से अधिक श्रेष्ठतर चरित्र वाला घोषित किया गया है।
- वायु भी दिलीप के शासन के अनुसार अनुगमन करता था-

यस्मिन् महीं शासति वाणिनीनां
निद्रां विहारार्धपथे गतानाम्।
वातोऽपि नास्त्रंसयदंशुकानि
को लम्बयेदाहरणाय हस्तम्॥ (रघु. 6/75)

राजा रघु

- रघु के व्यक्तित्त्व की महत्ता इसी से द्योतित होती है क्योंकि उन्हीं के नाम पर सूर्यवंश का नाम रघुवंश पड़ा।
- रघु का चरित्र रघुवंशियों का आदर्श है।
- रघु को रघुवंशम् का केन्द्रीय नायक माना जा सकता है।
- रघु का प्रताप और सूर्य का तेज दोनों एक समय में ही सारी दिशाओं में व्याप्त हो गये-

'प्रतापस्तस्य भानोश्च युगपद्व्यानशे दिशः।' (रघु. 04/15)

राजा अज

- अज के चरित्र में शील और शौर्य की शृङ्गारिक पीठिका प्रदर्शित है।
- रघुवंश महाकाव्य के **'धीरललित'** नायक हैं।
- चक्रवर्ती सम्राट् रघु के प्रतापी पुत्र।
- रानी इन्दुमती के प्रेमी पति।

राजा दशरथ

- दशरथ के व्यक्तित्त्व का विकास वाल्मीकि रामायण के आधार पर वर्णित है।
- दशरथ दिग्विजयी सम्राट् रघु के नाती हैं।
- राजा अज के प्रतापी पुत्र हैं।
- दशरथ मानो पृथ्वी पर अवतीर्ण इन्द्र ही हुए थे-

उपगतो विनिनीषुरिव
प्रजा हरिहयोऽरिहयोगविचक्षणः॥ (रघु. 09/18)

राजा राम

- महाकवि कालिदास राम को विष्णु का अवतार मानते हैं।
- वस्तुतः रघुवंश के वास्तविक नायक राम ही हैं।
- महाकवि ने राम का अपनी काव्य साधना द्वारा सर्वोत्तम चरित्रांकन किया है।
- सर्वाधिक सर्गों में राम का चरित्र दर्शाया गया है।
- रघु और राम के महान् चरित्र का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए महाकवि ने रघु को महाकाव्य का प्रधान नायक माना है तभी तो महाकाव्य का नाम रघुवंश पड़ा।
- अन्य आचार्यों ने राम को ही इस महाकाव्य का नायक माना है और कहा कि रघु से लेकर राम तक जो कथा है वह राम कथा को विस्तार देने के लिए है।
- राम राजा बनने की बात सुनकर रोने लगते हैं और वनगमन की आज्ञा पाकर प्रसन्न होते हैं-

पित्रा दत्तां रुदन् रामः प्राङ्महीं प्रत्यपद्यत।
पश्चाद्वनाय गच्छेति तदाज्ञां मुदितोऽग्रहीत्॥
(रघु. 12/07)

शत्रुघ्न

उपनायक

- अयोध्या नरेश दशरथ के और रानी सुमित्रा के सबसे छोटे पुत्र।
- लवणासुर नामक राक्षस से पीड़ितों की रक्षा करने के लिये वर्णित।
- शत्रुघ्न ने यमुना तट पर मथुरा नगरी बसायी थी।

कुश

- श्रीरामचन्द्र एवं सीता के ज्येष्ठ पुत्र, लव के बड़े भाई।
- राम के बाद शासनारूढ़ होते हैं।
- नागराज की पुत्री कुमुद्वती से विवाह।
- कुशावती नगरी के संस्थापक।
- प्रथम बार रामायण का गान करने वाले कुश एवं लव

अतिथि

- कुशपुत्र अतिथि शूरवीर एवं जितेन्द्रिय राजा हैं।
- राम के पौत्र तथा कुश एवं कुमुद्वती के पुत्र।

अग्निवर्ण

- रघुवंशी राजा सुदर्शन का पुत्र।
- अग्निवर्ण रघुवंश का विलासी नायक है।
- महाराज सुदर्शन ने सब शत्रुओं को जीत कर पृथ्वी को निष्कंटक बनाकर अग्निवर्ण को राजा बनाया।
- वह गवाक्षों पर पैर लटका कर दर्शन देता था ऐसा वर्णन है।
- रघु के प्रतापी वंश के अन्तोन्मुख होने का कारण।

रघुवंशम् की नारी पात्र

रानी सुदक्षिणा

- मगधराज पुत्री सुदक्षिणा राजा दिलीप की उदारचारिता, शीलवती, रूपवती पत्नी हैं।
  'तयोर्जगृहतुः पादान् राजा राज्ञी च मागधी।' (रघु. 01/57)

इन्दुमती

- कवि ने इन्दुमती को आदर्श गृहिणी कहा है-
  गृहिणी सचिवः सखी मिथः
  प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ।
  करुणाविमुखेन मृत्युना
  हरता त्वां वद किं न मे हृतम्॥ (रघु. 08/67)
- सम्राट् रघु की पुत्रवधू एवं अज की प्रिया पत्नी।

सीता

- रघुवंश में सीता का जीवन राम के लिए समर्पित है।
- राम के साथ रमण करती हुई सीता राजलक्ष्मी के समान प्रतीत होती थी-
  उपस्थितश्चारु वपुस्तदीयम्
  कृत्वोपभोगोत्सुकयेव लक्ष्म्या। (रघु. 14/24)
- मिथिला नरेश जनक की पुत्री, अयोध्या नरेश दशरथ की पुत्र वधू।

कैकेयी

- राजा दशरथ की प्रिय पत्नी।
- कवि ने उन्हे अतिक्रोधशीला चण्डी की उपाधि से विभूषित किया।
- दशरथ से वरदान के रूप में राम के लिए 14 वर्ष का वनवास एवं भरत के लिए राजगद्दी माँगा।

महर्षियों का चरित्र

- **महर्षि वशिष्ठ-** ब्रह्मतेज एवं ब्रह्मज्ञान की साक्षात् मूर्ति हैं।
  पुरुषायुषजीविन्यो निरातङ्का निरीतयः।
  यन्मदीयाः प्रजास्तस्य हेतुस्त्वद्ब्रह्मवर्चसम्॥ (रघु. 01/63)
- **महर्षि कौत्स-** चौदह विद्याओं के अध्येता महर्षि वरतन्तु के शिष्य कौत्स गुरु आज्ञा का पालन करते हुए 14 करोड़ मुद्रा दक्षिणा स्वरूप लेने रघु के पास गये।

प्रतिनायक का चरित्र

इन्द्र

- प्रतिनायक के रूप में चित्रण।
- इन्द्र की पत्नी का नाम-''शची''।
- पुत्र का नाम-''जयन्त''।
- स्वर्ग का शासक, और देवेन्द्र नाम वाला।
- सारथी का नाम-''मातलि''
  मातलिस्तस्य माहेन्द्रम् -----। (रघु. 12/86)
- रथ में एक हजार घोड़े।
- इनके घोड़े का रंग हरे तथा पीले भी कहीं-कहीं उल्लेख मिलता है।
- हाथी का नाम-''ऐरावत''
- शस्त्र का नाम-''वज्र'
- 100 अश्वमेध यज्ञ करने के कारण-''शतक्रतु''

रावण

- रावण इस महाकाव्य का प्रतिनायक है।
- लंका का अधिपति तथा पुलस्त्य मुनि का नाती।
- इन्द्र और रावण ऐसे प्रतिनायक का कवि ने पूर्ण विकास नहीं दिखाया।

लवणासुर

- शत्रुघ्न का प्रतिद्वन्द्वी
- कुम्भीनसी का पुत्र।
- मधूपन्न नामक लवण नगरी का राजा।
- बहुत अत्याचारी राक्षस
- लवणासुर भी महाकाव्य का प्रतिनायक माना जा सकता है।

पशु चरित्र

नन्दिनी

- कामधेनु की पुत्री नन्दिनी का जीवन्त चित्रण रघुवंश के द्वितीय सर्ग में
- महर्षि वशिष्ठ की दुग्धशीला होमधेनु। (हवन धेनु)
- रंग नवीन पल्लव तथा संध्या के समान श्वेत युक्त लाल

'तदन्तरे सा विरराज धेनुः
दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या॥' (रघु. 02/20)

सिंह/कुम्भोदर

- रघुवंश महाकाव्य का दूसरा मानवेतर पात्र।
- शंकर के गण निकुम्भ का मित्र।
- इसका नाम कुम्भोदर है।
  'कुम्भोदरं नाम निकुम्भमित्रम्।' (रघु. 02/35)
- भगवान् शंकर का अनुचर-
  'अवेहि मां किङ्करमष्टमूर्तेः---।' (रघु. 02/35)

अन्य पात्र

कुमुदनाग

- अस्त्र ज्ञाता की उपाधि से विभूषित।
- अपनी बहन कुमुद्वती का विवाह कुश से कराता है।

गन्धर्वराज

- स्वयंवर के लिए विदर्भ नगरी जाते समय नर्मदा के तट पर सेना सहित पड़ाव डाल देता है।
- प्रिय दर्शन नामक गन्धर्वराज का पुत्र प्रियंवद नामक गन्धर्व राजकुमार।
- मतङ्ग ऋषि के श्राप से हाथी का शरीर धारण किया था।

मतङ्गशापादवलेपमूलादवाप्तवानस्मि मतङ्गजत्वम्।
अवेहि गन्धर्वपतेस्तनूजं प्रियंवदं मां प्रियदर्शनस्य॥
(रघु. 05/53)

रघुवंश के प्रमुख संवाद

- दिलीप-वशिष्ठ-संवाद - प्रथमसर्ग
- दिलीप-सिंह-संवाद - द्वितीय सर्ग
- इन्द्र-रघु संवाद - तृतीय सर्ग
- कौत्स-रघु संवाद - पञ्चम सर्ग
- राम-परशुराम-संवाद - एकादश सर्ग
- सीता-लक्ष्मण संवाद - चतुर्दश सर्ग
- कुश-नायिका रूप अयोध्या - षोडश सर्ग (स्वप्न संवाद)

सर्गानुसार वर्णन

मङ्गलाचरण

वागार्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वती परमेश्वरौ॥ (रघु. 01/01)

- रघुवंश महाकाव्य का शुभारम्भ पार्वती और शिव के नमस्कारात्मक मङ्गलाचरण से हुआ है।
- ग्रन्थारम्भ में कवि ने मङ्गलाचरण के माध्यम से शब्दार्थरूप शिव और पार्वती की वन्दना की है।
- वाक् और अर्थ के प्रतीक स्वयं पार्वती एवं शङ्कर हैं, क्योंकि वे जगत् के माता-पिता हैं।
- 'व' शब्द अमरत्व का द्योतक है।
- मगण के दोनों अक्षर की देवता पृथ्वी हैं जो रचयिता को अक्षय कीर्ति प्रदान करती है।
- अनुष्टुप् छन्द है।
- वाक् = वाणी
- अर्थ = लक्ष्मी
- इ = शक्ति (शैव दर्शन के अनुसार)

द्वितीय सर्ग

- राजा दिलीप द्वारा कामधेनु की पुत्री नन्दिनी की सेवा का वर्णन है।
- नन्दिनी राजा दिलीप द्वारा की गयी 21 (इक्कीस) दिनों की सेवा से प्रसन्न होती है और उनकी परीक्षा भी लेती हैं।
- कुम्भोदर सिंह का वर्णन।
- दिलीप परीक्षा में सफल होते हैं, नन्दिनी उन्हें पुत्र प्राप्ति का आशीर्वाद देती हैं।

निष्कर्ष

- रघुवंश की कथा का अन्त पतनाभिलाषी राजा के विलासी चरित्र से होता है।
- आरम्भ जिस तरह से उदात्त और महान् चरित्र वाले राजा दिलीप से हुआ, वहीं उसका अन्त अत्यन्त ही कारुणिक है।
- अग्निवर्ण जैसे विलासी चरित्र का दुःखद अन्त कराकर कवि ने यह तथ्यात्मक आदर्श प्रकट किया है कि-

1- चरित्र की उदात्तता एवं महानता के कारण रघु और राम ने सूर्यवंश को महत्ता प्रदान की।
2- उसी वंश में विलासी कामी नृप अग्निवर्ण ने अपनी दुश्चरित्रता के कारण सूर्यवंश को भ्रष्ट किया और उसका भी अत्यन्त दुःखद अन्त हुआ।

- कवि का मूल उद्देश्य रघु और राम के उदात्त चरित्र का वर्णन करना था।

रघुवंशम् की सूक्तियाँ

रघुवंशम् (द्वितीय सर्ग)

*** अथ प्रजानामधिपः प्रभाते**
जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्याम्।
वनाय पीतप्रतिबद्धवत्सां
यशोधनो धेनुमृषेर्मुमोच॥1/1॥

अर्थ- उसके बाद प्रातः काल में 'कीर्तिधन वाले' प्रजा के स्वामी (राजा दिलीप) ने पत्नी (सुदक्षिणा) द्वारा समर्पित किये गये गन्ध और माला से युक्त, दूध पी लेने के बाद बाँध दिये गये बछड़े वाली, ऋषि वशिष्ठ की गाय (नन्दिनी) को वन में चरने के लिये छोड़ दिया।

*** तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसुम्-**
अपांसुलानां धुरि कीर्तनीया।
मार्गं मनुष्येश्वरधर्मपत्नी,
श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्ववगच्छत् ॥2/2॥

अर्थ- पतिव्रताओं में अग्रगण्य (आगे गिनी जाने वाली) राजा दिलीप की धर्मपत्नी सुदक्षिणा ने उस नन्दिनी के खुरों के रखने

से पवित्र हुए धूलि मार्ग का उसी तरह अनुसरण किया जिस प्रकार स्मृति (मनुस्मृति आदि) वेदार्थ का अनुगमन करती हैं।

* **छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत् ॥2/6॥**

अर्थ- राजा दिलीप ने नन्दिनी के रुकने पर स्वयं रुककर, चलने पर चल कर, बैठने पर बैठ कर, जल पीने पर जल पी कर छाया की तरह उसका (नन्दिनी का) अनुसरण किया।

* **पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या । तदन्तरे सा विरराज धेनुर्दिनक्षपामध्यगतेव संध्या**

अर्थ- मार्ग में राजा दिलीप से आगे की हुई और राजा की धर्मपत्नी (सुदक्षिणा) के द्वारा अगवानी की गई वह गाय उन दोनों (राजा और रानी) के बीच दिन और रात के मध्य वर्तमान सन्ध्या के समान सुशोभित हुई। ॥2/20॥

* **अलं महीपाल! तव श्रमेण प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा स्यात् ।**

अर्थ- हे पृथ्वी का पालन करने वाले राजन्! आपका परिश्रम करना व्यर्थ है, ॥2/34॥

***स त्वं निवर्तस्व विहाय लज्जां गुरोर्भवान्दर्शितशिष्यभक्तिः । ॥2/40॥**

अर्थ- वह आप लज्जा को छोड़कर लौट जाइये। आपने गुरु के प्रति शिष्य के योग्य भक्ति दिखला दी है।

* **सत्वं मदीयेन शरीरवृत्तिं देहेन निर्वर्तयितुं प्रसीद ।**

अर्थ- वह तुम मेरे शरीर से अपने शरीर के जीवन को सम्पादित करने के लिए प्रसन्न होओ। ॥2/45॥

अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन्-
विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम्।

अर्थ- इन सबको थोड़े के लिये अधिक छोड़ने की इच्छा करने वाले आप मुझे विचारशून्य मालूम पड़ते हैं।

* **ऋद्धं हि राज्यं पदमैन्द्रमाहुः ॥2/50॥**

अर्थ- क्योंकि (विद्वान् लोग) समृद्धिशाली राज्य को भूतल के सम्बन्ध से भिन्न इन्द्र का पद कहते हैं।

* **शिलोच्चयोऽपि क्षितिपालमुच्चैः**
प्रीत्या तमेवार्थमभाषतेव ॥2/51॥

अर्थ- गुफा में पहुँची हुई इसकी प्रतिध्वनि द्वारा पर्वत भी प्रेम से मानो उसी बात को राजा से जोर से कहने लगा।

न केवलानां पयसां प्रसूतिमवेहि मां कामदुघां प्रसन्नाम्

अर्थ- मुझको केवल दूध देने का कारण मत समझो (बल्कि प्रसन्न होने पर कामनाओं को पूर्ण करने वाली (जानो)। ॥2/63॥

मार्गं स्वेनेव पूर्णेन मनोरथेन

अर्थ-प्रस्तुत श्लोक में राजा और रानी के द्वारा तय किये गये मार्ग का वर्णन है अर्थात् ऐसा प्रतीत होता था कि रथ पर चढ़कर नहीं गये अपने सफलीभूत मनोरथ पर चढ़ कर गये।

* '**प्रतिबध्नाति हि श्रेयः पूज्यपूजाव्यतिक्रमः**'(रघु. 01/79)
पूज्यों की पूजा का उल्लङ्घन करना कल्याण को रोकता है।

* '**स्ववीर्यगुप्ता हि मनोः प्रसूतिः**'
मनु के वंश में उत्पन्न राजा लोग अपने ही पराक्रम से आत्मरक्षा कर लेते थे। (रघु. 02/04)

* '**भक्त्योपपन्नेषु हि तद्विधानां प्रसादचिह्नानि पुरः फलानि।**'
प्रेमी व्यक्तियों के प्रसन्नता के चिह्न निःसन्देह फल के कारण होते हैं। (रघु. 02/22)

➢ ''**न पादपोन्मूलनशक्तिरंहः शिलोच्चये मूर्च्छति मारुतस्य।**''
सिंह, राजा दिलीप से कहता है कि- वृक्ष को उखाड़ने वाली शक्ति रखने वाले वायु का वेग पर्वत के विषय में व्यर्थ होता है। (रघु. 02/34)

➢ ''**शस्त्रेण रक्ष्यं यदशक्यरक्षं, न तद्यशः शस्त्रभृतां क्षिणोति॥**''
सिंह, दिलीप से कहता है कि- रक्षा करने के योग्य वस्तु शस्त्र से नहीं बचायी जा सकती, वह नष्ट होती हुई भी शस्त्रधारियों की कीर्ति को दूषित नहीं कर सकती। (रघु. 02/40)

➢ '**स्थातुं नियोक्तुर्न हि शक्यमग्रे, विनाश्य रक्ष्यं स्वयमक्षतेन।**'
राजा दिलीप, सिंह से कहते हैं कि- रक्षा करने योग्य वस्तु का नाश करके स्वयं बिना नष्ट हुए, नौकर स्वामी के आगे उपस्थित होने के लिए समर्थ नहीं हो सकता। (रघु. 02/56)

➢ '**एकान्तविध्वंसिषु मद्विधानां पिण्डेष्वनास्था खलु भौतिकेषु।**'
राजा दिलीप, सिंह से कहते हैं कि- लोगों के अवश्य नष्ट होने वाले पृथ्वी-जल-तेज-वायु-आकाश इन पाँच महाभूतों से बने शरीर में अपेक्षा नहीं रहती है।(रघु. 02/57)

➢ '**सम्बन्धमाभाषणपूर्वमाहुः।**'
राजा दिलीप सिंह से कहते हैं कि- दो व्यक्तियों में बातचीत आरम्भ हो जाय तो उसी से उनका रिश्ता जुड़ जाता है। अर्थात् सम्बन्ध को बातचीत के द्वारा उत्पन्न हुआ कहते हैं। (रघु. 02/58)

रघुवंश पर टीकाएँ-

रघुवंश महाकाव्य की व्यापकता का पता इसी से लगाया जा सकता है कि-

➢ रघुवंश की 40 टीकाएँ प्राप्त हैं।

- मल्लिनाथ की टीका सर्वाधिक प्रमाणित मानी जाती है। उन्होने इसके प्रत्येक शब्द की व्याख्या की है।

प्रमुख टीकाकार एवं टीकाएँ

बल्लभदेव-
- रघुवंश महाकाव्य के सबसे प्राचीन टीकाकार।
- टीका का नाम- रघुवंशपञ्जिका
- पाण्डुलिपि के उपलब्ध, अप्रकाशित
- समय-दशमशती

दक्षिणावर्तनाथ-
- टीका का नाम- 'रघुवंशदीपिका'
- पाण्डुलिपि में अत्यधिक त्रुटि होने से अप्रकाशित
- समय-13वीं शती।

मल्लिनाथ-
- संस्कृत साहित्य के समर्थ टीकाकार।
- टीका का नाम-'सञ्जीवनी'।
- समय-15वीं शती।

अरुणगिरिनाथ-
- रघुवंश के तीसरे टीकाकार
- टीका का नाम- 'प्रकाशिका'
- समय- 15वीं शती।

नारायण पण्डित-
- अरुण गिरिनाथ का अनुवर्तन किया।
- टीका का नाम- 'पदार्थदीपिका'
- समय- (वि.स. 1506/1555)

चरित्रवर्धन-
- टीका का नाम- 'शिशुहितैषिणी'

समय- 15वीं शती

रघुवंश के अन्य टीकाकार
- जिन समुद्रसूरि, हेमाद्रि, रत्नचन्द्र, सुमालिविजय, हरिदास मित्र, कृष्णभट्ट, जनार्दन और नल विजयराम प्रमुख हैं।

महत्वपूर्णतथ्य
- रघुवंश ध्वनि काव्य है यह ध्वनि काव्य का ज्वलन्त रूप है।
- रघुवंश में 19 सर्गों में रघुवंशी राजाओं का चरित्र गान किया गया है।
- रघुवंश चरित्रप्रधान काव्य है।
- लोकप्रियता की दृष्टि से रघुवंश कालिदास की कृतियों में श्रेष्ठ है।
- यह एक पौराणिक काव्य है जिसकी कथा इतिहास, पुराण, रामायण तथा महाभारत से ली गयी है।
- इतनी व्यापक और विराट् कथा के आयोजन के फलस्वरूप ही आचार्यों ने कालिदास को 'रघुकार' की उपाधि दी।

कुमारसम्भवम् प्रथमसर्ग

- 'कुमारसम्भवम्' महाकाव्य कालिदास की प्रारम्भिक रचना है।
- इसमें कवि शिव-पार्वती विवाह, कुमार कार्तिकेय के जन्म, तथा उनके द्वारा तारकासुर के वध की कथा वर्णित है।
- इस महाकाव्य में **17 सर्ग** हैं।
- किन्तु प्रथम 8 सर्गों को ही कालिदास की रचना माना जाता है।
- 'विवरण टीका' के लेखक- नारायण पण्डित ने कहा कुमारसम्भव काव्य का लक्ष्य पार्वती द्वारा शिव के चित्त का आकर्षण मात्र था।
- काव्यशात्रीय आचार्यों ने प्रथम आठ सर्गों से ही उद्धरण दिये हैं।
- मल्लिनाथ की संजीवनी टीका वस्तुतः आठ सर्गों तक ही है।
- मल्लिनाथ के पूर्ववर्ती अरुणगिरिनाथ ने भी आठ सर्गों तक ही टीका लिखी है।
- भाषा, भाव की दृष्टि से परवर्ती सर्ग मौलिक सर्गों की अपेक्षा हीनतर है।
- केवल सीताराम नामक कवि ने संजीवनी नाम से उन सर्गों की व्याख्या की है।
  (सर्वप्रथम टीका सम्पूर्ण काव्य पर 17 सर्ग तक)
- 'कुमारसम्भवम्' में 'सम्भव' शब्द सम्भावना की ही ध्वनि देता है।
- वास्तविक जन्म को प्रकाशित नहीं करता है।

कुमारसम्भवम् - महाकाव्य का परिचय

- **प्रणेता-** महाकवि कालिदास की प्रारम्भिक रचना।
- **नायक-** कुमारसम्भव के नायक शिव दिव्य कोटि के हैं।
- **प्रतिनायक-** तारकासुर
- **सर्ग संख्या-** 17 सर्ग (मूल रूप से 8 सर्ग)
- **उपजीव्य-** शिवपुराण, रामायण, महाभारत।

रस
- कुमारसम्भवम् का अङ्गी रस **शृङ्गार** है।
- शिवपार्वती के असाधारण प्रेम और प्रणय लीलाओं का चित्रण इस काव्य में होने से सम्पूर्ण काव्य शृङ्गार मय है।

तं यथात्मसदृशं वरं वधूरन्वरज्यत वरस्तथैव ताम्।
सागरादनपगा हि जाह्नवी सोऽपि तन्मुखरसैकवृत्तिभाक्॥
(कुमार. 08/16)

- चतुर्थ सर्ग में रति के करुण विलाप में आद्यन्त करुण रस छाया हुआ है।

गत एव न ते निवर्तते स सखा दीप इवानिलाहतः।
अहमस्य दशेव पश्य माम विषह्यव्यसनेन धूमिताम्॥
(कुमार. 4/30)

- समाधिस्थ शिव की मूर्ति एवं पार्वती की तपस्या वर्णन में शान्त रस की छटा दिखती है।
- अंग रस के रूप में हास्य रस भी इस महाकाव्य में विन्यस्त है।

छन्द
- कालिदास को छोटे छन्द अधिक प्रिय थे।
- बड़े छन्दों का प्रयोग सर्गान्त में किया गया है।
- छोटे छन्दों में भी उपजाति और अनुष्टुप् अतिप्रिय छन्द हैं।

➢ कुमारसम्भव में सर्वाधिक उपजाति छन्द का प्रयोग हुआ है।

कुमारसम्भवम् के सर्गों का नाम एवं श्लोक संख्या

सर्गसंख्या	सर्ग का नाम	सर्ग में श्लोक संख्या
प्रथम सर्ग	उमोत्पत्ति (उमा उत्पत्ति)	60
द्वितीय सर्ग	ब्रह्मसाक्षात्कार	64
तृतीय सर्ग	मदन दहन	76
चतुर्थ सर्ग	रति विलाप	46
पञ्चम सर्ग	तपः फल उदय	86
षष्ठ सर्ग	उमाप्रदान	95
सप्तम सर्ग	उमा परिणय	95
अष्टम सर्ग	उमासुरतवर्णन सीताराम कवि उमा परिणय (मल्लिनाथ)	91
नवम सर्ग	कैलाश गमन	52
दशम सर्ग	कुमार उत्पत्ति	60
एकादश सर्ग	कुमार उत्पत्ति	50
द्वादश सर्ग	कुमार सेनापतिवर्णन	60
त्रयोदश सर्ग	कुमार सेनापति अभिषेक	51
चतुर्दश सर्ग	देवसेना प्रयाण	51
पञ्चदश सर्ग	देवसेना प्रयाण (सुरासुरसैन्य संघट्ट)	53
षोडश सर्ग	देवसेना प्रयाण (सुरासुरसैन्य संग्रामवर्णन)	51
सप्तदश सर्ग	तारकासुर वध	55
		कुल=1096

सर्गानुसार कथावस्तु

सर्ग-1

- ➢ हिमालय का भव्य वर्णन
- ➢ हिमालय-मैना विवाह
- ➢ पार्वती का जन्म और सौन्दर्य
- ➢ नारद द्वारा शिव-पार्वती विवाह की चर्चा।
- ➢ पार्वती द्वारा शिव की आराधना।

महाकाव्य का वैशिष्ट्य

➢ महाकाव्य का नामकरण कथानक पर आधारित है-

➢ 'कुमारस्य सम्भवः जन्म यस्मिन् काव्ये तत् कुमारसम्भवम्'

➢ महाकाव्य के अधिकांश लक्षण कुमारसम्भव में मिलते हैं जो कि विभिन्न आचार्यों द्वारा बताये गये हैं।

➢ ''विकारहेतौ सति विक्रियन्ते येषां न चेतांसि त एव धीराः।'' काव्य महादेव को वास्तविक धीर कहा गया है।

कुमारसम्भवम्

☞ 'कुमारसम्भव' महाकाव्य किस कवि ने लिखा है–
कालिदास

☞ कुमारसम्भवमहाकाव्ये कति सर्गाः सन्ति–सप्तदश

☞ कुमारसम्भवमहाकाव्यस्य कस्मिन् सर्गे हिमालयवर्णनमस्ति–
प्रथमे सर्गे

☞ कस्मिन् काव्ये आदौ हिमालयस्य वर्णनं भवति–
कुमारसम्भवे

☞ 'शिव-पार्वत्योः' चर्चा कस्मिन् ग्रन्थे दृश्यते– कुमारसम्भवे

☞ कुमारसम्भवमहाकाव्ये कुमारः वर्तते– **कार्तिकेयस्य**

☞ 'कुमारसम्भव' में किस राक्षस का वध वर्णित है–**तारकासुर**

☞ 'एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः' इति सूक्तिः अस्मिन् काव्ये उपलभ्यते– **कुमारसम्भवे**

☞ ''शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्'' कस्मिन् काव्ये प्रोक्तम् ?
कुमारसम्भवे

☞ ''अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः'' यह पंक्ति कहाँ प्राप्त होती है– **कुमारसम्भवम् में**

☞ क्षुद्रेऽपि नूनं शरणं प्रपन्ने ममत्वमुच्चैः शिरसां सतीव यह सूक्ति कहाँ प्राप्त होती है – **कुमारसम्भव में**

☞ 'क्लेशः फलेन हि पुनर्नवतां विधत्ते' इयं पंक्ति अस्ति–
कुमारसम्भवस्य

☞ ''स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः'' उक्ति है–
कुमारसम्भवम् की

☞ 'न धर्मवृद्धेषु वयः समीक्ष्यते' – इस उक्ति के रचयिता कौन हैं–**कालिदास**

☞ 'प्रियेषु सौभाग्यफला हि चारुता' – इस उक्ति के रचयिता कौन हैं– **कालिदास**

☞ 'मनोरथानामगतिर्न विद्यते' - कस्येदं वाक्यम्–
पार्वत्याः

☞ कुमारसम्भवं महाकाव्यस्य प्रारम्भः कीदृगविधेन मङ्गलाचरणेन अस्ति– **वस्तुनिर्देशात्मकेन**

प्रमुख खण्डकाव्य

मेघदूत का परिचय

- **लेखक** – कालिदास
- **विधा** – खण्डकाव्य/गीतिकाव्य
- **दो भागों में** – (i) पूर्वमेघ (ii) उत्तरमेघ
- **प्रधानरस** – विप्रलम्भशृङ्गार
- **छन्द** – मन्दाक्रान्ता
- **मेघदूतम् की रीति** – वैदर्भी रीति
- **उपजीव्य** – कथानक ब्रह्मवैवर्तपुराण से एवं दूत की कल्पना वाल्मीकीयरामायण से
- **नायक** – यक्ष (हेममाली) ब्रह्मवैवर्तपुराण के अनुसार
- **नायिका** – यक्षिणी (विशालाक्षी)
- **कथानक** – दूतकाव्य के रूप में एक 'गीतिकाव्य' है, जिसमें एक यक्ष का विरह वर्णित है।
- 50 से अधिक संस्कृत टीकायें।
- मल्लिनाथ की **(सञ्जीवनी टीका)**
- जर्मन विद्वान् **मैक्समूलर ने मेघदूतम् का जर्मन भाषा में पद्यानुवाद** और **श्वेट्ज ने जर्मनभाषा में गद्यानुवाद** किया है।
- **आर्थर राइडर और एच. जी रूक** ने अंग्रेजी में मेघदूतम् का पद्यानुवाद किया है।
- हिन्दीभाषा में मेघदूतम् के **6 पद्यानुवाद** हो चुके हैं।
- क्षेमेन्द्र ने कालिदास के मन्दाक्रान्ता छन्द की प्रशंसा की–**'सुवशा कालिदासस्य मन्दाक्रान्ता विराजते' –सुवृत्ततिलक**
- मेघदूत में उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि अलङ्कारों का सुन्दर प्रयोग है।
- डॉ. कीथ ने मेघदूत को **Elegy (शोकगीत)** कहा है।
- भारतीय मत में मेघदूत शोकगीत या करुणगीत न होकर **विरहगीत** या **विप्रलम्भगीत** है।
- **प्रमुखपात्र**–यक्ष (हेममाली), यक्षिणी (विशालाक्षी), मेघ (बादल), कुबेर (यक्षाधिपति)
- संस्कृत के गीतिकाव्यों का आदिमग्रन्थ महाकवि कालिदास का मेघदूत है।
- दक्षिणावर्तनाथ और मल्लिनाथ ने मेघदूत लिखने में रामायण से प्रेरणा मानी है।
- यक्ष को अलकाधीश्वर कुबेर ने जो शाप दिया उसका आधार पद्मपुराण है।
- वहाँ के योगिनी नामक आषाढ़-कृष्ण-एकादशी-महात्म्य-प्रसंग में यह कथा संक्षेप में है।
- 'ब्रह्मवैवर्तपुराण' को भी मेघदूत का उपजीव्य माना जाता है।
- मेघदूत में 115 पद्य हैं। यह दो भागों पूर्वमेघ और उत्तरमेघ में विभक्त है।
- पूर्वमेघ में 63 और उत्तरमेघ में 52 पद्य हैं।
- मल्लिनाथ ने 121 पद्य स्वीकार किए हैं किन्तु 6 श्लोकों को प्रक्षिप्त माना है।
- मेघदूत का **मुख्य रस विप्रलम्भ शृङ्गार** है।
- पूरे मेघदूत में **मन्दाक्रान्ता छन्द** प्रयुक्त है।
- यक्षों के अधिपति कुबेर हैं। उन्होंने अपने कार्य में प्रमाद करने के कारण किसी अपने अनुचर 'यक्ष' को शाप दे दिया।
- यद्यपि कालिदास ने मेघदूत में कहीं भी इस यक्ष का नाम नहीं लिया परन्तु ब्रह्मवैवर्तपुराण में इस **यक्ष का नाम हेममाली तथा यक्षिणी का नाम विशालाक्षी** मिलता है।
- यक्ष अपनी पत्नी में आसक्ति के कारण अपने कार्य में प्रमाद करता है इसलिए कुबेर ने एक वर्ष तक अपनी पत्नी से वियुक्त रहने का शाप दिया।
- शाप के कारण नष्ट महिमा वाला **यक्ष रामगिरि में** रहता है।
- मेघदूत के आरम्भ में यक्ष अपने शापावधि के 8 माह काट चुका है और चार माह शेष हैं।
- मेघदूत का नायक **यक्ष धीरललित नायक** है। **यक्षिणी स्वकीया एवं पद्मिनी नायिका** है।
- मेघदूत में **प्रसाद एवं माधुर्य गुण** की प्रधानता है और **वैदर्भीरीति** प्रयुक्त है।
- **मेघः एव दूतः यस्मिन् काव्ये तत् 'मेघदूतम्'।** इस प्रकार 'मेघदूतम्' पद में बहुव्रीहि समास प्राप्त है।
- यक्षों के अधिपति **कुबेर की राजधानी 'अलका'** है। इसकी स्थिति हिमालय पर्वत शृंखला के कैलाश नामक शिखर पर बतलायी गयी है।
- **रामगिरि पर्वत** की स्थिति मल्लिनाथ तथा वल्लभ ने **चित्रकूट** मानी है जो बुन्देलखण्ड में है।
- प्रो. विल्सन ने नागपुर से कुछ दूरी पर स्थित रामटेक का प्राचीन नाम रामगिरि माना है।
- रामगिरि सीताजी के स्नान से पवित्र जल वाला तथा घने छायादार वृक्षों से युक्त है।
- आषाढ़ के पहले ही दिन यक्ष पर्वतों से क्रीड़ा करने वाले गजों के तुल्य 'मेघ' को देखता है।
- कश्चित् पद ब्रह्म का वाचक (कः = ब्रह्म, चित् = ब्रह्म) है इस प्रकार दो बार श्रवण होने से मङ्गलाचरण हो जाता है।
- मेघदूत का मङ्गलाचरण **वस्तुनिर्देशात्मक मङ्गलाचरण है।**
- प्रिया के वियोग के कारण दुर्बल यक्ष की कलाई से स्वर्णनिर्मित कङ्गन के गिरने से वह रिक्त कलाई वाला हो गया है।
- अपनी कुशलवार्ता अपनी प्रिया तक पहुँचाने के लिए, अपने निवेदन से पूर्व यक्ष कुटज (गिरिमल्लिका) के पुष्पों से मेघ को अर्घ्य देता है।
- धुआँ, अग्नि, जल एवं वायु से बने जड़ मेघ से भी वह कामार्तता के कारण सन्देश ले जाने का निवेदन करता है।
- यक्ष, मेघ को विश्वविदित् **पुष्कर और आवर्तक वंश** में उत्पन्न बताता है।
- यक्ष, मेघ को **इन्द्र का प्रमुख व्यक्ति** और स्वेच्छानुसार आकृति धारण करने में समर्थ बताता है।
- मेघ को सन्तप्तों का एकमात्र शरण बताता है और उसे सन्देश

लेकर अलका भेजना चाहता है। अलका के बाहरी उद्यान में स्थित भगवान् शिव के मस्तक पर सुशोभित चन्द्र की चाँदनी से वहाँ के महल धवल हैं।

- चातक (पपीहा) मेघ के बायीं ओर शब्द कर रहा है।
- गर्भाधान उत्सवकाल के परिचय से आकाश में बगुलियाँ पंक्तिबद्ध होकर मेघ का सेवन करती हैं।
- यक्ष को विश्वास है कि वियोग के दिनों की गणना में एकाग्रचित्त यक्षिणी को मेघ अवश्य देखेगा।
- यक्ष मेघ की भाभी (भ्रातृजाया) 'यक्षिणी' को कहता है।
- मानसरोवर जाने को उत्सुक तथा मार्ग में भूख मिटाने के लिए चोंच में मृणाल लिए हुए राजहंस मेघ के साथी होंगे।
- श्रीरामचन्द्र के चरणचिन्हों से युक्त रामगिरि से मेघ विदाई लेता है।
- मेघ 'उत्तरदिशा' की ओर मुख करके अपनी यात्रा का आरम्भ करता है।
- दिङ्नागाचार्य वसुबन्धु के शिष्य थे।
- मल्लिनाथ ने 'दिङ्नाग' को कालिदास का प्रतिद्वन्द्वी माना है। जिन पर कालिदास ने व्यङ्ग्य किया है।
- रामगिरि आश्रम 'गीले स्थल बेतों' से युक्त है।
- इन्द्रधनुष से युक्त श्यामल मेघ की उपमा गोपवेषधारी भगवान् श्रीकृष्ण से की गयी है।
- मेघ की यात्रा में सर्वप्रथम माल प्रदेश पड़ता है।
- थोड़ा पश्चिम में पड़ने वाले माल प्रदेश में वर्षा कर वहाँ की भूमि को सुगन्धित करता हुआ मेघ पुनः उत्तर की ओर चल देता है।
- मेघ ने आम्रकूट पर्वत की दावाग्नि पहले बुझाई थी इसलिए मित्रता के कारण आम्रकूट मेघ को सिर पर (चोटी)धारण करेगा।
- मेघ की यात्रा का **पहला पर्वत आम्रकूट** है। प्रो. विल्सन आधुनिक अमरकण्टक, जो नर्मदा का उद्गम है उसको ही आम्रकूट मानते हैं।
- आम्रकूट पके हुए आम्र से युक्त आम्र वृक्षों वाला पर्वत है।
- मेघ द्वारा चोटी पर आसीन हो जाने के कारण आम्रकूट पर्वत पृथ्वी के स्तन के समान शोभा प्राप्त करता है। जो देव-दम्पत्तियों द्वारा दर्शनीय है।
- आम्रकूट पर्वत के कुञ्ज वनवासियों की स्त्रियों द्वारा उपभुक्त हैं।
- मेघ के मार्ग में **पहली नदी रेवा (नर्मदा)** मिलती है जो विन्ध्य पर्वत की तलहटी में हाथी के शरीर पर बने चित्र के समान फैली है।
- नर्मदा का जल हाथियों के मदों से सुगन्धित तथा जामुन के कुञ्जों से अवरुद्ध है।
- सिद्ध जनों की स्त्रियाँ मेघ के कम्पन से भयभीत होकर अपने प्रेमियों का आलिङ्गन करेगी।
- रेवा को पार कर मेघ दशार्ण देश पहुँचता है जिसे विल्सन ने आधुनिक छत्तीसगढ़ माना है। यह एक प्राचीन जनपद है। इसकी राजधानी 'विदिशा' थी।
- दशार्ण को **'दशदुर्गों का प्रदेश'** कहा जाता है।
- विदिशा वेत्रवती नदी के तट पर स्थित है।
- वेत्रवती नदी की उपमा भ्रूभङ्गयुक्त नायिका से की गई है।
- आजकल भोपाल से 26 मील पर स्थित मालवा के 'भिलसा' नामक स्थान को ही विदिशा माना जाता है।
- विदिशा में मेघ 'नीचैः' नामक पर्वत पर ठहरता है। यह पर्वत वेश्याओं द्वारा प्रयुक्त सुगन्धित पदार्थों से युक्त गुफाओं वाला है।
- मेघ का मार्ग उज्जयिनी जाते हुए कुछ टेढ़ा होगा परन्तु तब भी यक्ष उसे वहाँ जाने का निवेदन करता है।
- यक्ष का मानना है कि यदि उज्जयिनी की स्त्रियों की चञ्चल कटाक्षों के साथ मेघ ने क्रीड़ा नहीं किया तो वह ठगा गया।
- उज्जयिनी जाते हुए मेघ मार्ग में निर्विन्ध्या नदी से मिलता है जो पक्षियों की पंक्ति रूपी करधनी वाली है।
- निर्विन्ध्या अपनी भँवर रूपी नाभि दिखाती है और उसके द्वारा दिखाया गया विभ्रम ही प्रथम प्रणयवचन है।
- यक्ष कहता है निर्विन्ध्या को पार कर मेघ सिन्धु नदी के समीप पहुँचेगा जो मेघ के विरह में कृश हो गयी है और मेघ को वह उपाय करना चाहिए जिससे वह दुर्बलता त्याग दे।
- 'अवन्ती' में वृद्धजन वत्सराज उदयन की कथा कहा करते हैं।
- उज्जयिनी को **देदीप्यमान स्वर्ग का टुकड़ा** कहा गया है। उज्जयिनी को विशाला भी कहा जाता है।
- वायु को 'शिप्रा नदी' के चाटुकार प्रेमी के रूप में चित्रित किया गया है। इसी नदी के तट पर उज्जयिनी है।
- उज्जयिनी के बाजार को अत्यन्त वैभवशाली बताया गया है।
- उज्जयिनी में उदयन ने **महाराज 'प्रद्योत' की पुत्री वासवदत्ता** का अपहरण किया था।
- उज्जयिनी में प्रद्योत का स्वर्णमय ताल वृक्षों का वन था जिसे प्रद्योत के ही इन्द्र प्रदत्त **'नलगिरि' नामक हाथी** ने नष्ट कर दिया था।
- अलकापुरी के घोड़े पत्तों के समान श्याम वर्ण के हैं और वहाँ के योद्धागण रावण के तलवार से किये गये घावों के निशान को ही आभूषण मानते हैं।
- महाकाल के उद्यान गन्धवती नदी की वायु से कम्पित होते हैं।
- यक्ष महाकाल मंदिर पहुँचे मेघ को शाम के समय तक रुक कर शिव की सन्ध्या पूजन के समय नगाड़े का कार्य करने के लिए कहता है।
- मेघ के सायंकालीन जपाकुसुम के समान लाल रंग की कान्ति से ऐसा प्रतीत होता है जैसे उसने भगवान् शिव की गजासुर के गीले चर्म को धारण करने की इच्छा पूरी कर दी।
- मेघ उज्जयिनी के महल की छतों पर रात्रि व्यतीत करता है।
- उज्जयिनी के पश्चात् मेघ के मार्ग में गम्भीरा नदी आती है।
- **ज्ञातास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः।** प्रसिद्ध सूक्ति गम्भीरा नदी के वर्णन में आती है।

- यक्ष जल को 'गम्भीरा' का वस्त्र, किनारों को नितम्ब तथा बेंत की शाखाओं को उसका हाथ बताता है।
- जङ्गल के गूलरों को पकाने वाली वायु देवगिरि के मार्ग में बहती है।
- **देवगिरि** में निवास करने वाले **स्वामी कार्तिकेय** हैं। जिनका वाहन मयूर है। इनको **स्कन्द भगवान्** भी कहा जाता है।
- महाराजरन्तिदेव का यशरूप **चर्मण्वती (चम्बल)** नदी है।
- चर्मण्वती नदी पार करके मेघ 'दशपुर' की स्त्रियों के उत्सुकता का विषय बनेगा।
- दशपुर से बढ़ते हुए मेघ ब्रह्मवर्त प्रदेश होता हुआ महाभारत की युद्धभूमि कुरुक्षेत्र पहुँचेगा।
- बलराम महाभारत के युद्ध से विमुख रहे। उनकी पत्नी रेवती के आँखों की उपमा सरस्वती नदी से की गयी है। लाङ्गली बलराम का नाम है।
- सरस्वती नदी के जल का सेवन करके अंदर से पवित्र मेघ वर्ण मात्र से श्याम रह जायेगा। बलराम ने भी इसका जलपान किया था।
- कुरुक्षेत्र के आगे कनखल पर्वत के समीप पार्वती जी का उपहास करती सी गङ्गा नदी बहती है।
- गङ्गा का नाम 'जह्नुकन्या' प्रयुक्त है।
- कनखल हरिद्वार का समीपवर्ती माना जाता है।
- कनखल में मेघ की छाया गङ्गा में पड़ने पर प्रयाग के अतिरिक्त वहाँ भी सङ्गम (गङ्गा + यमुना) प्रतीत होगा।
- हिमालय पर मेघ शिव जी के बैल द्वारा उछाले गये कीचड़ की तुल्य शोभा को प्राप्त करेगा।
- हिमालय पर मेघ 'शरभों' को ओलों की वृष्टि से नष्ट-भ्रष्ट कर देता है।
- हिमालय के किसी शिलातल पर भगवान् शिव के चरणों की सिद्ध जन पूजा करते हैं मेघ भी उनकी परिक्रमा करता है।
- हिमालय पर मेघ के मृदङ्ग जैसी आवाज से शिव का सङ्गीत पूर्ण हो जायेगा।
- हिमालय पर्वत पर क्रौञ्चरन्ध्र भगवान् परशुराम के पराक्रम का प्रमाण है।
- इसी रन्ध्र से हंस मानसरोवर जाते हैं।
- क्रौञ्चरन्ध्र से गुजरता हुआ मेघ राजा बलि को बाँधने के लिए उठाये गये विष्णु के पैर की तरह प्रतीत होगा।
- क्रौञ्चरन्ध्र का दूसरा नाम हंसद्वार है।
- क्रौञ्चरन्ध्र पार करके मेघ हिमालय का अतिथि बनेगा।
- हिमालय पर भ्रमण करती हुई पार्वती जी के लिए मेघ सीढ़ी का कार्य करता है।
- कैलाश पर देवस्त्रियाँ कङ्कणों के अग्रभाग से मेघ को फौव्वारा बना डालेंगी।
- हिमालय पर चीड़ वृक्षों के तनों की रगड़ से लगी आग को मेघ बुझाता है।

उत्तरमेघ

- उत्तरमेघ के प्रथम श्लोक में अलकानगरी की तुलना मेघ के साथ की गयी है।
- मेघ की बिजली की तुलना अलकापुर की स्त्रियों से, इन्द्रधनुष की तुलना सुंदर चित्रों से, मेघ के गर्जन की तुलना अलका में बजाये जाने वाले मृदङ्गों से, जलधारण की मणिजटित फर्शों से तथा मेघ की ऊँचाई की तुलना गगनचुम्बी शिखरों से की गयी है।
- अलका में सदैव छः ऋतुएँ वर्तमान रहती हैं।
- अलका की स्त्रियाँ क्रीड़ा के लिए हाथों में कमल लिए रहती है, बालों में कुन्दपुष्प का तथा मुख पर लोध्रपुष्प का रज लगाये रहती हैं।
- वे जूड़ों में कुरबक का तथा कानों में सुन्दर शिरीष पुष्प लगाकर और माँग में कदम्ब पुष्प सजाती हैं।
- अलका में नित्य फूल खिलते हैं और रात्रियाँ सदैव चाँदनीयुक्त रहती हैं।
- अलका में यक्ष सदैव ही युवावस्था को प्राप्त रहते हैं वहाँ अन्य अवस्थाएँ नहीं हैं।
- कुबेर को रावण का भाई माना जाता है इन्हीं का पुष्पक विमान रावण के पास था।
- कल्पवृक्ष से रतिफल नामक मद्य प्राप्त होता है जिसका सेवन 'यक्षगण' मृदङ्ग आदि के ध्वनि के साथ करते हैं।
- आकाशगङ्गा (मन्दाकिनी) के जल से शीतल तथा किनारे पर मन्दार के वृक्षों से प्राप्त छाया में यक्ष कन्यायें स्वर्णिम बालुका में मणि छिपाने का खेल खेलती है।
- चन्द्रमा की किरणों से पिघलाई गयी झालरों में लटकी चन्द्रकान्त मणि स्त्रियों के सुरतजन्य थकावट को दूर करती है।
- अलका के बाह्य उद्यान का नाम **'वैभ्राज'** है।
- कामदेव भगवान् शङ्कर के डर से अपने भौरों की डोरी वाले धनुष का प्रयोग नहीं करता। स्त्रियों के चितवन से काम चलाता है।
- अलका में अलंकरण की समस्त सामग्री एकमात्र कल्पवृक्ष प्रदान करता है।
- यक्ष का घर **कुबेर के घर से उत्तर दिशा में** स्थित है।
- यक्ष के घर में इन्द्रधनुष के सदृश रंग-बिरंगा फाटक लगा है।
- यक्ष के घर के समीप उसकी पत्नी द्वारा दत्तक पुत्र की तरह पाला गया पुष्पगुच्छ से युक्त मन्दारवृक्ष है।
- रावण की तलवार का नाम 'चन्द्रहास' है।
- यक्ष के घर में मरकतमणि की शिलाओं से निर्मित सीढ़ी वाली बावली है।
- यहाँ के हंस वर्षाकाल में भी मानसरोवर नहीं जाते।
- उस बावली के किनारे पर नीलम नामक मणियों से बने शिखरवाला क्रीड़ाशैल है। इस पर सुन्दर केले की बाड़ है।
- क्रीडाशैल पर रक्त अशोक और मौलसिरी (वकुल) नाम के दो वृक्ष हैं।

➢ क्रीडा शैल पर माधवीलता का कुंज है।
➢ अशोक यक्षिणी के 'बायें पैर' और बकुल 'मुख की मदिरा' के अभिलाषी हैं।
➢ दोनों वृक्षों के मध्य में मरकत मणि की वेदी है।
➢ शैल पर ही स्फटिक के पटरे वाली सोने की वासयष्टि (अड्डा) है जहाँ मोर सायंकाल में बैठता है।
➢ यह मयूर यक्षिणी की तालियों और कंकणों द्वारा नचाया गया है।
➢ यक्ष के द्वार के दोनों तरफ **शंख और पद्म का चित्र** बना है।
➢ 'मेघ' अलकापुरी में यक्ष के घर में बने क्रीड़ा शैल पर बैठता है और जुगनुओं की पंक्ति की सदृश मन्द प्रकाश यक्ष के घर में डालता है।
➢ यक्ष 'यक्षिणी' को युवतियों की रचना के विषय में ब्रह्मा की प्रथम कृति बताता है।
➢ यक्ष के घर पर पिंजड़े में **मैना** पाली गयी है।
➢ यक्ष मेघ से कहता है वह यक्षिणी को देवपूजा करते अथवा यक्ष का चित्र बनाते या मैना से बात करते देखेगा।
➢ यक्षिणी वीणा बजाते हुए गीत गाने का प्रयत्न करती है।
➢ यक्षिणी देहली के पुष्पों को भूमि पर रखकर विरह के दिनों की गणना करती है।
➢ यक्षिणी विरह के दिनों में भूमि पर ही सोती है।
➢ यक्ष मेघ से खिड़की पर बैठकर यक्षिणी को देखने के लिए कहता है।
➢ मेघ के पहुँचने पर यक्षिणी की बायीं आँख फड़कती है।
➢ मेघ अपने जल बिन्दुओं से शीतल बने वायु से यक्षिणी को जगाता है।
➢ यक्ष के शाप का अंत हरिबोधिनी या देवोत्थान एकादशी के दिन होता है।
➢ उसी दिन भगवान् विष्णु अपनी शेष शय्या से उठेंगे।
➢ यक्ष मेघ को पहचान चिह्न के रूप में यक्षिणी के साथ घटित एक घटना को बताता है।
➢ अंतिम श्लोक में यक्ष मेघ के लिये यह कामना करता है कि उसका उसकी पत्नी 'बिजली' के साथ कभी वियोग न हो।
➢ मेघदूत पर 50 से अधिक टीकाएं लिखी जा चुकी हैं।

मेघदूत की प्रमुख सूक्तियाँ (पूर्वमेघ)

1. कामार्ता हि प्रकृतिकृपणाश्चेतनाचेतनेषु। 5॥
भावार्थ – काम से व्याकुल (जन) चेतन एवं अचेतन के विषय में स्वभाव से ही दीन हो जाते हैं।

2. याच्ञा मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा॥ 6॥
भावार्थ – अधिक गुण वाले व्यक्ति से की गई याचना फलवती न होने पर भी उत्तम है, नीच व्यक्ति से फलीभूत हुयी याचना भी अच्छी नहीं है।
● यहाँ अधिक गुण वाला 'मेघ' है।

3. आशाबन्धः कुसुमसदृशं प्रायशो ह्यङ्गनानाम्
सद्यः पाति प्रणयि हृदयं विप्रयोगे रुणद्धि॥ 9॥
भावार्थ – आशा का बन्धन ही प्रेम से ओत-प्रोत, पुष्प सदृश कोमल तथा वियोग से शीघ्र टूटने वाले अबलाओं के हृदय को प्रायः रोके रहता है।

4. न क्षुद्रोऽपि प्रथमसुकृतापेक्षया संश्रयाय,
प्राप्ते मित्रे भवति विमुखः किं पुनर्यस्तथोच्चैः॥ 17॥
भावार्थ – नीच व्यक्ति भी पहले किये गये उपकार के कारण मित्र से विमुख नहीं होता फिर जो महान् है वह कैसे (विमुख होगा)?
● आम्रकूट के मित्र मेघ के आम्रकूट पर्वत पर अतिथि रूप में पहुँचने पर। यह सूक्ति कही गयी है।

5. रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः पूर्णता गौरवाय॥ 20॥
भावार्थ – सभी रिक्त पदार्थ हल्के तथा पूर्णता गौरव के लिए होती है।

6. स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु॥ 29॥
भावार्थ – स्त्रियों का प्रिय के प्रति विलास प्रारम्भिक प्रार्थना वाक्य होता है।
● मेघ के प्रति निर्विन्ध्या द्वारा दिखाये गये विभ्रम के संदर्भ में।

7. ज्ञातास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः॥ 45॥
भावार्थ – रस का अनुभव किया हुआ कौन-सा पुरुष जंघा प्रदेश को प्रकट करने वाली स्त्री का परित्याग करने में समर्थ होगा।
● ज्ञातास्वाद से मेघ का और विवृतजघना से गम्भीरा का संकेत।

8. आपन्नार्तिप्रशमनफलाः सम्पदो ह्युत्तमानाम्॥ 57॥
भावार्थ – श्रेष्ठ जनों की सम्पत्तियाँ आर्त्तजनों के कष्टों को दूर कर देने वाली होती है।
● हिमालय की दावाग्नि को मेघ बुझाता है अतः उसे 'उत्तम' कहा गया है।

9. के वा न स्युः परिभवपदं निष्फलारम्भयत्नाः॥ 58॥
भावार्थ – निष्फल कर्म में प्रयत्न करने वाले कौन से व्यक्ति तिरस्कार के पात्र नहीं होते (अर्थात् अवश्य होते हैं)
● मेघ पर आक्रमणरूपी निष्फल प्रयास करने वाले 'शरभों' के संदर्भ में।

उत्तरमेघ की सूक्तियाँ

1. सूर्यापाये न खलु कमलं पुष्यति स्वामभिख्याम्॥ 20॥
भावार्थ – सूर्य के अस्त हो जाने पर कमल निश्चित रूप से अपनी शोभा को धारण नहीं करता।

2. प्रायः सर्वो भवति करुणावृत्तिरार्द्रान्तरात्मा॥ 35॥
भावार्थ – प्रायः सभी कोमल हृदय वाले व्यक्ति दयालु स्वभाव वाले होते हैं।

3. कान्तोदन्तः सुहृदुपगतः सङ्गमात्किञ्चिदूनः॥ 40॥
भावार्थ – मित्र से लिया गया प्रियतम का संदेश स्त्रियों के लिए मिलने से कुछ ही कम होता है।

4. नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण॥ 49॥
भावार्थ – सुखः-दुःख की दशा पहिए की धार (तीलियों) के समान ऊपर-नीचे होती रहती है।

5. प्रत्युक्तं हि प्रणयिषु सतामीप्सितार्थक्रियैव॥ 54॥
भावार्थ – प्रेमी याचकों के अभीष्ट प्रयोजन को सिद्ध करना ही सज्जनों का उत्तर होता है।

मेघदूतम् (व्याख्या 1-10 श्लोक)

कश्चित्कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारात्प्रमत्तः
शापेनास्तङ्गमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः।
यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु
स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु॥1॥

अन्वय - स्वाधिकारात् प्रमत्तः कान्ताविरहगुरुणा वर्षभोग्येण भर्तुः शापेन अस्तङ्गमितमहिमा कश्चित् यक्षः जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु स्निग्धच्छायातरुषु रामगिर्याश्रमेषु वसतिं चक्रे।

शब्द	अर्थ
स्वाधिकारात्	अपने कर्त्तव्य पालन में
प्रमत्तः	असावधान
कान्ताविरहगुरुणा	प्रिया के वियोग से दुःसह एक वर्ष पर्यन्त भोगे जाने वाले
भर्त्तुः	स्वामी-कुबेर के
शापेन	शाप से
अस्तङ्गमितमहिमा	जिसकी महिमा नष्ट हो चुकी है,
कश्चित्	कोई
यक्षः	यक्ष
जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु	जनक की पुत्री सीता जी के स्नान से पवित्र जल वाले
स्निग्धच्छायातरुषु	घने छायादार वृक्षों से युक्त
रामगिर्याश्रमेषु	रामगिरि नामक पर्वत के आश्रमों में
वसतिम्	निवास
चक्रे	किया

अनुवाद- अपने कार्य से असावधान, प्रिया के विरह से दुःसह, एक वर्ष तक भोगने वाले, स्वामी के शाप से नष्ट महिमा वाला, कोई यक्ष जनक की पुत्री के स्नान से पवित्र जल वाले, घने छाया वाले वृक्षों से युक्त, रामगिरि (पर्वत) के आश्रमों में निवास करता था।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

समास

- **स्वाधिकारात् -** अधिक्रियते अस्मिन् इति स्वस्य अधिकारः स्वाधिकारः तस्मात् (षष्ठी तत्पुरुष समास अथवा कर्मधारय समास)
- **अस्तङ्गमितमहिमा -** अस्तं गमितः महिमा यस्य सः (बहुव्रीहि समास)
- **स्निग्धच्छायातरुषु -** छायाप्रधानाः तरवः छायातरवः, स्निग्धाः छायातरवः येषु तेषु - (बहुव्रीहि समास)
- **रामगिर्याश्रमेषु -** रामगिरेः आश्रमेषु रामगिर्याश्रमेषु - षष्ठी तत्पुरुष
- **वर्षभोग्येण -** भोक्तुं योग्यः भोग्यः, वर्षभोग्यस्तेन तत्पुरुष समास
- **जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु -** जनकस्य तनयायाः सीतायाः स्नानैः अवगाहनैः पुण्यानि पवित्राणि उदकानि जलानि येषु तेषु - (बहुव्रीहि समास)
- **कान्ताविरहगुरुणा -** कान्तायाः प्रियायाः विरहः वियोगः तेन गुरुणा - तृतीया तत्पुरुष

कारक -

- **स्वाधिकारात् -** 'जुगुप्साविरामप्रमादार्थानामुपसंख्यानम्' वार्तिक से पञ्चमी का प्रयोग
- **वर्षभोग्येण -** कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे से तृतीया (वर्ष भोग्यः)
- **शापेन -** हेतौ सूत्र से तृतीया।
- **प्रमत्तः -** 'जुगुप्साविरामप्रमादार्थानामुपसंख्यानम्' से पंचमी

प्रत्यय -

- **अधिकारः** - अधि + कृ + घञ्
- **प्रमत्तः** - प्र + मद् + क्त
- **भर्तुः** - भृ + तृच्
- **शापेन** - शप् + घञ्
- **गमित** - गम् + णिच् + क्तः
- **महिमा** - महत् + इमनिच्
- **वसतिम्** - वस् + अति
- **चक्रे -** कृ + लिट् प्रथम पुरुष, एकवचन, आत्मनेपद
- **रस -** मेघदूतम् में **विप्रलम्भ शृंगार** का प्रयोग किया गया है। विप्रलम्भ शृङ्गार के भी चार भेद होते हैं-

1. पूर्वराज 2. मान 3. प्रवास - भावी, भवन्, भूत 4. करुण
इसमें भवन नामक प्रवास का उल्लेख है।

- **छन्द -** सम्पूर्ण मेघदूतम् में **मन्दाक्रान्ता छन्द** का प्रयोग हुआ है।
- **लक्षण -** 'मन्दाक्रान्ता जलधिषड्गैर्म्भौ न तौ ताद् गुरू चेत्' अर्थात् इस छन्द में प्रत्येक पाद में 17 अक्षर होते हैं। वे मगण, भगण, नगण, दो तगण और दो गुरु इस क्रम में होते हैं। चौथे, दसवें और सत्रहवें अक्षर पर यति होती है।
- **अलङ्कार -** इस श्लोक में शाप के प्रति ''स्वाधिकारात्प्रमत्तः'' की हेतुता होने से पदार्थ हेतुक **काव्यलिङ्ग अलङ्कार** है।
- 'कान्ताविरहगुरुणा' यहाँ कान्ता पद का प्रयोग कवि की इस बात का सूचक है कि यक्ष को अपनी पत्नी से विशेष प्रेम था, क्योंकि जो भाव कान्ता पद से व्यक्त होता है वह पत्नी या भार्या से नहीं। यहाँ कान्ता पद का प्रयोग साभिप्राय है, इसलिए **परिकरालङ्कार** है। क्योंकि जहाँ विशेष्य साभिप्राय हो वहाँ परिकर अलङ्कार होता है।
- **लक्षण - ''विशेषणैर्यत् साकूतैरुक्तिः परिकरश्च सः''**
- **विशेष -** ग्रन्थ के निर्विघ्नतापूर्वक समाप्ति के लिए ग्रन्थ के आरम्भ में मङ्गलाचरण किया जाता है। मङ्गलाचरण के तीन भेद हैं-
- **''आशीर्नमस्क्रिया वस्तुनिर्देशो वाऽपि तन्मुखम्''**

1. आशीर्वादात्मक 2. नमस्क्रियात्मक 3. वस्तुनिर्देशात्मक
यहाँ वस्तुनिर्देशात्मक मङ्गलाचरण है।

➤ काव्य के आरम्भ में 'क' वर्ण का प्रयोग हुआ है, 'क' शब्द वायु, ब्रह्मा और सूर्य का वाचक है अतः देवता वाचक शब्द का प्रयोग होने से मङ्गल का ही अनुष्ठान किया गया है।

श्लोक से पूछे जा सकने वाले सम्भावित प्रश्न -

➤ इस श्लोक में कौन सा मङ्गलाचरण है? **वस्तुनिर्देशात्मक**
➤ इसमें कौन सा छन्द प्रयोग किया गया है? **मन्दाक्रान्ता**
➤ यक्ष को कितने दिनों का शाप मिला था? - **एक साल**
➤ यक्ष को किसने शाप दिया था? - **यक्षों के स्वामी कुबेर**
➤ यक्ष को शाप देने का क्या कारण था? **- अपने कार्य से असावधानी के कारण**
➤ 'कश्चित्' शब्द किसके लिए आया है? - **यक्ष के लिए**
➤ रामगिरि आश्रम किसके स्नान करने से पवित्र हो गया था? **- जनकतनया सीता के**
➤ यक्ष को शाप देने की तिथि क्या थी? **- देवोत्थान एकादशी**
➤ चक्रे शब्द किस लकार और वचन में है बताइये? **- कृ लिट् लकार, प्रथम पु. एक.**

श्लोक - 2

तस्मिन्नद्रौ कतिचिदबलाविप्रयुक्तः स कामी
नीत्वा मासान् कनकवलयभ्रंशरिक्तप्रकोष्ठः।
आषाढस्य प्रथमदिवसे मेघमाश्लिष्टसानुं
वप्रक्रीडापरिणतगजप्रेक्षणीयं ददर्श॥2

अन्वय - तस्मिन् अद्रौ अबलाविप्रयुक्तः कनकवलयभ्रंशरिक्तप्रकोष्ठः कामी स कतिचित् मासान् नीत्वा आषाढस्य प्रथमदिवसे आश्लिष्टसानुम् वप्रकीडापरिणतगजप्रेक्षणीयम् मेघम् ददर्श।

शब्द	अर्थ
तस्मिन्	उस
अद्रौ	पर्वत पर
अबलाविप्रयुक्तः	प्रियतमा से वियुक्त
कनकवलयभ्रंशरिक्त प्रकोष्ठः	स्वर्ण कङ्कण के गिरने से शून्य कलाई वाले
कामी	कामुक
सः	उस यक्ष ने
कतिचित्	कुछ
मासान्	महीनों को
नीत्वा	बिताकर
आषाढस्य	आषाढ मास के
प्रथमदिवसे	प्रथम दिन
आश्लिष्टसानुम्	पर्वत की चोटी से सटे हुए
वप्रक्रीडापरिणतगजप्रेक्षणीयम्	टीले की मिट्टी के उड़ाखने में तिरछा दन्तप्रहार करने वाले हाथी के समान दर्शनीय
मेघम्	मेघ को
ददर्श	देखा।

अनुवाद - उस (रामगिरि) पर्वत पर प्रिया से वियुक्त स्वर्ण कङ्कण के गिरने से शून्य कलाई वाले कामुक उस यक्ष ने कुछ वर्ष बिताकर आषाढ़ के प्रथम दिन पर्वत की चोटी से सटे हुए वप्रक्रीड़ा करने में तिरछा दन्त प्रहार करने वाले हाथी के सदृश दर्शनीय मेघ को देखा।

समास

➤ **अबलाविप्रयुक्तः -** अबलया विप्रयुक्तः - तृतीया तत्पुरुष अथवा अविद्यमानं बलं यस्याः सा अबला **- बहुव्रीहि समास**
➤ कनकवलयभ्रंशरिक्तप्रकोष्ठः - कनकस्य वलयस्य भ्रंशेन रिक्तः प्रकोष्ठः यस्य सः **बहुव्रीहि समास**
➤ **कामी -** कामः अस्य अस्ति इति कामी
➤ **प्रथम दिवसे -** प्रथमेदिवसे प्रथमदिवसे - **कर्मधारय**
➤ **आश्लिष्टसानुम् -** आश्लिष्टं सानु येन तम् - **(बहुव्रीहि समास)**
➤ **वप्रक्रीडापरिणतगजप्रेक्षणीयम् -** वप्रक्रीडासु परिणतः तत्पुरुष स चासौ गजः **(कर्मधारय तत्पुरुष)**
➤ तमिव प्रेक्षणीयम् **(उपमित तत्पुरुष)** अथवा वप्रक्रीडापरिणत गज इव प्रेक्षणीयः तम् - **(कर्मधारयसमास)**

प्रत्यय

➤ **विप्रयुक्तः** - वि + प्र + युज् + क्त (वि+प्र+युज् +क्त)
➤ **कामी** - कम् + घञ् = कामः अथवा कामः अस्य अस्तीति काम + इनि = कामिन् (कामी)
➤ **कतिचित्** - कति + चित्
➤ **नीत्वा** - नी + क्त्वा
➤ **आश्लिष्टः** - आङ् + श्लिष् + क्त
➤ **आधान** - आ + धा + ल्युट्
➤ **प्रेक्षणीयम्** - प्र + ईक्ष् + अनीयर्

धातुरूप -

➤ **ददर्श -** दृश् + लिट्। प्रथम पुरुष, एकवचन (परस्मैपद)
➤ **कतिचित् -** कति शब्द नित्य बहुवचनान्त है। इसमें चित् अव्यय का योग हुआ है।
➤ **अलङ्कार -** गजप्रेक्षणीयम् में उपमा वाचक शब्द ''इव'' लुप्त है अतः यहाँ लुप्तोपमा अलङ्कार है।

श्लोक से बनने वाले सम्भावित प्रश्न

➤ यक्ष कितने माह पर्वत पर व्यतीत कर चुका था? - **आठ माह**
➤ यक्ष ने पर्वत चोटी से किसे देखा? **- मेघ को**
➤ किस माह में यक्ष ने मेघ को सर्वप्रथम देखा? **- आषाढ माह के प्रथम दिन**
➤ यक्ष किस कारण अत्यन्त दुर्बल हो गया था? **अपनी प्रिया के विरह से**
➤ यक्ष ने अपने हाथ में क्या पहन रखा था? **स्वर्ण कङ्कण**
➤ यक्ष की कलाई किसके गिरने से सूनी हो गयी थी? **- स्वर्ण कङ्कण।**

श्लोक - 3

तस्य स्थित्वा कथमपि पुरः कौतुकाधानहेतो
रन्तर्वाष्पश्चिरमनुचरो राजराजस्य दध्यौ।
मेघालोके भवति सुखिनोऽप्यन्यथावृत्ति चेतः
कण्ठाश्लेषप्रणयिनि जने किं पुनर्दूरसंस्थे॥3॥

अन्वय - राजराजस्य अनुचरः अन्तर्वाष्पः कौतुकाधानहेतोः तस्य पुरः कथम् अपि स्थित्वा चिरं दध्यौ मेघालोके सुखिनः अपि चेतः अन्यथावृत्ति भवति कण्ठाश्लेषप्रणयिनि जने दूरसंस्थे किम् पुनः?

शब्द	अर्थ
राजराजस्य	यक्षराज कुबेर का
अनुचरः	आँखो में आँसुओं को भीतर ही भीतर रोककर
कौतुकाधानहेतोः	उत्कण्ठा उत्पन्न करने वाले
तस्य	उस मेघ के
पुरः	सामने
कथमपि	किसी प्रकार, बड़े प्रयत्न से
स्थित्वा	खड़े होकर
चिरम्	बहुत समय तक
दध्यौ	सोचा
मेघालोके	मेघ के दिखाई देने पर
सुखिनः	सुखी व्यक्ति का
अपि	भी
चेतः	चित्त
अन्यथावृत्ति	दूसरे ही प्रकार के व्यवहार वाला
भवति	हो जाता है
कण्ठाश्लेषप्रणयिनि जने	आलिङ्गन की इच्छा वाले व्यक्ति से
किम् पुनः	फिर कहना ही क्या है?
दूरसंस्थे	दूर रहने पर

अनुवाद - यक्षों के राजा कुबेर का सेवक आखों के अन्दर ही अन्दर आँसुओं को रोके हुए, उत्कण्ठा को उत्पन्न करने वाले उस मेघ के सामने किसी प्रकार ठहर कर देर तक सोचता रहा। मेघ के दर्शन होने पर सुखी व्यक्ति का भी चित्त दूसरे प्रकार की वृत्ति वाला (चञ्चल) हो जाता है, फिर कण्ठ के आलिङ्गन के इच्छुकजन प्रिया के दूर स्थित होने पर तो कहना ही क्या।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

समास -

- **राजराजस्य -** राज्ञां राजा राजराजः - **(षष्ठी तत्पुरुष)**
- **अन्तर्वाष्पः -** अन्तः स्तम्भितं वाष्पं **(मध्यमपद लोपी)** यस्य सः **(बहुव्रीहि)**
- **कौतुकाधानहेतोः -** कौतुकस्य आधानं तस्य हेतोः **(षष्ठी तत्पुरुष)**
- **मेघालोके -** मेघस्य आलोकः, तस्मिन् **(षष्ठी तत्पुरुष)**
- **अन्यथावृत्ति -** अन्यथा वृत्तिः यस्य सः **(बहुव्रीहि)**
- **कण्ठाश्लेषप्रणयिनि -** कण्ठस्य आश्लेषः तस्य प्रणयी, तस्मिन् **(षष्ठी तत्पुरुष)**

प्रत्यय

- **अनुचर** - अनु + चर् + अच्
- **कौतुक** - कुतुक + अण्
- **आधानम्** - आङ् + धा + ल्युट्
- **स्थित्वा** - स्था + क्त्वा
- **पुरः, चिरम्** - अव्यय पद हैं दोनों
- **सुखिनः** - सुख + इनि
- **आश्लेष** - आङ् + श्लिष् + घञ् (भावे)
- **प्रणयी** - प्रणय + इनि
- **संस्था -** सम् + स्था + आङ्

धातुरूप

- **दध्यौ -** ध्यै + लिट् प्रथम पुरुष, एकवचन
- **अलङ्कार -** इस श्लोक में उत्तरार्द्ध से पूर्वार्द्ध स्थित चिन्तारूप पदार्थ का समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलङ्कार और उत्तरार्द्ध में 'किं पुनर्दूरसंस्थे' में अर्थापत्ति अलङ्कार है। इस प्रकार अर्थान्तरन्यास और अर्थापत्ति के निरपेक्ष से स्थित होने के कारण **संसृष्टि अलङ्कार** है।

सम्भावितप्रश्न

- राजराजस्य शब्द किसके लिए आया है? - **कुबेर के लिए**
- 'जने' शब्द यहाँ किसके लिए आया है? - **(प्रिया) यक्षणी के लिए**
- अपने आँसुओं को कौन अन्दर ही अन्दर रोके रहता है?- **यक्ष**
- 'दध्यौ' शब्द का धातु, लकार और वचन बताइये? **ध्यै + लिट् लकार** , प्रथमपुरुष, एकवचन
- मेघ को देखकर चित्त कैसा हो जाता है? - **चञ्चल**
- 'कि पुनर्दूरसंस्थे' में कौन सा अलङ्कार है? - **अर्थापत्ति**
- मेघालोके में कौन सा समास है? - **षष्ठी तत्पुरुष**

श्लोक - 4

प्रत्यासन्ने नभसि दयिताजीवितालम्बनार्थी
जीमूतेन स्वकुशलमयीं हारयिष्यन् प्रवृत्तिम्।
स प्रत्यग्रैः कुटजकुसुमैः कल्पितार्घाय तस्मै
प्रीतः प्रीतिप्रमुखवचनं स्वागतं व्याजहार॥4

अन्वय - नभसि प्रत्यासन्ने दयिताजीवितालम्बनार्थी सः जीमूतेन स्वकुशलमयीं प्रवृत्तिं हारयिष्यन् प्रत्यग्रैः कुटजकुसुमैः कल्पिताघाय तस्मै प्रीत प्रीतिप्रमुखवचनम् स्वागतम् व्याजहार।

शब्द	अर्थ
नभसि	श्रावण मास के
प्रत्यासन्ने	सन्निकट आने पर
दयिताजीवितालम्बनार्थी	प्रिया के जीवन धारण के इच्छुक
सः	उस यक्ष ने
जीमूतेन	मेघ द्वारा

स्वकुशलमयीम्	अपने कुशल से पूर्ण
हारयिष्यन्	भेजने की इच्छा से
प्रत्यग्रैः	तत्काल तोड़े गये (ताजे)
कुटजकुसमैः	कुटज (पर्वतीय चमेली) के पुष्पों से
कल्पितार्घाय	अर्घ्य सामग्री तैयार करके
प्रीतः	प्रेमपूर्वक
प्रीतिप्रमुखवचनम्	प्रणय भरे शब्दों से
स्वागतम् व्याजहार	स्वागत कहा

अनुवाद - श्रावण मास के निकट आने पर प्रिया के जीवन को सहारा देने के इच्छुक उस (यक्ष) ने मेघ द्वारा अपने कुशलमय समाचार को भेजने की इच्छा से तत्काल तोड़े गये ताजे कुटज के पुष्पों से अर्घ्य सामग्री तैयार करके उस मेघ के लिए प्रसन्नतापूर्वक प्रणय भरे वचनों से स्वागत कहा।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

समास -

- **दयिताजीवितालम्बनार्थी -** दयितायाः जीवितम् - **(षष्ठी तत्पुरुष)** दयिताजीवितम् तस्य आलम्बनम् - दयिताजीवितालम्बनार्थी - **(षष्ठी तत्पुरुष समास)**
- **जीमूतेन -** जीवनस्य उदकस्य मूतः पटबन्धः जीमूतः तेन **(तृतीया तत्पुरुषसमास)**
- **स्वकुशलमयीं -** स्वस्य कुशलम् **(षष्ठी तत्पुरुष)**
- **प्रत्यग्रैः -** अग्रं प्रति गतः प्रत्यग्रः तैः **(बहुव्रीहि)**
- **कल्पितार्घाय -** कल्पितोऽर्घो यस्मै तस्मै **(बहुव्रीहिसमास)**
- **प्रीतिप्रमुखवचनम् -** प्रीतिः प्रमुखं येषां येषु वा तानि **(बहुव्रीहि समास)** तानि वचनानि यस्मिन् कर्मणि तत् **(बहुव्रीहिसमास)**
- **स्वागतम्** - सुशोभनम् आगतं तत् **(नित्यकर्मधारय)**

प्रत्यय -

- **प्रत्यासन्ने -** प्रति + आ + सद् + क्त
- **दयिताजीवितालम्बनार्थी -** जीव + क्त , आङ् + लबि + ल्युट् दयिताजीवितालम्बन + णिनि (इन्)
- **स्वकुशलमयीम् -** स्वकुशल + मयट् +ङीप्
- **हारयिष्यन् -** हृ + णिच् = हारि + इट् + स्य + शतृ
- **प्रीतः -** प्रीञ् + क्त
- **प्रीति -** प्रीञ् + क्तिन्
- **स्वागतम् -** सु + आ + गम् + क्त
- **व्याजहार -** वि + आङ् + हृञ् + लिट्
- **प्रवृत्तिम् -** प्र + वृत् + क्तिन्

कारक

- **कुटजकुसुमैः -** अर्घ्य क्रिया के अत्यन्त उपकारक होने से 'साधकतमं करणम्' इससे करण संज्ञा होकर कर्तृकरणयोस्तृतीया सूत्र से तृतीया विभक्ति हुई।
- **नभसि -** नभस् (नपुंसकलिङ्ग, सप्तमी एकवचन)
- **अलङ्कार -** इस श्लोक में प्री, प्र, व , त की असकृत् होने से **वृत्त्यनुप्रास** शब्दालङ्कार है।

सम्भावितप्रश्न

- यक्ष ने किससे अर्घ्य सामग्री तैयार की? - **कुटज के पुष्पों से**
- जीमूतेन शब्द किसके लिए आया है? - **मेघ के लिए**
- स्वागतम् शब्द में प्रकृति प्रत्यय बताइये? **सु + आ + गम् + क्त**
- 'प्रीतिप्रमुखवचनम्' शब्द में कौन सा समास है? **बहुव्रीहि**
- 'नभसि' शब्द से किस महीने का बोध होता है? - **श्रावण माह का**
- नभसि शब्द का लिङ्ग और वचन बताइये? **नभस् शब्द - सप्तमी एकवचनम्**

श्लोक - 5

धूमज्योतिः सलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः
संदेशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः।
इत्यौत्सुक्यादपरिणयन्गुह्यकस्तं ययाचे
कामार्ता हि प्रकृतिकृपणाश्चेतनाचेतनेषु॥5

अन्वय - धूमज्योतिः सलिलमरुतां सन्निपातः मेघः क्व? पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः संदेशार्थाः क्व? इति औत्सुक्यात् अपरिगणयन् गुह्यकः तं ययाचे, हि कामार्ताः चेतनाचेतनेषु प्रकृतिकृपणाः।

शब्द	अर्थ
धूमज्योतिः सलिलमरुताम्	धुआँ, अग्नि, जल व वायु का
सन्निपातः	(संघटन) मिश्रण
मेघः	बादल
क्व	कहाँ?
पटुकरणैः	समर्थ इन्द्रियों वाले
प्राणिभिः	प्राणियों के द्वारा
प्रापणीयाः	पहुचाने योग्य
सन्देशार्थाः	संदेशवाक्य
इति	इस बाद को
औत्सुक्यात्	उत्कण्ठा के कारण
अपरिगणयन्	विचार न करते हुए
गुह्यकः	यक्ष ने
तम्	उस मेघ से
ययाचे	याचना की
हि	क्योंकि
कामार्ताः	काम से पीड़ित प्राणी
चेतनाचेतनेषु	जड़ और चेतन पदार्थों के विषय में
प्रकृतिकृपणाः	स्वभाव से दीन, विवेकशून्य

अनुवाद - धूम, अग्नि, जल और वायु का मिश्रण मेघ कहाँ? और समर्थ इन्द्रियों वाले प्राणियों द्वारा भेजे जाने योग्य सन्देश रूपी वस्तु कहाँ? इसका उत्कण्ठा के कारण विचार नहीं किया, क्योंकि काम पीड़ित चेतन और जड़ के विषय में स्वभाव से दीन होते हैं।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

समास -

- **धूमज्योतिःसलिलमरुतां -** धूमश्च ज्योतिश्च सलिलं च मरुच्च धूमज्योतिः सलिलमरुतः **(इतरेतर द्वन्द्वसमास)**
- **पटुकरणैः -** पटूनि करणानि येषां तैः **(बहुव्रीहि)**
- **संदेशार्थाः -** संदेशाः ते एव अर्थाः **(कर्मधारय)**
- **औत्सुक्यात् -** उत्सुकस्य भावः औत्सुक्यं तस्मात् कारणात् **(बहुव्रीहि)**
- **अपरिगणयन् -** न परिगणयन् इति अपरिगणयन् **(नञ् तत्पुरुष समास)**
- **कामार्ता -** कामेन आर्ता **(तृतीया तत्पुरुष)**
- **चेतनाचेतनेषु -** चेतनाश्च अचेतनाश्च तेषु **(द्वन्द्व समास)**
- **प्रकृतिकृपणाः -** प्रकृत्या कृपणाः **(तृतीया तत्पुरुष समास)**

प्रत्यय -

- **सन्निपातः** - सम्+नि+पत्+घञ्
- **पटुकरणैः** - पटु+डुकृञ्+ल्युट्
- **सन्देशः** - सम्+दिश्+घञ्
- **प्राणिभिः** - प्राण+इनि
- **प्रापणीयाः** - प्र+आप्+णिच्+अनीयर्
- **औत्सुक्यात्** - उत्सुक+ष्यञ्
- **अपरिगणयन्** - नञ्+परि+गण्+शतृ
- **गुह्यकः** - गुह्+ण्वुल्

धातुरूप-

- **ययाचे -** याच् + लिट् प्रथम पुरुष, एकवचन
- **अलङ्कार -** यहाँ मेघ तो अचेतन है किन्तु सन्देश पूर्ण इन्द्रिय से सम्पन्न व्यक्ति ही ले जाने योग्य होता है। इस प्रकार दो विपरीत पदार्थों का कथन होने के कारण **विषमालङ्कार** हुआ।

  इस श्लोक के चतुर्थ चरण के सामान्य से तृतीय चरण के विशेष कथन का समर्थन किया गया है, इसलिए अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है।

सम्भावित प्रश्न

- मेघ कितने तत्त्वों के मिश्रण से बना है? **4 (चार तत्त्वों से)**
- मेघ के निर्माण में प्रयुक्त होने वाले तत्त्वों के नाम लिखिए? **धूआँ, अग्नि, जल, वायु**
- जड़ और चेतन के विषय में स्वभाव से कौन दीन होता है? **कामपीड़ित**
- सन्निपात शब्द का क्या अर्थ है? - **मिश्रण (संघटन)**
- 'ययाचे' शब्द का लकार और वचन लिखिए? **याच्** लिट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन
- 'गुह्यकः' शब्द किसके लिए आया है? **यक्ष के लिए**
- पटुकरणैः शब्द में कौन समास है? **पटूनि करणानि येषां तैः** (बहुव्रीहि)

श्लोक- 6

जातं वंशे भुवनविदिते पुष्करावर्तकानां
जानामि त्वां प्रकृतिपुरुषं कामरूपं मघोनः।
तेनार्थित्वं त्वयि विधिवशाद् दूरबन्धुर्गतोऽहं
याच्ञा मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा॥6

अन्वय - त्वाम् भुवनविदिते पुष्करावर्तकानां वंशे जातं मघोनः कामरूपं प्रकृतिपुरुषं जानामि। तेन विधिवशात् दूरबन्धुः अहं त्वयि अर्थित्वं गतः। अधिगुणे याच्ञा मोघा वरं अधमे लब्धकामा न।

शब्द	अर्थ
त्वाम्	तुमको
भुवनविदिते	लोकप्रसिद्ध
पुष्करावर्तकानाम्	पुष्कर और आवर्तक नाम के
वंशे	कुल में
जातम्	उत्पन्न हुए
कामरूपम्	अपनी इच्छानुसार शरीर को धारण करने वाले
मघोनः	इन्द्र का
प्रकृतिपुरुषम्	प्रधान पुरुष के रूप में
जानामि	जानता हूँ
तेन	इस कारण से
विधिवशात्	भाग्यवश
दूरबन्धुः	अपनी प्रियतमा से वियुक्त
अहम्	मैं
त्वयि	तुमसे
अर्थित्वं गतः	अधिक गुण वाले व्यक्ति से
याच्ञा	याचना
मोघा	निष्फल
अपि	भी
वरम्	अच्छी
अधमे	नीच व्यक्ति के विषय में
लब्धकामाऽपि	सफल होती हुई
न वरम्	अच्छी नहीं

अनुवाद - (हे मेघ मैं) तुमको संसार में प्रसिद्ध पुष्कर और आवर्तक मेघों के वंशो में उत्पन्न इन्द्र का इच्छानुसार रूप धारण करने वाला प्रधान पुरुष जानता हूँ। इसलिए दैवयोग से दूर स्थित बन्धु वाला मैं तुम्हारे विषय में याचकत्व को प्राप्त हुआ हूँ। अधिक गुण वाले से की गयी याचना निष्फल होने पर भी अच्छी है, परन्तु (निर्गुण) नीच से की गयी याचना सफल कामना वाली भी अच्छी नहीं।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

समास -

- **भुवनविदिते -** भुवनेषु विदिते (सप्तमी तत्पुरुष समास)
- **पुष्करावर्तकानाम् -** पुष्कराश्च आवर्तकाश्च, तेषाम् (द्वन्द्व समास)
- **कामरूपम् -** कामं रूपं कामेन रूपं वा यस्य तम् (बहुव्रीहि)
- **प्रकृतिपुरुषम् -** प्रकृतिश्चासौ पुरुषश्च (कर्मधारय)

- **दूरबन्धुः -** दूरे बन्धुः यस्य सः (बहुव्रीहि)
- **विधिवशात् -** विधेः वशः, तस्मात् (बहुव्रीहिसमास)
- **लब्धकामा -** लब्धः कामः यया सा (बहुव्रीहि समास)

प्रत्यय -
- **विदिते -** विद् + क्त
- **जातम् -** जन् + क्त
- **बन्धुः -** बन्ध् + उ
- **अर्थित्वम् -** अर्थ + णिनि - अर्थिन् + त्व
- **गतः -** गम् + क्त
- **याच्ञा -** याच् + नङ् (श्चुत्व) + टाप् (अ)
- **मोघा -** मुह् + घञ् (अ)

धातुरूप-
- **जानामि -** ज्ञा + लट् लकार उत्तमपुरुष, एकवचन
- **अलङ्कार -** ''याच्ञा मोघा लब्धकामा'' यहाँ सामान्य अर्थ से विशेष अर्थ का समर्थन होने के कारण **अर्थान्तरन्यास** अलंकार है।

सम्भावित प्रश्न

- इच्छानुसार रूप धारण करने वाला कौन है? **मेघ**
- यक्ष मेघ को किसका प्रधान सेवक मानता है? **इन्द्र का**
- यक्ष मेघ को किस कुल में उत्पन्न हुआ बताता है? **पुष्कर और आवर्तक कुल में**
- अधिक गुण वाले से की गयी निष्फल कामना भी किस प्रकार की है? - **श्रेष्ठ (या अच्छी)**
- 'दूरबन्धुः' शब्द किसके लिए आया है? - **यक्ष के लिए**
- भुवनविदिते में कौन सा समास है? - **भुवनेषु विदिते (सप्तमी तत्पुरुष)**
- इस श्लोक में कौन सा अलङ्कार है? - **अर्थान्तरन्यास**

श्लोक - 7

सन्तप्तानां त्वमसि शरणं तत्पयोद प्रियायाः
संदेशं मे हर धनपतिक्रोधविश्लेषितस्य।
गन्तव्या ते वसतिरलका नाम यक्षेश्वराणां
बाह्योद्यानस्थितहरशिरश्चन्द्रिका धौतहर्म्या।।7

अन्वय - पयोद! त्वं सन्तप्तानां शरणम् असि तत् धनपति क्रोधविश्लेषितस्य मे सन्देशं प्रियायाः हर, ते बाह्योद्यानस्थित-हरशिरश्चन्द्रिका धौतहर्म्या अलका नाम यक्षेश्वराणां वसतिः गन्तव्या।

शब्द	अर्थ
पयोद	हे मेघ
त्वम्	तुम
सन्तप्तानाम्	ताप से तपे हुओं का
शरणम्	रक्षक
धनपतिक्रोध-	कुबेर के क्रोध से-
विश्लेषितस्य	(प्रिया से) वियुक्त किये गये
सन्देशम्	संदेश को
प्रियायाः हर	प्रिया के पास ले जाओ

बाह्योद्यानस्थितहर-
शिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्या जिसके महल, बाहर के उद्यान में रहने वाले भगवान् शिव के मस्तक पर स्थित चन्द्रिका से धुले रहते हैं यक्षेश्वराणाम् श्रेष्ठ यक्षों की या कुबेर की वसतिः निवासस्थान (नगरी)गन्तव्या जाने योग्य है!

अनुवाद - (हे) मेघ! तुम (विरह) पीड़ितों के रक्षक हो, इसलिए कुबेर के क्रोध से वियुक्त हुए मेरे सन्देश को प्रिया के पास ले जाओ। तुम्हे बाहर के उद्यान में विद्यमान शिव के सिर पर स्थित चाँदनी से उज्ज्वल महलों से युक्त अलका नाम वाली यक्षों के स्वामी कुबेर की नगरी जाना है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

समास -
- **धनपतिक्रोधविश्लेषितस्य -** धनस्य पतिः (षष्ठीतत्पुरुष) धनपतेः क्रोधः (षष्ठी तत्पुरुष) तेन विश्लेषितस्य (तृतीया तत्पुरुष)
- **बाह्योद्यानस्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्या -** बाह्ये उद्याने स्थितस्य हरस्य शिरसि (बहुव्रीहि) अथवा चन्द्रिका तया धौतानि हर्म्याणि यस्यां सा तथोक्ता (बहुव्रीहि) बाह्यं च तत् उद्यानम् (कर्मधारय)
- **यक्षेश्वराणां -** यक्षाणां यक्षेषु वा ईश्वराः यक्षेश्वराः (षष्ठी व सप्तमी तत्पुरुष) अथवा यक्षाश्च ते ईश्वराश्च यक्षेश्वराः (कर्मधारय)

प्रत्यय
- **पयोद** - पयस् + दा + क
- **सन्तप्तानाम्** - सम् + तप् + क्त
- **विश्लेषित** - वि + श्लि + णिच् + क्त
- **प्रियायाः** - प्रीञ् + क + टाप्
- **अलका** - अल् + क्वुन् + टाप्
- **नाम** - यह प्रकाश्य सूचक अव्यय है।
- **गन्तव्या** - गम् + तव्य
- **हर** - हृञ् लोट् मध्यमपुरुष, एकवचन
- **वसति** - वस् + अति

विशेष -
- **अलका** यह कुबेर की राजधानी है।
- कैलाश पर बसी मानी जाती है।
- इसको वसुन्धरा, वसुस्थली, प्रभा भी कहते हैं।
- **अलति भूषयति इति अलका**
- **बाह्योद्यान -**
- इसका नाम **चित्ररथ** अथवा **वैभ्राज** बतलाया गया है।
- अलका में ही कुबेर का रम्य उद्यान है।
- **अलङ्कार -** हे पयोद! इस सार्थक विशेष्य से **परिकरालङ्कार** है।

सम्भावित प्रश्न

- कुबेर की नगरी कौन सी है? **अलका**
- शिव के सिर की चाँदनी से कहाँ के महल अत्यन्त उज्ज्वल हैं? - **अलका नगरी के**
- विरह पीड़ितों का रक्षक किसे कहा गया है? - **मेघ को**
- पयोद शब्द किसके लिए आया है? **मेघ के लिए**
- अलका शब्द में प्रकृति प्रत्यय बताइये? - **अलति भूषयति इति अलका - अल् + क्वुन् + टाप्**
- 'यक्षेश्वराणां' में कौन समास है? यक्षाणां यक्षेषु वा ईश्वराः यक्षेश्वराः (षष्ठी व सप्तमी तत्पुरुष)
  अथवा
  यक्षाश्च ते ईश्वराश्च यक्षेश्वराः (कर्मधारय)

श्लोक - 8

त्वामारूढं पवनपदवीमुद्गृहीतालकान्ताः
प्रेक्षिष्यन्ते पथिकवनिताः प्रत्ययादाश्वसत्यः।
कः सन्नद्धे विरहविधुरां त्वय्युपेक्षेत जायां
न स्यादन्योऽप्यहमिव जनो यः पराधीनवृत्तिः।।8

अन्वय - पवनपदवीम् आरूढं त्वां पथिकवनिताः प्रत्ययात् आश्वसत्यः उद्गृहीतालकान्ताः प्रेक्षिष्यन्ते। त्वयि सन्नद्धे विरहविधुरां जायां कः उपेक्षेत? अन्य अपि यः जनः अहम् इव पराधीनवृत्तिः न स्यात्।

शब्द	अर्थ
पवनपदवीम्	वायु मार्ग में, आकाश में
आरूढम्	चढ़े हुए
त्वाम्	तुमको
पथिकवनिता	परदेश गये हुए व्यक्तियों की स्त्रियाँ
प्रत्ययात्	(पति के शीघ्र आगमन के) विश्वास से
आश्वसत्यः	आश्वस्त होकर
उद्गृहीतालकान्ताः	अपने घुँघराले बालों के अग्रभाग को ऊपर पकड़े हुए
प्रेक्षिष्यन्ते	(उत्कण्ठा से) देखेंगी
त्वयि	तुम्हारे
सन्नद्धे	उमड़ने पर
विरह विधुराम्	विरह से व्याकुल
जायाम्	कान्ता की
उपेक्षेत	उपेक्षा करेगा
अन्य	दूसरा
अहमिव	मेरी तरह
पराधीनवृत्तिः	दूसरों के अधीन जीविका वाला
न स्यात्	न हो तो।

- **अनुवाद-** वायु मार्ग में चढ़े हुए तुमको परदेश गये हुए व्यक्तियों की स्त्रियाँ पति के शीघ्र आगमन के विश्वास से आश्वस्त होकर बालों के अग्रभाग को ऊपर पकड़े हुए उत्कण्ठा से देखेंगी। (क्योंकि) तुम्हारे उमड़ने पर विरह से व्याकुल पत्नी की कौन उपेक्षा करेगा, जो मेरे समान दूसरों के अधीन आजीविका वाला न हो।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

समास -

- **पवनपदवीम् -** पवनस्य पदवीम् (षष्ठी तत्पुरुष)
- **उद्गृहीतालकान्ताः -** अलकानाम् अन्ताः (षष्ठी तत्पुरुष) उद्गृहीतालकाऽन्ता याभिस्ताः (बहुव्रीहि)
- पथिकवनिताः - पथिकानाम् वनिताः (षष्ठी तत्पुरुष)
- विरहविधुराम् - विरहेण विधुरा (तृतीया तत्पुरुष)
- विधुरा - विगता धूः अस्या इति विधुरा (बहुव्रीहि)
- पराधीनवृत्तिः - परस्मिन् अधीना वृत्तिः यस्य सः (बहुव्रीहि)

प्रत्यय -

- पवनपदवीम् - पुनातीति पवनः पू+ल्युट्
- आरूढम् - आङ्+रुह्+क्त
- पथिकवनिता - पथिन्+ष्कन्
- प्रत्ययात् - प्रति+इ+अच्
- आश्वसत्यः - आङ्+श्वस्+शतृ (ङीप् , स्त्रीत्व की विवक्षा में)
- प्रेक्षिष्यन्ते - प्र+ईक्ष्+लृटलकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन
- सन्नद्धः - सम्+नह्+क्त
- जायां - जन्+यक्+टाप्
- विरहः - वि+रह्+अच्

धातुरूप -

- स्यात् - अस् विधिलिङ् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन
- उपेक्षेत - उप + ईक्ष् + विधिलिङ्, प्रथम पुरुष, एकवचन

कारक -

- प्रत्ययात् - 'विभाषा गुणेऽस्त्रियाम्' सूत्र से हेतु में पञ्चमी हुई।
- **अलङ्कार -** इस श्लोक में पकार, तकार और दकार की बार-बार आवृत्ति होने से वृत्त्युनुप्रास नामक शब्दालङ्कार है।

(2) सामान्य से विशेष का समर्थन होने के कारण अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है।

सम्भावित प्रश्न

- पराधीनवृत्ति वाला कौन है? **यक्ष**
- पथिकवनिताः शब्द में कौन सा समास है? **पथिकानाम् वनिताः (षष्ठीतत्पुरुष)**
- 'प्रत्ययात्' शब्द में प्रकृति प्रत्यय बताइये? **प्रति+इ+अच्**
- इस श्लोक में कौन सा अलङ्कार है? **अर्थान्तरन्यास**

श्लोक -9

मन्दं मन्दं नुदति पवनश्चानुकूलो यथा त्वां
वामश्चायं नदति मधुरं चातकस्ते सगन्धः।
गर्भाधानक्षणपरिचयान्नूनमाबद्धमालाः
सेविष्यन्ते नयनसुभगं खे भवन्तं बलाकाः।।9

अन्वय - अनुकूलः पवनः त्वां मन्दं मन्दं यथा नुदति, अयं सगन्धः ते वामः चातकः मधुरं नदति। गर्भाधानक्षणपरिचयात् खे आबद्धमालाः बलाकाः नयनसुभगं भवन्तम् नूनं सेविष्यन्ते।

शब्द	अर्थ
अनुकूलः	मृदु गति से पीछे-पीछे चलने वाला
पवनः	वायु
मन्दं मन्दम्	बहुत धीरे, मन्थर गति से
यथा त्वां	तुम्हारे समान ही
नुदति	प्रेरित कर रहा है
सगन्धः	गर्व सहित
ते	तुम्हारे
वामः	बाईं ओर स्थित (वामभागस्थ)
चातकः	पपीहा पक्षी
मधुरं नदति	मधुर शब्द कर रहा है
गर्भाधानक्षणपरिचयात्	गर्भाधान के आनन्द से परिचित होने के कारण
खे	आकाश में
आबद्धमालाः	पंक्ति में बँधी हुई
बलाकाः	बगुलियाँ
नयनसुभगम्	नयनों को सुन्दर लगने वाले
भवन्तम्	तुम्हारा
नूनम्	निश्चय ही
सेविष्यन्ते	आश्रय लेगीं (सेवन करेंगी)

अनुवाद - और जैसे कि अनुकूल वायु तुम्हें धीरे धीरे प्रेरित कर रहा है तथा गर्व से भरा यह पपीहा तुम्हारे वाम भाग में स्थित होकर मधुर शब्द कर रहा है। निश्चय ही गर्भ धारण करने वाली बगुलियाँ नेत्रों को सुन्दर लगने वाले आपकी आकाश में सेवा करेंगी।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

समास -
- **गर्भाधानक्षणपरिचयात् -** गर्भस्य आधानम् (षष्ठी तत्पुरुष)
  तदेव क्षणः (कर्मधारय समास)
  तस्मिन् परिचयः (सप्तमी तत्पुरुष)
  अथवा
- गर्भाधाने क्षमः समर्थः परिचयः संगमो यस्य तम् (बहुव्रीहि समास)
- **आबद्धमालाः –** आबद्धा माला याभिः ताः (बहुव्रीहि समास)
- **नयनसुभगम् -** नयनयोः सुभगः (षष्ठी तत्पुरुष)

प्रत्यय -
- **आधान -** आ+धा+ल्युट्
- **आबद्ध -** आ+बन्ध्+क्त
- **बलाका -** बल+अक्+अच्+टाप्

धातुरूप -
- नुदति=नुद्, लट्लकार , प्रथम पुरुष, एकवचन
- नदति - णद् लट्लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन
- सेविष्यन्ते - सेव् लट्लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन
- **अलङ्कार -** इस श्लोक में मकार, नकार, दकार, तथा तकार की असकृत् आवृत्ति होने से अनुप्रास अलङ्कार है।

सम्भावित प्रश्न

- मेघ के बायें भाग में कौन स्थित है? **चातक (पपीहा)**
- 'नयनसुभगम्' में कौन सा समास है-**षष्ठीतत्पुरुष/ नयनयोः सुभगः**
- बलाका शब्द में प्रकृति प्रत्यय बताइये? **बल+अक्+अच्+ टाप्**
- सेविष्यन्ते का धातु और वचन बताइये? **सेव + लट् लकार, प्रथम पुरुष बहुवचन**

श्लोक - 10

तां चावश्यं दिवसगणनातत्परामेकपत्नी
मव्यापन्नामविहतगतिर्द्रक्ष्यसि भ्रातृजायाम्।
आशाबन्धः कुसुमसदृशं प्रायशो ह्यङ्गनानाम्
सद्यःपाति प्रणयि हृदयं विप्रयोगे रुणद्धि॥10

अन्वय - अविहतगतिः दिवसगणनातत्पराम् एकपत्नीं तां भ्रातृजायां च अव्यापन्नाम् अवश्यं द्रक्ष्यसि, हि आशाबन्धः अङ्गनानां कुसुमसदृशं विप्रयोगे सद्यः पाति प्रणयि हृदयं प्रायशः रुणद्धि।

शब्द	अर्थ
अविहतगतिः	बेरोक टोक गति वाला
दिवसगणनातत्पराम्	दिनों की गणना में लगी हुई
एकपत्नीम्	पतिव्रता
भ्रातृजायां	भाभी को
अव्यापन्नाम्	जीवित (आने की आशा से)
अवश्यं	निश्चित हि
द्रक्ष्यसि	देखोगे
आशाबन्धः	आशा का बन्धन
अङ्गनानाम्	महिलाओं का
कुसुमसदृशं	फूल के समान कोमल
विप्रयोगे	वियोग में
सद्यःपाति	शीघ्र नष्ट हो जाने वाला
प्रणयि हृदयं	प्रेमी हृदय को
प्रायशः	प्रायः
रुणद्धि	रोके रखता है।

अनुवाद - (हे मेघ) अबाध गति वाले तुम दिन गिनने में लगी हुई उस पतिव्रता भाभी को अवश्य ही जीवित देखोगे। (क्योंकि) आशा का बन्धन फूल के समान शीघ्र कुम्हलाने वाले स्त्रियों के प्रेमी हृदय को वियोग में प्रायः थामे रहता है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

समास-
- दिवसगणनातत्पराम् - दिवसानां गणना (षष्ठी तत्पुरुष) तस्यां तत्परा ताम् (षष्ठी तत्पुरुष)
- अव्यापन्नाम् - न व्यापन्ना (नञ् तत्पुरुष समास)
- एकपत्नीम् - एकः पतिः यस्याः सा एकपत्नी (बहुव्रीहि) एका चाऽसौ पत्नी ताम् एकपत्नी (कर्मधारय)
- भ्रातृजायां - भ्रातुः जाया भ्रातृजाया (षष्ठी तत्पुरुष)

- अविहतगतिः - अविहता गतिः यस्य सः (बहुव्रीहि) अथवा न विहता गतिः यस्य सः (बहुव्रीहि)
- आशाबन्धः - आशा एव बन्धः (कर्मधारय समास) आशायाः बन्धः (षष्ठी तत्पुरुष)
- कुसुमसदृशम् - कुसुमेन सदृशम् (तृतीया तत्पुरुष)
- सद्यःपाति - सद्यः पततीति तच्छीलं (उपपद तत्पुरुष)

प्रत्यय

- गणना - गण+णिच्+युच्+टाप्
- गतिः - गम्+क्तिन्
- विहतः - वि+हन्+क्त
- बन्धः - बन्ध+घञ्
- प्रायशः - प्राय+शस्
- अङ्गना - अङ्ग+नङ्+टाप्
- सद्यःपाति - सद्यस्+पत्+णिनि
- विप्रयोगे - वि+प्र+युज्+घञ्

धातुरूप -

- द्रक्ष्यसि - दृश्+लृट्लकार, मध्यम पुरुष, एकवचन
- रुणद्धि - रुध् लट्लकार, प्रथमपुरुष, एकवचन
- **अलङ्कार -** इस श्लोक की तृतीय पंक्ति में प्रयुक्त आशाबन्ध में रूपक अलङ्कार है।
- कुसुमेन तुल्यम् इति कुसुमसदृशम् इस पद में लुप्तोपमा अलङ्कार है।
- उत्तरार्द्ध में सामान्य से विशेष का समर्थन होने के कारण अर्थान्तरन्यास अलङ्कार भी है।

सम्भावित प्रश्न -

- भ्रातृजाया शब्द किसके लिए आया है? **मेघ की पत्नी लिए**
- अविहतगति वाला कौन है? मेघ
- गणना शब्द में प्रकृति प्रत्यय बताइये? गण् + णिच् + युच् + टाप्

मेघदूतम् में वर्णित मेघमार्ग

रामगिरि-मालदेश-आम्रकूट-विन्ध्य-नर्मदा-दशार्ण-विदिशा-वेत्रवती-नीचै-उज्जयिनी-निर्विन्ध्या-अवन्ति-सिन्धु-शिप्रा-गन्धवती-गम्भीरा-देवगिरि-चर्मण्वती-दशपुर-कुरुक्षेत्र-सरस्वती-कनखल-हिमालय-गंगा-क्रौञ्च-कैलास-मानसरोवर-अलकापुरी।

मेघदूतम् में वर्णित नदियाँ क्रमानुसार-

रेखा-वेत्रवती-निर्विन्ध्या-सिन्धु-शिप्रा-गन्धवती-गम्भीरा-चर्मण्वती-सरस्वती-(गंगा)जाह्नवी-यमुना-मानसरोवर।

मेघदूतम् में वर्णित पर्वत क्रमानुसार-

रामगिरि-आम्रकूट-विन्ध्य-नीचगिरि-देवगिरि-हिमालय-क्रौञ्चपर्वत-कैलास।

मेघदूतम् में वर्णित नगर क्रमानुसार-

मालदेश-दशार्ण-विदिशा-उज्जयिनी-विशाला-अवन्ति-दशपुर-ब्रह्मावर्त-कुरुक्षेत्र-कनखल-अलका।

नीतिशतकम्

महाकवि भर्तृहरि का परिचय

- विक्रमसंवत् के प्रवर्तक विक्रमादित्य के बड़े भाई।
- **पत्नी** – पिङ्गला
- **गुरु** – (i) गोरखनाथ (ii) वसुरात (बौद्धमत में)
- **भाई (अनुज)** – विक्रमादित्य
- **पिता** – गन्धर्वसेन (मालवदेश के राजा)
- ईत्सिंग के कथन के आधार पर **भर्तृहरि को बौद्ध** कहा जाता है।
- भर्तृहरि **वेदान्तोक्त ब्रह्म के उपासक** थे।
- **भर्तृहरि का समय** – (i) 57 ई. पू. अथवा (ii) 575 से 650 ई.
- **भर्तृहरि की शैली/रीति एवं गुण** – वैदर्भीरीति, प्रसाद और माधुर्यगुण
- **मुक्तक काव्य के प्रथमकवि** – भर्तृहरि
- **भर्तृहरि के प्रिय छन्द** – शार्दूलविक्रीडित, शिखरिणी
- मृत्यु 650 ई. (चीनी यात्री ईत्सिंग के अनुसार)
- **रचनायें– (i) वाक्यपदीयम्** (व्याकरणग्रन्थ), (ii) **नीतिशतकम्** (मुक्तककाव्य) 111 श्लोक, (iii) **शृङ्गारशतकम्** (मुक्तककाव्य) 103 श्लोक, (iv) **वैराग्यशतकम्** (मुक्तककाव्य) 111 श्लोक

नीतिशतकम् का परिचय

- **लेखक** – भर्तृहरि
- **विधा** – मुक्तककाव्य
- **कुलश्लोक** – 111
- **कुलपद्धतियाँ** – 10 (मङ्गलाचरण सहित 11पद्धतियाँ)

1. अज्ञपद्धति (मूर्खनिन्दापद्धति) **2.** विद्वत्पद्धति
3. मानशौर्यपद्धति **4.** अर्थपद्धति
5. दुर्जनपद्धति **6.** सुजनपद्धति
7. परोपकारपद्धति **8.** धैर्यपद्धति
9. दैवपद्धति **10.** कर्मपद्धति

- मुक्तक का लक्षण–''**पूर्वापरनिरपेक्षेणापि हि येन रसचर्वणा क्रियते तदेव मुक्तकम्।**''
  इसप्रकार अर्थप्रकाशन के लिए एक दूसरे की अपेक्षा न रखने वाले स्वतन्त्र पद्य (श्लोक) मुक्तक कहे जाते हैं।
- नीतिशतक में वर्ण्य विषय को ग्यारह पद्धतियों में समाहित किया गया है।
- भर्तृहरि ने नीतिशतक में ब्रह्म की स्तुति के पश्चात् 'मूर्ख-निन्दा' से ग्रन्थ का आरम्भ किया है।
- नीतिशतक में भर्तृहरि की शैली प्रसादगुण से युक्त और मुहावरेदार है।
- नीतिशतक के मङ्गलाचरण में अनन्त, ज्ञानमय स्वानुभवमात्र से जानने योग्य, ज्योतिस्वरूप **ब्रह्म को नमस्कार** किया गया है।
- नीतिशतक का **मङ्गलाचरण नमस्कारात्मक** है।
- मङ्गलाचरण **(दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्तये)** में **अनुष्टुप्** छन्द प्रयुक्त है।

- विद्वानों के ईर्ष्याग्रस्त होने तथा राजाओं के राजमद से चूर होने के कारण और शेष लोगों के अज्ञानता के कारण भर्तृहरि का ज्ञान उनके शरीर में ही जीर्ण हो गया।
- अज्ञानी को प्रसन्न किया जा सकता है, विद्वान् को आसानी से प्रसन्न किया जा सकता है, परन्तु अल्पज्ञानी को ब्रह्मा भी प्रसन्न नहीं कर सकते।
- घड़ियाल के मुख से मणि निकाली जा सकती है, समुद्र पार किया जा सकता है, सर्प को पुष्प सदृश सिर पे धारण किया जा सकता है परन्तु दुराग्रही मूर्ख को नहीं समझाया जा सकता।
- बालू से तेल, मृगतृष्णा से जल, खरगोश के सिर पर सींग प्राप्त हो सकती है, परन्तु दुराग्रही मूर्ख को प्रसन्न नहीं किया जा सकता।
- विधाता ने मूर्खों के लिए एकमात्र 'मौन' को ही आभूषण बनाया है।
- पंडितों के सम्पर्क में आने पर अल्पज्ञ का दुराभिमान दूर हो जाता है।
- मनुष्य की घृणास्पद हड्डी को चबाता हुआ कुत्ता सामने खड़े देवराज से हड्डी छीने जाने का संदेह करता है।
- गङ्गा स्वर्ग से शिव के मस्तक को, शिव के सिर से हिमालय को, हिमालय से पृथ्वी को और पृथ्वी से समुद्र को प्राप्त हुई। इस प्रकार विवेकभ्रष्ट व्यक्ति का पतन सैकड़ों प्रकार से होता है।
- अग्नि जल से, सूर्यताप छाते से, हाथी अंकुश से, बैल व गधे दण्ड से नियन्त्रित किये जा सकते हैं। मूर्खता की कोई औषधि (उपाय) नहीं है।
- साहित्य, सङ्गीत एवं कला से विहीन व्यक्ति साक्षात् पशु के समान है।
- विद्या, तप, दान, ज्ञान, शील, गुण और धर्म से विहीन व्यक्ति पृथ्वी के भार स्वरूप हैं और मनुष्य रूप में पशु हैं।
- मूर्खों के साथ इन्द्र के भवन में रहने की अपेक्षा वनचरों के साथ वन में रहना श्रेष्ठ है।
- सत्कवियों के अवमानना से राजा की मूर्खता प्रकट होती है।
- विद्यारूपी धन वाले विद्वान् की तुलना कभी राजा के साथ नहीं हो सकती।
- ब्रह्मा हंस के कमलवन में निवास के सुख को नष्ट कर सकता है, परन्तु उसके नीर-क्षीर विवेक को नष्ट नहीं कर सकता।
- 'वाणी' (विद्या) रूपी आभूषण कभी नष्ट नहीं होता और यही सर्वश्रेष्ठ आभूषण है।
- विद्या ही परदेश गमन पर सर्वश्रेष्ठ धन सिद्ध होती है। यह गुरुओं की भी 'गुरु' है।
- राजागण विद्या की पूजा करते हैं धन की नहीं।
- क्षमा के होने पर कवच की, क्रोध के रहते शत्रु की, बन्धुजनों के रहते अग्नि की, अच्छे मित्र के रहते औषधि की, विद्या के रहते धन की, लज्जा के रहते आभूषण की तथा कवित्व रहने पर राज्य की कोई आवश्यकता नहीं होती।
- बुद्धि की जड़ता को सत्संगति हरती है।
- सत्सङ्गति कीर्ति को सभी दिशाओं में फैलाती है।
- सत्सङ्गति मनुष्य का सब प्रकार से हित करती है।
- तेजहीन होने पर भी आत्मसम्मानी सिंह सूखी घास नहीं खाता।
- कुत्ता अपने स्वामी के सामने भोजन के लिए दीनता प्रकट करता है परन्तु गजराज सैकड़ों अनुनय पर खाता है।
- उसका जन्म धन्य है जिसके जन्म से वंश का अभ्युदय हो।
- आयु निश्चय ही तेजस्विता का हेतु नहीं है।
- 'धन' के समक्ष सभी गुण तिनके के समान हो जाते हैं।
- धनवान् ही सभी गुणों वाला माना जाता है क्योंकि सभी गुण धन में ही शोभा पाते हैं।
- धन की तीन गतियाँ मानी गयी हैं – (i) दान (ii) भोग, और (iii) नाश। जो न दान देता है ओर न ही उपभोग करता है उसके धन का नाश होता है।
- वेश्या की भाँति 'राजनीति' नाना रूपों वाली है।
- राजा को पृथ्वी रूपी गाय को दुहने के लिए प्रजारूपी बछड़े का पालन करना चाहिए। तभी पृथ्वी कल्पतरु की भाँति फलती है।
- दुर्जन व्यक्ति 'विद्या' से युक्त होने पर भी भयंकर होता है।
- 'अपकीर्ति' के रहते मृत्यु की आवश्यकता नहीं होती।
- सेवा धर्म परम कठिन है और यह योगियों के लिए भी दुर्बोध है।
- सज्जनों की मैत्री दिन के उत्तरार्द्ध की तरह और दुर्जनों की पूर्वार्द्ध की तरह होती है।
- शिकारी मृग का, मछुआरा मछली का, दुर्जन सत्पुरुषों के अकारण शत्रु होते हैं।
- विपत्ति में धैर्य, समृद्धि में क्षमा, युद्ध में पराक्रम, सभा में वाक्पटुता तथा कीर्ति और वेदशास्त्र में रुचि आदि गुण महापुरुषों में स्वाभाविक होते हैं।
- सज्जनों के लिए तलवार की धार पर चलने जैसे कठिन सेवा व्रत स्वाभाविक होते हैं।
- अच्छे आचरण वाला पुत्र, पति का हित चाहने वाली पत्नी, विपत्ति तथा सुख में समान व्यवहार करने वाला मित्र पुण्यवानों को प्राप्त होते हैं।
- सच्चा मित्र दूसरे मित्र को पाप कर्म से दूर करता है, हितकारी कार्यों में लगाता है तथा छिपाने योग्य बातों को छिपाता है।
- मनुष्य की तीन कोटियाँ हैं – नीच, मध्यम तथा उत्तम।
- नीच विघ्न के भय से कार्य आरम्भ नहीं करते, मध्यम आरम्भ करते हैं परन्तु विघ्न आने पर छोड़ देते हैं परन्तु उत्तम व्यक्ति विघ्नों के आने पर भी कार्य को पूरा करते हैं।
- मनस्वी कार्यार्थी सुख-दुःख की परवाह नहीं करते।
- 'धैर्यवान् पुरुष' न्यायोचित मार्ग से एक कदम भी विचलित नहीं होते।
- धैर्यशाली पुरुष इस सम्पूर्ण त्रिलोक को जीत लेता है।
- सभी आभूषणों का कारण शील (सदाचार) है और यही सर्वोत्कृष्ट आभूषण है।
- भाग्य ही एकमात्र आश्रय है, पौरुष को धिक्कार है।
- 'भाग्य' ही सबसे बलवान है।
- अत्यंत शीघ्रता में किये गये कार्यों का परिणाम मृत्युपर्यन्त शूल की भाँति हृदय को जलाने वाला होता है।

➢ पहले की गई तपस्या से संचित भाग्य ही निश्चित ही यथोचित समय पर फल देते हैं। रूप, कुल, शील, विद्या, सेवा आदि नहीं।

नीतिशतकम् की महत्त्वपूर्ण सूक्तियाँ

1. विभूषणं मौनमपण्डितानाम् (1.7)
2. विवेकभ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः। (1.10)
3. मूर्खस्य नास्त्यौषधम् (1.11)
4. साहित्यसङ्गीतकलाविहीनः साक्षात् पशुः पुच्छविषाणहीनः (1.12)
5. वाग्भूषणं भूषणम् (1.19)
6. विद्याविहीनः पशुः (1.20)
7. सत्सङ्गतिः कथय किं न करोति पुंसाम् (1.22)
8. प्रारब्धमुत्तमजना न परित्यजन्ति (1.27)
9. न खलु वयस्तेजसो हेतुः (1.38)
10. सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ते (1.41)
11. वाराङ्गनेव नृपनीतिरनेकरूपा – (वसन्ततिलका) (38)
12. सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः (1.58)
13. स्वभाव एवैष परोपकारिणाम् (1.71)
14. न निश्चितार्थाद् विरमन्ति धीराः (1.81)
15. मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दुःखं न च सुखम् (शिखरिणी) (1.82)
16. शीलं परं भूषणम् (1.83)
17. न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः (वसन्ततिलका) (1.84)
18. विधिरहो बलवानिति मे मतिः (1.92)
19. ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि नरं न रञ्जयति (1.3)
20. न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तमाराधयेत् (4)
21. यदा किञ्चित् किञ्चित् बुधजनसकाशादवगतं
    तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः। (8)
22. न हि गणयति क्षुद्रो जन्तुः परिग्रहफल्गुताम् (9)
23. धिक् तां च तं च मदनं च इमां च मां च।
24. सर्वः कृच्छ्रगतोऽपि वाञ्छति जनः सत्त्वानुरूपं फलम्। (22)
25. तत्तेजस्वी पुरुषः परकृतनिकृतिं कथं सहते (29)
26. नानाफलं फलति कल्पलतेव भूमिः। (वसन्ततिलका) (37)
27. यं यं पश्यसि तस्य तस्य पुरतो मा ब्रूहि दीनं वचः। (शार्दूलविक्रीडित)
28. मणिना भूषितः सर्पः किमसौ न भयङ्करः (अनुष्टुप्) (42)
29. छायेव मैत्री खलसज्जनानाम् (उपजाति) (41)
30. सतां केनोद्दिष्टं विषममसिधाराव्रतमिदम् (शिखरिणी) (57)
31. विभाति कायः करुणापराणां परोपकारेण न तु चन्दनेन। (उपजाति)
32. ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे (शार्दूलविक्रीडित)
33. निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः। (मालिनी) (70)
34. प्रायो गच्छति यत्र भाग्यरहितस्तत्रैव यान्त्यापदः। (शार्दूलविक्रीडित) 84)
35. यत्पूर्वं विधिना ललाटलिखितं तन्मार्जितुं कः क्षमः। (शार्दूलविक्रीडित)
36. भाग्यानि पूर्वतपसा खलु सञ्चितानि, काले फलन्ति पुरुषस्य यथैव वृक्षाः। (वसन्ततिलका) (97)
37. आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः। (अनुष्टुप्)

नीतिशतकम्

मङ्गलाचरण

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्तये।
स्वानुभूत्येकमानाय नमः शान्ताय तेजसे॥1॥

अन्वय - दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्तये, स्वानुभूत्येकमानाय शान्ताय तेजसे नमः।

शब्द	अर्थ
दिक्	प्राच्यादि दिशायें
काल	भूत, वर्तमान व भविष्य काल
आदि	इत्यादि
अनवच्छिन्न	मापा नहीं जा सकता ऐसे
अनन्त	अन्तरहित
चिन्मात्रमूर्तये	चैतन्यरूप विग्रह वाले
स्वानुभूत्येकमानाय	अपने अनुभव मात्र से ज्ञात होने वाले को
शान्ताय	कल्याणकारक को
तेजसे	ज्योति स्वरूप वाले को
नमः	नमस्कार

अनुवाद - दिशा और काल आदि द्वारा अपरिमेय, अनन्त तथा ज्ञानमय स्वरूप वाले, केवल निजी अनुभव द्वारा जानने योग्य, एवं ज्योतिः स्वरूप ब्रह्म को नमस्कार है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

सन्धि-

➢ दिक्कालादि - दिक्काल + आदि (दीर्घ सन्धि)
➢ अनवच्छिन्नानन्त - अनवच्छिन्न + अनन्त (दीर्घ सन्धि)
➢ दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्त - दिक्कालादि + अनवच्छिन्नानन्त (यण् सन्धि)
➢ चिन्मात्र - चित् + मात्र (अनुनासिकसन्धि)
➢ स्वानुभूतिः - स्व + अनुभूतिः (दीर्घसन्धि)
➢ अनुभूत्येकमानाय - अनुभूति + एकमानाय (यण्सन्धि)

समास -

➢ **दिक्कालाद्यनवच्छिन्न -** दिशश्च कालाश्च इति दिक्कालाः (द्वन्द्व समास)
➢ दिक्कालौ आदी येषां ते, दिक्कालादयः (बहुव्रीहिः)
➢ दिक्कालादिभिः अनवच्छिन्नं, दिक्कालाद्यनवच्छिन्नम् (तृतीया तत्पुरुष)
➢ स्वानुभूत्येकमानाय - स्वस्य अनुभूतिः, (षष्ठी तत्पुरुष) स्वानुभूतिः एव एकं मानं यस्य तत् (बहुव्रीहि समास)

प्रत्यय -

➢ मूर्तिः - मूर्च्छ + क्तिन्
➢ अनुभूतिः - अनु + भू + क्तिन्
➢ मानाय - मान् + ल्युट्
➢ शान्ताय - शम् + क्त
➢ चिन्मात्रम् - चिद् + मात्रच्
➢ अलङ्कार - इस श्लोक में स्वभावोक्ति अलङ्कार है।

कारक -

- तेजसे नमः - 'नमः स्वस्तिस्वाहास्वधालंवषड्योगाच्च' सूत्र से चतुर्थी हुई।
- छन्द - इसमें अनुष्टुप् छन्द है।

छन्द का लक्षण -

श्लोके षष्ठं गुरुज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम्।
द्विचतुः पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः॥

अनुष्टुप् के प्रत्येक चरण में 8 अक्षर होते हैं। इसमें षष्ठ अक्षर सदा गुरु होता है और पञ्चम अक्षर सदा लघु। द्वितीय और चतुर्थ चरण में सप्तम अक्षर लघु होता है और प्रथम तथा तृतीय चरण में गुरु होता है। अन्य अक्षर लघु या गुरु हो सकते हैं।

सम्भावित प्रश्न -

- इस श्लोक में किस प्रकार का मंगलाचरण है? - **नमस्कारात्मक**
- मंगलाचरण में किस देवता की स्तुति की गयी है? - **(ज्योतिः स्वरूप) ब्रह्म की**
- इस श्लोक में कौन-सा छन्द है? - **अनुष्टुप्**
- 'चिन्मात्रम्' शब्द में किस प्रत्यय का प्रयोग हुआ है? - **मात्रच् प्रत्यय**
- 'स्वानुभूत्येकमानाय' में समास बताइये?
  (एकं मानम् एकमानम्) **कर्मधारय** अथवा
  (स्वानुभूतिः एकमानम् मुख्यप्रमाणं यस्य तत्) **बहुव्रीहि समास**

श्लोक -2

बोद्धारो मत्सरग्रस्ताः प्रभवः स्मयदूषिताः।
अबोधोपहताश्चान्ये जीर्णमङ्गे सुभाषितम्॥2

अन्वय - बोद्धारः मत्सरग्रस्ताः, प्रभवः स्मयदूषिताः।अन्ये च अबोधोपहताः, सुभाषितम् अङ्गे जीर्णम्।

शब्द	अर्थ
बोद्धारः	समझने वाले, शिक्षित लोग
मत्सरग्रस्ताः	ईर्ष्या से जकड़े हुए (द्वेष से भरे)
प्रभवः	स्वामी या समर्थ लोग
स्यमयदूषिताः	गर्व से विकृत (घमण्ड से चूर)
अन्ये	दूसरे लोग
च	और
अबोधोपहताः	अज्ञान से नष्ट
सुभाषितम्	सुन्दर वचन
अङ्गे	कहने वाले के मुख में ही
जीर्णम्	जीर्ण हो रहा है

अनुवाद - विशेषज्ञ पण्डितगण द्वेष से ग्रस्त हैं और नृपवर्ग गर्व से चूर हैं। दूसरे लोग तो अज्ञान के मारे हुए हैं। अतः बेचारा सुभाषित मेरे शरीर के भीतर ही बूढ़ा हो गया।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

सन्धि -

- अबोधोपहताः - अबोध + उपहताः (गुणसन्धि)
  चान्ये - च + अन्ये (दीर्घ सन्धि)

समास -

- मत्सरग्रस्ताः - मत्सरेण ग्रस्ता (तृतीया तत्पुरुष)
- स्मयदूषिताः - स्मयेन दूषिताः (तृतीया तत्पुरुष)
- अबोधः - न बोधः अबोधः (नञ् तत्पुरुष)
- अबोधोपहताः - अबोधेन उपहताः (तृतीया तत्पुरुष)

प्रत्यय -

- बोद्धारः - बुध + तृच्
- ग्रस्ताः - ग्रस् + क्त
- दूषिताः - दूष् + णिच् + क्त
- उपहताः - उप + हन् + क्त
- जीर्णः - जृ + क्त
- सुभाषितम् - सु + भाष् + क्त

छन्द - इस श्लोक में अनुष्टुप् छन्द है।

सम्भावित प्रश्न -

- पण्डित जन या विद्वान् लोग किससे ग्रस्त हैं? - **द्वेष से**
- राजा लोग (नृपवर्ग) किससे ग्रसित हैं?- **अहङ्कार (गर्व से)**
- 'मत्सरग्रस्ताः' में कौन-सा समास है? मत्सरेण ग्रस्ताः (तृतीया तत्पुरुष समास)
- 'बोद्धारः' शब्द में प्रकृति प्रत्यय बताइये?- **बुध+तृच्**
- 'प्रभवः' शब्द का क्या अर्थ है? - **स्वामी या समर्थ लोग**
- 'अबोधोपहताश्चान्ये' इसमें 'अन्ये' शब्द किसके लिए आया है? - **सामान्य जनों के लिए (जो अज्ञानी है)**
- 'सुभाषितम्' शब्द में प्रकृति प्रत्यय बताइये? **सु+भाष्+क्त**
- 'उपहता' शब्द में कौन-सी धातु है? **उप+हन्+क्त**
- 'अबोधः' शब्द में कौन-सा समास है?
  (न बोधः अबोधः) **नञ् तत्पुरुषसमास**

श्लोक - 3

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि नरं न रञ्जयति॥3

अन्वय - अज्ञः सुखम् आराध्यः विशेषज्ञः सुखतरम् आराध्यते ज्ञानलवदुर्विदग्धं नरं ब्रह्मा अपि न रञ्जयति।

शब्द	अर्थ
अज्ञः	न जानने वाला व्यक्ति (मूर्ख)
सुखम्	आसानी से
आराध्यः	प्रसन्न या सन्तुष्ट करने योग्य
विशेषज्ञः	विशेष रूप से जानने वाला
सुखतरम्	और अधिक आसानी से
आराध्यते	सन्तुष्ट किया जा सकता है
ब्रह्मा अपि	ब्रह्मा भी
ज्ञानलवदुर्विदग्धम्	अल्पज्ञान से गर्वित
नरम्	मनुष्य को
न रञ्जयति	प्रसन्न नहीं कर सकता

अनुवाद - अज्ञानी मनुष्य आसानी से प्रसन्न किया जा सकता है, विशेषज्ञ तो और भी आसानी से प्रसन्न किया जा सकता है। लेकिन रञ्च ज्ञान के कारण गर्वित मूढजन को ब्रह्मा भी प्रसन्न नहीं कर सकते।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

सन्धि

- ब्रह्मापि - ब्रह्मा+अपि (दीर्घसन्धि)

समास

- अज्ञः - न ज्ञः अज्ञः (नञ् तत्पुरुष)
- विशेषज्ञः - विशेषं जानातीति (उपपद तत्पुरुष)
- ज्ञानलवदुर्विदग्धं - ज्ञानस्य लवः (षष्ठी तत्पुरुष)
- ज्ञानलवेन दुर्विदग्धं (तृतीया तत्पुरुष)

प्रत्यय -

- अज्ञः - ज्ञा+क
- आराध्यः - आ+राध्+ण्यत्
- विशेषज्ञः - विशेष+ज्ञा+क
- दग्धः - दह्+क्त
- ब्रह्मा - बृंह्+मन्
- नरम् - नृ+अच्
- सुखतरम् - सुख+तरप्
- रञ्जयति - रञ्ज्+णिच्+लट् प्रथम पुरुष, एक.

अलङ्कार - इस श्लोक में रंजन का सम्बन्ध होने पर भी असम्बन्ध बताया गया है, इसलिए अतिशयोक्ति अलङ्कार है।

छन्द - इसमें **आर्या** छन्द का प्रयोग किया गया है।

लक्षण -

यस्याः पादे प्रथमे द्वादशमात्रास्तथा तृतीयेऽपि।
अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश साऽऽर्या॥

जिसके प्रथम तथा तृतीय चरण में बारह-बारह मात्रायें हों द्वितीय चरण में अट्ठारह तथा चतुर्थ चरण में पन्द्रह मात्रायें हों, वह आर्या छन्द है।

सम्भावित प्रश्न -

- किसे आसानी से प्रसन्न किया जा सकता है? - **अज्ञानी को**
- अत्यन्त शीघ्र किसे प्रसन्न किया जा सकता है? - **पण्डित को (विशेषज्ञ को)**
- किस प्रकार के मनुष्यों को ब्रह्मा भी नहीं प्रसन्न कर सकते ? - **अल्प ज्ञान के कारण गर्वित मनुष्यों को**
- थोड़े से ज्ञान से अहंकारी जनों को कौन नहीं प्रसन्न कर सकता है? - **ब्रह्मा भी**
- 'ब्रह्मापि' में कौन सन्धि है? - (ब्रह्मा+अपि) **दीर्घ सन्धि**
- 'विशेषज्ञः' में कौन समास है? - (विशेषं जानातीति) **उपपद तत्पुरुष समास**
- 'आराध्यः' मे प्रकृति प्रत्यय बताइये? **आ+राध्+ण्यत्**
- इस श्लोक में कौन-सा छन्द है?- **आर्या**

श्लोक - 4

प्रसह्य मणिमुद्धरेन्मकरवक्त्रदंष्ट्रान्तरा
त्समुद्रमपि संतरेत्प्रचलदूर्मिमालाकुलम्।
भुजङ्गमपि कोपितं शिरसि पुष्पवद्धारये
न्न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तमाराधयेत्॥4

अन्वय - मकरवक्त्रदंष्ट्रान्तरात् प्रसह्य मणिम् उद्धरेत् प्रचलदूर्मिमालाकुलम् समुद्रम् अपि संतरेत्।कोपितम् भुजङ्गमपि शिरसि पुष्पवत् धारयेत् तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तम् न आराधयेत्।

शब्द	अर्थ
मकरवक्त्रदंष्ट्रान्तरात्	मगर के मुख में स्थित दाढ़ो के बीच से
मणिम्	रत्न को
प्रसह्य	बलपूर्वक
उद्धरेत्	निकाल ले
प्रचलत् ऊर्मिमालाकुलम्	चञ्चल लहरों द्वारा विक्षुब्ध
समुद्रम् अपि	समुद्र को भी
सन्तरेत्	पार कर ले
कोपितम्	क्रुद्ध
भुजङ्गम् अपि	सर्प को भी
पुष्पवत्	फूल की तरह
शिरसि	शिर पर
धारयेत्	धारण कर ले

प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तम् हठी मूर्ख व्यक्ति के मन को
न आराधयेत् सन्तुष्ट करने की चेष्टा न करें।

अनुवाद - कोई चाहे तो मगर के मुँह में हाथ डालकर उसके दाँतो के बीच से मणि को जबर्दस्ती खींचकर निकाल सकता है, लहराती तरंगो से उमड़ते समुद्र को हाथों से तैर कर पार कर सकता है, अपने सिर पर क्रोध से जलते हुए साँप को पुष्पमाला की तरह धारण कर सकता है, परन्तु जिद्दी मूर्ख के मन को कोई प्रसन्न नहीं कर सकता।

व्याकरणात्मक टिप्पणी -

सन्धि -

ऊर्मिमालाऽऽकुलम् - ऊर्मिमाला+आकुलम् (दीर्घसन्धि)
पुष्पवद्धारयेत् - पुष्पवत्+धारयेत् (जश्त्वसन्धि)

समास -

मकरवक्त्रम् - मकरस्य वक्त्रम् (षष्ठी तत्पुरुष) मकरवक्त्रदंष्ट्रानाम् अन्तरं मकरवक्त्रदंष्ट्रान्तरं (षष्ठी तत्पु0) प्रचलदूर्मिमालाकुलम् - प्रचलन्त्यः ताः ऊर्मयः च प्रचलदूर्मयः (कर्मधारय), प्रचलदूर्मीनां मालाः प्रचलदूर्मिमालाः (षष्ठीतत्पुरुष) ताभिः मालाभिः आकुलम् (तृतीया तत्पुरुष)

प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तम् - प्रतिनिविष्टः च असौ मूर्खजनः प्रतिनिविष्टमूर्खजनः (कर्मधारय), प्रतिनिविष्टमूर्खजनस्य चित्तम् (षष्ठी तत्पुरुष)

प्रत्यय -

वक्त्र - वच्+त्र
दंष्ट्रा - दंश्+ष्ट्रन्+टाप्
प्रसह्य - प्र+सह् ल्यप्
भुजङ्ग - भुज+गम्+खच्
कोपितम् - कुप्+क्त
पुष्पवत् - पुष्प+वतुप्
प्रतिनिविष्ट - प्रति+नि+विश्+क्त

आराधयेत् - आ + राध् + तिप् (विधिलिङ् प्रथम पु., एक.)

अलङ्कार - इस श्लोक में मणि निकालने आदि का असम्बन्ध होने पर भी सम्बन्ध दिखाया गया है, अतः अतिशयोक्ति अलङ्कार है।

छन्द - इसमें पृथ्वी छन्द का प्रयोग किया गया है।

लक्षण - ''जसौ जसयलावसुग्रहयतिश्च पृथ्वी गुरुः।'' इसके प्रत्येक चरण में 17 अक्षर होते हैं।

प्रत्येक चरण में जगण, सगण, जगण, सगण, यगण, एक लघुवर्ण तथा एक गुरु वर्ण हो उसे पृथ्वी कहते हैं।

सम्भावित प्रश्न -
- किसके मन को प्रसन्न नहीं किया जा सकता? - **मूर्खों के मन को**
- इस श्लोक में कौन-सा अलङ्कार है? - **अतिशयोक्ति**
- प्रतिनिविष्ट में प्रकृति प्रत्यय बताइये? - **प्रति+नि+विश्+क्त**
- इस श्लोक में कौन-सा छन्द है? - **पृथ्वी**
- भुजङ्ग शब्द में कौन-सा प्रत्यय है? - **खच् प्रत्यय**
- पुष्प के समान किसे सिर पर धारण किया जा सकता है? **क्रुद्ध साँप को**
- आराधयेत् में कौन-सा लकार है? **विधिलिङ्**

श्लोक - 5

लभेत सिकतासु तैलमपि यत्नतः पीडयन्
पिबेच्च मृगतृष्णिकासु सलिलं पिपासार्दितः।
कदाचिदपि पर्यटञ्छशविषाणमासादयेत्
न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तमाराधयेत्॥5

अन्वय - यत्नतः पीडयन् सिकतासु अपि तैलम् लभेत पिपासार्दितः मृगतृष्णिकासु सलिलम् पिबेत् पर्यटन् कदाचित् शशविषाणम् अपि आसादयेत् प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तम् तु न आराधयेत्।

शब्द	अर्थ
यत्नतः	प्रयत्न या उपाय से
पीडयन्	दबाता हुआ
सिकतासु अपि	बालू के कणों में भी
तैलम्	तेल को
लभेत	पा लें
पिपासार्दितः	प्यास से सताया हुआ
मृगतृष्णिकासु	मृगमरीचिकाओं में
सलिलम्	पानी को
पिबेत्	पी लें
पर्यटन्	घूमता हुआ
कदाचित्	कभी भी
शशविषाणम्	खरगोश के सींग को
आसादयेत्	पा लें
प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तम्-दुराग्रही	मूर्ख के चित्त को

न आराधयेत् सन्तुष्ट करने की चेष्टा न करें।

अनुवाद - मनुष्य परिश्रम करके बालू से भी तेल निकाल सकता है। प्यास से पीड़ित होकर मृगमरीचिका में भी पानी पी सकता है, कभी इधर-उधर घूमते हुए खरगोश के सींग को भी प्राप्त कर सकता है, किन्तु दुराग्रही मूर्खों के मन को प्रसन्न करने के लिए कभी भी यत्न नहीं करना चाहिए क्योंकि वे कभी भी प्रसन्न नहीं हो सकते।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

सन्धि -

पिबेच्च - पिबेत्+च (व्यञ्जन सन्धि)
पिपासार्दितः - पिपासा+अर्दितः (दीर्घसन्धि)
पर्यटञ्छशविषाणम् - पर्यटन्+शशविषाणम् (व्यञ्जन)

समास

मृगतृष्णिकासु - मृगाणां तृष्णा मृगतृष्णा (षष्ठी तत्पुरुष)
शशविषाणम् - शशस्य विषाणम् **(षष्ठी तत्पुरुष)**
पिपासार्दितः - पिपासया अर्दितः **(तृतीया तत्पुरुष)**

प्रत्यय -

यत्नतः	- यत्न	+ तसिल्	
पीडयन्	- पीड्	+ णिच्	+ शतृ
तैलम्	- तिल	+ अण्	
पिपासा	- पा	+ सन्	+ अ + टाप्
अर्दितः	- अर्द्	+ क्त	
पर्यटन्	- परि	+ अट्	+ शतृ

छन्द- इस श्लोक में पृथ्वी छन्द का प्रयोग किया गया है।

अलङ्कार- इस श्लोक में अतिशयोक्ति अलङ्कार है।

सम्भावित प्रश्न-
- मृगतृष्णिकासु शब्द में समास बताइये ?
  मृगाणां तृष्णा मृगतृष्णा (षष्ठी तत्पुरुष)
  मृगाणां तृष्णा अस्याम् **(बहुव्रीहि समास)**
- किसके मन को प्रसन्न करना असम्भव है? **मूर्खों के मन को**
- इस श्लोक में कौन-सा छन्द है? **पृथ्वी**
- इस श्लोक में कौन-सा अलङ्कार है? - **अतिशयोक्ति**
- अर्दितः शब्द में कौन-सा प्रत्यय है? - **अर्द्+क्त (प्रत्यय)**

श्लोक - 6

व्यालं बालमृणालतन्तुभिरसौ रोद्धुं समुज्जृम्भते
भेत्तुं वज्रमणिं शिरीषकुसुमप्रान्तेन सन्नह्यते।
माधुर्यं मधुबिन्दुना रचयितुं क्षाराम्बुधेरीहते
मूर्खान्यः प्रतिनेतुमिच्छति बलात्सूक्तैः सुधास्यन्दिभिः॥6

अन्वय - यः मूर्खान् बलात् सुधास्यन्दिभिः सूक्तैः प्रतिनेतुम् इच्छति असौ बालमृणालतन्तुभिः व्यालं रोद्धुं सन्नह्यते मधुबिन्दुना क्षाराम्बुधेः माधुर्यं रचयितुम् ईहते।

शब्द	अर्थ
यः	जो
बलात्	बलपूर्वक (हठपूर्वक)
सुधास्यन्दिभिः	अमृत टपकाने वाले
सूक्तैः	सुन्दर वचनों से
प्रतिनेतुम्	बहलाने या मनोरञ्जन करने के लिए
बालमृणालतन्तुभिः	कोमल कमलनाल के सूत्रों से
व्यालम्	मतवाला हाथी

रोद्धुम्	रोकने या बाँधने के लिए
समुज्जृम्भते	अभ्यास करता है
शिरीषकुसुमप्रान्तेन	कोमल शिरीष फूल के छोर से
वज्रमणिम्	हीरे को
भेत्तुम्	काटने का
सन्नह्यते	प्रयास करता है
मधुबिन्दुना	मधु की बूँद से
क्षाराम्बुधेः	खारे समुद्र के
माधुर्यम्	मिठास को
रचयितुम्	बनाना
ईहते	चाहता है

अनुवाद - जो अपनी अमृतवर्षिणी सूक्तियों द्वारा मूर्खों को बलात् प्रसन्न करना चाहता है, वह कोमल कमल नाल के तन्तु से मदमत्त हाथी को बाँधना चाहता है, शिरीष पुष्प के किनारे से वज्रमणि हीरे को काटना चाहता है और खारे समुद्र को दो-एक बूँद मधु डालकर मीठा बनाने की चेष्टा करता है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

सन्धि -

तन्तुभिरसौ - तन्तुभिः+असौ (विसर्ग सन्धि)

क्षाराम्बुधेरीहते- क्षार+अम्बुधेः (दीर्घ सन्धि) + ईहते (विसर्ग सन्धि)

समास -

सुधास्यन्दिभिः - सुधां स्यन्दन्ते तच्छीलानि सुधास्यन्दीनि तैः (तृतीया तत्पुरुष)

सूक्तैः - शोभनानि उक्तानि इति सूक्तानि (प्रादि तत्पुरुषसमास)

बालमृणालतन्तुभिः - बालं च तत् मृणालम् (कर्मधारय) तस्य तन्तवः तैः (षष्ठी तत्पुरुष)

शिरीषकुसुमप्रान्तेन - शिरीषकुसुमस्य प्रान्तः शिरीषकुसुमप्रान्तः तेन (तृतीया तत्पुरुष) शिरीषस्य कुसुमम् (षष्ठी तत्पुरुष) शिरीषं चेदं कुसुमम् (कर्मधारय समास)

मधुबिन्दुना - मधुनः बिन्दुः (षष्ठी तत्पुरुष)

क्षाराम्बुधेः - क्षारः चासौ अम्बुधिः (कर्मधारय)

प्रत्यय

सुधास्यन्दिभिः	- सुधा+स्यन्द्+णिनि+भिस्
प्रतिनेतुम्	- प्रति+नी+तुमुन्
रोद्धुम्	- रुध्+तुमुन्
रचयितुम्	- रच्+तुमुन्
माधुर्य	- मधुर+ष्यञ्

कारक -

बलात् - हेतौ से पञ्चमी

छन्द - शार्दूलविक्रीडित

अलङ्कार - मालानिदर्शन

लक्षण - 'सूर्याश्वैर्मसजस्तताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्'
इसके प्रत्येक चरण में 19 अक्षर होते हैं। तथा प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, सगण, जगण, सगण, तगण, तगण तथा एक गुरु वर्ण आयें उसे शार्दूलविक्रीडित कहते हैं। (12 तथा 7 अक्षरों पर यति)

- 'प्रतिनेतुम्' शब्द में प्रकृति प्रत्यय बताइये? - **प्रति+नी+तुमुन्**
- 'व्यालम्' शब्द का क्या अर्थ है? - **मतवाला हाथी**
- 'वज्रमणिम्' शब्द में समास बताइये? - **वज्रः मणिः (कर्मधारय समास)**
- इस श्लोक में कौन-सा छन्द है? - **शार्दूलविक्रीडित**

श्लोक - 7

स्वायत्तमेकान्तहितं विधात्रा विनिर्मितं छादनमज्ञतायाः।
विशेषतः सर्वविदां समाजे विभूषणं मौनमपण्डितानाम्॥7

अन्वय- विधात्रा अपण्डितानां स्वायत्तम् एकान्तहितं मौनम् अज्ञतायाः छादनं विनिर्मितम्। सर्वविदां समाजे विशेषतः विभूषणं भवति।

शब्द	अर्थ
विधात्रा	ब्रह्मा ने
अपण्डितानाम्	मूर्खों का
स्वायत्तम्	अपने अधीन
एकान्तहितम्	अत्यन्त हितकारी
मौनम्	मौन को
अज्ञतायाः	मूर्खता का
छादनम्	आवरण
विनिर्मितम्	बनाया है
सर्वविदाम्	सब कुछ जानने वाले
समाजे	समाज में
विशेषतः	अधिक करके
विभूषणम्	आभूषण

अनुवाद - विधाता ने मूर्खों के अपने हाथ में रहने वाले और अत्यन्त हितकारी मौन को मूर्खता को छिपाने का आवरण बनाया है, जो विद्वानों की सभा में विशेष रूप से आभूषण हो जाता है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

समास -

अपण्डितानाम् - नः पण्डिताः अपण्डिताः (नञ् तत्पुरुष समास)

स्वायत्तम् - स्वस्य आयत्तम् (षष्ठी तत्पुरुष)

एकान्तहितम् - एकः एव अन्तो यस्य (बहुव्रीहिसमास), एकान्तं हितम् इति एकान्तहितम् (सुप्सुपासमास)

सर्वविदाम् - सर्वं विदन्तीति सर्वविदः (नित्यसमास)

प्रत्यय -

विधात्रा	- वि	+ धा	+ तृच्	
छादनम्	- छद्	+ णि	+ ल्युट्	
विनिर्मितम्	- वि	+ निर्	+ मा	+ क्त
विभूषणम्	- वि	+ भूष्	+ ल्युट्	
सर्वविदाम्	- सर्व	+ विद्	+ क्विप्	
विशेषः	- वि	+ शिष्	+ घञ्	
समाजे	- सम्	+ अज्	+ घञ्	
मौनम्	- मुनि	+ अण्		
हितम्	- धा	+ क्त		
विशेषतः	- विशेष	+ तसिल्		

छन्द - उपजाति छन्द है

सम्भावित प्रश्न -

➢ विद्वानों की सभा में मूर्खों के लिए किसे आभूषण सदृश कहा गया है? - **मौन को**

➢ विधाता शब्द में कौन-सा प्रत्यय है? - **वि+धा+तृच्**

➢ छादनम् शब्द का प्रकृति प्रत्यय बताइये? - **छद्+णिच्+ल्युट्**

➢ पण्डित शब्द में कौन-सा प्रत्यय है? **- इतच्**

➢ मूर्खों के लिए किसे आवरण के समान बताया गया है? **मौन को**

➢ एकान्तहितम् शब्द में कौन समास है? एकान्तं हितम् इति एकान्तहितम् -**सुप्सुपासमास**

➢ इस श्लोक में कौन-सा छन्द है? - **उपजाति**

श्लोक - 8

यदा किञ्चिज्ज्ञोऽहं गज इव मदान्धः समभवं
तदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदवलिप्तं मम मनः।
यदा किञ्चित्किञ्चिद् बुधजनसकाशादवगतं
तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः॥8

अन्वय - यदा अहम् किञ्चिज्ज्ञः गज इव मदान्धः समभवम् तदा सर्वज्ञः अस्मि इति मम मनः अवलिप्तम् यदा बुधजनसकाशात् किञ्चित् किञ्चित् अवगतम् तदा मूर्खः अस्मि इति मे मदः ज्वर इव व्यपगतः।

शब्द	अर्थ
यदा	जब
अहम्	मैं
किञ्चिज्ज्ञः	थोड़ा-सा जानने वाला
गज इव	हाथी की तरह
मदान्धः	मद से अंधा
समभवम्	हो गया था
तदा	तब
सर्वज्ञः	सब कुछ जानने वाला
अस्मि	हूँ
इति	इस प्रकार
मम	मेरा
मनः	मन
अवलिप्तम्	गर्व से युक्त
बुधजनसकाशात्	विद्वानों की संगति से
किञ्चित् किञ्चित्	थोड़ा-थोड़ा
अवगतम्	सीखा
मदः	घमण्ड
ज्वर इव	ज्वर की तरह
व्यपगतः	दूर हो गया

अनुवाद - जब मैं अल्पज्ञ होकर भी मतवाले हाथी के जैसा मदान्ध हो गया तब यह समझकर कि मैं सर्वज्ञ हूँ - सब कुछ जानता हूँ, मेरा मन आकाश पर चढ़ गया। जब मैं पण्डितों की संगति से थोड़ा-थोड़ा जानने लगा तब मैं अपने को मूर्ख समझने लगा और तब मेरा गर्व ज्वर के जैसा धीरे-धीरे हटने लगा।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

सन्धि -

मदान्धः - मद+अन्धः (दीर्घसन्धि)

सर्वज्ञोऽस्मि- सर्वज्ञः+अस्मि (विसर्गसन्धि)

ज्वर इव - ज्वरः+इव (विसर्ग सन्धि)

समास -

किञ्चिज्ज्ञः - किञ्चित् जानाति इति किञ्चिज्ज्ञः (नित्यसमास)

सर्वज्ञः - सर्वं जानाति इति सर्वज्ञः (नित्यसमास)

सर्वेषां ज्ञः सर्वज्ञः (षष्ठी तत्पुरुष)

मदान्धः - मदेन अन्धः (तृतीयातत्पुरुष)

बुधजनसकाशात् - बुध एव जनः (मयूरव्यंसकादि)

तस्य सकाशम् (षष्ठी तत्पुरुष)

बुधाः च ते जनाः बुधजनाः तेषां सकाशात् (षष्ठीतत्पुरुष)

प्रत्यय -

किञ्चिज्ज्ञः - ज्ञा+क
सर्वज्ञः - सर्व+ज्ञा+क
अवलिप्तम् - अव+लिप्+क्त
अवगतम् - अव+गम्+क्त
व्यपगतः - वि+अप्+गम्+क्त

छन्द - इस श्लोक में शिखरिणी छन्द है।

लक्षण - रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी।
इसके प्रत्येक चरण में 17 अक्षर होते हैं। 6 तथा 11 अक्षरों पर यति होती है। क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण, भगण, एक लघु तथा एक गुरु वर्ण होता है।

सम्भावित प्रश्न -

➢ 'मदान्धः' शब्द में सन्धि एवं समास बताइये?
मद+अन्धः **(दीर्घ सन्धि)**
मदेन अन्धः **(तृतीया तत्पुरुष)**

➢ 'सर्वज्ञ' शब्द में समास बताइये?
सर्वं जानातीति सर्वज्ञः **(नित्यसमास)** अथवा
सर्वेषां ज्ञः सर्वज्ञः **(षष्ठी तत्पुरुष)**

➢ व्यपगतः शब्द में प्रकृति प्रत्यय बताइये? **वि+अप्+गम्+क्त**

➢ इस श्लोक में कौन-सा छन्द है? **शिखरिणी**

श्लोक -9

कृमिकुलचितं लालाक्लिन्नं विगन्धि जुगुप्सितं
निरुपमरसप्रीत्या खादन्खरास्थि निरामिषम्।
सुरपतिमपि श्वा पार्श्वस्थं विलोक्य न शङ्कते
न हि गणयति क्षुद्रो जन्तुः परिग्रहफल्गुताम्॥9॥

अन्वय- श्वा कृमिकुलचितम् लालाक्लिन्नम् विगन्धि जुगुप्सितम् निरामिषम् खरास्थि निरुपमरसप्रीत्या खादन् पार्श्वस्थम् सुरपतिम् अपि विलोक्य न शङ्कते। क्षुद्रः जन्तुः परिग्रहफल्गुताम् न गणयति।

शब्द	अर्थ
श्वा	कुत्ता
कृमिकुलचितम्	कीड़ों से भरी हुई
लालाक्लिन्नम्	लार से भीगी
विगन्धि	दुर्गन्ध से युक्त
जुगुप्सितम्	निन्दित
निरामिषम्	मांसरहित
खरास्थि	गदहे की हड्डी
निरुपमरसप्रीत्या	अनुपम रस के प्रेम से
खादन्	खाता हुआ
पार्श्वस्थम्	पास में खड़े हुए को
सुरपति	इन्द्र
विलोक्य	देखकर
न शङ्कते	लज्जा नहीं करता है
क्षुद्रो जन्तुः	नीचप्राणी
परिग्रहफल्गुताम्	स्वीकृत की गयी वस्तु की तुच्छता को
न गणयति	विचार नहीं करता

अनुवाद - कुत्ता कीड़ों से भरी, लार से भीगी, दुर्गन्धमय, हेय निर्मांस, गदहे की हड्डी को बड़े चाव से चबाता हुआ अपने पास खड़े हुए इन्द्र को भी देख कर नहीं लजाता, परवाह नहीं करता। नीच, अपनाई हुई वस्तु की तुच्छता की परवाह नहीं करता - स्वगृहीत वस्तु की क्षुद्रता पर ध्यान नहीं देता।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

समास -

कृमिकुलचितम् - कृमीणां कुलानि (षष्ठी तत्पुरुष) तैः चितम् (तृतीया तत्पुरुष)

लालाक्लिन्नम् - लालया क्लिन्नम् (तृतीया तत्पुरुष)

विगन्धि - विगतः गन्धः यस्य तत् (बहुव्रीहि)

निरामिषम् - निर्गतम् आमिषं यस्मात् (बहुव्रीहि)

खरास्थि - खरस्य अस्थि (षष्ठी तत्पुरुष)

निरुपमरसप्रीत्या - निः नास्ति उपमा यस्य स निरुपमः (प्रादिबहुव्रीहि समास) निरुपमः (कर्मधारय समास) निरुपमरसे प्रीतिः (सप्तमी तत्पुरुष)

सुरपतिम् - सुराणां पतिः सुरपतिः (षष्ठी तत्पुरुष)

परिग्रहफल्गुताम् - परिग्रहस्य फल्गुता (षष्ठी तत्पुरुष)

प्रत्यय -

श्वा - श्वि+कनिन्
चितम् - चि+क्त
क्लिन्नम् - क्लिद्+क्त
जुगुप्सितम् - जु+गुप्+क्त
पार्श्वस्थम् - पार्श्व+स्था+क
विलोक्य - वि+लुकि+ल्यप्
खादन् - खाद्+शतृ
छन्द - हरिणी

लक्षण - ''नसमरसलागः षड्वेदैर्हयैर्हरिणी मता'' हरिणी के प्रत्येक चरण में नगण, सगण, मगण, रगण, सगण, लघु तथा गुरु होते हैं। छठे, दसवें तथा अन्त में विराम होता है।

अलङ्कार - इस श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा एवम् अन्तिम चरण में अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है। इनके एक साथ होने से इसमें सङ्कर अलङ्कार भी है।

सम्भावित प्रश्न -

- अपनाई गई वस्तु की तुच्छता पर कौन ध्यान नहीं देता? **नीच व्यक्ति**
- सुरपति शब्द किसके लिए आया है? - **इन्द्र के लिए**
- निरामिष शब्द का क्या अर्थ है? - **मांसरहित**
- विगन्धि शब्द में समास बताइये? विगतः गन्धः यस्य तत् **(बहुव्रीहिसमास)**
- विलोक्य में कौन-सा प्रत्यय प्रयुक्त हुआ है? **वि + लुकि + ल्यप्**
- इस श्लोक में कौन-सा छन्द है? **हरिणी**

श्लोक - 10

शिरः शार्वं स्वर्गात्पशुपतिशिरस्तः क्षितिधरम्
महीध्रादुत्तुङ्गादवनिमवनेश्चापि जलधिम्।
अधोऽधो गङ्गेयं पदमुपगता स्तोकमथवा
विवेकभ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः॥10

अन्वय - इयम् गङ्गा स्वर्गात् शार्वम् शिरः पशुपतिशिरस्तः क्षितिधरम् उत्तुंगात् महीध्रात् अवनिम् अवनेः च अपि जलधिम् अधोऽधः स्तोकम् पदम् उपगता अथवा विवेकभ्रष्टानाम् विनिपातः शतमुखः भवति।

शब्द	अर्थ
इयम्	यह
गङ्गा	गङ्गा
स्वर्गात्	स्वर्ग से
शार्वम्	शिव जी के
शिरः	शिर पर
पशुपतिशिरस्तः	शिव जी के मस्तक से
क्षितिधरम्	हिमालय पर्वत पर
उत्तुङ्गात्	ऊँचे
महीध्रात्	पर्वत से
अवनिम्	पृथ्वी को
अवनेः	पृथ्वी से
जलधिम्	समुद्र को
अधोऽधः	नीचे नीचे
स्तोकम्	तुच्छ
पदम्	पद को
उपगता	पहुँचकर
अथवा	क्योंकि
विवेकभ्रष्टानाम्	भ्रष्ट विचार वालों का
शतमुखः	सैकड़ों प्रकार से
विनिपातः	पतन
भवति	होता है

अनुवाद - गङ्गा स्वर्ग से शिव के मस्तक पर गिरीं। शिव के मस्तक से हिमालय पहाड़ पर, हिमालय से पृथ्वी पर और पृथ्वी पर से गिरकर समुद्र में जा मिलीं। इस तरह यह नीचे से नीचे गिरती गई।

(वास्तव में बात यह है कि) जिनका विवेक भ्रष्ट हो गया है उनका पतन सैकड़ों प्रकार से होता है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

सन्धि -

महीध्रादुत्तुङ्गात् - महीध्रात्+उत्तुङ्गात्+अवनिम् (व्यञ्जन सन्धि)
अवनेश्च - अवनेः+च (विसर्ग सन्धि)
चापि - च+अपि (दीर्घ सन्धि)
अधोऽधः - अधः+अधः (विसर्गसन्धि, पूर्वरूपसन्धि)
गङ्गेयम् - गङ्गा+इयम् (गुणसन्धि)

समास -

शार्वम् - शर्वस्य इदम् (षष्ठी तत्पुरुष)
पशुपतिशिरस्तः - पशूनाम् पतिः पशुपतिः (षष्ठी तत्पुरुष)
पशुपतेः शिरः पशुपतिशिरः (षष्ठी तत्पुरुष)
क्षितिधरम् - क्षितेः धरः क्षितिधरः (षष्ठी तत्पुरुष)
विवेकभ्रष्टानाम् - विवेकात् भ्रष्टाः विवेकभ्रष्टाः (पञ्चमी तत्पुरुष)
भ्रष्टः विवेकः येषां ते भ्रष्टविवेकाः वा विवेकभ्रष्टाः (बहुव्रीहि समास)
शतमुखः - शतं मुखानि यस्य सः (बहुव्रीहि समास)

प्रत्यय -

गङ्गा - गम्+गन्+टाप्
क्षितिधरः - धृ+अच्
जलधिः - जल+धा+कि
उपगता - उप+गम्+क्त
भ्रष्टः - भ्रंश्+क्त
विवेकः - वि+विच्+घञ्
शिरस्तः - शिरः+तसिल्
विनिपातः - वि+नि+पत्+घञ्
शार्वम् - शर्व+अण्

छन्द - शिखरिणी

अलङ्कार - इस श्लोक में पर्याय और अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है।

सम्भावितप्रश्न -

- गङ्गा सर्वप्रथम स्वर्ग से कहाँ गिरी? -**शिव के मस्तक पर**
- समुद्र में मिलने से पहले गङ्गा कहाँ गिरी थी? **पृथ्वी पर**
- गङ्गा के अवतरित होने का सही क्रम है -
  स्वर्ग - शिव के मस्तक पर - हिमालय - पृथ्वी - समुद्र
- विवेक भ्रष्ट मनुष्यों का पतन कितने प्रकार से होता है? - **सैकड़ों प्रकार से**
- 'गङ्गेयम्' शब्द में कौन-सी सन्धि है? - गङ्गा+इयम् **(गुणसन्धि)**
- 'शतमुखः' में कौन-सा समास है? - शतं मुखानि यस्य सः **(बहुव्रीहि समास)**
- इस श्लोक में कौन-सा छन्द है? - **शिखरिणी**
- 'पशुपति' शब्द किसके लिए आया है? - **शिव के लिए**

नोट- परीक्षार्थी इसी प्रकार सभी श्लोकों के नोट्स बनायें।

प्रमुख गद्यकाव्य

महाकवि बाणभट्ट का परिचय

बाणभट्ट का वंशवृक्ष

वत्स
।
कुबेर
(कर्मकाण्डी श्रुतिशास्त्र सम्पन्न ब्राह्मण)
।
पाशुपत
।
अर्थपति (इनके 11 पुत्र हुए)
।
चित्रभानु
।
बाणभट्ट
।
भूषणभट्ट (पुलिन्दभट्ट, पुलिनभट्ट)

- **निवास** – शोण (सोन) नदी के पास 'प्रीतिकूट' नामक ग्राम। (वर्तमान में शाहाबाद, आरा, बिहार।)
- **राज्याश्रय** – सम्राट् हर्ष के सभापण्डित
- **पितामह** – अर्थपति
- **पिता** – चित्रभानु
- **माता** – राजदेवी
- **गुरु -** भर्वु या भर्त्सु
- **पत्नी** – कवि मयूरभट्ट की बहन
- **पुत्र** - भूषणभट्ट (पुलिन या पुलिन्दभट्ट)
- **बहन** – मालती
- **बाण के दो भाई** – चित्रसेन और मित्रसेन
- बाण ने स्वयं हर्षचरितम् के प्रथम दो उच्छ्वासों तथा कादम्बरी की प्रस्तावना के पद्यों में अपना परिचय दिया है।
- **वंश/गोत्र** – वात्स्यायन / वत्स वंश (ब्राह्मण)
- **उपासक** – शिव (शैव)
- **बाण की रीति** – पाञ्चाली
- बाल्यावस्था में ही बाण की माता का स्वर्गवास।
- 14 वर्ष की आयु में बाण के पिता का भी स्वर्गवास।
- राजा हर्ष ने इन्हें **''महानयं भुजङ्गः''** (बहुत चरित्रभ्रष्ट) कहा।
- **हर्ष का राज्याभिषेक** अक्टूबर 606 ई. में हुआ, और उनकी मृत्यु 648 ई. में हुई।
- **ह्वेनसांग** ने 629 से 645 ई. तक भारत भ्रमण किया था और वह हर्ष के निकट सम्पर्क में भी आया था।
- **बाण का समय** – सातवीं शताब्दी ई. का पूर्वार्द्ध
- **बाणभट्ट का विवाह** महाकवि मयूर भट्ट (सूर्यशतकम्) की बहन से हुआ था।

➢ **बाण की रचनायें**– 1. कादम्बरी (कथा), 2. हर्षचरितम् (आख्यायिका), 3. चण्डीशतकम् (मुक्तक), 4.मुकुटताडितक (नाटक), 5. पार्वतीपरिणय (नाटक)

➢ हर्षवर्धन के चचेरे भाई कृष्ण के निमन्त्रण पर बाणभट्ट हर्ष के राजदरबार में पहुँचे।

➢ **उपाधियाँ/कथन**

उपाधि/कथन		वक्ता
वश्यवाणी कविचक्रवर्ती	–	हर्षवर्धन
बाणस्तु पञ्चाननः	–	श्रीचन्द्रदेव
पञ्चबाणस्तु बाणः	–	जयदेव
कविताकामिनीकौतुक	–	जयदेव
गद्यसम्राट्	–	बलदेव उपाध्याय
वाणी बाणो बभूव	–	गोवर्धनाचार्य
कवितातरुगहनविहरणमयूरः	–	वामनभट्टबाण
कविताकाननकेसरी	–	चन्द्रदेव
तुरङ्गबाण	–	आलोचक
बाणः कवीनामिह चक्रवर्ती	–	सोड्ढल
महानयं भुजङ्गः	–	हर्षवर्धन
गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति	–	आलोचक
बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्	–	समालोचक
भट्टबाणस्य भारतीम्	–	गङ्गादेवी
वाणी बाणस्य मधुरशीलस्य	–	धर्मदास

➢ **हर्ष के दरबार में दो अन्य विद्वान्**– (i) मातङ्गदिवाकर, (ii) मयूरभट्ट

महाकवि बाणभट्ट विषयक प्रशस्तियाँ

1. युक्तं कादम्बरीं श्रुत्वा कवयो मौनमाश्रिताः।
बाणध्वनावनध्यायो भवतीति स्मृतिर्यतः।।
सोमेश्वर – कीर्तिकौमुदी

2. रुचिरस्वरवर्णपदा रसभाववती जगन्मनो हरति।
सा किं तरुणी? **नहि नहि वाणी बाणस्य मधुरशीलस्य।।**
– विदग्धमुखमण्डन - धर्मदास

3. जाता शिखण्डिनी प्राक् यथा शिखण्डी तथावगच्छामि।
प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं **वाणी बाणो बभूव ह**।।
– गोवर्धनाचार्य

4. श्लेषे केचन शब्दगुम्फविषये केचिद्रसे चापरे-
ऽलंकारे कतिचित्सदर्थविषये चान्ये कथावर्णने।
आः सर्वत्र गभीरधीरकविताविन्ध्याटवी चातुरी-
सञ्चारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरो **बाणस्तु पञ्चाननः।।**
– चन्द्रदेव

5. **बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्।** **– अज्ञात**

6. वागीश्वरं हन्त भजेऽभिनन्दमर्थेश्वरं वाक्पतिराजमीडे।
रसेश्वरं स्तौमि च कालिदासं **बाणं तु सर्वेश्वरमानतोऽस्मि।।**
– सोड्ढल (उदयसुन्दरी)

7. हृदि लग्नेन बाणेन यन्मन्दोऽपि पदक्रमः।
भवेत्कविकुरङ्गाणां चापलं तत्र कारणम्।। **– त्रिलोचन**

8. शश्वद्बाणद्वितीयेन नमदाकारधारिणा।
धनुषेव गुणाढ्येन निःशेषो रञ्जितो जनः।। **– त्रिविक्रमभट्ट।**

9. यस्याश्चौरः चिकुरनिकुरः कर्णपूरो मयूरः।
भासो हासः कविकुलगुरुः कालिदासो विलासः।।
हर्षो हर्षः हृदयवसतिः **पञ्चबाणस्तु बाणः।**
केषां नैषा कथय कविताकामिनी कौतुकाय।।
– जयदेव - प्रसन्नराघव

10. केवलोऽपि स्फुरन् बाणः करोति विमदान् कवीन्।
किं पुनः क्लृप्तसन्धानः पुलिन्ध्रकृतसन्निधिः।।
– धनपाल - तिलकमञ्जरी

11. वाणीपाणिपरामृष्टवीणानिक्वाणहारिणीम्।
भावयन्ति कथं वान्ये भट्टबाणस्य भारतीम्।। **– गङ्गादेवी**

12. सुबन्धुर्बाणभट्टश्च कविराज इति त्रयः।
वक्रोक्तिमार्गनिपुणाश्चतुर्थो विद्यते न वा।।
– कविराज - राघवपाण्डवीय

13. दण्डिन्युपस्थिते सद्यः कवीनां कम्पितं मनः।
प्रविष्टे त्वन्तरे बाणे कण्ठे वागेव रुध्यते।। **– हरिहर**

14. कादम्बरीसहोदर्या सुधया वै बुधे हृदि।
हर्षाख्यायिकया ख्यातिं बाणोऽब्धिरिव लब्धवान्।।
– धनपाल (तिलकमञ्जरी)

15. शब्दार्थयोः समो गुम्फः पाञ्चालीरीतिरुच्यते।
शिलाभट्टारिका वाचि बाणोक्तिषु च सा यदि।।
– भोज - सरस्वतीकण्ठाभरण

16. प्रतिकविभेदनबाणः **कवितातरुगहनविहरणमयूरः।**
सहृदयलोकसुबन्धुर्जयति श्रीभट्टबाणकविराजः– **वामनभट्टबाण**

17. बाणस्य हर्षचरिते निशितामुदीक्ष्य।
शक्तिं न केऽत्र कवितास्त्रमदं त्यजन्ति।। **– सोड्ढल**

18. सहर्षचरितारब्धाद्दद्भुतकादम्बरी कथा।
बाणस्य गण्यनार्येव स्वच्छन्दा भ्रमति क्षितौ।। **– राजशेखर**

19. परिशीलितैव सरसं कविराजैर्बहुभिरत्र वाग्देवी।
बाणेन तु वैजात्यात्कथयति नामैव वाणीति।।
– विश्वेश्वर पाण्डेय

20. कादम्बरीरसभरेण समस्त एव।
मत्तो न किञ्चिदपि चेतयते जनोऽयम्।। **– भूषणभट्ट**

21. कादम्बरीरसज्ञानामाहारोऽपि न रोचते। **– अज्ञात**

22. नृत्यति यद्रसनायां वेधोन्मुखलासिका वाणी।
– पार्वतीपरिणय

23. द्विजेन तेनाक्षतकण्ठकौण्ठ्यया महामनोमोहमलीमसान्धया।
अलब्धवैदग्ध्यविलासमुग्धया धिया निबद्धेयमतिद्वयी कथा।।
– कादम्बरी कथामुख

24. ''यादृग् गद्यविधौ बाणः पद्यबन्धेऽपि तादृशः'' **– भोजराज**

कादम्बरी

- **लेखक** – बाणभट्ट
- **काव्यविधा** – कथा
- **दो खण्ड** – (i) पूर्वार्द्ध (ii) उत्तरार्द्ध
- **प्रधानरस** – शृङ्गाररस
- **उपजीव्य** – गुणाढ्य की 'बृहत्कथा'
- **नायक** – चन्द्रापीड (शूद्रक)
- **नायिका** – कादम्बरी
- **सहनायक** – वैशम्पायन (पुण्डरीक)
- **सहनायिका** – महाश्वेता
- **वैशिष्ट्य** – तीन जन्मों की कथा
- **प्रमुखपात्र** – चन्द्रापीड, कादम्बरी, पुण्डरीक, महाश्वेता, शूद्रक, तारापीड, विलासवती, शुकनास, मनोरमा, वैशम्पायन, इन्द्रायुध (घोड़ा), पत्रलेखा (दासी), जाबालि, हारीत, चाण्डालकन्या, शबर, कपिञ्जल, शुक, हंस, चित्ररथ
- कादम्बरी उत्तरार्ध की रचना बाण के पुत्र **भूषणभट्ट** (भूषणबाण/पुलिन्द/पुलिनभट्ट/पुलिन्ध्र) ने की।
- **कादम्बरी की रीति** – पाञ्चाली
- **कादम्बरी में अलङ्कार** – विरोधाभास, श्लेष, परिसंख्या, अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा।
- **कादम्बरी के प्रमुखवर्णन–**
  शूद्रकवर्णन, शुकवर्णन, चाण्डालकन्यावर्णन, विन्ध्याटवीवर्णन, शबरसैन्यवर्णन, शाल्मलीवृक्षवर्णन जाबाल्याश्रमवर्णन, जाबालिवर्णन, उज्जयिनीवर्णन, तारापीडवर्णन, इन्द्रायुधवर्णन, अच्छोदसरोवरवर्णन, महाश्वेतावर्णन, कादम्बरीवर्णन आदि।

कादम्बरी का मङ्गलाचरण

रजोजुषे जन्मनि सत्त्ववृत्तये
स्थितौ प्रजानां प्रलये तमःस्पृशे।
अजाय सर्गस्थितिनाशहेतवे
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नमः॥ 1 ॥

भावार्थ- प्रजाओं की सृष्टि करने में रजोगुण का सेवन करने वाले, पालन करने में सत्त्वगुण को धारण करने वाले, नाश करने में तमोगुण का स्पर्श करने वाले, सृष्टि, स्थिति तथा प्रलय के कारणभूत वेदों के स्वरूप तथा तीनों गुणों (सत्त्व, रज और तम) से युक्त ब्रह्म को नमस्कार है।

☆ 'कादम्बरी' में नमस्कारात्मक मङ्गलाचरण का प्रयोग है।

☆ प्रस्तुत पद्य में निराकार ब्रह्म की स्तुति की गयी है।

☆ अनुप्रास एवं यथासंख्या अलङ्कार का प्रयोग है।

☆ बाणभट्ट ने कादम्बरी के मङ्गलाचरण के रूप में 20 पद्यों में कविवंश-वर्णन, सज्जन-प्रशंसा, दुर्जन-निन्दा आदि का वर्णन किया है।

☆ मङ्गलाचरण रूपी बीसों पद्यों में वंशस्थ छन्द का प्रयोग किया गया है।

☆ मङ्गलाचरण के द्वितीय पद्य में भगवान् शङ्कर के चरणधूलियों की वन्दना की गयी है।

☆ तीसरे श्लोक में बाणभट्ट ने अपने गुरु 'भर्वु' (भर्त्सु) को नमस्कार किया है।

☆ पाँचवे श्लोक में दुर्जनों की निन्दा है।

☆ छठे और सातवें पद्य में दुर्जन और सज्जन में अन्तर स्पष्ट किया है।

☆ आठवें तथा नौवें श्लोक में कथा-प्रशंसा है।

☆ दसवें से उन्नीसवें श्लोक तक कविवंश-वर्णन है।

☆ बीसवें श्लोक में कादम्बरी कथा की प्रशंसा है।

- **कादम्बरी में तीन जन्मों का नाम**

चन्द्रापीड	वैशम्पायन	पत्रलेखा	इन्द्रायुध	चाण्डालकन्या
1.चन्द्रमा	पुण्डरीक	रोहिणी	कपिञ्जल	लक्ष्मी
2.चन्द्रापीड	वैशम्पायन	पत्रलेखा	इन्द्रायुध	-
3.शूद्रक	शुक	-	कपिञ्जल	चाण्डालकन्या

- कादम्बरी की कथा एक जन्म से सम्बद्ध न होकर चन्द्रापीड और पुण्डरीक के तीन जन्मों से सम्बन्ध रखती है।
- कादम्बरी के दो भाग हैं– पूर्वार्द्ध व उत्तरार्द्ध।
- 'कादम्बरी' का नायक चन्द्रापीड धीरोदात्त नायक है।
- 'कादम्बरी' की नायिका कादम्बरी विवाह से पूर्व **'परकीया मुग्धा नायिका'** है, किन्तु विवाह के बाद **'स्वकीया मध्या नायिका'** है।
- कादम्बरी का प्रमुख रस **'शृङ्गार'** तथा गुण **'माधुर्य'** है।
- कादम्बरी में **पाञ्चाली रीति** की बहुलता है। **'शब्दार्थयोः समोगुम्फः पाञ्चाली रीतिरुच्यते॥'**
- 'कथासरित्सागर' के 'उनसठवें तरङ्ग' मकरन्दिका-वृत्तान्त का अवलम्बन लेकर बाण ने कादम्बरी-कथा की रचना की।
- कादम्बरी का शाब्दिक अर्थ **'मदिरा'** है।
- कादम्बरी के उत्तरार्द्ध में भूषणभट्ट ने कहा – **कादम्बरी रसभरेण समस्त एव, मत्तो न किञ्चिदपि चेतयतो जनोऽयम्॥**
- कादम्बरी के मङ्गलाचरण में त्रिगुण-स्वरूप अजन्मा परमब्रह्म को नमस्कार किया गया है।
- यह ब्रह्म प्राणियों के प्रादुर्भाव में रजोगुण युक्त, स्थितिकाल में सात्विक गुणवाला तथा प्रलयकाल में तमोगुण वाला होता है।
- कादम्बरी का मङ्गलाचरण **नमस्कारात्मक** है।
- कादम्बरी के मङ्गलाचरण में **वंशस्थ छन्द** है।
- कादम्बरी के द्वितीय श्लोक में भगवान् शिव की चरण धूलियों की स्तुति की गयी है।
- चतुर्थ श्लोक में बाण ने अपने गुरु **भर्वु (भर्त्सु)** के चरणों की वन्दना की।
- बाण ने दो श्लोकों (8, 9) में कादम्बरी कथा की प्रशंसा की है।

- कादम्बरी की रचना में बाण को गुणाढ्य की **बृहत्कथा** तथा सुबन्धु की **वासवदत्ता** से प्रेरणा मिली है, और इन्हें पीछे छोड़ना बाण का लक्ष्य रहा है। इसीलिए बाणभट्ट ने कादम्बरी को **अतिद्वयी** (अर्थात् वासवदत्ता और बृहत्कथा का अतिक्रमण करने वाली) कथा कहा है।
- कादम्बरी कथा का आरम्भ राजा शूद्रक के प्रभाव और उनकी **राजधानी 'विदिशा'** के वैभव वर्णन से होता है।
- शूद्रक के दरबार में एक 'चाण्डालकन्या' 'वैशम्पायन' नामक शुक को लेकर आती है।
- यह तोता मनुष्य की बोली बोलता है और राजा की प्रशंसा में एक आर्या छन्द (दाहिना पैर उठाकर) पढ़ता है –
  स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्तिहृदयशोकाग्नेः।
  चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम्॥
- यही शुक राजा शूद्रक के सामने अपने जन्म, 'हारीत' के द्वारा महर्षि जाबालि के आश्रम में पहुँचने का वृत्तान्त बताता है।
- मुनि जाबालि उज्जयिनी नरेश तारापीड के पुत्र चन्द्रापीड तथा उसके मित्र मन्त्री शुकनास के पुत्र वैशम्पायन की कथा का वर्णन करते हैं।
- शुक का जन्म 'विन्ध्याटवी' में एक विशाल शाल्मली के वृक्ष पर हुआ था।
- उज्जयिनी मालवा की राजधानी है।
- तारापीड की पत्नी **'विलासवती'** और शुकनास की पत्नी का नाम **'मनोरमा'** है।
- चन्द्रापीड के तीन जन्म क्रमशः **चन्द्रमा, चन्द्रापीड और शूद्रक** हैं।
- पुण्डरीक के तीन जन्म क्रमशः **पुण्डरीक, वैशम्पायन और शुक हैं।**
- चन्द्रापीड की सेविका (ताम्बूलवाहिनी) पत्रलेखा पूर्व जन्म में रोहिणी रहती है।
- चन्द्रापीड का घोड़ा इन्द्रायुध पूर्व जन्म में पुण्डरीक का मित्र 'कपिञ्जल' रहता है।
- चाण्डालकन्या पूर्व जन्म में पुण्डरीक की माता लक्ष्मी रहती है।
- दिग्विजय के लिए निकले चन्द्रापीड किन्नर मिथुन का पीछा करते **'अच्छोद सरोवर'** पहुँच जाता है।
- अच्छोद सरोवर पर तप करती हुई **'महाश्वेता'** गन्धर्वराज **हंस और गौरी की पुत्री** है।
- पुण्डरीक के कान पर लगी पारिजात की कुसुम-मञ्जरी से महाश्वेता आकर्षित होती है।
- तरलिका महाश्वेता की सहचरी है।
- गन्धर्वराज **चित्ररथ और मदिरा की पुत्री कादम्बरी** है।
- केयूरक कादम्बरी का अनुचर (वीणावाहक) है।
- **पुण्डरीक महर्षि श्वेतकेतु और लक्ष्मी का पुत्र** है।
- पुण्डरीक ने चन्द्रमा को वियोगाग्नि में तड़पने और चन्द्रमा पुण्डरीक को साथ-साथ दुःख भोगने का शाप दिया था।
- पत्रलेखा कुलूताधिपति की पुत्री है।
- कादम्बरी की सहचरी मदलेखा है।
- इन्द्रायुध अश्व का सजीव वर्णन करने के कारण बाण को **'तुरङ्गबाण'** कहा जाता है।

कादम्बरी कथामुख

- शूद्रकः कः आसीत् – **शूद्रकः राजा आसीत्**
- शूद्रकस्य राजधानी का आसीत् –**शूद्रकस्य राजधानी विदिशाभिधाना नगरी आसीत्।**
- चाण्डाल-कन्यका कुतः आगता?-
  चाण्डाल-कन्यका दक्षिणमार्गात् आगता।
- वैशम्पायनः कः आसीत्? **वैशम्पायनः शुकः आसीत्**
- नरपतेः पुरः पञ्जरं निधाय को अपससार?–**नरपतेः पुरः पञ्जरं निधाय चाण्डालकन्यका अपससार।**
- शुको वैशम्पायनः कामार्या पपाठ?-
  शुको वैशम्पायनः–
  स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्ति हृदयशोकाग्नेः चरति विमुक्ताहारं व्रततमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम् ॥
- विमुक्ताहारं किं व्रतमिव चरति?–**विमुक्ताहारं शूद्रकस्य रिपुस्त्रीणां स्तनयुगं व्रतमिव चरित।**
- शूद्रकस्य राजधानी कया नद्या परिगता आसीत्।
  वेत्रवत्या।
- शूद्रकस्य प्रधान अमात्यः कः आसीत्?-
  कुमारपालितः।
- पञ्जरस्थं शुकमादाय शूद्रकस्य समीपं का आगता–
  चाण्डाल-कन्या।
- दण्डकारण्यः कुत्र आसीत्?- **विन्ध्याट्व्याम्।**
- जीर्णः शाल्मलीवृक्षः कुत्र आसीत्?–**पम्पाभिधानस्य सरसः पश्चिमे तीरे आसीत्।**
- चन्द्रापीडस्य बालमित्रं कः आसीत्? -**वैशम्पायनः**
- शुकनासः कस्य मन्त्री आसीत्?- **राज्ञः तारापीडस्य**
- चाण्डालकन्या का आसीत्- **पुण्डरीकस्य माता**
- चन्द्रापीडः कस्य अवतारः आसीत्? – **चन्द्रस्य**
- कस्मिन् वृक्षे वैशम्पायनः शुकः अवसत्?– **शाल्मलीवृक्षे।**
- चन्द्रापीडस्य माता पितरौ कौ आस्ताम्?–**माता विलासवती पिता च तारापीडः**
- कादम्बरी का आसीत्?- **चित्ररथ गन्धर्वराजस्य पुत्री आसीत्।**
- पम्पाभिधानस्य सरसः नातिदूरवर्तिनि तपोवने कः– मुनिः प्रतिवसति स्म?–**जाबालिः नाम मुनिः प्रतिवसति स्म।**
- कादम्बरी कस्मिन् अनुरक्ता आसीत्?– **चन्द्रापीडे।**
- कादम्बर्याः माता-पितरौ कौ आस्ताम्?– **मदिरा चित्ररथः।**
- महाश्वेता कस्मिन् अनुरक्ता आसीत्?– **पुण्डरीके**
- महाश्वेतायाः माता-पितरौ कौ आस्ताम्?- **माता गौरी पिता च हंसः**
- राजा शूद्रकस्य इष्टदेवः कः आसीत्?- **पशुपतिः भगवान् शङ्करः आसीत्।**

- 'कमलयोनिरिव विमानीकृतराजहंसमण्डलः' एतद्-विशेषणं कस्य कृते प्रयुक्तः- **शूद्रकस्य कृते**
- भगवतः नारायणस्य अनुकरणं कः करोति-**शूद्रकः**
- अचिरमृदित महिषासुर रुधिररक्तं चरणमिव कात्यायनीम् यह विशेषण वाक्य किसके लिए प्रयुक्त है?- **चाण्डालकन्या के लिए**
- प्रथमे वयसि कः सुखमतिचिरमुवास- **शूद्रकः**
- 'विदितसकलशास्त्रार्थः राजनीतिप्रयोगकुशलः' एतद् विशेषणं कस्य कृते प्रयुक्तः है?– **वैशम्पायनस्य कृते**
- "त्रिभुवन प्रसवभूमिरिव विस्तीर्णा" का नगरी अस्ति?– **विदिशा**
- 'विन्ध्य वनभूमिरिव वेत्रलतावती' यह किसके लिए कहा गया है– **प्रतीहारी।**
- 'हर इव जितमन्मथः' कः अस्ति?– **शूद्रकः।**
- प्रतिहारी कां प्रावेशयत्?- **चाण्डालकन्यकाम्।**
- विदिशा नगरी कया नद्या परिगता आसीत्?-**वेत्रवत्या।**
- "अरण्यकमलिनी इव मातङ्गकुलदूषिता" का आसीत्?– **चाण्डालकन्या**
- कर्ता महाश्चर्याणाम्, आदर्शः सर्वशास्त्राणां कः आसीत्?- **वैशम्पायनः।**
- विदित सकलशास्त्रार्थः राजनीतिप्रयोगकुशलः कः आसीत्?- **वैशम्पायनः**
- शूद्रकस्य प्रधानामात्यः कः आसीत्?- **कुमारपालितः**
- हारीतः कस्यः पुत्रः आसीत्?–**महर्षेः जाबालेः पुत्रः आसीत्।**
- मातङ्गः कः आसीत्? -**शबर सेनापतिः आसीत्।**
- उज्जयिनी कुत्र अस्ति?- **उज्जायिनी अवन्तिदेशे अस्ति।**
- कः कृतजयशब्द राजानम् उदिद्श्य आर्यां छन्दः पपाठ?– **वैशम्पायनो शुकः कृतजयशब्द राजानम् उद्दिश्य आर्यां छन्दः पपाठ।**
- केषां धर्मः अनाथपरिपालनम् अस्ति-**अनाथपरिपालनं तपस्विसदृशानां जनानां धर्मः अस्ति।**
- कस्य अवतारः इन्द्रायुधः आसीत्?– **कपिञ्जलस्य अवतारः इन्द्रायुधः आसीत् ।**
- शुकः कोलाहलध्वनिम् आकर्ण्य कुत्र अविशत् ?- **शुकः कोलाहलध्वनिम् आकर्ण्य स्वपितुः पक्षपुटान्तरम् अविशत् ।**
- पत्रलेखा का आसीत्?– **चन्द्रपत्नी रोहिण्याः अवतारः पत्रलेखा चन्द्रापीडस्य च ताम्बूलकरंकवाहिनी आसीत्।**
- कादम्बरी कथामुखे मङ्गलाचरणे कस्य स्तुतिः– **त्रिगुणात्मक ब्रह्मणः**
- अकारणाविष्कृतवैरदारुणात्.........कस्य भयं न जायते?– **असज्जनात्**
- स्फुरत्कलालाप-विलास-कोमला करोति......कस्य प्रशंसायाः उद्धृता– **कथाप्रशंसायाः**
- कुबेरस्य पुत्रः कः?- **अर्थपति।**

सूक्तियाँ

- **अनाथपरिपालनं हि धर्मोऽस्मद्विधानाम्।**
  अनाथों का पालन ही हमारे जैसे- मुनियों का धर्म है।
- **सकल भूतलरत्नभूतः, वैशम्पायनो नाम शुकोऽयम् आत्मीयः क्रियताम्–**
  चाण्डाल कन्या राजा शूद्रक से तोते का परिचय देते हुए कहती है– महाराज यह तो सम्पूर्ण शास्त्रों का ज्ञाता, राजनीति में कुशल, पुराण, इतिहास तथा कथा में निपुण और पृथ्वी का एक रत्न है।
- **चरित विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम्** –
  वैशम्पायन नामक शुक ने अपना दाहिना पैर उठाते हुए 'जय' शब्द का उच्चारण करके राजा को आर्या छन्द सुनाया–
  आपके शत्रुओं की स्त्रियों के स्तनों का जोड़ा या मोतियों के हार को छोड़कर ऐसा लगता है, जैसे कोई तपस्वी भोजन का त्याग करके तप कर रहा हो।
- **देव! महतीयं कथा यदि कौतुकम् आकर्ण्यताम्**
  वैशम्पायन अपनी कहानी सुनाता है–
  हे देव! मेरी यह कथा बहुत लम्बी है। इसके सुनाने में बहुत समय लगेगा किन्तु यदि आपको मेरे विषय में उत्सुकता है तो सुनिऐ मैं सुनाता हूँ।
- **अनाराधित प्रसन्नेन कुसुमशरेण भगवता ते वरः दत्तः। कस्योक्ति?**
  पत्रलेखा बिना आराधना के ही प्रसन्न मन वाले कामदेव ने तुम्हे वरदान दिया है।
- **बलवान् जननी स्नेहः?**
  चन्द्रापीड का कथन माता का स्नेह बलवान् होता है।
- **'अहो मानुषीषु पक्षपातः प्रजापतेः'**
  कादम्बरी का कथन पत्रलेखा को देखकर एक मनुष्य के प्रति किये गये ब्रह्मा के पक्षपात के विषय में सोचने लगी।

- ♦ **'बहुभाषिणः न श्रद्दधाति लोकः'**
  चन्द्रापीड का कथन- बहुत बोलने वालों पर लोग श्रद्धा नहीं रखते।
- ♦ **गरीयसी गुरोः आज्ञा।**
  चन्द्रापीड का कथन- गुरुजनों (बड़ो) की आज्ञा महान् होती है।
- ♦ **बलवती हि भवितव्यता। होनहार बलवान् है।**
  कपिञ्जल के मुख से उच्चरित श्वेतकेतु का कथन है।

अम्बिकादत्तव्यास का परिचय

- ➢ **पितामह** – पं राजाराम
- ➢ **पिता** – दुर्गादत्त
- ➢ **चाचा/दादा** – देवीदत्त
- ➢ **पुत्र** – पं. राधाकुमारव्यास
- ➢ **गोत्र** – पराशरगोत्रीय यजुर्वेदी/त्रिप्रवर/भीडावंश
- ➢ **जन्मस्थान** – राज्य - राजस्थान, जिला - जयपुर, ग्राम - रावत जी का धूला, मुहल्ला - सिलावटी
- ➢ **जन्मसमय** – चैत्र शुक्लपक्ष अष्टमी सं. 1915 (1858 ई.)
- ➢ **मृत्यु** – मार्ग शीर्ष (अगहन) कृष्णपक्ष त्रयोदशी सोमवार सं. 1957 (सन् 1900 ई.)
- ➢ **कर्मस्थली** – काशी में अध्ययन - अध्यापन
- ➢ **कुल रचनाएं** – लगभग 78
- ➢ **संस्कृत रचनायें**– शिवराजविजय (उपन्यास) सामवतम् (नाटक) (22 वर्ष की अवस्था में) रत्नाष्टक, कथाकुसुमम्
- ➢ **हिन्दी रचनाए** – बिहारी-विहार (कुण्डलिनी छन्द में)
- ➢ **पत्रिका** –'पीयूष-प्रवाह' का सम्पादन
- ➢ **उपाधियाँ**– 1. सुकवि (भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, काशी कवितावर्धिनी सभा)
  2. **घटिकाशतक** (ब्रह्मामृतवर्षिणी सभा)
  3. **शतावधान**
  4. **भारतरत्न** (काशी की 'महासभा')
  5. **अभिनवबाण/आधुनिकबाण**
  6. **भारतभूषण**
  7. **महाकवि**
- ➢ प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास के प्रणेता अम्बिकादत्तव्यास।
- ➢ 'बिहारी-विहार' में व्यास जी ने अपना संक्षिप्त जीवन-परिचय लिखा है।
- ➢ लगभग 12 वर्ष की अवस्था में व्यास जी ने धर्मसभा की परीक्षा में पुरस्कार प्राप्त किया था।
- ➢ बिहार में **'संस्कृत-सञ्जीवनी-समाज'** की स्थापना।
- ➢ व्यास जी ने 10 वर्ष की अवस्था से ही काव्य रचना आरम्भ कर दी थी।
- ➢ व्यास जी ने **'शिवराजविजय'** 1870 ई. में लिखा जो काशी से 1901 ई. में उनकी मृत्यु के बाद प्रकाशित हुआ।
- ➢ गवर्नमेण्ट संस्कृत-कॉलेज पटना में प्राध्यापक।
- ➢ वक्ता और साहित्यस्रष्टा के साथ ही चित्रकारिता, अश्वारोहण संगीत और शतरंज में भी व्यास जी विशेष रुचि रखते थे।
- ➢ सितार, हारमोनियम, जलतरङ्ग और मृदङ्ग इनके प्रिय वाद्य थे।
- ➢ व्यास जी हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी और बंगला भाषा के ज्ञाता थे।
- ➢ न्याय, व्याकरण, वेदान्त और दर्शन में इनकी अच्छी गति थी।
- ➢ एक घड़ी (24 मिनट) में 100 श्लोकों की रचना करने से व्यास जी को **'घटिकाशतक'** की उपाधि दी गयी थी।
- ➢ सौ प्रश्नों को एक साथ ही सुनकर उन सभी प्रश्नों का उत्तर उसी क्रम में देने की अद्‌भुतक्षमता होने से उन्हें **'शतावधान'** की उपाधि दी गयी थी।
- ➢ **बयालीस वर्ष की अवस्था** में ही व्यास जी संवत् 1957 (1900 ई.) में अपने पीछे एक नववर्षीयपुत्र, एक कन्या और विधवा पत्नी को असहाय छोड़कर पञ्चतत्व को प्राप्त हो गये।
- ➢ **लेखक** – अम्बिकादत्तव्यास
- ➢ **विधा** – ऐतिहासिक उपन्यास
- ➢ **विभाजन** – तीन विराम, 12 निःश्वास।
- ➢ **प्रधानरस** – वीर
- ➢ **उपजीव्य** – इतिहासप्रसिद्ध
- ➢ **नायक** – शिवाजी
- ➢ **कथानक** – शिवाजी का जीवनचरित।
- ➢ **प्रमुखपात्र** – शिवाजी, गौरसिंह, श्यामसिंह, ब्रह्मचारी गुरु, योगिराज, अफजलखान, शाइस्ताखान, रघुवीरसिंह, यवनयुवक यशवन्तसिंह, औरंगजेब, रसनारी (रोशनआरा)
- ➢ 'शिवराजविजयम्' **1870 ई0** में लिखा गया था, जो काशी से **1901 ई. में प्रकाशित** हुआ।
- ➢ संस्कृतवाङ्मय का **प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास 'शिवराजविजय' है।**
- ➢ शिवराजविजय की सम्पूर्ण कथा 3 विरामों और 12 निःश्वासों में विभक्त है।
- ➢ शिवराजविजय में दो समान्तर धाराएँ स्वतन्त्र रूप से प्रवाहित होती हैं – एक के नायक शिवाजी हैं तो दूसरी के नायक रघुवीर सिंह हैं।
- ➢ शिवराजविजय **'वीर रस' प्रधान काव्य** है। **'विरोधाभास'** व्यास जी का प्रिय अलङ्कार है। शिवराजविजय में पाञ्चालीरीति प्रयुक्त है।

➢ व्यासजी ने 'शिवराजविजय' में मुगलकालीन समाज का सुन्दर चित्रण किया है।

कथानक एवं पात्र-चित्रण

➢ शिवाजी के काल में दो-दो कोस पर आश्रम बने हुए थे, जो मुसलमानों की गतिविधियों पर नजर रखते थे।
➢ बीजापुर-दरबार ने शिवाजी से युद्ध के लिए अफजल खाँ को भेजा। उस समय शिवाजी 'प्रतापदुर्ग' में थे।
➢ अफजल खाँ ने 'भीमा नदी' के तट पर शिविर डाल दिया।
➢ बीजापुर के शासक 'सन्धि' के धोखे से शिवाजी को पकड़ना चाहते थे।
➢ एक यवन गुप्तचर जो बीजापुर दरबार का पत्र ले जा रहा था, उसने मार्ग में एक ब्राह्मण कन्या का अपहरण किया।
➢ एक भालू के आ जाने से वह यवन युवक उस कन्या को छोड़कर 'शाल्मली' वृक्ष पर चढ़ गया।
➢ ब्रह्मचारी गुरु के शिष्य 'गौरसिंह' और श्यामसिंह द्वारा वह कन्या बचा ली गई।
➢ यवन गुप्तचर 'गौर सिंह' द्वारा मारा गया तथा बीजापुर का गुप्त संदेश उसके वस्त्रों में से गौरसिंह को प्राप्त हुआ।
➢ गुप्त संदेश को जानकर शिवाजी ने स्वयं अफजल खाँ को छलने की योजना बनायी।
➢ बीजापुर से सन्धि प्रस्ताव लेकर भेजे गये 'पं. गोपीनाथ' द्वारा प्रतापदुर्ग की तलहटी में अफजल खाँ से मिलने का शिवाजी ने प्रबन्ध किया।
➢ गौर सिंह 'गायक' के वेश में अफजल खाँ के शिविर में जाकर सम्पूर्ण भेद निकाल लाया।
➢ शिवाजी कपड़ों के अन्दर कवच और हाथों में 'बाघनख' नामक हथियार पहन कर अफजल खाँ से मिलने गये।
➢ आलिंगन के समय शिवाजी ने अफजल खाँ के कन्धों और गर्दन को फाड़कर मार डाला।
➢ गौर सिंह द्वारा जिस ब्राह्मण कन्या की रक्षा की गयी थी, उसके संरक्षक एक वृद्ध ब्राह्मण थे।
➢ वह कन्या गौर सिंह और श्याम सिंह की **बहन सौवर्णी** है और वृद्ध ब्राह्मण उनके **पुरोहित 'देवशर्मा'** हैं।
➢ ब्रह्मचारी गुरु के अनुरोध पर गौर सिंह ने अपना वृत्तान्त सुनाया।
➢ वे तीनों (गौर सिंह, श्याम सिंह, सौवर्णी) उदयपुर के जागीरदार **'खड़गसिंह'** के पुत्र-पुत्री थे।
➢ माता-पिता की मृत्यु के बाद तीनों बहिन भाई पुरोहित की संरक्षता में रहते थे।
➢ शिकार पर गये हुए वे लुटेरों द्वारा पकड़े गये वहाँ से वे भाग कर हनुमान मंदिर अध्यक्ष की सहायता से भीमा नदी के किनारे शिवाजी से मिले और ब्रह्मचारी गुरु के आश्रम में रहने लगे।
➢ 'शाइस्ता खाँ' पूना पर अधिकार करके शिवाजी के महल में रहने लगता है।
➢ शिवाजी ने 'सिंह दुर्ग' से अपना एक संदेश 'रघुवीर सिंह' द्वारा 'तोरण दुर्ग' के अध्यक्ष के पास भेजा।
➢ रघुवीर सिंह तोरण दुर्ग के अध्यक्ष की आज्ञा से 'हनुमान मंदिर' में ठहरा।
➢ देवशर्मा 'सौवर्णी' को लेकर उसी हनुमान मन्दिर में रहने लगे थे। जहाँ वाटिका में रघुवीर सिंह सौवर्णी को देखता है।
➢ शिवाजी के आदेश पर रघुवीर सिंह शाइस्ता खाँ के साथ होने वाले युद्ध का भविष्य पूछने के लिए देवशर्मा के पास गया।
➢ देवशर्मा ने सौवर्णी द्वारा उसे एक मोदक खिलाकर गले में एक 'माला' डलवाई।
➢ देवशर्मा ने यवनों के साथ युद्ध में विजय तथा आर्यों के साथ पराजय यह भविष्य बताया।
➢ शिवाजी ने पंडित के वेश में 'माल्यश्रीक' के साथ शाइस्ता खाँ के निवास पूना जाकर निरीक्षण किया।
➢ सन्देह होने पर चाँद खाँ ने उनका पीछा किया शिवाजी ने उसका वध कर दिया।
➢ शिवाजी ने यशवन्त सिंह को पूना से दूर रहने की प्रार्थना कर 'बारात' के बहाने पूना में प्रवेश किया।
➢ चाँद खाँ और शाइस्ता खाँ के पुत्र रघुवीर सिंह द्वारा मारे गये।
➢ शाइस्ता खाँ घायल उंगली के साथ भाग गया।
➢ रघुवीर सिंह ने औरंगजेब की पुत्री 'रोशन आरा' को गिरफ्तार कर लिया।
➢ ब्रह्मचारी गुरु ने गौरसिंह से अपने पुत्र 'वीरेन्द्र सिंह' का वृत्तान्त बताया।
➢ सौवर्णी ने क्रूरसिंह द्वारा किये जाने वाले अपमान की बात रघुवीर सिंह से बतायी।
➢ रोशनआरा शिवाजी के प्रति अपना प्रेम प्रकट करती है। शिवाजी ने पिता द्वारा उसे दिये जाने पर ही स्वीकार करने की बात कही।
➢ 'जयसिंह' के आक्रमण करने पर शिवाजी मुगलों की कुछ शर्तें मानकर सन्धि करने पर विवश हुए। और उन्हें रोशनआरा और मुअज्जम को वापस करना पड़ा।
➢ बीजापुर किले पर आक्रमण करके रघुवीर सिंह की सहायता से शिवाजी ने विजय प्राप्त की। और रहमत खाँ को पकड़ लिया गया।
➢ रहमत खाँ और क्रूरसिंह द्वारा राजद्रोही बताये जाने पर शिवाजी

ने रघुवीर सिंह को निष्कासित कर दिया।

- रघुवीर सिंह **'राधास्वामी'** का वेश धारण कर शिवाजी का उपकार करता रहा।
- सौवर्णी का अपहरण की इच्छा रखने वाले क्रूरसिंह का रघुवीर सिंह (राधास्वामी) ने वध कर दिया।
- जयसिंह की सन्धि के अनुसार शिवाजी औरंगजेब के राजदरबार दिल्ली में उपस्थित हुए।
- मार्ग में राधास्वामी (राघवस्वामी, रघुवीर सिंह) के रोकने पर भी वे नहीं माने।
- औरंगजेब ने शिवाजी को नजरबंद करवा दिया। परन्तु 'रघुवीर सिंह' के सहायता से वे भागने में सफल हो गये।
- रघुवीर सिंह को 'मण्डलेश्वर' पद प्रदान किया गया तथा 'सौवर्णी' के साथ उसका विवाह हो गया।
- शिवाजी **सतारा नगर को राजधानी** बनाकर रहने लगे और धीरे-धीरे पूरे महाराष्ट्र पर अधिकार कर लिया।
- औरंगजेब द्वारा प्रेषित सेनापति 'मोहम्मद खाँ' भगा दिया गया।

शिवराजविजय का प्रथम निःश्वास

- शिवराजविजय का मङ्गलाचरण **''विष्णोर्माया भगवती यया सम्मोहितं जगत्''** से होता है जो 'भागवतपुराण' के दशम स्कन्ध से लिया गया है।
- मङ्गलाचरण में विष्णु की माया को ऐश्वर्यशालिनी बताया गया है, जिसने सम्पूर्ण जगत् को मोह में डाल रखा है।
- दूसरी पंक्ति में कहा गया है कि दुष्ट हिंसक अपने पाप से मारा गया और सज्जन समत्व भाव के कारण बच गये।
- शिवराजविजय का आरम्भ प्रातःकाल एवं सूर्य भगवान के वर्णन से होता है।
- देर से सोकर उठे गौरसिंह को पुष्प चुनने से 'श्यामबटु' रोकता है और बताता है कि उसने गुरु (ब्रह्मचारी) के सन्ध्योपासना की समस्त सामग्री पहुँचा दी है।
- 'शिवराजविजय' का मंगलाचरण **'नमस्कारात्मक'** और **वस्तु निर्देशात्मक** है।
- गौर सिंह केले के पत्ते को तिनकों से जोड़कर उसी में पुष्प तोड़ना आरम्भ करता है।
- गौरबटु लगभग सोलह वर्ष का है उसका साथी (भाई) श्यामबटु भी उसी का समवयस्क है।
- उनकी कुटिया केले के वन से घिरे होने के कारण कुञ्ज के जैसी प्रतीत होती है।
- कुटीर के **चारों ओर पुष्पवाटिका** थी तथा **पूर्व दिशा** में एक तालाब है।
- कुटिया के **'दक्षिण' में झरनों तथा सुंदर कन्दराओं से** युक्त एक **पर्वतखण्ड** विद्यमान है।
- **सात वर्षीय कन्या** को सांत्वना प्रदान करते हुए गौरबटु ने रात्रि के तीन पहर व्यतीत कर दिये जिसे उसने यवन युवक से बचाया था।
- कुटिया के दक्षिण में स्थित पर्वत की कन्दरा में एक महामुनि समाधिरत थे जिनकी ग्राम-प्रधान और ग्रामीण पूजा किया करते थे।
- उन महामुनि को कोई **कपिल** कोई **लोमश** और कोई **जैगीषव्य** और कोई **मार्कण्डेय** समझता था।
- उन महामुनि (योगिराज) को सर्वप्रथम उन दो ब्राह्मण बालकों (गौर, श्याम) के द्वारा शिखर से नीचे उतरते देखा गया।
- योगिराज आश्रम में आकर काष्ठासन पर उदयाचल पर सूर्य के समान आसीन हुए।
- ब्रह्मचारी गुरु ने जैसे ही कुछ बोलना चाहा तभी उस बालिका का करुण क्रन्दन सुनाई पड़ा।
- योगिराज के उस कन्या के सम्बन्ध में पूछने पर 'श्यामबटु' को उसे शान्त करने का आदेश देकर ब्रह्मचारी गुरु ने बोलना आरम्भ किया।
- सर्वप्रथम उस कन्या का करुण क्रन्दन सुनकर 'ब्रह्मचारी' ने पता लगाने हेतु अपने शिष्यों को भेजा था।
- यवन युवक उस कन्या को माता के हाथ से छीनकर भागा था, उसने बालिका को 'छूरा' दिखाकर शान्त करना चाहा।
- अचानक भालू के आ जाने से यवन युवक शाल्मली वृक्ष पर चढ़ गया और कन्या घुणाक्षरन्याय से पलाश वृक्षों के झुरमुट में प्रवेश कर आश्रम की तरफ आयी।
- योगिराज के 'विक्रमराज्य' में ऐसा उपद्रव कहने पर ब्रह्मचारी गुरु ने बताया कि विक्रमादित्य के राज्य को बीते तो **'सत्रह सौ वर्ष'** हो गये।
- ब्रह्मचारी गुरु ने बताया कि आज वेद फाड़कर मार्गों में बिखेरे जाते हैं, 'धर्मशास्त्रों' को उछालकर 'आग' में झोंका जाता है। पुराणों को पीस कर पानी में फेंका जाता है, भाष्य नष्ट करके भाड में झोंके जाते हैं।
- योगिराज विक्रमादित्य द्वारा 'शकों' को जीते जाने को कल की ही बात बताते हैं।
- ब्रह्मचारी गुरु योगिराज से बताते हैं कि 'भगवन्' आपने जिन पुरुषों को देखा था अब उनकी 'पचासवीं' पीढ़ी के पुरुष भी दिखाई नहीं पड़ते।
- योगिराज बताते हैं कि वे **'युधिष्ठिर' के समय समाधि** लगाकर 'विक्रमादित्य' के समय में तथा विक्रमादित्य के समय समाधि लगाकर इस दुराचारमय समय में उठे।

➢ ब्रह्मचारी गुरु ने बताया कि 'महमूद गजनवी' ने भारत को बारह **(12) बार लूटा** और सैकड़ों ऊँटों पर रत्नों को लाद कर अपने देश ले गया।
➢ उसने गुजरात देश में स्थित 'सोमनाथ' को भी धूल में मिला दिया।
➢ सोमनाथ की किवाड़ें वैदूर्य (मूंगा), पद्मराग हीरे, मोतियों से बनी थी।
➢ सोमनाथ में लटकने वाला महाघण्टा **दो सौ मन सोने की जंजीर** में लटकता था।
➢ महादेव की मूर्ति पर गदा उठाने पर पुजारियों ने उसे 'दो करोड़ स्वर्ण मुद्राएं' देकर छुड़ाना चाहा परन्तु उसने यह कह कर कि **'वह मूर्ति बेचता नहीं किन्तु तोड़ता है।'** उसने मूर्ति को तोड़ दिया।
➢ गदा के प्रहार से अनेक 'अरब पद्म मुद्रा' के मूल्य के रत्न बिखरे, उनको लेकर ऊंटों की पीठ पर लाद कर 'सिन्धु' नदी उतर कर महमूद गजनवी 'गजनी' वापस चला गया।
➢ सं. 1087 में **'गोर देश' निवासी 'शहाबुद्दीन'** नामक यवन पहले गजनी देश पर फिर भारत पर आक्रमण किया। और 1250 में दिल्ली को अश्वारोहियों से घेर लिया।
➢ उसने वाराणसी में भी हड्डियों के अनेक पहाड़ बना दिये। वाराणसी तक उसने अकण्टक राज्य किया।
➢ **शहाबुद्दीन (गोरी)** ने ही मुख्यतः **भारत में यवन-शासन का बीजारोपण** किया और उसी ने **'कुतुबुद्दीन'** नामक गुलाम को **दिल्ली का प्रथम सम्राट** बनाया।
➢ केवल अकबर यद्यपि भारतवर्ष का गूढ शत्रु था तथापि वह शान्तप्रिय और विद्वानों का आदर करने वाला था।
➢ औरंगजेब ने **'आलमगीर'** उपाधि धारण किया।
➢ औरंगजेब ने 'शाइस्ता खाँ' को दक्षिण के शासक के रूप में भेजा।
➢ शिवाजी पूना नगर के निकट **'सिंहदुर्ग'** में रह रहे थे। (विजयपुर = बीजापुर)
➢ **'या कार्य सिद्ध होगा या शरीर नष्ट होगा'** यह शिवाजी की प्रतिज्ञा थी।
➢ योगिराज ने **'वीर शिवाजी' विजयी हों और आप के मनोरथ सिद्ध हों'** आशीर्वाद दिया।
➢ दूसरे प्रश्न के रूप में 'कब देखूँगा उसे पूछने पर' योगिराज ने विवाह के समय देखोगे' ऐसा उत्तर दिया।
➢ गौरसिंह 'अफजल' के तीन घोड़ों और घुडसवारों को मारकर पाँच ब्राह्मणों को छुड़ाकर ले आया।
➢ गौरसिंह ने देखा कि गृहवाटिका के केलों के झुरमुट में दो या तीन पेड़ अधिक काँप रहे थे।
➢ गौर सिंह ने कुटीर की 'बल्ली' में तलवार छिपा रखी थी।
➢ छिपा हुआ यवनयुवक सिर पर नीले वस्त्र, हरित वर्ण का कञ्चुक और श्याम (नीले) वस्त्र कटितट तक बाँधे था।
➢ उस यवन युवक की **उम्र लगभग 20 वर्ष** थी।
➢ श्यामबटु' तलवार लेकर उसी कुटी के द्वार पर 'कन्या' के रक्षणार्थ खड़ा हुआ जिसमें वह थी।
➢ गौरसिंह ने यवन युवक को मारकर उसके कपड़ों में से एक पत्र निकालकर गणों सहित कुटिया में प्रवेश किया।

शिवराजविजय के कुछ महत्त्वपूर्ण पदों की व्याकरणात्मक टिप्पणी-

लट्लकार
* **चकर्ति-** √कृ + यङ् + (लुक्) +लट् प्र.पु.एकवचन
* **बर्भति-** √भृञ् + यङ् + (लुक्) +लट् प्र.पु.एकवचन
* **जर्हति-** √हृञ् + यङ् + (लुक्) +लट् प्र.पु.एकवचन
* **भर्ज्यन्ते-** √भृज् (भर्जने) +यक् +लट् (भावे)
* **भिद्यन्ते-** √भिद् + यक् + लट् (भावे)
* **चिकीर्षसि-** √कृ + सन् + लट् + म.पु.एकवचन
लिट्लकार
* **निश्चक्राम-** निर् + √क्रमु (पादविक्षेप)- लिट्
* **आरेभे-** आ + √रम्भ् + लिट् प्रथमपुरुष एकवचन
* **इयेष-** √इष् + लिट् + तिप् प्रथम पुरुष एकवचन
* **अप्ससार-** अप् + √सृ + लिट् प्रथम पुरुष एकवचन
* **उपाजगाम-** उप + आङ् + √गम् + लिट् प्रथम पुरुष एकवचन
* **जगाद-** √गद् + लिट् + प्रथम पुरुष एकवचन
* **अवतस्थे-** अव + √स्था + लिट् प्रथमपुरुष एकवचन (आत्मने.)
* **धूलीकार-** धूलि + च्वि + √कृ + लिट्
लुङ्लकार
* **अनैषीः-** √नी + लुङ् + मध्यम पुरुष एकवचन
* **अदर्शि-** √दृश् + लुङ् + प्रथमपुरुष एकवचन
* **भैषीः-** √भी + लुङ् + मध्यमपुरुष एकवचन
* **कार्षीः-** √कृ + लुङ् + मध्यमपुरुष एकवचन
* **अरोदीः-** √रुद् + लुङ् + मध्यमपुरुष एकवचन
* **उदस्थाम्-** उत् + √स्था + लुङ् + उत्तमपुरुष एकवचन
* **व्ययाजिषत्-** वि + √यज् + कर्मणि + लुङ् + प्रथमपुरुष एकव.
* **अलुलुण्ठत्-** √लुठि स्तेये, चुरादि + णिजन्तात् + लुङ् प्र.पु.एक.
* **मा स्प्राक्षीः-** √स्पृश् + लुङ् म.पु.एक. माङ् के योग में अट् का आगम नहीं हुआ।
* **अकार्षुः-** √कृ + लुङ् + प्रथमपुरुष बहुवचन
* **उदतूतुलत्-** उत् + अतुतुलत् + √तुल् + लुङ् + प्र.पु.एकवचन
* **अश्रौषम्-** √श्रु + लुङ् + उत्तमपुरुष एक वचन
लङ्लकार
* **आरभत-** आङ् + √रभ् + लङ् + प्रथमपुरुष एकवचन
* **प्राविशत्-** प्र + √विश् + लङ् + प्रथमपुरुष एकवचन

प्रश्नोत्तर

- शिवराजविजयस्य रचनाकारः कः?**अम्बिकादत्तव्यासः**
- "शिवराजविजयः" इति उपन्यासात्मकं गद्यकाव्यं विरचितम्?–**अम्बिकादत्तेन**
- संस्कृतसाहित्ये प्रथमैतिहासिकोपन्यासस्य सौभाग्यं कः प्राप्तवान् ? –**शिवराजविजयः**
- "शिवराजविजयः" ग्रन्थः एकः -**उपन्यास**
- शिवराजविजयस्य मङ्गलाचरणमुद्धृतं वर्तते? **श्रीमद्भागवतपुराणात् उद्धृतमस्ति**
- शिवराजविजयः कस्मिन् विभक्तं वर्तते?–**निःश्वासेषु**
- शिवराजविजये कति निःश्वासाः विद्यन्ते?–**द्वादश**
- शिवराजविजयस्य प्रत्येकविरामेषु कति निःश्वासाः वर्तन्ते?– **चत्वारः**
- शिवराजविजयः इति रचनायाः नायकः अस्ति? **महाराष्ट्रकेसरी शिवाजी**
- शिवराजविजय इति गद्यकाव्यस्य आरम्भः भवति? **सूर्योदयवर्णनेन**
- शिवराजविजयं कीदृशं काव्यम्- **गद्यम्**
- शिवराजविजये का रीतिः? **पाञ्चाली**
- अम्बिकादत्तस्य अन्यासु संस्कृतरचनासु सम्मिलितोऽस्ति? **सामवतं-नाटकम्**
- सोमनाथतीर्थः केन पराजितोऽभवत् ? **महमूदनेन**
- सोमनाथतीर्थस्य देवता अस्ति? **महादेवः**
- महमूदगजनवी सिन्धुनदीम् उत्तीर्य कं स्वराजधानीं निर्मितवान्? – **गजनीम्**
- शिवराजविजये कान्यकुब्जस्य नृपः आसीत् ? **जयचन्द्रः**
- शिवराजविजये शिवाजी विहाय कस्य चरित्र-चित्रणं वर्तते?– गौरसिंहस्य
- शिवराजविजये कुत्रत्या घटना वर्णिता?–**महाराष्ट्रस्य**
- शिवराजविजये कीदृशीचेतनायाः प्रकाशः वर्तते? **राष्ट्रीयचेतनायाः**
- योगिराजेन प्रथमः समाधिः कदा स्वीकृतम्? **विक्रमादित्यस्य काले**

कथा साहित्य

पञ्चतन्त्र

विष्णुशर्मा का परिचय

नाम- विष्णुशर्मा

समय- लगभग 300 ई.पू.

(कथामुख में विष्णुशर्मा को शकलशास्त्रपारंगत छात्रों में अतिप्रिय एवं 80 वर्ष का वृद्ध व्यक्ति बताया गया है।)

*कुछ विद्वान् चाणक्य को ही विष्णुशर्मा मानते हैं, कुछ चाणक्य के पुत्र के रूप में विष्णुशर्मा को स्वीकार करते हैं। अन्य कुछ विद्वान् विष्णुशर्मा को इन सबसे अलग मानते हैं।

पञ्चतन्त्र का परिचय

लेखक - विष्णुशर्मा

काव्यविधा - नीतिकथा

विभाजन - 5 (पाँच) तन्त्रों में

उपजीव्य - ऋग्वेद, छान्दोग्य उपनिषद्

मुख्य कथाएँ - 6

उपकथाएँ - 69

कुल कथाएँ -75

श्लोक - 1103

तन्त्र तन्त्रनाम	उपकथाएँ	श्लोकसंख्या	कथा
प्रथम मित्रभेद	22	461	शेर और बैल की कथा
द्वितीय मित्रसंप्राप्ति	6	199	काक,कूर्म,मृग, चूहे की मित्रता
तृतीय काकोलूकीय	16	255	कौए एवं उल्लू की कथा
चतुर्थ लब्धप्रणाश	11	80	बन्दर और मगर की कथा
पञ्चम अपरीक्षितकारक	14	98	ब्राह्मणी एवं नेवले की कथा
(मुख्यकथा)	6	10	(भूमिका)
योग-	**75**	**1103**	

शैली- सरस एवं सरल

गुण- प्रसाद और माधुर्य

पञ्चतन्त्र के संस्करण

पञ्चतन्त्र की आठ वाचनाएँ (संस्करण) उपलब्ध हैं।

1. **तन्त्राख्यायिका-** इस संस्करण को डॉ. हर्टल ने प्रकाशित किया था जिसमें इसे प्राचीनतम उपलब्ध वाचना कहा गया है। इसका समय 300 ई. के आस-पास है।
राजनीति की शिक्षा के लिए इसकी रचना हुई थी अतः इसमें राजनीतिशास्त्र के प्राचीन ग्रन्थों से गद्य-पद्य के लम्बे उद्धरण मिलते हैं।
* इस वाचना की दो प्रतियाँ कश्मीर से शारदा लिपि में प्राप्त हुई।

2. **सरलपञ्चतन्त्र-** इसका सम्पादन किसी जैन विद्वान् ने किया था।
* इसका समय 1100ई. के लगभग है।
* यही पञ्चतन्त्र भारत में सर्वाधिक प्रचलित है।
* डॉ. ब्यूलर और कीलहार्न ने इसको परिष्कृत करके प्रकाशित कराया।

3. **पूर्णभद्रकृत पञ्चतन्त्र-** इस ग्रन्थ की रचना पूर्णभद्र नामक जैनसाधु ने 1199 ई. में की थी।
* इसे 'पञ्चाख्यानक' भी कहते हैं।
* पूर्व वाचना से अधिक परिष्कृत होने के कारण इसे 'अलङ्कृतवाचना' कहा गया है।
* जैन साधु मेघविजय ने 1660 ई. में कहानियों को चुनकर एक नया संस्करण बनाया जिसे 'पञ्चाख्यानोद्वार' कहते हैं।

4. **दक्षिणभारतीय पञ्चतन्त्र-**
यह कम से कम पाँच संस्करणों में उपलब्ध है।
* इसमें कथाएँ संक्षिप्त कर दी गयी हैं।
* एजर्टन के अनुसार इसमें मूलग्रन्थ का 3/4 गद्य और 2/3 पद्य सुरक्षित है।
* यह 600ई. के बाद का है।

5. **नेपाली पञ्चतन्त्र-** इसके तीन संस्करण हस्तलेखों में मिले हैं-
(1) केवल पद्यात्मक
(2) गद्य-पद्यात्मक (ये (1,2) दोनों संस्कृत भाषा में)
(3) नेवारी भाषा में कहानियों के साथ संस्कृत पद्यात्मक
* इसकी पाण्डुलिपि 1484ई. की है।

6. **हितोपदेश-** इसका सम्पादन नारायण पण्डित ने किया है।
* यह पञ्चतन्त्र का बहुत लोकप्रिय तथा संक्षिप्त संस्करण है।
* यह चार भागों में विभक्त है।
* इसके सम्पादन में पञ्चतन्त्र के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थ से भी सहायता की गयी है।

7. **उत्तर-पश्चिमी संस्करण-** गुणाढ्य के बृहत्कथा में इसी संस्करण का प्रयोग किया गया है।
* अब यह क्षेमेन्द्रकृत बृहत्कथामञ्जरी और सोमदेव कृत कथासरित्सागर में सुरक्षित है।
* इस संस्करण का कोई विशेष महत्त्व नहीं है।

8. **पहलवी संस्करण-** विदेशी भाषा में अनूदित यह प्रथम संस्करण है।
* खुसरो अनोशेरवाँ (6वीं शताब्दी) के शासनकाल में हकीम बुर्जोई ने इसका पहलवी रूपान्तर किया था।
* यह अनुवाद अब नष्ट हो चुका है।
किन्तु इसी का अनुवाद सीरियाई, अरबी भाषा में हुआ। तत्पश्चात् यूरोपीय भाषाओं में रूपान्तरित होकर दूसरे देशों में पहुँचा।

पञ्चतन्त्र का मङ्गलाचरण

ब्रह्मा रुद्रः कुमारो हरिवरुणयमा वह्निरिन्द्रः कुबेर-
श्चन्द्रादित्यौ सरस्वत्युदधियुग- नगा वायुरुर्वी भुजङ्गाः।
सिद्धा नद्योऽश्विनौ श्रीर्दितिरदितिसुता मातरश्चण्डिकाद्या
वेदास्तीर्थानि यज्ञा गणवसुमुनयः पान्तु नित्यं ग्रहाश्च॥1

भावार्थ- ब्रह्म, शिव, स्वामिकार्तिकेय, विष्णु, यम, अग्नि, इन्द्र, कुबेर, चन्द्र, सूर्य, सरस्वती, समुद्र, चारों युग, पर्वत, वायु, पृथ्वी, वासुकि आदि सर्प, कपिलादि सभी सिद्ध, नदियाँ, दोनों अश्विनी कुमार, लक्ष्मी, दिति, अदिति एवं उनके पुत्र देवता, चण्डिकादि माताएँ, ऋक्, यजुः, साम और अथर्व ये चारों वेद, प्रयाग आदि तीर्थ, अश्वमेधादि यज्ञ, प्रथमादि गण, आठों वसु, व्यास आदि मुनि, सूर्य आदि ग्रह नित्य हम लोगों की रक्षा करें।

मनवे, वाचस्पतये, शुक्राय पराशराय ससुताय।
चाणक्याय च विदुषे नमोऽस्तु नयशास्त्रकर्तृभ्यः॥2

भावार्थ- मनु, बृहस्पति, शुक्र, पुत्र व्यास सहित पराशरमुनि, विद्वान् चाणक्य आदि, नीतिशास्त्र को बनाने वाले आचार्यों को नमस्कार है।
* पञ्चतन्त्र के मङ्गलाचरण का प्रथम श्लोक आशीर्वादात्मक तथा द्वितीय श्लोक नमस्कारात्मक है।
* प्रथम श्लोक में अनेक देवी-देवताओं तथा द्वितीय श्लोक में अनेक आचार्यों की स्तुति है।
* मङ्गलाचरण के प्रथम पद्य में स्रग्धरा छन्द एवं द्वितीय पद्य में आर्या छन्द का प्रयोग किया गया है।

पञ्चतन्त्र में वर्णित विषय

* पञ्चतन्त्र के माध्यम से बालकों को नैतिक, धार्मिक एवं व्यावहारिक शिक्षा प्रदान किया गया है।
* रचनाकार ने सीखनें का माध्यम पशु-पक्षियों को बनाया है।
* इन कथाओं में दैनिक वाग्व्यवहार, करणीय-अकरणीय उपदेश, कर्त्तव्य-पालन, मित्ररक्षा, वचनपालन इत्यादि गुणों का वर्णन है तथा छल-कपट, अहङ्कार, अन्तःपुर के छल-छद्मपूर्ण व्यवहार एवं स्त्रियों की चरित्रहीनता आदि दोषों का भी वर्णन है।

* इसमें नैतिक एवं उपदेशात्मक शिक्षा का वर्णन पद्यों में किया गया है तथा कथाभाग का वर्णन गद्य में किया गया है।

पञ्चतन्त्र का संक्षिप्त कथासार

* पञ्चतन्त्र पाँच तन्त्रों में निबद्ध ग्रन्थ है। ये पाँच तन्त्र इस प्रकार हैं- **1.मित्रभेद 2.मित्रसम्प्राप्ति**

3. काक-उलूकीय 4.लब्धप्रणाश 5.अपरीक्षित कारक

* पञ्चतन्त्र में कथा से पूर्व दस श्लोकों के माध्यम से भूमिका भाग वर्णित है।

पञ्चतन्त्र का कथानक

कथामुख या भूमिका-

* मित्रभेद की प्रधान कथा के पूर्व- शास्त्रज्ञान से शून्य, विवेकहीन एवं दुर्व्यसनों से युक्त अपने मूर्ख पुत्रों से दुःखी महिलारोप्य के राजा अमरशक्ति की कथा है। राजा अपने पुत्रों को विष्णुशर्मा को सौंप देते हैं।
* विष्णुशर्मा प्रतिज्ञा लेते हैं कि वे राजा के तीनों मूर्खपुत्रों को छः महीने में राजनीति एवं नीतिशास्त्र में पारङ्गत बना देंगे।

1.मित्रभेद-

* इस तन्त्र में एक मुख्यकथा तथा 22 उपकथाएँ हैं।
* मुख्य कथा में पिङ्गलक नामक शेर (राजा) तथा संजीवक नामक बैल घनिष्ट मित्र थे।
* करटक एवं दमनक (दोनों मन्त्री) नामक सियारों ने उनमें फूट पैदा कर दिये और सिंह द्वारा बैल की हत्या करवा दी।
* अपने रक्तरञ्जित पञ्जों को देखकर सिंह को पश्चात्ताप होता है तब दमनक श्रृगाल अनेक युक्तियों से सिंह को सान्त्वना देता है और प्रधानमन्त्री पद पर बना रहता है।
* मित्रों के मध्य भेद उत्पन्न करना ही इस तन्त्र का मुख्य उद्देश्य है।

2. मित्रसम्प्राप्ति-

* इस तन्त्र में एक मुख्य कथा तथा सात उपकथाएँ हैं। मुख्य कथा इस प्रकार है-
* चित्रग्रीव नामक कबूतरों का राजा अपने दल सहित शिकारी के जाल में फँस जाता है।
* चित्रग्रीव पूरे समूह के साथ जाल लेकर उड़ जाता है अपने मित्र हिरण्यक नामक चूहे से सबका बन्धन कटवाता है।
* लघुपतनक नामक कौआ की चूहे एवं उसके पुराने मित्र मन्थरक नामक कछुए के साथ मित्रता होती है। हिरण्यक चूहा उसे अपना पहला घर छोड़ने का कारण बताता है।
* चित्राङ्ग नामक मृग, चूहे का चौथा मित्र बन जाता है। एक दिन वह मृग जाल में फँस जाता है और अपने मित्रों द्वारा मुक्त कराया जाता है।
* अन्त में मित्र का माहात्म्य बतलाकर तन्त्र समाप्त होता है।

3. काक-उलूकीय-

* इस ग्रन्थ में एक मुख्य कथा एवं 17 उपकथाएँ हैं। इसमें विग्रह (युद्ध) तथा सन्धि का वर्णन है।
* इसमें मुख्य कथा के अन्तर्गत- कौवों के राजा मेघवर्ण एवं उल्लुओं के राजा अरिमर्दन की कथा है।
* रात्रि के समय में उलूकराज चोंच मार-मारकर कौवों को मार डालता था।
* इससे त्रस्त होकर स्थिरजीवी नामक कौवे का मन्त्री एक उपाय अपने राजा को बताता है।
* वह स्थिरजीवी नामक कौआ बुद्धिपूर्वक उलूकराज से मित्रता करता है।
* वह कौआ उलूकराज के बगल ही अपना घोंसला बनाता है और बाद में उसमें आग लगाकर उल्लू शत्रुओं का नाश कर देता है।
* इसके बाद मेघवर्ण नामक कौवों का राजा अपने मन्त्री को पुरस्कार देकर निश्चिन्त होकर रहने लगा।

4. लब्धप्रणाश-

* इसमें एक मुख्य कथा एवं ग्यारह उपकथाएँ हैं।
* इसमें मुख्य कथा के रूप में कराल-मुख नामक मगर एवं रक्तमुख नामक वानर की कथा है।
* बन्दर प्रतिदिन मगर को जम्बूफल (जामुन) देता था।
* मगर उन जामुनों को स्वयं भी खाता और घर ले जाकर अपनी पत्नी को भी खिलाता।
* मगर की पत्नी बन्दर का दिल खाना चाहती है।
* मगर के साथ जा रहा बन्दर बीच रास्ते से यह कहकर लौट आता है कि 'मेरा दिल तो पेड़ पर छूट गया है।'
* इस प्रकार बन्दर की जान बच जाती है और मगर उसका मुँह देखता रह जाता है।
* मूर्खता के कारण हाथ में आयी हुई वस्तु भी निकल जाती है।
* अन्त में पुरुषार्थजन्य लक्ष्मी का माहात्म्य बतलाकर तन्त्र समाप्त हो जाता है।

5. अपरीक्षितकारक-

* इस पाँचवें तन्त्र के अन्तर्गत एक मुख्यकथा तथा 14 उपकथाएँ हैं।
* इसमें मुख्य रूप से भली-भाँति विचारपूर्वक सुपरीक्षित कार्य करने की नीति पर बल दिया गया है।
  मुख्य कथा का सार इस प्रकार है-
* एक ब्राह्मणी और एक नेवले की घनिष्ठ मित्रता होती है।
* नेवला ब्राह्मणी के बच्चे की सर्प से रक्षा करता है।
* एक ब्राह्मणी ने उस नेवले की यह समझकर हत्या कर दी कि नेवले ने उसके बच्चे को मार डाला।

* बाद में ब्राह्मणी अपने किये पर पश्चात्ताप करती है। अतः यह कथन सार्थक हुआ-

'बिना विचारे जो करे सो पाछे पछताय'

पञ्चतन्त्र का अन्तिम श्लोक

मन्त्रे, तीर्थे, द्विजे, देवे, दैवज्ञे, भेषजे, गुरौ।
यादृशी भावना यस्य, सिद्धिर्भवति तादृशी॥5/98॥

भावार्थ- मन्त्र में, तीर्थ में, ब्राह्मण में, देवता में, ज्योतिषी में, औषधि में, तथा गुरु में जिसकी जैसी भावना (श्रद्धा) होती है, उसको उनसे वैसा ही फल मिलता है और उसको वैसी ही सिद्धि भी होती है। अतः इन सबमें पूर्ण श्रद्धा ही कल्याण करने वाली है।

पञ्चतन्त्र की प्रमुख सूक्तियाँ

1. **कोऽर्थः पुत्रेण जातेन यो न विद्वान्न भक्तिमान्। (कथामुख/6)**

भावार्थ– इसी प्रकार उस पुत्र से क्या लाभ जो न विद्वान् हो और न ही माता-पिता गुरु एवं इष्ट देवों में प्रेम करने वाला हो।

2. **अनन्तपारं किल शब्दशास्त्रं स्वल्पं तथाऽऽयुबहवश्च विघ्नाः। (कथामुख/9)**

भावार्थ– शब्दशास्त्र (व्याकरण) का निश्चित कहीं अन्त नहीं है।

3. **जायन्ते विरला लोके जलदा इव सज्जनाः–(1/30)**

भावार्थ– उपकारी सज्जन तो कोई विरले ही होते हैं।

4. **पण्डितोऽपि वरं शत्रुर्न मूर्खो हितकारकः– (1/450)**

भावार्थ– कहा भी है यदि विद्वान् अपना शत्रु भी हो तो अच्छा, किन्तु मूर्ख हितकारी भी हो तो वह ठीक नहीं है।

5. **मूर्खाणां पण्डिता द्वेष्या निर्धनानां महाधनाः। 1/(449)**

भावार्थ– इसी प्रकार मूर्खों के लिए विद्वान् धनहीनों के लिए धनी निन्दा के पात्र हैं।

6. **नानाशास्त्रविचक्षणं च पुरुषं निन्दन्ति मूर्खाः सदा।**

भावार्थ– मूर्ख लोग विविध शास्त्रों के विशेषज्ञ पुरुष की निन्दा सदा करते रहते हैं। **(1/448)**

7. **न तत्र विद्यते दिव्यं किं पुनर्यत्र देवताः।(1/437)**

भावार्थ– जहाँ देवता साक्षी हों तो क्या पूछने की बात है?

8. **मन्त्रे तीर्थे द्विजे देवे दैवज्ञे भेषजे गुरौ।**

यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।(5/98)

भावार्थ– मन्त्र साधना में तीर्थयात्रा में तीर्थस्थान एवं ब्राह्मणों की सेवा आदि में देवताओं के विषय में भविष्यवक्ता ज्योतिषियों में औषधियों में तथा गुरु में जिस व्यक्ति की जैसी श्रद्धा होती है उसके अनुसार ही उसको फल भी मिलता है।

9. **सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्द्धं त्यजति पण्डितः। (5/41)**

भावार्थ– सर्वनाश की स्थिति उत्पन्न होने पर समझदार व्यक्ति आधा भाग छोड़कर शेष भाग को अपना लेता है।

10. **उत्सवे व्यसने प्राप्ते दुर्भिक्षे शत्रुसंकटे।**

राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति सबान्धवः। (5/40)

भावार्थ– उत्सव के समय आपत्तिकाल में दुर्भिक्ष पड़ने पर शत्रुओं से घिर जाने पर, राजसभा में और श्मशान में जो साथ रहता है, वही बन्धु होता है।

11. **अपि शास्त्रेषु कुशला लोकाचारविवर्जिताः**

सर्वे ते हास्यतां यान्ति यथा ते मूर्खपण्डिताः। (5/38)

भावार्थ– शास्त्रों में कुशल रहने पर भी लोकव्यवहार से अनभिज्ञ व्यक्ति उसी प्रकार उपहास के पात्र होते हैं जैसे वे लोकव्यवहार से हीन मूर्ख पण्डित बने थे।

12. **अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।**

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्। (5/38)

भावार्थ– यह अपना है और यह पराया है इस प्रकार का विचार संकुचित भावना के व्यक्ति करते हैं। उदार व्यक्तियों के लिए समस्त संसार ही अपना परिवार है।

13. **अतिलोभो न कर्त्तव्यो लोभं नैव परित्यजेत्। (5/2)**

भावार्थ– अधिक लालच नहीं करना चाहिए और सर्वदा लालच का त्याग भी नहीं करना चाहिए।

14. **सम्पत्तौ च विपत्तौ च महतामेकरूपता। (2/7)**

भावार्थ– सम्पत्ति और विपत्ति के समय महान् पुरुष समान भाव से रहते हैं।

15. **विद्वत्त्वं च नृपत्त्वं च नैव तुल्यं कदाचन।**

स्वदेशे पुज्यते राजा विद्वान्सर्वत्र पूज्यते॥ (2/58)

भावार्थ– विद्वत्ता और राजत्व कभी भी समान नहीं हो सकते क्योंकि राजा अपने ही देश में आदर पाता है परन्तु विद्वान् का सब जगह सत्कार होता है।

16. अतितृष्णा न कर्त्तव्या तृष्णां नैव परित्यजेत्। (2/80)

भावार्थ– तृष्णा अधिक नहीं करनी चाहिए और तृष्णा को सर्वथा छोड़ना भी नहीं चाहिए।

17. आयुःकर्म च वित्तं च विद्या निधनमेव च

पञ्चैतानि हि सृज्यन्ते गर्भस्थस्यैव देहिनः। (2/84)

भावार्थ– आयु, काम, धन, विद्या और मृत्यु ये पाँच गर्भ में स्थित ही प्राणी के निश्चित कर दिये जाते हैं।

18. महाजनस्य सम्पर्कः कस्य नोन्नतिकारकः। (3/60)

भावार्थ– यदि उत्तम पुरुष का आश्रय मिले तो करना ही क्या कहा भी गया है बड़े पुरुष का संसर्ग किसकी उन्नति का कारण नहीं होता।

19. बुभुक्षितः किं न करोति पापं क्षीणा जना निश्करुणा भवन्ति।

भावार्थ– भूखा मनुष्य कौन सा पाप नहीं करता (भूख मिटाने के लिए सब ही पाप करने को उद्यत हो जाता है) दरिद्र पुरुष निर्दयी होते हैं। **(4/16)**

20. एकेनापि सुधीरेण सोत्साहेन रणं प्रति। (4/42)

भावार्थ– एक भी पुरुष के धैर्यशाली और उत्साही होने पर सारी सेना युद्ध में उत्साहित हो जाती है।

21. न स्वल्पस्य कृते भूरि नाशयेन्मतिमान्नरः। (1/19)

भावार्थ- बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि थोड़े के लिए अपने विशेष लाभ को नष्ट न करें।

22. अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितं, सुरक्षितं दैवहतं विनश्यति।

भावार्थ- अनाथ प्राणी भी जिसका कोई भी रक्षक नहीं है, भयङ्कर वन में भी आनन्द से जीवन व्यतीत कर सकता है। **(1/20)**

23. पुत्रीति जाता महतीह चिन्ता। (1/222)

भावार्थ- पुत्री के जन्मते ही बड़ी भारी चिन्ता हो जाती है।

24. यस्य बुद्धिर्बलं तस्य। (1/237)

भावार्थ- जिस पुरुष के पास बुद्धि है, वही बलवान् है।

25. यस्मिन्कुले यः पुरुषः प्रधानः स सर्वयत्नैः परिरक्षणीयः।

भावार्थ- जिस कुल में जो पुरुष प्रधान है उसकी तो पूरे प्रयत्न से ही रक्षा करनी चाहिए। **(1/314)**

26. त्याज्यं न धैर्यं विधुरेऽपि काले। (1/345)

भावार्थ- घोर विपत्तिकाल में भी मनुष्य को धैर्य का परित्याग नहीं करना चाहिए।

27. यो न वेत्ति गुणान्यस्य न तं सेवेत पण्डितः। (1/381)

भावार्थ- जो मालिक नौकर के गुणों को न समझे, उस भृत्य को उसकी सेवा और नौकरी छोड़ देनी चाहिए।

28. त्यजदेकं कुलस्याऽर्थे। (1/386)

भावार्थ- यदि किसी एक बुरे और दुष्ट को छोड़ने से बहुतों की भलाई और हित होता हो तो उस एक को छोड़ देना चाहिए।

29. उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी। (1/135)

भावार्थ- उद्योगी (कर्मनिष्ठ) पुरुष के पास ही लक्ष्मी आती हैं।

30. मातृवत् परदाराणि परद्रव्याणि लोष्ठवत्। (1/435)

भावार्थ- जो धर्मात्मा और धर्मबुद्धि हैं वे पराई स्त्री को माता की तरह और पराये धन को मिट्टी के ढेले की तरह समझते हैं।

31.उपायं चिन्तयेत्प्राज्ञस्तथापायं च चिन्तयेत्।1/439

भावार्थ- बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि- उपाय सोचने के साथ ही साथ, अपाय (हानि) की भी पहले से ही चिन्ता कर लें।

महत्त्वपूर्ण तथ्य-

* आरम्भिक जीवन में भाषा-शैली की शिक्षा के साथ व्यवहार कुशलता की शिक्षा पाने के लिए पञ्चतन्त्र जैसा ग्रन्थ विश्व-साहित्य में नहीं हैं।
* पञ्चतन्त्र के 250 संस्करण विश्व की 50 भाषाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। इनमें तीन चौथाई भाषाएँ विदेशी हैं।
* पञ्चतन्त्र में नीतिकथाओं का संकलन है, इनका उद्देश्य मनुष्य को आदर्शवादी और लोकव्यवहारवादी बनाना है।
* पञ्चतन्त्र को सम्पूर्ण अर्थशास्त्र का सार भी कहा गया है।
* कथा के पात्र मनुष्य न होकर जीव-जन्तु या पशु-पक्षी हैं अतः ये कथाएँ धर्म, जाति, व्यक्ति, राष्ट्र और सभी प्रकार की संकीर्णताओं से ऊपर उठकर मानवमात्र की सम्पत्ति हो गयी हैं। यही कारण है कि-
* Great short stories of the world* नामक आधुनिक कहानी संग्रह में पञ्चतन्त्र की कहानियों को प्रमुख स्थान प्राप्त हुआ है।
* बाइबिल के बाद पञ्चतन्त्र का ही संसार में सर्वाधिक प्रचार है।

पञ्चतन्त्र के प्रमुख अनुवाद

1. सबसे महत्त्वपूर्ण हकीम बुर्जोई का अनुवाद है जो पहलवी भाषा में है। किन्तु अब प्राप्त नहीं है।
2. बुड ने पञ्चतन्त्र का पहलवी भाषा से सीरियन भाषा में अनुवाद किया।
3. अब्दुल्ला इब्नल मोवफ्फा ने पञ्चतन्त्र का अरबी अनुवाद किया। अरबी अनुवाद का नाम 'कलिलह-दिमनह' है। इसी अरबी संस्करण से ही पश्चिमी संस्करण निकले हैं।

अन्य अनुवाद

1. **सिमियन कृत-** ग्रीक (यूनानी) अनुवाद
2. **गियुलियो नूति कृत-** इटालियन अनुवाद
   ग्रीक अनुवाद से ही 2 लैटिन, 1 जर्मन एवं कई स्लाव भाषा में अनुवाद हुए।
3. **रब्बी जोइल कृत-** अरबी से हिब्रू अनुवाद
4. **जान ऑफ केपुआ कृत-** लैटिन अनुवाद
5. **एन्थानियस फान फर कृत-** जर्मन अनुवाद
   इससे डैनिश, आइसलैण्डिक और डच अनुवाद हुए।
6. **सर टामस नार्थ कृत-** अंग्रेजी अनुवाद
7. **अबुल-मआली नसरल्ला-** अरबी अनुवाद
8. **अनवारि सुहेली कृत-** फारसी अनुवाद
   इसी से तुर्की, फ्रेंच, डच, हंगारियन, जर्मन और मलय भाषाओं में अनुवाद हुए।

हितोपदेशः

- हितोपदेश के लेखक– **नारायण पण्डित**
- नारायण पण्डित बंगाल के राजा ''धवलचन्द्र'' के आश्रित कवि थे, तथा राजा के आदेश पर ही इन्होनें यह हितोपदेश सङ्कलित किया-
  इसका साक्षात् प्रमाण स्वयं ही उनके द्वारा रचित हितोपदेश के अन्तिम श्लोक में प्राप्त होता है-

श्रीमान् धवलचन्द्रोऽसौ
जीयान्माण्डलिको रिपून् ।
येनायं संग्रहो यत्ना
ल्लेखयित्वा प्रचारितः ॥

- हितोपदेश **14वीं** शताब्दी की रचना है।
- हितोपदेश **4 परिच्छेदों** में विभाजित है। इसमें **43** कथाएँ हैं, **4 मुख्य + 39 उपकथाएँ** हैं।
- इस तरह कुल **43 कथाएँ** हैं। **4 कथाएँ** प्रत्येक भाग की मुख्य कथाएँ हैं।
- हितोपदेश में **25 कथाएँ** पञ्चतन्त्र से ली गयी है।
- पञ्चतन्त्र को छोड़ दे तो केवल **17** कहानियाँ नई हैं।
- हितोपदेश का आधारग्रन्थ पञ्चतन्त्र है, ग्रन्थ के आरम्भ में ही इसका सुस्पष्ट उल्लेख मिलता है।
  ''पञ्चतन्त्रात् तथाऽन्यस्माद् ग्रन्थादाकृष्य लिख्यते''
- नारायण पण्डित द्वारा पञ्चतन्त्र के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थों से भी सुभाषित पद्य ग्रहण किया गया हैं, जिनमें से **''कामन्दकीय नीतिसार''** प्रमुख है।
- प्रस्ताविका में पाटलिपुत्र के राजा सुदर्शन के **4 मूढ़** पुत्रों को ''विष्णु शर्मा'' द्वारा नीतिशिक्षा देने की कथा है।
- इसमें **4 परिच्छेद** क्रमशः इस प्रकार है–
  1. मित्रलाभः 2. सुहृद्भेदः 3. विग्रहः 4. सन्धिः

क्र.सं.	परिच्छेदनाम	मुख्यकथा	उपकथा	श्लोक सं.
1.	मित्रलाभः	काक, कूर्म, मृग व चूहे की मित्रता	8	212
2.	सुहृद्भेदः	शेर व बैल की मित्रता तुड़वाने की कथा	9	184
3.	विग्रहः	हंस व मोरों के युद्ध की कथा		149
4.	सन्धिः	हंस व मोरों राजाओं में सन्धि की कथा	12	134
	प्रस्ताविका	राजा सुदर्शन के मूर्ख पुत्रों की कथा	1	47
				726

- हितोपदेश में **726** पद्य हैं।
- इसकी भाषाशैली सरल, सुबोध एवं उपेदशात्मक तथा प्रेरणाप्रद है।
- इसमें संस्कृतनिष्ठ गद्य तथा पद्य का मिश्रित रूप से प्रयोग किया गया है।
- प्रत्येक खण्ड के अन्त में शिव से अनुग्रह की कामना करने वाले आशीर्वादात्मक वचन प्राप्त होते हैं।
- पशु-पक्षियों के साधारण कहानियों द्वारा इसमें व्यावहारिक जीवन के आदर्श एवं सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये हैं।
- इसके प्रस्ताविका में मंगलाचरण के रूप में भगवान् शङ्कर के कृपा-प्रसाद की कामना की गयी है।

सिद्धिः साध्ये सतामस्तु प्रसादात्तस्य धूर्जटेः ।
जाह्नवी फेनलेखेव यन्मूर्ध्नि शशिनः कला ॥

अर्थ– जिसके मस्तक पर गङ्गा के फेन की रेखा की भाँति (पतली एवं श्वेत) चन्द्रमा की कला (विराजमान) है, उस भगवान् शिव की कृपा से सज्जनों के अभीष्ट कार्य में सफलता हो।

मङ्गलाचरण

अजरामरवत् प्राज्ञो विद्यामर्थं च चिन्तयेत् ।
गृहीत इव केशेषु मृत्युना धर्ममाचरेत् ॥3॥

अर्थ- बुद्धिमान् व्यक्ति अजर-अमर की भाँति विद्या धनसञ्चय का विचार करें। (किन्तु) मृत्यु ने बाल पकड़ रखे हैं, इस प्रकार (सोचकर) धर्म-सञ्चय करें।

विद्या ददाति विनयं विनयाद् याति पात्रताम् ।
पात्रत्वाद् धनमाप्नोति धनाद् धर्मस्तः सुखम् ॥6॥

अर्थ- विद्या (मनुष्य को) विनय प्रदान करती है, विनय से योग्यता मिलती है, योग्यता से धन प्राप्त होता है, धन से धर्म-कार्य होते हैं और इसके बाद (मनुष्य) सुख प्राप्त करता है।

विद्या शस्त्रस्य शास्त्रस्य द्वे विद्ये प्रतिपत्तये।
आद्या हास्याय वृद्धत्वे द्वितीयाद्रियते सदा ॥7॥

अर्थ- शस्त्र-विद्या और शास्त्र-विद्या, ये दोनों विद्यायें (मनुष्य की) उन्नति के लिए हैं। (इनमें से) पहली (अर्थात् शस्त्र-विद्या) बुढ़ापे में उपहास करती है किन्तु दूसरी (अर्थात् शास्त्र विद्या) सदैव आदर प्राप्त कराती है।

अनेकसंशयोच्छेदि परोक्षार्थस्य दर्शकम् ।
सर्वस्य लोचनं शास्त्रं यस्य नास्त्यन्ध एव सः ॥10॥

अर्थ- अनेक शङ्काओं को दूर करने वाला, गुप्त अर्थ को दिखलाने वाला, सभी का नेत्र, शास्त्र जिसके पास नहीं है, वह अन्धा ही है (अर्थात् भौतिक नेत्र होते हुए भी शास्त्रज्ञान से रहित जन अन्धा ही है)।

वरमेको गुणी पुत्रो न च मूर्खशतान्यपि ।
एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति न च तारागणा अपि च ॥18॥

अर्थ- सौ मूर्ख पुत्रों की अपेक्षा गुणवान् पुत्र अकेला भी अच्छा है। एक ही चन्द्रमा (रात के) अन्धकार को दूर करता है किन्तु सभी तारे मिलकर भी (उसे) नहीं (दूर कर पाते)।

अनभ्यासे विषं विद्या अजीर्णे भोजनं विषम् ।
विषं सभा दरिद्रस्य वृद्धस्य तरुणी विषम् ॥23॥

अर्थ- अभ्यास न करने से विद्या, अपच में भोजन, दरिद्र के लिए सभा और बुड्ढे मनुष्य की युवती (पत्नी) विषतुल्य हैं।

आहारनिद्राभयमैथुनञ्च
सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम् ।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो
धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः ॥25॥

अर्थ- भोजन, नींद, भय और स्त्रीसम्भोग- ये मनुष्यों और पशुओं में एक समान होते हैं। धर्म ही मनुष्यों का एक अतिरिक्त विभेदक तत्त्व है (अन्यथा) धर्म से रहित मनुष्य भी पशुओं के ही समान हैं अर्थात् फिर उन दोनों में कोई अन्तर नहीं है।

धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते ।
अजागलस्तनस्येव तस्य जन्म निरर्थकम् ॥

अर्थ- जिस व्यक्ति के पास धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में से एक भी नहीं है उसका जन्म लेना बकरी के गले की लटकती हुई झिल्ली के समान व्यर्थ है।

आयुः कर्म च वित्तं च विद्या निधनमेव च ।
पञ्चैतान्यपि सृज्यन्ते गर्भस्थस्यैव देहिनः ॥27॥

अर्थ- आयु, भाग्य, धन, विद्या और मृत्यु-ये पाँचों ही (उसी समय) बना दी जाती हैं (अर्थात् निश्चित कर दी जाती है) जबकि प्राणी गर्भ में ही रहता है।

यथा ह्येकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत् ।
तथा पुरुषकारेण विना दैवं न सिद्ध्यति ॥ 29॥

अर्थ- जैसे अकेले (केवल एक) पहिए से रथ नहीं चल सकता, उसी प्रकार पौरुष के बिना भाग्य भी सिद्ध नहीं होता। (अर्थात् भाग्य तभी साथ देता है जब स्वयं प्रयत्नशील रहा जाए)।

उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः ।
न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः ॥36॥

अर्थ- कार्य प्रयत्न करने से सफल (पूर्ण) होते हैं। न कि केवल सोचने या इच्छा करने मात्र से। सोए हुए सिंह के मुँह में पशु स्वयमेव नहीं प्रवेश कर जाते हैं।

माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः ।
न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये बको यथा ॥38॥

अर्थ- जिसने बालक को पढ़ाया नहीं, वह माता शत्रु है और पिता (भी) शत्रु है। वह बालक भी (विद्वानों की) सभा में उसी प्रकार सुशोभित नहीं होता जैसे हंसों के बीच बगुला।

''कीटोऽपि सुमनःसङ्गादारोहति सतां शिरः ।
अश्मापि याति देवत्वं महद्भिः सुप्रतिष्ठितः ॥ 45॥

अर्थ- फूल के साथ कीड़ा भी सज्जनों के सिर पर चढ़ जाता है। महानुभावों के द्वारा सुप्रतिष्ठित होकर पत्थर भी देवता बन जाता है।

''काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम् ।
व्यसनेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा

अर्थ- ''बुद्धिमानों का समय काव्यशास्त्रादि-विनोद से बीतता है और मूर्खों का (समय) जुआ आदि दुर्व्यसन, नींद अथवा झगड़ा फसाद से (बीतता) है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् (1-4) अंक

1. महाकवि कालिदास का परिचय

- **पत्नी** – विद्योत्तमा
- **श्वसुर** – शारदानन्द
- **मित्र** – लङ्का के राजा कुमारदास
- **समय** – ईसापूर्व प्रथम शताब्दी
- **जन्मस्थान** – उज्जयिनी (काश्मीरी/बंगाली)
- **आश्रयदाता** – चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य
- **जाति/गोत्र** – ब्राह्मण
- **रचनायें कालक्रम की दृष्टि से**– 1. ऋतुसंहार (गीतिकाव्य), 2. कुमारसम्भवम् (महाकाव्य), 3. मालविकाग्निमित्रम् (नाटक), 4. विक्रमोर्वशीयम् (त्रोटक), 5. मेघदूतम् (खण्डकाव्य), 6. रघुवंशम् (महाकाव्य), 7. अभिज्ञानशाकुन्तलम् (नाटक)
- **उपासक** – शिव के
- **प्रिय छन्द** – उपजाति/अनुष्टुप्
- **प्रिय अलङ्कार** – उपमा
- **कालिदास की रीति एवं गुण** – वैदर्भी रीति एवं प्रसादगुण
- **कालिदास का प्रिय रस** – शृङ्गार रस
- **कालिदास की अन्य कृतियाँ**–(i) कालीस्तोत्र, (ii) गङ्गाष्टक, (iii) ज्योतिर्विदाभरण, (iv) राक्षसकाव्य, (v)श्रुतबोध

कालिदासीय जीवन के कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य

- काली देवी की उपासना से विद्या की प्राप्ति।
- विद्याप्राप्ति के बाद कालिदास का कथन–
  'अनावृतकपाटं द्वारं देहि' (दरवाजा खोलो)
- इसके उत्तर में पत्नी विद्योत्तमा का कथन–
  'अस्ति कश्चित् वाग्विशेषः' (लगता है कोई विद्वान् है)
- **'अस्ति' से कुमारसम्भवम्** – "अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा...."
- **'कश्चित्' से मेघदूतम्** – "कश्चित् कान्ता विरहगुरुणा...."
- **'वाग्' से रघुवंशम्** – "वागर्थाविव सम्पृक्तौ....."
- **विक्रमादित्य की सभा में 9 रत्न** थे, जिसमें से एक कालिदास भी थे–

धन्वन्तरि-क्षपणकामरसिंह -शङ्कु-
वेतालभट्ट-घटकर्पर-कालिदासाः।
ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः सभायां
रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य॥
(ज्योतिर्विदाभरण 22-10)

- एक किंवदन्ती के अनुसार धारा के राजा भोज के प्रधानकवि कालिदास थे।
- एक किंवदन्ती के अनुसार कालिदास का अन्तिम समय लंका के महाराज कुमारदास के यहाँ बीता, वहाँ धन के लोभ में एक वेश्या ने उनकी **हत्या करा दी**।
- कालिदास ने वेद, दर्शन, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, गीता, पुराण, आयुर्वेद, धनुर्वेद, सङ्गीतशास्त्र, ज्योतिष, व्याकरण, छन्दःशास्त्र, काव्यशास्त्र आदि का गम्भीर अध्ययन किया था।
- बाद में राजकवियों को 'कालिदास' कहने की परम्परा चल पड़ी। **राजशेखर** ने ऐसे तीन कालिदासों का उल्लेख किया है–

एकोऽपि जीयते हन्त कालिदासो न केनचित्।
शृङ्गारे ललितोद्गारे कालिदासत्रयी किमु॥

- **कालिदास की उपाधियाँ**–(i) दीपशिखा कालिदास (ii) रघुकार (iii) कविकुलगुरु (iv) कविताकामिनीविलास (v) उपमासम्राट्
- महाकवि कालिदास ने मालविकाग्निमित्र की प्रस्तावना में **"प्रथितयशसां भाससौमिल्ल....."** के द्वारा भास, सौमिल्ल आदि अपने पूर्ववर्ती कवियों को सादर स्मरण किया है।

कालिदास की प्रशस्तियाँ

1. निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु।
   प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते।
   – बाणभट्ट-हर्षचरित
2. साकूतमधुरकोमलविलासिनीकण्ठकूजितप्राये।
   शिक्षासमयेऽपि मुदे रतलीला-कालिदासोक्ती।।
   – गोवर्धनाचार्य-आर्यासप्तशती–35
3. कविकुलगुरुः कालिदासो विलासः **– जयदेव-प्रसन्नराघवम्**
4. लिप्ता मधुद्रवेणासन् यस्य निर्विषया गिरः।
   तेनेदं वर्त्म वैदर्भं कालिदासेन शोधितम्।।
   – दण्डी-अवन्तिसुन्दरीकथा
5. अस्पृष्टदोषा नलिनीव दृष्टा, हारावलीव ग्रथिता गुणौघैः।
   प्रियाङ्कपालीव प्रकामहृद्या, न कालिदासादपरस्य वाणी।।
   – श्रीकृष्ण
6. ख्यातः कृतीसोऽपि च कालिदासः, शुद्धा सुधा स्वादुमती च यस्य।
   वाणीमिषाच्चन्द्रमरीचिगोत्रसिन्धोः परं पारमवाप कीर्तिः।।
   – सोड्ढल (उदयसुन्दरी कथा)
   अमृतेनेव संसिक्ताश्चन्दनेनैव चर्चिताः।
   चन्द्रांशुभिरिवोद्घृष्टाः कालिदासस्य सूक्तयः।।
   – जयन्त-न्यायमञ्जरी
7. एकोऽपि जीयते हन्त कालिदासो न केनचित्।
   शृङ्गारे ललितोद्गारे कालिदासत्रयी किमु।।
   –राजशेखर-सूक्तिमुक्तावली
8. वैदर्भी कविता स्वयं वृतवती श्रीकालिदासं वरम्। **–अज्ञात**
9. पुष्पेषु चम्पा नगरीषु काञ्ची, नदीषु गङ्गा नृवरेषु रामः।
   नारीषु रम्भा पुरुषेषु विष्णुः, काव्येषु माघः कविकालिदासः।।
   – घटखर्पर

10. महिषं दधि सशर्करं पयः कालिदासकविता नवं वयः।
शारदेन्दुरबला च कोमला स्वर्गशेषमुपभुञ्जते जनः।।
– आचार्य उद्भट
11. काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या 'शकुन्तला'।
तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कः तत्र श्लोकचतुष्टयम्।। **– अज्ञात**
12. Wouldst thou the young year
blossoms and the fruits of its decline
And all by which the soul is charmed
enraptured, fearted, fed.
Wouldst thou the earth and heaven
itseff in one sole name combine?
I name the, O' Shakuntala
And all atonce is said. – **(Goethe)**

(संस्कृत-अनुवाद)

13. वासन्तं कुसुमं फलञ्च युगपद्, ग्रीष्मस्य सर्वं च यद्
यच्चान्यन्मनसो रसायनमतः सन्तर्पणं मोहनम्।
एकीभूतमभूतपूर्वमथवा स्वर्लोकभूलोकयोः
ऐश्वर्यं यदि वाञ्छसि प्रियसखे! शाकुन्तलं सेव्यताम्।।
– (जर्मन कवि गेटे का अनुवाद) **वी. वी. मिराशी**
14. अस्मिन्निति विचित्रकविपरम्परावाहिनि-संसारे–
कालिदासप्रभृतयो द्वित्राः पञ्चषा वा महाकवय इति गण्यन्ते।
– आचार्य आनन्दवर्धन
15. वैदर्भीरीतिसन्दर्भे कालिदासो विशिष्यते। **– अज्ञात**
16. उपमा कालिदासस्य **– उद्भट**
17. कालिदासस्य सर्वस्वमभिज्ञानशाकुन्तलम्।
तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कः यत्र याति शकुन्तला।। **– अज्ञात**
18. श्रीकालिदासकविवर्य-सरस्वतीयं
किं वर्णयाम्यतितरां रसवाहिनीति।
यत् कालिका भगवती शुचिभावयोगाद्
यस्यामहो मुहुरनुग्रहमादधाति।। **– विठोबा अण्णा**
19. पुरा कवीनां गणना-प्रसङ्गे
कनिष्ठिकाधिष्ठित कालिदासः।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावा-
दनामिका सार्थवती बभूव।। **– मल्लिनाथ**
20. रसभार-भारोद्भिन्नां भारतीममरादृते।
श्रीमतः कालिदासस्य विज्ञातुं कः क्षमः पुमान् **– स्थिरदेव**
21. स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रितकालिदासभारविकीर्तिः।।
– एहोल शिलालेख
22. कालिदासगिरां सारं कालिदासः सरस्वती।
चतुर्मुखोऽथवा साक्षाद् विदुर्नान्ये तु मादृशाः।। **– मल्लिनाथ**
23. सुवशा कालिदासस्य मन्दाक्रान्ता प्रवल्गति।
– क्षेमेन्द्र (सुवृत्ततिलक)
24. भासयत्यपि भासादौ कविवर्गे जगत्त्रयम्।
के न यान्ति निबन्धारः कालिदासस्य दासताम्।। **–अज्ञात**
25. ``Kalidas may be considered as the brightest star in the firmament of indian artificial poetry"
– Prof. Lassen
26. कवयः कालिदासाद्याः कवयो वयमप्यमी।
पर्वते परमाणौ च पदार्थत्वं प्रतिष्ठितम्।। **– अज्ञात**
27. वाल्मीकिमिव सभासं यशःशरीरेण सर्वदा सन्तम्।
रसवद्वचनविकासं नमत कविं कालिदासं तम्।। **– अज्ञात**
28. कविरचलः कविरभिनन्दश्च कालिदासश्च।
अन्ये कवयः कपयश्चापलमात्रं परं दधाति।। **– अज्ञात**
29. कवयः कवयः कवयोऽपि च कालिदासाद्याः।
दृषदो भवन्ति दृषदाश्चिन्तामणयोऽपि हा दृषदः।। **– अज्ञात**
30. मेघे माघे गतं वयः। **– मल्लिनाथ**
31. कालिदासादीनामिव यशः। **– मम्मट**
32. धन्वन्तरिक्षपणकाऽमरसिंहशंकु-बेतालभट्ट घटकर्परकालिदासाः।
– ज्योतिर्विदाभरण
33. महाकविकालिदासं वन्दे वाग्देवतागुरुम्।
यज्ज्ञाने विश्वमाभाति दर्पणे प्रतिबिम्बितम्।। **– हलायुध**
34. क इह रघुकारे न रमते। **– आलोचक**

अभिज्ञानशाकुन्तलम् का परिचय

➢ **लेखक** – कालिदास
➢ **विधा** – नाटक
➢ **अङ्क** – 7 (सात)
➢ **प्रधानरस** – शृङ्गार (सम्भोगशृङ्गार)
➢ **कथानक** – राजा दुष्यन्त एवं शकुन्तला का परस्पर प्रेम, विरह एवं मिलन का वर्णन है।
➢ **प्रमुखपात्र** – दुष्यन्त (नायक), शकुन्तला (नायिका) कण्व, अनसूया, प्रियंवदा, माढव्य (विदूषक), गौतमी, शार्ङ्गरव, शारद्वत, हंसपदिका, वसुमती, मातलि, सानुमती, सर्वदमन (भरत), मारीच ऋषि, अदिति (दाक्षायणी), दुर्वासा, मेनका
➢ शाकुन्तलम् का उपजीव्य/आधारग्रन्थ है – **1. महाभारत के आदिपर्व का शकुन्तलोपाख्यान (68-74 अध्यायों में), 2. पद्मपुराण के स्वर्गखण्ड में भी यह कथा मिलती है।**
➢ अभि0 शाकुन्तलम् नाटक की रीति – **वैदर्भी रीति**
➢ वैदर्भीरीतिसन्दर्भे विशिष्यते – **कालिदासः**
➢ कालिदास के काव्यों में किस वृत्ति का विशेष प्रयोग है–**कैशिकी**
➢ कालिदास का प्रिय अलङ्कार – **उपमा** (उपमा कालिदासस्य)।
➢ अभि0शाकु0 के प्रथम अङ्क का नाम – **आश्रम प्रवेश**
➢ द्वितीय अङ्क का नाम – **आश्रम निवेश**
➢ तृतीय अङ्क का नाम – **मिलन अङ्क**

➢ चतुर्थ अङ्क का नाम – **विदा अङ्क**
➢ पञ्चम अङ्क का नाम – **प्रत्याख्यान अङ्क**
➢ षष्ठ अङ्क का नाम – **पश्चात्ताप अङ्क।**
➢ सप्तम अङ्क का नाम – **पुनर्मिलन अङ्क।**
➢ शाकुन्तलम् के **चतुर्थ अङ्क** में करुणरस का प्रयोग है।
➢ शकुन्तला का हस्तिनापुर (पतिगृह) गमन **चतुर्थ अङ्क में** वर्णित है।
➢ अभिज्ञानशाकुन्तलम् का नायक – **दुष्यन्त**
➢ दुष्यन्त **धीरोदात्त** कोटि का नायक है।
➢ राजा दुष्यन्त कहाँ का राजा है – **हस्तिनापुर**
➢ अभिज्ञानशाकुन्तलम् की नायिका – **शकुन्तला**
➢ शकुन्तला किस कोटि की नायिका है – **मुग्धा**
➢ शकुन्तला है – **शकुन्तभिः पक्षिभिः लालिता पालिता इति शकुन्तला**
➢ अभिज्ञानशाकुन्तलम् का मङ्गलाचरण है – **आशीर्वादात्मक**
➢ अभि० शाकुन्तलम् के मङ्गलाचरण में छन्द है – **स्त्रग्धरा**
➢ ''या सृष्टिः स्त्रष्टुराद्या....." इत्यादि श्लोक कहाँ का है – **अभि०शाकु० नाटक का मङ्गलाचरण**
➢ अभि०शाकु० के मङ्गलाचरण में किसकी स्तुति की गयी है – **अष्टमूर्ति शिव की**
➢ **''तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कः''** से सम्बन्धित नाटक – **अभिज्ञानशाकुन्तलम्**
➢ **''तत्र श्लोकश्चतुष्टयम्''** किससे सम्बन्धित है – **अभि० शाकुन्तलम् के चतुर्थ अङ्क से**
➢ ''काव्येषु नाटकं रम्यम्'' इस वाक्य में किस नाटक का संकेत है – **अभिज्ञानशाकुन्तलम् का**
➢ दुष्यन्त का विनोदप्रिय मित्र – **माढव्य**
➢ अभि० शाकुन्तलम् का विदूषक – **माढव्य**
➢ शकुन्तला की दोनों सखियाँ – **1. अनसूया. 2. प्रियंवदा।**
➢ शकुन्तला के माता और पिता– **मेनका और ऋषि विश्वामित्र**
➢ शकुन्तला के पालक (धर्मपिता) पिता – **महर्षि कण्व**
➢ महर्षि कण्व के दो प्रमुख शिष्य – **शार्ङ्गरव और शारद्वत**
➢ दुष्यन्त और शकुन्तला का विवाह हुआ – **गान्धर्व विवाह**
➢ शकुन्तला को किसने शाप दिया – **ऋषि दुर्वासा ने**
➢ शकुन्तला को शाप का कारण – **अतिथि रूप में पधारे दुर्वासा ऋषि का तिरस्कार**
➢ शकुन्तला के शाप को जानने वाली – **प्रियंवदा और अनसूया**
➢ शकुन्तला को शाप मिला– **अभि०शाकु० के चतुर्थ अङ्क में**
➢ अभि०शा० में शाप की कल्पना का कारण – **प्रेम के आदर्शस्वरूप की स्थापना**
➢ शाप का प्रभाव किस अङ्क में दिखायी पड़ता है – **अभि०शा० के पञ्चम अङ्क में**
➢ राजा दुष्यन्त के पश्चात्ताप का वर्णन – **षष्ठ अङ्क में**
➢ राजा दुष्यन्त और शकुन्तला का पुनर्मिलन होता है – **अभि०शा० के सप्तम अङ्क में**
➢ हेमकूट पर्वत पर आश्रम है – **महर्षि मारीच का।**
➢ दुष्यन्त और शकुन्तला का पुनर्मिलन – **हेमकूट पर्वत के मारीच आश्रम में।**
➢ शकुन्तला की मुद्रिका प्राप्त होती है– **धीवर मीनपालक को**
➢ दुष्यन्त और शकुन्तला के पुत्र का नाम– **सर्वदमन (भरत)**
➢ अभि० शा० का प्रारम्भ होता है – **नान्दीपाठ से (या सृष्टिः स्त्रष्टुराद्या)**
➢ अभि०शा० का समापन होता है – **भरत वाक्य से (प्रवर्ततां प्रकृतिहिताय पार्थिवः....)।**
➢ कालिदास का सर्वस्वभूतग्रन्थ है – **अभिज्ञानशाकुन्तलम्। ''कालिदासस्य सर्वस्वमभिज्ञानशाकुन्तलम्।''**
➢ अभिज्ञानशाकुन्तलम् के विषय में **पाश्चात्त्य विद्वान् गेटे** का कथन – Wouldst thou the young year's blossoms and the fruits of its decline, and all by which the soul is charmed, enraptured adapted, fed wouldst thou the earth and heaven it self in one name combined? I name the o shakuntala? And all at once is said.

संस्कृतरूपान्तरण

वासन्तं कुसुमं फलञ्च युगपद् ग्रीष्मस्य सर्वं च यद्,
यच्चान्यन्मनसो रसायनमतः सन्तर्पणं मोहनम्।
एकीभूतमभूतपूर्वमथवा स्वर्लोकभूलोकयोः,
ऐश्वर्यं यदि वाञ्छसि प्रियसखे! शाकुन्तलं सेव्यताम्।।

➢ कालिदास का विश्वप्रसिद्ध नाटक है – **अभिज्ञानशाकुन्तलम्।**
➢ अभिज्ञानशाकुन्तलम् के सर्वप्रथम अंग्रेजी अनुवादक – **विलियम जोन्स**
➢ विलियम जोन्स ने **The last things** की भूमिका में कालिदास को **'भारत का शेक्सपियर'** कहा।
➢ **महाकवि गेटे** ने अपने सुप्रसिद्ध नाट्यकाव्य **'फाडस्ट'** में कालिदास के अभिज्ञानशाकुन्तलम् और नायिका शकुन्तला की भूरि-भूरि प्रशंसा की।
➢ कालिदास द्वारा विरचित तीन नाटक हैं – **1. मालविकाग्निमित्रम्** (प्रथमनाटक), **2. विक्रमोर्वशीयम्** (द्वितीय नाटक), **3. अभिज्ञानशाकुन्तलम्** (अन्तिम तथा सर्वश्रेष्ठ नाटक)
➢ कण्व द्वारा पोषित, मेनका और विश्वामित्र की पुत्री – **शकुन्तला**
➢ कालिदास के सभी नाटक हैं – **सुखान्त।**
➢ कालिदास की नाट्यकला का सर्वश्रेष्ठ निदर्शन है – **अभिज्ञानशाकुन्तलम्**

- अभिज्ञानशाकुन्तलम् कथाविन्यास, चरित्र चित्रण, संवाद योजना, भाषा – शैली, अलंकार–योजना, रसयोजना, प्रकृतिचित्रण, सभी दृष्टियों से **सर्वश्रेष्ठ नाटक** है।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् में लगभग **196 पद्य** हैं।
- महाकवि कालिदास **रसमयी शैली** के आचार्य हैं।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् में भारतीय संस्कृति की महत्त्वपूर्ण तीन विशेषताओं – **त्याग, तपस्या, और तपोवन** का अच्छा चित्रण किया गया है।
- भरतमुनि के अनुसार नाटक का लक्षण – **''त्रैलोकस्यास्य सर्वस्य नाट्यं भावानुकीर्तनम्।''**
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अङ्क का प्रारम्भ होता है – **विष्कम्भक से।**
- अनसूया और प्रियंवदा के पुष्पावचयन से प्रारम्भ होता है – **अभिज्ञानशाकुन्तलम् का चतुर्थ अङ्क।**
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अङ्क में वर्णन है – **शकुन्तला की विदाई का।**
- अन्तः प्रकृति और बाह्य प्रकृति का सुन्दर चित्रण किया गया है – **अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अङ्क में।**
- दुष्यन्त और शकुन्तला की प्रणयगाथा वर्णित है – **अभिज्ञानशाकुन्तलम् में।**
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् में लगभग **180 उपमाओं का प्रयोग** किया गया है।
- शकुन्तला **हेमकूट पर्वत पर महर्षि मारीच के आश्रम में** अपनी माता मेनका के साथ वियोग के दिन गुजारती है।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् में दुष्यन्त और शकुन्तला के प्रेम, वियोग और पुनर्मिलन का वर्णन है।
- इस नाटक की कथावस्तु राजा दुष्यन्त के द्वारा शकुन्तला को दिये गये अभिज्ञान (अँगूठी) के आस पास चक्कर लगाती है।
- राजा दुष्यन्त मृग का पीछा करते हुए किस आश्रम में प्रवेश करता है – **महर्षि कण्व के।**
- तीर्थयात्रा पर गए हुए कण्व ऋषि की अनुपस्थिति में ही राजा दुष्यन्त और शकुन्तला का गान्धर्व विवाह आश्रम में ही सम्पन्न हो जाता है।
- शकुन्तला को महर्षि कण्व किसके साथ पतिगृह (हस्तिनापुर) भेजते हैं – **शार्ङ्गरव, शारद्वत और गौतमी।**
- हस्तिनापुर जाते समय शकुन्तला की अगूँठी कहाँ गिर जाती है – **शचीतीर्थ में।**
- दुष्यन्त, शकुन्तला को पहचानने से क्यों इन्कार कर देता है – **दुर्वासा के शापवशात्।**
- शकुन्तला कण्व ऋषि के आश्रम के बाद किस आश्रम में निवास करती है – **ऋषि मारीच के आश्रम में।**
- बालक सर्वदमन (भरत) और शकुन्तला से दुष्यन्त की भेंट कहाँ होती है – **हेमकूटपर्वत स्थित ऋषि मारीच के आश्रम में।**
- महर्षि कण्व का आश्रम था – **मालिनी नदी के तट पर।**
- दुष्यन्त ने जब आश्रम में प्रवेश किया तब महर्षि कण्व कहाँ गए हुए थे – **सोमतीर्थ।**
- शकुन्तला को शाप देने वाले ऋषि थे – **दुर्वासा**
- मारीच ऋषि रहते थे – **हेमकूट पर स्थित आश्रम में**
- दुष्यन्त की कौन रानी संगीत का अभ्यास कर रही थी – **हंसपदिका**
- राजा दुष्यन्त की दो रानियाँ – **वसुमती और हंसपदिका**
- राजा दुष्यन्त किस रानी को अधिक प्यार करता है– **वसुमती**
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् में किस गुण की प्रधानता है – **प्रसाद गुण**
- कालिदास के नाटकों का प्रतिपाद्य विषय है – **प्रसाद गुण**
- कालिदास के नाटकों का प्रतिपाद्य रस है – **शृङ्गार**
- नाट्यशास्त्र में नान्दी का अर्थ है – **मङ्गलाचरण**
- नाटकों में भरतवाक्य का प्रयोग होता है – **अन्त में**
- शकुन्तला का पालन पोषण हुआ था– **कण्व के आश्रम में**
- शकुन्तला पति के चिन्तन में कहाँ बैठी थी– **कुटिया में**
- राजा की मनःस्थिति जानने के लिए मेनका ने अपनी किस सखी को भेजा था– **सानुमती**
- जर्मनविद्वान् गेटे द्वारा प्रशंसित नाटक है – **अभिज्ञानशाकुन्तलम्**
- शापनिवृत्ति के लिए ऋषि दुर्वासा से अनुनय विनय करने वाली सखी है– **प्रियंवदा**
- शकुन्तला की अमङ्गलशान्ति के लिए कण्व कहाँ गए थे – **सोमतीर्थ**
- शकुन्तला ने किस तीर्थ में जलवन्दना की थी – **शचीतीर्थ**
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् का सर्वश्रेष्ठ अङ्क है – **चतुर्थ**
- वह महिला तपस्विनी जिसके साथ शकुन्तला हस्तिनापुर जाती है – **गौतमी**
- अग्निगर्भा शमी के समान है – **शकुन्तला**
- दुष्यन्त शकुन्तला की वैवाहिक विधि है – **गान्धर्व**
- हस्तिनापुर से शकुन्तला को मारीच आश्रम ले जाने वाली है – **एक दिव्य ज्योति (मेनका)**
- दुष्यन्त को देवासुर संग्राम की सूचना देने वाला है – **इन्द्र का सारथि मातलि**
- वह स्थान जहाँ स्वर्ग से लौटते समय दुष्यन्त रुकता है – **मारीच ऋषि का आश्रम**
- **'अपराजिता रक्षाकरण्डक'** से सम्बद्ध है – **सर्वदमन (भरत)**
- कालिदास के तीनों नाटकों में प्रधानता है – **शृङ्गार रस की।**
- शाकुन्तलम् का प्रारम्भ तथा अन्त होता है – **सम्भोग शृङ्गार से**
- **'राजन् आश्रममृगोऽयं न हन्तव्यो न हन्तव्यः'** किसने कहा – **तपस्वी वैखानस ने**

➢ भ्रमर से भयभीत शकुन्तला की रक्षा कौन करता है – **राजा दुष्यन्त**

➢ 'शकुन्तला ऋषि विश्वामित्र एवं मेनका की कन्या हैं' – यह बात राजा दुष्यन्त को किसने बताया – **अनसूया ने**

➢ हस्तिनापुर से महारानी का सन्देश लेकर कण्व के आश्रम में राजा दुष्यन्त के पास कौन जाता है – **करभक नाम का एक सेवक**

➢ शाकुन्तलम् के किस अङ्क में राजा दुष्यन्त विदूषक माढव्य को आश्रम से हस्तिनापुर वापस भेज देता है– **द्वितीय अङ्क में**

➢ शकुन्तला को राजा दुष्यन्त के लिए एक प्रेमपत्र लिखने की सलाह कौन देती है – **प्रियंवदा**

➢ शकुन्तला, सखियों के आग्रह से नलिनी पत्र पर नाखूनों से राजा को प्रेमपत्र लिखती है।

तव न जाने हृदयं मम पुनः कामो दिवाऽपि रात्रावपि।
निर्घृण तपति बलीयस्त्वयि वृत्तमनोरथाया अङ्गानि॥

अभि0शा0 3-13।

➢ शकुन्तला की अस्वस्थता का समाचार पाकर शान्तिजल लिए हुए कौन आती है – **आर्या गौतमी**

➢ नाटक में दुर्वासा ऋषि का आगमन किस अङ्क में होता है – **चतुर्थ अङ्क में**

➢ ऋषि कण्व को आकाशवाणी द्वारा मालूम होता है कि शकुन्तला का दुष्यन्त के साथ गान्धर्व विवाह हो गया है, तथा वह आपन्नसत्त्वा (गर्भिणी) है।

दुष्यन्तेनाहितं तेजो दधानां भूतये भुवः।
अवेहि तनयां ब्रह्मन् अग्निगर्भां शमीमिव॥

अभि0शा0 4/4

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के मार्मिक प्रसङ्ग

प्रथम अङ्क – भ्रमर वृत्तान्त और शकुन्तला की सखियों से राजा का वार्तालाप।

द्वितीय अङ्क – शकुन्तला के सौन्दर्य का वर्णन।

तृतीय अङ्क – दुष्यन्त और शकुन्तला के विरह दुःख का वर्णन और दोनों के मिलन का वर्णन।

चतुर्थ अङ्क – शकुन्तला की विदाई।

पंचम अङ्क – राजा दुष्यन्त और शार्ङ्गरव का विवाद।

षष्ठ अङ्क – राजा के शोक का वर्णन।

सप्तम अङ्क – पुत्र सर्वदमन का दर्शन और शकुन्तला से मिलन का वर्णन।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् का मङ्गलाचरण

या सृष्टिः स्रष्टुराद्या, वहति विधिहुतं या हविर्या च होत्री,
ये द्वे कालं विधत्तः श्रुति विषयगुणा या स्थिता व्याप्य विश्वम्।
यामाहुः सर्वबीजप्रकृतिरिति यया प्राणिनः प्राणवन्तः,
प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः॥ 1/1 ॥

भावार्थ- जो विधाता की सर्वप्रथम सृष्टि है अर्थात् जलरूप मूर्ति, जो विधिपूर्वक की गयी हवन के हवि को देवताओं के पास ले जाती है अर्थात् अग्निरूप मूर्ति, जो यज्ञकर्ता है अर्थात् यजमान रूपमूर्ति, जो दो समय का निर्माण करतीं हैं,अर्थात् सूर्य और चन्द्ररूप मूर्तियाँ, शब्द जिसका गुण है और जो विश्व में व्याप्त होकर विद्यमान है अर्थात् आकाश रूप मूर्ति, जिसको विद्वान् समस्त बीजों का कारण कहते हैं, अर्थात् पृथ्वीरूपमूर्ति और जिससे सभी प्राणी जीवित रहते हैं अर्थात् वायुरूप मूर्ति, उन प्रत्यक्ष आठ मूर्तियों से युक्त भगवान् शिव आप लोगों की रक्षा करें।

☆ प्रस्तुत पद्य में अष्टमूर्ति भगवान् शिव की स्तुति की गयी है।

☆ आशीर्वादात्मक मङ्गलाचरण का प्रयोग है।

☆ समासोक्ति के माध्यम से कथानक का सङ्केत होने से पत्रावली नान्दी भी है।

☆ उपर्युक्त श्लोक में स्रग्धरा छन्द तथा अनुप्रास एवं समासोक्ति अलङ्कार है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् का भरतवाक्य

प्रवर्ततां प्रकृतिहिताय पार्थिवः
सरस्वती श्रुतमहतां महीयताम्।
ममापि च क्षपयतु नीललोहितः
पुनर्भवं परिगतशक्तिरात्मभूः॥ 7/35 ॥

भावार्थ- राजा लोग प्रजा के हित के कार्यों में लगे रहें। चारों वेदों से शोभायमान भगवती श्री सरस्वती जगत् में पूजा को प्राप्त हों, अर्थात् वैदिक साहित्य, वेदमार्ग तथा चक्र सहित स्वयंभू भगवान् शङ्कर मेरे पुनर्जन्म का नाश करें। अर्थात् भगवान् शाम्ब शिव की कृपा से मेरा जन्म-मरण रूप यह संसार बन्धन सदा के लिए छूट जाए।

☆ यह उत्तरार्धगत अन्तिम उक्ति महाकवि कालिदास की स्वयं अपनी प्रार्थना है।

☆ इस भरतवाक्य में लोक-कल्याण के लिए भगवान् शिव से प्रार्थना की गयी है।

☆ इस पद्य में रुचिरा या अतिरुचिरा छन्द है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाम का प्रयोजन

1. अभिज्ञायते अनेन इति अभिज्ञानम् अभि+ज्ञा+ल्युट् = अभिज्ञान अर्थात् जिसके द्वारा पहचाना जाता है।

यहाँ पर अभिज्ञान से भाव है- दुष्यन्त के द्वारा पहचान के लिए शकुन्तला को दी गयी अँगूठी।

शकुन्तलाम् अधिकृत्य कृतं नाटकं शाकुन्तलम्।

शकुन्तला+अण्, ('अधिकृत्य कृते ग्रन्थे' सूत्र से अण् प्रत्यय) अर्थात् शकुन्तला विषयक नाटक।

अभिज्ञानप्रधानं शाकुन्तलम् इति अभिज्ञानशाकुन्तलम्

(मध्यमपदलोपी समास)

शकुन्तला प्रधान नाटक, जिसमें अभिज्ञान (अँगूठी) मुख्य रूप से वर्णित है।

2. अभिज्ञानसहितं शाकुन्तलम् इति अभिज्ञानशाकुन्तलम्

(मध्यमपदलोपी समास)

अभिज्ञान(अँगूठी) के वर्णन से युक्त शकुन्तला-विषयक नाटक।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के नाटकीय पात्रों का परिचय

पुरुष पात्र

क्र.	नाम	परिचय
1.	सूत्रधार	नाटक का आरम्भ करने वाला प्रधान नट और रंगमञ्च का अध्यक्ष।
2.	दुष्यन्त	नाटक का नायक, हस्तिनापुर का राजा।
3.	सूत	दुष्यन्त का सारथि।
4.	सेनापति भद्रसेन	दुष्यन्त का सेनापति।
5.	विदूषक माढव्य	दुष्यन्त का अन्तरङ्ग मित्र और हास्यकारी।
6.	महर्षिकण्व (काश्यप)	आश्रम के कुलपति, शकुन्तला के पालक और धर्मपिता।
7.	मारीच (कश्यप)	एक महर्षि, देवों और राक्षसों के पिता, एक प्रजापति।
8.	भरत (सर्वदमन)	राजा दुष्यन्त और शकुन्तला का पुत्र।
9.	सोमरात	दुष्यन्त का पुरोहित।
10.	मातलि	इन्द्र का सारथि।
11.	वैखानस, हारीत, नारद गौतम, शाङ्र्गरव,शारद्वत	सभी कण्व के शिष्य, आश्रम के तपस्वी
12.	रैवतक (दौवारिक)	राजा का भृत्य, द्वारपाल।
13.	करभक	राजा के पास राजमाता का सन्देश पहुँचाने वाला सेवक।
14.	कञ्चुकी (वातायन)	रनिवास की देखभाल करने वाला एक वृद्ध ब्राह्मण।
15.	वैतालिक	स्तुतिपाठक (भाट, चारण)।
16.	श्याल	राजा का साला, नगर रक्षाधिकारी (कोतवाल)।
17.	धीवर (मीनपालक)	मछली पकड़ने वाला।
18.	सूचक	पुलिस के दो सिपाही।
19.	जानुक	
20.	गालव	ऋषि मारीच का शिष्य।
21.	पिशुन	दुष्यन्त का मन्त्री

स्त्रीपात्र

क्र.	नाम	परिचय
22.	नटी	सूत्रधार की पत्नी।
23.	शकुन्तला	नाटक की नायिका, कण्व की धर्मपुत्री, दुष्यन्त की पत्नी, मेनका और विश्वामित्र से उत्पन्न एक क्षत्रिय कन्या।
24.	अनसूया	शकुन्तला की अत्यन्त प्रिय और अंतरंग सखी।
25.	प्रियंवदा	
26.	गौतमी	कण्व के आश्रम की अध्यक्षा, एक वृद्धा तापसी।
27.	अदिति (दाक्षायणी)	महर्षि मारीच की पत्नी।
28.	सानुमती	मेनका की सखी, एक अप्सरा।
29.	परभृतिका	राजा की सेविका, उद्यानपालिका।
30.	मधुकरिका	
31.	चतुरिका	राजा की सेविका।
32.	वेत्रवती (प्रतीहारी)	राजा की द्वारपालिका।
33.	यवनी	राजा की एक सेविका।
34.	तापसी (सुव्रता)	मारीच के आश्रम की एक तपस्विनी।

अन्य पात्र

- **मघवा (इन्द्र)** – देवताओं के राजा, दुष्यन्त के मित्र।
- **इन्द्राणी** – इन्द्र की पत्नी।
- **जयन्त** – इन्द्र का पुत्र।
- **कौशिक (विश्वामित्र)** – शकुन्तला के जन्मदाता पिता।
- **मेनका** – शकुन्तला की माता, एक अप्सरा।
- **दुर्वासा** – एक ऋषि, शकुन्तला को शाप देने वाले।

नोट – नाटक में इन पात्रों का केवल नामोल्लेख मात्र हुआ है।

- 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' में पुरुवंशी (चन्द्रवंशी) राजा दुष्यन्त तथा विश्वामित्र और मेनका की पुत्री शकुन्तला का प्रेम, वियोग, पुनर्मिलन वर्णित है।
- शाकुन्तलम् की कथा महाभारत के आदिपर्व तथा पद्मपुराण के स्वर्गखण्ड में वर्णित है।
- शाकुन्तलम् का **नायक 'दुष्यन्त'** 'हस्तिनापुर' का राजा है और धीरोदात्त नायक के गुणों से युक्त है।

- 'शाकुन्तलम्' की **नायिका शकुन्तला** महर्षि कण्व (काश्यप) के आश्रम में पली है। 'मुग्धा' नायिका है।
- 'शाकुन्तलम्' का **प्रमुख 'रस' शृंगार है।** चतुर्थ अङ्क में **करुण** रस है।
- शाकुन्तलम् में **24 छन्दों** का प्रयोग हुआ है। सर्वाधिक प्रयुक्त छन्द आर्या (39) है। तत्पश्चात् वसन्ततिलका (30) है।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् में कुल **196 श्लोक** है। सर्वाधिक (35) श्लोक सप्तम अङ्क में हैं।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् में **वैदर्भी रीति** और **माधुर्य गुण** प्रयुक्त है।
- शाकुन्तलम् में साधारणतया **गद्य के लिए शौरसेनी** और पद्यों के लिए **महाराष्ट्री प्राकृत** का प्रयोग हुआ है।
- षष्ठ अङ्क में दोनों सिपाही और धीवर मागधी बोलते हैं।
- शाकुन्तलम् में सर्वाधिक उपमा और 'अर्थान्तरन्यास' अलङ्कारों का प्रयोग है।
- दुष्यन्त की शकुन्तला से पूर्व अन्य दो रानियाँ हंसपदिका और वसुमती हैं।
- शकुन्तला की अनसूया और प्रियंवदा नामक दो सखियाँ हैं।
- दुष्यन्त और शकुन्तला का **पुत्र सर्वदमन (भरत)** है।
- शाकुन्तलम् का **विदूषक 'माढव्य'** दुष्यन्त का मित्र है। पहली बार द्वितीय अङ्क में मंच पर आता है।
- दुष्यन्त का **सेनापति 'भद्रसेन'** और **पुरोहित 'सोमरात'** है।
- इन्द्र का सारथी **'मातलि'** और दुष्यन्त का सारथी **'सूत'** है।
- **'करभक'** नामक दूत द्वितीय अङ्क में दुष्यन्त की माता का सन्देश लेकर आता है।
- शकुन्तला, परित्याग के बाद देवों और राक्षसों के पिता, प्रजापति **'मारीच' (कश्यप)** के आश्रम में रहती है।
- वैखानस, शार्ङ्गरव, शारद्वत, गौतम, नारद, हारीत आदि महर्षि कण्व के शिष्य हैं।
- ऋषि मारीच का एकमात्र शिष्य जो शकुन्तला-दुष्यन्त के मिलन की सूचना कण्व को देने हेतु सातवें अङ्क में भेजा जाता है उसका नाम **'गालव'** है।
- षष्ठ अङ्क में धीवर को पकड़ने वाले **दो सिपाही सूचक व जानुक** हैं और राजा का साला एवं नगर रक्षाधिकारी **श्याल** है।
- राजा का **कञ्चुकी 'वातायन'** है वह षष्ठ अङ्क में 'वसन्तोत्सव' की तैयारी में लगी दो उद्यानपालिकाओं **'परभृतिका'** व **'मधुकरिका'** को ऐसा करने से रोकता है।
- **वेत्रवती** राजा की द्वारपालिका है। **यवनी** एक अन्य सेविका है।
- **अदिति** (दाक्षायणी) मारीच की पत्नी तथा **गौतमी** कण्व के आश्रम की 'एक वृद्धा तापसी' है। गौतमी भी शार्ङ्गरव और शारद्वत के साथ शकुन्तला को छोड़ने हस्तिनापुर जाती है।
- मारीच के आश्रम में सर्वदमन (भरत) के साथ रहने वाली तापसी **'सुव्रता'** थी।
- **'सानुमती'** शकुन्तला की माता मेनका की सखी है जो षष्ठ अङ्क में राजा और विदूषक की बात अदृश्य रूप से सुनती है।
- इन्द्र का पुत्र **जयन्त** तथा पत्नी **इन्द्राणी** (पौलोमी/शची) है।
- सुलभकोप ऋषि दुर्वासा, अत्रि और अनसूया के पुत्र हैं वे चतुर्थ अङ्क के आरम्भ में शकुन्तला को शाप देते हैं।
- महर्षि कण्व का आश्रम **'मालिनी नदी'** के तट पर विश्वामित्र का आश्रम गौतमी नदी के तट पर तथा 'मारीच' का आश्रम **'हेमकूट पर्वत'** पर था।
- दुर्वासा के शाप का असर पञ्चम अङ्क में दिखाई पड़ता है। यह नाटकीयता की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ अङ्क है।
- शकुन्तला ने **'शचीतीर्थ'** जो गङ्गा के तट पर स्थित है, में जलवन्दना की, जहाँ उसकी अँगूठी गिरती है।
- तृतीय अङ्क में 'प्रियंवदा' कमल-पत्र पर 'नाखून' से प्रेम-पत्र लिखने की सलाह शकुन्तला को देती है जिसे वह फूलों में छिपाकर देवता के प्रसाद के बहाने राजा के पास पहुँचाने को कहती है।
- नाटक का आरम्भ **'ग्रीष्म ऋतु'** वर्णन तथा राजा दुष्यन्त द्वारा आश्रम मृग का पीछा करते हुए होता है।
- राजा पञ्चम अङ्क में हंसपदिका के सङ्गीत की प्रशंसा करता है तथा षष्ठ अङ्क में शकुन्तला तथा उसकी सखियों का चित्र बनाता है।
- दुष्यन्त षष्ठ अङ्क में **'धनमित्र'** नामक व्यापारी की मृत्यु पर उसकी सारी सम्पत्ति उसके गर्भस्थ पुत्र को दे देता है।
- दुष्यन्त के लिए इन्द्र अपना आधा सिंहासन छोड़ देते हैं तथा **राजा को मन्दारमाला** पहनाते हैं।
- राजा द्वारा तिरस्कृत शकुन्तला को प्रसव तक अपने घर में रखने को **'सोमरात'** तैयार होते हैं।
- अष्टमूर्ति शिव की उपासना शाकुन्तलम् के नान्दी में की गई है, यह **मङ्गलाचरण आशीर्वादात्मक** है।
- शाकुन्तल के मङ्गलाचरण में **स्रग्धरा छन्द** है, जिसके प्रत्येक चरण में **21 वर्ण** होते हैं। यह **पत्रावली नान्दी** है।
- जब तक विद्वान् सन्तुष्ट न हो जाय सूत्रधार अभिनय-कौशल को सफल नहीं समझता। वह ग्रीष्म ऋतु पर नटी से गीत सुनाने को कहता है।
- नटी आरम्भ में दो छन्द गाती है एक आर्या –> **(सुभगसलिल.......)** दूसरा उद्गाथा –> **(ईषदीषच्चुम्बितानि.....)**
- सूत प्रथम अङ्क के आरम्भ में धनुष पर बाण चढ़ाये राजा की उपमा 'शिव' से देता है।
- प्रथम अङ्क में वैखानस राजा को चक्रवर्ती पुत्र प्राप्त करने का आशीर्वाद देता है।
- समिधा लाने जाता हुआ 'वैखानस' राजा को बताता है कि शकुन्तला के 'प्रतिकूल भाग्य की शान्ति' के लिए कण्व शकुन्तला पर अतिथि सत्कार का भार सौंप कर **'सोमतीर्थ'** गये हुए हैं।
- आश्रम से सरोवर का मार्ग वल्कलों के अग्रभाग से टपकते जल से रेखांकित है।
- राजा आश्रम में प्रवेश से पूर्व अपने आभूषण और धनुष सारथि (सूत) को देकर सादे वेष में प्रवेश करता है।

- आश्रम-प्रवेश के समय राजा की **'दाहिनी' भुजा फड़कती** है जो सुन्दर स्त्री की प्राप्ति का सूचक है।
- आश्रम-प्रवेश पर राजा वाटिका की दाहिनी ओर वृक्षों का सेंचन kqâ jne(प्रियंवदा आदि) बालिकाओं को देखता है।
- प्रियंवदा कहती है कि शकुन्तला के समीप रहने पर 'बकुल' (मौलश्री) का वृक्ष लता से युक्त लगता है।
- नवमालिका लता आम के वृक्ष से लिपटी है जिसका **'वनज्योत्स्ना'** नाम शकुन्तला ने रखा है।
- प्रियंवदा 'सप्तपर्ण वृक्ष' की वेदी पर राजा को बैठने हेतु कहती है।
- अनसूया द्वारा परिचय पूँछने पर राजा अपने को पुरुवंशी राजा द्वारा नियुक्त धर्माधिकारी बताता है।
- शकुन्तला के जन्म का वृत्तान्त अनसूया राजा को बताती है।
- कौशिक (विश्वामित्र) गौतमी नदी के किनारे तपस्या कर रहे थे।
- प्रियंवदा दो वृक्षों के सेंचन का ऋण बताकर शकुन्तला को रोकती है राजा अपनी अङ्गूठी देकर शकुन्तला को ऋण मुक्त करना चाहता है।
- द्वितीय अङ्क का आरम्भ खिन्न विदूषक के प्रवेश के साथ होता है जो राजा के 'मृगया' के व्यसन से दुःखी है।
- द्वितीय अङ्क में सेनापति और विदूषक 'मृगया' (शिकार) के गुण-दोष की चर्चा करते हैं।
- दुष्यन्त, शकुन्तला के प्रति अपने प्रेम को विदूषक से कहता है और कहीं यह अन्तःपुर में न बता दे इसलिए उस बात को हँसी में कही 'बात' कहता है।
- करभक सन्देश लाता है कि चौथे दिन महारानी (दुष्यन्त की माता) के व्रत (जीवित्पुत्रिका/जिउतियाव्रत) का 'पारण' है।
- राजा अपने स्थान पर 'विदूषक' को भेज देता है।
- तृतीय अङ्क का आरम्भ 'शिष्य' के प्रवेश से होती है जो शकुन्तला के अस्वस्थ होने की खबर प्रियंवदा से प्राप्त होने का अभिनय करता है।
- तृतीय अङ्क का आरम्भ 'विष्कम्भक' से होता है।
- तृतीय अङ्क में दुष्यन्त के शकुन्तला के समीप उपस्थित होने पर दोनों सखियाँ मृग-शावक को उसकी माँ से मिलाने के बहाने से हट जाती हैं।
- दुष्यन्त तृतीय अङ्क में **शकुन्तला से गान्धर्व विवाह** करता है। यह विवाह केवल क्षत्रियों के लिए ही स्वीकृत था।
- गौतमी दोनों सखियों के साथ शकुन्तला का स्वास्थ्य जानने आती है।
- चतुर्थ अङ्क का आरम्भ पुष्प चुनती हुई दो सखियों (प्रियंवदा, अनसूया) के प्रवेश के साथ होता है।
- अनसूया, शकुन्तला के 'भाग्यदेवता' के पूजन के लिए अधिक फूल तोड़ने को कहती है।
- शाप देकर जाते हुए **दुर्वासा को मनाने प्रियंवदा** जाती है।
- शकुन्तला कुटिया के द्वार पर बाएँ हाथ पर मुँह रखे चित्रलिखित सी बैठी है।
- शाप का वृत्तान्त केवल अनसूया और प्रियंवदा को ज्ञात रहता है।
- चौथे अङ्क का आरम्भ भी **शुद्ध विष्कम्भक** के साथ होता है।
- विष्कम्भक के पश्चात् सोकर उठे 'शिष्य' का प्रवेश मंच पर होता है। जो काश्यप के आदेशानुसार 'कितनी रात शेष है' यह जानने के लिए बाहर आता है।
- 'शकुन्तला सुखपूर्वक सोई कि नहीं' यह जानने के लिए गयी हुई प्रियंवदा यह समाचार लाती है कि 'कण्व' ने शकुन्तला के विवाह को अनुमति दे दी है।
- शकुन्तला 'गर्भिणी' है यह समाचार कण्व को **'अशरीरधारी छन्दोमयी'** वाणी ने यज्ञशाला में प्रविष्ट होने पर दिया।
- इस घटना को प्रियंवदा, अनसूया से बताती है।
- अनसूया शकुन्तला की विदाई हेतु नारियल के डिब्बे में बकुल (मौलश्री) की माला, केसर आदि आम की डाल पर लटका कर रखती है।
- अनसूया शकुन्तला की विदाई के अवसर पर गोरोचन, तीर्थों की मिट्टी, दूब के अग्रभाग आदि वस्तुएँ इकट्ठा करती है।
- स्वस्तिवाचन के समय तीन तापसियाँ शकुन्तला को आशीर्वाद देती हैं।
- पहली तापसी **'महादेवी'** शब्द प्राप्त करने, दूसरी **'वीर पुत्र'** को प्राप्त करने का और तीसरी **'पति से अधिक सम्मान'** प्राप्त करने का आशीर्वाद देती है।
- दो ऋषि कुमार जिनके नाम **नारद** व **गौतम** हैं, वे वृक्षों द्वारा प्रदत्त वस्त्र-आभूषण आदि शकुन्तला के लिए लाते हैं।
- दोनों सखियाँ चित्रकारी से प्राप्त ज्ञान के आधार पर शकुन्तला का शृङ्गार करती हैं।
- पूरे नाटक में **महर्षि कण्व केवल चौथे अङ्क** में दिखाई पड़ते हैं। वे स्नान के उपरान्त **'यास्यत्यद्य शकुन्तलेति'**...... श्लोक के साथ मंच पर प्रविष्ट होते हैं।
- चतुर्थ अङ्क के **22 श्लोकों में 14 श्लोक महर्षि कण्व** ने कहे हैं। चौथे अङ्क के प्रसिद्ध चार श्लोक भी महर्षि कण्व द्वारा कहे गये हैं।
- **ययाति** चंद्रवंश के संस्थापक राजाओं में थे जिनकी **देवयानी** और **शर्मिष्ठा** नाम की दो पत्नियाँ थीं।
- **देवयानी** दानवों के गुरु **शुक्राचार्य की पुत्री** और ययाति की विवाहिता पत्नी थी।
- दानवों के राजा **'वृषपर्वा' की पुत्री शर्मिष्ठा** देवयानी की सेविका के रूप में आयी थी। ययाति ने उससे गान्धर्व विवाह कर लिया।
- ययाति के 5 पुत्रों में **शर्मिष्ठा का पुत्र 'पुरु'** भी था जिसने शुक्राचार्य के शाप से वृद्ध हुए ययाति की वृद्धावस्था अपने ऊपर ले लिया था।
- अग्निवेदी की परिक्रमा करते हुए कण्व ने ऋग्वैदिक छन्द 'त्रिष्टुप्' में शकुन्तला को आशीर्वाद दिया।
- 'त्रिष्टुप्' के प्रत्येक चरण में 11 वर्ण होते हैं, 4 या 5 वर्ण पर यति होती है।
- वृक्षों के प्रथम 'पुष्पोद्गम' के समय शकुन्तला आश्रम में उत्सव मनाया करती थी।

- 'वृक्षों से' कण्व द्वारा शकुन्तला के जाने हेतु आज्ञा माँगने पर वे 'कोयल' की आवाज में आज्ञा प्रदान करते हैं।
- वृक्षों ने शकुन्तला को कोयल की आवाज में जाने की आज्ञा दे दी है। इस बात की कण्व अपरवक्त्र छन्द में पुष्टि करते हैं।
- आकाशवाणी के द्वारा शकुन्तला यात्रा की जो मङ्गल कामना की गई है वह **शाकुन्तलम् का 'मध्यनान्दी'** है।
- जाती हुई शकुन्तला अपनी **लता-बहिन 'वनज्योत्स्ना'** से गले मिलकर विदाई लेती है। जो 'आम्रवृक्ष' से लिपटी है। और इसे धरोहर के रूप में सखियों के हाथ में देती है।
- शकुन्तला कण्व से गर्भ के कारण शिथिल हरिणी के कुशलपूर्वक सन्तानोत्पत्ति का समाचार अपने पास भेजने को कहती है।
- कुशाग्रों से विंधे मुखवाले जिस मृग के मुख पर शकुन्तला ने इंगुदी (हिंगोट) का तेल लगाया था तथा साँवा के चावल से पाला था वह शकुन्तला के जाते समय उसका वस्त्र खींचता है। वह उसे पिता कण्व को सौंपती है।
- शकुन्तला के साथ सरोवर के तट तक आये कण्व क्षीरवृक्ष (पीपल) के नीचे बैठ कर दुष्यंत को भेजने हेतु संदेश देते हैं।
- कमल के पत्ते की ओट में बैठे सहचर (चकवा) को न देख पाने के कारण चकवी रोती (चिल्लाती) है।
- शकुन्तला द्वारा पहले पूजा के रूप में डाले गये 'नीवार' अब कुटी के द्वार पर उगे हैं जो कण्व को उसकी याद दिलायेंगे।
- **''अपराजिता रक्षाकरण्डक''** सिंह शावक के साथ खेलते सर्वदमन के हाथ पर बंधा है जो बालक के माता-पिता के अतिरिक्त अन्य के छूने पर सर्प बनकर डस लेता है।
- षष्ठ अङ्क में इन्द्र-सारथि मातलि राजा में क्रोध या वीरता को जगाने के लिए विदूषक पर आक्रमण करता है।
- मातलि विदूषक पर आक्रमण करके उसे **'मेघप्रतिच्छन्द'** नामक महल के ऊपरी मंजिल पर ले जाता है।
- राजा उस पर आक्रमण हेतु 'यवनी' नामक परिचारिका से धनुष माँगता है।
- मातलि राजा के समक्ष प्रकट होकर राजा को देवासुर संग्राम में इन्द्र के सहायतार्थ चलने हेतु निवेदन करता है।
- **कालनेमि का वंशज 'दुर्जेय'** ने इन्द्र पर आक्रमण किया जिसे केवल दुष्यन्त मार सकता है।
- राजा दुष्यन्त के **मंत्री 'पिशुन'** हैं जिन पर वह देवासुर संग्राम में जाते हुए राज्यभार सौंपता है। विदूषक से यह बात उन्हें बताने के लिए कहता है।
- **हेमकूट किन्नरों का पर्वत** है जहाँ प्रजापति 'मारीच' रहते हैं।
- जब मातलि 'राजा' के आगमन की सूचना (मारीच को) देने जाता है तब राजा अशोक वृक्ष के नीचे बैठता है।
- 'जातकर्म' 16 संस्कारों में चौथा है। जिस अवसर पर सर्वदमन के हाथ पर **'अपराजिता'** नामक रक्षासूत्र बाँधा गया था।
- मारीच **'वत्स, चिरंजीव पृथिवीं पालय'** आशीर्वाद राजा को देते हैं तथा दुर्वासा - शाप का वृत्तान्त दोनों को बताते हैं।
- अदृश्य तेजोमयी मूर्ति के रूप में मेनका 'अप्सरास्तीर्थ' से शकुन्तला को लेकर दाक्षायणी (मारीच-पत्नी) के पास गयी।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक का भरतवाक्य (अन्तिम श्लोक) (प्रवर्ततां प्रकृतिहिताय) **'रुचिरा' छन्द** में है। जिसके प्रत्येक चरण में 13 वर्ण, 4, 9 पर यति होती है।
- जीवों को बलात् वश में कर लेने के कारण भरत का नाम 'सर्वदमन' था।
- पञ्चम अङ्क में अङ्गूठी के शचीतीर्थ में जलतर्पण के समय गिरने की बात का पता सर्वप्रथम 'गौतमी' के मुख से पता चलता है।

राजा दुष्यन्त

परिचयः –

- अभिज्ञानशाकुन्तलम् का धीरोदात्त नायक

महासत्त्वोऽतिगम्भीरः क्षमावानविकत्थनः।
स्थिरो निगूढाहङ्कारो धीरोदात्तो दृढव्रतः॥

(दशरूपक – द्वितीयप्रकाश)

अर्थात् वह (राजा दुष्यन्त) स्थिर स्वभाववाला, क्षमाशील, अतिगम्भीर, महाबली, अहङ्कारशून्य, दृढनिश्चयी, स्वयं प्रशंसा न करने वाला, मधुरभाषी, एवं ललित कलाओं का मर्मज्ञ है।

- शकुन्तला का प्रेमी/पति।
- पुरुवंशी (चन्द्रवंशी) एक क्षत्रिय राजा (राजर्षि)।
- हस्तिनापुर के सम्राट्।
- विदूषक (माधव्य) के मित्र।
- हंसपदिका और वसुमती नामक रानियों के आदर्शपति।
- सर्वदमन (भरत) के पिता।

चारित्रिक विशेषतायें

- आदर्श प्रेमी।
- सुन्दर एवं गम्भीर आकृति।
- आदर्श राजा/उत्तम शासक
- विनयशील नैतिक एवं धर्मपरायण।
- आखेट (मृगया) प्रेमी।
- कलाप्रेमी/कुशलचित्रकार/संगीतप्रेमी
- आकर्षक व्यक्तित्व एवं सौन्दर्यशाली।
- वीरयोद्धा/पराक्रमी/शूरवीर।
- वात्सल्यप्रेमी एवं गुणग्राही।
- मधुरभाषी एवं उदार।
- सहृदय तथा संयमी।
- आदर्श पिता।
- मातृभक्त तथा आज्ञाकारीपुत्र।
- चरित्रवान् नायक।
- लोकोत्तर आदर्शचरित्र

दुष्यन्त के महत्त्वपूर्ण गुण एवं कार्य

- दानवों के वधार्थ इन्द्र उसे स्वर्ग में बुलाता है। **(अङ्क-6)**
- उसके शारीरिक गठन एवं सौन्दर्य से सभी प्रभावित होते हैं, वह सुन्दर एवं युवा है।

- धनुष की टंकार से ही यज्ञ में विघ्न करने वाले राक्षसों को भगा देता है।
- प्रियंवदा उसके मधुरभाषण की प्रशंसा करती है। **(अङ्क-1)**
- जब तक यह निश्चित नहीं हो जाता है कि शकुन्तला क्षत्रिय कन्या है, तब तक वह अपने विवाह का विचार प्रकट नहीं करता है।
- शकुन्तला की प्रेमावस्था देखकर वह उसके पाणिग्रहण और रक्षा की स्वीकृति देता है। **(अङ्क-3)**
- वह रुग्ण शकुन्तला को धूप में जाने से रोकता है, और उसकी सेवा-शुश्रूषा करता है।
- माता की आज्ञा पाते ही ऋषियों के यज्ञरक्षा रूपी कार्य की विवशता के कारण मित्र विदूषक को तत्काल माता के पास भेजता है। **(अङ्क-2)**
- रानी हंसपदिका के संगीत को सुनकर मन्त्रमुग्ध हो जाता है। **(अङ्क-5)**
- शकुन्तला तथा उसकी सखियों का चित्र बनाता है। **(अङ्क-6)**
- ऋषियों के प्रति बहुत आदरभाव है, उनके कहनें से वह मृग पर बाण नहीं चलाता है।
- विनीत वेष में आश्रम में प्रवेश करता है। **(अङ्क-1)**
- यज्ञरक्षा हेतु ऋषियों की प्रार्थना सादर स्वीकार करता है।
- शार्ङ्गरव के आक्षेपों का उत्तर शान्तिपूर्वक देता है। **(अङ्क-5)**
- मारीच ऋषि के दर्शनार्थ उनके आश्रम जाता है। **(अङ्क-7)**
- वह धनमित्र नामक व्यापारी की मृत्यु पर शोक प्रकट करता है। उसके गर्भस्थ पुत्र को उसका धन दिलाता है। **(अङ्क-6)**
- प्रजा की रक्षा को परमधर्म समझता है।
- दुःखियों का दुःख दूर करने को सदा उद्यत रहता है।
- परस्त्री की ओर देखना पाप समझता है – **''अनिर्वर्णनीयं परकलत्रम्''** **(अङ्क-5)**
- सन्तानहीनता का उसे बहुत दुःख है।
- प्रजा के लिए घोषणा करता है कि बन्धुहीनों का वह बन्धु है। **''येन येन वियुज्यन्ते प्रजाः स्निग्धेन बन्धुना''**
- शाप के कारण शकुन्तला को न पहचानने पर वह अपने पूर्णसंयम का परिचय देता है। **(अङ्क-5)**
- सर्वदमन (भरत) को देखकर वात्सल्य का भाव जाग उठता है। **(अङ्क-7)**
- वह शिकार खेलता हुआ कण्व ऋषि के आश्रम में प्रवेश करता है। **(अङ्क-1)**
- राजा, मृगया को व्यसन नहीं अपितु शारीरिक स्वास्थ्य एवं मनोविनोद का साधन मानता है, इससे शरीर हल्का फुल्का एवं फुर्तीला रहता है। **(अङ्क-2)**
- राजा द्वारा निर्मित शकुन्तला के चित्र को देखकर विदूषक और सानुमती मन्त्रमुग्ध हो जाते हैं। **(अङ्क 6)**
- राजा दुष्यन्त के सौन्दर्य एवं व्यक्तित्त्व से सखियों सहित शकुन्तला प्रभावित होती है।
- दाक्षायणी (अदिति) भी दुष्यन्त के व्यक्तित्त्व की प्रशंसा करती हैं। **(अङ्क-7)**
- दुष्यन्त की वीरता से प्रभावित होकर इन्द्र अपना आधा इन्द्रासन छोड़ देते हैं, तथा उन्हें मन्दारमाला पहनाते हैं।
- इस प्रकार राजा दुष्यन्त कर्त्तव्यपरायण, प्रजाप्रेमी, पराक्रमी, विनीत और अविकत्थन है।

शकुन्तला

परिचय –

- अभिज्ञानशाकुन्तलम् की नायिका।
- विश्वामित्र और अप्सरा मेनका की पुत्री।
- महर्षिकण्व की धर्मपुत्री, (पालिता पुत्री)।
- नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से मुग्धा नायिका।
- **''शकुन्तैः परिवारिता परिपालिता वा।''** पक्षियों से आवृत या कुछ समय तक पक्षियों द्वारा परिपालित होनें के कारण 'शकुन्तला' यह सार्थक नाम पड़ा।
- मालिनी नदी के तट पर स्थित कण्वाश्रम में निवास।
- राजा द्वारा परित्यक्ता होनें के बाद मारीच आश्रम में निवास।
- राजादुष्यन्त की प्रेमिका/तृतीयपत्नी।
- सर्वदमन (भरत) की माँ।
- अनसूया एवं प्रियंवदा की प्रियसखी।

चारित्रिक विशेषतायें

1. अपूर्वसुन्दरी	7. स्वाभिमानिनी
2. प्रकृतिप्रिया	8. कार्यकुशला
3. आदर्शप्रेमिका	9. आदर्शपुत्री
4. आश्रमप्रेमी	10. मधुरभाषिणी
5. पतिव्रता पत्नी/आदर्शनारी	11. सच्ची सखी
6. सुशीला एवं लज्जावती	12. अन्तर्मन की सहजता

शकुन्तला के चारित्रिक गुण एवं कार्य

- शकुन्तला नैसर्गिक सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति है –
- **इदं किलाव्याजमनोहरं वपुः...... (1-18)**
- **इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी.... (1-17)**
- **सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यम्.... (1-20)**
- **अधरः किसलयरागः...... (1-21)**
- **मानुषीषु कथं वा स्यात्...... (1-26)**
- **अनाघ्रातं पुष्पं......... (2-10)**
- **चित्रे निवेश्य...... (2-9)**
- शकुन्तला का पालन पोषण कण्व आश्रम में हुआ है, अतः उसमें स्वाभाविक सरलता, सुशीलता एवं मुग्धता है।
- राजा दुष्यन्त को देखते ही उसके हृदय में कामभाव जागृत होता है, परन्तु वह उसे व्यक्त नहीं करती – **किं नु खलु इमं जनं प्रेक्ष्य....। (अङ्क-1)**

➢ जब राजा दुष्यन्त उसकी प्रशंसा करता है, तो वह लज्जा से सिर नीचा कर लेती है। '**शकुन्तला अधोमुखी तिष्ठति**'। (अङ्क-1)
➢ प्रकृति से घनिष्ट प्रेम है। वह वृक्षों, वनस्पतियों और मृगादि से सहोदरों जैसा स्नेह करती है– "**अस्ति मे सोदरस्नेहोऽयेतेषु**" **(अङ्क-1)**
➢ आश्रम के वृक्षों को जल देकर ही वह जलपान करती है, प्रियमण्डना होने पर भी वृक्षों के फूल, पत्तें नहीं तोड़ती – "**पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलम्.....।**" **(अङ्क-4/9)**
➢ वह पतिव्रता है, विवाहोपरान्त पति के चिन्तन में ही व्याकुल और अन्यमनस्क है– **विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा।(4/1)**
➢ आश्रम से विदाई के समय वृक्षों और मृगादि से भी विदा लेती है। वनज्योत्स्ना से गले मिलती है, आश्रमीय मृगों को स्नेह करती है। "**सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।**" **(अङ्क-4/9)।**
➢ राम द्वारा परित्यक्त सीता यथा वाल्मीकि आश्रम में निवास करती हैं, वैसे ही राजा दुष्यन्त द्वारा परित्याग कर दिये जाने पर मारीच ऋषि के आश्रम में वह तपस्विनी के समान जीवन यापन करती रही, वह अपने आपको ही दोष देती है, राजा को नहीं।
➢ अपने पूज्यजनों का विशेष आदर करती है, राजा से अपने पैर नहीं दबवाती है। **(अङ्क-3)**
➢ शार्ङ्गरव के डाँटने पर उसे प्रत्युत्तर नहीं देती है। **(अङ्क-5)**
➢ ऋषि कण्व एवं आश्रमीय ऋषियों के प्रति उसकी अगाध श्रद्धा है, सखियों के प्रति उसका **निश्छल प्रेम है।**
➢ राजा के प्रति आसक्ति के कारण उसकी मनःस्थिति उद्विग्न हो जाती है, परन्तु अपनी मुँहबोली-सखियों से भी बताने में उसे **संकोच** होता है।
➢ वह अपनी सखियों के कहने पर राजा को एक प्रेमपत्र लिखती है – **तव न जाने हृदयं**......... **(अङ्क-3/13)**
➢ आश्रम के बाहर जाने पर कण्व शकुन्तला के ऊपर ही **अतिथिसत्कार का भार** सौंपते हैं।
➢ आश्रम से उसका विशेष लगाव है, आश्रमीय चोटिल मृग को वह इङ्गुदी का तेल लगाती है, उसे श्यामाक चावल की मुट्ठियाँ भर-भर कर खिलाती है।

यस्य त्वया व्रणविरोपणमिङ्गुदीनाम्.......**(अङ्क 4-14)**

➢ शकुन्तला गर्भमन्थरा मृगवधू के सुखप्रसव का समाचार भेजने के लिए पिता कण्व से कहती है। **(अङ्क-4)।**

महर्षि कण्व

परिचय –

➢ आश्रम के कुलपति।
➢ शार्ङ्गरव, शारद्वत, नारद, हारीत, वैखानस आदि के गुरु।
➢ शकुन्तला के पालक पिता।
➢ 'काश्यप' नाम से नाटक में वर्णित।
➢ श्रौतविधि से अग्निहोत्र करने वाले एक ऋषि/साधक/तपस्वी।

चारित्रिक विशेषतायें

1. त्रिकालज्ञ नैष्ठिक ब्रह्मचारी।
2. तपस्वी एवं साधक
3. अत्यन्त दयालु, स्नेही एवं धार्मिक।
4. लौकिकव्यवहार में निपुण/लोकाचारज्ञाता/लौकिकज्ञ।
5. आध्यात्मिक प्रभावशाली व्यक्तित्त्व/सिद्धपुरुष।
6. वात्सल्यपूर्ण आदर्श पिता।
7. भविष्यवक्ता।
8. सहृदयता।

महर्षिकण्व के चारित्रिक गुण एवं कार्य

➢ कण्व का तपोबल असाधारण है, वे वर्तमान, भूत और भविष्य को जानने वाले हैं। "**तपःप्रभावात् प्रत्यक्षं सर्वमेव तत्रभवतः**" **(अङ्क-7)**
➢ कण्व को ज्ञात है कि शकुन्तला पर विपत्ति आएगी, अतः उसके निवारणार्थ वे सोमतीर्थ जाते हैं। "**दैवमस्या प्रतिकूलं शमयितुं सोमतीर्थं गतः**" **(अङ्क-1)**
➢ आकाशवाणी द्वारा कण्व को ज्ञात होता है कि दुष्यन्त का तेज (वीर्य) शकुन्तला के गर्भ में पल रहा है, वे इन दोनों के इस गान्धर्वविवाह से सहर्ष सहमत होते हैं। "**दुष्यन्तेनाहितं तेजो......**" **(अङ्क-4/4)**
➢ उनके तपःप्रभाव के कारण शकुन्तला की विदाई के समय वृक्ष आभूषण और रेशमी वस्त्र आदि देते हैं – "**क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डुतरुणा....।**" **(अङ्क-4/5)**
➢ शकुन्तला के प्रति उनका प्रेम निःस्वार्थ है, उसकी विदाई के समय वे सगे माता-पिता के समान व्याकुल होते हैं– "**यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं......।**" **(अङ्क 4/6)** "**शममेष्यति मम शोकः......।**" **(अङ्क 4-21)**
➢ ऋषि होते हुए भी लौकिकव्यवहार को अच्छी तरह जानते हैं। "**वनौकसोऽपि सन्तो लौकिकज्ञा वयम्।**" (अङ्क-4)
➢ ससुराल जाती हुई पुत्री शकुन्तला को सुन्दर उपदेश देते हैं– "**शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने।**" **(अङ्क 4-18)**
➢ कण्व द्वारा शार्ङ्गरव के माध्यम से राजा दुष्यन्त को दिया गया सन्देश उनके लौकिकज्ञान की पराकाष्ठा को सूचित करता है – "**अस्मान् साधु विचिन्त्य संयमधनान्।**" **(अङ्क 4-17)**
➢ वे शकुन्तला के साथ अनसूया और प्रियंवदा को हस्तिनापुर नहीं भेजते, क्योंकि उन दोनों का भी विवाह करना है। विवाहिता के साथ कुमारी कन्याओं को भेजना अनुचित समझते हैं।
➢ कण्व शकुन्तला से कहते हैं कि राजा दुष्यन्त के पास पहुँचने पर वहाँ के कार्यों में व्यस्त होकर तुम मेरे विरह दुःख को भूल जाओगी – "**मम विरहजां न त्वं वत्से शुचं गणयिष्यसि**" **(अङ्क 4-19)**
➢ वे कन्या को विदा करके तनावमुक्त जीवन का अनुभव करते हैं – "**अर्थो हि कन्या परकीय एव।**" **(अङ्क 4-22)**

➢ कण्व अपने धर्म, तपस्या, यज्ञ आदि के अनुष्ठान में लगे रहते हैं, और विभिन्न तीर्थस्थानों की यात्रा करते हैं।
➢ अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अङ्क में ही कण्व का प्रवेश होता है, किन्तु सम्पूर्ण नाटक में उनका प्रभाव परिलक्षित होता है।
➢ अभिज्ञानशाकुन्तलम् चतुर्थ अङ्क के कुल 22 श्लोकों में से 14 प्रसिद्ध श्लोक महर्षि कण्व (काश्यप) के द्वारा कहे गए हैं–

- यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं............... **(4-6)**
  (चार प्रसिद्ध श्लोकों में से एक)
- ययातेरिव शर्मिष्ठा भर्तुर्बहुमता भव...... **(4-7)**
- अमी वेदिं परितः क्लृप्तधिष्ण्याः। **(4-8)**
- पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलम्। **(4-9)**
  (चार प्रसिद्ध श्लोकों में से एक)
- अनुमतगमना शकुन्तला। **(4-10)**
- सङ्कल्पितं प्रथममेव मया तवार्थे। **(4-13)**
- यस्य त्वया व्रणविरोपणमिङ्गुदीनाम्। **(4-14)**
- उत्पक्ष्मणोर्नयनयोरूपरुद्धवृत्तिम्। **(4-15)**
- अस्मान् साधु विचिन्त्य संयमधनान्। **(4-17)**
  (चार प्रसिद्ध श्लोकों में से एक)
- शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तिं....। **(4-18)**
  (चार प्रसिद्ध श्लोकों में से एक)
- अभिजनवतो भर्तुः श्लाघ्ये स्थिता गृहिणीपदे। **(4-19)**
- भूत्वा चिराय चतुरन्तमहीसपत्नी। **(4-20)**
- शममेष्यति मम शोकः कथं नु वत्से.....। **(4-21)**
- अर्थो हि कन्या परकीय एव। **(4-22)**

➢ अभिज्ञानशाकुन्तलम् चतुर्थ अङ्क के **प्रसिद्ध चारों श्लोक महर्षि कण्व** (काश्यप) द्वारा कहे गये हैं।
➢ अनसूया, प्रियंवदा एवं शकुन्तला तीनों कण्व को **तात** (पिता) कहकर पुकारती हैं।

अनसूया एवं प्रियंवदा

परिचय –
➢ अनसूया और प्रियंवदा दोनों शकुन्तला की प्रिय सखियाँ।
➢ कण्वाश्रम में शकुन्तला के साथ निवास।

दोनों सखियों की चारित्रिक विशेषतायें

- सुन्दररूप एवं समान आयु।
- तपोवन-निवासिनी।
- सामान्य व्यवहारज्ञान से परिचित।
- कामशास्त्र से परिचित।
- आदर्श–सखियाँ।
- शकुन्तला की हितैषिणी।
- सौन्दर्यशालिनी।
- लोकव्यवहारज्ञाता।
- अतिथिसत्कार-निपुणा।
- परिहास/विनोदप्रिया।
- तर्कशीला।
- प्रकृतिप्रेमिका।
- आश्रमप्रिया।
- पारस्परिक स्नेह एवं आत्मीयता।

चारित्रिक गुण एवं कार्य

➢ दोनों सखियाँ शकुन्तला की समवयस्का हैं, और सौन्दर्य में लगभग उसके समान ही हैं – "**अहो समवयोरूपरमणीयं भवतीनां सौहार्दम्।**" (अङ्क-1)
➢ राजा दुष्यन्त तीनों सखियों के परस्पर सौहार्दभाव, समान अवस्था एवं सौन्दर्य की प्रशंसा करता है – "**अहो मधुरमासां दर्शनम्**" (अङ्क-1)
➢ दोनों सखियाँ शकुन्तला के व्यक्तित्त्व की प्रतिच्छाया सी प्रतीत होती हैं, इनकों पृथक् कर शकुन्तला के अस्तित्व एवं व्यक्तित्व की कल्पना कठिन है।
➢ यदि शकुन्तला आश्रमाकाश की चन्द्रलेखा है, तो सखीद्वय तदनुगामी विशाखानक्षत्र "**किमत्र चित्रं यदि विशाखे शशाङ्करेखामनुवर्तेते।**" (अङ्क-3)
➢ प्रथम अङ्क से लेकर चतुर्थ अङ्क तक शकुन्तला के साथ दोनों सखियाँ उपस्थित रहती हैं।
➢ अनसूया एवं प्रियंवदा – ये दोनों पात्र महाकवि कालिदास की नाट्यप्रतिभा की निजी कल्पना से प्रादुर्भूत हैं।
➢ सौन्दर्य में शकुन्तला सबसे अधिक सुन्दर है, परन्तु आयु में अनसूया सबसे बड़ी ज्ञात होती है।
➢ सखियों में परस्पर घनिष्ट प्रेम है, तीनों ही एक दूसरे को सदा सुखी देखना चाहती हैं।
➢ दोनों सखियों का नाम सार्थक है। अनसूया **(न असूया इति अनसूया)** सभी के प्रति ईर्ष्या द्वेषादि से सर्वथा रहित है, तथा प्रियंवदा **(प्रियं वदति इति प्रियंवदा)** सदा प्रिय मधुर बोलने वाली है।
➢ सुख दुःख–दोनों में सदा शकुन्तला के साथ रहती हैं, और सर्वदा उसका हितचिन्तन करती हैं।
➢ तृतीय अङ्क में शकुन्तला को अस्वस्थ देखकर राजा दुष्यन्त से मिलाने का प्रयास करती हैं।
➢ दोनों सखियाँ कर्मठ, कार्यदक्ष और बुद्धिमती हैं, दोनों आश्रम के वृक्षों को उत्साहपूर्वक सींचती हैं।
➢ चतुर्थ अङ्क में शकुन्तला की विदाई के समय दोनों उसका शृङ्गार करती हैं।
➢ तृतीय अङ्क में अपनी बुद्धिमत्ता से राजा दुष्यन्त से यह वचन लेती हैं कि वह शकुन्तला को सदा सुखी रखेगा – "**परिग्रहबहुत्वेऽपि......सखी च युवयोरियम्।**" (अङ्क 3/17)
➢ दोनों सखियाँ शिष्ट, विनीत, मधुरभाषिणी और वाक्चतुर हैं, प्रथम अङ्क में राजा से मिलने पर अनसूया उनका परिचय पूछती है – "**कतम आर्येण राजर्षिवंशोऽलंक्रियते।**" (अङ्क-1)
➢ शकुन्तला के प्रति दुर्वासा के भीषण शाप को सुनकर दोनों का हृदय विदीर्ण हो जाता है, शापनिवृत्ति के लिए पूरा प्रयास करती हैं, तथा अपनी प्रियसखी शकुन्तला को कुछ भी नहीं बताती हैं।

- दोनों सखियाँ शकुन्तला से निःस्वार्थ प्रेम करती हैं, उसे सब प्रकार से सुखी और प्रसन्न रखना चाहती हैं। शकुन्तला जब कामज्वर से ग्रस्त होती है, तब कमलनाल, कमलपत्र और चन्दनादि के लेप से उसका उपचार करतीं हैं।
- दोनों सखियों के लिए शकुन्तला का संयोग जितना मधुर है, उतना ही वियोग दुःखदायी।
- राजा दुष्यन्त उनके आतिथ्यसत्कार, लोकव्यवहार, एवं मधुरभाषण से प्रसन्न होता है– **''भवतीनां सुनृतयैव गिरा कृतमातिथ्यम्।''** (अङ्क-1)
- अनसूया स्वभाव से वाग्विदग्ध, व्यवहारकुशल एवं प्रौढ है, राजा दुष्यन्त जब आश्रम में प्रवेश करता है, तो अनसूया ही उससे वार्तालाप प्रारम्भ करती है – **''आर्य, न खलु किमप्यत्याहितम् इयं नौ प्रियसखी मधुकरेणाभिभूयमाना कातरीभूता।''** (अङ्क-1)
- अनसूया राजा दुष्यन्त से उनका परिचय पूछती है, और अपनी सखी शकुन्तला के जन्म एवं माता-पिता के विषय में राजा से बताती है – **''शृणोत्वार्य अस्ति कोऽपि कौशिक इति गोत्रनामधेयो महाप्रभावो राजर्षिः।''** (अङ्क-1)
- प्रियंवदा, अनसूया की अपेक्षा अधिक विनोदप्रिया एवं चपल है। शकुन्तला जब अनसूया से अपने वल्कलों को ढीला करने को कहती है तो प्रियंवदा परिहास करती है कि मुझे उलाहना न देकर पयोधरविस्तारी अपने यौवन को उलाहना दो–**''अत्र पयोधरविस्तारयितृ आत्मनो यौवनमुपालभस्व।''** (अङ्क-1)
- शकुन्तला द्वारा वनज्योत्सना और आम्रवृक्ष की युगलजोड़ी को स्नेहदृष्टि से देखने पर प्रियंवदा मजाक करती है कि तुम भी इसी तरह अपने अनुकूल वर को प्राप्त करने की सोच रही हो–**''यथा वनज्योत्स्नाऽनुरूपेण पादपेन सङ्गता..... अहमप्यात्मनोऽनुरूपं वरं लभेयेति।''** (अङ्क-1)
- अनसूया में प्रियंवदा की अपेक्षा धैर्य तथा गाम्भीर्य अधिक है। दुर्वासा के शाप को सुनकर जब प्रियंवदा सहसा घबड़ा जाती है– **''हा धिक्, हा धिक् अप्रियमेव संवृत्तम्''** किन्तु अनसूया उसे धैर्यपूर्वक दुर्वासा को मनाने के लिए कहती है – **''गच्छ, पादयोः प्रणम्य निवर्तयैनम्।''** (अङ्क-4)
- प्रियंवदा चपलतावश इस दारुण शापवृत्तान्त को शकुन्तला से कहीं बता न दें इसके लिए अनसूया उसको मना करती है – **''प्रियंवदे! द्वयोरेव नौ मुख एष वृत्तान्तस्तिष्ठतु''**।
- प्रियंवदा के मन में यह शंका उठती है कि पिता कण्व गान्धर्वविवाह के वृत्तान्त को सुनकर न जाने क्या सोचेगें–**''तात इदानीमिमं वृत्तान्तं श्रुत्वा न जाने किं प्रतिपत्स्यत इति''** (अङ्क-4) तो अनसूया अपने विवेक बुद्धि का परिचय देती हुई कहती है कि –**''यथाऽहं पश्यामि तथा तस्यानुमतं भवेत्। गुणवते कन्यका प्रतिपादनीया इत्ययं तावत् प्रथमः संकल्पः।''**
- अनसूया शकुन्तला के भविष्य के प्रति चिन्तित रहती है, वह किसी भी विषय पर सम्यक् उहापोह और विचार-विमर्श करती है। वह चिन्तित है कि राजा दुष्यन्त अपने नगर हस्तिनापुर पहुँचने के बाद शकुन्तला के साथ किये गये गान्धर्व विवाह को स्मरण करेगा या नहीं – **''अद्य स राजर्षिः इतोगतं वृत्तान्तं स्मरति वा न वेति।''** (अङ्क-4)
- प्रियंवदा निःशङ्क और निश्चिन्त स्वभाव वाली है। उसे पूरा विश्वास है कि सुन्दर आकृति वाला दुष्यन्त गुणरहित नहीं हो सकता–**''न तादृशा आकृतिविशेषा गुणविरोधिनो भवन्ति''** (अङ्क-4)
- अनसूया भविष्य के प्रति सचेष्ट और व्यावहारिक बुद्धिवाली है। तृतीय अङ्क में वह राजा से यह वचन लेती है कि अनेक रानियों के बीच शकुन्तला की उपेक्षा न करें। **''वयस्य बहुवल्लभाः राजानः श्रूयन्ते''।** राजा उनकी प्रियसखी शकुन्तला को गौरवपूर्ण स्थान देने का आश्वासन देता है।
- शकुन्तला की विदाई के अवसर पर उसे सजाने के लिए अनसूया आम की डाल पर नारियल के डिब्बे में केसरमालिका को रखे रहती है।
- अनसूया, प्रियंवदा की अपेक्षा तात कण्व के अधिक निकट है, वह पिता के स्वभाव तथा विचारों को ठीक से जानती है, तात कण्व भी शकुन्तला की विदाई के अवसर पर अनसूया को ही बारम्बार सम्बोधित करते हैं।
- प्रियंवदा प्रणयव्यापार के स्वरूप को अच्छी प्रकार जानती है। शकुन्तला और दुष्यन्त के प्रेम में वह सूत्रधार का कार्य करती है। तृतीय अङ्क में शकुन्तला की अस्वस्थता के मूल कारण को प्रियंवदा ठीक से समझती है और उसके उपाय के रूप में शकुन्तला को मदनलेख (प्रेमपत्र) लिखने की प्रेरणा भी प्रियंवदा देती है, और उस प्रेमपत्र को फूलों में छिपाकर देवता के प्रसाद के बहाने राजा तक पहुँचाने का कार्य भी उसी के द्वारा सम्पन्न होता है।
- अनसूया अतिथि सत्कार करने में निपुण है, राजा दुष्यन्त के आश्रम आने पर वह शकुन्तला से कहती है–**''हला शकुन्तले, गच्छोटजम्। फलमिश्रमर्घमुपहर।''**
- श्राप को सुनकर प्रियंवदा दुर्वासा के समीप जाकर शकुन्तला की मङ्गलकामना हेतु क्षमायाचना करती है। (अङ्क-4)
- अनसूया विचारशील और मितभाषिणी है, वह हँसी, मजाक की बातों में विशेष भाग नहीं लेती। वह सशङ्कवृत्ति की है, सहसा किसी बात पर विश्वास नहीं करती। जबकि प्रियंवदा शीघ्र विश्वास करने वाली, परिहासप्रिया एवं वाक्पटु है।
- अनसूया भविष्य के सुख की विशेष चिन्ता करती है, प्रियंवदा वर्तमान को विशेष महत्त्व देती है।
- अनसूया अधिक व्यवहारिक, धीर और परिपक्व बुद्धि की है जबकि प्रियंवदा भावुक एवं चञ्चल है।

विदूषक (माधव्य)

परिचय –

- राजा दुष्यन्त का अन्तरङ्ग मित्र।
- हास्यरस का एक पात्र।
- 'माधव्य' नामक एक ब्राह्मण।

चारित्रिक विशेषतायें

- भोजनपटु।
- डरपोक एवं अकर्मण्य।
- राजा का परमप्रिय मित्र एवं परामर्शदाता।
- भीरु एवं सरल स्वभाव।

विदूषक का लक्षण

कुसुमवसन्ताद्यभिधः कर्मवपुर्वेषभाषाद्यैः।
हास्यकरः कलहरतिर्विदूषकः स्यात् स्वकर्मज्ञः।

विदूषक स्वामिभक्त, मनोविनोद में निपुण, कुपित नायिकाओं को मनाने वाला, एवं सच्चरित्र होता है। वह अपने ऊँटपटाँग कार्यों, विकृत अङ्गों तथा वेषभूषादि के द्वारा हास्य का वातावरण प्रस्तुत करता है। वह नायक का विश्वासपात्र तथा उसके प्रणय सम्बन्धी क्रियाकलापों में सहायता पहुँचाता है।

विदूषक (माधव्य) के गुण एवं कार्य

- अभिज्ञानशाकुन्तलम् के विदूषक (माढव्य) का सर्वप्रथम दर्शन द्वितीय अङ्क में होता है।
- विदूषक माधव्य भोजनप्रिय एवं पेटू है। राजा दुष्यन्त शकुन्तला के प्रणयव्यापार में उनसे सहायता करने के लिए कहता है तो वह ''**किं मोदकखण्डिकायाम्**'' कहकर अपनी पेटपूजा पटुता का परिचय देता है।
- इसी प्रकार षष्ठ अङ्क में राजादुष्यन्त शकुन्तला के वियोग में अँगूठी से उपालम्भ देते हैं किन्तु विदूषक को वहाँ भी बुभुक्षा पीड़ित करती है– ''**कथं बुभुक्षया खादितव्योऽस्मि**'' (अङ्क-6)
- वह स्वभाव से अत्यन्त भीरु एवं डरपोक है। शकुन्तला के दर्शन हेतु वह भी उत्सुक था, पर जब वह राक्षसों का वृत्तान्त सुनता है, तब डर जाता है। (अङ्क-2)
- राजा के मृगयाव्यसन के कारण उसको विश्राम का तनिक भी अवसर प्राप्त नहीं होता है, इससे वह अत्यन्त दुःखी है– '**एतस्य मृगयाशीलस्य राज्ञो वयस्यभावेन निर्विण्णोऽस्मि।**'' (अङ्क-2)
- विदूषक अपने प्रत्येक क्रियाकलाप एवं भावभङ्गिमा से सभी को हँसाता है। जब राजा दुष्यन्त के सामने एक ही साथ ऋषियों की यज्ञरक्षा तथा माता की आज्ञा से राजधानी लौटने के दो कार्य उपस्थित होते हैं, तो विदूषक राजा से कहता है कि – ''**त्रिशङ्कुरिवान्तरा तिष्ठ।**'' (अङ्क-2)
- विदूषक यत्र तत्र अपनी मन्दबुद्धिता का भी परिचय देता है, परन्तु वैसे बहुत चतुर है। षष्ठ अङ्क में राजा के द्वारा आम्रमञ्जरी को मदनबाण कहने पर वह काष्ठदण्ड लेकर मारने दौड़ता है। उसकी मूर्खता पर खिन्न राजा भी हँस पड़ता है।
- विदूषक सरलहृदय का व्यक्ति है, राजा को सन्देह हुआ कि यह राजधानी में जाकर कहीं हमारे प्रणयप्रसङ्ग की चर्चा हमारी रानियों से न कर दे, अतः राजा दुष्यन्त ने उससे कहा कि वे सब मजाक की बातें हैं।
  ''**परिहासविजल्पितं सखे न परमार्थेन गृह्यतां वचः**'' (अङ्क-2)
- विदूषक राजा की इस बात को सच मान लेता है और रानियों से इसकी कोई चर्चा नहीं करता है।
- रानी वसुमती के आने पर वह शकुन्तला का चित्र लेकर भाग जाता है, और राजा को वसुमती के क्रोध से बचाता है।
- पञ्चम अङ्क के प्रारम्भ में रूठी रानी हंसपदिका को मनाने के लिए राजा विदूषक को ही भेजता है।
- षष्ठ अङ्क में इन्द्र का सारथि मातलि विदूषक को पीटता है जिससे राजा का क्रोध प्रस्फुटित होता है। तभी राजा दानवों के वधार्थ स्वर्ग को जाता है।
- वह राजा को समय-समय पर सान्त्वना देता है, उसका मनोरञ्जन करता है, और उचित परामर्श भी देता है। (अङ्क-6)

गौतमी

- **परिचय** – ऋषि कण्व की धर्मभगिनी
- कण्वाश्रम की सर्वाधिक वृद्धा तपस्विनी/वरिष्ठ महिला
- आश्रम की व्यवस्थापिका/अध्यक्षा

चारित्रिक विशेषताएँ –

- सम्मानित महिला
- वरिष्ठ तपस्विनी
- बुद्धिमती
- व्यवहारकुशल एवं लोकव्यवहार की ज्ञाता
- अभिभाविका
- अतीव सरल एवं निच्छल व्यक्तित्त्व
- ममतामयी एवं वात्सल्य की प्रतिमूर्ति

चारित्रिक गुण एवं कार्य

- महर्षि कण्व का गौतमी के प्रति सम्मानभाव है, इसीलिए शकुन्तला के साथ उसे हस्तिनापुर तक भेजा जाता है।
- गौतमी में अवस्थानुरूप गाम्भीर्य, सहिष्णुता एवं विवेकशीलता दृष्टिगोचर होती है, राजदरबार में दुष्यन्त जब शकुन्तला के साथ अपने सम्बन्ध को अस्वीकार कर देता है, तब वह शकुन्तला का घूँघट हटाकर स्वयं उसे अपने सम्बन्ध को प्रमाणित करने का आदेश देती है।
- गुरुजनों तथा बन्धु-बान्धवों से पूछे बिना दुष्यन्त एवं शकुन्तला के प्रेम सम्बन्धों को वह अनुचित मानती है।
- शकुन्तला के प्रति उसका हृदय माँ की वात्सल्यमयी ममता से ओतप्रोत है। वह उसे पुत्रीवत् स्नेह करती है। राजा दुष्यन्त द्वारा अस्वीकार कर दिये जाने पर शकुन्तला जब शार्ङ्गरव आदि के पीछे-पीछे आने लगती है तो उस समय गौतमी का वात्सल्यभाव जाग उठता है – **वत्स शार्ङ्गरव, अनुगच्छतीयं खलु नः करुणपरिदेविनी शकुन्तला........किं वा मे पुत्रिका करोतु।'' (अङ्क 5)**
- कण्व के आश्रम में गौतमी अभिभावक की महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है, तापसकन्याओं की देखरेख का उत्तरदायित्व उसी का है।
- प्रथम अङ्क में प्रियंवदा के परिहास से परेशान हुई शकुन्तला गौतमी से शिकायत करने को कहती है –

इयम् असम्बद्धप्रलापिनी....गौतम्यै निवेदयिष्यामि (अङ्क-1)

- शकुन्तला की अस्वस्थता का समाचार सुनकर गौतमी शान्तिजल लेकर उसके ऊपर छिड़कती है और वात्सल्यभाव से पूछती है–
  'जाते, लघुसन्तापानि तेऽङ्गानि' (अङ्क-3)
- शकुन्तला की विदाई में विलम्ब होता देख गौतमी महर्षिकण्व से भी वापस लौट जाने का निवेदन करती है –
  जाते, परिहीयते गमनवेला....निवर्ततां भवान्। (अङ्क-4)
- कण्व द्वारा शकुन्तला को उपदेश दिये जाने पर गौतमी उसे ठीक से स्मरण करने को कहती है –
  जाते, एतत् खलु सर्वमवधारय। (अङ्क-4)
- गौतमी शकुन्तला को सर्वदा, **'वत्से'**, **'जाते'**, **'पुत्रि'** आदि यही सम्बोधन करती है इससे शकुन्तला के प्रति उसका अगाध स्नेह स्वयं व्यक्त होता है।
- शकुन्तला को छोटी-छोटी व्यवहार और शिष्टाचार की बातें भी गौतमी बताती हैं, विदाई के समय कण्व ऋषि के आने पर शकुन्तला को प्रणाम करने को कहती है।
  ''आचारं तावत् प्रतिपद्यस्व'' (अङ्क-4)
- कण्व द्वारा पुत्री शकुन्तला के लिए चक्रवर्ती पुत्र प्राप्त करने का आशीर्वाद सुनकर गौतमी अत्यन्त प्रसन्न होकर कहती है – यह तो केवल आशीर्वाद नहीं, अपितु वरदान है।
  भगवन्, वरः खल्वेषः, नाशीः (अङ्क-4)
- आश्रम की संरक्षिका, व्यवस्थापिका, अध्यक्षा या वरिष्ठ तपस्विनी के रूप में गौतमी का सम्मान सभी आश्रमवासी करते हैं। शकुन्तला को हस्तिनापुर ले जाने के लिए शार्ङ्गरव आदि को गौतमी ही आदेश देती है –
  'गौतमि, आदिश्यन्तां शार्ङ्गरवमिश्राः शकुन्तलानयनाय' (अङ्क-4)

शार्ङ्गरव और शारद्वत

- **परिचय** – शार्ङ्गरव और शारद्वत दोनों कण्व ऋषि के शिष्य।

चारित्रिक गुण एवं कार्य

- कण्व ऋषि इनके नाम के साथ आदरसूचक 'मिश्र' शब्द का प्रयोग करते हैं –
  'आदिश्यन्तां शार्ङ्गरवमिश्राः' (अङ्क-4)
  'क्व ते शार्ङ्गरवमिश्राः' (अङ्क-4)
- दोनों परिपक्व आयु वाले तथा विद्यानिष्णात हैं।
- गुरु कण्व का इन दोनों के ऊपर अटूट विश्वास है, तभी तो उनकी देखरेख में शकुन्तला को पतिगृह (हस्तिनापुर) भेजते हैं।
- राजा दुष्यन्त इन दोनों के गरिमामय व्यक्तित्व को देखकर उन्हें गुरु समान कहता है –
  ''गुरुशिष्ये गुरुसमे'' – (अङ्क-6)
- शास्त्रज्ञान के साथ ही साथ इन दोनों ऋषियों में लौकिकज्ञान भी विद्यमान है।
- शकुन्तला की विदाई के समय मार्ग में सरोवर को देखकर शार्ङ्गरव महर्षि कण्व से लौट जाने को कहता है –
  ''भगवन् ओदकान्तं स्निग्धो जनोऽनुगन्तव्य इति श्रूयते। तदिदं सरस्तीरम्.......।'' (अङ्क-4)
- दोनों ऋषियों को आश्रम के जीवन से प्रेम है और नगर जीवन से घृणा।
- हस्तिनापुर नगर में प्रवेश करते समय एक ओर जहाँ शार्ङ्गरव राजभवन को अग्नि की लपटों से घिरा हुआ समझता है –
  'जनाकीर्णं मन्ये हुतवहपरीतं गृहमिव' (अङ्क-5)
- वहीं दूसरी ओर शारद्वत नगर के भोगासक्त लोगों को उसी प्रकार समझता है, जिस प्रकार स्नात व्यक्ति तैलासिक्त को, पवित्र व्यक्ति अपवित्र को, प्रबुद्ध व्यक्ति सोये हुए को, और स्वच्छन्दचारी व्यक्ति बन्धनयुक्त को समझता है –
  ''अभ्यक्तमिव स्नातः शुचिरशुचिमिव'' (अङ्क-5/11)
- इन दोनों में शार्ङ्गरव अधिक आयु का है, ऋषि कण्व को उस पर अधिक विश्वास है, अतः राजा दुष्यन्त के लिए **(अस्मान् साधु विचिन्त्य संयमधनान्----अङ्क-4.17)** रूपी संदेश उसी को देते हैं। शार्ङ्गरव ही शकुन्तला के साथ हस्तिनापुर जाने वाले दल का नेता है, जबकि ऋषि शारद्वत उससे छोटा और शान्तस्वभाव का है।
- शार्ङ्गरव, शारद्वत की अपेक्षा अधिक वाक्पटु एवं लौकिक व्यवहार का ज्ञाता है, जबकि शारद्वत मितभाषी है। उसके विचार दार्शनिक हैं, उसमें दूसरों के प्रति सहानुभूति है।
- शार्ङ्गरव बहुत बोलने वाला, क्रोधी, असहिष्णु, कठोर और अशान्त प्रकृति का है। वह अपने नाम को चरितार्थ करता है, क्योंकि शार्ङ्गरव का शाब्दिक अर्थ है – **'धनुष के समान शब्द करने वाला।'** राजा दुष्यन्त जब शकुन्तला को नहीं पहचानता और विवाह को अस्वीकार कर देता है, तो वह उसे शठ, अधार्मिक और ऐश्वर्योन्मत्त आदि कहकर फटकारता है –
  ''मूर्च्छन्त्यमी विकाराः प्रायेणैश्वर्यप्रमत्तेषु।'' (अङ्क-5/18)
- शार्ङ्गरव अत्यन्त निर्भय एवं स्पष्टवादी है। दुष्यन्त जब अपने आपको शकुन्तला का पति नहीं मानता, तो शार्ङ्गरव उसे चोर तक कहता है – **''पात्रीकृतो दस्युरिवासि येन'' अङ्क-(5/20)**
- शारद्वत मितभाषी, अक्रोधी, सहिष्णु तथा शान्त प्रकृति का है, जब राजा दुष्यन्त और शार्ङ्गरव का विवाद उग्र रूप धारण करता है, तब वही उसे शान्त करता है –
  ''शार्ङ्गरव, विरम त्वमिदानीम्'' (अङ्क-5)
- शारद्वत राजा दुष्यन्त से अन्ततः कहता है कि शकुन्तला तुम्हारी पत्नी है, तुम इसे रखो या छोड़ो, हम लोग जाते हैं –
  ''तदेषा भवतः कान्ता, त्यज वैनां गृहाण वा'' (अङ्क-5)
- शार्ङ्गरव व्यवहारकुशल नहीं है, वह राजा से झगड़े को बढ़ाता है, जबकि शारद्वत अत्यन्त व्यवहारिक है वह झगड़े को निपटाता है। शारद्वत के कारण ही विवाद शान्त हुआ।
- दुष्यन्त के अपमानजनक व्यवहार से दुखी शकुन्तला जब रोने लगती है, तब शार्ङ्गरव उसे डाँटता है –
  ''अतः परीक्ष्य कर्त्तव्यं विशेषात् सङ्गतं रहः'' (अङ्क-5/24)
- जब दरबार में शकुन्तला को छोड़कर गौतमी सहित दोनों शिष्य आश्रम लौटने लगते हैं, तब शकुन्तला भी उनके पीछे-पीछे लौटने लगती है, तभी शार्ङ्गरव पुनः शकुन्तला को कठोर शब्दों में डाँटता है– **''किं पुरोभागे, स्वातन्त्र्यमवलम्बसे'' (अङ्क-5)**

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अङ्क में प्रयुक्त छन्द एवं अलङ्कार

क्र.	श्लोक (वक्ता)	छन्दः	अलङ्कारः
1.	**विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा.......।** (ऋषि दुर्वासा) (4-1) नेपथ्य से	**वंशस्थ** (प्रत्येक चरण में 12 वर्ण)	● काव्यलिङ्ग, उपमा, और श्लेष अलङ्कार।
2.	**यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोषधीनाम्.......। (4-2)** (कण्व का शिष्य)	**वसन्ततिलका** (प्रत्येक पाद में 14 वर्ण)	● समासोक्ति, तुल्ययोगिता, यथासंख्य और उत्प्रेक्षा अलंकार।
3.	**अन्तर्हिते शशिनि सैव कुमुद्वती मे।** (4-3) (कण्व का शिष्य)	**वसन्ततिलका** (प्रत्येक पाद में 14 वर्ण)	● समासोक्ति काव्यलिङ्ग, और अर्थान्तरन्यास अलङ्कार ● नाटक में ये तीसरा **पताकास्थानक** है।
	कर्कन्धूनामुपरि तुहिनं रञ्जयत्यग्रसन्ध्या.......। (बँगला संस्करण में प्राप्त प्रक्षिप्त श्लोक)	**मन्दाक्रान्ता** (प्रत्येक पाद में 17 वर्ण)	● स्वभावोक्ति अलङ्कार।
	पादन्यासं क्षितिधरगुरोर्मूर्ध्नि कृत्वा सुमेरोः......। (बँगला संस्करण में प्राप्त प्रक्षिप्त श्लोक)	**मन्दाक्रान्ता** (प्रत्येक पाद में 17 वर्ण)	● समासोक्ति, अर्थान्तरन्यास और श्लेष अलङ्कार।
4.	**दुष्यन्तेनाहितं तेजो दधानां भूतये भुवः.....।** (4-4) (छन्दोमयी आकाशवाणी)	**अनुष्टुप् या श्लोकवृत्त** (प्रत्येक पाद में 8 वर्ण)	● उपमा अलंकार ● इस श्लोक में मार्ग नामक गर्भसन्धि का अङ्ग है।
5.	**क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डु तरुणा माङ्गल्यमाविष्कृतम्......।** (4-5) (कण्व का शिष्य)	**शार्दूलविक्रीडितम्** (प्रत्येक पाद में 19 वर्ण)	उपमालङ्कार।
6.	**यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया......।** (4-6) (महर्षि कण्व)	**शार्दूलविक्रीडितम्** (प्रत्येक पाद में 19 वर्ण)	● व्यतिरेक अलङ्कार। ● **प्रसिद्ध चार श्लोकों में से एक।**
7.	**ययातेरिव शर्मिष्ठा भर्तुर्बहुमता भव।** (4-7) (महर्षि कण्व)	**अनुष्टुप्** (प्रत्येक पाद में 8 वर्ण)	● उपमा अलङ्कार। ● इस श्लोक में क्रम नामक गर्भसन्धि का अङ्ग तथा आशीः नामक नाटकीय अलङ्कार है।
8.	**अमी वेदिं परितः क्लृप्तधिष्ण्याः।** (4-8) (महर्षि कण्व)	**त्रिष्टुप् (वैदिक छन्द)** (प्रत्येक पाद में 11 वर्ण)	● परिकर अलङ्कार।
9.	**पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या......। (4-9)** (महर्षि कण्व)	**शार्दूलविक्रीडितम्** (प्रत्येक पाद में 19 वर्ण)	● समासोक्ति, और काव्यलिङ्ग अलङ्कार। ● **प्रसिद्ध चार श्लोकों में से एक।**
10.	**अनुमतगमना शकुन्तला......।** (4-10) (महर्षि कण्व)	**अपरवक्त्रछन्दः** (प्रथम और तृतीय चरण में 11 वर्ण द्वितीय और चतुर्थचरण में 12 वर्ण)	● परिणाम अलङ्कार।
11.	**रम्यान्तरः कमलिनीहरितैः सरोभिः।** (4-11) (देवताओं की आकाशवाणी)	**वसन्ततिलका** (प्रत्येक पाद में 14 वर्ण)	● परिकर, तुल्योगिता, काव्यलिङ्ग और हेतु अलङ्कार।
12.	**उद्गलितदर्भकवला मृग्यः......।** (प्रियंवदा) (4-12)	**आर्या** (प्रथम पाद में 12 वर्ण)	● उत्प्रेक्षा और समासोक्ति अलङ्कार।

13.	**सङ्कल्पितं प्रथममेव मया तवार्थे....।** (4-13) (काश्यप/कण्व)	**वसन्ततिलका** (प्रत्येक पाद में 14 वर्ण)	● समासोक्ति, तुल्ययोगिता सम और काव्यलिङ्ग, अलङ्कार।
14.	**यस्य त्वया व्रणविरोपणमिङ्गुदीनाम्** (4-14) (काश्यप/कण्व)	**वसन्ततिलका** (प्रत्येक पाद में 14 वर्ण)	● स्वभावोक्ति अलङ्कार।
15.	**उत्पक्ष्मणोर्नयनयोरूपरुद्धवृत्तिम्....।** (4-15) (काश्यप/कण्व)	**वसन्ततिलका।** (प्रत्येक पाद में 14 वर्ण)	● काव्यलिङ्ग अलङ्कार।
16.	**एषापि प्रियेण विना गमयति....।** (4-16) **(अनसूया)**	**आर्या** (प्रथम पाद में 12 वर्ण)	● अर्थान्तरन्यास अलङ्कार।
17.	**अस्मान् साधु विचिन्त्य संयमधनानुच्चैः कुलं चात्मनः....।** (4-17) (काश्यप/कण्व)	**शार्दूलविक्रीडितम्** (प्रत्येक पाद में 19 वर्ण)	● अप्रस्तुतप्रशंसा अलङ्कार। ● **प्रसिद्ध चार श्लोकों में से एक।**
18.	**शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने....।** (4-18) (काश्यप/कण्व)	**शार्दूलविक्रीडितम्।** (प्रत्येक पाद में 19 वर्ण)	● रूपक, हेतु, और अर्थान्तरन्यास अलङ्कार। ● इस श्लोकों में 'उपदिष्ट' नामक नाटकीय लक्षण है। **प्रसिद्ध चार श्लोकों में से एक।**
19.	**अभिजनवतो भर्तुः श्लाघ्ये स्थिता गृहिणीपदे......।** (4-19) (काश्यप/कण्व)	**हरिणी** (प्रत्येक पाद में 17 वर्ण)	● उपमा, समुच्चय और काव्यलिङ्ग अलङ्कार। ● कुछ लोग ''अस्मान् साधु...." के स्थान पर इसे प्रसिद्ध चार श्लोकों में गिनते हैं।
20.	**भूत्वा चिराय चतुरन्तमहीसपत्नी।** (4-20) (काश्यप/कण्व)	**वसन्ततिलका** (प्रत्येक पाद में 14 वर्ण)	● मालादीपक अलङ्कार। ● कुछ लोग ''पातुं न प्रथमं....." के स्थान पर इसे भी चार प्रसिद्ध श्लोकों में गिनते हैं।
21.	**शममेष्यति मम शोकः कथं नु.....।** (4-21) (काश्यप/कण्व)	**आर्या जातिः**	काव्यलिङ्ग अलङ्कार।
22.	**अर्थो हि कन्या परकीय एव....।** (4-22) (काश्यप/कण्व)	**इन्द्रवज्रा** (प्रत्येक पाद में 11 वर्ण)	उत्प्रेक्षा अलङ्कार।

- अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चारों प्रसिद्ध श्लोक महर्षि कण्व ने कहे हैं।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अङ्क में कुल 22 श्लोक हैं, जिसमें 14 श्लोक महर्षि कण्व के द्वारा बोले गए हैं।
- चतुर्थ अङ्क में **''उद्गलितदर्भकवला मृग्यः''** (4.12) इस श्लोक को प्रियंवदा तथा **''एषापि प्रियेण विना गमयति रजनी''** (4.16) इस एक श्लोक को अनसूया बोलती है।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् के केवल चतुर्थ अङ्क में महर्षि कण्व का दर्शन होता है।
- चतुर्थ अङ्क के बाद अनसूया और प्रियंवदा का वर्णन नहीं मिलता है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के महत्त्वपूर्ण संवाद/कथन/सूक्तियाँ

क्र. कथन	भावार्थ	वक्ता
01. आत्मनो नगरं प्रविश्यान्तःपुर समागत इतोगतं वृत्तान्तं स्मरति वा न वेति।	राजा अपने नगर में प्रवेश करके और अन्तःपुर की स्त्रियों से मिलकर यहाँ की बातों को याद करेगा अथवा नहीं।	**अनसूया**
02. न तादृशा आकृतिविशेषा गुणविरोधिनो भवन्ति।	उसप्रकार की सुन्दर आकृतियाँ गुणों से रहित नहीं होती हैं।	**प्रियंवदा**

क्र.	कथन	भावार्थ	वक्ता
03.	**गुणवते कन्यका प्रतिपादनीयेत्ययं तावत् प्रथमः संकल्पः।**	गुणवान् व्यक्ति को कन्या देनी चाहिए, यह (माता-पिता का) प्रथम संकल्प होता है।	**अनसूया**
04.	**ननु सख्याः शकुन्तलायाः सौभाग्यदेवताऽर्चनीया**	सखि शकुन्तला के सौभाग्यदेवता (पति) की भी तो पूजा करनी है	**अनसूया**
05.	**सखि, अतिथीनामिव निवेदितम्**	सखी! किसी अतिथि की सी यह आवाज है।	**अनसूया**
06.	**ननूटजसन्निहिता शकुन्तला।**	शकुन्तला तो कुटी पर उपस्थित है ही।	**प्रियंवदा**
07.	**अद्य पुनर्हृदयेनासंनिहिता।**	किन्तु आज वह हृदय से अनुपस्थित है। अर्थात् आज उसका मन कहीं और है।	**अनसूया**
08.	**विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा तपोधनं वेत्सि न मामुपस्थितम् (4.1)**	एकाग्रचित्त से जिसका चिन्तन करती हुई तू उपस्थित हुए मुझ तपस्वी को नही देख रही हो।	**दुर्वासा (नेपथ्ये)**
	स्मरिष्यति त्वां न स बोधितोऽपि सन् कथां प्रमत्तः प्रथमं कृतामिव॥ (4.1)	वह तेरे स्मरण दिलाने पर भी तुझको स्मरण नहीं करेगा, जैसे उन्मत्त व्यक्ति पहले कही बात को स्मरण नहीं करता है।	**दुर्वासा (नेपथ्ये)**
09.	**हा धिक्, हा धिक्। अप्रियमेव संवृत्तं कस्मिन्नपि पूजार्हेऽपराद्धा शून्यहृदया शकुन्तला।**	हाय हाय धिक्कार है। अनर्थ हो गया। किसी पूजनीय व्यक्ति के प्रति शून्य हृदयवाली शकुन्तला ने कुछ अपराध कर दिया है।	**प्रियंवदा**
10.	**न खलु यस्मिन् कस्मिन्नपि। एष दुर्वासाः** जिस किसी साधारण व्यक्ति के प्रति नहीं। ये **सुलभकोपो महर्षिः**	**प्रियंवदा** तो शीघ्र कुपित हो जाने वाले महर्षि दुर्वासा हैं।	
11.	**कोऽन्यो हुतवहाद् दग्धुं प्रभवति।**	अग्नि के अतिरिक्त और कौन जला सकता है।	**अनसूया**
12.	**सखि, प्रकृतिवक्रः स कस्यानुनयं प्रतिगृह्णाति**	सखी! स्वभाव से टेढ़े वे महर्षि दुर्वासा किसकी प्रार्थना को स्वीकार करते हैं।	**प्रियंवदा**
13.	**भगवन्, प्रथम इति प्रेक्ष्याविज्ञाततपः प्रभावस्य दुहितृजनस्य भगवतैकोऽपराधो मर्षयितव्य इति।**	भगवन्! आपके तप के प्रभाव को न जानने वाली आपकी पुत्रीजन शकुन्तला का यह पहला अपराध है– यह समझकर आपके द्वारा उसका यह एक अपराध क्षमा कर दिया जाना चाहिए।	**प्रियंवदा**
14.	**न मे वचनमन्यथा भवितुमर्हति।**	मेरा वचन असत्य नहीं हो सकता।	**प्रियंवदा** (दुर्वासा)
15.	**अभिज्ञानाभरणदर्शनेन शापो निवर्तिष्यत इति मन्त्रयमाण एवान्तर्हितः।**	'पहचान के आभूषण को दिखाने से मेरा शाप समाप्त हो जाएगा'–यहकथन को बताती है। कहते कहते ही वे अदृश्य हो गए।	**प्रियंवदा** (दुर्वासा)
16.	**अस्ति तेन राजर्षिणा संप्रस्थितेन स्वनामधेयाङ्कितमङ्गुलीयकं स्मरणीयमिति स्वयं पिनद्धम्**	उस राजर्षि के द्वारा अपने नाम से अङ्कित अँगूठी स्मृति-चिह्न के रूप में शकुन्तला की अंगुली में स्वयं पहनायी गयी थी	**अनसूया**
17.	**वामहस्तोपहितवदनाऽऽलिखितेव प्रियसखी**	बायें हाथ पर मुँह रखी हुई प्रियसखी शकुन्तला चित्रित सी बैठी हुई है।	**प्रियंवदा**
18.	**भर्तृगतया चिन्तयात्मानमपि नैषा विभावयति। किं पुनरागन्तुकम्।**	पति के ध्यान में मग्न होने के कारण उसे अपने आपकी सुध नहीं है, फिर अतिथि की बात ही क्या है?	**प्रियंवदा**
19.	**प्रियंवदे, द्वयोरेव नौ मुख एव वृत्तान्तस्तिष्ठतु**	प्रियंवदा, यह समाचार हम दोनों के मुख तक ही सीमित रहे।	**अनसूया**
20.	**रक्षितव्या खलु प्रकृतिपेलवा प्रियसखी।**	स्वभाव से ही कोमल प्रियसखी शकुन्तला की रक्षा करनी चाहिए। (अन्यथा यह समाचार सुनकर उसे बहुत आघात पहुँचेगा)	**अनसूया**
21.	**को नामोष्णोदकेन नवमालिकां सिञ्चति**	भला कौन नवमालिका (चमेली) को गर्मजल से सींचेगा।	**प्रियंवदा**

22. तेजोद्वयस्य युगपद् व्यसनोदयाभ्यां लोको नियम्यत इवात्मदशान्तरेषु।	यह संसार दो तेजों चन्द्रमा और सूर्य के एक साथ अस्त एवं उदित होने से अपनी दशाओं के परिवर्तित होने के विषय में मानो नियंत्रित अर्थात् शिक्षित किया जा रहा है।	**कण्व का शिष्य**
23. इष्टप्रवासजनितान्यबलाजनस्य दुःखानि नूनमतिमात्र दुःसहानि (4.3)	निश्चय ही स्त्रियों को अपने इष्टजन (प्रियतमों) के प्रवास से उत्पन्न दुःख अत्यन्त असह्य होते हैं।	**कण्व का शिष्य**
24. तेन राज्ञा शकुन्तलायामनार्यमाचरितम्।	राजा ने शकुन्तला के साथ अशिष्ट व्यवहार किया है।	**अनसूया**
25. काम इदानीं सकामो भवतु येनासत्यसन्धे जने शुद्धहृदया सखी पदं कारिता।	कामदेव की अब इच्छा पूर्ण हो, जिसने असत्यप्रतिज्ञ व्यक्ति (दुष्यन्त) के प्रति शुद्ध हृदयवाली सखी शकुन्तला का प्रेम कराया है।	**अनसूया**
26. दुःखशीले तपस्विजने कोऽभ्यर्थ्यताम्। ननु सखीगामी दोष इति।	कष्ट सहन करने वाले तपस्वियों में से किससे प्रार्थना करें। हमारी सखी पर दोष आयेगा।	**अनसूया**
45. वत्से, इतः सद्योहुताग्नीन् प्रदक्षिणीकुरुष्व	पुत्री! अभी हवन की गयी अग्नि की इधर से प्रदक्षिणा करो।	**महर्षि कण्व**
46. भगवन्! वरः खल्वेषः नाशीः।	भगवन्! यह तो वरदान है, केवल आशीर्वाद नही।	**गौतमी**
47. भो भोः संनिहितास्तपोवनतरवः! सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्	हे समीपस्थ तपोवन के वृक्षों! वही यह शकुन्तला पति के घर जा रही है, आप सभी लोग अनुमति दें।	**महर्षि कण्व**
48. अनुमतगमना शकुन्तला तरुभिरियं वनवासबन्धुभिः। (4.10)	वृक्षों ने इस शकुन्तला को पतिगृह जाने की अनुमति दे दी है।	**महर्षि कण्व**
49. शान्तानुकूलपवनश्च शिवश्च पन्थाः।	इस शकुन्तला का मार्ग शान्त और अनुकूल वायु वाला एवं कल्याण करने वाला हो।	**आकाश भाषित**
50. उद्गलितदर्भकवला मृग्यः परित्यक्तनर्तना मयूराः। (4.12)	मृगियों ने कुश के ग्रास को उगल दिया है, मोरों ने नाचना छोड़ दिया है	**प्रियंवदा**
51. अपसृतपाण्डुपत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लताः। (4.12)	लतायें पीले पत्तों को गिराकर मानों आँसुओं को छोड़ रही हैं।	**प्रियंवदा**
52. तात, लताभगिनीं वनज्योत्स्नां तावदामन्त्रयिष्ये।	हे पिताजी! मैं अपनी लता-बहिन वनज्योत्स्ना से विदाई ले लूँ।	**शकुन्तला**
53. अद्यप्रभृति दूरपरिवर्तिनी ते खलु भविष्यामि	आज से मैं तुमसे दूर हो जाऊँगी।	**शकुन्तला**
54. अस्यामहं त्वयि च सम्प्रति वीतचिन्तः।	अब मैं इस वनज्योत्स्ना और तुम्हारे विषय में निश्चिन्त हो गया हूँ।	**महर्षि कण्व**
55. हला एषा द्वयोर्युवयोर्हस्ते निक्षेपः	सखियों, इस लता को तुम दोनों के ही हाथ में सौंप रही हूँ।	**शकुन्तला**
56. अयं जनः कस्य हस्ते समर्पितः।	इस जन (हम दोनों) को किसके हाथ में सौंप रही हो।	**दोनों सखियाँ**
57. को नु खल्वेष निवसने मे सज्जते?	यह कौन मेरे वस्त्र से लिपट रहा है।	**शकुन्तला**
58. सोऽयं न पुत्रकृतकः पदवीं मृगस्ते	पुत्रवत् पाला गया यह मृग तेरा मार्ग नहीं छोड़ रहा है।	**महर्षि कण्व**
59. वत्स किं सहवासपरित्यागिनीं मामनुसरसि।	पुत्र, साथ छोड़कर जाने वाली मुझ (शकुन्तला) के पीछे-पीछे क्यों आ रहे हो।	**शकुन्तला**

60. वाष्पं कुरु स्थिरतया विरतानुबन्धम् (4.15)	अश्रुप्रवाह को धैर्यपूर्वक रोको।	महर्षि कण्व
61. मार्गे पदानि खलु ते विषमी भवन्ति।	इस ऊबड़-खाबड़ भूमि में तुम्हारे पैर लड़खड़ा रहे हैं।	महर्षि कण्व
62. भगवन्, ओदकान्तं स्निग्धो जनोऽनुगन्तव्य इति श्रूयते।	भगवन्, यात्रा के समय प्रियव्यक्ति का जलाशय तक अनुगमन करना चाहिए–ऐसा सुना जाता है।	शार्ङ्गरव
63. गुर्वपि विरहदुःखमाशाबन्धः साहयति। (4.16)	आशा का बन्धन असहय वियोग के दुःख को भी सहन करा देता है।	अनसूया
64. अस्मान् साधु विचिन्त्य संयमधनानुच्चैः कुलं चात्मनः।.... (4.17)	संयम रूपी धन वाले हम लोगों को तथा अपने ऊँचे कुल को ध्यान में रखते हुए आप कोई व्यवहार करें।	महर्षि कण्व
65. भाग्यायत्तमतः परं न खलु तद्वाच्यं वधूबन्धुभिः (4.17)	इसके आगे तो भाग्य के अधीन है, वह हम वधू के सम्बन्धियों को नहीं कहना चाहिए।	महर्षि कण्व
66. वनौकसोऽपि सन्तो लौकिकज्ञा वयम्	वनवासी होते हुए भी हम लोग लोक व्यवहार को जानने वाले हैं।	महर्षि कण्व
67. न खलु धीमतां कश्चिदविषयो नाम	वस्तुतः विद्वानों को कुछ भी अज्ञात नहीं है।	शार्ङ्गरव
68. शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने। (4.18)	गुरुजनों = बड़ों की सेवा करना, सपत्नियों के साथ प्रियसखी जैसा व्यवहार करना।	महर्षि कण्व
69. यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः। (4.18)	इस प्रकार आचरण करने वाली युवतियाँ गृहलक्ष्मी के पद को प्राप्त कर लेती हैं, और इसके प्रतिकूल आचरण करने वाली युवतियाँ कुल के लिए आधि बन जाती हैं।	महर्षि कण्व
70. वत्से, इमे अपि प्रदेये। न युक्तमनयोः तत्र गन्तुम्।	पुत्री इन दोनों का भी विवाह करना है, इनका वहाँ जाना उचित नहीं है।	महर्षि कण्व
71. मम विरहजां न त्वं वत्से शुचं गणयिष्यसि। (4.19)	मेरे विरह से उत्पन्न शोक को शीघ्र ही भूल जाओगी।	महर्षि कण्व
72. तात, कदा नु भूयस्तपोवनं प्रेक्षिष्ये?	पिताजी मैं फिर कब तपोवन को देखूँगी? अर्थात् आप मुझे कब बुलायेंगे।	शकुन्तला
73. अतिस्नेहः पापशङ्की	अत्यधिक प्रेम पाप (अनिष्ट) की आशङ्का करता है।	दोनों सखियाँ
74. भूत्वा चिराय चतुरन्तमहीसपत्नी.... शान्ते करिष्यसि पदं पुनराश्रमेऽस्मिन्। (4.20)	बहुत दिनों तक चारों समुद्रों तक फैली हुई पृथ्वी की सपत्नी अर्थात् राजा की पटरानी होकर अपने पति दुष्यन्त के साथ आश्रम आओगी।	महर्षि कण्व
75. शममेष्यति मम शोकः कथं नु वत्से त्वया रचितपूर्वम् (4.21)	नीवार को देखते हुए मेरा शोक अब कैसे शान्त हो सकेगा।	महर्षि कण्व
76. गच्छ! शिवास्ते पन्थानः सन्तु।	जाओ! तुम्हारा मार्ग मंगलमय हो।	महर्षि कण्व
77. तात! शकुन्तलाविरहितं शून्यमिव तपोवनं कथं प्रविशावः।	पिताजी, शकुन्तला से रहित इस सूने तपोवन में हम कैसे प्रवेश करें।	अनसूया एवं प्रियंवदा दोनों सखियाँ
78. हन्त भोः! शकुन्तलां पतिकुलं विसृज्य लब्धमिदानीं स्वास्थ्यम्।	अहा! शकुन्तला को ससुराल भेजकर अब मुझे मानसिक शान्ति प्राप्त हुई।	महर्षि कण्व
79. अर्थो हि कन्या परकीय एव। (4.22)	कन्या वस्तुतः दूसरे का ही धन है।	महर्षि कण्व
80. जातो ममायं विशदः प्रकामं प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा (4.22)	मेरा यह हृदय उसी प्रकार अत्यन्त प्रसन्न हो रहा है, जिस प्रकार धरोहर को लौटाने पर धरोहर रखने वाले व्यक्ति का मन प्रसन्न होता है।	महर्षि कण्व

❑❑

उत्तररामचरितम् (अंक1-3)

महाकवि भवभूति का परिचय

- **पितामह** – भट्टगोपाल
- **पिता** – नीलकण्ठ
- **माता** – जतुकर्णी (जातुकर्णी)
- **भवभूति का मूलनाम** – श्रीकण्ठ या भट्टश्रीकण्ठ
- **गुरु** – (i) ज्ञाननिधि (ii) कुमारिलभट्ट
- **भवभूति का दार्शनिक नाम** – उदुम्बर/उम्बिकाचार्य/उम्बेक
- **जन्मस्थान** – दक्षिणभारत में पद्मपुर नगर
- **उपाधि** – (i) पदवाक्यप्रमाणज्ञ, पद = व्याकरण, वाक्य = मीमांसा, प्रमाण = न्याय (ii) वश्यवाक्, (iii) परिणतप्रज्ञ, (iv) शिखरिणीकवि
- **वंश/गोत्र** – काश्यप
- **जाति** – कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखापाठी ब्राह्मण
- **आश्रयदाता** – कान्यकुब्जनरेश यशोवर्मा
- **समय**– 650 ई. से 750 ई. के बीच (सातवीं शताब्दी का उत्तरार्ध)
- **रचनायें** – 1. मालतीमाधवम् (प्रकरण)
  2. महावीरचरितम् (नाटक)
  3. उत्तररामचरितम् (नाटक)
- **भवभूति की रीति** – गौडी
  (उत्तररामचरितम् में गौड़ी और वैदर्भी का समन्वय)
- **भवभूति का प्रियरस** – करुण
- **भवभूति के प्रियछन्द** – अनुष्टुप् और शिखरिणी
- **उपासक** – शिव के
- उत्तररामचरितम् में भवभूति अपने आपको **'परिणतप्रज्ञ'** कहते हैं।
- महावीरचरितम् में भवभूति अपने आपको **'वश्यवाक्'** कहते हैं।
- भवभूति के नाटकों में **'अभिधावृत्ति'** मुख्य है।
- भवभूति की कृतियों में **'ओजगुण'** अधिक है।
- **क्षेमेन्द्र ने 'सुवृत्ततिलक'** में भवभूति के शिखरिणी की प्रशंसा में उसे **'निरर्गलतरङ्गिणी'** कहा है –
  भवभूतेः शिखरिणी निरर्गलतरङ्गिणी।
  रुचिरा घनसन्दर्भे या मयूरीव नृत्यति॥ (सु. 3.33)
- भवभूति के तीनों नाटकों में **विदूषक का सर्वथा अभाव** है।

महाकवि भवभूति विषयक प्रशस्तियाँ

☞ कवयः कालिदासाद्याः भवभूतिर्महाकविः।
– अज्ञात समालोचक

नाटके भवभूतिर्वा वयं वा वयमेव वा।

☞ उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते। **– विक्रमार्क**

☞ कारुण्यं भवभूतिरेव तनुते। **– अज्ञात**

☞ बभूव वाल्मीकभवः कविः पुरा ततः प्रपेदे भुवि भर्तृमेण्ठताम्।
स्थितः पुनर्योभवभूतिरेखया स वर्तते सम्प्रति राजशेखरः।।
– राजशेखर - बालरामायण

☞ भवभूतेर्शिखरिणी निरर्गलतरङ्गिणी।
रुचिरा घनसन्दर्भे या मयूरीव नृत्यति।।
– क्षेमेन्द्र - सुवृत्ततिलक

☞ भवभूतेः सम्बन्धाद्भूधरभूरेव भारती भाति।
एतत्कृतकारुण्ये किमन्यथा रोदिति ग्रावा।।
– गोवर्धनाचार्य - आर्यासप्तशती।

☞ स्पष्टभावरसा चित्रैः पादन्यासैः प्रवर्तिता।
नाटकेषु नटस्त्रीव भारती भवभूतिना।।
– धनपाल - तिलकमञ्जरी

☞ सुकविद्वितयं मन्ये निखिलेऽपि महीतले।
भवभूतिः शुकश्चायं वाल्मीकिस्त्रितयोऽनयोः।।
– भोज - भोजप्रबन्ध

☞ रत्नावली पूर्वकमन्यदास्तामसीमभोगस्य वचोमयस्य।
पयोधरस्येव हिमाद्रिजायाः परं विभूषा भवभूतिरेव।।
– जल्हण - सूक्तिमुक्तावली

☞ भवभूतिमनादृत्य निर्वाणमतिना मया।
मुरारिपदचिन्तायामिदमाधीयते मनः।।
– जल्हण - सूक्तिमुक्तावली।

☞ मान्यो जगत्यां भवभूतिरार्या सारस्वते वर्त्मनि सार्थवाहः।
वाचं पताकामित्रस्य दृष्ट्वा जनः कवीनामनुपृष्ठमेति।।
– उदयसुन्दरीचम्पू

☞ भवभूतिजलधिनिर्गतकाव्यामृतरसकणा इव स्फुरन्ति।
यस्य विशेषा अद्यापि विकटेषु कथानिवेशेषु।।
– गौडवहो - वाक्पतिराज

☞ जडानामपि चैतन्यं भवभूतेरभूद् गिरा।
ग्रावाप्यरोदीत् पार्वत्याः हसतः स्म स्तनावपि।। **– अज्ञात**

☞ अन्तर्मोदं कमपि भवभूतिर्वितनुते।। **– सदुक्तिकर्णामृत**

☞ भव्यां यदि विभूतित्वं तात कामयसे तदा।
भवभूतिपदे चित्तमविलम्बं निवेशय।। **– अज्ञात।**

☞ भवभूतेर्विच्छित्तिव्यभिचारमुचो गिरां गुम्फाः।
विधिनापि दुर्निवारं तेषां खलु भावभूतत्वम्।।
– विश्वेश्वर पाण्डेय

☞ भवभूतेः कवीन्द्रस्य वाणी कामदुधामता।
ब्रह्मानन्दसहोदर्या या तनोति मुदं सदा।।**–कपिलदेव द्विवेदी**

☞ साऽम्बा पुनातु भवभूतिपवित्रमूर्तिः। **– भवभूति**

☞ भवभूतिर्नाम कविर्निसर्गसौहृदेन भरतेषु वर्तमानः।
– मालतीमाधवस्य प्रस्तावना

☞ कविर्वाक्पतिराजश्रीभवभूत्यादिसेवितः।
जितो ययौ यशोवर्मा तद्गुणस्तुतिवन्दिताम्।।
– कल्हण राजतरङ्गिणी

☞ तपस्वीं कां गतोऽवस्थामिति स्मराननाविव।
गिरिजायाः स्तनौवन्दे भवभूतिसिताननौ।।**– भवभूति**

उत्तररामचरितम् का परिचय

- **लेखक** – भवभूति
- **विधा** – नाटक
- **अङ्क** – 7 (सात)
- **प्रधानरस** – करुण
- **उपजीव्य** (i) वाल्मीकीयरामायण उत्तरकाण्ड (सर्ग 42-97 तक) (ii) पद्मपुराण (पातालखण्ड 1-68 तक)
- **विशेषतायें**– (1) सप्तम अङ्क में **गर्भनाटक** की योजना
  (2) प्रथम अङ्क में **चित्रवीथी** की योजना
  (3) **विदूषक रहित** नाटक
  (4) तृतीय अङ्क में **छायाङ्क** की योजना
- **प्रमुखपात्र** – राम (नायक), सीता (नायिका), गोदावरी, भागीरथी, तमसा, मुरला, वासन्ती (वनदेवता), पृथ्वी, आत्रेयी, वशिष्ठ, कौशल्या, मुनिबालक सौधातकि, गुप्तचरदुर्मुख, लव, कुश, चन्द्रकेतु, वाल्मीकि, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, अष्टावक्र, दण्डायन, सुमन्त्र, अरुन्धती, जनक, कञ्चुकी आदि।
- अनुष्टुप् (84 श्लोक), शिखरिणी (30), वसन्ततिलका (26), शार्दूलविक्रीडित (25) आदि।
- उत्तररामचरितम् में भवभूति ने **38 अलङ्कारों का प्रयोग** किया है; और प्रयोग की दृष्टि से उन्हें–उपमा, उत्प्रेक्षा, काव्यलिङ्ग, रूपक, अर्थान्तरन्यास अत्यन्त **प्रिय अलङ्कार** माने जाते हैं।
- इसमें **7 (सात) अङ्कों में** रामायण के उत्तरकाण्ड की कथा वर्णित है।
- राम के वन-प्रत्यागमन के बाद राजगद्दी पाने से लेकर सीता-मिलन तक की सम्पूर्ण कथाएँ कुछ कल्पना-प्रसूत घटनाओं के साथ दिखाई गई हैं। यह **भवभूति का सर्वश्रेष्ठ नाटक** है।
- सप्तम अंक में **'गर्भाङ्क' की कल्पना** है।
- पद्मपुराण में वर्णित रामकथा से उत्तररामचरित की कथा का अधिक साम्य है।
- उत्तररामचरित में **कुल पात्रों की संख्या 30** है। इनके अतिरिक्त 6 पात्रों का उल्लेख मात्र है।
- भवभूति ने उत्तररामचरित में **19 छन्दों का प्रयोग** किया है।
- उत्तररामचरित में **कुल श्लोकों की संख्या 256** है।
- **अनुष्टुप् के पश्चात् शिखरिणी छन्द** का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है। मङ्गलाचरण में अनुष्टुप् छन्द है।
- भवभूति ने उत्तररामचरित में केवल **'शौरसेनी प्राकृत'** का प्रयोग किया है।
- नाटक का आरम्भ **'चित्रदर्शन'** से होता है।
- प्रथम अङ्क में राम के राज्याभिषेक से उत्पन्न प्रतिक्रिया का निरीक्षण करके **'दुर्मुख'** आता है।
- मङ्गलाचरण में प्राचीन कवियों वाल्मीकि आदि को लक्ष्य करके प्रार्थना की गई है।
- 'उत्तररामचरितम्' में **'नमस्कारात्मक' मङ्गलाचरण** किया गया है।
- महाराज **दशरथ की पुत्री शान्ता** के पति ऋष्यशृङ्ग ने बारह वर्ष चलने वाला यज्ञ प्रारम्भ किया है इसकी सूचना प्रथम अङ्क में प्राप्त होती है।
- महर्षि वशिष्ठ का संदेश लेकर **अष्टावक्र** आते हैं। वे 'कहोड़' के पुत्र हैं।
- लक्ष्मण द्वारा सीता के मनोविनोदार्थ लाये गये चित्रवीथी में सीता के अग्निशुद्धि तक की कथा चित्रित है।
- लक्ष्मण की पत्नी का नाम **'उर्मिला'** है।
- चित्रवीथी बनाने वाले **चित्रकार का नाम अर्जुन** है।
- **सौधातकि** और **दण्डायन** वाल्मीकि के दो शिष्य हैं।
- लक्ष्मण के पुत्र का नाम **'चन्द्रकेतु'** है।
- **शम्बूक** एक शूद्र तपस्वी है।
- चन्द्रकेतु के वृद्ध सारथि **'सुमन्त्र'** हैं।
- **वासन्ती** वनदेवता है और सीता की प्रियसखी है।
- **आत्रेयी** एक तपस्विनी ब्रह्मचारिणी है।
- **तमसा** और **मुरला** दो नदी अधिष्ठात्री देवियाँ हैं।
- महर्षि **वशिष्ठ की पत्नी 'अरुन्धती'** हैं तथा **महर्षि अगस्त्य की पत्नी 'लोपामुद्रा'** हैं।
- द्वितीय अङ्क में राम 'शम्बूक वध' करते हैं।
- पञ्चवटी के पास स्थित गोदावरी नदी से राम के जीवन के प्रति सावधान रहने की प्रार्थना 'लोपामुद्रा' द्वारा 'मुरला' के माध्यम से की गई है।
- प्रसवपीड़ा से पीड़ित होकर सीता ने स्वयं को गङ्गा के प्रवाह में डाल दिया और वहीं उनके दोनों पुत्र उत्पन्न हुए।
- देवी गङ्गा ने दोनों बालकों को महर्षि वाल्मीकि को समर्पित किए।
- तृतीय अङ्क में कुश और लव के '12वीं वर्षगाँठ' की चर्चा है।
- 'गङ्गा' ने सीता को आदेश दिया कि वे अपने हाथों से तोड़े गये पुष्पों से अपने पुराण आदिश्वसुर सूर्य की पूजा करें।
- 'गङ्गा' के प्रभाव से सीता को वन देवता भी नहीं देख पाते।
- तृतीय अङ्क के आरम्भ में सीता 'गोदावरी' के जल से निकलती हैं।
- गोदावरी से निकलती सीता करुणा की मूर्ति एवं शरीरधारिणी विरहव्यथा सी प्रतीत होती हैं।
- अदृश्य सीता के साथ तमसा रहती है और वह सीता को देख सकती है।
- तृतीय अङ्क का आरम्भ **'विष्कम्भक'** से होता है।
- 'वासन्ती' सीता-त्याग के लिए राम की भर्त्सना करती है।
- राम तृतीय अङ्क में 'अश्वमेध' यज्ञ की सूचना देते हैं और सीता की स्वर्ण प्रतिमा को उन्होंने पत्नी के स्थान पर रखा है।
- तृतीय अङ्क का आरम्भ तमसा-मुरला नामक दो नदियों के वार्तालाप से होता है।
- उत्तररामचरित में **'38 अलङ्कारों'** का प्रयोग है सर्वाधिक प्रयोग **'उपमा' (74 बार)** का है।
- चतुर्थ अङ्क का आरम्भ दण्डायन और सौधातकि के वार्तालाप से होता है।

- तृतीय अङ्क में श्लोकों की संख्या **'48'** है।
- चतुर्थ अङ्क में कौशल्या के पूछने पर 'लव' अपने को वाल्मीकि का पुत्र बताता है।
- 'रामकथा' के अभिनय के लिए वाल्मीकि ने इस कथा को कुश के संरक्षण में भरतमुनि के पास भेजा।
- चतुर्थ अङ्क में लव यज्ञ का घोड़ा पकड़ता है।
- पञ्चम अङ्क में लव **'जृम्भक अस्त्र'** का प्रयोग करता है।
- लव राम के शौर्य को कुछ नहीं समझता और उन पर आक्षेप करता है।
- षष्ठ अङ्क में **लव और चन्द्रकेतु में** दिव्य अस्त्रों से **घोर युद्ध** होता है।
- चन्द्रकेतु के 'आग्नेय अस्त्र' की प्रतीकार स्वरूप लव 'वारुण' अस्त्र छोड़ता है।
- सप्तम अङ्क में वाल्मीकि की कृति का 'अप्सराओं' द्वारा अभिनय किया गया है।
- 'उत्तररामचरितम्' का **भरतवाक्य शार्दूलविक्रीडित छन्द** में है।
- उत्तररामचरितम् में **करुणरस प्रधान** है।इसमें वैदर्भी एवं गौडीरीति का प्रयोग है।
- 'उत्तररामचरितम्' सुखान्त नाटक है।
- तृतीय अङ्क में सीता द्वारा पाले गये हाथी, मयूर और कदम्ब की चर्चा आती है।
- मयूर 'कदम्ब' के वृक्ष पर बैठकर मधुर स्वर करता है।
- प्रथम अङ्क में राम ने लोकानुरञ्जन के लिए सीता तक को त्याग देने की बात कही है।

  ''स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
  आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा॥''
  (1/12)
- प्रथम अङ्क में राम अष्टावक्र से यह प्रसिद्ध श्लोक कहते हैं।

  ''लौकिकानां हि साधूनामर्थं वागनुवर्तते।
  ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति॥'' (1/10)
- तृतीय अङ्क का आरम्भ राम के करुण रस के उद्घोष के साथ होता है। जिसे मुरला कहती है–

  अनिर्भिन्नो गभीरत्वादन्तर्गूढघनव्यथः।
  पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः॥ (3/1)
- तृतीय अङ्क में सर्वाधिक **अनुष्टुप् (11) छन्द** का प्रयोग हुआ है। 7 **'वसन्ततिलका'** वृत्त प्रयुक्त है।
- तृतीय अङ्क का अन्त भी करुण रस के उद्घोष से होता है जिसे तमसा कहती है –

'एको रसः करुण एव निमित्तभेदाद्। (वसन्ततिलका) (3/47)
- लवणासुर के वध के लिए **'शत्रुघ्न'** जाते हैं।
- मूल कथा में अश्वमेधीय अश्व का रक्षक **भरतपुत्र 'पुष्कल'** है, उत्तररामचरित में **लक्ष्मण पुत्र चन्द्रकेतु** है।
- सप्तम अङ्क में गङ्गा और पृथ्वी सीता के चरित्र की पवित्रता की घोषणा करती हैं।
- कवियों ने **'कारुण्यं भवभूतिरेव तनुते'** कहकर भवभूति का यशोगान किया है।
- भवभूति ने चौथे अङ्क में समांस या अमांस मधुपर्क का प्रसंग उठाया है।
- पञ्चवटी में राम का **'शयन-शिलातल'** कदली वन के मध्य में विद्यमान था।
- वासन्ती केवल लक्ष्मण का कुशलक्षेम पूछती है।
- वासन्ती राम को जटायु द्वारा तोड़ा गया काले लोहे का बना रावण का रथ दिखाती है।

उत्तररामचरितम् का मङ्गलाचरण

इदं कविभ्यः पूर्वेभ्यो नमोवाकं प्रशास्महे।
विन्देम देवतां वाचममृतामात्मनः कलाम्॥ 1/1 ॥

भावार्थ- हम अपने पुरातन (वाल्मीकि आदि) कवियों को प्रणाम कर ''ब्रह्मा की अंशभूत सनातनी देवी वाणी (सरस्वती) को प्राप्त करें'', यह कामना करते हैं।
(अर्थात् पहले के वाल्मीकि आदि कवियों को प्रणाम कर हम यह कामना करते हैं कि ब्रह्मा की अंशभूत सनातनी सरस्वती को प्राप्त करें।)

- ☆ उपर्युक्त मङ्गलाचरण में वाणी देवी को नमस्कार किया गया है।
- ☆ नमस्कारात्मक नान्दी प्रयुक्त है।
- ☆ प्रस्तुत श्लोक में 12 पद हैं। अतः द्वादशपदा नान्दी है।
- ☆ अनुप्रास एवं श्लेष अलङ्कार है तथा अनुष्टुप् (पत्थ्यावक्त्र) छन्द का प्रयोग है।
- ☆ शुद्ध नान्दी का प्रयोग हुआ है।

उत्तररामचरितम् का भरतवाक्य

पाप्मभ्यश्च पुनाति वर्धयति च श्रेयांसि सेयं कथा
मङ्गल्या च मनोहरा च जगतो मातेव गङ्गेव च।
तामेतां परिभावयन्त्वभिनयैर्विन्यस्तरूपां बुधाः
शब्दब्रह्मविदः कवेः परिणतां प्राज्ञस्य वाणीमिमाम्॥ 7/21॥

भावार्थ- संसार की माता और गङ्गा की तरह कल्याण करने वाली तथा मनोहर प्रसिद्ध यह रामायण की कथा पापों से पवित्र करती है और कल्याण को बढ़ाती है। विद्वान् लोग अभिनय के द्वारा शब्दब्रह्म को चाहने वाले इस बुद्धिमान् कवि की नाटक के रूप में परिणत ऐसी ही उत्तररामचरितस्वरूप वाणी का विचार करें।

- ☆ इस माङ्गलिक पद्य में संसार के कल्याण के लिए नाटकीय पात्रों की ओर से शुभकामना है।
- ☆ यहाँ उपमा के चारों भेद होने से पूर्णोपमा अलङ्कार है।
- ☆ 'प्रशस्ति' नामक निर्वहण सन्धि का अङ्ग है।
- ☆ शार्दूलविक्रीडित छन्द का प्रयोग हुआ है।

'उत्तररामचरित' नाम की सार्थकता

रामस्य चरितम् इति रामचरितम् **(षष्ठी तत्पुरुष)**
1.उत्तरं च तत् रामचरितम् इति उत्तररामचरितम् **(कर्मधारय समास)**

उत्तररामचरित अधिकृत्य कृतं नाटकं इति उत्तररामचरितम्।
'अधिकृत्य कृते ग्रन्थे' सूत्र से अण् प्रत्यय हुआ-
उत्तररामचरित+अण् (अ)
'लुबाख्यायिभ्यो बहुलम्' वार्तिक से 'अ' का लोप होकर 'उत्तररामचरितम्' बना।
अर्थात् जिसमें राम के जीवन के उत्तरार्द्ध की घटनाओं का वर्णन है, ऐसा नाटक।
2. उत्तरं रामचरितं यस्मिन् तत् **(बहुव्रीहि समास)**
अर्थात् जिसमें उत्तरकालीन रामचरित का वर्णन है।

'उत्तररामचरितम्' की प्रमुख सूक्तियाँ एवं कथनों का विवरण

1. **अपिग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्।** (1/28)
भावार्थ – निर्जन जनस्थान (दण्डकारण्य) में आपके चरितों से पत्थर भी रो पड़े थे और वज्र का भी हृदय फट गया था।
- **वक्ता** – लक्ष्मण, अङ्क - प्रथम (चित्रदर्शन)
श्रोता – राम एवं सीता।
छन्द – शिखरिणी। अतिशयोक्ति अलङ्कार

2. **एते हि हृदयमर्मच्छिदः संसारभावाः।**
भावार्थ - ये सांसारिक भाव हृदय के मर्मस्थल को भेदन करने वाले हैं।
- **प्रथम अङ्क** – राम का सीता से कथन

3. **इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिर्नयनयोः।** (1/38)
भावार्थ - यह (सीता) घर में लक्ष्मी है, यह नेत्रों के लिए अमृत की शलाका है।
- प्रथम अङ्क में राम का कथन
शिखरिणी छन्द और रूपक अलङ्कार।

4. **''दुर्जनोऽसुखमुत्पादयति''**
भावार्थ – दुर्जन दुःख उत्पन्न करता है।
प्रथम अङ्क – सीता का कथन, राम और लक्ष्मण के समक्ष।

5. **तीर्थोदकं च वह्निश्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः।** (1/13)
भावार्थ – तीर्थ, जल और अग्नि, ये अन्य पदार्थों से शुद्धि के योग्य नहीं हैं।
- राम का कथन है। सीता के परिपेक्ष्य में। सीता और लक्ष्मण के सम्मुख प्रथम अङ्क। अनुष्टुप् छन्द। प्रतिवस्तूपमा, दृष्टान्त अलंकार।

6. **नैसर्गिकी सुरभिणः कुसुमस्य सिद्धा**
मूर्ध्नि स्थितिर्न चरणैरवताडनानि॥ (1/14)
भावार्थ – सुगन्धित फूल का सिर पर रखा जाना स्वभावसिद्ध है, न कि पैरों से कुचला जाना।
- **प्रथम अङ्क** – राम का कथन। सीता को लक्ष्य करके। सीता और लक्ष्मण के सम्मुख।
दृष्टान्त अलङ्कार, वसन्ततिलका वृत्त।

7. **सतां केनापि कार्येण लोकस्याराधनं व्रतम्।** (1/41)
भावार्थ – चाहे जो भी हो, जनता को प्रसन्न रखना सज्जनों का कर्त्तव्य है।
- राम का कथन। दुर्मुख के सम्मुख। अनुष्टुप् छन्द। प्रथम अङ्क

8. **सन्तापकारिणो बन्धुजनविप्रयोगा भवन्ति।**
भावार्थ – बन्धुजनों का वियोग दुःखदायी होता है।
- सीता का कथन (प्रथम अङ्क) राम, लक्ष्मण के सम्मुख।

9. **ते हि नो दिवसा गताः।**
भावार्थ – हमारे वे दिन बीत गये। अनुष्टुप् छन्द।
- राम का कथन, लक्ष्मण व सीता के सम्मुख (प्रथम अङ्क)

10. **''सतां सद्भिः सङ्गः कथमपि हि पुण्येन भवति॥** (2/1)
भावार्थ– सज्जनों का सज्जनों से मिलन बड़े पुण्य से होता है।
- द्वितीय अङ्क (प्रथम श्लोक)
वन देवता का कथन, तापसी से। शिखरिणी वृत्त, अर्थान्तरन्यास अलङ्कार

11. **वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि**
लोकोत्तराणां चेतांसि को हि विज्ञातुमर्हति। (2/7)
भावार्थ – वज्र से भी कठोर और फूल से भी कोमल महापुरुषों के चित्त को कौन जान सकता है।
- द्वितीय अङ्क , वासन्ती का कथन आत्रेयी से।
अनुष्टुप् छन्द। विषम, अप्रस्तुतप्रशंसा अर्थापत्ति अलङ्कार।

12. **अनिर्भिन्नो गभीरत्वादन्तर्गूढघनव्यथः।**
पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः॥ (3/1)
भावार्थ– गम्भीरता के कारण अप्रकट एवं अन्दर छिपी हुई घोर वेदना से युक्त राम का करुण रस (शोक) पुटपाक के तुल्य है।
- तृतीय अङ्क (प्रथम श्लोक)।
मुरला का कथन तमसा से। लोपामुद्रा का सन्देश।
अनुष्टुप् छन्द, उपमा अलङ्कार

13. **वीचीवातैः.............प्रेरितैस्तर्पयेति॥** (3/2)
भावार्थ – जल कणों से शीतल, पद्म-पराग की सुगन्ध को लाने वाली, धीरे-धीरे चलने वाली, तरङ्ग-वायुओं से रामचन्द्र की प्रत्येक मूर्च्छा के समय चेतना प्रदान करना।
मुरला द्वारा कहा गया लोपामुद्रा का संदेश 'गोदावरी' के लिए। तमसा के सम्मुख। शालिनी छन्द, समुच्चय अलङ्कार।

14. **उचितमेव दाक्षिण्यं स्नेहस्य। संजीवनोपायस्तु मौलिक एव रामभद्रस्याद्य सन्निहितः।** (अङ्क-3)
भावार्थ – स्नेह की उदारता उचित ही है। किन्तु रामचन्द्र को होश में लाने का मौलिक उपाय (सीता) आज समीप ही विद्यमान है।
- तमसा का कथन मुरला से

15. **ईदृशानां विपाकोऽपि जायते परमाद्भुतः।**
यत्रोपकरणीभावमायात्येवंविधो जनः॥ (3/3)

भावार्थ – ऐसे व्यक्तियों (सीता और राम जैसों) की दुरवस्था भी आश्चर्यजनक होती है, जिसमें ऐसे (पृथ्वी और गङ्गा जैसे) लोग सहायक होते हैं।

- **मुरला का कथन** – तमसा से।

अनुष्टुप् वृत्त, काव्यलिङ्ग अलंकार

16.अव्यग्रस्य पुनरस्य शोकमात्रद्वितीयस्य पञ्चवटीप्रवेशो महाननर्थ इति। (अङ्क 3)

भावार्थ – इस समय कार्यों में अव्यस्त और केवल शोकरूपी साथी से युक्त राम का पञ्चवटी में प्रवेश बहुत अनिष्टकारी है।

- मुरला का तमसा से कथन, राम के प्रति।

17. न त्वामवनिपृष्ठवर्तिनीमस्मत्प्रभावाद् वनदेवता अपि द्रक्ष्यन्ति किमुत मर्त्याः? (अङ्क-3)

भावार्थ – भूतल पर विद्यमान तुमको मेरे प्रभाव से वनदेवता भी नहीं देख सकेंगे, साधारण मनुष्यों की बात ही क्या।

- तमसा मुरला से भागीरथी द्वारा सीता से कही गयी बात को बताती है।

18.करुणस्य मूर्तिरथवा शरीरिणी विरहव्यथेव वनमेति जानकी। (3/4)

भावार्थ – सीता करुण रस की साक्षात् मूर्ति अथवा शरीरधारिणी 'वियोगव्यथा' के तुल्य वन (पञ्चवटी) में आ रही हैं।

- गोदावरी से निकलती हुयी सीता को देखकर तमसा का मुरला से कथन।

मञ्जुभाषिणी वृत्त, उत्प्रेक्षा अलङ्कार।

19. किसलयमिव..........केतकीगर्भपत्रम्। (3/5)

भावार्थ – हृदयरूपी कमल को सुखाने वाला, कठोर और चिरस्थायी शोक सीता के शरीर को उसी प्रकार मलिन बना रहा है, जैसे शरत्कालीन धूप केतकी के फूल के अंदर के पत्ते को।

मालिनी छन्द। उपमा, रूपक अलङ्कार।

- मुरला का तमसा से कथन, सीता के विषय में।

20. अपरिस्फुटनिक्वाणे कुतस्त्येऽपि त्वमीदृशी। स्तनयित्नोर्मयूरीव चकितोत्कण्ठितं स्थिता॥ (3/7)

भावार्थ – मेघ की अस्पष्ट ध्वनि पर मोरनी के तुल्य तुम कहीं से आये हुए अस्पष्ट शब्द को सुनकर इस प्रकार आश्चर्ययुक्त और उत्कण्ठित हो गई हो।

- तमसा का सीता से कथन।

अनुष्टुप् वृत्त, उपमा अलङ्कार

21.यत्र द्रुमा अपि.........गिरेस्तटानि॥ (3/18)

भावार्थ – जहाँ वृक्ष इत्यादि मेरे बन्धु थे, जहाँ प्रिया के साथ बहुत समय रहा, यह वही आश्रमस्थान है।

वसन्ततिलका छन्द। अर्थापत्ति अलंकार।

- राम का कथन नेपथ्य से।

22.अहमेवैतस्य हृदयं जानामि, ममैषः। (अङ्क-3)

भावार्थ – मैं ही इनके हृदय को जानती हूँ और ये मेरे हृदय को।

- सीता का कथन तमसा से।

23.निष्कारणपरित्यागिनोऽप्येतस्य दर्शनेनैवंविधेन कीदृशी मे हृदयावस्था। (अङ्क-3)

भाव – अकारण परित्याग करने वाले भी इनके इस प्रकार के दर्शन से मेरे हृदय की कैसी अवस्था हो रही है।

- सीता का कथन तमसा से।

24. श्लोक–तटस्थं नैराश्यादपि च कलुषं विप्रियवशात् वियोगे दीर्घेऽस्मिञ्झटिति घटनात्स्तम्भितमिव प्रसन्नं सौजन्याद्दयितकरुणैर्गाढकरुणं द्रवीभूतं प्रेम्णा तव हृदयमस्मिन्क्षण इव। (3/13)

भावार्थ – इस समय तुम्हारा हृदय निराशा से उदासीन-सा और अप्रिय कार्य के कारण खिन्न-सा, इस लम्बे विरहकाल में सहसा मिलन के कारण निश्चेष्ट-सा, सज्जनता से प्रसन्न-सा, प्रिय की करुणा से शोकातुर सा और प्रेम से द्रवीभूत सा हो रहा है।

शिखरिणी वृत्त, उत्प्रेक्षा अलंकार।

- तमसा का कथन सीता से।

25. प्रत्ययेन निष्कारणपरित्यागशल्यितोऽपि बहुमतो मम जन्मलाभः। (अङ्क-3)

भाव – अकारण परित्याग रूपी शल्य से विध कर भी मेरा संसार में जन्म लेना मेरे लिए श्लाघनीय है।

- सीता का कथन तमसा से।

26. अन्तःकरणतत्त्वस्य दम्पत्योः स्नेहसंश्रयात्। आनन्दग्रन्थिरेकोऽयमपत्यमिति पठ्यते॥ (3/17)

भावार्थ – पति और पत्नी के हृदयरूपी तत्व के प्रेम का आश्रय होने के कारण 'सन्तान' यह अनुपम सुख की गाँठ कही जाती है। अनुष्टुप् छन्द।

- तमसा का कथन सीता से है।

27.ईदृशो जीवलोकस्य परिणामः संवृतः।

भाव – संसार का यही (दुःखद) परिणाम हुआ।

- सीता का कथन वासन्ती को सम्बोधित करके।

28.स्नपयति हृदयेशं स्नेहनिष्यन्दिनी ते धवलमधुरमुग्धा दुग्धकुल्येव दृष्टिः। (3/23)

भावार्थ – श्वेत, मधुर एवं मनोहर तुम्हारी दृष्टि दूध की नहर की तरह अपने हृदयेश्वर को स्नान कराती है।

उपमा, उत्प्रेक्षा अलंकार, मालिनी छन्द।

- तमसा का कथन सीता से।

29.पुनरिदमयं देवो रामः स्वयं वनमागतः। (3/24)

भावार्थ – ये महाराज राम फिर स्वयं इस वन में आए हैं। – हरिणी छन्द

- वासन्ती का कथन राम के सम्मुख वन की वस्तुओं से।

30.पूजार्हः सर्वस्यार्यपुत्रो विशेषतो मम प्रियसख्याः। (अङ्क-3)

भावार्थ – आर्यपुत्र सभी के पूजनीय हैं विशेष रूप से मेरी प्रियसखी (वासन्ती) के।

- **सीता का कथन** – वासन्ती को सम्बोधित करके।

31. त्वं जीवितं............किमतः परेण। (3/26)

- वासन्ती का कथन राम से। राम द्वारा सीता से पहले कही बातें।
- वसन्ततिलका छन्द। आक्षेप अलंकार दशरूपक में यह श्लोक वाक्केलि के उदाहरणस्वरूप दिया गया है।

32. अयि कठोर! .... मन्यसे। (3/27)

- वासन्ती का कथन राम से। द्रुतविलम्बित छन्द, उपमा अलङ्कार।

33.यैवं प्रलपन्तं प्रलापयसि। (अङ्क-3)

भावार्थ – जो इस प्रकार विलाप करते हुए (राम) को और रूला रही है।

- सीता का कथन वासन्ती से।

**34. पूरोत्पीडे तटाकस्य परीवाहः प्रतिक्रिया।
शोकक्षोभे च हृदयं प्रलापैरेव धार्यते।** (3/29)

भावार्थ – तालाब में जल-प्रवाह की अधिकता होने पर जल को बाहर निकालना ही उसका एकमात्र प्रतीकार है। शोकजन्य क्षोभ में हृदय विलाप के द्वारा ही बचाया जाता है।
अनुष्टुप् छन्द, दृष्टान्त अलंकार।

- तमसा का कथन सीता से।

35. प्रियाशोको जीवं कुसुममिव घर्मो ग्लपयति। (3/30)

भाव – जिस प्रकार धूप फूल को उसी प्रकार प्रिया का शोक जीवन को सुखाता है। शिखरिणी वृत्त। उपमा अलङ्कार।

- तमसा का कथन सीता से राम के प्रति।

36. ''किमिति किलैषा मंस्यत एष परित्याग एषोऽभिषङ्ग इति।'' (अङ्क-3)

भावार्थ – यह (तमसा) क्या सोचेंगी – यह परित्याग और यह आसक्ति?

- सीता का कथन।

37. एकोरसः करुण एव निमित्तभेदाद्। (3/46)

भावार्थ – एक करुण रस ही है जो कारण-भेद से भिन्न होकर पृथक्-पृथक् परिणामों को प्राप्त कराता सा प्रतीत होता है। वसन्ततिलका छन्द। उपमा (पूरे श्लोक में)

- तमसा का कथन सीता से।
- तृतीय अङ्क के अन्त में गङ्गा, पृथ्वी, वाल्मीकि और वशिष्ठ की प्रार्थना की गयी है।

मृच्छकटिकम्

महाकवि शूद्रक का परिचय

- **वास्तविक नाम-** शिमुक या सिमुक।
- **समय-** प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व।
- **आयु-** 100 वर्ष 10 दिन।
- शूद्रक ने स्वेच्छा से आत्मदाह किया था।
- महापराक्रमी, सुन्दर आकृति वाले एवं ब्राह्मणों में श्रेष्ठ थे।

''द्विजमुख्यतमः कविर्बभूव प्रथितः शूद्रक इत्यगाधसत्त्वः।''

- शूद्रक ऋग्वेद, सामवेद आदि वेदों के ज्ञाता, गणित, संगीत तथा हस्तिविद्या में निपुण थे।
- महाकवि शूद्रक शिव-पार्वती के भक्त थे।
- शूद्रक ने शिव के प्रताप से दिव्य दृष्टि पाकर, पुत्र को राजसिंहासन देकर, महामहिमशाली अश्वमेघ यज्ञ भी किया था।
- 'मृच्छकटिकम्' शूद्रक की एक मात्र रचना है।
- शूद्रक प्रथम नाटककार हैं, जिन्होंने तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था को ही अपनी लेखनी का आधार बनाया।
- **रीति-** वैदर्भी

मृच्छकटिकम् का परिचय

- **लेखक** - शूद्रक
- **विधा** - प्रकरण
- **अङ्क** - 10(दस)
- **प्रधान/अङ्गी रस-** शृङ्गार
- **गौण/अङ्ग रस** - हास्य, करुण, भय तथा अद्भुत।
- **उपजीव्य-** भासकृत दरिद्रचारुदत्त
- डॉ. कान्तानाथ शास्त्री तेलंग के अनुसार 'गुणाढ्य' की बृहत्कथा में वर्णित 'गोपालदारक तथा आर्यक के विद्रोह की कथा।'
- **कुल श्लोक संख्या-** 380 (तीन सौ अस्सी)
- **नायक-** चारुदत्त (धीरप्रशान्त)
- **नायिका-** 1. कुलजा- धूता
  2. वेश्या (गणिका)- वसन्तसेना (प्रगल्भा नायिका)
- **प्रतिनायक-** शकार (संस्थानक)
- **अन्य पात्र-** आर्यक, शर्विलक, विट, सूत्रधार, नटी, रदनिका, मदनिका, धूता, चन्दनक, संवाहक, रोहसेन आदि।
- **पात्र संख्या-** 24 पुरुष और 8 स्त्रीपात्र हैं। सूत्रधार और नटी को छोड़ने पर 30 पात्र स्वीकृत हैं।
- मञ्च पर न आने वाले पात्र- जूर्णवृद्ध, पालक,रेभिल,सिद्ध।

मृच्छकटिकम् में अङ्कवार श्लोक

अङ्क	नाम	श्लोक
प्रथम	अलङ्कारन्यास	58
द्वितीय	द्यूतकर संवाहक	20
तृतीय	सन्धिच्छेद	30
चतुर्थ	मदनिका शर्विलक	33
पञ्चम	दुर्दिन	52
षष्ठ	प्रवहण विपर्यय	27
सप्तम	आर्यकापहरण	9
अष्टम	वसन्तसेना मोटन	47
नवम	न्यायालय (व्यवहार)	43
दशम	संहार (उपसंहार)	61
	योग-	380

मृच्छकटिक- एक तथ्यात्मक अध्ययन

- चारुदत्त धीरप्रशान्त कोटि का नायक है।
- चारुदत्त उज्जयिनी का गरीब ब्राह्मण है।
- वह जन्मना ब्राह्मण और कर्मणा सार्थवाह (व्यापारी) है।
- वसन्तसेना उज्जयिनी की ही एक प्रसिद्ध गणिका है।

- मृच्छकटिकम् नामक प्रकरण में चारुदत्त और वसन्तसेना के पारस्परिक प्रेम का वर्णन है।
- धूता, चारुदत्त की विवाहिता पत्नी है।
- चारुदत्त और धूता के बच्चे का नाम रोहसेन है।
- मैत्रेय इस प्रकरण का विदूषक है। वह जाति से ब्राह्मण तथा चारुदत्त का परम मित्र है।
- शकार, राजा पालक का साला है तथा वसन्तसेना से एकतरफा प्रेम करता है।
- शर्विलक, चौर्यकर्म में निपुण एक ब्राह्मण है, जो वसन्तसेना की क्रीतदासी 'मदनिका' का प्रेमी है।
- चारुदत्त का पूर्वभृत्य संवाहक है जो जुए में सब कुछ हारकर बौद्धभिक्षु बन जाता है।
- सूत्रधार के साग्रह अनुरोध, सिद्धान्न भोजन और प्रचुर दक्षिणा के प्रलोभन पर भी मैत्रेय (विदूषक) उसके घर भोजन करने से इनकार कर देता है।
- चारुदत्त के मित्र जूर्णवृद्ध द्वारा भेजा हुआ शाल मैत्रेय लेकर आता है।
- मैत्रेय अत्यन्त डरपोक है इसलिए मातृबलि देने चौराहे पर रदनिका (चारुदत्त की दासी) के साथ जाता है।
- विट और चेट के साथ शकार द्वारा पीछा किये जाने पर वसन्तसेना, चारुदत्त के घर में छिपती है।
- रात के अँधेरे में शकार, रदनिका को वसन्तसेना समझकर पकड़ लेता है, इस पर मैत्रेय शकार को मारने दौड़ता है।
- वसन्तसेना अपना आभूषण चारुदत्त के घर में रख देती है और बताती है कि वह **'कामदेवायतन उद्यान'** में चारुदत्त को देखकर उसके प्रति अनुरक्त हो गयी थी।
- संवाहक पाटलिपुत्र से आकर उज्जयिनी में चारुदत्त का सेवक बन जाता है।
- चारुदत्त के दरिद्र हो जाने पर संवाहक जुआरी हो जाता है।
- जुए में सर्वस्व हारने पर, चारुदत्त का पुराना नौकर जानकर वसन्तसेना, संवाहक को छुड़ा लेती है।
- वसन्तसेना के हाथी का नाम **'खुण्डमोटक'** है।
  यः सः आर्यायाः खुण्डमोटको नाम दुष्टहस्ती।
- चारुदत्त को रेभिल का संगीत अत्यन्त पसन्द है।
- शर्विलक, चारुदत्त के घर में सेंध काटकर वसन्तसेना के रखे हुए गहने चुरा लेता है और अपनी प्रेयसी मदनिका को गुलामी की जंजीर से छुड़ाता है।
- धूता अपने पति चारुदत्त को चोरी के कलङ्क से बचाने के लिए अपना 'रत्नावली' नामक आभूषण वसन्तसेना के पास भेजती है।
- वसन्तसेना अपनी माँ के कहने पर भी शकार के पास जाने से मना करती है।
- राजा पालक द्वारा आर्यक को बंदी बनाया जाता है।
- अपने मित्र के बंदी बनाए जाने पर शर्विलक मदनिका को रेभिल के घर पहुँचाकर स्वयं आर्यक को छुड़ाने जाता है।
- वसन्तसेना, धूता के आभूषण को मैत्रेय द्वारा वापस कर देती है।
- वसन्तसेना शाम को चारुदत्त के घर जाती है और वर्षा के कारण रात वहीं बिताती है।
- चारुदत्त **'पुष्पकरण्डक'** नामक बगीचे में जाता है और वसन्तसेना को वहीं बुलवाता है।
- चारुदत्त का पुत्र 'रोहसेन' सोने की गाड़ी के लिए रोता है, इस पर वसन्तसेना अपना आभूषण गाड़ी बनवाने के लिए दे देती है।
- आर्यक, राजा पालक के कैद से भाग जाता है।
- भूलवश वसन्तसेना शकार की गाड़ी में बैठ जाती है।
- बैलगाड़ी उद्यान में पहुँचने पर वसन्तसेना शकार के प्रणय प्रार्थना को ठुकरा देती है, जिससे क्रुद्ध होकर शकार उसका गला दबा देता है।
- वसन्तसेना के मूर्च्छित होने से मृत समझकर शकार भाग जाता है और चारुदत्त के विरुद्ध हत्या का आरोप लगाकर न्यायालय में मुकदमा करता है।
- बौद्धभिक्षु संवाहक वसन्तसेना की रक्षा करता है।
- चारुदत्त पर अभियोग चलता है और विदूषक के बगल से वसन्तसेना का आभूषण मिलने पर चारुदत्त को फाँसी का दण्ड मिलता है।
- फाँसी के वक्त ही भिक्षु वसन्तसेना के साथ वध्यस्थल पर जाता है, शकार भाग खड़ा होता है।
- पालक को मारकर आर्यक राजा बनता है और झूठे अभियोग चलाने के कारण शकार को फाँसी होती है किन्तु चारुदत्त उसे माँफ कर देता है।
- चारुदत्त को राज्य मिलता है और वसन्तसेना को वधू का सम्मानित पद।
- भरतवाक्य के साथ प्रकरण समाप्त होता है।
- मृच्छकटिकम् का अर्थ है - 'मिट्टी की गाड़ी।'
- मृच्छकटिकम् में सात प्राकृतों (शौरसेनी, अवन्तिका, प्राच्या, मागधी, शकारी, चाण्डाली, और ढक्की) का प्रयोग है।
- मृच्छकटिकम् के 30 पात्रों में केवल 6 पात्र ही संस्कृत बोलते हैं।
- संस्कृत बोलने वाले पात्र-चारुदत्त, आर्यक, शर्विलक, विट, सूत्रधार, अधिकरणिक।
- यह प्रगतिवादी एवं समाजवादी रूपक है। इसमें शोषित, दलित एवं उपेक्षित वर्ग का सहानुभूतिपूर्ण चित्रण है।
- जुआ खेलने वालों का प्रमुख- सभिक।
- इसमें वैदर्भी रीति अपनायी गयी है, कहीं-कहीं गौडी रीति का भी आश्रय लिया गया है।
- निम्न कोटि के पात्रों की संख्या अधिक है।
- शकार की बहन राजा पालक की रखैल है।
- मृच्छकटिकम् की कथा आदर्शवादी न होकर यथार्थवादी है।
- प्राकृतों में देशी शब्दों की प्रधानता है।
- **चोरों के देवता**- कार्तिकेय- (**नमो वरदाय कुमार कार्तिकेयाय**)
- **चोरों के गुरु**- कनकशक्ति, ब्रह्मण्यदेव, देवव्रत तथा भास्करनन्दी। (**नमः कनकशक्तये ब्रह्मणदेवाय देवव्रताय नमो भास्करनन्दिने**)

- शर्विलक के गुरु- योगाचार्य। (**नमो योगाचार्याय यस्याहं प्रथमः शिष्यः**)
- योगरोचना- ऐसा द्रव्य जिसको लगाने से चोर आदि को कोई देख नहीं सकता।

मृच्छकटिकम्- अङ्कवार प्रमुख घटनाएँ

प्रथम अङ्क

- चारुदत्त की दरिद्रता का मार्मिक चित्रण।
- विट और चेट सहित शकार के द्वारा वसन्तसेना का पीछा करना।
- अन्धकार का लाभ उठाकर वसन्तसेना का चारुदत्त के घर में छिपना तथा अपने आभूषणों को न्यास (धरोहर) के रूप में चारुदत्त के घर में छोड़ना।

द्वितीय अङ्क

- चारुदत्त के पूर्व सेवक संवाहक का द्यूत में ऋणी होकर वसन्तसेना के पास आना तथा वसन्तसेना द्वारा उसे ऋणमुक्त कराना।
- जुआरी संवाहक का बौद्धभिक्षु बन जाना।
- वसन्तसेना के मत्त हाथी का संवाहक पर आक्रमण करना,सेवक द्वारा संवाहक की रक्षा करना तथा पुरस्कार के रूप में चारुदत्त अपनी बहुमूल्य चादर सेवक को देना।

तृतीय अङ्क

- चारुदत्त के घर में सेंध मारकर शर्विलक द्वारा वसन्तसेना के आभूषणों को चुराना।
- चोरी हुए आभूषणों के बदले में चारुदत्त की पत्नी धूता द्वारा अपनी बहुमूल्य 'रत्नमाला' का दिया जाना।

चतुर्थ अङ्क

- शर्विलक द्वारा चोरी के आभूषण से अपनी प्रेयसी मदनिका को वसन्तसेना के घर से मुक्त कराना तथा वधू के रूप में स्वीकार करना।
- शर्विलक द्वारा अपने बन्दी मित्र आर्यक को छुड़ाने के निमित्त जाना।
- रत्नमाला लेकर गये विदूषक द्वारा वसन्तसेना के विशाल भवन का अवलोकन।

पञ्चम अङ्क

- वसन्तसेना का चारुदत्त के घर में रात बिताना।
- वर्षाकाल का भव्य वर्णन।

षष्ठ अङ्क

- चारुदत्त के पुत्र रोहसेन का सोने की गाड़ी के लिए जिद करना जबकि दासी रदनिका मिट्टी की गाड़ी (मृत +शकटिका) देती है।
- इस दृश्य पर वसन्तसेना का मिट्टी की गाड़ी को आभूषणों से भरना।
- वसन्तसेना की गाड़ी भ्रमवश बदल जाना।
- चन्दनक सिपाही द्वारा बन्दी आर्यक को अभयदान।

सप्तम अङ्क

- आर्यक का चारुदत्त के पास पुष्पकरण्डक उद्यान में जाना और चारुदत्त द्वारा आर्यक के बन्धन को कटवाना।

अष्टम अङ्क

- पुष्पकरण्डक उद्यान में शकार द्वारा वसन्तसेना का गला घोंटना।
- वसन्तसेना को मृत समझकर शकार द्वारा चारुदत्त पर झूठा अभियोग चलाने के लिए न्यायालय जाना।
- बौद्धभिक्षु संवाहक द्वारा वसन्तसेना को उपचार हेतु बौद्ध विहार में ले जाना।

नवम अङ्क

- शकार द्वारा अपने पक्ष में निर्णय देने के लिए न्यायाधीश को धमकी।
- वसन्तसेना का चारुदत्त के घर जाने सम्बन्धित वसन्तसेना की माता की गवाही।
- वसन्तसेना का आभूषण विदूषक के पास से मिलना और चारुदत्त को फाँसी की सजा।

दशम अङ्क

- पालक को मारकर आर्यक का राजा बनना।
- चारुदत्त को फाँसी से मुक्ति।
- वसन्तसेना को वधू पद प्राप्त होना।

मृच्छकटिकम् में अलङ्कार एवं छन्द योजना

- मृच्छकटिकम् में स्वाभाविक रूप से अलङ्कारों का प्रयोग है। उपमा,रूपक,उत्प्रेक्षा के साथ-साथ काव्यलिङ्ग,विशेषोक्ति और समासोक्ति अलङ्कारों का विशेष रूप से वर्णन है।
- महाकवि शूद्रक ने पूरे मृच्छकटिक में 21 (इक्कीस) प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है।
- सर्वाधिक प्रयुक्त छन्दों में वसन्ततिलका, शार्दूलविक्रीडित और उपजाति मुख्य हैं।

रत्नावली

पादाग्रस्थितया मुहुः स्तनभरेणानीतया नम्रतां
शम्भोः सस्पृहलोचनत्रयपथं यान्त्या तदाराधने।
ह्रीमत्या शिरसीहितः सपुलकस्वेदोद्गमोत्कम्पया
विश्लिष्यन्कुसुमाञ्जलिर्गिरिजया क्षिप्तोऽन्तरे पातु वः ॥1॥

श्लोकानुवाद - सती के देह- त्याग के उपरान्त हिमालय पर घोर तपस्या करने वाले शिव की आराधना में, बार-बार चरणों की उँगलियों के सहारे खड़ी होने वाली, स्तनों के भार से (बार-बार) झुकती हुई (कल्याण करने वाले) शम्भु के अनुरागयुक्त तीनों नेत्रों का विषय होने वाली (अतएव) रोमाञ्च, स्वेद और कम्पन से युक्त होने के कारण लज्जित होने वाली पार्वती के द्वारा (शिव के) शिर पर (समर्पित करने के लिए) चाही गयी (किन्तु पार्वती की घबड़ाहट के कारण) फेंकी गयी (अतएव शिव के

शिर पर न पहुँच सकने के कारण उमा और शिव के) के बीच में बिखरती हुई पुष्पाञ्जली तुम्हारी (सामाजिकों की रक्षा करें)।

* यहाँ पर पुष्पाञ्जलि के बिखरने में 'स्तनभरेण' से लेकर 'ह्रीमत्या' तक के पद कारणरूप में उपन्यस्त है अतः काव्यलिंग अलंकार है जिसका लक्षण है "'हेतोर्वाक्यपदार्थत्वे काव्यलिङ्गमुदाहृतम्' पद्य में शार्दूलविक्रीडित छन्द है। पद्यारम्भ में प्रयुक्त मगण का फल श्रीवृद्धि है। प्रसाद गुण एवं वैदर्भी रीति है।

* पद्य के द्वारा आशीर्वादात्मक तथा वस्तुनिर्देशात्मक दोनों ही प्रकार का मंगलाचरण प्रस्तुत किया गया है।

अपि च -

औत्सुक्येन कृतत्वरा सहभुवा व्यावर्तमाना ह्रिया
तैस्तैर्बन्धुवधूजनस्य वचनैर्नीताभिमुख्यं पुनः।
दृष्ट्वाग्रे वरमात्तसाध्वसरसा गौरी नवे संगमे
संरोहत्पुलका हरेण हसता श्लिष्टा शिवायास्तु वः॥1/2॥

श्लोकानुवाद- और भी- (विवाहोत्तरकालीन) प्रथम समागम में (पति समागम की) उत्सुकता के कारण शीघ्रता करने वाली (नवपरिणीता होने कारण) स्वाभाविक लज्जा के कारण (पति से न मिलकर) लौटती हुई, बान्धव - स्त्रियों (अर्थात् भाभी एवं सखियों) के कालोचित वचनों द्वारा (शिव के) समक्ष उपस्थित करायी जाने वाली (तथा) अपने समक्ष वर (शिव) को देखकर रोमाञ्चित तथा भयभीत होने वाली एवं हँसते हुए शिव के द्वारा आलिङ्गित पार्वती आप लोगों को कल्याण देने वाली होवें।।2।।

* प्रस्तुत श्लोक में नवोढ़ा की स्वाभाविक चेष्टाओं का वर्णन होने से स्वभावोक्ति अलंकार है- "स्वभावोक्तिस्तु डिम्भादेः स्वक्रियारूपवर्णनम्"।

* द्वितीय अंक में नायक उदयन से प्रथम मिलन होने पर नायिका सागरिका (रत्नावली) का भयभीत होना तथा उदयन द्वारा उसका आलिंगन करना भी इस पद्य के द्वारा सूचित होता है जिससे यहाँ मुद्रालंकार भी संगत होता है- "सूच्यार्थसूचनं मुद्रा प्रकृतार्थपरैः पदैः"।

* यह नान्दी पद्य भी आशीर्वादात्मक एवं वस्तुनिर्देशात्मक मंगल प्रस्तुत करता है।

* शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

अपि च -

क्रोधेद्धैर्दृष्टिपातैस्त्रिभिरूपशमिता वह्नयोऽमी त्रयोऽपि
त्रासार्ता ऋत्विजोऽधश्चपलगणहृतोष्णीषपट्टाः पतन्ति।
दक्षः स्तौत्यस्य पत्नी विलपति करुणं विद्रुतं चापि देवैः
शंसन्नित्यात्तहासो मखमथनविधौ पातु देव्यै शिवो वः

श्लोकानुवाद - ये तीनों अग्नियाँ (दक्षिण, गार्हपत्य और आवहनीय) मेरे क्रोध से जलते हुये तीनों नेत्रों के दृष्टि - पातों से शान्त कर दी गईं, (मेरे) चपल प्रमथ गणों के द्वारा छीने गये पगड़ी के वस्त्र वाले भय से त्रस्त ऋत्विक् गण नीचे गिर पड़े, दक्ष स्तुति करने लगे, उनकी (दक्ष की) पत्नी करुण विलाप करने लगी और देवगण भाग गये। इस प्रकार देवी पार्वती से (दक्ष के) यज्ञ-विध्वंस के विषय में कहते हुए अट्टहास करने वाले शिव आप लोगों की रक्षा करने लगें। **॥1/3॥**

* इस नान्दी में अनुप्रासालङ्कार तथा स्रग्धरा छन्द है। लक्षण है- "म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्"।

* वासवदत्ता के क्रोध, सागरिका का विलाप तथा चतुर्थ अंक में वर्णित अग्निकाण्ड की घटना का भी सङ्केत मिलता है अतः यहाँ (वस्तुनिर्देशात्मक-मंगलाचरण) है।

अपि च -

जितमुडुपतिना नमः सुरेभ्यो द्विजवृषभाः निरुपद्रवा भवन्तु।
भवतु च पृथिवी समृद्धसस्या प्रतपतु च चन्द्रवपुर्नरेन्द्रचन्द्रः

श्लोकानुवाद - चन्द्रमा उत्कर्ष को प्राप्त हुआ। देवताओं को नमस्कार है। (ब्राह्मण-श्रेष्ठ) बाधाओं से रहित हों। वसुमती शस्य सम्पन्न हो। राजाओं में श्रेष्ठ (श्रीहर्ष) चन्द्रमा की भाँति (आह्लादक) शरीर धारण कर प्रताप को प्राप्त करें। ।।1/4।।

* प्रस्तुत नान्दी पद्य में उपमाऽलङ्कार तथा पुष्पिताग्रा छन्द है। छन्द लक्षण है- "अयुजि न युगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा"।

* समासगा उपमालङ्कार है।

* यहाँ वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण है- "चन्द्र-विजय" से

* चतुर्थ अङ्क में वर्णित रूमण्वान् की विजय है।

उर्वीमुद्दामसस्यां जनयतु विसृजन् वासवो वृष्टिमिष्टा-
मिष्टैस्त्रैविष्टपानां विदधतु विधिवत्प्रीणनं विप्रमुख्याः।
आकल्पान्तं च भूयात्समुपचितसुखः सङ्गमः सज्जनानां
निःशेषं यान्तु शान्तिं पिशुनजनगिरो दुर्जया वज्रलेपाः

श्लोकानुवाद– अभीष्ट वर्षा करते हुए इन्द्र पृथ्वी को सस्य-सम्पन्न बनायें। श्रेष्ठ ब्राह्मण-यज्ञों से देवताओं को विधिवत् तृप्त करें। आनन्द को बढ़ाने वाला सज्जनों का समागम प्रलयकाल तक होता रहे और वज्रलेप के समान दुष्ट व्यक्तियों की दुर्जयवाणी पूर्णरूपेण शान्ति को प्राप्त करें।।22।।

* यह भरतवाक्य है। नाटकों के अन्त में आशीर्वाद के रूप में जो श्लोक पढ़ा जाता है, उसे भरतवाक्य कहते हैं। यह भरतमुनि के सम्मान में पढ़ा जाता है यह नान्दी निर्वहण (उपसंहृति) सन्धि का अंग होता है।।।4/22।।

* स्रग्धरा छन्द है तथा आशीः नामक नाट्याङ्ग है।
* हर्षवर्धन का राज्यकाल 606ई- से 648 ई- तक सर्वमान्य है ।
* पाण्डुरंग वामन काणे ने हर्षचरित के अपने संस्करण की भूमिका में सुझाया है कि हर्ष का जन्म 590ई- में हुआ था।
* ह्वेनसांग ने हर्षवर्धन के राज्यकाल में ही 629 ई- से 641 ई - तक भारत का भ्रमण किया था, हर्ष की राज्य सभा में भी बहुत दिनों तक रहा था।
* हर्षवर्धन के पिता प्रभाकरवर्धन थे जिन्हें बाण ने **'हूण हरिण केसरी'** कहा है।
* अवन्तीवर्मा के साथ मिलकर उन्होनें 582ई- में हूणों को परास्त किया था।
* हर्ष की प्रवृत्ति बौद्धधर्म की है।
* प्रभाकर वर्धन के तीन अपत्यों में हर्ष द्वितीय हैं, इनसे बड़े राज्यवर्धन को गौडनरेश ने छल से मार दिया था।
* हर्षवर्धन की तीन रचनायें हैं– प्रियदर्शिका, रत्नावली, नागानन्द।
* नागानन्द पाँच (5) अङ्कों का नाटक है इसका प्रचार बौद्धों के बीच अधिक है इसमें बोधिसत्त्व- रूप राजा की कथा है।
* हर्ष ने दो बौद्ध स्तोत्र भी लिखे थे -

1 - सुप्रभातस्तोत्र   2- अष्टमहाचैत्यस्तोत्र

* श्रीहर्षो निपुणः कविः परिषदप्येषा गुणग्राहिणी (प्रियदर्शिका 1-3, रत्नावली 1-5)
* **प्रियदर्शिका-** 4 - अंक नाटिका
  नायक- वत्सनरेश उदयन
  नायिका - आराण्यिका (प्रियदर्शिका) प्रेमकथा
  वासवदत्ता की आराण्यिका मौसेरी बहन है।
* **रत्नावली-** 4 अंक नाटिका
  नायक - उदयन (धीरललित)
  नायिका- सिंहल देश की राजकुमारी रत्नावली (सागरिका)
* वासवदत्ता की सागरिका ममेरी बहन है।
* राजा उदयन के प्रसाद में रत्नावली समुद्रदुर्घटना से बचकर आती है अतः उसे सागरिका कहा जाता है।
* नागानन्द 5- अंक का नाटक है।
*इसमें मुख्यतः विद्याधर - राजकुमार जीमूतवाहन के द्वारा अपनी बलि देकर शंखचूड नामक सर्प की रक्षा गरुड़ से करने का वर्णन है - नायक -बौद्ध , श्रृङ्गार–रस
* रत्नावली के प्रथम अंक में वसन्तोत्सव का रम्य वर्णन है।

रत्नावली के अङ्कों के नाम एवं श्लोक संख्या-

अङ्क श्लोक संख्या अङ्क का नाम-

* 1-25 - मदनमहोत्सव   2-21 - कदलीगृह
  3-19 - संकेत   4-22 - ऐन्द्रजालिक

सम्पूर्ण श्लोक (87)

* रत्नावली नाटिका का उपजीव्य ग्रन्थ माना जाता है- **बृहत्कथा को**
* बृहत्कथा के रचनाकार हैं - **गुणाढ्य**
* हर्षवर्धन का राज्यकाल है- **606ई- से 648 ई- तक**
* हर्षवर्धन के बडे भाई का नाम है - **राज्यवर्धन**
* राजवर्धन को छल से मार दिया था - **गौडनरेश ने**
* रत्नावली नायिका की कोटि है - **मुग्धा**
* रत्नावली पुत्री है- **सिंहलेश्वर की**
* सिंहलेश्वर का नाम है - **विक्रमबाहु**
* विक्रमबाहु का मन्त्री था- **वसुभूति**
* रत्नावली नाटिका का हृदय माना जाता है-**तृतीय अंक (संकेत)**
* ऐन्द्रजालिक क्रिया -कलाप है - **चतुर्थ अंक में**
* रत्नावली नाटिका का प्रारम्भ हुआ है- **नान्दीपाठ से**
* रत्नावली नाटिका का अन्त हुआ है - **भरतवाक्य से**
* वासवदत्ता की सेविका के रूप में रखा गया था-**सागरिका को**
* रत्नावली के पिता ने विदा होते समय दिया था- **रत्नमाला**
* रत्नावली को यौगन्धरायण के पास ले गया था - **व्यापारी**
* सागर से मिलने के कारण रत्नावली का नाम यौगन्धरायण ने रखा था - **सागरिका**
* वसन्तोत्सव मनाया जाता है - **कौशाम्बी में**
* वासवदत्ता कामदेव की पूजा सम्पन्न करती है -**मकरन्द उद्यान में**
* सागरिका की मदनावस्था का वर्णन है - **द्वितीय अंक में**
* उदयन के प्रति अनुरुक्त सागरिका उदयन का चित्र बनाती है- **कदलीगृह में**
* सागरिका का चित्र बनाती है - **सुसंगता**
* सागरिका और सुसङ्गता के मध्य में वार्तालाप को दुहराती है - **सारिका**
* राजा और सागरिका का मिलन सुसङ्गता कराती है- **कदलीगृह में (2अंक)**
* सिंहल देश की राजकुमारी है - **रत्नावली**
* सागरिका वेषधारण करती है - **वासवदत्ता का**

* सुसंगता वेष धारण करती है - **काञ्चनमाला का**
* वासवदत्ता की चेटी का नाम है - **काञ्चनमाला**
* सागरिका और उदयन को मिलाने की योजना बनाते हैं - **विदूषक और सुसङ्गता**
* विदूषक और सुसङ्गता की योजना को वासवदत्ता जान लेती है - **काञ्चनमाला द्वारा**
* सागरिका और उदयन को मिलाने की योजना की - **मकरन्द उद्यान में।**
* सागरिका, वासवदत्ता का वेष धारण करके जाती है - **मकरन्द उद्यान में**
* नाराज वासवदत्ता विदूषक को बंधवाती है- **लतापाश से**
* सागरिका को वासवदत्ता कारावास में डलवाती है - **चतुर्थ अंक में**
* सागरिका 'रत्नमाला' ब्राह्मण को दान देने के लिए सौंपती है - **सुसङ्गता को**
* सुसङ्गता रत्नमाला देती है - **विदूषक को**
* विन्ध्य - दुर्ग में स्थित कोसलाधिपति को युद्ध में मारकर कोशल देश जीतता है - **रुमण्वान्**
* रुमण्वान् उदयन का था - **सेनापति**
* रुमण्वान् कोशल देश जीतता है - **चतुर्थ अंक में**
* ऐन्द्रजालिक आया था - **उज्जयिनी से**
* सागरिका की रक्षा करने की प्रार्थना वासवदत्ता करती है- **उदयन से**
* आग में घुसकर सागरिका को उठाकर लाता है - **उदयन**
* वासवदत्ता के मामा की पुत्री थी- **रत्नावली**
* रत्नावली का विदूषक है - **वसन्तक**
* रत्नावली के हृदय में उदयन के प्रति प्रथमानुराग का आरोपण होता है - **कामदेव पूजनविधि के समय**
* रत्नावली नाटिका का प्रधान रस है - **श्रृंगार**
* वासवदत्ता पुत्री है- **प्रद्योत की**
* रत्नावली नाटिका में कुल छन्दों का प्रयोग हुआ है- **13**
* रत्नावली नाटिका में सर्वाधिक प्रयुक्त छन्द है- **शार्दूलविक्रीडित**
* 'पादाग्रस्थितया मुहुः स्तनभरेणानीतया नम्रतां' यह है - **मङ्गलाचरण (1/1)**
* रत्नावली के मङ्गलाचरण में अलंकार है - **काव्यलिङ्ग**
* रत्नावली के मङ्गलाचरण में छन्द है - **शार्दूलविक्रीडित**
* रत्नावली के मङ्गलाचरण में वर्णन किया गया है - **शिव और पार्वती का**
* 'उर्वीमुद्दामसस्यां जनयतु विसृजन्' रत्नावली नाटिका का है- **भरतवाक्य (4/22)**

रत्नावली - प्रमुख सूक्तियां

1. **सूत्रधारः-**
   मद्भाग्योपचयादयं समुदितः सर्वो गुणानां गणः॥
   तो फिर कहना ही क्या- जब कि मेरे भाग्य की वृद्धि से गुणों का यह सम्पूर्ण समूह एकत्रित होकर उपस्थित है। (1/5)
2. **सूत्रधारः-**
   द्वीपादन्यस्मादपि मध्यादपि जलनिधेर्दिशोऽप्यन्तात्। (1/6)
   अनुकूल भाग्य दूसरे द्वीप से जलनिधि के बीच से तथा दिशाओं के अन्तिम छोर से भी इष्ट वस्तु को मिला देती है।
3. **सूत्रधारः-**
   आनीय झटिति घटयति विधिरभिमतमभिमुखीभूतः।
   भाग्य दूसरे द्वीप से जलनिधि के बीच से तथा दिशाओं के अन्तिम छोर से भी इष्ट वस्तु को शीघ्र लाकर मिला देता है। ।।1/6।।
4. **कष्टोऽयं खलु भृत्यभावः। (प्रथम अङ्क)**

यौगन्धरायण- सचमुच दासता निश्चय ही कष्टप्रद होती है।

5. **न कमलाकरमुज्झित्वा राजहंस्यन्यत्राभिरमते-**

सुसङ्गता- राजहंसी (उच्च जाति की हंसिनी) कमल वन को छोड़कर अन्यत्र रमण नहीं करती (अर्थात्) महान गुण और कुलवाली सागरिका अपने अनुरूप वत्सराज उदयन की ही अभिलाषा कर सकती है। (अङ्क-2)

6. **विदूषक- राजा से**
   भोः किमेतैर्वक्रभणितैः।
   यह टेढ़ी बातों से क्या लाभ?

विदूषक राजा से कहता है- (जोर से हँसकर) अरे इन टेढ़ी बातों से क्या (लाभ)? सीधे ही क्यों नहीं कहते कि- मुझको ही न पा सकने वाली (किसी अत्यन्त रूपवती के द्वारा यह कहा गया है) (अङ्क-2)

7. **विदूषक- सागरिका को देखकर**
   ईदृशं रूपं मनुष्य लोके न पुनर्दृश्यते।

आश्चर्य है! - ऐसा रूप मनुष्यलोक में तो दृष्टिगोचर नहीं होता है।

8. **विदूषक- रानी काञ्चनमाला से -**
   आत्मा किल दुःखमालिख्यत इति।
   अपना चित्र बड़ी कठिनता से बनाया जा सकता है।

9. विदूषक- राजा से -

भोः! एषा खलु त्वयाऽपूर्वा श्रीः समासादिता। (अङ्क-2)

निश्चय ही तुम्हारे द्वारा यह अपूर्व लक्ष्मी प्राप्त की गयी है (अर्थात् इस अद्वितीय सुन्दरी के कर ग्रहण से काम की पूर्णता के साथ-साथ अर्थ की भी प्राप्ति कर रहे हो।)

10. राजा- सागरिका से -

अयि प्रसीद। न खलु सखीजने युक्त एवं कोपानुबन्धः।

अरी प्रसन्न हो जाओ। सखीजनों पर इस प्रकार निरन्तर कोप ठीक नहीं है। (2 अङ्क)

11. काञ्चनमाला-

भर्त्रि, घुणाक्षरमपि कदापि सम्भवत्येव। (अङ्क-2)

स्वामिनी! कभी-कभी घुणाक्षर (किसी लकड़ी में घुन लग जाने से अपने आप अक्षर बन जाता है, बनाया नहीं जाता है।) न्याय भी सम्भव है।

(हो सकता है लड़की बनायी गयी हो, बन गयी हो सागरिका)

12. राजा- विदूषक से - (2/21)

कोपश्च प्रकटीकृतो दयितया मुक्तश्च न प्रश्रयः।

इस प्रकार- प्रियतमा ने क्रोध भी प्रकट कर दिया और विनय का भी परित्याग नहीं किया।

13. सागरिका - सुसङ्गता से-

'कस्मात्परिहासशीलतयेमं जनं लघुं करोषि' (अङ्क-2)

सुसङ्गता- (लज्जा के साथ) सखि (तुम अपनी) परिहास की आदत से इस जन को (अर्थात् राजा) क्यों लघु बना रही हो।

14. राजा -

मनश्चलं प्रकृत्यैव दुर्लक्ष्यं च तथापि मे। (3/2)

यद्यपि मन स्वभावतः चञ्चल तथा दुर्लक्ष्य (अभेद्य या अदृश्य) होता है तो भी कामदेव ने मेरे, ऐसे मन को समस्त तीक्ष्ण बाणों से एक साथ कैसे वेध दिया?

15. विदूषक- राजा से

'दिष्ट्या वर्धसे त्वं समीहिताभ्याधिकया कार्यसिद्ध्या'

अभिलषित से भी अधिक कार्य में सफलता की प्राप्ति के कारण तुम भाग्य से बढ़ रहे हो अर्थात् बड़े भाग्यशाली हो।(अङ्क-3)

16. राजा- विदूषक से-

रमयतितरां संकेतस्था तथापि हि कामिनी ॥9॥

(नायक के द्वारा) यत्नपूर्वक पकड़ी जाने पर भी बार-बार यही कहती है कि (छोड़िए) मैं जा रही हूँ- फिर भी वह अपने प्रेम-प्रदर्शन के अभाव में भी (नायक) को अत्यन्त आनन्द प्रदान करती है।

17. राजा - उदयन

तीव्रः स्मरसन्तापो न तथादौ बाधते यथाऽऽसन्ने।

तीव्र काम-व्यथा, जितना (प्रिय-मिलन के) समीप होने पर कष्ट देती है, उतना पहले (प्रथम दर्शन होने पर) नहीं सताती। (3/10)

18. राजा- उदयन-

तपति प्रावृषि नितरामभ्यर्णजलागमो दिवसः।

वर्षा ऋतु में आसन्न वृष्टि वाला दिन अत्यन्त ताप प्रदान करता है। (3/10)

19. काञ्चनमाला - वासवदत्ता से

किं पुनः साहसिकानां पुरूषाणां न संभाव्यते।

(एक ओर होकर) स्वामिनी ! ऐसा ही बात है और फिर साहसिक पुरुषों के लिए क्या सम्भव नहीं है?

20. राजा- सागरिका (वासवदत्ता) से

दर्पः स्यादमृतेन चेदिह तदप्येवास्ति बिम्बाधरे।

यदि इसे (चन्द्रमा) को अमृत का गर्व है, तो वह (सुधा) भी (तुम्हारे) इस बिम्बाफल तुल्य अधर में है। (3/13)

21. राजा (उदयन) विदूषक से-

प्रकृष्टस्य प्रेम्णः स्खलितमविषह्यं हि भवति॥।।3/15।।

क्योंकि- प्रकृष्ट प्रेम थोड़ी भी त्रुटि के कारण भयानक हो जाता है। (अर्थात् परकीया प्रेम को) सहन न करने वाली वह प्रिया वासवदत्ता निश्चित ही प्राण त्याग देगी; क्योंकि प्रकृष्ट प्रेम थोड़ी भी त्रुटि के कारण भयानक हो जाता है?

22. राजा- विदूषक से

सखे, इयमनभ्रा वृष्टिः।

यह बिना बादलों की वृष्टि (अचानक होने वाला कार्य) है।

विदूषक- भोः एवं न्विदं यद्यकालवातावली भूत्वा नायाति देवी वासवदत्ता। ॥3अङ्क॥

अरे, ऐसा ही है, यदि असमय की आँधी बनकर देवी वासवदत्ता न आ जाँय तो।

23. राजा- वासवदत्ता से

दुरवगाहा गतिर्दैवस्य (4 अङ्क)

धैर्य धारण करो, धैर्य धारण करो। दैव की गति दुरवगाहा है। (नहीं जानी जा सकती है)।

वसुभूतिः-देव किमिदमकारणमेव पतङ्गवृत्तिः क्रियते। (4 अङ्क)

देव! अकारण ही यह पतङ्गवृत्ति क्यों की जा रही है?

24. राजा-

विरहहुतभुजाऽहं यो न दग्धः प्रियायाः (4/16)

जो मैं प्रिया (सागरिका) के प्रलयानल के समान प्रदीप्त विरह रूपी अग्नि में नहीं जल सका, उसका तू क्या कर लेगी?

25. यौगन्धरायण -

ईदृशमत्यन्तमाननीयेष्वपि निरनुरोधवृत्ति स्वामिभक्तिव्रतम्। (4 अङ्क)

यह स्वामिभक्ति का व्रत ही ऐसा है जिसमें अत्यन्त माननीय जनों के प्रति भी रूक्ष व्यवहार करना पड़ता है।

26. भरतवाक्य-

निःशेषं यान्तु शान्तिं पिशुनजनगिरो दुर्जयो वज्रलेपाः
खलों के वज्रलेप के समान (कष्ट प्रदान करने वाले) दुर्जय वचन पूर्ण रूप से शान्त हो जायँ।।4/22।।

27. वसुभूति-

ग्राम्यो यथाऽहं कृतः।
आश्चर्य है कि, द्वार पर स्थित महान कौतूहल के कारण ग्रामीण जैसा बना दिया गया। ।।4/12।।

28. विदूषक-

तत्कस्मादत्रारण्यरुदितं करोषि
अरे उठो! महारानी तो चली गई फिर क्यों यहाँ अरण्य-रोदन कर रहे हो। (3 अङ्क)

30. राजा- (उदयन)

प्रिया प्रायेणास्ते हृदयनिहितातङ्कविधुरा। (3/4)
इस प्रकार मेरी प्रिया (सागरिका) प्रायः हृदय में स्थित भय से विकल रहती है।

31. विदूषकः-

एष खलु गुर्वनुरागोत्क्षिप्तहृदयः संध्यावधूदत्तसंकेत इवास्तगिरिशिखरकाननमनुसरति भगवान्सहस्ररश्मिः।
अत्यधिक अनुराग के कारण उत्क्षिप्त हृदयवाला तथा सहस्र किरणों वाला यह भगवान् सूर्य, मानो जिसे संध्या रूपी वधू ने संकेत दिया हो, अस्ताचल के शिखर देश में स्थित कानन का अनुसरण कर रहा है। (3 अङ्क)

32. राजा-

धन्यानां श्रवणपथातिथित्वमेति (2/8)
दुःसह काम व्यथा को सहती हुई कामिनी के द्वारा सखियों के समक्ष जो कुछ (गुप्त) सम्भाषण किया गया है, वह शिशु तोता और मैना के द्वारा पुनः उच्चरित होकर भाग्यवानों के कानों का विषय बनता है।

33. अचिन्त्यो हि मणिमन्त्रौषधीनां प्रभावः।

राजा-विदूषक से- अर्थ- मित्र, (इसमें) क्या सन्देह ? क्योंकि मणि,मन्त्र और औषधियों का प्रभाव अचिन्तनीय हुआ करता है।

पात्र-परिचय

नायक –उदयन वत्स देश का राजा

विदूषक –वसन्तक

यौगन्धरायण –उदयन का प्रधानमन्त्री

विजयवर्मा– उदयन के प्रधान-सेनापति रुमण्वान् का भानजा

वाभ्रव्य – उदयन का कञ्चुकी

वसुभूति – सिंहल देश का मन्त्री

ऐन्द्रजालिक– उज्जयिनी का निवासी जादूगर

नायिका – रत्नावली (सागरिका) विक्रमबाहु की पुत्री

वासवदत्ता– उदयन की राजमहिषी

काञ्चनमाला–वासवदत्ता की सेविका

सुसंगता – परिचारिका, सागरिका की सखी

वसुन्धरा – द्वारपालिका (प्रतिहारी)अरण्य-रोदन कर रहे हो।

रत्नावली प्रश्नोत्तरी

♦ रत्नावलीनाटकस्य कर्ता कः?
(A) हर्षवर्धनः (B) श्रीहर्षः
(C) भासः (D) बाणः

♦ रत्नावल्याः रूपकप्रकारः अस्ति?
(A) नाटक (B) महाकाव्य
(C) नाटिका (D) खण्डकाव्य

♦ रत्नावल्यां वत्सराजः कीदृशो नायकः?
(A) धीरप्रशान्तः **(B) धीरोद्धतः**
(C) धीरललितः (D) धीरोदात्तः

♦ नाटिकाऽस्ति-
(A) अभिज्ञानशाकुन्तलम् (B) मृच्छकटिकम्
(C) रत्नावली (D) वेणीसंहारम्

♦ 'सागरिका' नायिका अस्ति-
(A) मृच्छकटिके (B) कादम्बर्याम्
(C) रत्नावल्याम् (D) शिवराजविजये

♦ रत्नावली कस्य देशस्य राजकन्या वर्तते-
(A) मगधः (B) अवन्ती
(C) विदर्भः **(D) सिंहलः**

♦ रत्नावल्यां प्रधानरसः कः?
(A) वीररसः (B) रौद्ररसः
(C) शान्तरसः **(D) शृंगाररसः**

♦ रत्नावली कस्य उपरूपकप्रभेदस्य उदाहरणं भवति-
(A) त्रोटकस्य (B) सट्टकस्य
(C) भाणिकायाः **(D) नाटिकायाः**

♦ रत्नावलीति नाटिकायाः स्वरूपं वर्तते-
(A) नाटकप्रकरणयोः मिश्रितं स्वरूपम्
(B) भाणडिमयोः मिश्रितं स्वरूपम्
(C) प्रकरणसमवकारयोः मिश्रितं स्वरूपम्
(D) सट्टकहल्लीसकयोः मिश्रितं स्वरूपम्

- सागरिका कस्मिन् ग्रन्थे अस्ति-
  (A) प्रतिज्ञायौगन्धरायणे (B) मृच्छकटिके
  (C) रत्नावल्याम् (D) मुद्राराक्षसे
- वसन्तकः अस्ति-
  (A) रत्नावल्याम् (B) मृच्छकटिके
  (C) उत्तररामचरिते (D) अभिज्ञानशाकुन्तले
- रत्नावल्याम् उदयनस्य कञ्चुकी कः?
  (A) बाभ्रव्यः (B) यौगन्धरायणः
  (C) वसन्तकः (D) विक्रमबाहुः
- रत्नावलीनाटिकायाः प्रथमाङ्कस्य नाम किम्?
  (A) संकेतः (B) कदलीगृहः
  (C) मदनमहोत्सवः (D) ऐन्द्रजालिकम्
- मदनमहोत्सवस्य वर्णनं कस्मिन् ग्रन्थे उपलभ्यते?
  (A) उत्तररामचरिते **(B) अभिज्ञानशाकुन्तले**
  (C) रत्नावल्याम् (D) मृच्छकटिके
- 'यातोऽस्मि पद्मनयने समयो ममैषः' रत्नावल्याः संवाद-श्लोकेन कः सम्बोध्यते?
  (A) महाराज्ञी **(B) विदूषकः**
  (C) उदयनः (D) सागरिका
- "आनीय झटिति घटयति विधिरभिमतमभिमुखीभूतः" उक्तिरियं रत्नावल्यां वर्तते-
  (A) यौगन्धरायणस्य (B) उदयनस्य
  (C)सूत्रधारस्य (D) रत्नावल्याः
- लीलावधूतपद्मा कथयन्ती पक्षपातमधिकं नः।
  मानसमुपैति केयं चित्रगता राजहंसीव।।
  इयमुक्तिः कामुद्दिश्य कथिता?
  (A) शकुन्तलाम् (B) महाश्वेताम्
  (C) द्रौपदीम् **(D) सागरिकाम्**
- रत्नावल्यां कस्याः नगर्याः दृश्यं वर्तते?
  (A) कौशाम्ब्याः (B) उज्जयिन्याः
  (C) श्रीलंकायाः (D) श्रावस्त्याः
- रत्नावल्याः मङ्गलाचरणस्य प्रथमे श्लोके कस्य स्तुतिः प्राप्यते?
  (A) विष्णोः (B) ब्रह्मणः
  (C) शिवस्य (D) गणेशस्य
- 'सिद्धेर्भ्रान्तिर्नास्ति सत्यं तथापि स्वेच्छाचारी भीत एवास्मि भर्तुः।' इत्युक्तिः रत्नावल्यां केन सम्बद्धा?
  (A) उदयनेन (B) वसन्तकेन
  (C)बाभ्रव्येण **(D) यौगन्धरायणेन**
- रत्नावल्याः अपरं नाम-
  (A) वासवदत्ता **(B) सागरिका**
  (C)कर्पूरमञ्जरी (D) शकुन्तला
- रत्नावली कस्य राज्ञो दुहिताऽऽसीत् ?
  (A) दृढवर्मणः (B) कलिङ्गराजस्य
  (C)सिंहलेश्वरस्य (D) मत्स्यराजस्य
- रत्नावल्यां नायकः कः -
  (A) चारुदत्तः (B) दुष्यन्तः
  (C)दुर्योधनः **(D) उदयनः**
- वासवदत्तया कुसुमायुधस्य पूजा कुत्र सम्पादिता-
  (A) बकुलपादपतले **(B) रक्ताशोकपादपतले**
  (C)सहकारवृक्षतले (D) दाडिमवृक्षतले
- रत्नावल्यां द्वितीयाङ्कस्य नाम-
  (A) मदनमहोत्सवः **(B) कदलीगृहः**
  (C) संकेतः (D) ऐन्द्रजालिकम्

प्रतिमानाटकम्

मङ्गलाचरण

सीताभवः पातु सुमन्त्रतुष्टः सुग्रीवरामः सहलक्ष्मणश्च।
यो रावणार्यप्रतिमश्च देव्या विभीषणात्मा भरतोऽनुसर्गम्।1।

भावार्थ- वे भगवान् राम सदैव हमारी अथवा आपकी रक्षा करें जो सीता को सुख देने वाले, सुमन्त्र (सारथि और अच्छी मन्त्रणा) से संतुष्ट, सुग्रीव (सुन्दर ग्रीवा वाले, वानरराज के मित्र) तथा अभिराम (सुन्दर) हैं, और जिनके साथ लक्ष्मण हैं,सीताहरण के कारण जिन्हें रावण का शत्रु बनना पड़ा, जो वीरता में अद्वितीय और विभीषण (शत्रुओं के लिए भयंकर) स्वरूप हैं तथा जो सदा संसार का पालन एवं रक्षा करते हैं।

* इस मङ्गलाचरण में भगवान् राम (विष्णु) की स्तुति की गयी है।
* इसमें आशीर्वाद तथा मुद्रालङ्कार के प्रयोग से कथावस्तु का भी निर्देश है, अतः पत्रावली नान्दी है।
* इसमें आठ पदों वाली नान्दी का प्रयोग है।
* उपर्युक्त पद्य में परिकर अलङ्कार एवं उपजाति छन्द है।

प्रतिमानाटकम् की संक्षिप्त कथावस्तु

प्रथम अङ्क

* राम के अभिषेक के समय नाटक का प्रारम्भ होता है।
* अकस्मात् अभिषेक के बाजे बंद हो जाते हैं तथा सीता सशंकित हो जाती हैं।
* राम को अभिषेक से उठना पड़ता है तथा वन जाने की आज्ञा मिलती है।

* राम, वन जाने से पूर्व सीता से मिलते हैं।
* सीता और लक्ष्मण को साथ लेकर राम वन की ओर प्रस्थान करते हैं।

द्वितीय अङ्क

* दशरथ अपने पुत्रों एवं पुत्रवधू के वियोग में विलाप करते हैं।
* अयोध्या के सभी जीवधारी राम के वनगमन से क्षुब्ध हैं।
* कौशल्या आदि रानियाँ महाराज दशरथ को सान्त्वना दिलाती हैं।
* दशरथ, सुमन्त्र से रामादि का समाचार पूँछते हैं।
* शोक से व्याकुल महाराज दशरथ की मृत्यु हो जाती है।

तृतीय अङ्क

* भरत, सुमन्त्र के साथ अपने ननिहाल से अयोध्या आते हैं।
* भरत रास्ते में अयोध्या के निकट एक प्रतिमागृह में दशरथ तथा उनसे पूर्ववर्ती राजाओं की प्रतिमा का अवलोकन करते हैं।
* पुजारी द्वारा भरत को ज्ञात होता है कि महाराज दशरथ की मृत्यु हो चुकी है।
* भरत वहीं मूर्च्छित हो जाते हैं तथा होश में आने पर समस्त घटनाओं को पुजारी से पूँछते हैं।
* घटनाओं को सुनकर भरत अपनी माता कैकेयी की भर्त्सना करते हैं।
* भरत बहुत दुःखी होते हैं तथा राम को लौटाने के लिए सारथि सुमन्त्र के साथ अयोध्या से दण्डकारण्य को प्रस्थान करते हैं।

चतुर्थ अङ्क

* भरत, राम आदि से मिलते हैं और स्वयं को निर्दोष बताते हैं।
* भरत, राम को लौटाना चाहते हैं लेकिन राम, पिता की आज्ञा बताकर मना कर देते हैं तत्पश्चात् भरत भी वहाँ से लौटने को तैयार नहीं होते।
* भरत इस शर्त पर अयोध्या जाने को तैयार होते हैं कि 14 वर्षों के पश्चात् राम, राज्यभार को स्वीकार कर लेंगे।
* राम की चरणपादुका लेकर भरत अयोध्या लौट आते हैं।

पञ्चम अङ्क

* इस अङ्क में संन्यासी वेशधारी रावण का प्रवेश होता है।
* राम, रावण को आसन पर बैठाते हैं और उससे अपने पिता दशरथ के श्राद्ध के विषय में बात करते हैं।
* रावण, राम को बताता है कि श्राद्ध कर्म में काञ्चन-पार्श्व नाम के मृग की भी आवश्यकता पड़ती है।
* राम, काञ्चन-पार्श्व मृग को लाने के लिए बाहर निकलते हैं तथा मौलिक रूप में आकर रावण, सीता का हरण कर लेता है।
* सीता का विलाप सुनकर जटायु सीता को बचाने के लिए जाता है।

षष्ठ अङ्क

* सीता को छुड़ाने के लिए जटायु, रावण से युद्ध करता है और रावण द्वारा मार दिया जाता है।
* सुमन्त्र द्वारा भरत को सूचना मिलती है कि सीता का हरण हो गया।
* भरत अपनी माता कैकेयी को उलाहना देते हैं तथा कैकेयी अपने दोष का परिहार सुनाती हैं।
* श्रवणकुमार के पिता का शाप का वृत्तान्त, सुमन्त्र के मुख से सुनकर भरत अपनी माता से क्षमा माँगते हैं।
* रावण से युद्ध के लिए भरत और सुमन्त्र तैयारी करते हैं।

सप्तम अङ्क

* इस अङ्क में सूचना मिलती है कि राम, रावण को मारकर विभीषण को लङ्कापति बनाकर, सीता को साथ लेकर फिर से तपोवन में आ गये हैं।
* भरत अपनी माताओं के साथ राम से मिलने जाते हैं।
* सभी भाइयों की उपस्थिति में राम का राज्याभिषेक होता है और सब पुष्पक विमान से वापस अयोध्या लौटते हैं।
* भरतवाक्य के साथ नाटक समाप्त।

प्रतिमानाटकम् का भरतवाक्य

यथा रामश्च जानक्या बन्धुभिश्च समागतः।
तथा लक्ष्म्या समायुक्तो राजा भूमिं प्रशास्तु नः। (7/15)

भावार्थ- जिस प्रकार राम का सीता और बन्धुओं से सम्मिलन हुआ है, उसी प्रकार राज्यलक्ष्मी से युक्त हुए हमारे महाराज इस भूमि का पालन करें।

* प्रस्तुत भरतवाक्य में लोककल्याणार्थ की कामना की गयी है।
* इसमें अनुष्टुप् छन्द एवं दृष्टान्त अलङ्कार है।

प्रतिमानाटकम् के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

राम–

* राम इस नाटक के नायक हैं।
* वे धीरोदात्त गुणों से सम्पन्न हैं।
* राम अनात्मश्लाघी एवं क्षमाशील हैं, कैकेयी द्वारा उन्हें वनवास मिला है पर उन्हें उनके प्रति किञ्चितमात्र भी क्रोध नहीं आता है।
* राम आज्ञाकारी तथा दृढ़व्रती भी हैं।
* राम पितृभक्त, मातृभक्त तथा मातृ-प्रेमी हैं।
* सचमुच राम में देवोचित गुण हैं, इन गुण के कारण राम, देव बन गये हैं।

सीता–

* सीता इस नाटक की नायिका हैं।
* वे राम की अनुरूप सहधर्मचारिणी हैं।
* दोनों में अत्यन्त साम्य है जैसाकि पति-पत्नी में होना चाहिए।
* सीता दण्डकारण्य के सभी पशु-पक्षियों एवं पेड़-पौधों से प्रेम करती हैं।
* अतिथि सत्कार में सीता अत्यन्त निपुण हैं।
* सीता, राम की अर्धाङ्गिनी हैं, सीता के बिना राम अपूर्ण हैं।

लक्ष्मण–

* लक्ष्मण इस नाटक के प्रमुख पात्र हैं जो नायक राम के आस-पास ही रहते हैं।
* लक्ष्मण अत्यन्त क्रोधी स्वभाव के हैं। जब उन्हें कैकेयी के षड्यन्त्र का पता चलता है तो स्त्रीजाति के समूल विनाश के लिए उद्यत हो जाते हैं।
* लक्ष्मण भातृ-प्रेम के अवतार हैं और राम के उपासक हैं।

भरत–

* भरत भी इस नाटक के उत्कृष्ट पात्रों में हैं।
* भरत का चरित्र अत्युज्ज्वल है।
* वे अन्याय से प्राप्त राज्य को ठुकरा देते हैं और अपनी माता को फटकारते भी हैं।
* भरत का चरित्र निश्कलंक है। वे राम के चरणपादुका को आसनस्थ करके अयोध्यावासियों की सेवा करते हैं।
* अतः भरत राम के परम भक्त हैं एवं आदर्शों में राम से उच्च हैं।

दशरथ–

* दशरथ रामादि चारों भाइयों के पिता हैं। पुत्र उनके प्राण हैं।
* वे अयोध्या के नरेश एवं परमस्नेही पिता भी हैं।
* पुत्र के वियोग में वे विह्वल होकर प्राण त्याग देते हैं।
* राम को राजा बनाने की उनकी अभिलाषा अपूर्ण रह जाती है।
* निराशा को हृदयस्थ किये हुए वे संसार से विदा हो जाते हैं।

सुमन्त्र–

* सुमन्त्र इक्ष्वाकु कुल के वृद्ध सारथि हैं।
* वे अत्यन्त धीर, गम्भीर, बुद्धिमान् एवं निष्ठावान् हैं, इसलिए नाटक में उनकी महत्ता बढ़ जाती है।
* इक्ष्वाकु वंश पर एक के बाद एक विपत्ति आने से अपनी लम्बी आयु को ही दोषी ठहराते हैं।

अन्य पात्र–

* अन्य पात्रों में कौशल्या, शत्रुघ्न, रावण आदि हैं।

प्रतिमानाटकम् का परिचय

लेखक	- महाकवि भास
काव्यविधा	- नाटक
विभाजन	- 7 (सात) अङ्कों में
उपजीव्य	- रामायण
श्लोक संख्या	- 157
अङ्क	**श्लोक संख्या**
प्रथम	31
द्वितीय	21
तृतीय	24
चतुर्थ	28
पञ्चम	22
षष्ठ	16
सप्तम	15
योग	**157**
नायक	- राम
नायिका	- सीता
प्रतिनायक	- रावण
कञ्चुकी	- बालाकि
प्रतीहारी	- विजया
प्रधान/अङ्गीरस	- करुण रस

नोट- म.टी. गणपतिशास्त्री 'धर्मवीररस' को अङ्गीरस मानते हैं।

अन्य रस - वीर, शृङ्गार, अद्भुत आदि
अलङ्कार - उपमा, स्वभावोक्ति
प्रमुख छन्द - अनुष्टुप्
रीति- वैदर्भी

प्रतिमानाटकम् की सूक्तियाँ

* **सर्वशोभनीयं सुरूपं नाम (अङ्क-1)**
भावार्थ- प्रथम अङ्क में अवदातिका नाम की सीता की सखी कहती है कि 'सुन्दर रूप पर सभी चीजें अच्छी लगती हैं।'

* **स्वः पुत्रः कुरुते पितुर्यदि वचः कस्तत्र भोः! विस्मयः।1/5।**
भावार्थ- प्रथम अङ्क में राम कहते हैं 'यदि पुत्र अपने पिता की आज्ञा का पालन करता है तो इसमें आश्चर्य की कौन सी बात है।'

* **अल्पं तुल्यशीलानि द्वन्द्वानि सृज्यन्ते। (अङ्क-1)**
भावार्थ- प्रथम अङ्क में राम कहते है कि, 'विधाता एक जैसे बहुत कम बनाता है।'

* **शरीरेऽरिः प्रहरति हृदये स्वजनस्तथा। (1/12)**
भावार्थ- प्रथम अङ्क में राम कहते हैं कि, ''शत्रु शरीर पर वार करता है परन्तु स्वजन हृदय पर।''

* **अनुचरति शशाङ्कं राहुदोषेऽपि तारा पतति च वनवृक्षे याति भूमिं लता च। त्यजति न च करेणुः पङ्कलग्नं गजेन्द्रं व्रजतु चरतु धर्मं भर्तृनाथा हि नार्यः (1/25)**

भावार्थ- प्रथम अङ्क में लक्ष्मण कहते हैं कि, राहु के ग्रसित होने पर भी रोहिणी चन्द्रमा के पीछे चलती है। पेड़ के गिरने पर उसके साथ की लता भी साथ ही गिर पड़ती है। कीचड़ में फँसे हुए हाथी को हथिनी कभी नहीं छोड़ती इसलिए इन्हें भी अपने साथ वन चलने दें और स्त्रीधर्म का पालन करने दें। क्योंकि स्त्रियों का पति ही सब कुछ होता है उसका साथ नहीं छूटना चाहिए।

* **निर्दोषदृश्या हि भवन्ति नार्यो यज्ञे विवाहे व्यसने वने च। (1/29)**

भावार्थ- प्रथम अङ्क में राम, नगरवासियों से कहते हैं कि, 'यज्ञ, विवाह, आपत्ति तथा संकट के अवसर पर स्त्रियों के दर्शन में कोई पाप नहीं होता।'

* **पिपासार्तोऽनुधावामि क्षीणतोयां नदीमिव। (3/10)**

भावार्थ- तृतीय अङ्क में भरत कहते हैं कि, 'मैं अयोध्या की ओर उसी प्रकार जा रहा हूँ जिस प्रकार प्यासा व्यक्ति सूखी नदी की ओर भागता है।'

* **हस्तस्पर्शे हि मातॄणामजलस्य जलाञ्जलिः। (3/12)**

भावार्थ- तृतीय अङ्क में पुजारी, भरत से कहता है कि, 'पुत्र के लिए माताओं के हाथ का स्पर्श प्यासे के लिए जल के समान है।'

* **गङ्गायमुनायोर्मध्ये कुनदीव प्रवेशिता। (3/16)**

भावार्थ- तृतीय अङ्क में भरत अपनी माता कैकेयी से कहते है कि, 'मेरी माता (कौशल्या) और माता (सुमित्रा) के बीच खड़ी हुई तुम अच्छी नहीं लग रही हो जैसे गङ्गा और यमुना के बीच में क्षुद्र नदी।'

* **गोपहीना यथा गावो विलयं यान्त्यपालिताः**
एवं नृपतिहीना हि विलयं यान्ति वै प्रजाः। (3/23)

भावार्थ- तृतीय अङ्क में सुमन्त्र, भरत से कहते हैं कि, 'जैसे ग्वाल के बिना गायें रक्षा न होने से नष्ट हो जाती है, उसी प्रकार राजा के बिना प्रजा का नाश हो रहा है।'

* **किं ब्रह्मघ्नानामपि परेण निवेदनं क्रियते। (अङ्क-4)**

भावार्थ- चतुर्थ अङ्क में भरत कहते हैं कि, 'क्या ब्रह्महत्या करने वालों की भी सूचना दूसरे देते हैं अर्थात् नहीं।'

* **अलमिदानीं व्रणे प्रहर्तुम्। (अङ्क-4)**

भावार्थ- चतुर्थ अङ्क में भरत, राम से कहते हैं कि, 'घाव पर नमक मत छिड़किये।'

* **पुरुषाणां मातृदोषो न दोषः। (4/21)**

भावार्थ- भरत कहते हैं कि, 'सुपुरुष! माता का अपराध पुत्र पर न लगाना चाहिए।'

* **राज्यं नाम मुहूर्तमपि नोपेक्षणीयम्। (अङ्क-4)**

भावार्थ- राम, भरत, से चतुर्थ अङ्क में कहते हैं कि, 'हे वत्स! राज्य की क्षणभर भी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।'

* **छायां परिहृत्य शरीरं न लङ्घयामि।**
वाचानुवृत्तिः खल्वतिथिसत्काराः। (अङ्क-5)

भावार्थ- पञ्चम अङ्क में रावण, राम से कहता है कि, 'जब छाया (स्त्री) को ही मैं छोड़ चुका फिर शरीर (पुरुष) को कैसे सेवा करने दूँ। प्रेमपूर्वक सम्भाषण ही अतिथिसत्कार है।'

* **धिग् भोः स्वर्गं भीतदेवैर्निविष्टं धन्या भूमिर्वर्तते यत्र सीता। (5/17)**

भावार्थ- पञ्चम अङ्क में हरण करते समय रावण, सीता से कहता है कि, 'धिक्कार है कायर देवों से भरे स्वर्ग को, धन्य है यह पृथ्वी जिसमें सीता रहती है।'

* **न व्याघ्रं मृगशिशवः प्रघर्षयन्ति।5/10**

भावार्थ- रावण पञ्चम अङ्क में सीता से कहता है कि, राम और लक्ष्मण जैसे कायरों को पुकारने से क्या लाभ? कहीं मृग के बच्चे शेर का भी कुछ बिगाड़ सकते हैं?'

* **तिर्यग्योनयोऽप्युपकृतमवगच्छन्ति। अङ्क-6**

भावार्थ- षष्ठ अङ्क में सुमन्त्र, भरत से कहते हैं कि, 'तिर्यग्जाति (पशु-पक्षी) भी कृतज्ञ होते हैं।'

प्रतिमानाटकम् का पात्र-परिचय

पुरुष-पात्र

सूत्रधार	- प्रमुख नट, मञ्च का अध्यक्ष
राजा	- अयोध्या नरेश दशरथ
राम	- नाटक के नायक, दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र
लक्ष्मण	- सुमित्रा+दशरथ के पुत्र
भरत	- कैकेयी+दशरथ के पुत्र
शत्रुघ्न	- सुमित्रा+दशरथ के पुत्र
सुमन्त्र	- वृद्ध सारथि
रावण	- प्रतिनायक, लङ्कापति
कञ्चुकी	- अन्तःपुर का वृद्ध ब्राह्मण
देवकुलिक	- प्रतिमागृह का सफाईकर्मी
वृद्ध तापसी	- रावण और जटायु के युद्ध को देखने वाले
तापस	- दण्डकारण्य का एक तपस्वी
नन्दिलक	- आश्रम का सेवक
भट	- अधिकारी

स्त्री-पात्र

नटी	- सूत्रधार की पत्नी
सीता	- राम की पत्नी, नायिका

कौशल्या - राम की माता
सुमित्रा - लक्ष्मण और शत्रुघ्न की माता
कैकेयी - भरत की माता
अवदातिका- सीता की सखी
चेटी - सीता की सेविका
प्रतीहारी - द्वारपालिका, विजया
नन्दिनी - कैकेयी की परिचारिका

प्रतिमानाटकम् नाम की सार्थकता

नाटक के तृतीय अङ्क में महाराज दशरथ की मृत्यु के पश्चात् ननिहाल से लौटते हुए भरत ने मार्ग में अयोध्या के समीप 'देवकुल' नामक प्रतिमागृह में अपने दिवंगत पूर्वज के साथ जब महाराज दशरथ की भी प्रतिमा देखी तो उन्हें उनकी मृत्यु का पता चला। इसी तृतीय अङ्क की घटना के आधार पर ही इस नाटक का नाम प्रतिमानाटक रखा गया है।

महत्त्वपूर्ण तथ्य

* प्रतिमानाटक में विदूषक का अभाव है।
* अभिषेकनाटक में पूरी कथा के सन्निवेश न होने से असन्तुष्ट होकर भास ने प्रतिमानाटक की रचना की।
* भास के 13 रूपकों में प्रतिमानाटक सबसे बड़ा है।
* प्रतिमानाटक का हस्तलेख मलयालम लिपि में प्राप्त हुआ था।
* प्रतिमानाटक के द्वितीय एवं सप्तम अङ्क में मिश्र विष्कम्भक का प्रयोग है।
* तृतीय एवं चतुर्थ अङ्क में प्रवेशक का प्रयोग है।
* षष्ठ अङ्क में शुद्ध विष्कम्भक का प्रयोग है।

चम्पूकाव्य- संक्षिप्त परिचय

चम्पूकाव्य की परिभाषा व यौगिकार्थ-

'चम्पू' शब्द चुरादिगणीय **'चपि'** धातु से **'उन्'** (उणादि प्रत्यय) करके **'ऊङ्'** आदेश पर बनता है । अतः-

''चम्पयति अर्थात् सहैव गमयति प्रयोजयति गद्यपद्ये इति चम्पूः।''

अर्थात् जिस रचना में गद्य -पद्य का समान प्रयोग किया जाता है वह चम्पू कहलाता है।

हरिदास भट्टाचार्य चम्पू शब्द की निरुक्ति करते हैं-

''चमत्कृत्य पुनाति, सहृदयान् विस्मयीकृत्य प्रसादयति, इति चम्पूः।''

* इसके अनुसार चम्पूकाव्य में 'शब्द' चमत्कार युक्त तथा 'अर्थ ' प्रसाद गुण युक्त होना चाहिए ।
* चम्पूकाव्य में वर्णन हेतु का तथा भावपूर्ण या अर्थगौरव वाले भाग के लिए पद्य का प्रयोग होता है।
* चम्पू का सर्वप्रथम शास्त्रीय लक्षण काव्यादर्श में दण्डी द्वारा इस प्रकार किया गया-

''गद्यपद्यमयी काचिच्चम्पूरित्यभिधीयते।''

आचार्य विश्वनाथ साहित्यदर्पण में उपर्युक्त लक्षण निम्न शब्दों में लिखते हैं-

''गद्यपद्यमयं काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते ।''

* चम्पूकाव्य की विशेषता प्रकट करते हुए भोज ने रामायणचम्पू में कहा कि, जिस तरह वाद्य के मिश्रण से गीत आनन्ददायक हो जाते हैं।
* उसी प्रकार पद्य के समावेश से गद्य सुन्दर व आह्लादक हो जाता है-

''गद्यानुबन्धरसमिश्रितपद्यसुक्तिर्हृद्या
हि वाद्यकलया कलितेव गीतिः।
तस्माद् दधातु कविमार्गजुषां सुखाय,
चम्पू- प्रबन्धरचनां रसना मदीय ॥''

चम्पूकाव्य - उत्पत्ति एवं विकास -

* चम्पूकाव्य के बीज हमें वेदों में सर्वप्रथम प्राप्त होते हैं।
* कृष्णयजुर्वेद, अथर्ववेद, उपनिषद् ग्रन्थ तथा ब्राह्मणग्रन्थों में गद्य-पद्य मिश्रित शैली का बहुत प्रयोग हुआ है।
* ऐतरेय ब्राह्मण का हरिश्चन्द्रोपाख्यान चम्पूकाव्य का सुन्दर निदर्शन है।
* यहाँ मुख्यकथा गद्य में तथा उपदेशात्मक भाग पद्य में वर्णित है।
* वैदिक साहित्य के बाद महाभारत, भागवत पुराण और विष्णुपुराण में भी गद्य -पद्य का मिश्रण प्राप्त है।
* इसके बाद अवदानशतक, जातकमाला आदि बौद्ध साहित्य में 'चम्पूकाव्य' का दर्शन होता है।
* अद्यावधि पर्यन्त प्राप्त साहित्य के आधार पर 'चम्पूकाव्य का प्रवर्तक नलचम्पूकार त्रिविक्रमभट्ट को कहा जा सकता है।
* 10वीं शताब्दी का नलचम्पू ही आज संस्कृत साहित्यप्रथम का प्रथम चम्पूकाव्य है।

त्रिविक्रमभट्ट का परिचय

व्यक्तित्व

पितामह - श्रीधर (शाण्डिल्यगौत्रीय ब्राह्मण)
पिता - नेमादित्य अथवा देवादित्य।
आश्रयदाता - राष्ट्रकूटवंशी का पूर्वार्द्ध। (915ई.)
उपाधि - त्रिविक्रमभट्ट ने नलचम्पू में प्रातः वर्णन प्रसङ्ग में रात्रि के अन्धकार व प्रातःकाल के प्रकाश की तुलना क्रमशः यमुना और गंगा के जल से की, इस कारण आलोचकों ने इन्हें ''यामुन त्रिविक्रम'' की उपाधि प्रदान की । पद्य यथा-

''उदयगिरिगतायां प्राक्प्रभापाण्डुताया-
मनुसरति निशीथे शृङ्गमस्ताचलस्य।
जयति किमपि तेजः साम्प्रतं व्योममध्ये,
सलिलमिव विभिन्नं जाह्नवं यामुनं च॥''

किम्वदन्ती- जनश्रुति है कि त्रिविक्रम के पिता नेमादित्य उद्भट विद्वान् थे तथा किसी राजसभा में पण्डित थे। एक बार पिता प्रवास पर थे, उसी समय एक विरोधी पण्डित ने राजसभा में नेमादित्य से शास्त्रार्थ करने को कहा। नेमादित्य को बुलाने राजपुरुषों को भेजा गया किन्तु घर पर पुत्र त्रिविक्रम थे। त्रिविक्रम मन्दबुद्धि थे अतः शास्त्रार्थ करने में असमर्थ करने पिता के आगमन तक अतुल्य पाण्डित्य का वरदान प्राप्त किया तथा विरोधी पण्डित को हराया। बाद में त्रिविक्रम ने वरदान का लाभ उठाने हेतु नलचम्पू की रचना प्रारम्भ की, किन्तु अभी 7 उच्छ्वास ही लिख पाये थे कि पिता का आगमन हो गया साथ ही वरदान की अवधि भी खत्म हो गयी और इस नलचम्पू की कथा अपूर्ण ही रह गयी ।

कृतित्व

त्रिविक्रमभट्ट की दो रचनाएँ प्राप्त होती हैं-

1. नलचम्पू।
2. मदालसाचम्पू।

नलचम्पू- ''एक परिचय''

उपजीव्य- महाभारत का वनपर्व ।

विभाग - नलचम्पू 7 उच्छ्वासों में विभक्त है।

कथानक - नल और दमयन्ती की प्रेमकथा का सुन्दर वर्णन है। किन्तु ग्रन्थ अपूर्ण है, क्योंकि दोनों के विवाह का इसमें वर्णन नहीं मिलता अपितु देवताओं के सन्देश को पहुँचाने दमयन्ती के महल जाने प्रेमासक्त होने का ही वर्णन प्राप्त होता है।

शैली- श्लेष-प्रधान-शैली होते हुए भी शुबोधता इनकी अपनी विशेषता है। सभंग श्लेष के प्रयोग में कवि त्रिविक्रम सिद्धहस्त हैं।

काव्यगुण- प्रसाद नव माधुर्य का आकर्षक प्रयोग।

रसपरिपाक- शृङ्गार प्रधान रस। कलापक्ष के कारण भावपक्ष निर्बल हो गया।

विविध तथ्य

* त्रिविक्रम की द्वितीय रचना मदालसाचम्पू मार्कण्डेयपुराणोक्त आख्यान पर आश्रित है तथा अप्रसिद्ध है।
* नलचम्पू के **''जाड्यपात्रं त्रिविक्रमः,'' ''मन्दधीः'', जानाति हि पुनः सम्यक्- कविरेव कवेः श्रमः** इत्यादि प्रयोग से ज्ञात होता है कि, त्रिविक्रमभट्ट ने निरन्तर अभ्यास व परिश्रम से विद्वता प्राप्त की थी।
* नलचम्पू के प्रत्येक उच्छ्वास के अन्तिम पद्य में ''हरिचरणसरोजाङ्क'' पद का प्रयोग किया है अतः इस काव्य को 'हरिचरणसरोजाङ्ककाव्य' भी कहा जाता है।
* मदालसाचम्पू में एक पुराणाख्यान सम्बद्ध प्रेमकथा वर्णित है। वहाँ राजा कुवलयाश्व व मदालसा की प्रणयकथा चित्रित है।

अन्य चम्पूकाव्य एवं रचनाकार

1. **जीवन्धरचम्पू** - जैनकवि हरिश्चन्द्र
2. **यशस्तिलकचम्पू** - सोमदेवसूरि
3. **रामायणचम्पू** - धारानरेश भोजदेव
4. **उदयसुन्दरी कथा** - कवि सोड्ढल
5. **भारतचम्पू** - अनन्तभट्ट
6. **आनन्दवृन्दावनचम्पू** - कवि कर्णपूर
7. **वरदाम्बिकापरिणयचम्पू** - तिरुमलाम्बा
8. **वेंकटाध्वरी के चार चम्पूकाव्य**

1	विश्वगुणादर्शचम्पू	2	उत्तरचम्पू
3	वरदाभ्युदयचम्पू	4	श्रीनिवासविलासचम्पू।

नलचम्पू की प्रमुख सूक्तियाँ

प्रथम उच्छ्वास

अगाधान्तः परिस्पन्दं विबुधानन्दमन्दिरम्। (1/3)

व्याख्या - वाणीपक्ष- हृदय में महान् अर्थ के कारण चमत्कार उत्पन्न करने वाले विद्वानों एवं देवों आनन्द का निकेतन, विभिन्न रसों (शृङ्गारादि) की विशिष्टता से समृद्ध सरस्वती के प्रवाहित होने वाले प्रवाह को मैं (त्रिविक्रमभट्ट) प्रणाम करता हूँ।

सरस्वतीनदीपक्ष- अथाह गहराई के बीच तरङ्गित होने वाले, देवताओं के आनन्द का घर, पृथ्वी के भीतर प्रगल्भतापूर्वक बहते हुए सरस्वती नदी की धारा को मैं (त्रिविक्रमभट्ट) प्रणाम करता हूँ।

काचोऽप्युच्चैर्मणीयते। (1/8)

व्याख्या - काव्यपक्ष- सुभाषितरत्नों के उत्पत्ति स्थान (रोहण) उन विद्वद्वृन्द को मैं (त्रिविक्रमभट्ट) प्रणाम करता हूँ कि जिनके बीच पड़ा हुआ अधम काव्य भी उत्कृष्ट हो जाता है।

रत्नपक्ष- प्रशंसार्ह रत्नों के आरोहणस्थान विपश्चिद्वृन्द को मैं (त्रिविक्रमभट्ट) प्रणाम करता हूँ कि जिनके बीच पड़ा हुआ निम्नकोटि

का काँच भी उच्च कोटि की मणि की तरह प्रतीत होता है।

करोति कस्य नाह्लादं कथा कान्तेव भारती ।(1/13)

व्याख्या- महाभारतपक्ष- कुन्तीपुत्र कर्ण की मृत्यु होने पर (युद्ध में वीरगति को प्राप्त कर लेने पर) आश्चर्य के कारण चंचल बने कृष्ण, अर्जुन तथा धृतराष्ट्र आदि जिसमें इधर-उधर भ्रमण करते रहे, ऐसी वह कान्ता के समान महाभारत की कथा किसे आह्लादित नहीं करती? अर्थात् सभी के लिए आनन्ददायिनी होती है। **कान्तापक्ष-** कटाक्षादि विलास से चंचल तथा कानों तक फैले हुए नीली कनीनिकाओं एवं सफेद भाग-समन्वित नेत्रों वाली कान्ता किसे आह्लादित नहीं करती अर्थात् सभी को आह्लादित करती ही है।

सर्वसहाः सूरयः।(1/15)

व्याख्या- कवि त्रिविक्रम भट्ट कहते हैं कि महाकवियों कि काव्यकथा एवम् आख्यानों के रस से समसामयिक विद्वानों के कान तथा हृदय दूध से भरे घड़े की तरह हो परिपूर्ण चूके हैं। ऐसी स्थिति में वर्णनीय ज्ञान से शून्य बुद्धि वाले हमारे जैसे व्यक्तियों की तुच्छ वाणी कहाँ स्थान पा सकेगी? अथवा निराश होने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि विद्वान् सब कुछ सहन कर लेते हैं जिससे कि वे समादर करते हैं।

नैको रसः कवे (1/16)

व्याख्या- कवि त्रिविक्रम भट्ट के जैसे काव्यकर्ता को श्लिष्ट काव्यनिर्माण में ही रसानुभूति होती है। विशेष रूप से सभङ्गश्लेष में कवि की वाणी कठिन हो जाती है फिर भी उससे उद्विग्न नहीं होना चाहिए, क्योंकि कवि के लिए केवल एक ही रस एक ही अभिरुचि नहीं होती है।

वेत्ति विश्वम्भरा भारं गिरीणां गरिमाश्रयम्।(1/18)

व्याख्या- जौहरी ही रत्नों का पारखी होता है। जिसे जिस विषय की जानकारी नहीं होगी वह उस विषय के ज्ञाता का न तो वर्णन ही कर पायेगा, न तो उसके महत्त्व को ही ख्यापित कर पायेगा। गुणवानों के गुणों का वर्णन गुणसम्पन्न लोग ही कर सकते हैं अथवा गुणी ही गुणवानों के गुणों तथा गुणग्रहण करने वाले के महत्त्व को ख्यापित कर सकते हैं, क्योंकि सम्पूर्ण विश्व को धारण करने वाली पृथ्वी ही पर्वतों के गरिमामूलक भार को जानती है।

महनीयाः महानुभावाः भवन्ति।

व्याख्या- शिकार खेलने के पश्चात् राजा नल विश्रामार्थ एक सरस तथा सीधे साल वृक्ष के नीचे आ पहुँचते हैं तथा विश्राम करने लगते हैं। उसी वृक्ष के नीचे एक थका हुआ पथिक भी आता है, जो कि राजा को देखकर सहज ही अनुमान लगा लेता हैं कि यह निश्चय ही कोई चक्रवर्ती सम्राट् हैं। अतएव वह कह उठता है कि ऐसे लोग वास्तव में पूजनीय एवं प्रभावशाली होते हैं।

सौख्यस्यायतनं भवन्ति रसिकाः कन्दर्पशस्त्रं स्त्रियः।

व्याख्या- घर को बसाने तथा अनिर्वचनीय सुख को प्रदान करने में स्त्रियाँ सर्वत्र सबसे आगे रहा करती हैं इन्हीं को आधार बनाकर कामदेव सम्पूर्ण संसार पर विजयी बना रहता है। स्त्रियों को शस्त्र बनाकर कामदेव सर्वत्र शक्तिशाली बना रहता है। स्त्रीरूपी शस्त्र के आगे देव, दानव तथा मानव सभी नतमस्तक ही रहते हैं बड़े से बड़े तपस्वियों को भी कामदेव स्त्रियों को शस्त्र बनाकर परास्त कर डाला। ये ही स्त्रियाँ सुखों का आगार होती हैं तथा इनसे ही संसार पल्लवित तथा पुष्पित एवं फलवान् होता रहता है। अतएव कवि पथिक के मुख से कहलवाता है कि संभोगलीला की उत्पत्तिभूमि रसिक स्त्रियाँ ऐश्वर्यों का आगार तथा कामदेव का बाण हुआ करती हैं। (1/55)

युवजनोन्मादिनी यौवनश्रीः।(1/57)

व्याख्या- पथिक राजा नल से भीमपुत्री दमयन्ती के अनिन्द्य सौन्दर्यगुण का वर्णन करते हुए कहता है कि उस राजपुत्री दमयन्ती की सुन्दरता को देखते हुए आँखें थकती ही नहीं हैं। समस्त शुभ लक्षणों से युक्त राजकुमारी दमयन्ती का सर्वथा प्रशंसार्ह सौन्दर्यगुण है। उसकी अभिनव यौवनलक्ष्मी युवकों को उन्मत्त (पागल) बना देने वाली कामदेव की विजयपताका है। उस नायिका के सौन्दर्य को देखते ही सभी युवक उन्मत्त हो मन ही मन उसे अपना हृदय दे डालते हैं।

वे उसके सौन्दर्यश्री से प्रभावित हो कामाभिभूत हो उसे पा लेना चाहते हैं क्योंकि उसकी यौवनश्री युवकों को उन्मत्त कर देने वाली कामदेव की वैजयन्ती है।

ते धन्या न्यपतन्येषां कन्दर्पसदृशे दृशः।

व्याख्या- राजा नल से पथिक कहता है कि किसी उत्तरदिशा के राजा के प्रशंसार्ह सौन्दर्य का वर्णन करते हुए उस पथिक के मुख से सुना, जो कि उसकी जानकारी दमयन्ती को दे रहा था ।वह दमयन्ती से कह रहा था कि वे आँखे धन्य हैं, जो उस कामदेव के समान मुस्कुराते हुए मुख वाले तथा यज्ञस्तम्भ के समान लम्बी भुजाओं वाले युवक को देखी हों कामदेव के समान सर्वाङ्गसुन्दर शरीर वाले उस युवक पर दृष्टियाँ पड़ते ही धन्य हो जाती हैं तथा वे उस कामदेव सरीखे युवक के सौन्दर्य का पान कर लेना चाहती हैं ताकि वे धन्य हो जायँ। (1/59)

कान्तेत्युन्नतचेतसोऽपि कुरुते नाम्नैव निम्नं मनः।

व्याख्या- राजा नल से दमयन्ती की सुन्दरता का वर्णन कर पथिक के चुप हो जाने पर राजा नल अधीर हो उठता है तथा चिन्तन करने लग जाता है कि वह देश स्त्रीरत्नों का विशाल सागर है तथा यह पथिक भी यथार्थवक्ता है। ब्रह्मा की सृष्टिसम्बन्धी व्यापार भी आश्चर्य जनक रचनाओं से परिपूर्ण है। अतएव अद्‌भुत रचनाओं से परिपूर्ण विधाता की सृष्टि में कुछ भी सम्भव है। फिर भी उस सुन्दरी के बारे में केवल श्रवणमात्र से ही मेरा उच्च मनोबल निरन्तर गिरता ही जा रहा है, जबकि मैंने उसके सौन्दर्यवैभव को अपनी आँखो से देखा नहीं है। इससे तो यही सिद्ध होता है कि वह सुन्दरी विधाता की अभूतपूर्व रचना है, जिससे कि मुझ जैसे उच्च मनोबल वाले व्यक्ति का भी मनोबल निम्न कोटि का हो चला है। अब ऐसा लग रहा है कि कब उसके दर्शन हो जाते। (1/61)

नलचम्पू प्रश्नोत्तरी

- ☞ नलचम्पूकारः कोऽस्ति? **त्रिविक्रमभट्टः**
- ☞ गद्य-पद्य मिश्रित काव्य को कहते हैं– **चम्पूः**
- ☞ गद्यपद्यमयं काव्यम्– **चम्पूरित्यभिधीयते**
- ☞ संस्कृतस्य प्रथमः चम्पूग्रन्थः कः? **नलचम्पूः**
- ☞ नलचम्पू कथा के नायक हैं– **नल**
- ☞ 'नलचम्पू' कथा की नायिका है– **दमयन्ती**
- ☞ सभङ्गश्लेष का सर्वाधिक प्रयोग किस ग्रन्थ में हुआ है? **नलचम्पू में**
- ☞ नलचम्पू के मङ्गलाचरण में किस देवता की स्तुति है? **शिव-पार्वती की**
- ☞ नलचम्पू कितने उच्छ्वासों में वर्णित है– **सात**
- ☞ नलचम्पू की कथावस्तु का आधार है– **वनपर्व**
- ☞ त्रिविक्रमभट्ट की रचना है– **मदालसाचम्पू**
- ☞ राजा नल के महामन्त्री का नाम– **श्रुतिशील**
- ☞ 'करोति कस्य नाह्लादं कथा कान्तेव भारती' सूक्ति किस ग्रन्थ से उद्‌धृत है? **नलचम्पू ग्रन्थ से**
- ☞ ''किं कवेस्तेन काव्येन किं काण्डेन धनुष्मतः परस्य हृदये लग्नं न घूर्णयति यच्छिरः'' यह पद्य वाक्य उद्‌धृत है। – **नलचम्पू से**
- ☞ 'परस्य हृदये लग्नं न घूर्णयति यच्छिरः' पंक्ति ग्रहण की गयी है? **नलचम्पू से**
- ☞ 'सर्वं सहाः सूरयः' कस्मात् ग्रन्थात् उक्तम्– **नलचम्पूः**
- ☞ 'दृश्यते न च यत्र स्त्री नवापीनपयोधरा' – श्लोकांश किस ग्रन्थ से है?– **नलचम्पूः**
- ☞ नलचम्पू के 'आर्यावर्तवर्णनम्' में मुख्य रूप से किन अलङ्कारों का प्रयोग हुआ है–**श्लेष - उपमा - परिसंख्या**
- ☞ 'अनूचानः' कः? **साङ्गवेदाध्येता**

महाकाव्य/ खण्डकाव्य

काव्य

- ➢ काव्य शब्द संस्कृत भाषा में बहुत प्राचीन है जिसे कवि के कर्म के रूप में जाना जाता है-
  'कवेः कर्म काव्यम् ' (कवि +ण्यत्)
- ➢ 'कवि' शब्द 'कु' अथवा 'कव् ' धातु (भ्वादिगण आत्मनेपदी - कवते) से बना है। जिसका अर्थ है-
  ध्वनि करना, विवरण देना, चित्रण करना।
- ➢ महाकाव्य साहित्यविधा का उद्‌भव वैदिकसूक्तों से ही मिलता है जैसे - स्तुतिपरक नाराशंसियाँ, दान- स्तुतियाँ, संवादसूक्त आदि द्वारा।
- ➢ रामायण और महाभारत जैसे आर्षकाव्य महाकाव्यसाहित्य विधा के भास्कर हैं जिन्होंने परवर्ती काव्यों को विषयवस्तु शैली, भाषा शैली, वर्णनविधि आदि की उपजीव्यता दी।
- ➢ वाल्मीकि से कालिदास की रचना तक आने में काव्यकला को कई शताब्दियाँ लगी।
- ➢ रामायण, महाभारत के बाद कालिदास की उत्पत्ति तक जो महाकाव्य लिखे गये थे वे केवल नाम मात्र ही शेष हैं।
  इस काल के कुछ ग्रन्थों के नाम निम्नलिखित हैं –
  जाम्बवतीजय या **पातालविजय** (पाणिनि -450 ई॰पू॰)
- ➢ 18 सर्गों में श्रीकृष्ण द्वारा पाताल जाकर जाम्बवती के विजय और परिणय की कथा वर्णित है।
- ➢ राजशेखर के नाम से जल्हण की सूक्तिमुक्तावली (1247) में उद्‌धृत-**नमः पाणिनये तस्मै यस्मादाविरभूदिह।**
  आदौ व्याकरणं काव्यमनु जाम्बवतीजयम्॥
- ➢ वररुचि (350ई॰पू॰) ने **'स्वर्गारोहण'** नामक काव्य बनाया था।
  जिसे पतञ्जलि ने - **वाररुचं काव्यम्** कहा है।
  समुद्रगुप्त के 'कृष्णचरित' काव्य में इसका उल्लेख है।
- ➢ महाभाष्यकार पतञ्जलि -150 ई॰पू॰ में 'महानन्द -काव्य' की रचना की थी।
- ➢ समुद्रगुप्त ने कृष्णचरित में इसकी चर्चा की है।
- ➢ इसके बाद महाकवि कालिदास का युग प्रारम्भ होता है।
- ➢ मनोहारिणी शैली के प्रवर्तक कालिदास।
- ➢ इसी श्रृंखला में महाकवि भारवि, माघ और श्रीहर्ष का नाम उल्लेखनीय है।

काव्य के प्रकार

- ➢ काव्य के मुख्यतः दो भेद होते हैं- **श्रव्य और दृश्य**
  काव्य का वर्गीकरण

श्रव्य काव्य-

(1) पद्य - 1. महाकाव्य - रघुवंशम् कुमारसम्भवम् आदि
2. खण्डकाव्य - मेघदूतम् आदि
3. मुक्तककाव्य - नीतिशतकम् आदि

(2) चम्पू - नलचम्पू आदि

(3) कथा - कादम्बरी आदि

(4) आख्यायिका - हर्षचरितम् आदि

दृश्य काव्य		रूपक - 10
1. नाटक	-	अभिज्ञानशाकुन्तलम्
2. प्रकरण	-	मृच्छकटिकम्
3. भाण	-	लीलामधुकरम्
4. प्रहसन	-	धूर्तचरितम्
5. डिम	-	त्रिपुरदाह
6. व्यायोग	-	सौगन्धिकाहरणम्
7. समवकार	-	समुद्रमन्थन
8. वीथी	-	मालविका
9. अङ्क	-	शर्मिष्ठा ययाति
10. ईहामृग	-	कुसुमशेखरविजय

उपरूपक -18

1. नाटिका	2. त्रोटक	3. गोष्ठी
4. सट्टक	5. नाट्यरासक	6. प्रस्थानक
7. उल्लास्य	8. काव्य	9. प्रेंखण
10. रासक	11. संलापक	12. श्रीगदित
13. शिल्पक	14. विलासिका	15. दुर्मल्लिका
16. हल्लीश	17. प्रकरणिका	18. भाणिका

2.3 महाकाव्य

- महाकाव्य को सर्वप्रथम आचार्य **भामह** ने परिभाषित किया।
- भामह के बाद **आचार्य दण्डी** ने काव्यादर्श में महाकाव्य का लक्षण प्रस्तुत किया।
- 'अग्निपुराण' में भी महाकाव्य के लक्षण प्राप्त होते हैं।
- महाकाव्य के विषय में विस्तृत वर्णन **विश्वनाथ** ने साहित्यदर्पण में किया।

आचार्य विश्वनाथ के अनुसार महाकाव्य का लक्षण -

- महाकाव्य सर्गों में विभक्त होता है।
- महाकाव्य का नायक देवता, कुलीन क्षत्रिय, धीरोदात्त आदि गुणों से युक्त हो सकता है अथवा एक वंशज अनेक कुलीन राजा भी नायक हो सकते हैं।

सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायकः सुरः।
सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरोदात्त गुणान्वितः॥
एकवंशभवा भूपाः कुलजा बहवोऽपि वा।

- शृङ्गार वीर और शान्त रस में से कोई एक प्रधान रस होता है और अन्य रस उसके सहायक।
- इसमें सभी नाटक संधियाँ होती हैं।

शृङ्गारवीरशान्तानामेकोऽङ्गीरस इष्यते।
अङ्गानि सर्वेऽपि रसाः सर्वे नाटकसन्धयः।

- महाकाव्य का कथानक ऐतिहासिक अथवा किसी सज्जन व्यक्ति से सम्बद्ध होता है।
- धर्मार्थकाममोक्ष का वर्णन होता है तथा इनमें से किसी एक फल की प्राप्ति का वर्णन होता है।

इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद् वा सज्जनाश्रयम्।
चत्वारस्तस्य वर्गाः स्युस्तेष्वेकं च फलं भवेद्॥

- प्रारम्भ में तीन प्रकार के मङ्गलाचरणों में से एक होता है नमस्कारात्मक, वस्तुनिर्देशात्मक अथवा आशीर्वादात्मक में से एक।
- कहीं कहीं पर दुर्जन निन्दा या सज्जन प्रशंसा भी होती है।
- प्रत्येक सर्ग में एक ही छन्दोबद्ध पद्य होते हैं। सर्गान्त में छन्द परिवर्तन होता है।
- सर्ग संख्या 8 से अधिक होनी चाहिए अथवा न्यूनतम 8 होनी चाहिए।
- सर्ग न बहुत छोटे न बहुत बड़े होने चाहिए।
- कहीं कहीं विविध छन्दों से युक्त सर्ग भी होते हैं।
- महाकाव्य में सन्ध्या, सूर्योदय, चन्द्रोदय, वन विहार, नगर, मार्ग, जलक्रीड़ा, वन, सागर, संयोग, वियोग, अन्धकार दिन, प्रातः, शिकार, पर्वत, ऋतु, ऋषि, युद्ध, विजय विवाह, पुत्र जन्मोत्सव आदि विषयों का अवसरानुकूल वर्णन होना चाहिए।
- महाकाव्य का नामकरण वर्णनीय चरित्र के नाम से या कवि के नाम से अथवा किसी दूसरे के नाम से होना चाहिए।
- सर्ग का नाम सर्ग में वर्णनीय कथा के नाम से होना चाहिए।
- लक्ष्य ग्रन्थों को ध्यान में रखकर ये लक्षण बने हैं।

महाकाव्यों का शैलीगत विकास

- संस्कृत महाकाव्यों का विकास दो पृथक् मार्गों से हुआ है - 1.सुकुमारमार्ग 2. विचित्रमार्ग

(1) सुकुमार मार्ग

- आरम्भ में महाकाव्य सुकुमार मार्गी थे।
- सुकुमारमार्ग को **रसमयी पद्धति** भी कहते हैं।
- प्रसादगुणपूर्ण शैली में निरूपित मार्ग।
- वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, अश्वघोष आदि कवियों की यही पद्धति है।

- रस और ध्वनि को काव्य की आत्मा मानकर अलंकारों का समुचित प्रयोग होता है।

(2) विचित्रमार्ग

- विचित्रमार्ग के रूप में पाण्डित्यपूर्ण शैली संस्कृत महाकाव्यों में मिलती है।
- शास्त्रीय वैदुष्यपूर्ण भाषा से युक्त महाकाव्य को अलंकार पद्धति या **विचित्रमार्ग** कहा गया।
- इस मार्ग में आनुषङ्गिक वर्णनों की प्रधानता।
- कविगण द्वारा वैदुष्य (विद्वता) का प्रदर्शन।
- विचित्रमार्ग के प्रवर्तक **भारवि** थे।
- भारवि का अनुसरण माघ ने किया।
- दोनों महाकवियों ने मूलकथा को बीच में छोड़कर प्रसक्तानुप्रसक्त वर्णनों में अपने को बाँध लिया।
- इस मार्ग में भाषा और विषय दोनों क्षेत्रों में विशेषता रहती है।
- इस पद्धति में चित्रकाव्य तक कवि पहुँच जाते हैं।
- श्लेषालंकार के प्रयोग से यह शैली दुरुह हो जाती है।
- ओज गुण को प्रमुख स्थान दिया।
- विचित्रमार्गी कवि कथानक की चिन्ता नहीं करते। भारवि ने अल्प कथानक को वर्णनों से भरकर 18 सर्गों का महाकाव्य बना दिया।
- जबकि सुकुमारमार्गी कालिदास ने रघुवंश के 19 सर्गों में अनेक पीढ़ियों के बड़े कथानक को समेट दिया।
- बाद के कवियों के लिए **वाल्मीकि की रसमयी पद्धति** तथा **भारवि की अलंकृत पद्धति** विद्यमान थी।
- बाद के कवियों ने अपनी रुचि के अनुसार दोनों में से एक को अपनाया।
- श्रीहर्ष ने दोनों के समन्वय का सफल प्रयास किया।

2.4 नाट्य साहित्य

- साहित्य के सभी प्रकारों में रूपक या नाट्य श्रेष्ठ माना गया है। इसकी रचना को कवित्व की अन्तिम सीमा कहा जाता है- **'नाटकान्तं कवित्वम्।'**
- रूपक में गद्य-पद्य दोनों का मिश्रण तो रहता ही है, इसे सुनने के अतिरिक्त देखा जाता है। श्रव्य की अपेक्षा 'दृश्य' का अधिक सघन प्रभाव होता है।
- भरत ने नाट्यशास्त्र (6/31) में कहा है कि इस नाट्य-संसार में सब कुछ रसमय होता है, रस के बिना यहाँ कुछ भी प्रवृत्त नहीं होता- **'न हि रसादृते कश्चिदप्यर्थः प्रवर्तते।'** कोई व्यक्ति किसी भी रुचि का क्यों न हो, उसे अपना अनुकूल विषय नाट्य-जगत् में अवश्य मिल जायेगा। इसीलिए कालिदास ने इसकी प्रशंसा में कहा है-

नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधनम्।

(मालविकाग्निमित्रम्- 1/4)

- काव्य को संस्कृत काव्यशास्त्रियों ने दृश्य और श्रव्य के रूप में दो वर्गों में रखा है। दृश्यकाव्य के दो भेद हैं- रूपक तथा उपरूपक। रूपक दस तथा उपरूपक अठारह प्रकार के होते हैं। रूपकों का एक प्रमुख भेद 'नाटक' है जो अपने अर्थ का विस्तार करके सामान्यतः आधुनिक भारतीय भाषाओं में नाट्यमात्र या दृश्यकाव्य मात्र (Drama) का अर्थ देता है।
- धनञ्जय ने नाट्य,रूप और रूपक-इन तीन शब्दों के प्रयोग के हेतुओं का निरूपण किया है जो वस्तुतः एकार्थक हैं।
- विविध पात्रों की अवस्थाओं का चतुर्विध अभिनय (आङ्गिक,वाचिक,सात्त्विक तथा आहार्य) के द्वारा जब नट अनुकरण करता है तो इसे **'नाट्य'** कहते हैं।

नाटक

- नाटक का कथानक प्रसिद्ध (इतिहास या पुराण में निर्दिष्ट) होता है, उसका नायक विख्यात वंश में उत्पन्न राजर्षि या राजा रहता है, उसे धीरोदात्त श्रेणी का होना चाहिए। कभी-कभी वीर रस या शृङ्गार रस के अनुरूप वह धीरोद्धत या धीरललित भी हो सकता है किन्तु धीरप्रशान्त नहीं। श्रीकृष्ण जैसे दिव्यादिव्य नायक भी होते हैं।
- नाटक का मुख्य रस शृङ्गार या वीर होता है **(एक एव भवेदङ्गी शृङ्गारो वीर एव वा)**। अन्य सभी रसों का यथावसर प्रयोग किया जाता है।
- नाटक में पाँच से लेकर दस अङ्क तक रखे जाते हैं। उसमें कथानक का स्वाभाविक विकास दिखाने के लिए पाँच अर्थप्रकृतियाँ (बीज, बिन्दु, पताका, प्रकरी और कार्य), पाँच अवस्थाएँ (आरम्भ, यत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति और फलागम) तथा इनके योग से होने वाली पाँच सन्धियाँ (मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श और निर्वहण) यथासाध्य रखी जाती हैं।
- जिस नाटक में इन सब के प्रयोग के साथ दस अङ्क हों उसे 'महानाटक' कहते हैं। **बालरामायण, हनुमन्नाटक** आदि महानाटक हैं।
- नाटक की अन्तिम सन्धि में 'अद्भुत रस' का प्रयोग हो इससे रोचकता आती है **(कार्यो निर्वहणेऽद्भुतः)**
- नाटक की रचना गोपुच्छाग्रवत् होनी चाहिए अर्थात् आरम्भ और अन्त सूक्ष्म(पतला) हो, मध्यभाग स्थूल (दीर्घ) हो।
- क्रमशः कार्यों का संक्षिप्त उपसंहार होना चाहिए। नाटक को काव्यमात्र में श्रेष्ठ कहा गया है-

'काव्येषु नाटकं रम्यम्, नाटकान्तं कवित्वम्।'

- भास, कालिदास, भवभूति शूद्रक आदि के नाटक संस्कृत-जगत् में विख्यात हैं।

प्रकरण

- इसका कथानक कविकल्पित होता है। प्रायः लोककथाओं से कथानक लेकर इसकी रचना की जाती है।
- इसका नायक धीरप्रशान्त कोटि का मन्त्री, ब्राह्मण या वणिक् में से कोई एक होता है **(अमात्य-विप्र-वणिजामेकं कुर्याच्च नायकम्** -दशरूपक 3/39)। मृच्छकटिक में ब्राह्मण, मालतीमाधव में अमात्य तथा पुष्पदूतिका में वैश्य नायक है। इसमें नायिका दो प्रकार की होती है-कुलीना और वेश्या (गणिका)। किसी प्रकरण में कोई एक ही नायिका रहती है, (जैसे-मालतीमाधव में) तो किसी में दोनों प्रकार की नायिकाएं होती है (जैसे- मृच्छकटिक में)।
- धूर्त,जुआरी,विट,चेट आदि अनेक पात्रों से युक्त प्रकरण **'संकीर्ण'** कहलाता है। नाट्यदर्पण (2/68) में नायिका के आधार पर प्रकरण के इक्कीस भेद कहे गये हैं। रस की दृष्टि से इसमें शृङ्गाररस प्रधान होता है।

3.भाण

- इसमें कोई अत्यन्त चतुर तथा बुद्धिमान् विट अपने या दूसरे के अनुभव के आधार पर धूर्त के चरित का वर्णन करता है। यह एक अङ्क तथा एक ही पात्र का रूपक है। वह पात्र विट ही रहता है जो आकाशभाषित के रूप में स्वयं प्रश्न-उत्तर (उक्ति-प्रत्युक्ति) का प्रयोग करता है।
- इसमें मुख और निर्वहण सन्धियाँ रहती हैं, अन्य सन्धियाँ नहीं।

प्रहसन

- यह हास्यरस-प्रधान रूपक होता है, जिसमें कथानक कल्पित रहता है। इसमें धर्म का पाखण्ड करने वाले (जैन-बौद्ध) साधुओं, केवल जाति से ब्राह्मण कहलाने वाले धूर्तों एवं सेवक-सेविकाओं का चरित्र दिखाया जाता है।
- प्रहसन में वेशभूषा तथा भाषा की विकृति से भी हास्योत्पादन होता है। भाण के समान इसमें भी दो सन्धियों (मुख एवं निर्वहण) एवं 10 लास्याङ्गों का प्रयोग होता है। विश्वनाथ ने इसमें एक या दो अङ्क माने हैं।
- प्रहसन के तीन भेद होते हैं-शुद्ध, विकृत और संकीर्ण।

डिम

- इसका कथानक प्रसिद्ध होता है। नाट्य की कैशिकी वृत्ति वर्जित है, शेष तीनों वृत्तियाँ (भारती, सात्त्वती, आरभटी) प्रयुक्त होती हैं।
- इसमें नायक देवता, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस आदि होते हैं जो मानवेतर हैं, भूत, प्रेत, पिशाच आदि पात्रों का भी इसमें समावेश होता है। उद्धत कोटि के 16 पात्र इसमें रहते हैं। इसका प्रधान रस रौद्र होता है। माया, इन्द्रजाल, युद्ध,भगदड़ आदि के दृश्यों से यह भरा होता है।
- विमर्श सन्धि का प्रयोग नहीं होता। इसमें चार अङ्क रहते हैं।
- भरत ने **'त्रिपुरदाह'** नामक डिम का उल्लेख किया है।

व्यायोग

- इसका कथानक इतिहास-प्रसिद्ध होता है जो किसी विख्यात उद्धत व्यक्ति (भीम, दुर्योधन आदि) पर आश्रित रहता है।
- इसमें गर्भ एवं विमर्श नामक सन्धियाँ नहीं होती हैं। रसों की दीप्ति डिम के समान होती है।
- इसकी कथावस्तु एक दिन की घटनाओं से सम्बद्ध होती है।
- इसमें एक ही अंक रहता है तथा पुरुष-पात्रों की संख्या अधिक होती है।भास का **'मध्यमव्यायोग'** इसका मुख्य उदाहरण है।

समवकार

- इसका इतिवृत्त इतिहास-पुराण में प्रसिद्ध होता है जिसमें देवताओं और दैत्यों की कथा होती है। कैशिकी को छोड़कर अन्य वृत्तियाँ एवं विमर्श को छोड़कर अन्य सन्धियाँ होती हैं। इसमें तीन अङ्क रहते हैं जिनमें तीन बार कपट, तीन बार धर्म-अर्थ-काम का शृङ्गार एवं तीन बार पात्रों में भगदड़ दिखायी जाती है।
- इसके पात्र देवता और दानव होते हैं जिनकी संख्या 12 होती है, सभी वीररस से भरे रहते हैं और सब को पृथक्-पृथक् फल मिलता है।
- 'बिन्दु' नामक अर्थप्रकृति एवं 'प्रवेशक' नामक अर्थोपक्षेपक का इसमें प्रयोग नहीं किया जाता।
- नाट्यशास्त्र में **'समुद्रमन्थन'** नामक समवकार के अभिनय का उल्लेख है। भास के 'पञ्चरात्र' में भी कुछ लक्षण मिलते हैं।

वीथी

- यह शृङ्गाररस-युत्त एकाङ्की रूपक है। इसके कई लक्षण भाण के समान हैं। जैसे-केवल दो सन्धियाँ (मुख और निर्वहण) होना, शृङ्गाररस का सूच्य होना।

अङ्क

- इसे संशय-निवारणार्थ **'उत्सृष्टिकाङ्क'** भी कहते हैं क्योंकि रूपकों के खण्ड भी 'अङ्क' होते हैं। इस रूपक-भेद में कथानक इतिहास-प्रसिद्ध होता है, किन्तु कवि उसमें यथेष्ट परिवर्तन भी करता है। भाण के समान सन्धि (मुख और निर्वहण) भारती वृत्ति भाग तथा अङ्क केवल एक होते हैं।
- इसके नायक और अन्य पात्र साधारण होते हैं। इसमें करुणरस की प्रधानता होती है। अतः स्त्रियों का रोदन होना चाहिए।
- पात्रों में वाग्युद्ध एवं जय-पराजय की योजना होती है।
- कुछ आचार्यों ने इसमें एक से लेकर तीन अङ्कों तक का विधान किया है।

ईहामृग

- इसका कथानक प्रख्यात और कल्पित का मिश्रित रूप होता है। इसमें चार अङ्क तथा तीन सन्धियाँ होती हैं(गर्भ और विमर्श सन्धियाँ नहीं होती)

उपरूपक

- विश्वनाथ ने 18 उपरूपकों का यह क्रम रखा है-

1. नाटिका 2. त्रोटक 3. गोष्ठी 4. सट्टक 5. नाट्यरासक 6. प्रस्थानक 7. उल्लास्य 8. काव्य 9.प्रेंखण 10.रासक 11. संलापक 12.श्रीगदित 13. शिल्पक 14.विलासिका 15. दुर्मल्लिका 16. प्रकरणिका 17. हल्लीश और 18. भाणिका

नाटिका

- नाटिका में चार अङ्क होते हैं।
- स्त्री-पात्रों का बाहुल्य एवं शृङ्गाररस की प्रधानता इसकी विशिष्टता है।
- इसका नायक धीरललित श्रेणी का कोई प्रसिद्ध राजा होता है।
- शृङ्गाररस के कारण कैशिकी वृत्ति एवं तदनुकूल गीत,नृत्य, वाद्य, हास्य आदि इसमें दिखाये जाते हैं।
- इसमें दो नायिकाएँ होती हैं-देवी (बड़ी रानी) तथा मुग्धा कन्या।
- उदयन को नायक बनाकर हर्ष ने **'प्रियदर्शिका'** और **'रत्नावली'** नामक नाटिकाओं की रचना द्वारा इस विधा का प्रयोग किया है।

सट्टक

- सट्टक भी नाटिका के समान होता है।
- इसमें सम्पूर्ण पाठ प्राकृत में होता है।
- प्रवेशक-विष्कम्भक का प्रयोग नहीं किया जाता है।
- अद्भुत रस का प्राचुर्य होता है।
- अङ्कों को 'जवनिकान्तर' कहते हैं।
- राजशेखर की **'कर्पूरमञ्जरी'** सट्टक है।

त्रोटक

- तोटक या त्रोटक में सात,आठ, नव या पाँच अङ्क रहते हैं।
- प्रधानरस शृङ्गार होता है।
- कालिदास का **'विक्रमोर्वशीयम्'** त्रोटक है।

नाट्योत्पत्ति

- संस्कृत दृश्यकाव्य का उद्भव कब और किस प्रकार से हुआ, इस प्रश्न का निश्चित समाधान करना कठिन है। फिर भी कुछ सिद्धान्तों का परिचय तो दिया ही जा सकता है।

भरत का मत

- नाट्य विज्ञान पर सर्वप्रथम ग्रन्थ 'नाट्यशास्त्र' ही है जिसका काल 100 ई॰ पू॰ से 300 ई॰ के बीच माना जाता है।
- भरत का मत 'नाट्यशास्त्र' में मिलता है कि सभी देवताओं ने मिलकर ब्रह्मा जी से प्रार्थना की कि हमें ऐसे मनोरंजन का साधन प्रदान करें जो दृश्य और श्रव्य दोनों हो और जिसे सभी वर्णों के लोग ग्रहण कर सकें, ब्रह्मा ने इस प्रार्थना पर चारों वेदों से सार भाग लेकर 'नाट्यवेद' के रूप में पञ्चम वेद का निर्माण किया (**नाट्यवेदं ततश्चक्रे चतुर्वेदाङ्गसम्भवम्** 1/16) उन्होंने ऋग्वेद से पाठ्य (संवाद,कथनोपकथन), सामवेद से संगीत, यजुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद से रस-तत्त्व लेकर 'नाट्यवेद' की रचना की।

संवाद-सूक्तों से नाट्य की उत्पत्ति

- मैक्समूलर, सिल्वाँलेवी,फॉन श्रोएदर, हर्टल आदि यूरोपीय विद्वानों ने यह सिद्धान्त दिया कि ऋग्वेद के कतिपय संवाद-सूक्त ही नाटकों के प्राचीनतम रूप हैं।
- इन संवाद-सूक्तों में इन्द्र- मरुत् संवाद(ऋ० 1/165,170), अगस्त्य-लोपामुद्रा संवाद (ऋ० 1/179), विश्वामित्र-नदी संवाद (3/33), वसिष्ठ-सुदास संवाद (ऋ० 7/83), यम-यमी संवाद (ऋ० 10/10), इन्द्र-इन्द्राणी-वृषाकपि संवाद (ऋ 10/86), पुरूरवा-उर्वशी संवाद(10/95) तथा सरमा-पणि संवाद(10/108) प्रमुख है।

यूनानी रूपकों से उत्पत्ति

- वेबर तथा विन्डिश ने संस्कृत रूपकों का उद्भव यूनानी रूपकों से सिद्ध किया है।
- जर्मनी के ही विद्वान् पिशेल ने इस मत का प्रबल खण्डन किया है।

पुत्तलिका-नृत्य-सिद्धान्त

- प्रो. पिशेल ने यह विचार दिया है कि प्राचीन भारत में कठपुतलियों का नृत्य दिखाया जाता था। उसे ही सजीव रूप देने के लिए मानवों को मंच पर प्रस्तुत करके नाटकों का अभिनय प्रारम्भ हुआ।

मृतात्म-श्राद्ध-सिद्धान्त (वीर-पूजा)

- डॉ. रिजवे ने यह मत रखा था कि अपने मृत पूर्वजों के प्रति श्रद्धा प्रदर्शित करने के लिए जिस प्रकार यूनानी दुःखान्त रूपकों का उद्भव हुआ था, उसी प्रकार भारत में भी अपने दिवंगत वीर पुरुषों के प्रति आदर-भाव दिखाने के लिए नाटक अभिनीत होते थे।
- रामलीला और कृष्णलीला इसी प्रवृत्ति के पोषक दृष्टान्त हैं।

उत्सव-सिद्धान्त

- यूरोप के कुछ विद्वानों ने अपने यहाँ होने वाले मे-पोल-नृत्य को संस्कृत रूपकों का भी प्रथम रूप कहा है।

छाया-नाटक-सिद्धान्त

- जर्मन विद्वान् ल्यूडर्स तथा स्टेन कोनो का मत है कि छाया - नाटकों में जो छाया-चित्रों का प्रदर्शन होता है, वही संस्कृत रूपकों के मूल रूप रहे होंगे।

संस्कृत नाट्य की विशिष्टताएँ-

- भारतीय रूपक मनोरंजन-प्रधान या आनन्दपरक होते हैं।
- भरत ने इसकी व्याख्या की कि दुःखी, श्रान्त, शोकाकुल एवं तपःखिन्न लोगों को सही समय पर विश्रान्ति प्रदान करने वाला यह 'नाट्य' है-

दुःखार्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम्।
विश्रान्तिजननं काले नाट्यमेतद् भविष्यति॥
(ना.शा. 1/114)

- संस्कृत रूपकों में 'दुःखान्त' की व्यवस्था नहीं है।
- यहाँ दस प्रकार के रूपक और अठारह प्रकार के उपरूपक होते हैं।
- इनमें 'नाटक' बहुत लोकप्रिय हैं।
- प्रकरण,प्रहसन,भाण,नाटिका, सट्टक आदि भी बहुत संख्या में लिखे गये हैं। इस प्रकार संस्कृत दृश्य काव्य का क्षेत्र व्यापक है।
- नाट्य-भेदों में कथानक प्रसिद्ध या कल्पित भी होता है।
- संस्कृत रूपकों में कथानक का विकास कुछ सिद्धान्तों पर आश्रित होता है। कथानक को अर्थप्रकृतियों, अवस्थाओं और सन्धियों में विभक्त किया जाता है।
- पात्रों की व्यवस्था भी रूपकों के विभाजन का आधार है। मुख्य पात्र नायक और नायिका हैं। जिनके भेदोपभेद माने गये हैं। नायकों को धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरप्रशान्त और धीरललित के रूप में चार प्रकार का माना गया है।
- संस्कृत रूपकों का पारस्परिक भेद रस प्रयोग के कारण भी है। नाटकों में शृङ्गार, वीर या शान्त-रस को मुख्य (अङ्गी) रस के रूप में रखा जाता है
- भवभूति ने करुणरस को प्रधान स्थान दिया है, अन्य सभी रसों का यथोचित निवेश होता है।
- नाट्यशास्त्रियों ने जीवन की कुछ क्रियाओं का मञ्चन की दृष्टि से वर्जन किया है। अनुचित, असभ्य और अशुभ दृश्य मञ्च पर नहीं दिखाये जाते। जैसे-युद्ध, मृत्यु, निद्रा, सम्भोग, शाप, चुम्बन, भोजन आदि।
- भाषा प्रयोग का विधान संस्कृत रूपकों की महत्त्वपूर्ण विशिष्टता है। भरत ने ही विधान किया था कि उच्च और मध्य वर्ग के पात्रों की भाषा संस्कृत होगी। प्राकृत में भी क्षेत्रीय प्रभेदों के विधान की दृष्टि से सामान्यतः महाराष्ट्री ,शौरसेनी, मागधी और अर्धमागधी प्राकृतों का प्रयोग किया गया है।
- रूपक भी धर्म के उपकरणों का यथेष्ट उपयोग करते हैं जैसे नान्दी या प्रस्तावना में देवस्तुति और भरतवाक्य में आशीर्वाद देना।
- पाश्चात्त्य नाट्य-विज्ञान में स्वीकृत अन्वितित्रय संस्कृत रूपकों में मान्य नहीं है।
- संस्कृत रूपकों में रसोद्भावन की दृष्टि से उचित स्थानों पर पद्य-प्रयोग किया जाता है।
- कथनोपकथन का मुख्य रूप तो गद्य ही रहता है किन्तु कुछ आवश्यक स्थलों में रोचकता, प्रकृति-वर्णन, नीति-शिक्षा, सुभाषित, विस्तृत घटनाओं का संक्षेपण आदि उद्देश्यों से पद्यों का भी प्रयोग होता है।
- विदूषक का प्रयोग संस्कृत रूपकों में हास्य-व्यंग्य के निवेश के लिए तो होता ही है,वह कथानक का भी एक अङ्ग होता है। वह कथा-प्रवाह को आगे बढ़ाता है।
- शुद्ध हास्य की दृष्टि से 'प्रहसन' और 'भाण' नामक रूपक-भेद संस्कृत में होते हैं जिसमें समाज की विसंगतियों पर व्यंग्य होता है।
- संस्कृतभाषा के रूपकों के प्रारम्भ में प्रस्तावना होती है। जिसमें कवि-परिचय के साथ नाटक के अभिनय के अवसर का भी संकेत रहता है।
- नान्दीपाठ से नाटक का प्रारम्भ एवं भरतवाक्य से समाप्ति, अङ्कों की योजना, बीच-बीच में विष्कम्भक, प्रवेशक आदि देना ये सब रचना-प्रक्रिया के मुख्य अङ्ग हैं।
- बीच में मञ्च से पात्रों का निर्गम,प्रवेश,स्वागत-भाषण, जनान्तिक भाषण आदि संकेत नाटकों के अभिनय और मञ्चन को सुविधायुक्त कर देते हैं।

2.5 गद्य साहित्य

- 'गद्य' शब्द गद्-धातु (व्यक्तायां वाचि) से यत् प्रत्यय लगकर बना है जिसका अर्थ है मानव की अभिव्यक्ति की मौलिक प्रक्रिया।
- दण्डी ने काव्यादर्श में 'गद्यकाव्य' की परिभाषा देकर इसे आख्यायिका और कथा के रूप में विभाजित किया है।
  'अपादः पदसन्तानो गद्यमाख्यायिका कथा।' (1/23)
- गद्यकाव्य इतना कठिन और विरल हो गया कि आठवीं शताब्दी ई0 में एक उक्ति चल पड़ी-**'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति'** अर्थात् गद्यकाव्य लिखना कवियों की कड़ी परीक्षा है।
- गद्य का प्रथम रूप हमें यजुर्वेद की संहिताओं में मिलता है।
- यजुर्वेद की परिभाषा ही दी गयी है- **'अनियताक्षरावसानं यजुः'** तथा **'गद्यात्मकं यजुः।'**
- कृष्ण-यजुर्वेद की तैत्तिरीय, काठक और मैत्रायणी संहिताएँ अधिकांशतः गद्यात्मक हैं।
- ब्राह्मण और आरण्यक (जो पूर्णतः गद्य में ही हैं) पतञ्जलि का महाभाष्य, शबरस्वामी का शाबरभाष्य (मीमांसा-दर्शन पर),शंकराचार्य का शारीरकभाष्य (ब्रह्मसूत्र पर) इत्यादि उत्कृष्ट शास्त्रीय गद्य के रूप हैं।
- आचार्य शंकर की गद्यशैली प्रसन्न-गम्भीर है,इसका परिमाण भी प्रचुर है क्योंकि दस उपनिषदों, गीता तथा ब्रह्मसूत्र पर उन्होंने भाष्य लिखे हैं।
- साहित्यिक गद्य के प्रयोग का अनुमान कात्यायन और पतञ्जलि के द्वारा दी गयी सूचनाओं से होता है।
- पतञ्जलि ने तो तीन आख्यायिकाओं के नाम भी दिये हैं- **वासवदत्ता, सुमनोत्तरा** तथा **भैमरथी**।
- साहित्यिक गद्य का स्पष्ट उदाहरण अभिलेखों में प्राप्त होता है। इस दृष्टि से रुद्रदामन का गिरिनार अभिलेख 150ई0) तथा हरिषेणकृत समुद्रगुप्त-प्रशस्ति (प्रयाग स्तम्भलेख 360 ई0) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।
- समुद्रगुप्त की विजय-यात्राओं और व्यक्तिगत गुणों का वर्णन प्रयाग-प्रशस्ति में हुआ है। इस प्रशस्ति के लेखक हरिषेण हैं।

- साहित्यिक गद्य का विकासशील रूप **दण्डी, सुबन्धु** या **बाण** की रचनाओं में प्राप्त होता है।

गद्यकाव्य के भेद

- संस्कृत गद्यकाव्य के दो मुख्य भेद माने गये हैं-कथा और आख्यायिका
- आख्यायिका ऐतिहासिक विषयों पर एवं कथा पूर्णतः काल्पनिक विषयों पर आश्रित होती है।
- बाणभट्ट की गद्य-रचनाओं में 'हर्षचरित' आख्यायिका तथा 'कादम्बरी' कथा के रूप में प्रसिद्ध हुई।
- कथा में कथावस्तु कविकल्पित होती है।
- आख्यायिका में ऐतिहासिक होती है।
- कथा के आरम्भ में पद्यों के द्वारा सज्जनों की प्रशंसा, दुष्टों की निन्दा तथा कवि के वंश का वर्णन होता है।
- कथा का विभाजन नहीं होता, आख्यायिका उच्छ्वासों या निःश्वासों में विभक्त होती है।
- उच्छ्वासों के आरम्भ में भावी घटना का परोक्ष निर्देश करने वाले पद्य भी होते हैं।
- कथा में मुख्य कथानक को लाने के लिए दूसरी कथा से आरम्भ किया जाता है।
- आख्यायिका में कवि अपना वृत्तान्त देकर मुख्य कथा को आरम्भ करता है। इन दोनों में समानता के तथ्य भी बहुत हैं। जैसे- 1. दोनों की रचना संस्कृत गद्य में होती है। 2. गद्य की शैली दोनों में समान रहती है। 3. रसों और भावों का समान रूप से प्रयोग होता है। 4. नगर, वन, सरोवर, राजा, राजसभा, मृगया प्रेम आदि का समान रूप से वर्णन दोनों में होता है

गद्य के प्रकार

समास के प्रयोग तथा वृत्तभाग के निवेश की दृष्टि से गद्य के चार प्रकार माने गये हैं-

1. मुक्तक 2. वृत्तगन्धि 3. उत्कलिकाप्राय 4. चूर्णक

- समास से रहित गद्य-रचना को मुक्तक कहते हैं।
- जहाँ गद्य में छन्द के अंश आ जाएँ उसे वृत्तगन्धि कहते हैं।
- लम्बे समासों से युक्त गद्य उत्कलिकाप्राय कहलाता है तथा अल्प समासों से युक्त गद्य को चूर्णक कहा जाता है।

सर्वज्ञभूषण द्वारा सम्पादित एवं संस्कृतगंगा प्रकाशन से प्रकाशित पुस्तकों का विवरण		
क्र. पुस्तक का नाम	पेज	मूल्य
1. **वस्तुनिष्ठ संस्कृत–साहित्यम्** (TGT, PGT, UGC, NET हेतु उपयोगी)	316	240
2. **वस्तुनिष्ठ संस्कृत–व्याकरणम्** (TGT, PGT, UGC-NET में उपयोगी)	312	240
3. **प्रतियोगितागंगा भाग-1** (TGT, PGT, UGC-NET में अत्यन्त उपयोगी)	448	360
4. **प्रतियोगितागंगा भाग-2** (TGT, PGT, UGC-NET में अत्यन्त उपयोगी)	576	425
5. **आख्यातास्मि** (UGC-NET संस्कृत कोड-25 हेतु उपयोगी)	272	180
6. **प्राख्याता** (UGC–NET संस्कृत कोड-25 हेतु उपयोगी)	320	240
7. **वैदिकवाङ्मय परीक्षा दृष्टि** UGC-NET एवं हायर Exam में उपयोगी)	232	145
8. **भारतीयदर्शनसार** (PGT/UGC-NET में उपयोगी)	160	135
9. **आचार्योऽहम्** (UGC-NET संस्कृत कोड- 73 हेतु उपयोगी)	216	175
10. **असिस्टेण्ट प्रोफेसर संस्कृत** (Higher Education GDC/GIC हेतु उपयोगी)	124	105
11. **SUPER-30 GK/GS** (असिस्टेण्ट प्रोफेसर एवं हायर एजुकेशन हेतु)	176	130
12. **प्रवक्तास्मि** (PGT प्रवक्ता संस्कृत हेतु उपयोगी)	200	125
13. **व्याख्यास्मि** (PGT प्रवक्ता संस्कृत हेतु उपयोगी)	316	240
14. **TGT प्रश्न!अस्मि** (TGT/ L. T. संस्कृत हेतु उपयोगी)	232	145
15. **प्रश्नमीमांसा संस्कृत** (TGT/LT हेतु उपयोगी)	296	140
16. **TGT व्याख्यात्मिका संस्कृत** (TGT/ L. T. में उपयोगी)	276	190
17. **मिशन L. T. संस्कृत** (L. T. एवं TGT हेतु उपयोगी)	400	325
18. **L. T. प्रश्नोत्तरी संस्कृत** (L. T. एवं TGT हेतु उपयोगी)	328	250
19. **गुरुमन्त्र** (UP-TET/Super TET संस्कृत हेतु उपयोगी)	120	120
20. **विजयीभव** (UP-TET संस्कृत हेतु उपयोगी)	196	145
21. **विजयपथ प्रैक्टिस सेट** (UP-TET संस्कृत हेतु उपयोगी)	196	130
22. **C-TET, शिक्षकोऽहम्** (C-TET हेतु उपयोगी)	216	140
23. **मिशन हरियाणा** (H-TET लेवल-2 TGT एवं लेवल-3 PGT हेतु उपयोगी)	300	240
24. **जय हो** (MP वर्ग- 1,2 हेतु उपयोगी)	324	260
25. **लक्ष्य झारखण्ड** (PGT संस्कृत झारखण्ड के लिए उपयोगी)	284	250
26. **TGT झारखण्ड संस्कृत**	252	250
27. **सम्भाषण शब्दकोश** (संस्कृत सम्भाषण हेतु उपयोगी)	208	110
28. **सप्तगङ्गम्** (TGT मूलपाठ)	184	151
29. **शिवराजविजयः**	192	151

संस्कृतगंगा कार्यालय सम्पर्क सूत्र- 8004545096, 8004545095